स्वाध्याय स्वमन्थन स्वावलम्बन

उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

(उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा निर्गत अधिनियम संख्या 10, 1999 द्वारा स्थापित)

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

॥ सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.Com-D-02
व्यापारिक सन्नियम

प्रथम खण्ड : अनुबन्ध सम्बन्धी सामान्य कानून- I

द्वितीय खण्ड : अनुबन्ध सम्बन्धी सामान्य कानून- II

तृतीय खण्ड : विशेष अनुबन्ध

चतुर्थ खण्ड : साझेदारी

पंचम खण्ड : वस्तु विक्रय

षष्ठम खण्ड : विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम

शान्तिपुरम् (सेक्टर-एफ), फाफामऊ, इलाहाबाद - 211013

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-2
व्यापारिक सन्नियम

खंड

1

अनुबन्ध संबंधी सामान्य कानून - I

इकाई 1

अनुबन्ध के आवश्यक तत्व 5

इकाई 2

प्रस्ताव एवं स्वीकृति 22

इकाई 3

पक्षकारों की क्षमता 42

इकाई 4

स्वतंत्र सहमति 53

खंड I अनुबन्ध संबंधी सामान्य कानून-I

कानून की कई शाखाएँ हैं, जैसे अंतर्राष्ट्रीय कानून, सांविधानिक कानून, दंड विधि, सिविल कानून आदि। प्रत्येक कानून एक विशेष क्षेत्र की गतिविधियों को नियमित करता है। व्यापारिक सन्नियम सिविल कानून का ही एक भाग है। इसमें व्यापारिक लेन-देन से उत्पन्न अधिकारों और दायित्वों का वर्णन किया गया है। यह देश के व्यापार एवं वाणिज्य को नियमित करता है। अनुबन्ध कानून (भारतीय अनुबंन्ध अधिनियम, 1872), व्यापारिक सन्नियम का अत्यन्त महत्वपूर्ण अंग है। इसमें सभी प्रकार केअनुबन्धों के बारे में सामान्य सिद्धांतों की चर्चा की गई है तथा निक्षेप, गिरवी, क्षतिपूर्ति, गारंटी और एजेंसी जैसे अनुबन्धों से संबंधित विशेष प्रावधान भी इसमें शामिल हैं।

अनुबन्ध संबंधी कानून के अंतर्गत वैध अनुबन्ध के अनिवार्य तत्व, अनुबन्ध के निष्पादन और समाप्ति से संबंधित नियमों तथा अनुबन्ध भंग किए जाने पर पीड़ित पक्षकार को उपलब्ध उपचारों का वर्णन किया गया है। प्रस्तुत खंड में मुख्यत: वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्वो, जैसे प्रस्ताव एवं स्वीकृति, पक्षकारों की क्षमता तथा स्वतंत्र सहमति का वर्णन किया गया है।

इकाई 1 अनुबन्ध का अर्थ तथा उसके वर्गीकरण का वर्णन करती है। इसमें वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्वों की भी चर्चा की गई है।

इकाई 2 में प्रस्ताव एवं स्वीकृति से संबंधित नियमों की तथा उसकी सूचना और खंडन संबंधी नियमों की चर्चा की गई है।

इकाई 3 में पक्षकारों की क्षमता की व्याख्या की गई है। इसमें अवयस्क, अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्ति तथा कानून द्वारा अनुबन्ध करने के अयोग्य घोषित व्यक्तियों की स्थिति तथा उनके साथ किए गए अनुबन्धों की स्थिति का वर्णन किया गया है।

इकाई 4 स्वतंत्र सहमति से संबंधित है। इसमें बल-प्रयोग, अनुचित प्रभाव, कपट, मिथ्या-वर्णन तथा गलती का अनुबन्ध की वैधता पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन किया गया है।

इकाई I अनुबन्ध के आवश्यक तत्व

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 कानून क्या होता है ?
1.3 व्यापारिक सन्नियम का अर्थ एवं स्रोत
1.4 अनुबन्ध सम्बंधी कानून
1.5 अनुबन्ध क्या होता है ?
    1.5.1 करार
    1.5.2 वैधानिक दायित्व
    1.5.3 करार एवं अनुबन्ध में अन्तर
1.6 अनुबन्धों का वर्गीकरण
    1.6.1 निर्माण के आधार पर
    1.6.2 निष्पादन के आधार पर
    1.6.3 प्रवर्तनीयता के आधार पर
1.7 वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्व
1.8 सारांश
1.9 शब्दावली
1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.11 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- कानून के उद्देश्यों की व्याख्या कर सकें,
- व्यापारिक सन्नियम के स्रोतों का वर्णन कर सकें,
- अनुबन्ध का अर्थ बता सकें,
- अनुबन्ध तथा समझौते का अन्तर बता सकें,
- अनुबन्धों का वर्गीकरण कर सकें,
- व्यर्थ, व्यर्थनीय तथा अवैधानिक अनुबन्धों में अन्तर कर सकें,
- वैध अनुबन्धों के आवश्यक तत्वों का वर्णन कर सकें।

1.1 प्रस्तावना

अनुबन्ध अधिनियम व्यापारिक सन्नियम की सबसे महत्वपूर्ण शाखा है। इस प्रकार के कानून के बिना किसी भी व्यापार या व्यवसाय को सुचारु ढंग से चलाना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाएगा। अनुबन्ध अधिनियम केवल व्यवसाय में ही लागू नहीं होता बल्कि हमारे व्यक्तिगत दैनिक लेन-देन पर भी लागू होता है। वास्तव में, हममें से प्रत्येक व्यक्ति प्रतिदिन प्रात:काल से रात्रि तक, अनेक अनुबन्ध करता है। जब कोई व्यक्ति समाचार पत्र खरीदता है या बस में सवार होता है या वस्तुएँ खरीदता है या अपना रेडियो सेट मरम्मत के लिए देता है या लायब्रेरी से पुस्तक पढ़ने के

लिए लेता है, तो वास्तव में वह अनुबन्ध करता है। इस प्रकार के नियम के समस्त लेन-देन पर अनुबन्ध अधिनियम के नियम लागू होते हैं। इस प्रारंभिक इकाई में, आप सर्वप्रथम यह जानेंगे कि हमें कानून की आवश्यकता क्यों है तथा इसकी विभिन्न शाखाएँ कौन सी हैं। इसके बाद आप व्यापारिक सन्नियम के अर्थ, इसके स्त्रोत तथा अनुबंध अधिनियम के मूलभूत पक्षों जैसे अनुबन्ध का अर्थ, इसका वर्गीकरण तथा वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

1.2 कानून क्या होता है ?

"कानून" शब्द का अर्थ समझने से पहले आपको यह भली-भाँति जान लेना चाहिए कि हमें कानून की आवश्यकता क्यों होती है ? कोई भी सभ्य समाज कानून के बिना नहीं रह सकता। प्रत्येक समाज में शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए कानून का होना अत्यन्त आवश्यक है। कानून के अभाव में, कोई भी व्यक्ति पूर्ण नहीं होगा। समाज के विकास तथा कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए व्यक्तियों के आचरण को नियंत्रित करना आवश्यक हो गया तथा उनकी सम्पत्ति एवं अनुबन्ध से उत्पन्न अधिकारों की रक्षा के लिए कानून आवश्यक हो गया। अत: प्रत्येक अधिकारों की रक्षा के लिए कानून आवश्यक हो गया। अत: प्रत्येक देश ने अपनी आवश्यकताओं तथा सामाजिक मूल्यों के अनुसार कानून बनाए।

यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमें उस कानून की पूरी जानकारी होनी चाहिए जिससे हम नियंत्रित होते हैं क्योंकि सामान्य नियम है कि कानून की अज्ञानता कोई बहाना नहीं है। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति रेल में बिना टिकट के यात्रा करते हुए पकड़ा जाता है तो वह यह तर्क दे कर माफी के लिए माँग नहीं कर सकता कि उसे टिकट खरीदने सम्बन्धी नियमों की जानकारी नहीं है। अत: यह हमारे अपने हित में है कि जो कानून हम पर लागू होते हैं, हम उनकी जानकारी रखें।

कानून का अर्थ है नियमों का समूह। मोटे तौर पर 'कानून' शब्द की परिभाषा हम इस प्रकार कर सकते हैं कि यह राज्य द्वारा स्वीकृत एवं प्रवर्तित ऐसे नियम हैं, जो न्याय, शान्तिपूर्ण जीवन एवं सामाजिक सुरक्षा के उद्देश्य से व्यक्तियों के आचरण या व्यवहारों को नियंत्रित करते हैं। 'कानून' शब्द की कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:

> "कानून आचरण के वे नियम हैं जो राज्य की सर्वोच्च शक्ति द्वारा निर्धारित किए जाते हैं तथा जो यह निर्देश देते हैं कि क्या ठीक है तथा निषिद्ध कार्यों को करने से मना करते हैं।"
>
> **(ब्लेकस्टोन)**

> "कानून से तात्पर्य सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त तथा प्रयुक्त सिद्धान्तों के समूह से है जिनके द्वारा न्यायिक प्रशासन किया जाता है।"
>
> **(सालमण्ड)**

उपर्युक्त परिभाषाओं से आपको यह अच्छी तरह से स्पष्ट हो गया होगा कि कानून ऐसे सिद्धान्तों व नियमों का समूह है जो व्यक्तियों के एक-दूसरे के तथा समाज के प्रति मानवीय क्रियाओं को नियंत्रित करता है। यह तो आपको ज्ञात ही है कि कोई भी समाज स्थायी नहीं होता, उसके मूल्यों में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। अत: समाज की बदलती आवश्यकताओं के साथ-साथ कानून में भी परिवर्तन होते रहते हैं।

कानून की अनेक शाखाएँ हैं, जैसे अन्तर्राष्ट्रीय कानून सांविधानिक कानून, फौजदारी कानून, दीवानी कानून आदि। प्रत्येक कानून केवल कुछ विशिष्ट कार्यों को ही नियमित एवं नियंत्रित करता है। व्यापारिक सन्नियम या व्यावसायिक कानून, कानून की अलग शाखा नहीं है। यह दीवानी कानून का ही एक भाग है जो व्यक्तियों के मध्य, व्यापारिक सम्पत्ति से सम्बन्धित, व्यापारिक व्यवहारों से उत्पन्न होने वाले अधिकारों व दायित्वों से सम्बन्धित है।

1.3 व्यापारिक सन्नियम का अर्थ एवं स्त्रोत

आप जानते हैं कि व्यापारिक सन्नियम, दीवानी कानून का एक भाग है तथा यह देश के व्यापार और

वाणिज्य को नियमित एवं निर्धारित करता है। अन्य शब्दों में, व्यापारिक सन्नियम के अन्तर्गत एसे कानून आते हैं जो व्यापार में लगे व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं तथा इसमें अनुबन्ध साझेदारी, कम्पनियों, विनिमयसाध्य विपत्रों, बीमा, माल परिवहन, पंच-निर्णय आदि से सम्बन्धित कानून आते हैं।

भारतीय व्यापारिक सन्नियम का अधिकांश भाग आंग्ल व्यापारिक सन्नियमों पर आधारित है। विभिन्न भारतीय कानून अधिकांशतः आंग्ल व्यापारिक सन्नियम का ही पालन करते हैं परन्तु भारत की विशेष परिस्थितियों एवं रीति-रिवाजों को ध्यान में रखते हुए इनमें जहाँ-तहाँ परिवर्तन कर दिए गए हैं। भारतीय व्यापारिक सन्नियम के मुख्य स्त्रोत निम्नलिखित हैं:

1 **आंग्ल व्यापारिक सन्नियम** (English Mecantile Law) : हमारे कानून मुख्य रूप से आंग्ल कानूनों पर आधारित हैं जिनका विकास आंग्ल व्यापारियों या तिजारतियों की रीतियों एवं प्रथाओं से हुआ है। व्यापारियों के परस्पर व्यवहार इन्हीं रीतियों एवं प्रथाओं से नियमित होते थे। इस कानून को सामान्य कानून भी कहते हैं। वास्तव में यह एक अलिखित कानून है जो प्रथाओं, रीतियों तथा पूर्व निर्णयों पर आधारित है। अनुबन्ध सम्बन्धी कानून, जो व्यापारिक सन्नियम का सबसे महत्वपूर्ण भाग है, अभी भी इंग्लैंड के कॉमन लॉ का एक भाग है। जब किसी मुद्दे के बारे में किसी अधिनियम में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया हो या वे अस्पष्ट हों तो भारतीय न्यायालय आज भी आँग्ल कानून का सहारा लेते हैं।

2 **भारतीय परिनियम कानून** (Indian Statute Law) : भारत में व्यापारिक सन्नियम का मुख्य स्त्रोत संसद द्वारा पारित अधिनियम हैं। संसद द्वारा पारित कुछ अधिनियम ये हैं– भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872, विनिमयसाध्य विपत्र अधिनियम, 1881, वस्तु-विक्रय अधिनियम, 1930, भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932, कम्पनी अधिनियम, 1956।

3 **न्यायिक निर्णय** (Judicial mecisiods) : कानून का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत न्यायालय द्वारा दिये गये पिछले निर्णय हैं। मिलते-जुलते मुकदमों का निर्णय करते समय न्यायालय पिछले महत्वपूर्ण निर्णयों का हवाला प्रायः पूर्व-दृष्टान्त (Precedent) के रूप में देते हैं। पिछले निर्णय मार्ग दर्शन का कार्य करते हैं। जब कभी भी किसी मुद्दे के बारे में कानून में कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है तो न्यायाधीश ऐसे मुकदमों का निर्णय न्याय, समन्याय (Equity) तथा सदविवेक (good conscience) के नियमों के अनुसार करते हैं। विभिन्न मुकदमों का निर्णय करते समय तथा भारतीय परिनियम का भाषांतर करते समय प्रायः आँग्ल न्यायालयों के निर्णयों का हवाला पूर्व-दृष्टांतों के रूप में दिया जाता है।

4 **प्रथाएँ तथा रीति-रिवाज** (Customs and Usages) : किसी व्यापार विशेष की प्रथाएँ तथा रीति-रिवाज भी भारतीय व्यापारिक सन्नियम का एक अन्य महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। ये व्यापार विशेष के व्यापारियों के मध्य परस्पर लेन-देन को नियमित करते हैं। परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि ये प्रथाएँ व रीति-रिवाज विख्यात, उचित व निश्चित हो तथा किसी कानून के विपरीत हों। भारतीय अनुबन्ध अधिनियम ने इस तथ्य को स्वीकार किया है तभी यह प्रावधान किया है कि, "इस अधिनियम के किसी भी प्रावधान से व्यापार में प्रचलित कोई रीति या प्रथा प्रभावित नहीं होगी।" विनियमसाध्य विपत्र अधिनियम में भी इसी प्रकार का प्रावधान किया गया है कि "इस अधिनियम के किसी प्रावधान से किसी पूर्वदेशीय भाषा (Oriental Language) में लिखित विपत्र सम्बन्धी स्थानीय प्रथा प्रभावित नहीं होगी।"

1.4 अनुबन्ध सम्बन्धी कानून

अनुबन्ध कानून, भारत के व्यापारिक सन्नियम का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है। यह उन परिस्थितियों का वर्णन करता है जब कि अनुबन्ध के पक्षकार अपने-अपने वचन से बाध्य होते हैं तथा यदि कोई पक्ष अपने वचन का पालन नहीं करता तो उसके विरुद्ध उपचारों की व्याख्या करता है। अनुबन्ध सम्बन्धी कानून का वर्णन भारतीय अनुबन्ध अधिनियम (Indian Contract Act), 1872 में किया गया है। इस अधिनियम में अनुबन्धों को नियमित करने वाले सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या की गई है, इसके अतिरिक्त इसमें क्षतिपूर्ति, गारंटी, निक्षेप, गिरवी तथा एजेंसी आदि विशिष्ट प्रकार के अनुबन्धों से सम्बन्धित नियमों का उल्लेख किया गया है। सन् 1930 से पहले इस अधिनियम में वस्तु-विक्रय तथा साझेदारी अनुबन्धों से सम्बन्धित प्रावधान भी शामिल थे। सन्

1930 में वस्तु-विक्रय से सम्बन्धित नियम (धारा 76 से 123 तक) निरस्त कर दी गई। यह अधिनियम सर्वांगपूर्ण नहीं है क्योंकि इसमें सभी प्रकार के अनुबन्धों से सम्बन्धित नियमों का उल्लेख नहीं है। विनिमयसाध्य विपत्रों, बीमा, माल परिवहन आदि से सम्बन्धित अनुबन्धों के लिए पृथक-पृथक अधिनियम हैं।

आइए, अब हम अनुबन्ध की वास्तविक, प्रकृति तथा इससे सम्बन्धित अन्य महत्वपूर्ण पहलुओं का अध्ययन करते हैं।

1.5 अनुबन्ध क्या होता है?

सरल शब्दों में, अनुबन्ध (contract) दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच ऐसा समझौता है जिसमें वे किसी कार्य को करने या न करने का वचन देते हैं। अनुबन्ध निश्चित रूप से पक्षकारों के बीच कानूनी दायित्व उत्पन्न करता है जिसके द्वारा किसी एक पक्ष को कुछ अधिकार प्राप्त होते हैं तथा दूसरे पक्ष पर तत्संबंधी दायित्व होता है। 'अनुबन्ध' शब्द की परिभाषा विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से की है। कुछ मुख्य परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:

"अनुबन्ध एक ऐसा समझौता है जो पक्षकारों के बीच दायित्व उत्पन्न करता है एवं उनकी व्याख्या करता है।"

(सर जॉन सालमंड)

"अनुबन्ध दो या अधिक व्यक्तियों के बीच ऐसा समझौता है जो कानून के द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है एवं जिसके अन्तर्गत एक या एक से अधिक पक्षकार, दूसरे पक्षकार या पक्षकारों के विरुद्ध किसी कार्य को करने या न करने के लिए कुछ अधिकार प्राप्त कर लेते हैं।"

(सर विलियम एन्सन)

"प्रत्येक समझौता तथा वचन जो कानून द्वारा प्रवर्तनीय होता है, अनुबन्ध कहलाता है।"

(सर फैड्रिक पोलॉक)

"अनुबन्ध अधिनियम में दी गई परिभाषा पोलॉक द्वारा दी गई अनुबन्ध की परिभाषा पर आधारित है।" धारा 2 (एच) के अनुसार **अनुबन्ध ऐसा समझौता है जो कानून द्वारा प्रवर्तनीय हो।** यदि आप इस परिभाषा का विश्लेषण करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुबन्ध वास्तव में दो तत्वों से बनता है:

(i) एक ठहराव या समझौता तथा (ii) कानून द्वारा प्रवर्तनीयता।

आइए, अब इन दोनों तत्वों का विस्तार से अध्ययन करते हैं।

1.5.1 करार (Agreement)

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 2 (ई) के अनुसार, **वचन तथा वचनों का समूह जो एक दूसरे के लिए प्रतिफल हों करार कहलाता है।** इस संदर्भ में वचन से आशय ऐसे प्रस्ताव से है जिसे स्वीकार कर लिया गया है। उदाहरण के लिए रमेश अपना स्कूटर 8,000 रुपये में श्याम को बेचने का प्रस्ताव करता है। श्याम इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है, अब यह वचन बन जाता है तथा रमेश और श्याम के बीच एक करार हुआ माना जाता है। सरल शब्दों में, एक पक्ष द्वारा प्रस्ताव करने तथा दूसरे पक्ष द्वारा उसे स्वीकार करने से ही करार बनता है इस प्रकार—

करार = प्रस्ताव + स्वीकृति

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि करार के लिए दो पक्षों का होना आवश्यक है, जिनमें एक पक्ष द्वारा प्रस्ताव किया जाए एवं दूसरे पक्ष द्वारा उसे स्वीकार किया जाए। कोई भी व्यक्ति स्वयं से करार नहीं कर सकता। करार से सम्बन्धित एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू और भी है और वह है कि करार के दोनों पक्षकारों ने करार की विषय-वस्तु को एक ही अर्थ में समझा हो। उन्हें विषय-वस्तु के बारे में एक ही अर्थ में सहमत होना चाहिए। इसे एकमत या मैतक्य (consensus ad idem) कहते हैं। उदाहरण: क के पास दो मकान हैं— एक दक्षिणी दिल्ली में है तथा दूसरा

उत्तरी दिल्ली में। वह अपना उत्तरी दिल्ली का मकान बेचने का प्रस्ताव ख से करता है। जबकि ख समझता है कि वह दक्षिण दिल्ली वाला मकान खरीद रहा है। इस स्थिति में दोनों ही पक्ष विषय-वस्तु (मकान) के बारे में एकमत नहीं हैं। दोनों ही पक्ष अलग-अलग मकानों के बारे में सोच रहे हैं, अत: दोनों के बीच कोई करार नहीं हुआ।

1.5.2 वैधानिक दायित्व (Legal Obligation)

करार को अनुबन्ध बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उससे वैधानिक दायित्व उत्पन्न होना चाहिए अर्थात् वह कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सके। यदि कोई करार कानून द्वारा प्रवर्तनीय कोई कर्तव्य उत्पन्न नहीं करता, तो वह अनुबन्ध नहीं होगा। कोई भी दायित्व (कर्तव्य) जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सके, अनुबन्ध नहीं हो सकता। सामाजिक, नैतिक या धार्मिक करार कोई भी वैधानिक दायित्व उत्पन्न नहीं करते। उदाहरणस्वरूप, एक साथ भोजन करने का करार या पिकनिक पर जाने का करार अनुबन्ध नहीं कहला सकता क्योंकि उससे किसी ऐसे कर्तव्य की उत्पत्ति नहीं होती जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सके। ऐसे करार शुद्ध रूप से सामाजिक प्रकृति के होते हैं जहाँ कि पक्षकारों का इरादा वैधानिक सम्बन्ध स्थापित करना नहीं होता है। अत: वे अनुबन्ध नहीं बनते। इसके विपरीत सामान्य धारणा है कि व्यापारिक करारों में वैधानिक सम्बन्ध बनाने की इच्छा विद्यमान होती है। उदाहरण के लिए 8,000 रुपये में स्कूटर बेचने का करार अनुबन्ध है, क्योंकि इससे ऐसा दायित्व उत्पन्न होता है जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है। इस करार में यदि कोई भी पक्ष अपने वचन का पालन करने में त्रुटि करता है, तो अनुबन्ध भंग के लिए दोषी पक्ष पर न्यायालय में मुकदमा किया जा सकता है, कि उस करार में वैध अनुबन्ध के समस्त आवश्यक तत्व विद्यमान हों।

आपको यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऐसा प्रत्येक दायित्व जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सके स्वत: अनुबन्ध नहीं बन जाता। ऐसे दायित्व जो करार के माध्यम के बिना स्वतन्त्र रूप से उत्पन्न होते हैं जैसे न्यायिक निर्णयों न्यायालय की डिक्री या दीवानी अपकार (civil wrongs) से उत्पन्न दायित्व या पति-पत्नी के मध्य हुए करारों को अनुबंध नहीं कह सकते। अत: अनुबन्ध कानून केवल ऐसे वैधानिक दायित्वों से सम्बन्धित कानून हैं जो करारों से उत्पन्न होते हैं। सालमंड ने इस सम्बन्ध में ठीक ही कहा है कि "......यह उन करारों का कानून है जो दायित्वों का निर्माण करते हैं तथा उन दायित्वों का कानून है, जिनका स्रोत करार है।" इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि **प्रत्येक करार, अनुबन्ध नहीं होता लेकिन प्रत्येक अनुबन्ध के लिए करार का होना अति आवश्यक है।**

1.5.3 करार एवं अनुबन्ध में अन्तर

करार	अनुबन्ध
1) प्रस्ताव एवं उसकी स्वीकृति से करार बनता है।	1) करार एवं उसकी प्रवर्तनीयता से अनुबन्ध बनता है।
2) प्रत्येक करार से वैधानिक दायित्व उत्पन्न हो, यह आवश्यक नहीं।	2) अनुबन्ध से निश्चित रूप से वैधानिक दायित्व उत्पन्न होता है।
3) प्रत्येक करार का अनुबन्ध बनना आवश्यक नहीं है।	3) समस्त अनुबन्ध करार होते हैं।
4) करार से बाध्य करने वाला अनुबन्ध उत्पन्न हो यह आवश्यक नहीं।	4) अनुबन्ध करते ही सम्बन्धित पक्ष उससे बाध्य हो जाते हैं।

बोध प्रश्न क

1 कानून से क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

2 व्यापारिक सन्नियम के स्रोत बताइए ?

....

....

....

....

3 करार की परिभाषा कीजिए ?

....

....

....

....

....

4 वैधानिक दायित्व से आपका क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

....

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) कानून ऐसे सिद्धान्तों का समूह है जिसे न्यायपालिका द्वारा प्रवर्तित किया जाता है।..........
ii) व्यापारिक सन्नियम केवल व्यापारी वर्ग पर ही लागू होता है।..............................
iii) प्रथाएं एवं रिति-रिवाज व्यापारिक सन्नियम का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं।......................
iv) अनुबन्ध कानून समस्त दायित्वों का कानून है।..
vi) समस्त अनुबन्ध करार होते हैं।..
vi) मतैक्य के बिना अनुबन्ध हो सकता है।

1.6 अनुबन्धों का वर्गीकरण

अनुबन्धों को कई आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। मुख्य आधार निम्नलिखित हैं:

1 निर्माण के आधार पर

2 निष्पादन के आधार पर

3 प्रवर्तनीयता के आधार पर

1.6.1 निर्माण के आधार पर (On the Basis of Creation)

इस आधार पर अनुबन्ध (1) लिखित या मौखिक हो सकता है, अथवा (2) पक्षकारों के आचरण से या सम्बन्धित परिस्थितियों से उत्पन्न मान लिया जाता है। प्रथम श्रेणी के अनुबन्धों को स्पष्ट अनुबन्ध (express contract) तथा दूसरी श्रेणी वालों को गर्भित अनुबन्ध (implied contract) कहते हैं।

1 स्पष्ट अनुबन्ध: दो पक्षों के बीच हुये ऐसे अनुबन्ध को स्पष्ट अनुबन्ध कहते हैं जो या तो लिखित में या मौखिक हो। स्पष्ट अनुबन्ध में प्रस्ताव एवं स्वीकृति दोनों से सम्बन्धित सारी शर्तें स्पष्ट रूप से लिख कर या बोल कर तय की जाती हैं। उदाहरण: क एक पत्र ख को

लिखता है कि "मैं अपनी कार आपको 30,000 रुपये में बेचने का प्रस्ताव करता हूं", इसके उत्तर में ख एक पत्र क को भेजकर प्रस्ताव स्वीकार कर लेता है। यह एक स्पष्ट अनुबन्ध है। इसी प्रकार जब क अपना स्कूटर मरम्मत के लिए मिस्त्री को देता है और मिस्त्री इसके लिए सहमत हो जाता है, तो यह केवल बोल कर हुआ स्पष्ट अनुबन्ध माना जाएगा।

2 **गर्भित अनुबन्ध**: गर्भित अनुबंध का अर्थ है कि प्रस्ताव और स्वीकृति मौखिक के अतिरिक्त किसी अन्य प्रकार से की जाए। पक्षकारों के आचरण या व्यवहार से भी अनुबन्ध हो सकता है (लिखित या मौखिक शब्दों में नहीं) यह पक्षों के बीच लगातार किए गए व्यवहार से भी उत्पन्न हो सकता है। उदाहरण: एक वर्दीधारी कुली क का सामान रेलवे स्टेशन से बाहर ले जाने के उद्देश्य से क के कहे बिना उठाता है तथा क उस कुली को ऐसा करने देता है, इस स्थिति में कानूनन यह माना जाएगा कि क को कुली की सेवाओं का भुगतान करना होगा। यह क तथा कुली के बीच हुआ गर्भित अनुबन्ध माना जाएगा। इसी प्रकार क जब किसी दिल्ली परिवहन की बस में सवार होता है, तब भी गर्भित अनुबन्ध बन जाता है और क निर्धारित किराया देने के लिए बाध्य है।

अनुबन्ध अधिनियम द्वारा गर्भित अनुबन्ध की एक अन्य श्रेणी को भी मान्यता दी गई है जिसे अर्ध-अनुबन्ध (quasi contracts) कहते हैं (धारा 68 से 72 तक) । सच कहा जाए तो एक अर्ध-अनुबन्ध को किसी भी हालत में अनुबन्ध नहीं कहा जा सकता। इन्हें अनुबंध से मिलते-जुलते सम्बन्ध माना जाता है। ऐसी संविदा में पक्षकारों के बीच हुए करार से अधिकार एवं दायित्व उत्पन्न नहीं होते बल्कि वे कानूनी प्रक्रिया से उत्पन्न होते हैं। उदाहरण-स्वरूप एक दुकानदार क गलती से कुछ माल ख के घर दे आता है। ख उस माल को अपना समझ कर उपभोग कर लेता है। इस दशा में ख उस माल का मूल्य दुकानदार को देने के लिए बाध्य होगा यद्यपि ख ने उस माल को माँगा नहीं था अर्ध-अनुबन्ध के सम्बन्ध में आप इकाई 8 में विस्तार से पढ़ेंगे।

1.6.2 निष्पादन के आधार पर (On the Basis of Execution)

अनुबन्धों का किस सीमा तक निष्पादन हो चुका है, इस आधार पर हम उनका वर्गीकरण ऐसे करते हैं(i) निष्पादित अनुबन्ध (executed contract), तथा (ii) निष्पाद्य अनुबन्ध (executory contracts)।

i) **निष्पादित अनुबन्ध**: यह ऐसा अनुबन्ध है जब दोनों पक्षकार संविधा के अनुसार अपने-अपने दायित्व का पूरी तरह से पालन कर चुके होते हैंऔर उनके लिए कुछ और करना शेष नहीं रहा। उदाहरणार्थ क एक पुस्तक 30 रुपये में ख को बेचने के लिए स्वीकार करता है। क पुस्तक ख को देता है तथा ख 30 रुपये क को दे देता है, यह निष्पादित अनुबन्ध हुआ।

ii) **निष्पाद्य अनुबन्ध**: यह ऐसा अनुबन्ध है जहाँ अनुबन्ध के दोनों पक्षकारों द्वारा अपने-अपने दायित्वों को पूरा करना अभी शेष है। उदाहरणार्थ, क एक पुस्तक 30 रुपये में ख को बेचना स्वीकार करता है। यदि क ने अभी पुस्तक नहीं दी है तथा ख ने मूल्य नहीं चुकाया है, तो यह निष्पाद्य अनुबन्ध होगा।

कभी-कभी अनुबन्ध अंशतः निष्पादित और अंशतः निष्पाद्य भी हो सकते हैं। ऐसा तब होता है जब केवल एक पक्ष ने अपने दायित्व का पालन कर दिया है। उपर्युक्त उदाहरण में, यदि क ने ख को पुस्तक दे दी है परन्तु ख ने मूल्य नहीं चुकाया है, तो यहाँ तक क का सम्बन्ध है, अनुबन्ध निष्पादित है परन्तु ख के लिए अनुबन्ध अभी निष्पाद्य है।

निष्पादन के ही आधार पर, अनुबन्ध को एकपक्षीय (unilateral) या द्विपक्षीय (bilateral) भी कहा जा सकता है। एकपक्षीय अनुबन्ध ऐसा अनुबन्ध होता है जिसमें अनुबन्ध करते समय केवल एक पक्ष को ही अपना दायित्व पूरा करना शेष है, दूसरे पक्ष ने अनुबन्ध करने से पहले या अनुबन्ध करते समय ही अपना दायित्व पूरा कर दिया है। उदाहरणार्थ, क ने बस कंडक्टर से एक टिकट खरीद लिया है और वह पंक्ति में बस की प्रतीक्षा कर रहा है। इस दशा में, जैसे ही क ने टिकट खरीद लिया उसी समय अनुबन्ध बन जाता है। अब दूसरे पक्ष को बस उपलब्ध करानी है जिसमें क यात्रा कर सके। इस प्रकार के अनुबन्ध को एकपक्षीय निष्पाद्य अनुबन्ध भी कहा जाता है। द्विपक्षीय अनुबन्ध में, अनुबन्ध करने के समय दोनों ही पक्षों का अपना-अपना दायित्व पूरा करना शेष है।

1.6.3 प्रवर्तनीयता के आधार पर (On the Basis of Enforceability)

प्रवर्तनीयता के आधार पर अनुबन्ध (i) वैध (valid) (ii) व्यर्थ (void) (iii) व्यर्थनीय (voidable), (iv) अवैधानिक (illegal) अथवा (v) अप्रवर्तनीय (unenforceable) हो

सकता है। इस पाठ्यक्रम में इन शब्दों का प्रयोग बार-बार किया जाएगा। अत: इन शब्दों का अर्थ अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए।

i) **वैध अनुबन्ध**: ऐसा अनुबन्ध जो कानून द्वारा निर्धारित समस्त शर्तों को पूर्ण करता है, वैध अनुबन्ध कहलाता है (इन शर्तों का वर्णन 1.8 में किया गया है) यदि इनमें से किसी एक या अधिक तत्वों का अभाव है तो अनुबन्ध व्यर्थ, व्यर्थनीय, अवैधानिक या अप्रवर्तनीय बन जाता है।

ii) **व्यर्थ अनुबन्ध**: धारा 2 (जे) के अनुसार, **एक अनुबन्ध जब कानून द्वारा प्रवर्तनीय नहीं रह जाता, तो यह उस समय व्यर्थ हो जाता है जब इसकी प्रवर्तनीयता समाप्त हो जाती है।** सरल शब्दों में, जब अनुबन्ध करने के बाद किन्ही कारणों से वह व्यर्थ हो जाता है तो उसे व्यर्थ अनुबन्ध कहते हैं। ऐसे अनुबन्ध का कोई भी कानूनी प्रभाव नहीं होता तथा ये पूर्णत: व्यर्थ होते हैं। इस सम्बन्ध में आपको यह स्मरण रखना चाहिए कि कोई भी अनुबन्ध किया गया था, तब यह पूर्णत: वैध था तथा पक्षकार इससे बाध्य थे परन्तु अनुबन्ध करने के पश्चात् किन्हीं कारणों से यह अप्रवर्तनीय हो जाता है तो इसे व्यर्थ हुआ माना जाता है। निष्पादन की असम्भवता, कानून में परिवर्तन या अन्य किसी कारण से अनुबन्ध व्यर्थ हो जाता है। उदाहरण: **क** ने **ख** से विवाह करने का वचन दिया। बाद में **ख** की मृत्यु हो जाती है। **ख** की मृत्यु होने पर यह अनुबन्ध व्यर्थ हो गया।

व्यर्थ करार तथा व्यर्थ अनुबन्ध में अन्तर समझना महत्वपूर्ण है। धारा 2 (जी) के अनुसार, ऐसा करार जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता, व्यर्थ करार कहलाता है। व्यर्थ करार की स्थिति में किसी अनुबन्ध का जन्म ही नहीं होता। व्यर्थ करार किसी भी पक्ष को कोई अधिकार नहीं देता तथा न ही कोई दायित्व उत्पन्न करते हैं। ये आरम्भ से ही व्यर्थ या प्रभावहीन होते हैं। उदाहरणार्थ, एक अवयस्क के साथ किया गया करार व्यर्थ होता है क्योंकि अवयस्क अनुबन्ध करने के अयोग्य है।

अब आपको यह भली-भांति स्पष्ट हो गया है व्यर्थ करार तथा व्यर्थ अनुबन्ध में बहुत अन्तर है। एक व्यर्थ करार कभी भी अनुबन्ध नहीं बनता, क्योंकि यह तो आरम्भ से ही व्यर्थ होते हैं। इसके विपरीत व्यर्थ अनुबन्ध, जिस समय किए जाते हैं उस समय तो यह पूर्णत: वैध होते हैं परन्तु अनुबन्ध करने के बाद किन्हीं कारणों से व्यर्थ हो जाते हैं। यह ध्यान रहे कि अनुबन्ध कभी भी आरम्भ से ही व्यर्थ नहीं होता, जबकि एक करार आरम्भ से व्यर्थ हो सकता है। इसलिए बाद में जब कोई अनुबन्ध व्यर्थ हो जाता है, तो "व्यर्थ अनुबन्ध" के स्थान "व्यर्थ हो गये अनुबन्ध" कहना अधिक तर्कसंगत होता है।

iii) **व्यर्थनीय अनुबन्ध**: अनुबन्ध अधिनियम की धारा 2 (आई) के अनुसार, **ऐसा करार जो सम्बन्धित एक या अधिक पक्षों की इच्छा पर प्रवर्तनीय हो, किन्तु दूसरे पक्ष या पक्षों की इच्छा पर नहीं, व्यर्थनीय अनुबन्ध कहलाता है।** सरल शब्दों में, "व्यर्थनीय अनुबन्ध" से आशय ऐसे अनुबन्ध से है जो केवल एक पक्षकार की इच्छा पर समाप्त किया जा सके और वह पक्ष जिसकी इच्छा पर अनुबन्ध समाप्त किया जा सकता है उसे पीड़ित पक्ष कहते हैं। वह पक्ष जिसे अनुबन्ध रद्द कराने का अधिकार है, जब तक अनुबन्धों को रद्द नहीं करता तब तक ऐसा अनुबन्ध वैध बना रहता है। प्राय: जब किसी एक पक्ष की सहमति स्वतन्त्र नहीं होती, तब अनुबन्ध को व्यर्थनीय माना जाता है। अन्य शब्दों में, जब किसी पक्ष की सहमति बल प्रयोग, अनुचित प्रभाव, मिथ्यावर्णन अथवा कपट या इनमें ये किसी भी कारण से प्रभावित हुई तो अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। जिस पक्ष की सहमति स्वतन्त्र नहीं होती, उस पक्ष को अनुबन्ध रद्द कराने का अधिकार प्राप्त है। उदाहरण के लिए **क ख** को जान से मार डालने की धमकी देता है यदि **ख** अपना नया स्कूटर **क** के हाथ 5,000 रुपये में नहीं बेचता **ख** सहमत हो जाता है। इस स्थिति में **ख** की सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गई मानी जायेगी। अत: पीड़ित पक्ष **ख** की इच्छा पर अनुबन्ध व्यर्थनीय है। यदि **ख** अनुबन्ध को रद्द कराने के अपने अधिकार का उचित समय के भीतर प्रयोग नहीं करता तथा इसी अन्तराल में यदि कोई तृतीय पक्ष उचित प्रतिफल द्वारा विषय वस्तु के सम्बन्ध में कोई अधिकार प्राप्त कर लेता है तो फिर अनुबन्ध को समाप्त नहीं किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, **अ** कपट द्वारा **ब** से एक अंगूठी प्राप्त कर लेता है, यहाँ **ब** की स्वीकृति स्वतंत्र नहीं है अत: **ब** अनुबन्ध को समाप्त कर सकता है। परन्तु यदि इससे पहले कि **ब** अनुबन्ध समाप्त करने के अपने विकल्प का प्रयोग करे, **अ** उस अंगूठी को **स** को बेच देता है जो उस अंगूठी का उचित मूल्य देकर सद्भावना में खरीदता है इस अवस्था में संविदा को समाप्त नहीं किया जा सकता है। तो फिर अनुबन्ध प्रवर्तनीय होता है। इस सम्बन्ध में यह स्मरण रहे कि अनुबन्ध को रद्द कराने का अधिकार दूसरे पक्ष (दोषी पक्ष) को नहीं है। अत: यदि पीड़ित पक्ष

अनुबन्ध को बनाए रखता है तो इसे कानून द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है। परन्तु जब पीड़ित पक्ष अनुबन्ध को रद्द करता है तो दूसरा पक्ष भी अनुबन्ध के अन्तर्गत अपने दायित्व को पूरा करने से मुक्त हो जाता है तथा यदि पीड़ित पक्ष ने उस संविदा के अन्तर्गत कुछ लाभ प्राप्त कर लिया है, तो वह लाभ उसे उस पक्ष को वापस लौटाना पड़ेगा जिस पक्ष से वह लाभ प्राप्त किया गया था। (धारा 64)

व्यर्थ करार तथा व्यर्थनीय अनुबन्ध में अन्तर

व्यर्थ	व्यर्थनीय
1) यह आरम्भ से ही व्यर्थ होता है।	1) जब तक पीड़ित पक्ष अनुबन्ध को रद्द नहीं करता, तब तक अनुबन्ध वैध रहता है।
2) वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्वों में से कोई भी तत्व विद्यमान (स्वतन्त्र सहमति के अलावा) नहीं हो, तो करार व्यर्थ होता है।	2) यदि किसी एक पक्ष की सहमति स्वतन्त्र नहीं है, तो अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है।
3) इसे कोई भी पक्ष परिवर्तित नहीं करा सकता।	3) यदि पीड़ित पक्ष चाहे तो अनुबन्ध वैध बना रहता है तथा प्रवर्तनीय रहता है।
4) तीसरे पक्षकारों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता।	4) अनुबन्ध रद्द किए जाने से पहले यदि कोई निर्दोष पक्ष प्रतिफल के बदले अधिकार प्राप्त करता है, तो उसे श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त होते हैं।
5) समय व्यतीत हो जाने से भी यह वैध अनुबन्ध नहीं बन सकता, यह सदैव व्यर्थ रहता है।	5) यदि उचित समय के भीतर अनुबन्ध रद्द न किया जाये, तो अनुबन्ध वैध हो सकता है।
6) हर्जाने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।	6) पीड़ित पक्ष हर्जाने की माँग कर सकता है।

अवैध या कानून के विरुद्ध अनुबन्ध (illegal contracts) "अवैध" शब्द का अर्थ है "कानून के प्रतिकूल"। यह तो आप जानते ही हैं कि कानून द्वारा प्रवर्तनीय करार अनुबन्ध कहलाते हैं, अतः यह अवैध नहीं हो सकते। किसी करार को ही केवल अवैध या कानून के विरुद्ध कहा जा सकता है। अतः "अवैधानिक अनुबन्ध" के स्थान पर "**अवैधानिक करार**" (illegal agreements) शब्द प्रयुक्त करना अधिक उपयुक्त होगा।

अवैध करार वे होते हैं जिन्हें अनुबन्ध अधिनियम के प्रावधानों द्वारा स्पष्ट रूप से अवैध घोषित कर दिया गया हो या जो देश के किसी अन्य कानून के नियमों का उल्लंघन करें। ऐसे करार कानून द्वारा अप्रवर्तनीय होते हैं। क्योंकि ऐसा करार शुरू से ही व्यर्थ होता है। उदाहरण, **क ख** को 50,000 रुपये देने का करार करता है यदि **ख ग** की हत्या कर दे। यह अवैध करार है, क्योंकि करार का उद्देश्य अवैधानिक है। यदि ख ग की हत्या भी कर देता है तो वह क से निर्धारित रकम की माँग नहीं कर सकता।

'**अवैध करार**' शब्द '**व्यर्थ करार**' शब्द से अधिक विस्तृत है। सभी अवैध करार व्यर्थ होते हैं परन्तु सभी व्यर्थ करार अवैध हों, यह अनिवार्य नहीं है। जैसे कि अवयस्क को एक स्कूटर बेचने का करार व्यर्थ होता है परन्तु अवैध नहीं, क्योंकि इस करार का उद्देश्य अवैधानिक नहीं है। अवैध करार तथा व्यर्थ करार में एक अन्य महत्वपूर्ण अन्तर समपार्श्विक या सहायक व्यवहारों (collateral transactions) के सम्बन्ध में है। अवैध करार की स्थिति में न केवल मुख्य करार व्यर्थ होता है, बल्कि समपार्श्विक व्यवहार भी व्यर्थ हो जाते हैं। उदाहरण, **क ग** की हत्या करने के लिए **ख** को नियुक्त करता है तथा **क ख** को भुगतान करने के लिए **घ** से 10,000 रुपये उधार लेता है। **घ** को ऋण के उद्देश्य की जानकारी है और वह ऋण दे देता है। इस मामले में दो करार हैं, एक **क** और **ख** के बीच तथा दूसरा **क** और **घ** के बीच। यहां पर क्योंकि **क** और **ख** के बीच हुआ मुख्य करार ही अवैध है, इसलिए क और घ के बीच हुआ करार, जो समपार्श्विक व्यवहार है, वह भी व्यर्थ हो जाता है। **घ** अपनी रकम क से वसूल नहीं कर सकता। आइए एक अन्य उदाहरण लेकर और स्पष्ट करते हैं। **क** शर्त या बाजी हारने से सम्बन्धित **ख** का ऋण भुगतान करने के लिए **घ** से राशि उधार लेता है। बाजी समझौते के बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे। यहां **क** और **ख** के

बीच हुआ मुख्य करार व्यर्थ है, धारा 30 के अन्तर्गत बाजी या शर्त के करार व्यर्थ घोषित किए गए हैं, अवैधानिक नहीं। अत: क तथा घ के बीच ऋण लेने का जो समपार्श्विक करार है, उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। घ को ऋण के उद्देश्य की जानकारी है या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। उपर्युक्त उदाहरणों से अब आपको भली-भाँति स्पष्ट हो गया होगा कि **अवैध करार के समपार्श्विक व्यवहार भी व्यर्थ हो जाते हैं परन्तु व्यर्थ करार के समपार्श्विक व्यवहारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, अर्थात् वे वैध बने रहते हैं।**

व्यर्थ तथा अवैध करार में अन्तर:

व्यर्थ	अवैध
1) सभी व्यर्थ करार अनिवार्य रूप से अवैध नहीं होते।	1) समस्त अवैध करार व्यर्थ होते हैं।
2) व्यर्थ करार के समपार्श्विक व्यवहारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता अर्थात् वे व्यर्थ नहीं होते।	2) अवैध करार के समपार्श्विक व्यवहारों पर भी प्रभाव पड़ता है अर्थात् वे भी व्यर्थ होते हैं।
3) यदि कोई करार बाद में व्यर्थ होता है तो जो लाभ प्राप्त किया गया है, वह दूसरे पक्ष को लौटाना पड़ता है।	3) यदि कोई अग्रिम रकम या वस्तु दी गई है तो उसे वापस नहीं माँगा जा सकता।

5 **अप्रवर्तनीय अनुबन्ध**: (Unenforceable contracts) ऐसे अनुबन्ध जो वैध तो होते हैं परन्तु कुछ तकनीकी दोषों के कारण प्रवर्तित नहीं कराए जा सकते, 'अप्रवर्तनीय अनुबन्ध' कहलाते हैं। यह करार का पंजीयन न कराने, उस पर अपेक्षित मूल्य के टिकट न लगाने आदि से हो सकता है। जैसा कि आप बाद में पढ़ेंगे कि कुछ समझौते पंजीकृत होने के बाद ही लागू किए जा सकते हैं। कई बार कानून के द्वारा कुछ विशेष करारों का लिखित में होना अनिवार्य माना गया है। ऐसी दशा में यदि करार लिखित नहीं है तो वह अप्रवर्तनीय हो जाएगा। उदाहरणार्थ, पंच-निर्णय के लिए मौखिक करार अप्रवर्तनीय होता है क्योंकि पंच- निर्णय कानून के अनुसार ऐसा करार लिखित होना चाहिए। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि अधिकांश मामलों में तकनीकी दोषों को दूर करके अनुबन्ध को प्रवर्तित कराया जा सकता है। जैसे कि कम मुद्रा का टिकट लगाया गया अनुबन्ध अप्रवर्तनीय होता है परन्तु वांछित टिकट लगाकर ऐसे अनुबन्धों का प्रवर्तन किया जा सकता है।

चित्र 1.1 देखिए। इसमें अनुबन्ध के विभिन्न प्रकारों को समझाया गया है।

चित्र 1.1 अनुबन्धों का वर्गीकरण

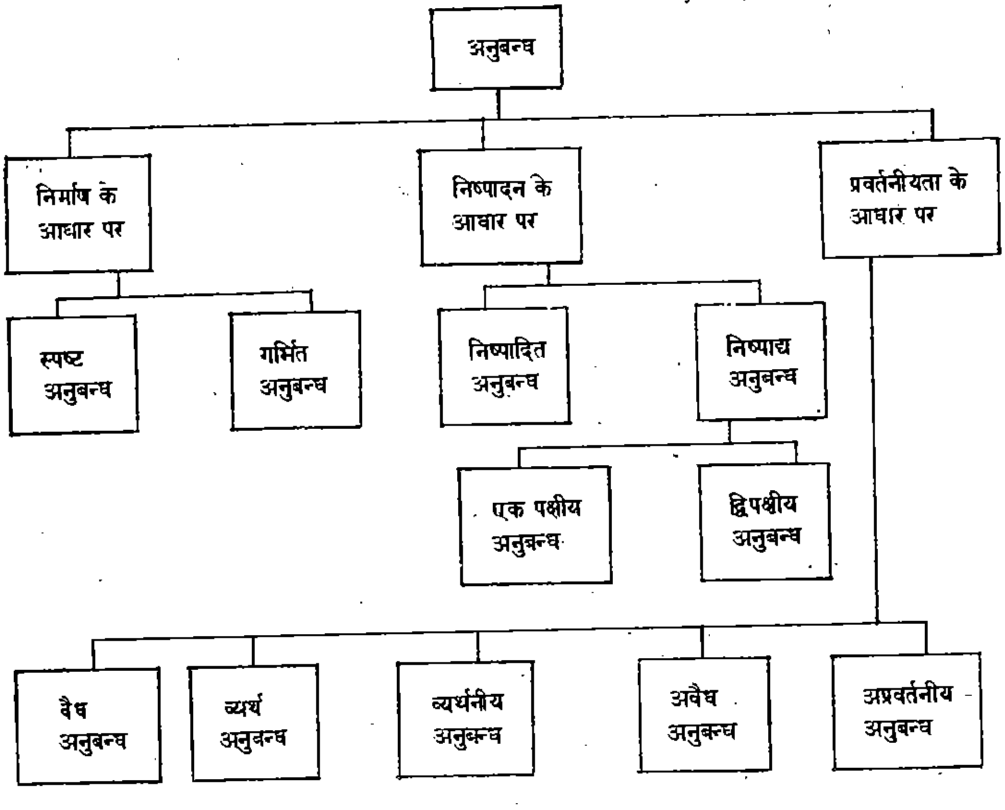

बोध प्रश्न ख

1 व्यर्थ अनुबन्ध क्या होते हैं?

....

....

....

....

2 अनुबन्ध कब व्यर्थनीय होता है ?

....

....

....

....

3 अवैध करार क्या होते हैं?

....

....

....

....

4 बताइए कि क्या निम्नलिखित स्थितियों में अनुबन्ध का निर्माण हुआ। उत्तर 'हाँ या नहीं' में दीजिए।

i) क सार्वजनिक टेलीफोन बूथ में एक रुपये का सिक्का डालता है। ....

ii) क मेरठ के लिए डी.टी.सी. बस पर सवार होता है। ....

iii) क तस्करी का माल भारत में लाने के लिए ख को नियुक्त करता है। ....

iv) क,ख को अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित करता है। ....

v) क सफाई के काम के लिए ख को 20 रुपयों में नियुक्त करता है। ....

5 निम्नलिखित मामलों में एक या दो शब्दों में अपना निर्णय कीजिए:

i) क,ख को भोजन के लिए निमन्त्रित करता है। ख निमन्त्रण स्वीकार कर लेता है परन्तु समय पर नहीं आ पाता। क्या क,ख पर हर्जाने के लिए दावा कर सकता है ?

ii) क, ख से विवाह के लिए सहमत हो जाता है। विवाह से पहले ही ख की मृत्यु हो जाती है। अनुबन्ध का क्या होगा ?

iii) क, अपने मित्र ख के विवाह पर एक अंगूठी देने का वचन देता है। वह अंगूठी नहीं दे पाता। क्या ख अंगूठी माँग सकता है ?

iv) क ने एक स्कूटर ख को यह कह कर बेचा कि यह एकदम नया है। वास्तव में स्कूटर नया नहीं था। क्या ख अनुबन्ध रद्द कर सकता है।

v) क, ग की पिटाई कर देने के लिए ख को 200 रुपये देने का वचन देता है। ख, ग की पिटाई कर देता है। क्या ख, क से रकम वसूल कर सकता है ?

1.7 वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्व

यह आप पहले पढ़ चुके हैं कि कानून द्वारा प्रवर्तनीय करार ही अनुबन्ध कहलाते हैं। कानून द्वारा प्रवर्तित कराने के लिए करार में कुछ आवश्यक तत्वों का होना अनिवार्य है। अनुबन्ध अधिनियम की

कानून के विपरीत है, वैध नहीं होता। उदाहरणार्थ, यदि क अपना मकान किराए पर जुआ खेलने के लिए दे देता है, तो यह करार व्यर्थ होगा क्योंकि करार का उद्देश्य गैरकानूनी है। यदि करार का उद्देश्य धारा 23 में बताए गए किसी भी कारण से कानून के विरुद्ध हो जाता है, तो करार व्यर्थ होता है। अत: वैध अनुबन्ध के लिए प्रतिफल एवं उद्देश्य, दोनों ही वैध एवं न्यायसंगत होने चाहिए।

7 **करार स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित न किया गया हो:** करार ऐसा नहीं होना चाहिए जिसे विधि द्वारा स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित कर दिया गया हो। धारा 11,20 तथा 23 से 30 तक कुछ ऐसे करारों का वर्णन किया गया है जो स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित कर दिए गये हैं उदाहरण के लिए, अवयस्क के साथ किया गया करार, ऐसा करार जिसमें प्रतिफल न हो, विवाह रोकने सम्बन्धी करार, व्यापार में रूकावट डालने वाले करार, कानूनी प्रक्रिया में रूकावट डालने तथा बाजी या शर्त के करार।

उदाहरण: क, ख को 1,000 रुपये देने का वचन देता है यदि ख आजीवन विवाह न करे। ख आजीवन विवाह न करने का वचन देता है। यह समझौता करार वैध नहीं होगा क्योंकि यह विवाह में रूकावट डालने वाला करार है तथा ऐसे करार को धारा 26 द्वारा स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित किया गया है।

आपको यह याद रखना चाहिए कि यदि किसी करार में वैध अनुबन्ध के समस्त आवश्यक तत्व विद्यमान हैं परन्तु यदि यह अधिनियम में वर्णित स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित करारों में से किसी एक में आता है, तो पृथ्वी की कोई भी ताकत इसे वैध अनुबन्ध नहीं बना सकती।

8 **सुनिश्चित अर्थ:** अनुबन्ध अधिनियम की धारा 29 में यह प्रावधान है कि जिन करारों का अर्थ निश्चित नहीं है या निश्चित नहीं किया जा सकता, वे व्यर्थ होते हैं। अत: वैध अनुबन्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि करार की शर्तें निश्चित एवं स्पष्ट होनी चाहिए अर्थात् अस्पष्ट या भ्रमात्मक नहीं होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, क 100 टन तेल ख को बेचने का करार करता है। इस करार से यह स्पष्ट नहीं होता कि किस प्रकार का तेल बेचा जाएगा। अत:, अनिश्चितता के कारण यह करार व्यर्थ माना जाएगा। परन्तु यदि परिस्थितियों से करार का अर्थ स्पष्ट होता है, तो इसे वैध अनुबन्ध माना जाएगा। उपर्युक्त उदाहरण में यदि हमें मालूम है कि केवल सरसों के तेल का ही व्यापार करता है, तो क और ख के बीच हुआ करार वैध अनुबन्ध माना जाएगा, क्योंकि परिस्थितियों से करार का अर्थ सरलता से स्पष्ट हो जाता है।

9 **निष्पादन के योग्य:** करार की शर्तें ऐसी होनी चाहिए जिनका पालन किया जा सके। किसी असम्भव कार्य को करने का करार व्यर्थ होता है (धारा/56) यदि करार में वर्णित कार्य को करना भौतिक एवं कानूनी दृष्टि से असम्भव है तो उस करार को प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। इसका कारण एकदम सरल है। हम करार का पालन करने के उद्देश्य से करार करते हैं और जब उसका पालन करना ही एकदम असम्भव हो तो ऐसे करार करने का क्या लाभ? उदाहरण के लिए क, ख को वचन देता है कि वह दो समानान्तर रेखाओं के बीच स्थान घेरेगा या वह 200 किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ेगा या वह सूर्य से सोना लाएगा। ये समस्त कार्य ऐसे हैं जिनका पालन करना एकदम असम्भव है अत: ऐसे करार वैध नहीं माने जाते हैं।

10 **वैधानिक औपचारिकताएँ:** यह आप पहले पढ़ चुके हैं कि मौखिक करार भी उतना ही वैध है जितना कि लिखित करार। अनुबन्ध अधिनियम में कहीं भी कोई ऐसा नियम नहीं है जिसके द्वारा यह कहा गया हो कि अनुबन्ध की वैधता के लिए इसका लिखित में होना अनिवार्य है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में करार का लिखित होना कानूनन आवश्यक माना गया है, जैसे कि अवधि-वर्जित ऋण को भुगतान करने का वचन सदैव लिखित ही होना चाहिए अचल सम्पत्ति के विक्रय का करार भी सन् 1882 के सम्पत्ति का अंतरण अधिनियम के अंतर्गत लिखित एवं पंजीकृत होना चाहिए। ऐसी स्थितियों में करार के लिखित होने, पंजीकृत होने, टिकट लगाने आदि की वैधानिक औपचारिकताओं का पालन अवश्य किया जाना चाहिए। यदि इन वैधानिक औपचारिकताओं का पालन नहीं किया जाता तो अनुबन्ध को विधि द्वारा प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्वों का अध्ययन करने के पश्चात् अब यह बात आपको भली-भाँति स्पष्ट हो गई कि किसी करार को वैध अनुबन्ध का रूप देने के लिए अनुबन्ध में से समस्त तत्व विद्यमान होने चाहिए। यदि इन आवश्यक तत्वों में से कोई भी तत्व विद्यमान नहीं है या गायब हैं तो

उस करार को कानून द्वारा प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

1.8 सारांश

मनुष्य के आचरण एवं व्यवहारों से सम्बन्धित नियमों के ऐसे समूह को कानून कहते हैं। जिन्हें न्यायालय में प्रवर्तित कराया जा सके। कानून की अनेक शाखाएं हैं जैसे– अन्तर्राष्ट्रीय कानून, सांविधिक कानून, फौजदारी कानून, दीवानी कानून आदि। व्यापारिक सन्नियम दीवानी कानून का वह महत्वपूर्ण भाग है जो व्यापारिक व्यवहारों से सम्बन्धित होता है। भारत में व्यापारिक सन्नियम के मुख्य स्त्रोत आंग्ल कानून, भारतीय परिनियम कानून, पिछले न्यायिक निर्णय, स्थानीय रीति-रिवाज़ एवं प्रथाएं हैं। अनुबन्ध अधिनियम व्यापारिक सन्नियम का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है, वास्तव में यह व्यापारिक सन्नियम का आधार है। इसमें अनुबन्ध से सम्बन्धित सामान्य नियमों का वर्णन किया गया है, तथा कुछ विशिष्ट प्रकार के अनुबन्धों से सम्बन्धित विशेष प्रावधान भी दिए गए हैं।

अनुबन्ध वह करार या समझौता है जो कानून द्वारा प्रवर्तनीय हो। अत: इसके दो मुख्य तत्व हैं: (i) कोई करार, तथा (ii) कानून द्वारा प्रवर्तनीयता।

अनुबन्धों का वर्गीकरण उनके (i) निर्माण, (ii) निष्पादन, तथा (iii) प्रवर्तनीयता के आधार पर किया जा सकता है। निमार्ण के दृष्टिकोण से अनुबन्ध स्पष्ट या गर्भित हो सकता है। निष्पादन की दृष्टि से अनुबन्ध निष्पादित या निष्पाद्य हो सकता है अथवा यह एक-पक्षीय या द्विपक्षीय हो सकता है। प्रवर्तनीयता के आधार पर अनुबन्ध वैध, व्यर्थ, व्यर्थनीय, अवैध या अप्रवर्तनीय हो सकता है।

कानून द्वारा अप्रवर्तनीय करार, "व्यर्थ करार" कहलाता है। "व्यर्थ अनुबन्ध" शब्द का प्रयोग ऐसे करारों के लिए किया जाता है जो निर्माण के समय पूर्णत: वैध थे, परन्तु बाद में किन्हीं कारणों से वे व्यर्थ हो गये। "व्यर्थनीय अनुबन्ध" वे होते हैंजो अनुबन्ध के एक पक्ष (पीड़ित पक्ष) की इच्छा पर रद्द किए जा सकते हैं, दूसरे पक्ष की इच्छा पर उन्हें रद्द नहीं किया जा सकता। एक "अवैध करार" वह होता है जिसका उद्देश्य या प्रतिफल अवैध या गैर कानूनी होता है। ऐसे अनुबन्ध भी व्यर्थ तथा अप्रवर्तनीय होते हैं। "अप्रवर्तनीय अनुबन्ध" से आशय ऐसे अनुबन्ध से है जो अपने आप में पूर्णतया वैध है, परन्तु किसी तकनीकी दोष के कारण उसका प्रवर्तन नहीं किया जा सकता।

करार को वैध अनुबन्ध बनाने के लिए कुछ आवश्यक तत्वों का विद्यमान होना आवश्यक है। ये तत्व हैं: (i) उचित प्रस्ताव एवं उसकी उचित स्वीकृति, (ii) कानूनी सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छा, (iii) पक्षकारों की स्वतन्त्र सहमति, (iv) पक्षकारों की अनुबन्ध करने की क्षमता, (v) वैध प्रतिफल, (vi) करार का उद्देश्य वैध होना चाहिए, (vii) करार स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित न कर दिया हो, (viii) करार की शर्तें सुनिश्चित एवं स्पष्ट होनी चाहिए, (ix) करार सम्बन्धी कार्य ऐसा हो जिसे करना सम्भव हो, तथा (x) यदि पंजीकृत जैसी कुछ औपचारिकताएँ हों तो उन्हें पूरा कर देना चाहिए।

1.9 शब्दावली

करार: प्रत्येक वचन या वचनों का वह समूह है जिनमें प्रत्येक वचन किसी दूसरे वचन का प्रतिफल है।

द्विपक्षीय अनुबन्ध: ऐसा अनुबन्ध जिसमें अभी दोनों पक्षकारों को अपने-अपने वचन का पालन करना शेष है।

मैतक्य: जब पक्षकार उसी विषय-वस्तु पर समान भाव से सोचते हैं।

अनुबन्ध: कानून द्वारा प्रवर्तनीय करार अनुबन्ध होता है।

स्पष्ट अनुबन्ध: लिखित या मौखिक अनुबन्ध को स्पष्ट अनुबन्ध कहते हैं।

अवैध करार: ऐसा करार जिसका उद्देश्य कानून के प्रतिकूल है, अवैध करार कहलाता है।

गर्भित अनुबन्ध: पक्षकारों के आचरण से मान लिया जाने वाला करार, गर्भित अनुबन्ध कहलाता है।

दायित्व: किसी निश्चित कार्य को करने या नहीं करने का वचन दायित्व होता है।

वचन: स्वीकृत प्रस्ताव 'वचन' होता है।

अप्रवर्तनीय अनुबन्ध: ऐसा अनुबन्ध जो वैध तो है परन्तु किसी तकनीकी कमी के कारण प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

एकपक्षीय अनुबन्ध: ऐसा अनुबन्ध जिसमें केवल एक पक्ष को अपने दायित्व का पालन करना शेष है, दूसरे पक्ष ने अनुबन्ध करते समय ही अपने दायित्व का पालन कर दिया था।

वैध अनुबन्ध: कानून द्वारा प्रवर्तनीय करार को वैध अनुबन्ध कहते हैं।

व्यर्थ करार: ऐसा करार जिसे कानून द्वारा प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

आरम्भ से ही व्यर्थ: ऐसे करार जो आरम्भ से ही व्यर्थ होते हैं।

व्यर्थ अनुबन्ध: ऐसा करार जो करते समय तो पूर्णतया वैध था परन्तु बाद में व्यर्थ हो गया।

व्यर्थनीय अनुबन्ध: ऐसा अनुबन्ध जिसे पीड़ित पक्ष की इच्छा पर रद्द किया जा सके।

1.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 5 (i) सही (ii) गलत (iii) सही (iv) गलत (v) सही (vi) गलत

ख) 4(i) हाँ (ii) हाँ (iii) नहीं (iv) नहीं (v) हाँ

5(i) नहीं (ii) अनुबन्ध व्यर्थ हो गया (iii) नहीं (iv) हाँ (v) नहीं

1.11 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1 अनुबन्ध की परिभाषा कीजिए। वैध अनुबन्ध के आवश्यक तत्वों की व्याख्या कीजिए।

2 निम्नलिखित कथनों पर टिप्पणी कीजिए।

क) "सभी अनुबन्ध करार होते हैं। परन्तु सभी करार, अनुबन्ध नहीं होते।"

ख) "अनुबन्ध अधिनियम समस्त करार सम्बन्धी कानून नहीं है और न ही वह समस्त दायित्व सम्बन्धी कानून है।"

ग) "व्यापार और वाणिज्य करारों में यह माना जाता है कि सम्बन्धित पक्षों का इरादा कानूनी सम्बन्ध स्थापित करना है।"

3 अन्तर बताइए:

क) व्यर्थ एवं व्यर्थनीय अनुबन्ध

ख) व्यर्थ एवं अवैध करार

4 निम्नलिखित का कारण सहित उत्तर दीजिए।

i) क शीत ऋतु अवकाश में ख को अपने पास रहने के लिए आमन्त्रित करता है। ख निमन्त्रण स्वीकार कर लेता है और क को इसकी सूचना दे देता है। जब ख, क के घर पहुँचता है तो उसे घर पर ताला लगा मिलता है और उसे होटल में रहना पड़ता है। क्या ख, क से मुआवजे की माँग कर सकता है?

ii) क ने ख के कहे बिना ख के जूतों पर पालिश कर दी। ख, क को जूते पालिश करने से

रोकने का कोई प्रयास भी नहीं करता है। क्या ख, क को भुगतान करने के लिए बाध्य है?

iii) क ने अपने पुत्र को प्रति माह 100 रुपये जेब खर्च देने का वचन दिया। तीन माह बाद क ने जेब खर्च देना बन्द कर दिया। पुत्र को सलाह दीजिए।

iv) क, ख को सरकारी दफ्तर में नौकरी दिलाने का वचन देता है, तथा ख 5,000 रुपये क को देने का वचन देता है। क्या यह करार वैध है?

v) क, ख के विवाह पर 1,000 रुपये का उपहार देने का वचन देता है। क अपना वायदा पूरा नहीं कर पाता। क्या ख रकम वसूल कर सकेगा?

vi) क ने एक विशिष्ट घोड़ा ख को बेचने का करार किया। बाद में पता चला कि अनुबन्ध करते समय घोड़े की मृत्यु हो चुकी थी। पक्षकारों को सलाह दीजिए।

संकेत:

i) नहीं ख, क से क्षतिपूर्ति की माँग नहीं कर सकता क्योंकि उनके बीच हुआ करार सामाजिक करार सामाजिक प्रकृति का है तथा उनका इरादा कानूनी सम्बन्ध स्थापित करना नहीं था।

ii) हाँ, ख भुगतान करने के लिए बाध्य है क्योंकि ख ने अपने आचरण से क की सेवाओं को स्वीकारा है, यह गर्भित अनुबन्ध है।

iii) पुत्र अपने पिता को बाध्य नहीं कर सकता, क्योंकि पक्षकारों का इरादा कानूनी सम्बन्ध स्थापित करना नहीं था। इस तत्व के अभाव में यह करार, अनुबन्ध नहीं बनेगा। यह केवल एक करार है।

iv) नहीं, यह करार वैध नहीं है, क्योंकि इस करार का उद्देश्य अवैध तथा लोक नीति के विरुद्ध है।

v) नहीं, ख रकम वसूल नहीं कर सकता, क्योंकि क के वचन के लिए कोई प्रतिफल नहीं है, तथा प्रतिफल बिना अनुबन्ध नहीं हो सकता।

vi) यहाँ दोनों पक्ष अनुबन्ध की विषय- वस्तु (घोड़ा) के अस्तित्व के बारे में गलती पर थे, जब घोड़ा ही जीवित नहीं था तो करार का कोई महत्व नहीं है, यह करार आरम्भ से ही व्यर्थ माना जाएगा।

> **नोट:** इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 2 प्रस्ताव एवं स्वीकृति

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 प्रस्ताव
  2.2.1 प्रस्ताव किसे कहते हैं?
  2.2.2 प्रस्ताव कैसे किया जाता है ?
  2.2.3 प्रस्ताव किसको किया जाता है ?
  2.2.4 वैध प्रस्ताव संबंधी कानूनी नियम
  2.2.5 क्रास-ऑफर
  2.2.6 खुला या स्थायी प्रस्ताव
2.3 स्वीकृति
  2.3.1 स्वीकृति क्या होती है ?
  2.3.2 स्वीकृति कौन दे सकता है ?
  2.3.3 स्वीकृति किस प्रकार दी जाती है ?
  2.3.4 वैध स्वीकृति संबंधी कानूनी नियम
2.4 प्रस्ताव एवं स्वीकृति का संप्रेषण
  2.4.1 प्रस्ताव का संप्रेषण
  2.4.2 स्वीकृति का संप्रेषण
  2.4.3 टेलीफोन द्वारा अनुबन्ध
2.5 प्रस्ताव एवं स्वीकृति का खंडन
  2.5.1 प्रस्ताव का खंडन
  2.5.2 स्वीकृति का खंडन
  2.5.3 खंडन का संप्रेषण
2.6 प्रस्ताव की समाप्ति
2.7 सारांश
2.8 शब्दावली
2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- प्रस्ताव और स्वीकृति का अर्थ स्पष्ट कर सकें,
- वैध प्रस्ताव सम्बन्धी कानूनी नियमों की व्याख्या कर सकें,
- प्रस्ताव का निविदा या टेण्डर तथा प्रति-प्रस्ताव से अन्तर कर सकें,
- वैध स्वीकृति सम्बन्धी कानूनी नियमों की व्याख्या कर सकें,
- प्रस्ताव एवं स्वीकृति के संप्रेषण सम्बन्धी नियमों का वर्णन कर सकें,
- प्रस्ताव एवं स्वीकृति के खंडन सम्बन्धी नियमों की व्याख्या कर सकें,
- प्रस्ताव कब समाप्त होता है, यह स्पष्ट कर सकें।

2.1 प्रस्तावना

आपने इकाई 1 में पढ़ा कि कानून द्वारा प्रवर्तनीय करार अनुबन्ध कहलाता है, तथा किसी करार को कानून द्वारा प्रवर्तित कराने के लिए कुछ आवश्यक तत्वों का विद्यमान होना आवश्यक है। आपने यह भी पढ़ा है कि करार के लिए दो पक्षों का होना आवश्यक है, एक पक्ष प्रस्ताव करे और दूसरा उस प्रस्ताव को स्वीकार करे। इस प्रकार करार बनाने के लिए प्रस्ताव एवं स्वीकृति आरंम्भिक चरण हैं। इस इकाई में आप वैध प्रस्ताव एवं वैध स्वीकृति के विभिन्न नियमों का अध्ययन करेंगे, तथा यह भी पढ़ेंगे कि प्रस्ताव और स्वीकृति का संप्रेषण तथा उनका खंडन कैसे किया जाता है।

2.2 प्रस्ताव (Offer)

2.2.1 प्रस्ताव किसे कहते हैं?

आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैंकि वैध अनुबन्ध का निर्माण करने के लिए एक वैध प्रस्ताव, तथा उस प्रस्ताव की वैध स्वीकृति अवश्य होनी चाहिए। भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 2 (क) के अनुसार प्रस्ताव की परिभाषा निम्न प्रकार से की गई है:

> "जब एक व्यक्ति किसी कार्य को करने या न करने की अपनी इच्छा किसी दूसरे व्यक्ति के सामने इस उद्देश्य से प्रकट करता है कि वह व्यक्ति उस कार्य को करने या न करने के बारे में अपनी सहमति दे, तो यह कहा जाएगा कि पहले व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति के सामने प्रस्ताव रखा है।"

प्रस्ताव की उपर्युक्त परिभाषा से आप देखते हैंकि प्रस्ताव के निम्नलिखित तत्व होते हैं:

i) **इसमें किसी कार्य को करने या न करने की इच्छा या तत्परता अभिव्यक्त की जानी चाहिए।** इस प्रकार प्रस्ताव सकारात्मक अथवा नकारात्मक हो सकता है। उदाहरण के लिए, क अपनी पुस्तक 30 रुपये में ख को बेचने का प्रस्ताव करता है, इसमें क किसी कार्य को करने का प्रस्ताव कर रहा है— अपनी पुस्तक बेचने का यह प्रस्ताव क के लिए सकारात्मक कार्य है। इसके विपरीत क, ख के विरुद्ध मुकदमा दायर न करने का प्रस्ताव करता है यदि ख बकाया रकम 1,000 रुपये का भुगतान क को कर दे। यह क का नकारात्मक या "किसी कार्य को न करने का प्रस्ताव है क्योंकि क,ख के विरुद्ध दावा न करने का प्रस्ताव कर रहा है।"

ii) **यह सदैव किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति किया जाता है,** क्योंकि कोई भी व्यक्ति स्वयं अपने सामने कोई प्रस्ताव नहीं रख सकता।

iii) **वह दूसरे व्यक्ति की सहमति प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए।** इच्छा की अभिव्यक्ति को प्रस्ताव नहीं कहते, जैसे "यदि मुझे अपने फर्नीचर का अच्छा मूल्य मिले तो मैं उसे बेच दूं"— यह प्रस्ताव नहीं है।

प्रस्ताव करने वाले व्यक्ति को "प्रस्तावना" (offeror) या "वचनदाता" (promisor) कहते हैं तथा जिसके सामने प्रस्ताव किया जाता है उसे "प्रस्ताविती" (offeree) कहते हैं। जब प्रस्ताविती प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है तो उसे 'स्वीकर्त्ता' (acceptor) या 'वचनग्रहीता' (promisor) कहते हैं। उदाहरण के लिए, राम अपना स्कूटर 10,000 रुपये में प्रेम के हाथ बेचने का प्रस्ताव करता है। यहाँ राम ने प्रस्ताव किया है, उसे प्रस्तावक या वचनदाता कहते हैं। प्रेम के समक्ष प्रस्ताव किया गया है, उसे प्रस्ताविती कहते हैं, तथा यदि वह 10,000 रुपये में स्कूटर खरीदने को तैयार है तो वह स्वीकर्त्ता या वचनग्रहीता बन जाता है।

2.2.2 प्रस्ताव कैसे किया जाता है?

वचनदाता द्वारा किसी भी कार्य को करके प्रस्ताव किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप प्रस्ताव की जानकारी दूसरे पक्ष को हो जाए। प्रस्ताव स्पष्ट (express) या गर्भित (implied) हो सकता है।

स्पष्ट प्रस्ताव: जब प्रस्ताव लिखित या मौखिक शब्दों में व्यक्त किया जाता है, तो इसे स्पष्ट प्रस्ताव कहते हैं। जब क,ख को अपनी पुस्तक 20 रुपये में बेचने का प्रस्ताव करता है, तो इसे स्पष्ट प्रस्ताव कहते हैं। इसी प्रकार जब एक पत्र को लिखकर अपनी कार उसे 40,000 रुपये में बेचने का प्रस्ताव करता है, तो यह भी स्पष्ट प्रस्ताव है। मौखिक प्रस्ताव व्यक्तिगत रूप से अथवा टेलीफोन के द्वारा किए जाते हैं। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 9 में प्रावधान है कि **"जब प्रस्ताव या प्रस्ताव की स्वीकृति शब्दों में व्यक्त की जाती है, तो इसे स्पष्ट वचन कहते हैं।"**

गर्भित प्रस्ताव: जब प्रस्ताव मौखिक या लिखित व्यक्त नहीं किया जाता बल्कि पक्षकारों के आचरण या व्यवहार से या परिस्थितियों से प्रकट होता है, तो उसे गर्भित प्रस्ताव कहते हैं। उदाहरण के लिए, दिल्ली में D.T.C. तथा बम्बई में BEST विभिन्न मार्गों पर अपनी बसें चलाती हैं कि जो कोई भी निर्धारित किराया देने को तैयार है उसे वह एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाएंगी। यह एक गर्भित प्रस्ताव है। इसी प्रकार, जब कोई कुली आपका सामान रेलवे प्लेटफार्म से टैक्सी तक लाता है तो इसका अर्थ है कि मजदूरी के लिए वह अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहा है। कुली का यह आचरण एक गर्भित प्रस्ताव है। नीलामी में बोली लगाने को माल खरीदने का प्रस्ताव कहते हैं। धारा 9 में प्रावधान है कि **जब प्रस्ताव या स्वीकृति को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जाता, तो इसे गर्भित प्रस्ताव या स्वीकृति कहते हैं।**

2.2.3 प्रस्ताव किसको किया जाता है?

कानून के अनुसार, प्रस्ताव केवल उसी व्यक्ति द्वारा स्वीकार किया जा सकता है जिसे वह किया गया हो। अतः हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि प्रस्ताव किसके लिए किया गया है। इस दृष्टि से प्रस्ताव "विशिष्ट" (specific) या "सामान्य" (general) हो सकता है। जब प्रस्ताव किसी निश्चित व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह को किया जाता है तो इसे विशिष्ट प्रस्ताव कहते हैं। विशिष्ट प्रस्ताव उसी निश्चित व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के द्वारा स्वीकार किया जा सकता है जिसके लिए वह किया गया हो, किसी अन्य व्यक्ति द्वारा नहीं। उदाहरण के लिए क कुछ सामान निश्चित मूल्य पर ख से खरीदने का प्रस्ताव करता है। यहां यह प्रस्ताव एक निश्चित व्यक्ति ख को किया गया है। अतः यदि ख की जगह कोई अन्य व्यक्ति पी माल भेज देता है, तो क और पी में कोई वैध अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाएगा। **(बोल्टन बनाम जोन्स)**। इसके विपरीत जब प्रस्ताव किसी निश्चित व्यक्ति के लिए न हो कर समस्त जनता के लिए होता है तो उसे सामान्य प्रस्ताव कहते हैं। सामान्य प्रस्ताव किसी भी व्यक्ति द्वारा उसकी शर्तों को पूरा करके स्वीकार किया जा सकता है। खोयी हुई किसी वस्तु को ढूंढ कर लाने वाले व्यक्ति को पुरस्कार देने के प्रस्ताव का विज्ञापन सामान्य प्रस्ताव का सर्वोत्तम उदाहरण है। उदाहरण के लिए, ख विज्ञापन देता है कि जो कोई भी उसका खोया हुआ कुत्ता ढूंढ कर ला देगा, वह उसे 100 रुपये का पुरस्कार देगा। यह प्रस्ताव सामान्य जनता के लिए है और कोई भी व्यक्ति कुत्ते को ढूंढ कर लाने के लिए इस प्रस्ताव को स्वीकार कर सकता है। इसी प्रकार एक कम्पनी ने विज्ञापन दिया कि कोई भी व्यक्ति कम्पनी द्वारा निर्मित स्मोक बाल नामक दवा का दिए गए निर्देशों के अनुसार उपयोग करेगा उसे इन्फ्लुएंजा नहीं होगा। यदि निश्चित अवधि तक दवा का सेवन करने के बाद भी उसे इन्फ्लुएंजा होता है तो कम्पनी उस व्यक्ति को 100 पौंड इनाम देगी। श्रीमती कार्लिल ने विज्ञापन पर भरोसा करके निर्देशानुसार दवा का सेवन किया परन्तु उन्हें फिर भी इन्फ्लूएंजा हो गया। श्रीमती कार्लिल ने पुरस्कार की राशि के लिए दावा दायर कर दिया। निर्णय दिया गया कि वह पुरस्कार की राशि वसूल कर सकती है क्योंकि प्रस्ताव की शर्तों का पालन करके उसने कम्पनी के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था। **(कार्लिल बनाम कार्बोलिक स्मोक बाल कम्पनी)**।

2.2.4 वैध प्रस्ताव सम्बन्धी कानूनी नियम

एक व्यक्ति के द्वारा किए गए प्रस्ताव को कानूनी दृष्टि से प्रस्ताव तब तक नहीं माना जा सकता जब तक कि वह निम्नलिखित शर्तों का पालन न कर दे।

1 **प्रस्ताव परस्पर कानूनी सम्बन्ध स्थापित करने के इरादे से किया जाना चाहिए**: प्रस्ताव को स्वीकार करने के बाद भी वह वचन नहीं बनेगा जब तक कि पक्षकारों का इरादा कानूनी सम्बन्ध स्थापित करना न हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि करार करने का मुख्य उद्देश्य ही यह है कि इसे न्यायालय में प्रवर्तित कराया जा सके। एक सामाजिक निमन्त्रण को प्रस्ताव नहीं कह सकते क्योंकि यदि इस निमन्त्रण को स्वीकार भी कर लिया जाए तो कोई कानूनी सम्बन्ध उत्पन्न नहीं होता। उदाहरण के लिए, क अपने मित्र ख को रात्रि भोजन पर आमन्त्रित करता है तथा ख निमन्त्रण स्वीकार कर लेता है। यदि ख भोजन के लिए नहीं [illegible]पाता तो क

न्यायालय जा कर हर्जाने के लिए दावा नहीं कर सकता। सामाजिक और घरेलू करारों में यह प्रकल्पना होती है कि पक्षकारों का इरादा कानूनी सम्बन्ध स्थापित करना नहीं है। इस बात को हम **बैल्फर बनाम बैल्फर** के केस का उदाहरण दे कर स्पष्ट कर सकते हैं, इस केस का वर्णन इकाई 1 में (भाग 1.7) किया जा चुका है। इसके विपरीत व्यापारिक करारों की दशा में निश्चित रूप से यह मान लिया जाता है कि इसके कानूनी परिणाम होंगे। परन्तु व्यापारी करार की दशा में यदि दोनों पक्षकार परस्पर यह तय कर लें कि करार भंग हो जाने पर कोई भी पक्ष न्यायालय नहीं जाएगा, तो ऐसे करार को अनुबन्ध नहीं माना जाएगा (विस्तृत वर्णन के लिए इकाई 1 में 1.7) **रोज एंड फ्रैंक कम्पनी बनाम क्राम्पटन ब्रदर्स** का केस देखिए)।

2 **प्रस्ताव की शर्तें निश्चित, स्पष्ट होनी चाहिए, भ्रामक नहीं**: यदि किसी प्रस्ताव की शर्तें अनिश्चित, अस्पष्ट या भ्रामक हैं, तो उससे किसी भी अनुबन्ध का निर्माण नहीं हो सकता। इसका कारण एकदम सरल है, जब प्रस्ताव ही स्वयं अपने में अनिश्चित, अस्पष्ट या भ्रामक है तो यह कैसे माना जा सकता है कि पक्षकारों का वास्तव में क्या करने का इरादा है और उनके अधिकारों कर्त्तव्यों और दायित्वों को सही-सही निर्धारित नहीं किया जा सकता। अस्पष्ट प्रस्ताव से उसके वास्तविक अर्थ का पता नहीं चलता। उदाहरण के लिए, क, ख से एक और घोड़ा खरीदने का प्रस्ताव करता है यदि पहले खरीदा गया घोड़ा भाग्यशाली सिद्ध हुआ। इस वचन को अस्पष्टता एवं भ्रामक होने के आधार पर प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता, इसी प्रकार क,ख के साथ करार करता है कि वह (क) आवश्यक मरम्मत कराके अपनी कार ख, के हाथ 30,000 रुपये में बेचेगा। आवश्यक मरम्मत से क्या आशय है यह विवादास्पद प्रश्न है, अत: यह प्रस्ताव वैध नहीं माना जाएगा। परन्तु यदि प्रस्तावों की शर्तों को निश्चित किया जा सके तो प्रस्ताव को अस्पष्ट नहीं माना जाएगा उदाहरण के लिए, क, ख को 100 क्विंटल तेल बेचने का प्रस्ताव करता है। यह प्रस्ताव अस्पष्ट है क्योंकि यह पता नहीं चलता कि किस प्रकार का तेल बेचा जाएगा। परन्तु यदि केवल नारियल के तेल का व्यापारी है, तो यह एकदम स्पष्ट है कि वह नारियल का तेल बेचने का प्रस्ताव कर रहा है, अत: प्रस्ताव को अस्पष्ट या भ्रामक नहीं कहा जा सकता। क के प्रस्ताव को वैध माना जाएगा। कभी-कभी पक्षकार भविष्य में अनुबन्ध करने के लिए परस्पर करार करके देते हैं। इस प्रकार का करार वैध नहीं होता क्योंकि प्रस्ताव की शर्तें अनिश्चित होती हैं और शर्तों को अभी निर्धारित करना है। कानून भविष्य में अनुबन्ध करके करार करे स्वीकार करने की अनुमति नहीं देता। लोफ्टस बनाम राबर्टस के मामले में एक अभिनेत्री को प्रांतीय यात्रा के लिए कार्य पर कार्य लिया गया। करार में यह व्यवस्था थी कि यदि पार्टी लंदन जाती है तो अभिनेत्री को परस्पर तय किए गये वेतन पर कार्य पर लिया जाएगा। निर्णय दिया गया कि कोई अनुबन्ध नहीं हुआ क्योंकि शर्तें निश्चित (निर्धारित) नहीं थीं।

3 **प्रस्ताव तथा इच्छा प्रकट करने में अन्तर है**: कभी कोई व्यक्ति कानूनी दायित्व उत्पन्न करने के इरादे के बिना घोषणा करता है तो इसे प्रस्ताव नहीं कहते हैं। इस प्रकार की घोषणा या इच्छा प्रकट करने का केवल यही उद्देश्य होता है कि वह बातचीत करने को तैयार है और भविष्य में प्रस्ताव किया जाएगा या आमन्त्रित किया जाएगा। उदाहरण के लिए, एक नीलामकर्त्ता ने समाचार पत्र में विज्ञापन दिया कि वह एक निश्चित तारीख को आफिस का फर्नीचर नीलाम करेगा। एक व्यक्ति फर्नीचर खरीदने के इरादे से काफी दूर से नीलामी स्थल पर पहुँचा, परन्तु नीलामी स्थगित कर दी गई। वह अपने समय व धन की बर्बादी के लिए नीलामकर्त्ता के विरुद्ध दावा नहीं कर सकता क्योंकि वह विज्ञापन प्रस्ताव न होकर नीलाम करने की इच्छा की घोषणा मात्र है (हैरिस बनाम निकरसन)।

इसी प्रकार यह नोटिस कि माल टैन्डर के द्वारा बेचा जाएगा, प्रस्ताव नहीं है। जब कोई व्यक्ति निविदा या टेंडर आमन्त्रित करता है तो वह केवल यह जानने का प्रयास करता है कि क्या उसे अपने माल का वह मूल्य मिल सकता है जो वह लेना चाहता है (**स्पेंसर बनाम हार्डिंग**)। टेंडर भेजने वाले व्यक्ति वास्तव में प्रस्ताव करते हैं और यह टेंडर आमन्त्रित करने वाले पक्ष पर निर्भर करता है कि वह उन्हें स्वीकार करे या नहीं **फेरिना बनाम फिकस** के केस में एक पिता ने अपने होने वाले दामाद को लिखा कि उसके मरने के बाद उसकी सम्पत्ति का एक हिस्सा उसकी पुत्री को भी मिलेगा। न्यायालय ने निर्णय दिया कि यह केवल उसकी इच्छा की घोषणा थी, प्रस्ताव नहीं।

4 **प्रस्ताव और प्रस्ताव के निमन्त्रण में अन्तर करना चाहिए**: "प्रस्ताव" और "प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण" में अन्तर करना बहुत आवश्यक है। 'प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण' की दशा में निमन्त्रण देने वाला व्यक्ति स्वयं प्रस्ताव नहीं करता। बल्कि वह दूसरे व्यक्ति को

प्रस्ताव करने के लिए आमन्त्रित करता है। प्रस्ताव आमन्त्रित करने वाले व्यक्ति का इरादा दूसरे व्यक्ति की सहमति प्राप्त करना नहीं होता है। इसके विपरीत 'प्रस्ताव' ऐसी अभिव्यक्ति है कि यदि दूसरा पक्ष उसे स्वीकार कर लेता है तो प्रस्तावक अपने वचन से बाध्य हो जाता है। "प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण" भेजने में उसका इरादा प्रस्ताव करना नहीं है बल्कि सह प्रचार करना है कि किसी भी ऐसे व्यक्ति से वह बातचीत करना चाहता है। कानून की दृष्टि में "प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण" को प्रस्ताव नहीं माना जाता तथा इसके स्वीकार करने पर कोई "वचन" नहीं बनता। आपने अक्सर देखा होगा कि दुकानदार शोकेस में अपना माल सजाते हैंऔर उस पर मूल्य भी अंकित होता है। इस स्थिति में दुकानदार प्रस्ताव नहीं कर रहा कि आप उसे स्वीकार कर लें। वास्तव में दुकानदार प्रस्ताव आमन्त्रित कर रहा है कि आप प्रस्ताव करें, उस प्रस्ताव को स्वीकार करना या अस्वीकार करना दुकानदार की इच्छा पर है। आप शोकेस में दिखाए गये माल को उस पर अंकित मूल्य पर बेचने के लिए दुकानदार को बाध्य नहीं कर सकते। इसी प्रकार मूल्य सूची, विवरण पत्र, विज्ञापन तथा माल बेचने के सम्बन्ध में जो परिपत्र जारी किए जाते हैं उन्हें प्रस्ताव नहीं माना जाता

फार्मेस्युटिकल सोसाइटी आफ ग्रेट ब्रिटेन बनाम बूट्स कैश कैमिस्ट्स लिमिटेड के केस में माल दुकान में सजाया जाता था उन पर उसका मूल्य भी अंकित था। ग्राहक माल का चुनाव करते थे और मूल्य चुकाने के लिए उसे कैशियर के पास ले जाते थे। निर्णय दिया गया इस केस में दुकानदार की ओर से कोई प्रस्ताव नहीं है बल्कि उसकी तरफ से प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण था। वस्तुओं पर अंकित मूल्य पर माल बेचने के लिए दुकानदार को बाध्य नहीं किया जा सकता। यहां अनुबन्ध उस समय नहीं होता जब ग्राहक माल को छांट लेता है बल्कि तब होता है जब कैशियर ग्राहक के माल खरीदने के प्रस्ताव को स्वीकार करके मूल्य प्राप्त करता है। इसी प्रकार जब कोई कम्पनी अपने शेयरों को जनता को बेचने के लिए "विवरण पत्र" (prospectus) जारी करती है, तो यह "प्रस्ताव" न होकर "प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण होता है। जब कोई व्यक्ति फार्म भरकर प्रार्थना पत्र की राशि के साथ बैंक में जमा करा देता है, तो वह शेयर खरीदने का "प्रस्ताव" करता है। अब यह कम्पनी की इच्छा पर है कि उसके प्रस्ताव को पूर्णतः स्वीकार करे या अस्वीकार करे या आंशिक रूप से स्वीकार करे।

5 **प्रस्ताव की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए**: प्रस्ताव तभी प्रभावी बनता है जब वह उस व्यक्ति तक पहुंच जाए जिसके लिए वह किया गया है। प्रस्ताव की परिभाषा के पहले भाग में इस बात पर बल दिया गया है जिसके अनुसार, जब एक व्यक्ति किसी कार्य को करने या न करने की अपनी इच्छा या तत्परता दूसरे व्यक्ति के सामने प्रकट करता है। इससे स्पष्ट है कि प्रस्ताव तभी पूर्ण माना जाता है जब प्रस्ताविती को इसकी जानकारी हो जाती है। यह ध्यान रहे कि कोई व्यक्ति प्रस्ताव को केवल तभी स्वीकार कर सकता है जब उसे उसकी जानकारी हो। प्रस्ताव की जानकारी के बिना दी गई स्वीकृति निरर्थक मानी जाती है, अर्थात् स्वीकर्ता को कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता। जब तक प्रस्ताव की सूचना प्रस्ताविती को नहीं हो जाती तब तक उसकी वैध स्वीकृति नहीं हो सकती। यदि कोई व्यक्ति प्रस्ताव की जानकारी के बिना कोई कार्य कर बैठता है तो इसे प्रस्ताव की स्वीकृति नहीं माना जा सकता।

फिच बनाम स्नेदकर के केस में S ने घोषणा की कि जो कोई भी उसके खोए कुत्ते को ढूंढ कर ला देगा उसे इनाम दिया जाएगा। पुरस्कार के प्रस्ताव की जानकारी के बिना F कुत्ते को ढूंढ लाता है। निर्णय दिया गया कि F पुरस्कार प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है क्योंकि F ने जब उस प्रस्ताव के बारे में कुछ भी नहीं सुना है तो वह उसे स्वीकार कैसे कर सकता है। एक अन्य महत्वपूर्ण केस **लालमन शुक्ला बनाम गौरी दत्त** में G ने अपने मुनीम L को अपने भतीजे को ढूंढने के लिए भेजा। मुनीम के चले जाने के बाद G ने यह घोषणा की कि गुमशुदा का पता लगाने वाले को 501 रुपये का इनाम दिया जाएगा। L लड़के को ढूंढ कर घर ले आया। इसके बाद जब L को इनाम की घोषणा की जानकारी हुई तो इनाम की मांग की। न्यायालय ने निर्णय दिया कि L इनाम पाने का अधिकारी नहीं है क्योंकि जब उसने लड़के को ढूंढा उस समय उसे प्रस्ताव की जानकारी नहीं थी और जब तक प्रस्ताव की जानकारी न हो वह स्वीकार नहीं किया जा सकता।

6 **प्रस्ताव में ऐसी कोई शर्त नहीं होनी चाहिए जिसका पालन न होने पर प्रस्ताव स्वीकृत मान लिया जाता हो**: प्रस्ताव के द्वारा प्रस्ताविती को उत्तर देने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए। प्रस्तावक प्रस्ताव करते समय यह नहीं कह सकता कि यदि प्रस्ताविती ने प्रस्ताव की स्वीकृति किसी निश्चित तारीख तक नहीं दी तो वह स्वीकृत हुआ मान लिया जाएगा। जब तक प्रस्ताविती जवाब नहीं देता तब तक किसी अनुबन्ध का निर्माण नहीं होता। उदाहरण के लिए क, ख को लिखता है कि "मैं तुम्हें अपना स्कूटर 7,000 रुपये में बेचने का

प्रस्ताव करता हूं यदि अगले बुधवार तक तुमने मुझे जवाब नहीं दिया तो मैं समझूंगा कि तुमने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया" । यदि ख कोई भी जवाब नहीं देता तो इसका यह अर्थ नहीं है कि उसने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। अत: किसी भी अनुबन्ध का निर्माण नहीं हुआ। परन्तु प्रस्तावक प्रस्ताव में स्वीकृति देने की विधि अवश्य ही निर्धारित कर सकता है।

7 **प्रस्ताव की विशेष शर्तों की सूचना भी दूसरे पक्ष को अवश्य दी जानी चाहिए:** प्रस्तावक अपने प्रस्ताव में किसी भी प्रकार की शर्त जोड़ने के लिए स्वतन्त्र है तथा जब दूसरा पक्ष प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है तो वह उन विशेष शर्तों से बाध्य होता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रस्ताव में यदि विशेष शर्तें हैं तो उनकी सूचना भी अवश्य दी जानी चाहिए। मानक रूप वाले अनुबन्धों (standard form of contract) में प्राय: विशेष शर्तों का प्रश्न उठता है। उदाहरण के लिए, जीवन बीमा निगम ने अनुबन्ध फार्म छपा रखे हैं जिसमें अनेक नियम व शर्तें होती हैं। इसी प्रकार रेलवे, जहाजी-कम्पनी, बैंक, होटल ड्राइक्लीनर्स आदि भी छपे हुए अनुबन्धों का प्रयोग करते हैं जिसमें अनेक विशेष शर्तें शामिल होती हैं। ऐसी बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ दूसरे पक्ष की कमजोरियों का लाभ उठाने की स्थिति में होती हैं जिससे उनका दायित्व कम या सीमित हो जाता है। सामान्य जनता के हितों की रक्षा करने के उद्देश्य से यह प्रावधान किया गया है कि विशेष शर्तों व नियमों की सूचना भी दूसरे पक्ष को अवश्य दी जानी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया जाता, तो अनुबन्ध होने के पश्चात् स्वीकर्ता उन शर्तों से बाध्य नहीं होगा। इन शर्तों की सूचना स्पष्ट तौर से या किसी अन्य उचित तरीके से दूसरे पक्ष को दी जा सकती है। जैसे-- छपे हुए टिकट के मुखपृष्ठ पर मोटे या लाल अक्षरों द्वारा यह लिखकर 'शर्तों के लिए पीछे देखिए' या 'कृपया पृष्ठ उलटिए' दूसरे व्यक्ति का ध्यान उन शर्तों की ओर दिलाया जाना चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया जाता, तो प्रस्तावित्ती उन शर्तों से बाध्य नहीं होता है।

इस सम्बन्ध में **हैण्डरसन बनाम स्टीवेंसन** का केस उल्लेखनीय है। इस केस में क ने "डबलिन से व्हाइटहैवन" तक की यात्रा के लिए स्टीमर का एक टिकट खरीदा और यह तथ्य टिकट के मुखपृष्ठ पर छपा था। टिकट के पीछे की ओर कुछ विशेष शर्तें छपी हुई थीं, जिनमें एक शर्त यह थी कि सामान के गुम होने या यात्री को किसी प्रकार की देर या चोट पहुंचने के लिए कम्पनी जिम्मेदार नहीं होगी। क ने न तो स्वयं टिकट को पलट कर देखा और न ही किसी ने उससे टिकट को पलट कर देखने को कहा। जहाजी कम्पनी के कर्मचारियों की लापरवाही से यात्री का सामान गुम हो गया। निर्णय दिया गया कि क कम्पनी से अपनी हानि की पूर्ति कराने का अधिकारी है क्योंकि दायित्व को सीमित करने वाली शर्त जो टिकट के पीछे छपी थी उसकी सूचना यात्री को नहीं दी गई और न ही यात्री का ध्यान उन शर्तों की ओर दिलाने के लिए कोई इशारा किया गया अत: यात्री पीछे छपी हुई शर्तों से बाध्य नहीं माना गया।

यहाँ यह ध्यान रहे कि **यदि प्रस्ताव की विशेष शर्तों व नियमों की जानकारी प्रस्तावित्ती को दे दी गई है, तो वह उनसे पूर्णतया बाध्य होगा चाहे उसने पढ़ा भी न हो या वह अनपढ़ हो।** इसका एक अच्छा उदाहरण, **पारकर बनाम साउथ ईस्टर्न रेलवे कम्पनी** का केस है। इस केस में P ने अपना बैग रेलवे स्टेशन के अमानती सामान घर में जमा करके रसीद प्राप्त की। इस रसीद के मुखपृष्ठ पर यह छपा हुआ था "कृपया पीछे की तरफ देखिए" । टिकट के पीछे छपी शर्तों में से एक शर्त यह थी कि कम्पनी का दायित्व प्रति नग 1 पौंड तक सीमित होगा। बैग के गुम हो जाने पर P ने रेलवे कम्पनी पर इसके वास्तविक मूल्य 24 पौंड 10 शिलिंग के लिए दावा कर दिया। P ने यह स्वीकार किया कि उसे टिकट के पीछे छपी शर्तों की जानकारी थी किन्तु उसने उन्हें पढ़ा नहीं था। यह निर्णय दिया गया कि P टिकट के पीछे की ओर छपी हुई शर्तों से बाध्य है, भले ही उसने उन शर्तों को पढ़ा नहीं है क्योंकि रेलवे कम्पनी ने टिकट के मुखपृठ पर उचित शब्दों द्वारा उसका ध्यान उनकी ओर आकर्षित कर दिया था, अत: P केवल 10 पौंड ही प्राप्त करने का अधिकारी है।

यह नियम उस स्थिति में भी लागू होता है जब विशेष शर्तें किसी ऐसी भाषा में लिखी हुई हैं जिसका ज्ञान स्वीकर्ता को नहीं है परन्तु इसके लिए यह जरूरी है कि उसे शर्तों के अस्तित्व की यथोचित सूचना दे दी गई हो। ऐसी स्थिति में स्वीकर्ता का कर्तव्य है कि वह उन शर्तों का अनुवाद मांगे और यदि प्रस्ताव को स्वीकार करने से पहले वह ऐसी कोई माँग नहीं करता तो यह मान लिया जाता है कि उसे उन शर्तों का पता है और वह उनसे बाध्य होगा।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि **प्रस्ताव की विशेष शर्तों की सूचना प्रस्तावित्ती को अनुबन्ध करते समय या उससे पहले दे दी जानी चाहिए।** अनुबन्ध करने के बाद में दी गई शर्तों की सूचना से स्वीकर्ता तब तक बाध्य नहीं होता जब तक वह उनके लिए अपनी सहमति न दें।

उदाहरण के लिए, एक दम्पत्ति ने होटल में एक कमरा एक सप्ताह के लिए किराए पर लिया। जब वे कमरे में पहुँचे तो उन्होंने दीवार पर नोटिस लगा देखा जिसके अनुसार, सामान के गुम या चोरी हो जाने पर होटल का स्वामी उत्तरदायी नहीं होगा। होटल के कर्मचारियों की लापरवाही से उनका कुछ सामान चोरी हो गया। निर्णय दिया गया कि होटल का मालिक हानि की पूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है क्योंकि नोटिस अनुबन्ध का भाग नहीं है, विशेष शर्त की सूचना यात्री को अनुबन्ध होने के बाद दी गई थी, अतः वह उस नोटिस में लिखी शर्तों से बाध्य नहीं है। (ओली बनाम मार्लबोरो कोर्ट लिमिटेड)।

अन्त में यह बात भी स्मरणीय है कि प्रस्ताव की शर्तें न्यायसंगत होनी चाहिए। यदि शर्तें ऐसी हैं जो अनुबन्ध के उद्देश्य के ही विपरीत हैं या लोक नीति के विरुद्ध हैं, तो उन्हें अनुचित या असंगत माना जाता है। अतः यदि मानक रूप अनुबन्ध की शर्तें असंगत या अनुचित हैं तो दूसरा पक्ष उनसे बाध्य नहीं होगा। उदाहरण के लिए, यदि ड्राइक्लीनर रसीद के पीछे छपी शर्तों के द्वारा कपड़ों के गुम हो जाने पर अपना दायित्व वस्तु के बाजार मूल्य के 20 प्रतिशत तक सीमित कर लेता है तो ग्राहक इस शर्त से बाध्य नहीं माना जाता क्योंकि इस शर्त का अर्थ है कि ड्राइक्लीनर धुलाई के लिए दिए गए कपड़ों को उनके मूल्य के 20 प्रतिशत पर खरीद सकता है।

2.2.5 क्रास-ऑफर (Cross Offer)

जब दो पक्ष, एक दूसरे के प्रस्ताव की जानकारी के बिना, एक दूसरे को एक जैसा ही प्रस्ताव करते हैं, तो उन्हें क्रास-ऑफर कहते हैं। ऐसी स्थिति में एक पक्ष का प्रस्ताव दूसरे पक्ष के प्रस्ताव की स्वीकृति नहीं माना जा सकता और उनके मध्य कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाता। उदाहरण के लिए, क ने दिल्ली से एक पत्र द्वारा अपना मकान 10 लाख रुपये में ख के हाथ बेचने का प्रस्ताव किया उसी दिन बम्बई से ख ने भी एक पत्र द्वारा क का मकान 10 लाख रुपयों में खरीदने का प्रस्ताव किया। ये दोनों पत्र डाक में एक दूसरे को क्रास करते हैं। ऐसी स्थिति में क और ख में कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाएगा क्योंकि दोनों ही पक्ष प्रस्ताव कर रहे हैं, एक प्रस्ताव को दूसरे प्रस्ताव की स्वीकृति नहीं माना जा सकता। यदि पक्षकार अनुबन्ध करना ही चाहते हैं तो उनमें से किसी भी पक्ष द्वारा दूसरे के प्रस्ताव को स्वीकार किया जाना चाहिए।

2.2.6 खुला या स्थायी प्रस्ताव (Open or Standing Offer)

कभी-कभी प्रस्ताव सतत् प्रकृति का होता है, इसे खुला या स्थायी प्रस्ताव कहते हैं। खुला प्रस्ताव निविदा (टेण्डर) के समान होता है। प्रायः कोई व्यक्ति या विभाग या अन्य संस्था कुछ वस्तुओं को समय-समय पर बड़ी मात्रा में मँगाती हैं। ऐसी दशा मे आमतौर पर टेण्डर आमन्त्रित करने के लिए विज्ञापन दिए जाते हैं।

टेण्डर आमन्त्रित करने के लिए जो विज्ञापन दिया जाता है, वास्तव में वह प्रस्ताव न हो कर प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण होता है। जब कोई व्यक्ति विशिष्ट वस्तुओं या सेवाओं को प्रदान करने के लिए टेण्डर भरकर भेजता है तो उस व्यक्ति की ओर से प्रस्ताव किया गया समझा जाता है। जब किसी विशेष टेण्डर को स्वीकार या मंजूर कर लिया जाता है तो यह खुला प्रस्ताव कहलाता है। टेण्डर की स्वीकृति मात्र से ही कोई अनुबन्ध नही बन जाता। टेण्डर की स्वीकृति का केवल इतना ही अर्थ है कि वह प्रस्ताव एक निश्चित अवधि के लिए खुला रहेगा और समय-समय पर वस्तुओं के लिए आदेश दिए जाने पर उसे स्वीकार माना जाएगा। इस प्रकार जब भी आर्डर दिया जाता है तो उसे खुले प्रस्ताव की स्वीकृति माना जाता है और हर बार अलग अनुबन्ध होता है। प्रस्ताव खुले प्रस्ताव को, आर्डर प्राप्त होने से पहले किसी भी समय वापस ले सकता है। इसी प्रकार जिस पक्ष ने टेण्डर को स्वीकार किया है वह माल के लिए आर्डर देने के लिए तब तक बाध्य नहीं है जब तक कि उसने एक निश्चित मात्रा में खरीदने का करार न किया हो। उदाहरण के लिए, क ने 12 माह तक निश्चित दर पर ख को कोयला बेचने का करार किया। यह एक खुला या स्थायी प्रस्ताव है। ख के द्वारा भेजा गया प्रत्येक आदेश क के प्रस्ताव की स्वीकृति माना जाएगा। तथा क आदेश के अनुसार कोयला भेजने के लिए बाध्य होगा। क एक यथोचित सूचना प्रस्तावित (ख) को दे कर अपने खुले प्रस्ताव को वापस ले सकता है।

बोध प्रश्न क

1 प्रस्ताव किसे कहते हैं?

. . . .

. . . .

....

2 सामान्य प्रस्ताव से आपका क्या आशय है ?

....

....

....

3 यदि प्रस्ताव को निर्धारित ढंग से स्वीकार नहीं किया जाता तो क्या होता है ?

....

....

....

....

4 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) मौखिक या लिखित प्रस्ताव को................प्रस्ताव कहते हैं।

ii) प्रस्ताव की शर्तें................होनी चाहिए।

iii) प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण वही नहीं है जो...............होता है।

iv) विशिष्ट प्रस्ताव केवल...............द्वारा स्वीकार किया जा सकता है।

v) भविष्य में अनुबन्ध करने का करार बाध्य करार.................होता है।

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) जब प्रस्ताव समस्त जनता के लिए किया जाता है तो इसे विशिष्ट प्रस्ताव कहते हैं।

ii) नीलामी द्वारा माल बेचने का विज्ञापन एक प्रस्ताव है।

iii) सामाजिक निमन्त्रण को यदि स्वीकार किया जाता है तो इससे कोई कानूनी दायित्व उत्पन्न नहीं होता।

iv) विज्ञापन दाता के खोए हुए कुत्ते को ढूंढ कर लाने वाले व्यक्ति को इनाम देने का प्रस्ताव विज्ञापन प्रस्ताव नहीं है।

v) प्रस्ताव की विशेष शर्तों की सूचना बाद में भी दी जा सकती है।

vi) जब प्रस्ताविती कोई पूछताछ करता है तो यह प्रति-प्रस्ताव कहलाता है।

2.3 स्वीकृति (Acceptance)

2.3.1 स्वीकृति क्या होती है ?

जैसे कि अभी ऊपर बताया गया है कि जब प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाता है तो एक करार बन जाता है। आइए अब हम स्वीकृति के अर्थ का अध्ययन करते हैं। स्वीकृति प्रस्ताव की शर्तों से बाध्य होने के लिए प्रस्ताविती की अभिव्यक्ति मात्र है। प्रस्ताव के स्वीकार किए जाने पर प्रस्तावक तथा स्वीकर्ता के मध्य कानूनी सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 2 (ख) में स्वीकृति की परिभाषा इस प्रकार की गई है — "जब वह व्यक्ति जिसके सामने प्रस्ताव रखा गया है, उस पर अपनी सहमति प्रकट कर देता है, तो प्रस्ताव स्वीकृत हुआ माना जाता है। एक प्रस्ताव जब स्वीकार कर लिया जाता है तब उसे वचन कहते हैं।" उदाहरण के लिए, क अपनी पुस्तक ख को 20 रुपये में बेचने का प्रस्ताव करता है। ख 20 रुपये में पुस्तक खरीदना स्वीकार कर लेता है। इस दशा में ख द्वारा क का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया माना जाएगा।

2.3.2 स्वीकृति कौन दे सकता है ?

प्रस्ताव केवल उसी व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा स्वीकार किया जा सकता है जिनसे वह किया गया है।

ऐसा प्रस्ताव जो किसी विशेष व्यक्ति (विशिष्ट प्रस्ताव) के लिए किया जाता है, केवल उसी व्यक्ति के द्वारा स्वीकार किया जा सकता है किसी अन्य के द्वारा नहीं। कानून का यह नियम है कि यदि क,ख के साथ अनुबन्ध करना चाहता है, तो ग,ख का स्थान क की सहमति के बिना नहीं ले सकता। **बोल्टन बनाम जोन्स** के केस में क ने अपना कारोबार ख के हाथ बेच दिया परन्तु इसकी सूचना एक पुराने ग्राहक ग को नहीं मिली। ग ने माल मंगाने के लिए एक आदेश क के नाम भेजा। ख ने ग को माल भेज दिया। ग ने कीमत देने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि ख और ग में कोई अनुबन्ध नहीं हुआ क्योंकि ग ने कभी भी ख के सामने कोई प्रस्ताव नहीं किया। यदि प्रस्ताव समस्त जनता के लिए किया जाता है (सामान्य प्रस्ताव) तो कोई भी व्यक्ति जिसे उस प्रस्ताव की जानकारी है, उसे स्वीकार कर सकता है। आप **कार्लिन बनाम कार्बोलिक स्मोक बाल कम्पनी** के केस में पढ़ ही चुके हैं कि उस महिला ने स्मोक बाल का सेवन करके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया था। इसी प्रकार यदि किसी खोई हुई वस्तु या गुमशुदा व्यक्ति को ढूंढने के लिए कोई इनाम की घोषणा की गई है, तो जो कोई भी व्यक्ति सबसे पहले आवश्यक सूचना देता है वह इनाम पाने का हकदार होता है।

2.3.3 स्वीकृति किस प्रकार दी जाती है?

यह तो आप जानते ही हैं कि प्रस्ताव स्पष्ट या गर्भित हो सकता है। इसी प्रकार, स्वीकृति भी स्पष्ट या गर्भित हो सकती है। जब स्वीकृति लिखित या मौखिक शब्दों में की जाती है तो इसे "स्पष्ट स्वीकृति" कहते हैं, जैसे क अपनी पुस्तक ख के हाथ 20 रुपये में बेचने का प्रस्ताव करता है, तो ख इस प्रस्ताव को क से बोलकर या उसे पत्र लिख कर स्वीकार कर सकता है। कभी-कभी आचरण के द्वारा भी स्वीकृति दी जाती है, जैसे क ने घोषणा की कि जो कोई भी उसके खोए हुए कुत्ते को ढूंढ कर ला देगा उसे 100 रुपये का इनाम दिया जाएगा। ख, जिसे इन इनाम की जानकारी थी, ने कुत्ता ढूंढ दिया तो वह इनाम पाने का हकदार होगा क्योंकि उसने वह कार्य कर दिया है जो करने के लिए कहा गया था। आइए, एक और उदाहरण लेते हैं, क राजघाट जाने के लिए DTC बस में सवार होता है। यह क के द्वारा गर्भित स्वीकृति है और वह निर्धारित किराया चुकाने के लिए बाध्य होगा।

2.3.4 वैध स्वीकृति सम्बन्धी कानूनी नियम

प्रस्ताव की स्वीकृति प्रभावी होने के लिए कुछ शर्तों का पूर्ण होना आवश्यक है। ये शर्तें निम्नलिखित हैं:

1 **स्वीकृति पूर्ण एवं शर्त-रहित होनी चाहिए**: अनुबन्ध अधिनियम की धारा 7 (1) के अनुसार प्रस्ताव को वचन में परिवर्तित करने के लिए, स्वीकृति पूर्ण एवं शर्त-रहित होनी चाहिए। ऐसा इसलिए जरूरी है क्योंकि शर्त सहित स्वीकृति न हो कर प्रति-प्रस्ताव हो जाता है और जिसका तात्पर्य है मूल प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। स्वीकृति देते समय प्रस्ताविती को प्रस्ताव की शर्तों में कोई फेर बदल नहीं करना चाहिए। यदि स्वीकृति देते समय प्रस्ताव की शर्तों में कोई परिवर्तन किया जाता है तो स्वीकृति अमान्य हो जाती है और कोई अनुबन्ध निर्मित नहीं होता। उदाहरण के लिए, क ने अपना स्कूटर 8,000 रुपये में बेचने का प्रस्ताव ख को किया तथा ख ने स्कूटर 7,500 रुपये में खरीदना स्वीकार कर लिया। वास्तव में यह ख की स्वीकृति नहीं है बल्कि उसकी तरफ से प्रति प्रस्ताव है। बाद में यदि ख, 8,000 रुपये का भुगतान करने को तैयार भी है तब भी क स्कूटर बेचने के लिए बाध्य नहीं है, क्योंकि ख के द्वारा प्रति प्रस्ताव किए जाने पर क का मूल प्रस्ताव समाप्त हो गया था।

   यही नहीं बल्कि प्रस्ताव को पूर्णरूप से स्वीकार किया जाना चाहिए। यदि प्रस्ताव को अंशत: स्वीकार किया जाता है तब स्वीकृति वैध नहीं होती और अनुबन्ध निर्मित नहीं होता। जैसे क निश्चित दर पर 1000 क्विंटल गेंहू बेचने का प्रस्ताव ख को करता है और ख केवल 70 क्विंटल गेंहू खरीदने के लिए स्वीकृति देता है तो यह स्वीकृति वैध नहीं मानी जाएगी क्योंकि प्रस्ताव को पूर्णरूप से स्वीकार नहीं किया गया है। अत: प्रस्ताव को वैसे का वैसा ही स्वीकार नहीं किया गया है। अर्थात् प्रस्ताव को वैसे का वैसा ही स्वीकार किया जाना चाहिए अर्थात् स्वीकृति बिना किसी शर्त के या प्रस्ताव की शर्तों में परिवर्तन के बिना दी जानी चाहिए। यदि जरा सा भी परिवर्तन किया जाता है, चाहे वह कितना ही मामूली क्यों न हो, स्वीकृति को अमान्य बना देता है।

   कभी-कभी प्रस्ताव को स्वीकार करते समय यह शर्त लगा दी जाती है "जब तक अनुबन्ध न हो जाए" या "जब तक औपचारिक अनुबन्ध न हो जाए" या "जब तक वकील द्वारा अनुबन्ध

का अनुमोदन न हो जाए'', इन सभी परिस्थितियों में कोई अनुबन्ध निर्मित हुआ नहीं माना जाता क्योंकि भविष्य में शर्त का पालन करना शेष है। उदाहरण के लिए, एक नीलामी में क की बोली अस्थायी तौर पर स्वीकार की गई और स्वामी के अनुमोदन के लिए लिखा गया। स्वामी द्वारा अनुमोदन किए जाने से पहले क अपनी बोली वापस ले लेता है। इस दशा में निर्णय दिया गया कि क बोली वापस ले सकता है क्योंकि स्वीकृति पूर्ण नहीं थी बल्कि अनुमोदन के लिए थी अत: अनुमोदन से पहले अपनी बोली वापस ले सकता है।

2 **स्वीकृति निर्धारित तरीके से दी जानी चाहिए:** यदि प्रस्तावक ने स्वीकृति का कोई तरीका निर्धारित किया है, तो स्वीकृति उसी ढंग से दी जानी चाहिए। यदि प्रस्ताव में निर्धारित तरीके से स्वीकृति नहीं दी जाती तो इस स्वीकृति को मानना या अस्वीकार करना प्रस्तावक की इच्छा पर निर्भर करता है। जब स्वीकृति निर्धारित तरीके से नहीं दी गई है और प्रस्तावक इसे स्वीकार करना नहीं चाहता, तो स्वीकर्ता का कर्तव्य है कि उक्त स्वीकृति के प्राप्त हो जाने के बाद उचित समय के भीतर प्रस्ताविती को सूचित करे क्योंकि स्वीकृति निर्धारित तरीके में नहीं है, अत: वह (प्रस्तावक) इससे बाध्य नहीं है। यदि वह प्रस्ताविती को उचित समय में ऐसी सूचना नहीं देता तो यह मान लिया जाता है कि उसने दी गई स्वीकृति को स्वीकार कर लिया है और वह उस स्वीकृति से बाध्य है। उदाहरण के लिए क, ख के सामने प्रस्ताव करते समय कहता है कि "स्वीकृति तार से भेजो" ख अपनी स्वीकृति पत्र के द्वारा भेजता है। क इस स्वीकृति को वैध मानने से इस आधार पर इंकार कर सकता है कि स्वीकृति निर्धारित तरीके से नहीं दी गई है। परन्तु यदि क उचित समय के भीतर ख को सूचित नहीं करता तो यह मान लिया जाएगा कि क ने पत्र से आई हुई स्वीकृति को मान लिया है और एक वैध अनुबन्ध हो जाएगा। यदि स्वीकृति का कोई तरीका निर्धारित नहीं किया गया, तो स्वीकृति किसी सामान्य एवं उचित तरीके से दी जानी चाहिए।

3 **स्वीकृति की सूचना दी जानी चाहिए:** स्वीकृति की परिभाषा में आपने पढ़ा कि स्वीकृति को प्रभावी बनाने के लिए इसे व्यक्त किया जाना चाहिए। अन्य शब्दों में, स्वीकृति केवल तभी पूर्ण या प्रभावी होती है। जब इसकी सूचना प्रस्तावक को दे दी जाती है। ऐसी मानसिक स्वीकृति को वैध स्वीकृति नहीं माना जाता। जिसके समर्थन में न तो कोई शब्द प्रयोग किए गये हैं और न ही कोई आचरण किया गया है। **ब्रागडन मेट्रोपोलियन रेलवे कम्पनी** के केस में रेलवे कम्पनी को कोयला देने का प्रस्ताव किया गया। मैनेजर ने पत्र पर 'स्वीकृत' लिख दिया और उस पत्र को मेज की दराज में रखकर भूल गया। निर्णय दिया गया कि कोई अनुबन्ध नहीं हुआ क्योंकि स्वीकृति की सूचना नहीं दी गई।

स्वीकृति की सूचना से यह आशय नहीं है कि प्रस्तावक को स्वीकृति की जानकारी हो जाए। यदि ठीक प्रकार से टिकट लगा हुआ और पता लिखा हुआ स्वीकृति-पत्र मार्ग में गुम हो जाता है या देरी हो जाती है तब प्रस्तावक स्वीकृति से बाध्य होता है। क्योंकि स्वीकर्ता से जो करना अपेक्षित था उसने वह सब कर दिया होता है।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रस्तावक प्रस्ताव करते समय स्वीकृति का तरीका तो निर्धारित कर सकता है परन्तु वह दूसरे पक्ष पर यह दायित्व नहीं लाद सकता कि अस्वीकृति की सूचना भी प्रस्तावक को भेजे। प्रस्तावक निश्चित ही स्वीकृति की विधि निर्धारित कर सकता है परन्तु वह प्रस्ताव को अस्वीकार करने का ढंग निर्धारित नहीं कर सकता। जैसे कि प्रस्तावक प्रस्ताव करते समय प्रस्ताव में यह नहीं कह सकता कि यदि इसे दूसरे पक्ष से सात दिन के भीतर उत्तर नहीं मिला तो वह प्रस्ताव को स्वीकृति मानेगा। इस बात को **फेल्टहाउस बनाम बिण्डले** के केस से अच्छी तरह स्पष्ट किया जा सकता है। इस केस में F ने अपने भतीजे का एक घोड़ा 30 पौंड में खरीदने का प्रस्ताव किया और यह भी लिखा "यदि मुझे इस बारे में कोई उत्तर नहीं मिला तो मैं समझूंगा कि घोड़ा मेरा हो गया।" भतीजे ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया परन्तु अपने नीलामकर्ता बिण्डले को आदेश दिया कि वह उस घोड़े को नहीं बेचे क्योंकि उसका इरादा उस घोड़े को अपने चाचा को बेचने का है। बिण्डले ने भूल से वह घोड़ा बेच दिया। F ने नीलामकर्ता के विरुद्ध अपनी सम्पत्ति के संपरिवर्तन (conversion) का मुकदमा कर दिया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि F अपने दावे में सफल नहीं होगा क्योंकि भतीजे ने प्रस्ताव की स्वीकृति की कोई सूचना ही नहीं दी, अत: उनमें कोई अनुबन्ध ही नहीं हुआ।

4 **स्वीकृति की सूचना अधिकृत व्यक्ति द्वारा ही दी जानी चाहिए:** विधि-मान्य होने के लिए स्वीकृति न केवल स्वयं प्रस्ताविती (स्वीकर्ता) द्वारा दी जाए बल्कि उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति द्वारा भी दी जा सकती है। यदि किसी अनधिकृत व्यक्ति द्वारा स्वीकृत की सूचना दी जाती है तो इससे कानूनी सम्बन्ध नहीं बनते। इस कथन के पक्ष में **पावेल बनाम ली** के केस

का हवाला दिया जा सकता है। इस केस में P ने एक स्कूल के मुख्याध्यापक के पद के लिए प्रार्थना पत्र दिया। स्कूल की प्रबन्ध समिति ने एक प्रस्ताव पास करके P को उक्त पद पर नियुक्त करने का निर्णय ले लिया परन्तु इसकी सूचना P को नहीं दी गयी। परंतु प्रबन्ध समिति के एक सदस्य ने व्यक्तिगत तौर पर P को निर्णय के बारे में सूचना दे दी। बाद में प्रबन्ध समिति ने अपना प्रस्ताव रद्द करके किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर दिया। P ने प्रबन्ध समिति के विरुद्ध अनुबन्ध-भंग का दावा कर दिया। इस मामले में निर्णय दिया गया कि क्योंकि P को किसी अधिकृत व्यक्ति ने उसकी नियुक्ति की सूचना नहीं दी अत: स्वीकृति की सूचना दी ही नहीं गई और कोई अनुबन्ध ही नहीं हुआ।

5 **स्वीकृति निर्धारित समय या उचित समय के भीतर दी जानी चाहिए:** कभी-कभी प्रस्तावक प्रस्ताव करते समय स्वीकृति देने की अवधि भी निश्चित कर देता है, तो स्वीकृति उसी अवधि के भीतर दी जानी चाहिए। यदि स्वीकृति देने के लिए कोई अवधि निश्चित नहीं की गई है तो उचित अवधि के भीतर स्वीकृति दी जानी चाहिए। उचित अवधि क्या है यह मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। जब किसी कम्पनी के शेयर खरीदने का प्रयास जून माह में किया गया परन्तु स्वीकृति की सूचना नवम्बर में दी गई, तो निर्णय दिया गया कि क्योंकि स्वीकृति उचित समय के भीतर नहीं दी गई है अत: प्रस्ताव समाप्त हो गया **(राम्सगेट विक्टोरिया होटल कम्पनी बनाम मॉन्टेफियोर)**।

6 **प्रस्ताव के समाप्त या वापस लिए जाने के पहले स्वीकृति दी जानी चाहिए:** स्वीकृति तभी विधि-मान्य होती है जब वह प्रस्ताव के होते हुए दी जाए। यदि एक बार प्रस्ताव वापस ले लिया जाता है या रद्द कर दिया जाता है तो फिर उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। जैसे क ने एक पत्र के द्वारा अपनी कार 40,000 रुपये में ख को बेचने का प्रस्ताव भेजा। बाद में क ने एक तार भेज कर अपना प्रस्ताव वापस ले लिया और यह तार ख को मिल भी गया। तार प्राप्त करने के बाद ख अपनी स्वीकृति क के पास भेजता है। यह स्वीकृति वैध नहीं है। प्रस्ताव के समाप्त होने के सम्बन्ध में आप इस इकाई में बाद में पढ़ेंगे।

बोध प्रश्न ख

1 स्वीकृति की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

....

2 यदि स्वीकृति निर्धारित तरीके से नहीं दी जाती तो क्या होता है?

....

....

....

....

3 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) स्वीकृति वैध होने के लिए पूर्ण तथा .... होनी चाहिए।

ii) प्रस्ताव केवल उसी के द्वारा स्वीकार किया जा सकता है..................।

iii) स्वीकृति..........तरीके से दी जानी चाहिए।

iv) यदि उचित समय के भीतर स्वीकृति नहीं दी जाती तो.............।

v) यदि प्रस्तावित मौन रहता है, तो इसका अर्थ है कि उसने प्रस्ताव ....कार दिया है।

4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

i) विशिष्ट प्रस्ताव किसी भी व्यक्ति द्वारा स्वीकार किया जा सकता है...................

ii) मौन को प्रस्ताव की स्वीकृति माना जाता है ....

iii) आंशिक स्वीकृति अमान्य होती है.....................।

iv) अस्वीकृत प्रस्ताव को तब तक स्वीकार नहीं किया जा सकता जब तक उनका नवीकरण न हो जाए...।

v) स्वीकृति की सूचना किसी भी व्यक्ति द्वारा दी जा सकती है ....।

2.4 प्रस्ताव एवं स्वीकृति का संप्रेषण (Communication of Offer and Acceptance)

जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। जब तक प्रस्ताव की सूचना न दी जाए, उसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार जब तक स्वीकृति की सूचना न दे दी जाए तब तक पक्षकारों में कोई कानूनी सम्बन्ध नहीं बनता। अब प्रश्न यह उठता है कि पक्षकारों को बाध्य करने के लिए प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना कब पूर्ण मानी जाती है।

जब अनुबन्ध करने वाले पक्ष आमने-सामने होते हैं तो सूचना देने के सम्बन्ध में कोई समस्या ही नहीं होती क्योंकि प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना उसी क्षण हो जाती है जब वे बातचीत करते हैं। कठिनाई उस समय होती है जब पक्षकार एक-दूसरे से दूर-दूर रहते हैं और प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना के लिए डाकघर की सेवाओं का उपयोग करते हैं। ऐसी स्थिति में हमारे लिए यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि पक्षकारों को बाध्य करने के लिए प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना कब पूर्ण होती है क्योंकि जब सूचना पूर्ण हो जाती है तब पक्षकार उसे वापस लेने या खण्डन करने का अधिकार खो बैठते हैं। आइए, अब हम प्रस्ताव एवं स्वीकृति के संप्रेषण के सम्बन्ध में नियमों का अध्ययन करते हैं।

2.4.1 प्रस्ताव का संप्रेषण

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 4 के अनुसार "प्रस्ताव का संप्रेषण या सूचना उस समय पूर्ण मानी जाती है जब इसकी जानकारी उस पक्ष को हो जाए जिसके लिए प्रस्ताव किया गया है।" अर्थात् जब प्रस्ताव का पत्र प्रस्तावितो को प्राप्त हो जाता है तब प्रस्ताव की सूचना या संप्रेषण पूर्ण माना जाता है। उदाहरण के लिए, दिल्ली से क ने एक पत्र द्वारा अपना मकान 10 लाख रुपये में बेचने का प्रस्ताव ख के पास बम्बई भेजा। यह पत्र 5 अप्रैल को डाक में डाला गया और ख को यह पत्र 7 अप्रैल को मिलता है। प्रस्ताव की सूचना (संप्रेषण) 7 अप्रैल को पूर्ण मानी जाएगी।

उपर्युक्त उदाहरण में यदि प्रस्ताव का पत्र ख के पास पहुंचता ही नहीं है परन्तु उसे किसी अन्य स्रोत से प्रस्ताव की जानकारी हो जाती है और वह अपनी स्वीकृति भेज देता है क्योंकि प्रस्ताव का उचित संप्रेषण या सूचना नहीं हुई है अत: क और ख में कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाएगा।

2.4.2 स्वीकृति का संप्रेषण

स्वीकृति के संप्रेषण के सम्बन्ध में नियमों का अध्ययन हमें प्रस्तावक एवं प्रस्तावितो के दृष्टिकोण से करना चाहिए हमें, प्रस्तावक एवं प्रस्तावितो के लिए स्वीकृति का संप्रेषण अलग-अलग समय पर पूर्ण होता है।

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 4 के अनुसार, "स्वीकृति का संप्रेषण (क) प्रस्तावक के प्रति उस समय पूर्ण माना जाता है जब स्वीकृति पत्र प्रेषित कर दिया जाता है और वह प्रस्तावितो के काबू से बाहर हो जाता है तथा (ख) स्वीकर्ता के प्रति संप्रेषण उस समय पूर्ण होता है जब प्रस्तावक को स्वीकृति की जानकारी हो जाए।" इससे स्पष्ट है कि प्रस्तावक, स्वीकृति से उसी समय बाध्य हो जाता है जब कि स्वीकृति पत्र डाक में डाला जाता है परन्तु स्वीकर्ता अपनी स्वीकृति से केवल तभी बाध्य होता है जब स्वीकृति पत्र प्रस्तावक को मिल जाता है। यहाँ यह स्मरणीय है कि यदि स्वीकृति पत्र डाक में गुम हो जाता है या देर हो जाती है तब भी वैध अनुबन्ध का निर्माण हुआ समझा जाता है। प्रस्तावक, स्वीकृति से केवल उसी दशा में बाध्य होता है जब स्वीकृति पत्र पर ठीक पता लिखकर, पूरे मूल्य के टिकट लगाकर डाक में डाला गया हो। प्रस्तावक को स्वीकृति से बाध्य करने के

लिए यह सिद्ध करना आवश्यक है कि स्वीकारक ने स्वीकृति-पत्र डाक में डाला था। अत: यदि स्वीकृति पत्र पर ठीक-ठीक पता नहीं लिखा जाए, तो प्रस्तावक इससे बाध्य नहीं होगा।

उपर्युक्त नियमों से यह भली-भाँति स्पष्ट हो गया है कि जहाँ तक स्वीकर्ता का प्रश्न है वह अपनी स्वीकृति से तब तक बाध्य नहीं होता जब तक स्वीकृति प्रस्तावक के पास नहीं पहुँचती अर्थात् प्रस्तावक के पास स्वीकृति पत्र पहुँचने पर ही स्वीकर्ता अपनी स्वीकृति से बाध्य होता है उससे पहले नहीं। इसमें आपने यह भी ध्यान दिया होगा कि स्वीकृति पत्र डाक में डालने की तारीख में और उसके प्रस्तावक के पास पहुँचने की तारीख में कुछ अन्तराल होता है। इस अन्तराल में, स्वीकर्ता यदि चाहे तो वह अपनी स्वीकृति का खंडन कर सकता है परन्तु इसके लिए उसे संप्रेषण के किसी तीव्र साधन का उपयोग करना होगा।

उपर्युक्त उदाहरण में, बम्बई से ख अपनी स्वीकृति 10 अप्रैल को भेज देता हैं तो स्वीकृति का संप्रेषण क के प्रति 10 अप्रैल को पूर्ण माना जाएगा अर्थात् जैसे ही ख ने पत्र डाक में डाला, क इस स्वीकृति से बाध्य हो गया। परन्तु ख के स्वयं के लिए स्वीकृति की सूचना तब तक पूर्ण होगी जब तक यह पत्र क के पास पहुँच जाए। मान लीजिए स्वीकृति पत्र क को 12 अप्रैल को प्रात: 11 बजे मिलता है, तो ख इस स्वीकृति से 12 अप्रैल को ही बाध्य होगा उससे पहले नहीं। इससे यह स्पष्ट है कि कानून ने स्वीकर्ता को यह अवसर प्रदान किया है कि यदि वह चाहे तो स्वीकृति का खंडन कर सकता है।

2.4.3 टेलीफोन द्वारा अनुबन्ध

टेलीफोन द्वारा किए गए अनुबन्धों पर वही नियम लागू होते हैंजो दोनों पक्षों के आमने-सामने होने पर लागू होते हैं। जब प्रस्तावक तथा स्वीकृति टेलीफोन के द्वारा किए जाते हैं। तो दोनों पक्ष एक-दूसरे की आवाज सुन सकते हैंअर्थात् उनमें सीधा सम्बन्ध होता है अत: जब तक प्रस्ताव स्वीकर्ता की स्वीकृति को साफ एवं सही सुन-समझ नहीं लेता तब तक उनमें कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाता। ऐसी स्थिति में स्वीकर्ता को यह देखना चाहिए कि उसकी स्वीकृति प्रस्तावक ने ठीक से सुन व समझ ली है। टेलीफोन पर वार्तालाप करने वाले व्यक्ति आमतौर से बातचीत समाप्त करने से पहले कुछ शब्द जैसे ओ के, बाई बाई आदि अवश्य कहते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जो उन्होंने कहा है वह दूसरे पक्ष ने सुन व समझ लिया है। यदि स्वीकृति देने से पहले बातचीत करते समय कोई रुकावट आ जाती है। या लाइन कट जाती है तो कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाएगा। उदाहरण के लिए, क ने टेलीफोन पर ख के सामने प्रस्ताव किया। जब ख अपनी स्वीकृति दे रहा था तो लाइन अचानक कट जाती है जिसके कारण क कुछ नहीं सुन पाता। ऐसी स्थिति में क और ख में कोई अनुबन्ध नहीं हुआ। ख एक और प्रयास करता है और इस बार वह अपनी स्वीकृति सुनाने में सफल होता है, तो अनुबन्ध का निर्माण पहली बार न होकर दूसरी बार की बातचीत में होता है।

2.5 प्रस्ताव एवं स्वीकृति का खंडन (Revocation of Offer and Acceptance)

खंडन का तात्पर्य "वापस लेने" या "रद्द करने" से है। प्रस्ताव एवं स्वीकृति दोनों का ही खंडन किया जा सकता है। परन्तु इस प्रकार एक निश्चित समय तक ही खंडन किया जा सकता है। आइए, अब हम प्रस्ताव एवं स्वीकृति के खंडन के सम्बन्ध में नियमों की चर्चा करते हैं।

2.5.1 प्रस्ताव का खंडन

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 5 के अनुसार "प्रस्ताव का खंडन, प्रस्तावक के प्रति स्वीकृति का संप्रेषण पूर्ण होने से पहले किसी भी समय किया जा सकता है, परन्तु उसके बाद नहीं।" यह तो आप जानते ही हैंकि प्रस्तावक के प्रति स्वीकृति की सूचना उस समय पूर्ण होती है जब स्वीकृति पत्र डाक में डाल दिया जाता है, अत: स्वीकृति पत्र डाक में डालने से पहले प्रस्ताव का खंडन किया जा सकता है, उसके बाद नहीं। जैसे कि क ने एक पत्र द्वारा अपनी कार निश्चित मूल्य पर ख को बेचने का प्रस्ताव किया। ख के द्वारा स्वीकृति पत्र डाक में डालने से पहले क अपने प्रस्ताव का खंडन कर सकता है लेकिन उसके बाद नहीं। स्वीकृति पत्र एक बार डाक में डालने के बाद प्रस्ताव को वापस नहीं लिया जा सकता। अत: यदि प्रस्तावक अपने प्रस्ताव को वापस लेना चाहता है तो उसे इसके लिए तीव्र संप्रेषण के साधन का उपयोग करना चाहिए जिससे कि खंडन की सूचना प्रस्ताविती को

स्वीकृति पत्र भेजने से पहले मिल जाए।

खंडन सदैव स्पष्ट होना चाहिए तथा यह प्रस्तावक के द्वारा या उसके अधिकृत प्रतिनिधि द्वारा किया जाना चाहिए। "सामान्य प्रस्ताव" के खंडन की सूचना उसी माध्यम से देनी चाहिए जिस माध्यम से मूल प्रस्ताव की सूचना दी गई है।

2.5.2 स्वीकृति का खंडन

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 5 में आगे यह व्यवस्था है कि स्वीकृति का खंडन, स्वीकर्ता के प्रति स्वीकृति के संप्रेषण के पूर्ण होने से पहले किसी भी समय किया जा सकता है किन्तु उसके बाद नहीं। यह आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि स्वीकर्ता के प्रति स्वीकृति का संप्रेषण उस समय पूर्ण होता है जब स्वीकृति की सूचना प्रस्तावक को मिल जाती है। अत: स्वीकृति का पत्र प्रस्तावक के पास पहुँचने से पहले स्वीकर्ता अपनी स्वीकृति का खंडन कर सकता है। जब स्वीकृति पत्र एक बार प्रस्तावक के हाथ में आ जाता है तो स्वीकर्ता स्वीकृति का खंडन नहीं कर सकता। इसलिए स्वीकृति के खंडन को प्रभावी बनाने के लिए यह जरूरी है कि स्वीकर्ता किसी तीव्र संप्रेषण के साधन का उपयोग करे ताकि स्वीकृति पत्र पहुँचने से पहले खंडन की सूचना प्रस्तावक के पास पहुँच जाए। जैसे क एक पत्र द्वारा 2 फरवरी को अपना मकान निश्चित मूल्य पर ख को बेचने का प्रस्ताव करता है। ख एक पत्र के द्वारा प्रस्ताव को 6 फरवरी को स्वीकार कर लेता है और यह पत्र क के पास 8 फरवरी को दोपहर 2 बजे पहुँचता है। इस स्थिति में 8 फरवरी की दोपहर 2 बजे तक ख अपनी स्वीकृति का खंडन कर सकता है, किन्तु उसके बाद नहीं।

कभी-कभी एक दिलचस्प स्थिति उत्पन्न होती है कि प्रस्तावक का "स्वीकृति पत्र" तथा "स्वीकृति के खंडन का तार" साथ-साथ मिलते हैं। ऐसी स्थिति में अनुबन्ध का निर्माण इस संयोग पर निर्भर करता है कि प्रस्तावक किसको पहले खोल कर पढ़ता है। आमतौर से यह माना जाता है कि एक सामान्य व्यक्ति पहले तार को पढ़ेगा, अत: स्वीकृति का खंडन प्रभावी होगा।

जब अनुबन्ध करने वाले पक्ष एक-दूसरे से दूर हैं और वे टेलीफोन या टेलेक्स द्वारा अनुबन्ध करते हैं, तो प्रस्ताव या स्वीकृति के खंडन का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि प्रस्ताव एवं स्वीकृति की सूचना उसी क्षण हो जाती है जिस समय वह किए जाते हैं।

आपको संक्षेप में यह स्मरण रखना चाहिए कि स्वीकृति पत्र को डाक में डालने से पूर्व प्रस्ताव का खंडन किया जा सकता है तथा प्रस्तावक के पास स्वीकृति पत्र पहुँचने से पहले स्वीकृति का खंडन किया जा सकता है।

2.5.3 खंडन का संप्रेषण

खंडन करने वाले के प्रति तथा जिसे खंडन की सूचना दी जा रही है उसके प्रति, खंडन का संप्रेषण पूर्ण होने का समय भिन्न होता है। धारा 4 के अनुसार खंडन का संप्रेषण:

i) खंडन करने वाले व्यक्ति के प्रति उस समय पूर्ण हो जाता है जब वह खंडन का पत्र डाक में डाल देता है और वह इसे अब वापस नहीं ले सकता।

ii) जिस व्यक्ति को खंडन की सूचना भेजी गई है उसके प्रति उस समय पूर्ण होता है जब उसे इसकी जानकारी हो जाती है अर्थात् जब उसे खंडन सम्बन्धी पत्र या तार मिल जाते हैं।

उदाहरण: क अपना मकान निश्चित मूल्य पर ख को बेचने का प्रस्ताव पत्र द्वारा करता है। ख एक पत्र भेजकर प्रस्ताव स्वीकार कर लेता है। यदि क अपने प्रस्ताव का खंडन तार द्वारा करता है तो क के लिए प्रस्ताव का खंडन तार भेजते ही पूर्ण हो जाता है तथा ख के लिए यह तब पूर्ण होता है जब ख को तार मिल जाए। यदि ख तार भेजकर स्वीकृति का खंडन करता है तो ख के प्रति खंडन का संप्रेषण तार भेजते ही पूर्ण हो जाता है तथा क के प्रति यह तब पूर्ण होता है जब क को तार मिल जाए।

2.6 प्रस्ताव की समाप्ति (Lapse of an Offer)

यह तो आप पहले पढ़ ही चुके हैं कि प्रस्ताव के समाप्त या खंडन से पहले ही उसे स्वीकार किया

जाना चाहिए। अत: अब प्रश्न यह उठता है कि कोई प्रस्ताव कब तक खुला रहता है अथवा, प्रस्ताव को किस समय तक स्वीकार किया जा सकता है। हमारे लिए यह जानना इसलिए आवश्यक है क्योंकि प्रस्ताव के समाप्त होने से पहले ही उसे स्वीकार किया जाना चाहिए। प्रस्ताव जब एक बार समाप्त हो जाता है तो फिर इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता। आइए, अब हम उन परिस्थितियों की चर्चा करते हैं जब प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। ये परिस्थितियां निम्नलिखित हैं :

1 **निश्चित अथवा उचित अवधि के बीत जाने पर**: यदि प्रस्ताव में स्वीकृति के लिए कोई अवधि निर्धारित की गई है तो प्रस्ताविती को उस अवधि के भीतर प्रस्ताव को स्वीकार करना चाहिए तथा यदि कोई अवधि निर्धारित नहीं की गई है तो उचित अवधि के भीतर प्रस्ताव स्वीकार किया जाना चाहिए। अत: यदि प्रस्ताव में निर्धारित अवधि या उचित अवधि के भीतर प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया जाता तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। उचित अवधि क्या है, यह प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। **राम्सगेट विक्टोरिया होटल कम्पनी बनाम मान्टेफियोर** के केस में M ने 8 जून को कम्पनी के शेयर खरीदने का प्रस्ताव किया। कम्पनी ने 23 नवम्बर को उसे आबंटन की सूचना दी। उसने शेयर लेने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि M ने शेयर खरीदने के प्रस्ताव को उचित समय के भीतर स्वीकार नहीं किया अत: M का प्रस्ताव समाप्त हो चुका था और M शेयर लेने के लिए बाध्य नहीं है।

2 **स्वीकृति से पहले प्रस्तावक या प्रस्ताविती की मृत्यु या पागल हो जाने पर**: यदि स्वीकृति से पहले प्रस्तावक की मृत्यु हो जाए या वह पागल हो जाए तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है, बशर्ते कि उसकी मृत्यु या पागलपन की जानकारी स्वीकृति से पहले स्वीकर्ता को हो जाए। परन्तु यदि प्रस्तावक की मृत्यु हो जाए या वह पागल हो जाए तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है बशर्ते की उसकी मृत्यु या उसके पागलपन की जानकारी के बिना प्रस्ताव स्वीकार किया जाता है, तो एक वैध अनुबन्ध का निर्माण होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि प्रस्तावक की मृत्यु या पागल हो जाने पर प्रस्ताव अपने आप ही समाप्त नहीं होता, बल्कि प्रस्ताव उस समय समाप्त होता है जब यह तथ्य स्वीकृति से पहले स्वीकर्ता की जानकारी में आ जाता है। इस संबंध में भारतीय कानून आंग्ल कानून से भिन्न है जहाँ कि प्रस्तावक की मृत्यु होते ही प्रस्ताव समाप्त माना जाता है चाहे स्वीकर्ता ने मृत्यु की जानकारी के बिना ही स्वीकृति दी हो।

स्वीकृति से पहले प्रस्ताविती की मृत्यु हो जाने के प्रभाव के सम्बन्ध में अधिनियम में कोई प्रावधान नहीं है। परन्तु यह एक स्थापित नियम है कि प्रस्ताविती की मृत्यु पर प्रस्ताव समाप्त हो जाता है क्योंकि प्रस्ताविती के द्वारा ही प्रस्ताव समाप्त हो जाता है क्योंकि प्रस्ताविती के द्वारा ही प्रस्ताव स्वीकार किया जा सकता है किसी अन्य के द्वारा नहीं। प्रस्ताविती के कानूनी वारिस भी उस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर सकते।

3 **स्वीकृति के पहले पूर्ण की जाने वाली शर्त का पालन न होने पर**: यदि प्रस्ताव में कोई शर्त है जो प्रस्ताव को स्वीकार करने से पहले पूरी की जानी चाहिए और स्वीकृति देने से पहले वह उस शर्त को पूरी नहीं करता तो प्रस्ताव समाप्त हुआ माना जाता है। जैसे क 10,000 रुपये में अपना स्कूटर ख को बेचने का प्रस्ताव इस शर्त पर करता है कि एक निश्चित तारीख से पहले ख 2,000 रुपये का भुगतान कर दे। ख ने प्रस्ताव तो स्वीकार कर लिया परन्तु रुपये नहीं चुकाए। इस स्थिति में इस स्वीकृति का कोई कानूनी मूल्य नहीं है तथा प्रस्ताव समाप्त माना जाता है।

4 **प्रस्ताविती द्वारा प्रस्ताव अस्वीकार करने पर**: जैसे ही प्रस्ताविती प्रस्ताव को अस्वीकार कर देता है तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। प्रस्ताव जब एक बार समाप्त हो जाता है तो इसे बाद में स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि प्रस्ताविती किसी प्रस्ताव को स्पष्ट तौर से एक बार अस्वीकार कर देता है या प्रस्ताव को कुछ शर्तों के साथ स्वीकार करता है तो प्रस्ताव समाप्त माना जाता है।

5 **निर्धारित तरीके से स्वीकृति न दिए जाने पर**: कभी-कभी प्रस्तावक स्वीकृति देने का तरीका निर्धारित करता है। ऐसी दशा में प्रस्ताव को निर्धारित तरीके से ही स्वीकार करना चाहिए तथा यदि निर्धारित तरीके से स्वीकृति नहीं दी जाती तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए क अपना मकान ख को बेचने का प्रस्ताव करता है और ख को स्वीकृति तार से भेजने के लिए कहता है। अब यदि तार की बजाए किसी अन्य तरीके से स्वीकृति दी जाती है तो क इस स्वीकृति को मानने के लिए बाध्य नहीं होगा। आपने इस बात का अध्ययन इसी

इकाई में 2.3.4 में विस्तार से किया है।

6 **प्रति-प्रस्ताव (Counter Offer) किए जाने पर:** मूल प्रस्ताव को स्वीकार करने के स्थान पर जब तक नया प्रस्ताव किया जाता है तो इसे प्रति-प्रस्ताव कहते हैं। प्रति-प्रस्ताव करने से मूल प्रस्ताव अस्वीकृत माना जाता है। अत: जैसे ही प्रति-प्रस्ताव किया जाता है वैसे ही मूल प्रस्ताव समाप्त या रद्द हो जाता है। यदि प्रति-प्रस्ताव करने वाला, व्यक्ति बाद में अपना इरादा बदलना चाहता है और मूल प्रस्ताव को स्वीकार करना चाहता है, तो वह ऐसा नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए क ने 200 रुपये में अपनी साइकिल ख को बेचने का प्रस्ताव किया। ख ने उसे 170 रुपये में खरीदने का प्रस्ताव किया। इस दशा में 170 रुपये में साइकिल खरीदने का ख का प्रस्ताव एक प्रति-प्रस्ताव है और इससे क का मूल प्रस्ताव समाप्त हो गया। यदि बाद में ख 200 रुपये में ही साइकिल खरीदना चाहे तो यह उसकी ओर से एक नया प्रस्ताव है, मूल प्रस्ताव की स्वीकृति नहीं।

7 **खंडन किए जाने पर:** प्रस्तावितो के द्वारा प्रस्ताव को स्वीकार किए जाने से पहले यदि प्रस्तावक अपने प्रस्ताव को वापस ले लेता है तो प्रस्ताव को समाप्त हुआ माना जाता है। नियमों के अनुसार प्रस्तावक, प्रस्तावितो को प्रस्ताव के खंडन की सूचना देकर स्वीकृति से पहले किसी भी समय प्रस्ताव का खंडन कर सकता है। जैसे कि नीलामी द्वारा विक्रय की दशा में सबसे ऊँची बोली लगाने वाला नीलामकर्ता हथौड़ी गिरने से पहले अपनी बोली को वापस ले सकता है।

8 **प्रस्ताव करने के बाद उसमें अवैधता उत्पन्न हो जाने या उसकी विषय-वस्तु के नष्ट हो जाने पर:** प्रस्ताव को स्वीकार किए जाने से पहले यदि वह अवैध हो जाए तो प्रस्ताव समाप्त हो जाता है। जैसे कि दिल्ली के व्यापारी क ने एक निश्चित तारीख को 100 बोरी चावल लखनऊ में ख को देने का प्रस्ताव किया। इससे पहले कि ख इस प्रस्ताव को स्वीकार करे, सरकार ने एक आदेश जारी करके अनाज के अन्तर्राज्यीय आवागमन पर प्रतिबन्ध लगा दिया, इस हालत में क का प्रस्ताव समाप्त माना जाएगा। इसी प्रकार यदि स्वीकृति देने से पहले प्रस्ताव की विषय-वस्तु नष्ट हो जाती है तो भी प्रस्ताव समाप्त हुआ माना जाता है।

बोध प्रश्न ग

1 प्रस्ताव का सम्प्रेषण कब पूर्ण होता है?

....
....
....
....

2 स्वीकर्ता के प्रति स्वीकृति का सम्प्रेषण कब पूर्ण होता है?

....
....
....
....
....

3 खंडन का सम्प्रेषण कब पूर्ण होता है?

....
....
....
....

4 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) प्रस्ताव का संप्रेषण तब पूर्ण होता है जब.....................................

ii) प्रस्ताव के प्रति स्वीकृति का संप्रेषण तब पूर्ण होता है जब.....................................

iii) प्रस्ताव का खंडन कभी भी किया जा सकता है जब तक कि..................

iv) स्वीकृति का खंडन कभी भी किया जा सकता है जब तक कि...............

v) प्रस्ताविती द्वारा प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिए जाने पर प्रस्ताव.................

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) स्वीकृति देने के बाद खंडन नहीं किया जा सकता..................

ii) स्वीकर्ता के प्रति स्वीकृति का संप्रेषण तब पूर्ण होता है जब स्वीकृति प्रेषित कर दी जाती है।....

iii) प्रस्तावक के प्रति स्वीकृति का संप्रेषण पूर्ण होने से पहले किसी भी समय प्रस्ताव का खंडन किया जा सकता है।........................

iv) स्वीकृति पत्र पर ठीक पता लिखकर व पर्याप्त मूल्य के टिकट लगाकर डाक में डालने पर वैध अनुबन्ध उत्पन्न होता है। ....

v) प्रति-प्रस्ताव करने से मूल प्रस्ताव समाप्त हो जाता है।.................

2.7 सारांश

अनुबन्ध की वैधता के लिए यह आवश्यक है कि एक पक्ष द्वारा निश्चित प्रस्ताव किया जाए तथा दूसरे पक्ष द्वारा शर्त-रहित स्वीकृति दी जाए। जब कोई व्यक्ति, दूसरे व्यक्ति की सहमति प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी कार्य को करने या न करने की अपनी तत्परता प्रकट करता है, तो कहते है कि पहले व्यक्ति ने प्रस्ताव किया। यह प्रस्ताव किसी व्यक्ति विशेष को या जनसाधारण के लिए किया जा सकता है। प्रस्ताव लिखित शब्दों या मौखिक स्पष्ट तौर से किया जा सकता है तथा पक्षकारों के आचरण या परिस्थितियों से गर्भित भी हो सकता है।

प्रस्ताव के वैध होने के लिए आवश्यक है कि (1) उससे कानूनी सम्बन्ध स्थापित करने का इरादा हो, (2) प्रस्ताव की शर्तें निश्चित व स्पष्ट होनी चाहिए, (3) प्रस्ताव और इरादे की घोषणा में अन्तर करना चाहिए, (4) प्रस्ताव को प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण से अन्तर करना चाहिए, (5) इसका सम्प्रेषण अवश्य किया जाना चाहिए, (6) इसमें ऐसी कोई शर्त नहीं होनी चाहिए जिसके पूरा न किए जाने पर प्रस्ताव स्वीकृत समझा जाए, (7) प्रस्ताव सम्बन्धी विशेष शर्तों का सम्प्रेषण भी प्रस्ताव के साथ ही किया जाना चाहिए।

जब दो व्यक्ति एक-दूसरे के प्रस्ताव की जानकारी के बिना एक जैसा ही प्रस्ताव एक-दूसरे को करते हैं, तो इसे प्रति-प्रस्ताव कहते हैं। प्रति-प्रस्ताव को स्वीकृति नहीं माना जाता। निरन्तर चलने वाला प्रस्ताव या टेण्डर को खुला या स्थायी प्रस्ताव भी कहते हैं। यह प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण के समान है। टेण्डर के आधार पर जब माल के लिए आर्डर दिया जाता है तब अनुबन्ध निर्मित होता है।

जिस व्यक्ति के समक्ष प्रस्ताव किया जाता है, जब वह उस पर अपनी सहमति दे देता है तो प्रस्ताव को स्वीकृत हुआ माना जाता है। प्रस्ताव को स्वीकार कर लेने पर यह वचन का रूप ले लेता है। प्रस्ताव केवल उसी व्यक्ति के द्वारा स्वीकार किया जा सकता है जिसके लिए वह किया गया है। स्वीकृति स्पष्ट या गर्भित हो सकती है। स्वीकृति तभी वैध होती है जब वह (1) पूर्ण एवं शर्तरहित हो, (2) निर्धारित तरीके से दी जाए, (3) सम्प्रेषण किया जाए, (4) अधिकृत व्यक्ति द्वारा सम्प्रेषण किया जाए, (5) निर्धारित अवधि या उचित अवधि के भीतर दी जाए, (6) प्रस्ताव के समाप्त होने से पहले दी जाए।

प्रस्ताव का संप्रेषण उस समय पूर्ण माना जाता है जब उसकी जानकारी उस पक्ष को हो जाए जिसके लिए वह किया गया है। स्वीकृति का संप्रेषण (1) प्रस्ताव के प्रति तब पूर्ण होता है जब स्वीकृति उसे प्रेषित कर दी जाती है कि वह अब स्वीकर्ता के काबू से बाहर है, तथा (2) स्वीकर्ता के प्रति तब पूर्ण होता है जब प्रस्तावक को उसकी जानकारी हो जाए।

स्वीकर्ता द्वारा स्वीकृति डाक में डालने से पहले प्रस्ताव का खंडन किया जा सकता है परन्तु इसके बाद नहीं। स्वीकृति का पत्र प्रस्तावक को मिलने से पहले स्वीकर्ता अपनी स्वीकृति का खंडन कर सकता है परन्तु उसके बाद नहीं। खंडन का संप्रेषण तब पूर्ण माना जाता है जब (1) खंडन करने वाले के प्रति

ह यह सूचना भेज देता है, तथा (2) जिस व्यक्ति को खंडन की सूचना भेजी गई है उसके प्रति जब से वह सूचना मिल जाती है।

स्ताव समाप्त हो जाता है (1) निर्धारित या उचित समय के बीत जाने पर, (2) स्वीकृति से पहले स्तावक या प्रस्तावितो की मृत्यु या पागल हो जाने पर, (3) स्वीकृति से पहले किसी शर्त के पालन किए जाने पर, (4) प्रस्तावितो द्वारा, प्रस्ताव की अस्वीकृति दिए जाने पर, (5) जब उसे निर्धारित रीके या किसी अन्य सामान्य या उचित तरीके से स्वीकार न किया जाए, (6) प्रस्तावितो द्वारा प्रति-स्ताव करने पर, (7) स्वीकृति से पहले प्रस्ताव का खंडन किए जाने पर, (8) जब स्वीकृति से पहले स्ताव अवैध हो जाए या प्रस्ताव की विषय-वस्तु नष्ट हो जाए।

.8 शब्दावली

वीकृति: प्रस्ताव पर सहमति प्रकट करना।

ति-प्रस्ताव: शर्त रहित स्वीकृति अथवा मूल प्रस्ताव को स्वीकार करने के स्थान पर नया प्रस्ताव रना।

क्रस-ऑफर: जब दो पक्षकार दूसरे पक्षकार के प्रस्ताव की जानकारी के बिना एक दूसरे को एक सा ही प्रस्ताव करते हैं। इसे स्वीकृति नहीं माना जाता।

पष्ट प्रस्ताव: लिखित या मौखिक शब्दों में किया गया प्रस्ताव स्पष्ट होता है।

ामान्य प्रस्ताव: समस्त जनता के लिए किया गया प्रस्ताव।

र्भित प्रस्ताव: पक्षकारों के आचरण या मामले की परिस्थितियों से प्रस्ताव।

स्ताव के लिए निमन्त्रण: विज्ञापन देकर, मूल्य सूची भेजकर या विवरण पत्र भेजकर जब दूसरे क्तियों से प्रस्ताव आमन्त्रित किए जाते हैं।

स्ताव: प्रस्तावितो की सहमति प्राप्त करने के इरादे से किसी कार्य को करने या न करने की त्परता प्रकट करना।

ंडन: प्रस्ताव या स्वीकृति को वापस लेना या रद्द करना।

शिष्ट प्रस्ताव: निश्चित व्यक्ति के लिए किया गया प्रस्ताव।

ुला या स्थायी प्रस्ताव: निविदा (टण्डर) के रूप में सतत् प्रस्ताव।

.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

) 4 (i) स्पष्ट (ii) निश्चित (iii) प्रस्ताव (iv) जिस व्यक्ति को यह किया (v) नहीं

5 (i) गलत (ii) गलत (iii) सही (iv) गलत (v) गलत (vi) गलत

) 3 (i) शर्त रहित (ii) जिस व्यक्ति को यह किया जाए (iii) निर्धारित (iv) प्रस्ताव समाप्त हो जाता है (v) अस्वीकार

4 (i) गलत (ii) गलत (iii) सही (iv) सही (v) गलत

) 4 (i) जब उसकी जानकारी उस व्यक्ति को मिल जाए जिसे वह किया गया है।

(ii) जब स्वीकृति पत्र डाक में डाल दिया जाता है।

(iii) प्रस्तावक के प्रति स्वीकृति की सूचना पूर्ण नहीं होती।

(iv) स्वीकृति पत्र प्रस्तावक को नहीं मिल जाता।

(v) समाप्त हो जाता है।

5 (i) गलत (ii) गलत (iii) गलत (iv) सही (v) नहीं

2.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

प्रश्न

1 "प्रस्ताव" की परिभाषा कीजिए। वैध प्रस्ताव के आवश्यक लक्षण बताइए।

2 स्वीकृति से क्या तात्पर्य है? प्रस्ताव किस प्रकार स्वीकार किया जा सकता है? कौन प्रस्ताव स्वीकार कर सकता है?

3 निम्नलिखित कथनों पर टिप्पणी कीजिए:

i) "प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण को प्रस्ताव नहीं कहते हैं।"

ii) "स्वीकृत, मानसिक स्वीकृति से कुछ अधिक होनी चाहिए।"

iii) "अनुबन्ध करने के लिए कोई अनुबन्ध नहीं हो सकता।"

4 प्रस्ताव कब समाप्त माना जाता है?

5 प्रस्ताव, स्वीकृति एवं खंडन के संप्रेषण सम्बन्धी नियमों की संक्षेप में व्याख्या कीजिए। क्या ऐसी कोई समय अवधि है जिसके बाद प्रस्ताव का खंडन नहीं किया जा सकता है?

6 क्या निम्नलिखित को प्रस्ताव माना जा सकता है:

i) माल बेचने के लिए सूची।

ii) नीलामी के द्वारा माल बेचने का विज्ञापन।

iii) वस्तुओं पर मूल्य दर अंकित करके उन्हें प्रदर्शित करना।

iv) शेयरों को खरीदने के लिए कम्पनी द्वारा दिया गया विज्ञापन।

v) यह घोषणा या नोटिस कि जो कोई भी खोए हुए कुत्ते को ढूंढेगा उसे 100 रुपये इनाम दिया जाएगा।

7 निम्नलिखित को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए:

i) क्रास ऑफर
ii) प्रति-प्रस्ताव
iii) सामान्य प्रस्ताव
iv) गर्भित प्रस्ताव
v) प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण

8 निम्नलिखित का कारण सहित उत्तर दीजिए।

i) नरेन्द्र अपना स्कूटर 6,000 रुपये में मोहन को बेचने का प्रस्ताव करता है। मोहन जवाब देता है, "मैं इसके लिए 5,500 रुपये दे सकता हूं।" नरेन्द्र इस मूल्य पर बेचने से मना कर देता है। तब मोहन 6,000 रुपये नरेन्द्र को देने का प्रस्ताव करता है परन्तु नरेन्द्र अपना स्कूटर बेचने सेमना कर देता है। पक्षकारों की स्थिति स्पष्ट कीजिए।

(**संकेत**: नरेन्द्र अपना स्कूटर बेचने के लिए बाध्य नहीं है क्योंकि मोहन द्वारा प्रति-प्रस्ताव करते ही नरेन्द्र का 6,000 रुपये में स्कूटर बेचने का मूल प्रस्ताव समाप्त हो गया।)

ii) राम ने घोषणा की कि जो कोई भी व्यक्ति नव-वर्ष के दिन बम्बई के समुद्र में 100 गज तैरेगा उसे 10,000 रु. इनाम दिया जाएगा। एक मछुआरा अचानक समुद्री तेज लहरों से बोट उलट जाने के कारण समुद्र में गिर पड़ा और उसे अपनी जान बचाने के लिए तैर कर किनारे आना पड़ा। बाद में मछुआरे ने इनाम की राशि की माँग की। क्या वह सफल होगा।

(**संकेत**: नहीं। मछुआरा इनाम की राशि का हकदार नहीं है क्योंकि तैरते समय उसे इनाम की जानकारी थी ही नहीं।)

iii) क एक पत्र द्वारा ख को प्रस्ताव भेजता है। प्रस्ताव को स्वीकार करने के पहले ही ख की मृत्यु हो जाती है। ख का कानूनी उत्तराधिकारी उस प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। क्या यह स्वीकृति वैध है?

(**संकेत**: नहीं। यह स्वीकृति वैध नहीं है क्योंकि क का प्रस्ताव ख के लिए ही था, कोई अन्य व्यक्ति इसे स्वीकार नहीं कर सकता।

iv) क ने डाक में एक पत्र भेज कर ख को अपनी कार एक निश्चित मूल्य पर बेचने का प्रस्ताव भेजा। ख ने डाक से पत्र भेजकर प्रस्ताव की स्वीकृति भेज दी। अगले दिन ख ने तार भेजकर स्वीकृति का खंडन कर दिया और यह तार स्वीकृति पत्र से पहले क को मिल गया। क्या स्वीकृति का खंडन वैध है ?

(**संकेत**: हाँ, ख की स्वीकृति का खंडन वैध है क्योंकि प्रस्तावक के पास स्वीकृति पत्र पहुंचने से पहले स्वीकर्ता किसी भी समय स्वीकृति का खंडन कर सकता है।)

v) विजय ने समाचार पत्रों में विज्ञापन दिया कि वह 10 जनवरी, 1989 के दिन अपने नई दिल्ली के निवास स्थान पर अपने घर का कुछ सामान नीलामी द्वारा बेचेगा। बम्बई से अमिताभ निश्चित तिथि व समय पर नई दिल्ली पहुँच गया, परन्तु विजय ने नीलामी रद्द कर दी। अमिताभ को परामर्श दीजिए।

(**संकेत**: यह प्रस्ताव न हो कर प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण था। अत: अमिताभ विजय के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सकता।)

vi) लालजी ने अपना प्लाट 10 लाख रुपये में सोहन के हाथ बेचने का प्रस्ताव किया। सोहन ने 2 लाख रुपये का चैक भेजकर प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तथा वचन दिया कि वह शेष मूल्य दो किश्तों में चुका देगा। क्या कोई अनुबन्ध हुआ ?

(**संकेत**: नहीं। क्योंकि यह स्वीकृति शर्तसहित है अत: लालजी इससे बाध्य नहीं है।)

> **नोट:** इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 3 पक्षकारों की क्षमता

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 अनुबन्ध करने की क्षमता किसमें है ?
3.3 अवयस्क की स्थिति
  3.3.1 अवयस्क कौन है ?
  3.3.2 अवयस्क द्वारा किए गये करारों की स्थिति
3.4 अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों द्वारा किए गये करार
  3.4.1 अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति कौन है ?
  3.4.2 सिद्ध करने का दायित्व
  3.4.3 अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के साथ किए गये करारों की स्थिति
3.5 किसी अन्य कानून द्वारा अयोग्य घोषित व्यक्ति
3.6 सारांश
3.7 शब्दावली
3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.9 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- यह स्पष्ट कर सकेंगे कि अनुबन्ध करने की क्षमता किसमें होती है,
- यह स्पष्ट कर सकेंगे कि अवयस्क कौन होता है तथा अवयस्क के साथ किए गये करारों की क्या स्थिति है,
- अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों की पहचान कर सकेंगे तथा ऐसे व्यक्तियों के साथ किए गये करारों की स्थिति स्पष्ट कर सकेंगे,
- किसी अन्य कानून के द्वारा अयोग्य व्यक्ति कौन हैं तथा अनुबंधन के सम्बन्ध में उनकी स्थिति की व्याख्या कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

आप इकाई 1 में पढ़ चुके हैं कि अनुबन्ध करने वाले पक्षकारों में अनुबन्ध करने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए। यदि अनुबन्ध करने वाले पक्षकारों में से कोई भी एक पक्ष अनुबन्ध करने के अयोग्य है तो यह करार व्यर्थ होता है, अर्थात् कानून द्वारा इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। इस इकाई में आप पढ़ेंगे कि अनुबन्ध करने की क्षमता किसमें होती है तथा यदि किसी एक पक्ष में अनुबन्ध करने की क्षमता नहीं है तो उस दशा में अनुबन्ध की क्या स्थिति होती है।

3.2 अनुबन्ध करने की क्षमता किसमें है ?

अनुबन्ध अधिनियम की धारा II में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुबन्ध करने की क्षमता किनमें

ोती है। इस धारा के अनुसार, अनुबन्ध करने के लिए हर वह व्यक्ति सक्षम है (i) जो उस पर ागू होने वाले कानून के अनुसार वयस्क हो, (ii) जो स्वस्थ मस्तिष्क वाला हो, तथा (iii) उस पर ागू होने वाले किसी कानून द्वारा अनुबन्ध करने के योग्य घोषित न किया गया हो।

ससे स्पष्ट है कि अनुबन्ध करने के लिए सक्षम व्यक्ति को (i) अवयस्क, अथवा (ii) अस्वस्थ ास्तिष्क वाला व्यक्ति, अथवा (iii) अनुबन्ध करने के अयोग्य व्यक्ति नहीं होना चाहिए।

नुबन्ध करने की क्षमता के उपर्युक्त तत्वों का अब हम विस्तार से अध्ययन करते हैं।

।.3 अवयस्क की स्थिति (Position of a Minor)

।.3.1 अवयस्क कौन है ?

ारतीय वयस्कता अधिनियम की धारा 3 के अनुसार, ऐसे हर व्यक्ति को वयस्क माना जाता है जब ह 18 वर्ष की आयु पूरी कर लेता है। किन्तु जब किसी व्यक्ति के लिए या उसकी सम्पत्ति या ोनों के लिए न्यायालय द्वारा कोई संरक्षक नियुक्त किया जाता है अथवा जब किसी व्यक्ति की म्पत्ति की देखरेख के लिए "कोर्ट आफ वार्ड्स" नियुक्त किया गया है, तब ऐसा व्यक्ति 21 वर्ष ी आयु पूरी कर लेने पर वयस्क माना जाता है। सरल शब्दों में, जब तक कोई व्यक्ति 18 वर्ष की ायु पूरी नहीं कर लेता तब तक उसे अवयस्क या नाबालिग माना जाता है।

रन्तु निम्नलिखित दो परिस्थितियों में अवयस्क 21 वर्ष की आयु पूरी कर लेने पर ही वयस्क ामझा जाता है।

। जब किसी अवयस्क व्यक्ति या उसकी सम्पत्ति की देखरेख के लिए गार्जियनस एण्ड वार्ड्स एक्ट 1890 के अन्तर्गत संरक्षक नियुक्त किया गया हो, अथवा

) जब किसी अवयस्क व्यक्ति की सम्पत्ति की देखरेख का दायित्व कोर्ट आफ वार्ड्स द्वारा अपने ऊपर ले लिया गया हो।

.3.2 अवयस्क द्वारा किए गये करारों की स्थिति

सा कि पहले बताया जा चुका है, धारा II के अनुसार कोई भी व्यक्ति तब तक अनुबन्ध करने के ाए सक्षम नहीं होता जब तक वह वयस्क न हो जाए। अन्य शब्दों में, अवयस्क अनुबन्ध करने के ाए असक्षम है अर्थात् वह अनुबन्ध नहीं कर सकता। वास्तव में, कानून अवयस्क के संरक्षक का ार्य करता है तथा उसके अधिकारों की रक्षा करता है क्योंकि वे उतने परिपक्व नहीं होते हैं कि वह ह निर्णय कर सकें कि उनके लिए क्या अच्छा है या क्या बुरा है। अत: किसी करार के अन्तर्गत ए गये वचन के लिए अवयस्क बाध्य नहीं है।

वयस्क के करारों की स्थिति को निम्न तरह से स्पष्ट किया जा सकता है:

अवयस्क के साथ या उसके द्वारा किये गये करार पूर्णत: व्यर्थ होते हैं तथा वह करारों से स्वयं बाध्य नहीं किया जा सकता। मोहरी बीबी बनाम धर्मोदास घोष के वाद् प्रिवी कौंसिल ने निर्णय दिया कि अवयस्क के साथ किये गये करार पूर्णत: व्यर्थ होते हैं। इस वाद के तथ्य इस प्रकार थे: एक अवयस्क व्यक्ति धर्मोदास ने 20,000 रुपये उधार लेने का करार किया। अवयस्क ने इस ऋण के लिए अपनी सम्पत्ति बंधक रख दी और बंधकग्राही से 8,000 रुपये ले लिए। तत्पश्चात् अवयस्क ने बंधक को रद्द करने के लिए दावा कर दिया। प्रिवी कौंसिल ने निर्णय दिया कि अनुबन्ध अधिनियम की धारा 10 तथा 11 के अनुसार अवयस्क के साथ किए गये करार पूर्णत: व्यर्थ होते हैं अत: बंधक वैध नहीं है। तब बंधकग्राही ने 8,000 रुपये अवयस्क से वापस दिलाए जाने की प्रार्थना की। प्रिवी कौंसिल ने निर्णय दिया कि क्योंकि अवयस्क के साथ किए गये करार पूर्णत: व्यर्थ होते हैं अत: अवयस्क को उधार दी गई रकम की वह वसूली नहीं कर सकता।

अवयस्क द्वारा किया गया कपटपूर्ण कथन: यदि अवयस्क जानबूझ कर अपनी आयु के सम्बन्ध में असत्य कथन करता है और दूसरे पक्ष को करार करने के लिए प्रेरित करता है क्या तब स्थिति में कोई परिवर्तन होगा ? नहीं, इससे करार की अवैधता पर कोई असर नहीं पड़ेगा। यदि अवयस्क स्वयं को वयस्क बतला कर किसी से कोई करार कर भी लेता है तो भी करार

व्यर्थ ही माना जाएगा, क्योंकि यदि ऐसा न किया जाए तो धूर्त व्यक्ति अवयस्क के साथ करार करने से पहले, उससे वयस्क होने की लिखित घोषणा करा लेंगे। इससे अवयस्क के हितों की रक्षा करने की विधि का सम्पूर्ण उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। **लेसली बनाम शील** वाद में एक अवयस्क एस ने स्वयं को वयस्क बतलाकर एल से 400 पौंड उधार ले लिए। एस द्वारा रकम वापस न करने पर, एल ने रकम वापस प्राप्त करने के लिए मुकदमा दायर कर दिया निर्णय दिया गया कि यह करार व्यर्थ है और एस 475 पौंड (उधार ली गई रकम + ब्याज) चुकाने के लिए उत्तरदायी नहीं माना जाएगा। **कन्हैया लाल बनाम गिरधारी लाल** के वाद में इस निर्णय की पुष्टि की गई तथा अवयस्क द्वारा लिखे गये प्रतिज्ञापत्र के लिए अवयस्क को उत्तरदायी नहीं माना गया।

क्या तब इसका यह अर्थ निकला कि कम आयु के व्यक्ति बड़ों को ठग सकें तथा जो लाभ उन्हें मिला है उसे अपने पास ही रख सकें? **खाँ गुल बनाम लक्खा सिंह** के वाद में लाहौर हाई कोर्ट (विभाजन से पहले) ने निर्णय दिया कि जब करार को रद्द कर दिया जाता है तो करार करने से पहले की स्थिति को बहाल किया जाना चाहिए और न्यायालय साम्यिक आधार पर अवयस्क को धन या सम्पत्ति दूसरे पक्ष को लौटाने, का आदेश दे सकता है। अत: ऐसे मामलों में जब धन का पता लगता है तो साम्यिक आधार पर, न्यायालय अवयस्क को धन वापस करने का आदेश दे सकता है। विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम 1963, की धारा 30 या 33 के अनुसार जब कोई अवयस्क झूठ बोल कर स्वयं को वयस्क बतलाता है और दूसरे पक्ष को अनुबन्ध करने के लिए प्रेरित करता है, तो न्यायालय अवयस्क को आदेश दे सकता है कि जो धन या लाभ उसने प्राप्त किया है उसे लौटा दे।

3 **वयस्कता की आयु हो जाने पर, अवयस्क द्वारा किए गये अनुबन्धों का पुष्टीकरण** (ratification) **भी नहीं किया जा सकता**: अवयस्क के साथ किए गये करार आरम्भ से ही व्यर्थ होते हैं, अत: वयस्क होने पर उनके पुष्टीकरण करने का प्रश्न ही नहीं उठता। इन्द्र रामास्वामी बनाम अन्धप्पा के वाद में एक अवयस्क व्यक्ति ने एक प्रतिज्ञा पत्र लिख कर कुछ राशि उधार ली तथा वयस्क हो जाने पर उसने पुराने प्रतिज्ञा पत्र के बदले एक नया प्रतिज्ञा पत्र लिख दिया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि दूसरे प्रतिज्ञा पत्र के आधार पर रकम वसूल नहीं की जा सकती क्योंकि इस दूसरे प्रतिज्ञा पत्र के लिए कोई प्रतिफल नहीं है। अवयस्कता की अवधि के दौरान दिया गया प्रतिफल वैध नहीं माना जाता है। परन्तु जब कोई व्यक्ति वयस्क हो जाने पर वास्तव में उस ऋण का भुगतान कर देता है जो उसने अवयस्कता की अवधि में लिया था, तो कानून की दृष्टि में इसे वैध माना जाएगा क्योंकि इसे उपहार के समान ही माना जाएगा। (**अनन्त राम बनाम भगवान राय**)। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि अवयस्क के साथ किए गये करार केवल व्यर्थ होते हैं अवैधानिक नहीं, अत: इस प्रकार से रकम का भुगतान करने के बाद उसे बाद में वापस प्राप्त करने के लिए दावा नहीं किया जा सकता।

4 **अवयस्क साझेदार** (partner) **के रूप में**: अवयस्क किसी साझेदारी फर्म में साझेदार नहीं बन सकता। परन्तु अन्य सभी साझेदारों की सहमति से, अवयस्क को साझेदारी के लाभों में सम्मिलित किया जा सकता है (साझेदारी अधिनियम, 1932 की धारा 30)। इसका अर्थ यह हुआ कि अवयस्क व्यक्ति हानियों के लिए किसी व्यक्तिगत दायित्व का जोखिम उठाए बिना फर्म के लाभों में हिस्सा बँटा सकता है।

5 **अवयस्क एजेन्ट** (agent) **के रूप में**: अवयस्क एक एजेन्ट के रूप में कार्य कर सकता है तथा कोई व्यक्तिगत उत्तरदायित्व उठाए बिना वह अपने कार्यों से प्रधान को बाध्य कर सकता है।

6 **अवयस्क अंशधारी** (shareholder) **के रूप में**: अवयस्क व्यक्ति किसी कम्पनी का अंशधारी सदस्य हो सकता है या नहीं, इस बारे में गम्भीर मतभेद हैं अनुबन्ध अधिनियम के प्रावधानों को तथा प्रिवी कौंसिल के निर्णय को ध्यान में रखते हुए अवयस्क कम्पनी का सदस्य नहीं बन सकता (पालानियप्पा बनाम पसुपति बैंक): इस प्रकार यदि अवयस्क किसी कम्पनी के अंशत: दत्त शेयर (partly paid share) प्राप्त कर लेता है तो कम्पनी उन शेयरों पर बकाया रकम अवयस्क से वसूल नहीं कर सकती। इस सम्बन्ध में एकदम विपरीत निर्णय भी दिये गये हैं जिनमें यह कहा गया कि अवयस्क कम्पनी के पार्षद् सीमा नियम पर हस्ताक्षर कर सकता है तथा आबंटन के द्वारा शेयर प्राप्त कर सकता है। **लैक्सन कम्पनी** के बारे में निर्णय दिया गया कि जब तक कम्पनी के अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में कोई प्रतिबन्ध न लगाया गया हो, अवयस्क शेयरधारी हो सकता है। **दीवान सिंह बनाम मिनर्वा**

फिल्मस लिमिटेड के वाद में पंजाब हाई कोर्ट के निर्णय दिया कि अवयस्क द्वारा कम्पनी के **शेयर प्राप्त करके** (अन्तरण के द्वारा) सदस्य बनने पर कोई कानूनी प्रतिबंध नहीं है बशर्ते कि शेयर पूर्णदत्त हों तथा उनके सम्बन्ध में अन्य कोई दायित्व न जुड़ा हो। अत: निष्कर्ष में यह कह सकते हैं कि अवयस्क कम्पनी का शेयरधारी/सदस्य बन सकता है बशर्ते शेयर पूर्णदत्त हों तथा अन्तर्नियमों में इस सम्बन्ध में कोई प्रतिबन्ध न हो।

7 **अवयस्क को दिवालिया घोषित नहीं किया जा सकता** क्योंकि करार करने की क्षमता न होने के कारण वह देनदार नहीं बन सकता।

अपवाद

1 **अवयस्क की भलाई के लिए किए गये अनुबन्ध**: एक अवयस्क करार के अन्तर्गत लाभ स्वीकार कर सकता है तथा अन्तरिती हो सकता है। यद्यपि अवयस्क द्वारा सम्पत्ति को बेचने या बंधक रखने का अनुबन्ध व्यर्थ होता है, परन्तु यदि अवयस्क ने मूल्य चुका कर किसी सम्पत्ति को खरीदा है या उसने किसी वयस्क को कर्ज दिया है तो सम्पत्ति के अन्तरण के सम्बन्ध में किया गया विक्रय अनुबन्ध या बंधक वैध होता है। ऐसे लेन-देन को अवयस्क स्वयं या उसके लिए किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है। अत: जब अवयस्क के नाम किसी सम्पत्ति के विक्रय का प्रलेख लिख दिया गया है तो वह उस प्रलेख के अन्तर्गत उस सम्पत्ति का कब्जा लेने का हकदार ठहराया जाएगा। मद्रास हाई कोर्ट की पूर्ण पीठ ने निर्णय दिया कि जब अवयस्क किसी सम्पत्ति को अपने पास रखकर ऋण देता है तो बंधक के ऐसे अनुबन्ध को अवयस्क स्वयं या उसके संरक्षक द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है (**राघव चारियर बनाम श्रीनिवास**) । इसी प्रकार अवयस्क किसी पराक्राम्य विलेख का आदाता (Payee) हो सकता है तथा विलेख में लिखी रकम वसूल कर सकता है। जब अवयस्क किसी वयस्क व्यक्ति को कुछ माल बेचता है तो वह उसका मूल्य वसूल करने के लिए क्रेता पर मुकदमा कर सकता है। इस सबका तात्पर्य यह है कि अनुबन्ध अधिनियम किसी अवयस्क को प्रस्तावगृहिता होने से नहीं रोकता है।

2 **संरक्षक (guardian) द्वारा अनुबन्ध**: अवयस्क के लिए उसका संरक्षक अथवा उसकी सम्पत्ति का मैनेजर अनुबन्धन कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में अवयस्क के द्वारा तथा उसके विरुद्ध अनुबन्ध को प्रवर्तित कराया जा सकता है बशर्ते (क) अवयस्क के संरक्षक या मैनेजर ने अपने अधिकारों के अन्तर्गत कार्य किया है तथा (ख) अवयस्क की भलाई के लिए कार्य किया गया है, (**सुब्रामनियम बनाम सुब्बा राव**) । इस प्रकार अवयस्क के माता-पिता या उसके अधिकृत संरक्षक द्वारा अवयस्क की भलाई के लिए न्यायालय की आज्ञा प्राप्त करके उसकी सम्पत्ति बेचने के अनुबन्ध के दोनों में से किसी भी पक्ष द्वारा प्रवर्तित कराया जा सकता है। परन्तु यह ध्यान रहे कि अवयस्क के संरक्षक द्वारा किया गया हर करार प्रवर्तनीय होता है। उदाहरण के लिए, अवयस्क के संरक्षक को यह अधिकार नहीं है कि वह अचल सम्पत्ति की खरीद के करार से उसे बाध्य करे (**भोलानाथ बनाम बलभद्र प्रसाद**) इसी प्रकार, अवयस्क का संरक्षक या माता-पिता उसकी ओर से कोई नौकरी का वैध अनुबन्ध भी नहीं कर सकता है (**राज रानी बनाम प्रेम अदीब**) ।

3 **आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति (supply of necessaries) के लिए किए गयेभे अनुबन्ध**: अवयस्क को या उस पर आश्रित किसी व्यक्ति को आवश्यकता की वस्तुएँ प्रदान करने के अनुबन्ध को अवयस्क के प्रति व्यक्तिगत रूप से प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता है। परन्तु इसके लिए उसकी सम्पत्ति को उत्तरदायी बनाया जा सकता है। इस संबंध में धारा 68 में प्रावधान किया गया है — अनुबन्ध करने में अक्षम किसी व्यक्ति को, या उस पर आश्रित ऐसे व्यक्तियों को, जिनका पालन-पोषण करने के लिए ऐसा अक्षम व्यक्ति कानूनन बाध्य हो, यदि कोई व्यक्ति उनके जीवन स्तर के अनुसार जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुएँ प्रदान करता है तो वस्तुएँ प्रदान करने वाले व्यक्ति को अधिकार है कि वह उनका मूल्य ऐसे अक्षम व्यक्ति की सम्पत्ति से वसूल करे।

जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुओं की एक व्यापक सूची बनाना संभव नहीं है। वास्तव में जो वस्तु किसी व्यक्ति के लिए "आवश्यकता" की हो वही वस्तु किसी दूसरे के लिए "विलासिता" की हो सकती है। उदाहरण के लिए, पहनने वाले कपड़ों में बटन होना आवश्यक है। अत: बटन को "आवश्यकता" की वस्तु कह सकते हैं परन्तु सोने के या हीरे के बटन को ऐसा नहीं मान सकते (एक राजकुमार अपवाद हो सकता है)। संबंधित व्यक्ति के समाज में स्तर को ध्यान में रखते हुए "आवश्यकता" की वस्तुओं का अर्थ समझना चाहिए। "आवश्यकता" में साधारणत: उन वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है जो उसके जीवन व आर्थिक स्तर को उसके स्तर के

अनुसार बनाए रखने के लिए जरूरी हों। आंग्ल वस्तु विक्रय अधिनियम में "आवश्यकता" की परिभाषा इस प्रकार से की है "वस्तुओं के विक्रय तथा सुपुर्दगी के समय अवयस्क के जीवन स्तर के अनुसार उनकी उसे आवश्यकता वास्तव में थी।" इस प्रकार यदि किसी व्यक्ति के पास पहले से ही वह वस्तु पर्याप्त मात्रा में है, तो उसे आवश्यकता की वस्तु नहीं कह सकते। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि दूसरे पक्ष को इस तथ्य की जानकारी है या नहीं। **नैश बनाम इनमैन** के वाद में बी.कॉम. के एक अवयस्क विद्यार्थी ने न से ग्यारह फैशन वाले कोट खरीदे। उसके पास पहले से ही पर्याप्त मात्रा में कोट थे। निर्णय दिया गया कि इस दशा में एक कोट प्रदान करना भी आवश्यक नहीं था। अत: अवयस्क की सम्पत्ति से कोट का मूल्य वसूल नहीं किया जा सकता। भारत में, भोजन, वस्त्र तथा मकान के अतिरिक्त शिक्षा एवं लड़कियों के विवाह के व्यय को भी "आवश्यकता" की श्रेणी में माना गया है। अत: इस प्रकार की वस्तुएँ प्रदान करने या उनके लिए ऋण दिये जाने पर, धारा 68 के अन्तर्गत रकम की वसूली के लिए दावा किया जा सकता है।

इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि अवयस्क को जीवनयापन के लिए आवश्यक वस्तुएं प्रदान करने पर उनका मूल्य अवयस्क व्यक्ति की सम्पत्ति से ही वसूल किया जा सकता है। उनके लिए अवयस्क व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं है अर्थात् उन वस्तुओं के मूल्य के लिए अवयस्क को मंजूरी देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता और न ही उसकी सम्पत्ति को कुर्क किया जा सकता है। अवयस्क को प्रदान की गई सेवाओं के संबंध में भी यही नियम लागू होता है। अत: अवयस्क की सम्पत्ति की रक्षा के लिए किए जाने वाले मुकदमे के लिए दिया गया ऋण, या किसी फौजदारी मुकदमे में अवयस्क के बचाव के लिए दिया गया ऋण, या अवयस्क की किसी सम्पत्ति को कुर्क होने के बचाव के लिए दिया गया ऋण, अवयस्क को प्रदान की गई सेवाओं के अन्तर्गत आता है। अवयस्क को प्रदान की जाने वाली सेवाओं के अन्य उदाहरण ये हैं — शिक्षा, चिकित्सा एवं कानूनी सलाह, रहने के लिए आवास की व्यवस्था जहाँ रह कर वह अपनी शिक्षा पूर्ण कर सके।

यह भी स्मरण रहे कि जीवन की आवश्यकता की वस्तुओं (या सेवाओं) की आपूर्ति के लिए उसके माता-पिता या संरक्षक को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है, वह केवल उसी दशा में उत्तरदायी होते हैं जब वे वस्तुएँ या सेवाएँ अवयस्क को उनके एजेंट के रूप में प्रदान की गई हैं अर्थात् जब अवयस्क ने अपने माता-पिता या संरक्षक के एजेंट के रूप में उस व्यक्ति से उन वस्तुओं को प्राप्त किया है।

बोध प्रश्न क

1 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।
   i) अवयस्क के साथ किया गया अनुबन्ध, अवयस्क की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है। ....
   ii) अवयस्क के साथ किया गया करार आरम्भ से ही व्यर्थ होता है। ....
   iii) अवयस्क के साथ अनुबन्ध चाहे वह उसकी भलाई के लिए ही हो, को प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। ....
   iv) किसी वयस्क व्यक्ति को उधार बेचे गये माल का मूल्य अवयस्क वसूल नहीं कर सकता।.
   v) अवयस्क चेक का आदाता हो सकता है। ....
   vi) अवयस्क को एजेंट नियुक्त नहीं किया जा सकता। ....
   vii) अवयस्क के द्वारा या अवयस्क साझेदार के साथ साझेदारी फर्म की स्थापना की जा सकती है। ....
   viii) वयस्क होने पर अवयस्क अपने अनुबन्धों का पुष्टीकरण कर सकता है। ....
   ix) अवयस्क या उस पर आश्रित व्यक्तियों की जीवनयापन की आवश्यक वस्तुओं के लिए अवयस्क व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। ....
   x) अवयस्क के संरक्षक को, उस पर आश्रित बच्चों की आवश्यकता की वस्तुओं के लिए, उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। ....

2 अवयस्क की ओर से, अवयस्क के संरक्षक द्वारा अचल सम्पत्ति खरीदने के अनुबन्ध से अवयस्क को (क) बाध्य (ख) बाध्य नहीं किया जा सकता। इनमें से कौन सा कथन सही है?

3 एक अवयस्क, बिलियर्ड का पेशेवर खिलाड़ी बनना चाहता था। उसने बिलियर्ड के प्रसिद्ध खिलाड़ी से एक करार किया। अनुबन्ध के अन्तर्गत एक निश्चित रकम के बदले वह बिलियर्ड का खेल सीखेगा तथा विदेशों के दौरे पर खेलने के लिए उसके साथ जाएगा। क्या यह करार वैध है?

....

....

....

....

4. विश्वविद्यालय के अण्डरग्रेजुएट एक अवयस्क क ने, एक दर्जी ख से सात सूट के कपड़े उधार लिए। इस माल के लिए क्या ख रकम वसूल कर सकता है ?

....

....

....

....

3.4 अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों द्वारा किए गए करार (Agreements by Persons of Unsound mind)

3.4.1 अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति कौन है ?

यह तो आप जानते ही हैं कि करार करते समय व्यक्ति को स्वस्थ मस्तिष्क का होना चाहिए अन्यथा कानून की दृष्टि में यह वैध नहीं होता। अनुबंध अधिनियम की धारा 12 में यह अच्छी तरह से बताया गया है कि स्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति कौन होता है। इस धारा के अनुसार, **अनुबन्ध करने के प्रयोजनार्थ कोई व्यक्ति तब स्वस्थ मस्तिष्क का कहलाता है जब वह अनुबन्ध करने के समय अनुबन्ध को समझने की क्षमता रखता हो और इस बारे में विवेकपूर्ण निर्णय ले सकता हो कि अनुबन्ध का उसके हितों पर क्या प्रभाव पड़ेगा।** इस प्रकार मस्तिष्क की स्वस्थता दो तथ्यों पर निर्भर करती है:

1 अनुबन्ध की शर्तों को समझने की उसकी क्षमता, तथा

2 अनुबन्ध का उसके हितों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस बारे में विवेकपूर्ण निर्णल लेने की क्षमता। यदि कोई व्यक्ति उपर्युक्त दोनों में से किसी के भी योग्य नहीं है, तो उसे अस्वस्थ मस्तिष्क वाला कहा जाएगा। जन्मजात मूर्ख, पागल तथा शराबी व्यक्ति अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के कुछ उदाहरण हैं।

धारा 12 में आगे बताया गया है कि ऐसा व्यक्ति जो सामान्यत: अस्वस्थ मस्तिष्क का हो किन्तु कभी-कभार स्वस्थ मस्तिष्क का हो जाता हो, उस समय अनुबन्ध कर सकता है जब वह स्वस्थ मस्तिष्क का हो। इसी प्रकार ऐसा व्यक्ति जो सामान्यत: स्वस्थ मस्तिष्क का हो किन्तु कभी-कभार अस्वस्थ मस्तिष्क का हो जाता है, उस समय अनुबन्ध नहीं कर सकता जब वह अस्वस्थ मस्तिष्क का हो।

उदाहरण

1 पागलखाने का एक रोगी, जो अन्तरालों पर स्वस्थ मस्तिष्क का हो जाता है, वह उन अन्तरालों में अनुबन्ध कर सकता है।

2 ऐसा स्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति, जो तेज बुखार से बेहोश हो या जिसने इतनी शराब पी रखी हो कि वह अनुबन्ध की शर्तों को समझने की स्थिति में न हो या अपने हितों पर अनुबन्ध के प्रभाव के बारे में विवेकपूर्ण निर्णय न ले सकता हो, ऐसी बेहोशी या नशे की हालत में अनुबन्ध नहीं कर सकता।

अनुबन्ध करते समय कोई व्यक्ति स्वस्थ मस्तिष्क का था अथवा नहीं, यह तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है जिसका निर्णय न्यायालय करेगा।

3.4.2 सिद्ध करने का दायित्व

इस सम्बन्ध में निम्न नियमों को ध्यान में रखना चाहिए:

1 जब कोई व्यक्ति सामान्यत: स्वस्थ मस्तिष्क का हो, तो यह सिद्ध करने का दायित्व कि दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करते समय वह अवस्थ मस्तिष्क का था, उस पक्ष पर है जो अनुबन्ध की वैधता को चुनौती देता है **(त्रिलोक चन्द बनाम महान्तु)** ।

2 जब कोई व्यक्ति सामान्यत: अस्वस्थ मस्तिष्क का हो, तो यह सिद्ध करने का दायित्व कि वह अनुबन्ध करते समय स्वस्थ मस्तिष्क का था, उस पक्ष पर है जो अनुबन्ध को स्वीकार करता है।

3 शराब या तेज बुखार से बेहोशी या अन्य किसी कारण के लिए, अयोग्यता सिद्ध करने का दायित्व उस पक्ष पर होता है जो करार करने के समय इस अक्षमता के होने की बात कहता है।

3.4.3 अस्वस्थ मस्तिष्क वाले पागल व्यक्तियों द्वारा किए गये करारों की स्थिति

पागल (Lunatics) : ऐसा व्यक्ति जो किसी मानसिक तनाव या व्यक्तिगत अनुभव के कारण अपना दिमागी संतुलन खो बैठा है, पागल कहा जाता है। किन्तु ऐसा व्यक्ति समय समय पर स्वस्थ मस्तिष्क का हो जाता है। ऐसा व्यक्ति उन करारों के लिए उत्तरदायी नहीं जो उस समय किए गये थे जब वह अस्वस्थ मस्तिष्क का था। परन्तु उन अन्तरालों में जब वह स्वस्थ मस्तिष्क का था, किए गये अनुबन्धों से वह बाध्य है जब वह स्वस्थ मस्तिष्क का था।

जन्मजात मूर्ख (Idiot) : यह ऐसा व्यक्ति है जो स्थायी रूप से अस्वस्थ मस्तिष्क का होता है। यह मूर्खता पैदावशी होती है। ऐसे व्यक्ति में सोचने-समझने की शक्ति बिल्कुल भी नहीं होती। ऐसा व्यक्ति वैध अनुबन्ध नहीं कर सकता। **इन्द्रसिंह बनाम परमेश्वरधारी सिंह** के वाद में, एक सम्पत्ति जिसका मूल्य 25,000 रुपये था, उसे केवल 7,000 रुपये में बेचने का करार एक व्यक्ति ने किया। विक्रेता की माँ ने यह सिद्ध कर दिया कि वह जन्मजात मूर्ख था तथा करार को समझने की क्षमता नहीं रखता था। इस विक्रय को व्यर्थ ठहराते हुए पटना हाई कोर्ट के न्यायाधीश सिन्हा ने कहा कि यह आवश्यक नहीं है एक व्यक्ति जन्मजात मूर्ख हो तभी उसे अनुबन्ध करने से अक्षम माना जाए। हो सकता है कि एक व्यक्ति दिखने में और व्यवहार में बिल्कुल ठीक लगता हो फिर भी वह अपने कार्यों के और उनके अपने हितों पर प्रभाव के बारे में युक्ति-संगत निर्णय लेने की स्थिति में न हो। इस वाद में वह स्वयं निर्णय लेने की स्थिति में नहीं था।

शराबी (Drunken persons) : नशे और पागलपन की स्थिति एक समान ही होती है। शराबी व्यक्ति द्वारा किया गया करार पूर्णत: व्यर्थ होता है। यहाँ यह ध्यान रहे कि अंशत: या सामान्य नशे की स्थिति में किये गये अनुबन्ध को व्यर्थ नहीं माना जाता। इस आधार पर अनुबन्ध को समाप्त करने के लिए यह स्पष्ट तौर पर सिद्ध करना चाहिए कि करार करते समय वह इतने नशे के प्रभाव में था कि वह अस्थायी रूप से तर्कपूर्ण निर्णय लेने की स्थिति में नहीं था अत: अनुबन्ध के लिए वह वैध स्वीकृति नहीं दे सकता था। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 12 में दिया गया उदाहरण (ब) इस प्रकार है: एक स्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति, जो बुखार के कारण बेहोशी की हालत में है, या जो शराब के नशे में इतना धुत्त है कि वह अनुबन्ध की शर्तों को नही समझ सकता, या अपने हितों पर उसके प्रभावों के बारे में युक्ति-संगत निर्णय नही ले सकता, तब तक अनुबन्ध नहीं कर कर सकता जब तक कि बेहोशी या नशा रहता है।

अपवाद

अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्ति के साथ किए गये करार के लिए वही अपवाद लागू होते हैं जो अवयस्क के साथ किए गये करार पर होते हैं। इस प्रकार से एक अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति (i) अपनी भलाई के लिए किये गये अनुबन्धों को प्रवर्तित करा सकता है, तथा (ii) उसे या उस पर आश्रित व्यक्तियों को जीवन की आवश्यकता की वस्तुएँ प्रदान किए जाने पर उसकी सम्पत्ति से उन वस्तुओं का मूल्य वसूल किया जा सकता है।

3.5 किसी अन्य कानून द्वारा अयोग्य घोषित व्यक्ति

अवयस्क तथा अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के अतिरिक्त कुछ और व्यक्ति ऐसे हैं जिन्हें कानून के द्वारा पूर्णत: या अंशत: अनुबन्ध करने के अक्षम माना गया है, अत: ऐसे व्यक्तियों द्वारा किये गये करार भी व्यर्थ होते हैं। अनुबन्धन करने की अक्षमता राजनीतिक स्तर, निगम स्तर या वैधानिक स्तर से उत्पन्न हो सकती है।

विदेशी शत्रु (Alien enemy) : ऐसा व्यक्ति जो किसी अन्य देश का नागरिक हो, विदेशी कहलाता है। इस प्रकार, भारत के संदर्भ में एक विदेशी (i) मित्र, या (ii) शत्रु हो सकता है।

विदेशी मित्र (विदेशी), जिसके देश से भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध हैं, ठीक उसी प्रकार से अनुबन्ध करने की क्षमता रखता है जैसे कि कोई भारतीय। परन्तु न तो वह भारतीय जहाजों में सम्पत्ति खरीद सकते हैं और न ही वे जहाज़ के मास्टर या जहाज़ के मुख्य अधिकारी के पद पर नियुक्त किए जा सकते हैं।

विदेशी शत्रुओं (जिनके देश से भारत युद्ध कर रहा है) से किए गये करारों की स्थिति को दो शीर्षकों के अन्तर्गत अध्ययन किया जा सकता है: (i) युद्ध के दौरान किए गए करार, तथा (ii) युद्ध से पहले किए गए अनुबन्ध। विदेशी शत्रु युद्ध के दौरान न तो किसी भारतीय से अनुबन्ध कर सकता है और न ही भारतीय न्यायालय में मुकदमा चला सकता है, किन्तु केन्द्रीय सरकार की अनुमति मिलने पर वह न्यायालय में मुकदमा चला सकता है। युद्ध से पहले के अनुबन्धों के बारे में या तो वे स्थगित कर दिए जाते हैं अथवा रद्द कर दिए जाते हैं लोकनीति के विरुद्ध करार या ऐसे करार जिनका पालन किए जाने से विदेशी शत्रु की सहायता होती है, भंग कर दिए जाते हैं। ऐसे अनुबन्ध जो लोकनीति के विपरीत नही हैं, युद्ध के दौरान केवल स्थगित कर दिए जाते हैं तथा युद्ध के बाद उन्हें पुन: प्रवर्तित कराया जा सकता है, बशर्ते कि वे परिसीमा अधिनियम के अन्तर्गत कालबाधित न हो चुके हों।

यहाँ यह ध्यान रहे कि एक भारतीय, जो स्वेच्छा से ऐसे देश में रह रहा है या व्यापार कर रहा है, जिसके साथ भारत के सम्बन्ध मैत्री के नही हैं, विदेशी शत्रु माना जाएगा।

विदेशी शासक और राजदूत (Foreign Sovereigns and ambassadors) विदेशी शासक तथा उनके अधिकृत प्रतिनिधियों (राजदूतों) को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं। उनके विरुद्ध, भारतीय न्यायालयों में कोई मुकदमा तब तक नहीं चलाया जा सकता। जब तक कि वे स्वयं इसके लिए सहमति न दे दें। वे अनुबन्ध कर सकते हैं तथा उन्हें भारतीय न्यायालयों में प्रवर्तित भी करा सकते हैं, परन्तु केन्द्रीय सरकार की अनुमति के बिना, उनके विरुद्ध भारतीय न्यायालयों में कोई कार्रवाई नही की जा सकती। विदेशी शासक का यह विशेषाधिकार तब भी बना रहता है जब वह व्यापार कर रहा है। परन्तु किसी भूतपूर्व राजा को यह विशेषाधिकार प्राप्त नही है अत: उसके विरुद्ध हमारे न्यायालयों में वाद दायर किया जा सकता है। यदि कोई विदेशी शासक आदि, भारत में रहने वाले किसी एजेंट के माध्यम से अनुबन्ध करता है, तो ऐसे अनुबन्धों के लिए एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा।

बंदी व्यक्ति (Convicts) : एक बंदी व्यक्ति सज़ा की अवधि के दौरान अनुबन्ध करने के अक्षम होता है। सज़ा की अवधि समाप्त हो जाने पर यह अक्षमता समाप्त हो जाती है तथा वह मुकदमा दायर कर सकता है। बंदी व्यक्ति को जब पैरोल पर रिहा किया जाता है या न्यायालय द्वारा माफ़ कर दिया जाता है, तब वह अनुबन्ध भी कर सकता है तथा मुकदमा भी दायर कर सकता है।

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी अथवा किसी विशेष संसद अधिनियम के अधीन स्थापित वैधानिक निगम: कम्पनी या निगम एक कृत्रिम व्यक्ति है। कानून की दृष्टि में इसका पृथक अस्तित्व होता है अत: इसके संविधान के द्वारा इसकी अनुबन्ध करने की क्षमता तय की जाती है। वैधानिक नियमों की अनुबन्ध करने की क्षमता उस विधान द्वारा तय की जाती है जिसके अधीन उसकी स्थापना हुई है। कम्पनी अधिनियम के अधीन निर्गमित कम्पनियों की अनुबन्ध करने की क्षमता पार्षद् सीमानियम के उद्देश्य वाक्य द्वारा तय की जाती है। पार्षद् सीमानियम में वर्णित अधिकारों के विपरीत कार्य शक्ति-बाह्य (ultra vires) माने जाते हैं और व्यर्थ होते हैं।

दिवालिया (Insolvents) : जब किसी देनदार को दिवालिया घोषित किया जाता है तो उसकी समस्त सम्पत्ति न्यायालय द्वारा नियुक्त सरकारी रिसीवर के अधिकार में चली जाती है। वह अपनी सम्पत्ति के सम्बन्ध में कोई अनुबन्ध नही कर सकता तथा न तो वह स्वयं मुकदमा दायर कर सकता है और न ही उस पर मुकदमा चलाया जा सकता है। दिवालिया व्यक्ति की यह अयोग्यता केवल तभी समाप्त होती है जब उसे न्यायालय से मुक्ति आदेश मिल जाता है।

बोध प्रश्न ख

1 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) ऐसा व्यक्ति जो सामान्यत: अस्वस्थ मस्तिष्क का होता है, उस समय भी अनुबन्ध नही कर सकता जब वह स्वस्थ मस्तिष्क का है।

ii) जन्मजात मूर्ख अनुबन्ध नहीं कर सकता। परन्तु पागल अनुबन्ध कर सकता है। ....

iii) स्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति उस समय भी वैध अनुबन्ध कर सकता है जब वह शराब के इतने नशे में है कि वह युक्तियुक्त निर्णय लेने की स्थिति में न हो। ....

iv) विदेशी मित्र भारतीय जहाज़ में सम्पत्ति खरीद सकते हैं। ....

v) कम्पनी, यद्यपि कृत्रिम व्यक्ति है, ऐसे समस्त अनुबन्ध कर सकती है जो किसी व्यक्ति के द्वारा किए जा सकते हैं। ....

2 आप अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति किसे मानते हैं?

....

....

....

....

3 जन्मजात मूर्खता क्या है ?

....

....

....

....

3.6 सारांश

अनुबन्ध करने वाले पक्षकारों में अनुबन्ध करने की क्षमता अवश्य होनी चाहिए अन्यथा करार ऐसा हो सकता है जो प्रावर्तनिय न हो। कोई व्यक्ति अनुबन्ध करने के लिए सक्षम उस समय होता है (i) जब वह वयस्क है, (ii) स्वस्थ मस्तिष्क का है, तथा (iii) उस पर लागू होने वाले कानून के द्वारा अनुबन्ध करने के लिए अक्षम घोषित न कर दिया हो।

जब कोई व्यक्ति 18 वर्ष की आयु (कुछ दशाओं में 21 वर्ष) प्राप्त कर लेता है तो उसे वयस्क या बालिग समझा जाता है। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसने वयस्कता की आयु प्राप्त नहीं की है, अवयस्क कहलाता है तथा उसके साथ किए गये करार आरंभ से ही व्यर्थ माने जाते हैं। यही नहीं, अवयस्क के साथ किए गये कारारों का वह वयस्क होने पर भी पुष्टीकरण नहीं कर सकता। वह किसी साझेदारी फर्म में साझेदार नहीं बन सकता परन्तु उसे साझेदारी के लाभों में शामिल किया जा सकता है। वह कम्पनी का अंशधारी हो सकता है बशर्ते वह पूर्णदत्त शेयरों का धारक हो तथा कम्पनी के अंतर्नियमों ने इस बारे में कोई प्रतिबंध न लगाया हो। वह वचनगृहीता या हिताधिकारी हो सकता है। कुछ सीमाओं के अंतर्गत उसकी ओर से उसके संरक्षक अनुबन्ध कर सकते हैं। उसे या उस पर आश्रित व्यक्तियों को जीवन की आवश्यकता की वस्तुएँ उपलब्ध कराने का मूल्य चुकाने के लिए उसकी संपत्ति का उपयोग किया जा सकता है।

किसी व्यक्ति को स्वस्थ मस्तिष्क का तब कहा जाता है, जब वह अनुबन्ध करने के समय उसे समझने की क्षमता रखता तो तथा इस बारे में युक्तियुक्त निर्णय लेने की स्थिति में हो कि इस अनुबन्ध का उसके हितों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। जन्मजात मूर्ख, पागल व्यक्ति तथा शराबी को सामान्यत: अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति माना जाता है। अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के साथ किए जाने वाले करार की स्थिति ठीक वैसी ही होती है जैसी कि अवयस्क के साथ करार की होती है।

अवयस्क तथा अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्तियों के अतिरिक्त कुछ और अन्य व्यक्ति भी हैं जिन्हें किसी अन्य कानून के अधीन अनुबन्ध करने के लिए अक्षम माना गया है। ऐसे व्यक्ति ये हैं: (i) विदेशी शत्रु, (ii) विदेशी शासक, (iii) बंदी तथा (iv) दिवालिया व्यक्ति। यद्यपि अनुबन्ध का

निष्पादन कराने के लिए विदेशी शासक या राजदूत के विरुद्ध भारतीय न्यायालय में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता, परन्तु वे हमारे न्यायालय में मुकदमा करके संविदा के निष्पादन की मांग कर सकते हैं।

3.7 शब्दावली

विदेशी: किसी अन्य देश का नागरिक।

बंदी: ऐसा व्यक्ति जो किसी अपराध का दोषी पाया गया है।

जन्मजात मूर्ख: ऐसा व्यक्ति जो जन्म से ही निर्बुद्धि होता है। वह कभी भी सामान्य तर्क करने या सामान्य आचरण के अयोग्य होता है।

पागल व्यक्ति: ऐसा व्यक्ति जो पागलपन या अस्वस्थ मस्तिष्क का है। कोई व्यक्ति अपने जीवनकाल में कभी भी पागल हो सकता है।

अवयस्क: ऐसा व्यक्ति जो अभी 18 वर्ष (कुछ दशाओं में 21 वर्ष) का नहीं हुआ है।

आवश्यकता की वस्तुएँ: ऐसी वस्तुएँ जो किसी व्यक्ति के जीवन-स्तर के अनुसार जीवित रहने के लिए आवश्यक हों तथा उनके विक्रय तथा आपूर्ति के समय वास्तव में उस व्यक्ति को उनकी आवश्यकता थी।

आरंभ से व्यर्थ: प्रारंभ से ही व्यर्थ।

3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 1 (i) गलत (ii) सही (iii) गलत, (iv) गलत, (v) सही (vi) गलत (vii) गलत (viii) गलत (ix) गलत (x) सही

2 कथन (ब) सही है (मीर सरवरजान बनाम फकरूद्दीन मोहम्मद)।

3 हाँ, शिक्षा/ट्रेनिंग जो अवयस्क को किसी व्यावसायिक पेशे के योग्य बनाती हो, उसे आवश्यकता माना जाता है (राबर्ट बनाम ग्रे)।

4 नही, एक ही समय पर सात कोट आवश्यकता की वस्तु नहीं है (नैश बनाम इनमैन)।

ख) 1 (1) गलत (2) सही (पागल व्यक्ति उस अंतराल में अनुबन्ध कर सकता है जब वह स्वस्थ हो) (3) गलत (4) गलत (5) सही (व्यक्तिगत प्रकृति के अनुबन्ध जैसे विवाह का अनुबन्ध, के अतिरिक्त तथा उन परिसीमाओं के अंतर्गत रहते हुये जो कंपनी के पार्षद सीमा अधिनियम द्वारा लगायी गयी है।

3.9 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1 अनुबन्ध करने की क्षमता किसमें है? अवयस्क के साथ किए गये अनुबन्धों की स्थिति स्पष्ट कीजिए।

2 जब करार का एक पक्षकार, एक अवयस्क, अपनी आयु के बारे में जानबूझकर मिथ्यावर्णन करने का दोषी है, तो करार पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा?

3 आवश्यकता की वस्तुएँ क्या हैं? आवश्यकता की वस्तुओं के लिए अवयस्क कब उत्तरदायी होता है?

4 (i) अवयस्क की एक एजेंट के रूप में, (ii) अवयस्क की वचनगृहीता के रूप में, कानूनी स्थिति की जाँच कीजिए।

5 उन व्यक्तियों के नाम बताइए जिन्हें अस्वस्थ मस्तिष्क का माना जाता है। ऐसे व्यक्तियों के साथ किए गये अनुबन्धों की वैधानिक स्थिति बताइए।

6 इस समय लागू किसी अन्य कानून के अधीन किन व्यक्तियों को अनुबन्ध करने से रोका गया है तथा ऐसे व्यक्तियों के साथ किए गये अनुबन्धों की कानूनी स्थिति स्पष्ट कीजिए।

7 निम्नलिखित समस्याओं का कारण सहित उत्तर दीजिए:

i) एक अवयस्क पर डकैत का फौज़दारी का मुकदमा चल रहा है। वह अपने बचाव के लिए, 2,000 रुपये उधार लेता है। लेनदार क्या इस रकम को वसूल करने में सफल होगा ?

(**संकेत**: यह ऋण आवश्यकता के लिए है, इसे अवयस्क की संपत्ति से वसूल किया जा सकता है।)

ii) हरी ने, जो इस बात से अनभिज्ञ था कि गौरव अभी अवयस्क है, गौरव को कुछ माल उधार बेचा। हरी को मूल्य का भुगतान नहीं हुआ। क्या वह गौरव के वयस्क होने पर उसके विरुद्ध दावा कर सकता है ?
(**संकेत**: नहीं, अवयस्क के साथ करार आरंभ से ही व्यर्थ होते हैं।)

iii) एक अवयस्क क ने कुछ माल एक वयस्क ख को बेचा। क्या वह मूल्य वसूल कर सकता है ?

(**संकेत**: हाँ, अवयस्क वचनगृहीता हो सकता है।)

iv) एन्थौनी, एक वयस्क रार्बट के पक्ष में, राबर्ट द्वारा एन्थौनी को उसकी अवयस्कता की अवधि में आवश्यकता की वस्तुएँ प्रदान करने के लिए, एक प्रतिज्ञा पत्र लिखकर देता है। इस प्रतिज्ञा पत्र के लिए क्या एन्थौनी राबर्ट के प्रति उत्तरदायी है ?

(**संकेत**: नहीं, एन्थौनी भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है।)

v) शैलेन्द्र, अपनी अवयस्क पुत्री की ओर से, गिरीश के साथ अनुबंध करता है जिसके अनुसार गिरीश उससे विवाह करने का वचन देता है। बाद में, गिरीश विवाह करने से मना कर देता है। क्या वह वह (पुत्री) गिरीश पर मुआवजे के लिए दावा कर सकती है ?

(**संकेत**: हाँ, वह मुआवजे के लिए दावा कर सकती है क्योंकि यह अनुबन्ध उसकी भलाई के लिए था।)

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह से समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये आपके केवल अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 4 स्वतन्त्र सहमति

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 सहमति का अर्थ
4.3 स्वतन्त्र सहमति की संकल्पना
4.4 बल प्रयोग
- 4.4.1 बल प्रयोग क्या है ?
- 4.4.2 बल प्रयोग का प्रभाव
- 4.4.3 सिद्ध करने का भार

4.5 अनुचित प्रभाव
- 4.5.1 अनुचित प्रभाव क्या है ?
- 4.5.2 इच्छाशक्ति को अधिशासित करने की संकल्पना
- 4.5.3 अनुचित प्रभाव का परिणाम
- 4.5.4 सिद्ध करने का भार

4.6 बल प्रयोग तथा अनुचित प्रभाव में अन्तर
4.7 कपट
- 4.7.1 कपट क्या है ?
- 4.7.2 क्या मौन रहना कपट है ?
- 4.7.3 कपट के परिणाम

4.8 मिथ्यावर्णन
- 4.8.1 मिथ्यावर्णन क्या है ?
- 4.8.2 मिथ्यावर्णन के अनिवार्य तत्व
- 4.8.3 मिथ्यावर्णन का प्रभाव

4.9 कपट तथा मिथ्यावर्णन में अन्तर
4.10 गलती
- 4.10.1 कानून की गलती
- 4.10.2 तथ्य की गलती
- 4.10.3 गलती का प्रभाव

4.11 सारांश
4.12 शब्दावली
4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.14 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- सहमति का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे,
- उन दशाओं का वर्णन कर सकेंगे जब सहमति स्वतन्त्र नहीं होती,
- बल प्रयोग तथा अनुचित प्रभाव का अर्थ एवं अनुबन्ध की वैधता पर उनका प्रभाव स्पष्ट कर सकेंगे,
- बल प्रयोग तथा अनुचित प्रभाव में अन्तर कर सकेंगे,
- मिथ्यावर्णन तथा कपट का अर्थ स्पष्ट कर सकेंगे तथा अनुबन्ध की वैधता पर उनके प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे,
- मिथ्यावर्णन तथा कपट में अन्तर कर सकेंगे,
- गलतियों के विभिन्न प्रकारों एवं अनुबन्ध की वैधता पर उनके प्रभाव का वर्णन कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

आप जानते हैंकि वैध अनुबन्ध के कुछ आवश्यक तत्व होते हैंऔर उनमें से एक है कि अनुबन्ध करने वाले पक्षकारों की सहमति स्वतंत्र होनी चाहिए। यदि सहमति स्वतंत्र नहीं है तो सहमति में व्याप्त दोष की प्रकृति के अनुसार अनुबन्ध व्यर्थ या व्यर्थनीय होगा। इस इकाई में आप सहमति का अर्थ जानेंगे तथा सहमति को प्रभावित करने वाले विभिन्न घटकों, जैसे बल प्रयोग, अनुचित प्रभाव, कपट, मिथ्यावर्णन तथा गलती का अध्ययन करेंगे। आप यह भी पढ़ेंगे कि इन विभिन्न कारणों से करार की वैधता किस सीमा तक प्रभावित होती है।

4.2 सहमति का अर्थ

आप अब तक यह तो पढ़ चुके हैंकि जब दो पक्ष कोई अनुबन्ध करते हैंतो उन्हें अपनी सहमति अवश्य देनी चाहिए। पक्षकारों की सहमति का अर्थ है कि वे एक ही बात को एक ही अर्थ में समझें। अनुबन्ध की विषय वस्तु के संबंध में उनमें परस्पर कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 13 में 'सहमति' शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी गई है: **जब दो या दो से अधिक व्यक्ति एक ही बात पर एक ही अर्थ में सहमत होते हैं तो कहा जाता है कि उन्होंने सहमति दी है।**

अत: सहमति से तात्पर्य है अनुबन्ध की विषय वस्तु के बारे में दोनों पक्षों के मस्तिष्क की पूर्ण एकरूपता। आंग्ल कानून में इसे मतैक्य (consensus - ad - idem) कहा गया है। यदि अनुबन्ध की विषय वस्तु के बारे में पक्षकारों के विचार एक समान नहीं हैंतो वास्तव में उनके बीच कोई करार हुआ नहीं कहा जा सकता। जब दो व्यक्ति किसी व्यक्ति या वस्तु के संबंध में अनुबन्ध करते हैंऔर बाद में यह यह पता चलता है कि उनके मस्तिष्क में किसी दूसरे व्यक्ति या वस्तु का ख्याल था, तो उनके बीच कोई अनुबन्ध हुआ नहीं माना जाएगा। उदाहरण के लिए, क के पास दो मारुति गाड़ियाँ हैं, एक नीली तथा दूसरी लाल। वह अपनी लाल रंग वाली मारुति कार बेचना चाहता है। ख जिसे केवल नीली मारुति कार की जानकारी है, वह क की मारुति कार 60,000 रुपयों में खरीदने का प्रस्ताव करता है। ख यह समझते हुए कि यह प्रस्ताव लाल मारुति कार के लिए है, प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। इस स्थिति में दोनों पक्ष एक ही विषय वस्तु के बारे में नहीं सोच रहे हैं, अत: यहाँ सहमति हुई ही नही और करार का निर्माण नही हुआ। **फोस्टर बनाम मैकीनान** के मामले में प्रतिवादी ने एक विनिमय बिल के पृष्ठांकित किया जबकि उसे यह बतलाया गया था कि वह एक गारंटी का प्रलेख है। न्यायालय ने निर्णय दिया कि वह उस प्रलेख से बाध्य नहीं है क्योंकि हस्ताक्षर करते समय उसके दिमाग में यह बात नहीं थी कि वह किसी विनिमय बिल पर हस्ताक्षर कर रहा था। उनमें सहमति का पूर्ण अभाव था अत: उनमें कोई करार हुआ ही नहीं।

4.3 स्वतंत्र सहमति की संकल्पना

वैध अनुबन्ध के लिए पक्षकारों की केवल सहमति होनी ही आवश्यक नहीं है अपितु सहमति स्वतंत्र भी होनी चाहिए अर्थात् पक्षकारों ने बिना किसी डर या दबाव आदि के अपनी स्वेच्छा से सहमति दी हो। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 10 में स्पष्ट तौर से प्रावधान किया गया है कि वे सब करार अनुबन्ध होते हैं जो पक्षकारों की स्वतंत्र सहमति से किये गये हों। आइए अब हम यह देखते हैंकि पक्षकारों की सहमति स्वतंत्र कब मानी जाती है।

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 14 के अनुसार सहमति तभी स्वतंत्र मानी जाती है जब वह (i) बल प्रयोग (coercion) अथवा (ii) अनुचित प्रभाव (undue influence) अथवा (iii) कपट, (fraud) अथवा (iv) मिथ्यावर्णन (misrepresentation) अथवा (v) गलती (mistake) से प्रभावित नहीं हो। अत: अनुबन्ध के पक्षकारों की सहमति को तब स्वतंत्र माना जाता है जब वह धारा 14 में वर्णित उपर्युक्त किसी एक या अधिक कारणों से प्राप्त न की गई हो। अन्य शब्दों में यदि यह

सिद्ध हो सके कि सहमति बल प्रयोग या अनुचित प्रभाव, कपट, मिथ्यावर्णन या गलती से प्रभावित हुई है तो सहमति को स्वतंत्र नहीं माना जाता। उदाहरण के लिए X ने Y को पिस्तौल दिखाकर उसे अपना मकान 50,000 रुपयों में X को बेचने का करार दिया। इस स्थिति में Y की सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गई है, अत: इसे स्वतंत्र नहीं माना जा सकता।

जब किसी एक पक्ष की सहमति स्वतंत्र नहीं है, तब अनुबन्ध उस पक्षकार की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है, जिस पक्ष की सहमति स्वतंत्र नहीं थी। यदि करार करने वाले दोनों पक्षकारों की गलती के कारण सहमति दी गई है, तो करार को व्यर्थ माना जाता है। चित्र 4.1 को देखिए उसमें उन कारणों को दर्शाया गया है जो स्वतंत्र सहमति को प्रभावित करते हैं एवं अनुबन्ध की वैधता पर उनके प्रभाव को बताते हैं।

चित्र 4.1

स्वतंत्र सहमति को प्रभावित करने वाले तत्व

बल प्रयोग	अनुचित प्रभाव	कपट	मिथ्यावर्णन	गलती
(व्यर्थनीय)	(व्यर्थनीय)	(व्यर्थनीय)	(व्यर्थनीय)	(व्यर्थ)

आप इस बात पर गौर करें कि इन दोनों परिस्थितियों में अन्तर है (i) जब सहमति स्वतंत्र नहीं है तथा (ii) जब सहमति बिल्कुल है ही नहीं। सहमति स्वतंत्र न होने की स्थिति में, अनुबन्ध उस पक्ष की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है जिसकी सहमति स्वतंत्र नहीं है। परन्तु जब सहमति का पूर्ण अभाव हो, करार को आरम्भ से ही व्यर्थ माना जाता है अर्थात् उस करार को प्रवर्तित कराया ही नहीं जा सकता। आइए, अब स्वतंत्र सहमति के इन पाँच तत्वों का विस्तार से वर्णन करते हैं।

4.4 बल प्रयोग (Coercion)

4.4.1 बल प्रयोग क्या है ?

व्यापक तौर पर बल प्रयोग से आशय है किसी व्यक्ति को अनुबन्ध करने के लिए जबरदस्ती बाध्य करना अर्थात् जब किसी व्यक्ति की सहमति डर या दबाव या धमकी से प्राप्त की जाए। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 15 ने "बल प्रयोग" की परिभाषा इस प्रकार दी है— किसी पक्षकार को करार करने के लिए प्रेरित करने के इरादे से किसी व्यक्ति के प्रति, चाहे वह कोई हो, (i) भारतीय दंड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करना या करने की धमकी देना, अथवा (ii) उसके हितों के प्रतिकूल दूसरे की किसी सम्पति को रोकना या रोकने की धमकी देना, बल प्रयोग कहलाता है। अन्य शब्दों में, भारतीय दंड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करने या करने की धमकी दे कर अथवा किसी दूसरे की सम्पत्ति को उसके हितों के प्रतिकूल अपने पास रोक कर या रोकने की धमकी दे कर जब सहमति प्राप्त की जाती है, तब सहमति को बल प्रयोग द्वारा प्राप्त किया गया माना जाता है। इस प्रकार बल प्रयोग से तात्पर्य विधि विरुद्ध किसी कार्य को करने या करने की धमकी देने से है। अब हम उपर्युक्त परिभाषा का विश्लेषण करते हैं।

1 **भारतीय दण्ड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करना**: जब भारतीय दण्ड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करके किसी व्यक्ति की सहमति प्राप्त की जाती है, तो सहमति बल प्रयोग द्वारा प्राप्त की गई कही जाती है। भारतीय दण्ड संहिता द्वारा निषिद्ध कार्यों के कुछ उदाहरण हैं — हत्या, अपहरण, चोट पहुँचाना, बलात्कार, मानहानि, चोरी आदि। उदाहरण के लिए क, ख की पिटाई करके उसे अपना स्कूटर 2,000 रुपये में बेचने के लिए बाध्य करता है। इस स्थिति में ख की सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गयी है **रंगनायकम्मा बनाम अलवार सेट्टी** के वाद में, एक 13 वर्षीय हिन्दू विधवा को एक लड़का गोद लेने के लिए यह कह कर बाध्य किया गया कि जब तक वह उस लड़के को गोद लेने के लिए राजी नहीं होती तब तक उसके मृत पति के शव के दाह संस्कार के लिए नहीं ले जाने दिया जाएगा विधवा ने लडका गोद ले लिया और बाद में दत्तकग्रहण को रद्द कराने के लिए आवेदन कर

दिया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि विधवा की इच्छा पद दत्तकग्रहण व्यर्थनीय है क्योंकि उसकी सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गयी थी क्योंकि दाह संस्कार के लिए शव को ले जाने से रोकना भारतीय दण्ड संहिता की धारा 297 के अधीन दण्डनीय अपराध है।

2 **भारतीय दण्ड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करने की धमकी देना:** परिभाषा का अध्ययन करते समय आपने ध्यान दिया होगा कि भारतीय दण्ड संहिता (Indian Penal Code) द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करना ही केवल बल प्रयोग नहीं कहलाएगा बल्कि किसी ऐसे कार्य को करने की धमकी देना भी बल प्रयोग कहलाता है। अत: गोली मार देने, हत्या करने या अपहरण, शारीरिक चोट पहुँचाने की धमकी देने को भी बल प्रयोग कहा जाता है। उदाहरण के लिए क,ख को यह धमकी देता है कि यदि ख अपना जहाज़ क को एक लाख रुपये में नहीं बेचेगा तो वह ख को गोली मार देगा। ख अपना जहाज़ क को बेचने के लिए अपनी सहमति दे देता है। इस स्थिति में ख की सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गई है।

धारा 15 के स्पष्टीकरण के अनुसार, इस बात का कोई महत्व नहीं है कि भारतीय दंडसंहिता जहाँ पर बल प्रयोग किया जाता है उस स्थान पर लागू होती है या नहीं। यदि मुकदमा भारत में दायर किया जाएगा, तो यह प्रावधान लागू होगा। उदाहरण के लिए, क, खुले समुद्र में एक ब्रिटिश जहाज़ पर, कोई ऐसा कार्य करके ख को करार करने के लिए बाध्य करता है, जो भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आपराधिक संत्रास की कोटि में आता है। तत्पश्चात् क कलकत्ता में अनुबन्धन भंग के लिए ख पर दावा दायर कर देता है क ने बल प्रयोग किया है यद्यपि उसका कार्य इग्लैंड की विधि के अनुसार कोई अपराध नहीं है और उस समय और उस स्थान पर जहाँ वह कार्य किया गया था, भारतीय दंड संहिता की धारा 506 लागू नहीं थी।

3 **किसी सम्पत्ति को अवैध रूप से रोकना:** यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति की किसी सम्पत्ति को अवैध रूप से अपने पास रोक लेता है और दूसरे व्यक्ति को अपने साथ अनुबन्ध करने के लिए बाध्य करता है, तो सहमति को बल प्रयोग से प्रेरित माना जाएगा। उदाहरण के लिए, एक एजेंट ने प्रधान की लेखा पुस्तकों को अपने स्थान पर भेजे गये नये एजेंट को यह कह कर सौंपने से मना कर दिया कि जब तक प्रधान उसे समस्त दायित्वों से मुक्त नहीं कर देता तब तक वह उसे लेखा पुस्तकें नहीं देगा। प्रधान को माँगने पर मुक्ति विलेख देना पड़ा। निर्णय दिया गया कि प्रधान मुक्ति विलेख से बाध्य नहीं है क्योंकि उसकी सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गयी थी (मुथिया बनाम करुप्पन)।

4 **किसी सम्पति को अवैध तरीके से रोकने की धमकी देना:** यदि किसी करार के लिए सहमति प्राप्त करने के उद्देश्य से किसी अन्य व्यक्ति की सम्पत्ति को अवैध रूप से रोकने की धमकी दी जाती है तो इसे भी बल प्रयोग कहते हैं। **बंसराज बनाम दि सेक्रेटरी ऑफ स्टेट** के बाद में क के पुत्र ख के लिए जाने वाले जुमनि की वसूली के लिए सरकार ने क को धमकी दी कि यदि उसने अपने पुत्र ख का जुर्माना भुगतान नहीं किया तो उसकी सम्पत्ति कुर्क कर ली जाएगी। क ने जुर्माना अदा कर दिया। निर्णय दिया गया कि क की सहमति बल प्रयोग से प्रेरित थी अत: वह (क) रकम वसूल करने का अधिकारी है जो उसने बल प्रयोग की धमकी की वजह से अदा की थी।

5 **करार करने के लिए किसी भी व्यक्ति को प्रेरित किया जा सकता है:** बल प्रयोग या बल प्रयोग करने की धमकी संबंधी कार्य किसी अन्य व्यक्ति को अनुबन्ध करने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि बल प्रयोग की परिभाषा में यह कहीं भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि बल प्रयोग किसके द्वारा तथा किसके प्रति प्रयोग किया जाए। अत: यदि वचनदाता या किसी ऐसे अन्य व्यक्ति के प्रति बल प्रयोग किया जाता है जिसका कल्याण वचनदाता चाहता है, तो सहमति को स्वतंत्र नहीं माना जाता। उदाहरण के लिए, क, ख के पुत्र ग को जान से मार डालने की धमकी देता है यदि ख अपनी कार उसे (क) बेचने से इंकार कर देता है। यहाँ पर धमकी ग (ख का पुत्र) के प्रति है, अत: सहमति को बल प्रयोग से प्रेरित माना जाएगा। इसी प्रकार यह भी आवश्यक नहीं है कि बल प्रयोग या बल प्रयोग संबंधी धमकी अनुबन्ध के पक्षकार की ओर से ही हो, यह किसी अजनबी व्यक्ति की ओर से भी हो सकती है। उदाहरण के लिए क,ख जान से मार डालने की धमकी देता है यदि ख अपना मकान घ को बेचने के लिए सहमत नहीं होता है तो ख अपना मकान घ को बेचने का करार कर लेता है। इस उदाहरण में यद्यपि अनुबन्ध के लिए क एक

अजनबी व्यक्ति है, तब भी सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की गयी है। इसलिए सबसे अधिक महत्व की बात यह है कि किसी व्यक्ति (वचनगृहीता) की सहमति कोई ऐसा कार्य करके प्राप्त की गई जो निषिद्ध है। यह महत्वहीन है कि बल प्रयोग अनुबन्ध के पक्षकार द्वारा या किसी अजनबी द्वारा किया जाए।

मुकदमा दायर करने की धमकी

कभी-कभी यह शंका उत्पन्न होती है कि मुकदमा दायर करने की धमकी देना बल प्रयोग है अथवा नहीं। आपको मालूम होना चाहिए की दीवानी या फौज़दारी का मुकद्‌मा दायर करने की धमकी देना बल प्रयोग नहीं है क्योंकि भारतीय दंड संहिता द्वारा इस कार्य को निषिद्ध घोषित नहीं किया गया है। परन्तु झूठे आरोप लगाकर मुकदमा दायर करने की धमकी बल प्रयोग कहलाएगी ऐसे कार्य को भारतीय दण्ड संहिता ने निषिद्ध घोषित किया है।

आत्महत्या की धमकी

भारतीय दण्ड संहिता में आत्महत्या करने या आत्महत्या की धमकी को दंडनीय नहीं माना गया है, परन्तु आत्महत्या के प्रयास को दण्डनीय अपराध माना गया है। अब यह प्रश्न उठता है कि आत्महत्या करने की धमकी को बल प्रयोग माना जाए या नहीं। **अम्मीराजू बनाम शेषम्मा** के वाद में मद्रास हाई कोर्ट ने इस बात पर विचार किया। इस वाद में एक व्यक्ति अपनी पत्नी और पुत्र को आत्महत्या की धमकी दे कर, किसी सम्पत्ति के संबंध को अपने पक्ष में, मुक्ति विलेख लिखवा लिया। इस संव्यवहार को बल प्रयोग के आधार पर कराया गया मानकर रद्‌द कर दिया गया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि यद्यपि आत्महत्या करने की धमकी भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत दण्डनीय अपराध नहीं है फिर भी इसे संहिता द्वारा घोषित निषिद्ध कार्य की ही तरह माना जाना चाहिए।

4.4.2 बल प्रयोग का प्रभाव

अधिनियम की धारा 19 और 72 में बल प्रयोग के प्रभाव का वर्णन किया गया है धारा 19 के अनुसार जब करार के किसी एक पक्ष की सहमति बल प्रयोग द्वारा प्राप्त की गई हो, तो ऐसे करार उस पक्ष की इच्छा या विकल्प पर व्यर्थनीय होते हैं, जिसकी सहमति स्वतंत्र नहीं होती (जिसे पीड़ित पक्ष भी कहते हैं) । अन्य शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि अनुबन्ध को निरस्त करना या पालन करना पीड़ित पक्षकार की इच्छा पर निर्भर है। यदि पीड़ित पक्षकार अनुबन्ध को रद्द करने का निर्णय करता है तो उसे अपना वचन पालन करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। परन्तु ऐसी स्थिति में अनुबन्ध रद्द करने वाले पक्षकार को वह लाभ लौटाना होगा जो उसने अनुबन्ध के अंतर्गत दूसरे पक्ष से प्राप्त किया था। उदाहरण के लिए, क,ख को धमकी देता है कि यदि वह अपना स्कूटर 1,000 रुपये में क के हाथ नहीं बेचता तो वह (क) ख को जान से मार डालेगा। ख रकम प्राप्त करके अपना स्कूटर क को बेच देता है। यहां पर ख की सहमति स्वतंत्र नहीं है अत: यदि ख इस अनुबन्ध को रद्‌द करना चाहे तो वह ऐसा कर सकता है परन्तु उसे (ख) क को 1,000 रुपये लौटाने होंगे जो उसने क से प्राप्त किए थे।

धारा 72 में स्पष्ट प्रावधान किया गया है कि जिस व्यक्ति को गलती से अथवा बल प्रयोग के कारण कोई वस्तु अथवा धन दिया गया है, उसे वह वस्तु या धन वापस करना होगा। उदाहरण के लिए, एक रेलवे कम्पनी एक प्रेषिती को तब तक माल देने के लिए मना कर देती है जब तक कि वह अवैध भाड़े का भुगतान नहीं कर देता। माल को प्राप्त करने के लिए प्रेषिती अवैध भाड़ा चुका देता है। ऐसी परिस्थिति में भुगतान किए गये अतिरिक्त एवं अवैध भाड़े को प्रेषिती वापस प्राप्त करने का अधिकारी है।

4.4.3 सिद्ध करने का भार

सहमति, बल प्रयोग के द्वारा प्राप्त की गई थी या नहीं, यह सिद्ध करने का भार उस पक्ष पर होता है जो अनुबन्ध को रद्‌द करना चाहता है। दूसरे शब्दों में, सिद्ध करने का भार पीड़ित पक्ष पर होता है। इसके लिए पीड़ित पक्ष को केवल यहाँ सिद्ध करना होगा कि यदि बल प्रयोग नहीं किया जाता तो वह कभी भी वह अनुबन्ध नहीं करता।

4.5 अनुचित प्रभाव (Undue Influence)

4.5.1 अनुचित प्रभाव क्या है?

सहमति को प्रभावित करने वाला दूसरा तत्व जो सहमति को दोषपूर्ण बना देता है वह है अनुचित प्रभाव। अनुचित प्रभाव का अर्थ है कि एक पक्ष निर्बल पक्ष पर अपनी शक्तिशाली स्थिति का प्रयोग करके सहमति प्राप्त करता है और अनुचित लाभ उठाता है। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 16 (1) में 'अनुचित प्रभाव' की परिभाषा इस प्रकार की गई है, किसी अनुबन्ध को अनुचित प्रभाव से तब प्रेरित माना जाता है जब पक्षकारों के बीच ऐसे संबंध हैंकि एक पक्ष दूसरे पक्ष की इच्छा शक्ति को प्रभावित करने की स्थिति में है तथा वह अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए इस स्थिति का प्रयोग करता है।

यदि हम इस परिभाषा का विश्लेषण करें, तो अनुचित प्रभाव के दो आवश्यक तत्व स्पष्ट होते हैं:

i) पक्षकारों के मध्य परस्पर संबंध ऐसे हों कि एक पक्ष दूसरे पक्ष की इच्छा शक्ति को प्रभावित करने की स्थिति में हो, तथा

ii) अधिशासन की क्षमता रखने वाले पक्ष ने अपनी स्थिति का प्रयोग दूसरे पक्ष से अनुचित लाभ उठाने के लिए किया हो।

ये दोनों लक्षण एक ही साथ विद्यमान होने चाहिए। इनमें से केवल एक के होने मात्र से ही अनुबन्ध को अनुचित प्रभाव के आधार पर समाप्त नहीं किया जा सकता।

उदाहरण:

क) एक महिला क.ने अपनी सारी सम्पत्ति अपने आध्यात्मिक गुरु ख के नाम दान कर दी ताकि गुरु परलोक में उसकी आत्मा को शान्ति दिला सके। तत्पश्चात् महिला ने दान विलेख की वैधता को चुनौती दी। इस स्थिति में आध्यात्मिक गुरु अपने भक्त क की इच्छाशक्ति को अधिशासित करने की स्थिति में था तथा उसने अपनी शक्तिशाली स्थिति का प्रयोग करके अनुचित लाभ प्राप्त किया। अत: निर्णय दिया गया कि क की सहमति अनुचित प्रभाव से प्राप्त की गई थीं।

ख) क अनेक रोगों से पीड़ित है और ख उसका इलाज कर रहा था। ख चिकित्सक के रूप में क पर अपना प्रभाव डालकर अपनी व्यावसायिक सेवाओं के लिए उससे उचित से कहीं अधिक राशि देने के लिए करार करा लेता है। इस स्थिति में ख ने अपनी उच्चतर स्थिति का प्रयोग करके क से अनुचित लाभ उठाया है।

इस प्रकार आपने देखा कि अनुचित प्रभाव किसी निर्बल पक्ष को ऐसा कार्य करने के लिए बाध्य कर देता है जो वह कभी भी नहीं करता, यदि उसे निर्णय लेने की स्वतंत्रता होती। अनुचित प्रभाव व्यक्ति के मस्तिष्क की स्वतंत्रता को नष्ट कर देता है और उसे अपनी इच्छा विरुद्ध कार्य करने के लिए बाध्य करता है। इस प्रकार, अनुचित प्रभाव में शारीरिक बल के स्थान पर मानसिक बल या दबाव का प्रयोग किया जाता है।

4.5.2 इच्छाशक्ति को अधिशासित करने की संकल्पना

आप यह पढ़ चुके हैंकि जब एक पक्ष किसी दूसरे पक्ष की इच्छाशक्ति को अधिशासित करने की स्थिति में होता है, केवल तभी अनुचित प्रभाव का प्रयोग हो सकता है। अब प्रश्न यह उठता है कि यह कब कहा जा सकता है कि एक पक्ष दूसरे की इच्छाशक्ति को अधिशासित कर सकता है? इस प्रश्न का उत्तर अधिनियम की धारा 16 (2) में दिया गया है। इस धारा के अनुसार एक पक्ष दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में तब माना जाता है जब:

i) **वह दूसरे पक्ष पर वास्तविक या प्रत्यक्ष अधिकार रखता हो**: इस प्रकार के मामलों के कुछ उदाहरण स्वामी एवं सेवक, पिता एवं पुत्र, आयकर अधिकारी एवं करदाता के मध्य सम्बन्ध हैं।

ii) **उसका दूसरे के साथ विश्वासाश्रित सम्बन्ध हो**: इसका अर्थ है विश्वास और भरोसे पर आधारित सम्बन्ध। विश्वासाश्रित सम्बन्धों की श्रेणी बहुत व्यापक है। इसमें संरक्षक एवं

संरक्षित, आध्यात्मिक गुरु एवं उनके भक्त, डाक्टर और मरीज़ वकील और मुवक्किल, ट्रस्टी एवं हिताधिकारी, एक महिला एवं भरोसे का प्रबन्धकीय एजेंट के सम्बन्ध शामिल हैं। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि न्यायिक निर्णयों के अनुसार पति एवं पत्नी, मकान मालिक और किरायेदार तथा लेनदार एवं देनदार के सम्बन्धों में अनुचित प्रभाव की उपधारणा को स्वीकार नहीं किया जाता।

iii) **वह ऐसे व्यक्ति के साथ अनुबन्ध करता है जिसकी मानसिक क्षमता वृद्धावस्था, बीमारी या मानसिक अथवा शारीरिक संताप के कारण अस्थायी या स्थायी रूप से प्रभावित हुई हो**: मन्द बुद्धिवाले व्यक्ति, वृद्ध, अनपढ़ तथा रोगी व्यक्ति ऐसे हैं जिन पर आसानी से प्रभाव डाला जा सकता है, अतः कानून ऐसे व्यक्तियों की रक्षा करता है। उदाहरण, 90 वर्ष के एक अनपढ़ वृद्ध ने, जो शारीरिक रूप से अक्षम है। तथा मानसिक कष्ट में है, अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति अपने निकट सम्बन्धी ख के नाम उपहार विलेख में कर दी जो वृद्ध की खेती-बाड़ी की तथा वृद्ध की दैनिक आवश्यकताओं की देखभाल करता था। न्यायालय ने निर्णय दिया कि ख,क की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में था। **(शेर सिंह बनाम पृथ्वी सिंह)**

4.5.3 अनुचित प्रभाव का परिणाम

जब अनुबन्ध करने वाले किसी पक्ष की सहमति अनुचित प्रभाव के द्वारा प्राप्त की जाती है, तो जिस पक्ष की सहमति इस प्रकार प्राप्त की गयी है उस पक्ष की इच्छा पर अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। अनुबन्ध अधिनियम की धारा 19–क में अनुचित प्रभाव के परिणाम के बारे में बताया गया है कि जब किसी करार के लिए सहमति अनुचित प्रभाव के द्वारा प्राप्त की गयी है, तो उस पक्ष की इच्छा पर, जिसकी सहमति इस तरह प्राप्त की गयी थी, व्यर्थनीय होता है। ऐसे अनुबन्ध को पूर्णतया समाप्त किया जा सकता है या यदि अनुबन्ध रद्द कर सकने वाले पक्ष ने प्रबन्ध के अन्तर्गत कोई लाभ प्राप्त कर लिया है तो न्यायालय न्यायोचित शर्तों पर उसे रद्द कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक साहूकार क ने एक किसान ख को 100 रुपये उधार दिए और अनुचित प्रभाव के द्वारा उससे 200 रुपये का प्रतिज्ञा पत्र 6 प्रतिशत मासिक ब्याज दर सहित लिखवा लिया। न्यायालय इस प्रतिज्ञा पत्र को रद्द कर सकता है और ख को 100 रुपये उचित ब्याज की दर सहित वापस लौटाने का आदेश दे सकता है।

यह तो आप जानते ही हैं कि बल प्रयोग की दशा में यदि पीड़ित पक्षकार अनुबन्ध रद्द करने का निर्णय करता है तो अनुबन्ध के अन्तर्गत जो लाभ उसने प्राप्त किया है, वह उसे लौटाना पड़ेगा। परन्तु जब अनुचित प्रभाव के आधार पर अनुबन्ध को रद्द किया जाता है तो न्यायालय को यह अधिकार है कि वह पीड़ित पक्षकार से उक्त लाभ पूर्णतः या अंशतः वापिस करा दे अथवा लाभ वापिस करने का आदेश दिए बिना अनुबन्ध को रद्द कर दे।

4.5.4 सिद्ध करने का भार

जब अनुबन्ध का एक पक्षकार, अनुचित प्रभाव के आधार पर अनुबन्ध को रद्द करने का निर्णय लेता है, तो उसे यह सिद्ध करना होगा कि:

i) **दूसरा पक्ष उसकी इच्छाशक्ति को अधिशासित** (dominate) **करने की स्थिति में था।**

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि पक्षकारों में निकट सम्बन्ध सिद्ध कर देने मात्र से ही यह नहीं माना जा सकता कि एक पक्ष दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में था, शक्तिशाली पक्ष की अधिशासित करने की स्थिति को सिद्ध करना होगा।

ii) **दूसरे पक्ष ने वास्तव में अपने प्रभाव का प्रयोग करके अनुचित लाभ उठाया है।**

पीड़ित पक्ष को केवल यही नहीं करना है कि शक्तिशाली पक्ष अधिशासित करने की स्थिति में था बल्कि उसे यह भी सिद्ध करना होगा कि शक्तिशाली पक्ष ने अपनी स्थिति का प्रयोग किया है और उससे अनुचित लाभ भी प्राप्त किया है।

जब कमजोर पक्ष उपर्युक्त दोनों बातें सिद्ध कर देता है तब शक्तिशाली पक्ष को यह सिद्ध करना होगा कि उसने कोई अनुचित प्रभाव का प्रयोग नहीं किया है तथा दूसरे पक्ष ने स्वतन्त्र सहमति दी है।

अनुबन्ध अधिनियमे की धारा 16 (3) में उपर्युक्त प्रावधान किया गया है, इसके अनुसार जब ऐसा पक्ष जो दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में है, उसके साथ कोई अनुबन्ध करता है और यह संव्यवहार प्रत्यक्षत: या साक्ष्य के आधार पर नृशंस प्रतीत होता है, तो यह सिद्ध करने का भार कि यह अनुबन्ध अनुचित प्रभाव से प्रेरित नहीं हुआ उस शक्तिशाली पक्ष पर होता है जो दूसरे पक्ष की (कमज़ोर) इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में था।

नृशंस संव्यवहार (Unconsionable Transactions)

आपने ध्यान दिया होगा कि धारा 16 (3) में "नृशंस संव्यवहार" शब्द प्रयोग किया गया है। किसी संव्यवहार को नृशंस तब कहते हैं जब प्रभावशाली पक्ष ने अपनी स्थिति का प्रयोग किया है और उसके कारण ऐसा अनुबन्ध किया है जिससे उसे स्वयं बहुत अधिक लाभ होता है तथा दूसरे पक्ष के लिए सर्वथा अलाभदायक है। अन्य शब्दों में, यदि शक्तिशाली पक्ष दूसरे के संताप का खूब लाभ उठाता है तो इसे नृशंस संव्यवहार कहते हैं अर्थात् यह ऐसा है जो अंतरात्मा का आहत करता है।

नृशंस संव्यवहारों की स्थिति में प्रभावशाली पक्ष को यह सिद्ध करना होगा कि अनुबन्ध अनुचित प्रभाव से प्रेरित नहीं हुआ है। उदाहरण के लिए, क गाँव के साहूकार ख का ऋणी है और वह ऐसी शर्तों पर ख से नया ऋण लेता है जो प्रत्यक्षत: नृशंस लगती हैं यह सिद्ध करने का भार ख पर होगा कि उक्त अनुबन्ध अनुचित प्रभाव से प्रेरित नहीं था।

आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि अत्यधिक ऊँची ब्याज दर हो जाने से ही कोई संव्यवहार नृशंस नहीं हो जाता है, उदाहरण के लिए, विशेषत: ऐसे करार में जिसमें अनुबन्ध करने वाले दोनो पक्ष बराबरी की स्थिति में होते हैं। क एक बैंक से ऐसे समय पर ऋण के लिए प्रार्थना करता है जबकि मुद्रा बाज़ार में मुद्रा कमी थी। बैंक ने असाधारण रूप से ऊंची ब्याज की दर के अलावा ऋण देने से मना कर दिया। क ने उन्हीं शर्तों पर ऋण लेना स्वीकार कर लिया। यह लेन-देन व्यापार के सामान्य अनुक्रम में था तथा अनुबन्ध अनुचित प्रभाव से प्रेरित नहीं था। अत: किसी संव्यवहार को केवल इसी आधार पर निरस्त नहीं कर दिया जाएगा कि ब्याज की दर 75 या 100 प्रतिशत वार्षिक है, तो न्यायालय ब्याज की दर में संशोधन कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक गरीब हिन्दू विधवा, जिसे अपने भरण-पोषण के लिए मुकदमा करने के लिए रुपयों की सख्त आवश्यकता थी, 1,500 रुपये 100 प्रतिशत वार्षिक दर से ब्याज पर उधार लिए। न्यायालय ने इसे नृशंस संव्यवहार ठहराया तथा ब्याज को घटाकर 24 प्रतिशत वार्षिक कर दिया **(रानी अन्नापूर्णी बनाम स्वामीनाथा)**।

आपको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि अनुबन्ध का एक पक्ष केवल यह कहकर कि संव्यवहार नृशंस है, अनुबन्ध को अनुचित प्रभाव के आधार पर रद्द नहीं करा सकता। उसे यह भी सिद्ध करना होगा कि दूसरा पक्ष उसकी इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में था और उसने वास्तव में अपनी स्थिति का प्रयोग कर के अनुचित लाभ प्राप्त किया है।

अनुचित प्रभाव की उपधारणा को यह प्रमाणित करके खंडित किया जा सकता है कि:

i) अनुबन्ध करने से पूर्व प्रभावशाली पक्ष ने समस्त तथ्य पीड़ित पक्षकार पर प्रकट कर दिये थे,

ii) मूल्य या प्रतिफल पर्याप्त था, तथा

iii) अनुबन्ध करने से पहले कमज़ोर पक्ष ने सक्षम स्वतन्त्र सलाह प्राप्त की थी।

पर्दानशीन महिला के साथ अनुबन्ध

पर्दानशीन महिला उसे कहते हैं जो पूर्णतया पर्दे में रहती है अर्थात् जो अपने परिवार के सदस्यों के अलावा जनसाधारण के सम्पर्क में न आती हो। कानून पर्दानशीन महिलाओं को इस आधार पर विशेष संरक्षण प्रदान करता है कि वे सांसारिक ज्ञान से अनभिज्ञ होती हैं। पर्दानशीन महिला के द्वारा किये गये या उसके साथ किये गये अनुबन्ध में अनुचित प्रभाव की उपधारणा सदैव रहती है। किसी पर्दानशीन महिला से अनुबन्ध किये जाने पर यह सिद्ध करने का भार कि अनुबन्ध करने के लिये कोई अनुचित प्रभाव नहीं डाला गया, दूसरे पक्ष पर होता है। दूसरे पक्ष को यह सिद्ध करना होगा कि (i) अनुबन्ध की शर्तें पर्दानशीन महिला को अच्छी तरह से समझा दी गई थी, (ii) वह उसके परिणामों को समझती थी, (iii) उसे स्वतन्त्र सलाह प्राप्त करने की सुविधा उपलब्ध थी, तथा (iv) उसने अनुबन्ध के लिए स्वतन्त्र सहमति दी थी। यहाँ इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि यह संरक्षण केवल ऐसी महिला को दिया गया है जो पूर्णतया परदे में रहती है। थोड़ा पर्दा करने पर या

थोड़ा एकान्त में रहने वाली महिला को यह संरक्षण उपलब्ध नहीं होता है।

4.6 बल प्रयोग तथा अनुचित प्रभाव में अन्तर

बल प्रयोग एवं अनुचित प्रभाव, दोनों ही परिस्थितियों में सहमति स्वतन्त्र नहीं होती तथा पीड़ित पक्ष की इच्छा पर अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। परन्तु इन दोनों में कुछ मूलभूत अन्तर हैं, जो संक्षेप में निम्नलिखित हैं :

बल प्रयोग	अनुचित प्रभाव
1) पक्षकारों में कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।	1) पक्षकारों में एक निश्चित सम्बन्ध अवश्य ही होना चाहिए।
2) सहमति, अपराध करने या करने की धमकी के कारण दी जाती है।	2) इच्छा शक्ति को प्रभावित करके सहमति प्राप्त की जाती है, कोई अपराध का कार्य नहीं किया जाता।
3) इसमें शारीरिक बल या धमकी दी जाती है।	3) इसमें नैतिक या मानसिक दबाव होता है।
4) यह अजनबी द्वारा किया जा सकता है तथा यह वचनदाता के प्रति भी हो सकता है या किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति भी जिसकी सुरक्षा (कल्याण) वचनदाता चाहता है।	4) यह सदैव अनुबन्ध के पक्षकार के द्वारा ही प्रयोग किया जाता है।
5) जब अनुबन्ध रद्द किया जाता है तो जो लाभ प्राप्त किया है वह लौटाना पड़ता है।	5) जब अनुबन्ध रद्द किया जाता है तो प्राप्त लाभ को लौटाना न्यायालय की इच्छा पर है। न्यायालय द्वारा आदेश दिए जाने पर ही लाभ लौटाया जाता है।

बोध प्रश्न क

1 "सहमति" की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

2 सहमति को स्वतन्त्र कब कहा जाता है?

....

....

....

....

3 "बल प्रयोग" क्या है?

....

....

....

....

4 किसी पक्ष को दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में कब कहा जाता है ?

....

....

....

....

5 नृशंस संव्यवहार क्या होता है ?

....

....

....

....

6 बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) सहमति के अभाव में कोई अनुबन्ध नहीं हो सकता।...............................

ii) बल प्रयोग कहलाने के लिए धमकी आवश्यक तौर पर अनुबन्ध के पक्षकार की तरफ से ही आनी चाहिए।...............................

iii) जब सहमति बल प्रयोग से प्राप्त की जाती है, तो अनुबन्ध व्यर्थ होता है।.....................

iv) आत्महत्या करने की धमकी देना बल प्रयोग है।...............................

v) अनुचित प्रभाव में नैतिक दबाव का प्रयोग होता है।...............................

vi) ऋणदाता एवं ऋणी के बीच होने वाली संविदा में अनुचित प्रभाव की उपधारणा होती है।.....

vii) अनुचित प्रभाव का प्रयोग केवल अनुबन्ध के पक्षकार द्वारा ही किया जा सकता है।.........

4.7 कपट (Fraud)

4.7.1 कपट क्या है ?

सरल शब्दों में, कपट का अर्थ है अनुबन्ध के एक पक्ष द्वारा दूसरे पक्ष को धोखा देने के उद्देश्य से या जानबूझकर असत्य कथन करना। भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 17 में "कपट" की परिभाषा इस प्रकार की गयी है:

"कपट से निम्नलिखित कार्यों में से कोई भी ऐसा कार्य अभिप्रेत है जो अनुबन्ध के एक पक्षकार द्वारा स्वयं, या उसकी मौन सहमति से, या उसके एजेंट द्वारा अनुबन्ध के दूसरे पक्षकार या उसके एजेंट को धोखा देने के इरादे से या उसे अनुबन्ध करने के लिए प्रेरित करने के इरादे से किया गया हो।

i) किसी असत्य तथ्य का सुझाव, जिसकी सत्यता में सुझाव देने वाले को स्वयं विश्वास नहीं है,
ii) किसी तथ्य की जानकारी या विश्वास रखने वाले व्यक्ति द्वारा उस तथ्य को सक्रिय रूप से छिपाना,
iii) पालन न करने के इरादे से दिया गया वचन,
iv) धोखा देने योग्य अन्य कोई कार्य,
v) कोई भी ऐसा कार्य या भूल जिसे कानून ने विशेष तौर पर कपटपूर्ण घोषित किया हो।

उपर्युक्त परिभाषा का विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि किसी कार्य को कपटमय कहलाने के लिए उसमें निम्न तत्व अवश्य विद्यमान होने चाहिए।

1 **अनुबन्ध के एक पक्षकार द्वारा, या उसकी मौन सहमति से किसी अन्य के द्वारा, या उसके एजेंट के द्वारा कपट किया जाना चाहिए:** किसी अजनबी द्वारा किये गए कपट से अनुबन्ध की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, ख के द्वारा किए गए असत्य वर्णन के आधार पर क किसी कम्पनी के शेयर खरीदने के लिए प्रेरित हुआ। ख कम्पनी का न तो संचालक था और न ही प्रतिनिधि, वह तो मात्र एक अजनबी था। अत: क कपट के आधार पर अनुबन्ध को रद्द नहीं करा सकता क्योंकि असत्य कथन कम्पनी या उसके एजेंट ने नहीं बल्कि एक अजनबी ने किया था। परन्तु यदि कम्पनी के संचालन के द्वारा असत्य कथन किया जाए तो क अनुबन्ध को समाप्त करा सकेगा।

2 **दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे से कपट किया जाना चाहिए:** उदाहरण के लिए, क,ख को धोखा देने के इरादे से असत्य कथन करता है कि उसकी फैक्ट्री में प्रतिमाह 100 नग उत्पादन होता है, जबकि क को यह भली भांति ज्ञात है कि केवल 75 से 80 नग ही प्रतिमाह उत्पादन होता है। इस कथन से प्रेरित हो कर ख फैक्ट्री खरीद लेता है। इस स्थिति में ख की सहमति कपट से प्राप्त की गई है।

3 **असत्य सुझाव या वर्णन अवश्य किया जाना चाहिए:** कपट कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि असत्य वर्णन या सुझाव अवश्य किया जाना चाहिए और जो पक्ष इस प्रकार से वर्णन करता है उसे उस कथन या सुझाव की असत्यता का ज्ञान होना चाहिए। उदाहरण के लिए, क अपना स्कूटर ख को बेचते समय कहता है कि यह एकदम नया है जबकि उसे यह अच्छी तरह पता है कि वह प्रयोग किया जा चुका है। क का कथन कपट कहलाएगा।

कई बार ऐसा भी हो सकता है कि जिस समय वर्णन किया गया था तब वह सत्य था, किन्तु अनुबन्ध करने से पूर्व वह असत्य हो गया और इस तथ्य की जानकारी पक्षकार को है। ऐसी स्थिति में, सत्य बात बतायी जानी चाहिए। यदि आवश्यक सुधार नहीं किया जाता तो इसे कपट कहा जाएगा। इस सम्बन्ध में आप यह स्मरण रखें कि यदि कथन करने वाला पक्ष अपने कथन की सत्यता में ईमानदारी से विश्वास करता है तो वह कपट के लिए उत्तरदायी नहीं होगा चाहे उसके कथन में कितनी लापरवाही या मूर्खता क्यों न विद्यमान रही हो। कपट कहलाने के लिए, असत्य कथन जानबूझकर किया जाना चाहिए।

4 **वर्णन तथ्य सम्बन्धी होना चाहिए:** केवल विचार प्रकट करना, या अभिव्यक्ति या अभिप्राय प्रकट करना या किसी बात को बढ़ा-चढ़ा कर कहने को कपट नहीं कहा जाता। उदाहरण के लिए, क अपना घोड़ा ख को बेचते समय कहता है कि " मेरा घोड़ा वाई के घोड़ेजैसा ही बढ़िया है।" यह केवल विचारों की अभिव्यक्ति मात्र है। परन्तु यदि क यह कहता है कि उसने घोड़ा 5,000 रु. में खरीदा है तो यह तथ्य सम्बन्धी कथन बन जाएगा और यदि यह असत्य है तो इसे कपट माना जाएगा।

5 **तथ्य का सक्रिय छिपाव भी कपट कहलाता है:** जब कोई पक्षकार सकारात्मक कदम उठाता है ताकि कोई सूचना दूसरे पक्ष तक न पहुँचे, तो इसे सक्रिय रूप से छिपाना कहते हैं और यह कपट कहलाता है। उदाहरण के लिए, घोड़ों का एक व्यापारी क एक घोड़ा ख को दिखाता है। क को यह मालूम है कि घोड़े का खुर खोखला है और इसे उसने इस प्रकार से भर दिया है कि उसके खोखला होने का पता नहीं चलता। ख को बाद में घोड़े के दोष का पता चलता है। अत: वह घोड़ा खरीदने से इंकार कर देता है। निर्णय दिया गया कि ख की इच्छा पर अनुबन्ध समाप्त किया जा सकता है क्योंकि उसकी सहमति कपट से प्राप्त की गयी है।

6 **कपट से दूसरे पक्ष को धोखा अवश्य होना चाहिए:** धोखा देने के इरादे से जो कार्य किया गया है उससे दूसरे पक्ष को धोखा अवश्य होना चाहिए। दूसरे पक्ष ने उस बात पर भरोसा करके ही अपनी सहमति दी होनी चाहिए। अन्य शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि ऐसा धोखा देने का प्रयास जिससे दूसरे पक्ष को धोखा नहीं हुआ हो, कपट नहीं कहलाता। **हॉर्सफाल बनाम थॉमस** के विवाद में क के पास एक खराब बन्दूक थी। खराबी को छिपाने के लिए उसने उसे धातु से भर दिया। ख ने बन्दूक की जाँच नहीं की और उसे खरीद लिया। ख के द्वारा मूल्य चुकाने से पहले ही बन्दूक फट गयी। अत: ख ने मूल्य चुकाने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि ख मूल्य चुकाने के लिए उत्तरदायी है क्योंकि वास्तव में उसे कोई धोखा नहीं हुआ है। यदि उस छेद को नहीं भी भरा जाता तब भी उसने बन्दूक खरीद लेनी थी, क्योंकि ख ने बन्दूक की जाँच तो की ही नहीं थी। अत: यह कह सकते हैं कि ऐसा धोखा जिससे धोखा न हो, कपट नहीं कहलाता।

7 **मिथ्या कथन पर कार्य करने वाले पक्ष को कुछ हानि अवश्य होनी चाहिए:** यह एक

सर्वमान्य नियम है कि "हानि के बिना कोई कपट नहीं होता तथा बिना क्षति से कोई हानि नहीं होती।" यह हानि या क्षति मुद्रा की हानि के रूप में या किसी ऐसे अन्य रूप में हो सकती है जिसे मुद्रा में मापा जा सकता हो।

4.7.2 क्या मौन रहना कपट है?

अनुबन्ध की विषय-वस्तु के बारे में किसी महत्वपूर्ण तथ्य के सम्बन्ध में किसी पक्षकार के मौन रहने को साधारणतः कपट नहीं कहा जाता। सामान्य नियम यह है कि अनुबन्ध के एक पक्षकार का यह कोई कानूनी दायित्व नहीं है कि वह सत्य को प्रकट करे या जो सूचना उसके पास है उसे प्रकट करे। धारा 17 के स्पष्टीकरण में यह नियम दिया गया जिसके अनुसार "उन तथ्यों के बारे में मौन रहना, जिनसे दूसरे पक्षकार की अनुबन्ध करने की इच्छा प्रभावित होती हो, कपट नहीं है।" उदाहरण के लिए, क नीलाम के द्वारा एक घोड़ा ख को बेचता है, जिसके बारे में क को पता है कि घोड़ा एबदार है। ख घोड़े के एब के बारे में क को कुछ नहीं कहता। यह क की ओर से कपट नहीं है।

परन्तु इस नियम के दो **अपवाद** हैं जबकि मौन को कपट माना जाता है। ये निम्नलिखित है:

1 **जब मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मौन रहने वाले व्यक्ति के लिए बोलना उसका कर्तव्य हो**: निम्नलिखित परिस्थितियों में बोलना उसका कर्तव्य है:

   i) जब एक पक्ष दूसरे पक्ष में पूर्ण विश्वास और भरोसा रखता है, (वैश्वासिक सम्बध) तो दूसरे पक्ष का कर्तव्य है कि वह सत्य को प्रकट करे। उदाहरण के लिए, क नीलामी द्वारा एक घोड़ा ख को बेचता है, ख, क की पुत्री है जो अभी हाल ही में वयस्क हुई है। इस दशा में दोनों पक्षकारों के बीच सम्बन्ध ऐसे हैं कि क का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह घोड़े की खराबी के बारे में ख को बता दे।

   ii) जब एक पक्ष, दूसरे पक्ष के सद्विश्वास पर निर्भर होता है, (पूर्ण सदविश्वास के अनुबन्ध) तो दूसरे पक्ष का कर्तव्य है कि वह सत्य प्रकट करे। उदाहरण के लिए, बीमे के सब अनुबन्धों में बीमा कराने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि विषय-वस्तु के बारे में समस्त महत्वपूर्ण तथ्य बीमा कम्पनी को बता दे। यदि बीमा कराने वाला व्यक्ति महत्वपूर्ण तथ्यों, जैसे लम्बी बीमारी की बात छिपाता है, तो कपट के आधार पर बीमा कम्पनी अनुबन्ध को रद्द कर सकती है। इसी प्रकार पारिवारिक निपटारे, विवाह तथा शेयरों का आबंटन, अचल सम्पत्ति के विक्रय, गारंटी के अनुबन्ध ऐसे हैं जबकि सम्पूर्ण तथ्य प्रकट किए जाने चाहिए।

2 **जब मौन रहना, बोलने के समान हो**: कभी-कभी मौन रहना, बोलने के समान होता है। ऐसी दशा में, उस व्यक्ति का मौन रहना कपट कहलाता है। उदाहरण के लिए क अपना घोड़ा ख को बेच रहा है। घोड़ा देखने में ठीक-ठाक लगता है। फिर भी ख,क से कहता है "यदि आप इस बात से इंकार नहीं करते तो मैं समझ लूंगा कि घोड़ा स्वस्थ है।" क कुछ नहीं कहता। यहां क का मौन बोलने के समान है।

4.7.3 कपट के परिणाम

जब अनुबन्ध के लिए सहमति कपट के द्वारा प्राप्त की जाती है, तो जिस पक्ष की सहमति कपट से प्रभावित हुई है, उस पक्ष की इच्छा पर अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। कपट की स्थिति में पीड़ित पक्ष को प्रायः निम्नलिखित उपचार उपलब्ध हैं.

1 वह अनुबन्ध को समाप्त या रद्द कर सकता है, परन्तु उचित समय के भीतर ही यह कार्यवाही की जानी चाहिए। अनुबन्ध रद्द करने का अधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है:

   i) जब किसी पक्ष की सहमति कपटपूर्ण मौन द्वारा प्राप्त की जाती है और उस पक्ष को सामान्य बुद्धि से सत्य का पता लगाने के साधन उपलब्ध हों,

   ii) जब पक्षकार ने धोखा नहीं खाया हो अर्थात् पक्षकार ने कपट से अनजान हो कर सहमति दी,

   iii) जब कपट की जानकारी होने के बाद भी, वह पक्षकार अनुबन्ध के अन्तर्गत कोई लाभ प्राप्त करता है या किसी अन्य तरह से इसका पुष्टीकरण करता है,

iv जब अनुबन्ध रद्द किए जाने से पहले ही किसी निर्दोष तीसरे पक्ष ने, प्रतिफल के बदले अनुबन्ध की सम्पत्ति में कोई हित लाभ प्राप्त कर लिया हो, अथवा

v) जब पक्षकारों को उनकी पूर्वस्थिति में पहुँचाना सम्भव नहीं रहा हो।

2 जिस पक्ष की सहमति स्वतन्त्र नहीं है, यदि वह चाहे तो अनुबन्ध को स्वीकार कर सकता है तथा इसके निष्पादन के लिए आग्रह कर सकता है। धारा 19 के दूसरे पैराग्राफ में प्रावधान है कि जिस पक्ष की सहमति कपट से प्रभावित हुई है, यदि वह उचित समझे, तो वह अनुबन्ध के निष्पादन के लिए आग्रह कर सकता है और यह भी कि उसे उस स्थिति में लाया जाए जिसमें कि वह वर्णन के सत्य होने की स्थिति में रहा होता। उदाहरण के लिए, क कपटपूर्ण ढंग से ख को सूचित करता है कि उसकी सम्पदा भारमुक्त है। इस कथन को सत्य मानकर, ख सम्पदा खरीद लेता है। बाद में पता चलता है कि सम्पदा बंधक रखी हुई थी। इस स्थिति में ख या तो अनुबन्ध को रद्द कर सकता है या क को अनुबन्ध को निष्पादन करने और बंधक के ऋण का भुगतान करने के लिए बाध्य कर सकता है।

3 पीड़ित पक्ष हर्जाने के लिए दावा भी कर सकता है। क्योंकि कपट एक सिविल दोष है, अतः मुआवज़े की मांग की जा सकती है। उदाहरण के लिए, घोड़े के पागल होने के कारण एक पक्ष को चोट लगती है। पूछताछ करने पर भी घोड़े के पागलपन के बारे में नहीं बताया गया था। दूसरा पक्ष उचित हर्ज़ाना माँग सकता है।

4.8 मिथ्यावर्णन (Misrepresentation)

4.8.1 मिथ्यावर्णन क्या है?

वर्णन से आशय ऐसे तथ्य के कथन से है जो एक पक्ष द्वारा अनुबन्ध करने से पहले या अनुबन्ध करते समय, विषय-वस्तु से सम्बन्धित किसी महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में, दूसरे पक्ष की सहमति प्राप्त करने के इरादे से किए जाते हैं। जब कोई असत्य "वर्णन" निर्दोष भाव से या जानबूझ कर किया जाता है तो इसे "मिथ्यावर्णन" कहते हैं। यह तो आपको मालूम ही है कि जब कोई पक्ष, दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे से जानबूझकर असत्य वर्णन करता है, तो इसे कपट कहते हैं। परन्तु जब निर्दोष भाव से अनजाने में असत्य वर्णन किया जाता है अर्थात् जब दूसरे पक्ष को धोखा देने का इरादा नहीं हो, तो इसे "मिथ्यावर्णन" कहते हैं। ऐसी स्थिति में, असत्य वर्णन करने वाला पक्ष वास्तव में ईमानदारी से उसे सत्य मानता है। उदाहरण के लिए, क अपनी कार ख को बेचते समय कहता है कि उसकी कार एक लिटर पैट्रोल में 18 किलोमीटर चलती है। क को भी स्वयं यही विश्वास था। बाद में ख को पता चलता है कि कार एक लिटर में केवल 10 किलोमीटर ही चलती है। यहाँ पर क ने मिथ्यावर्णन किया है।

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 18 में मिथ्यावर्णन के कार्यों को निम्नलिखित तीन वर्गों में बांटा गया है:

1 **निश्चयात्मक कथन** (Positive assertion) : जब कोई पक्ष महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में निश्चयात्मक कथन करता है, जो यद्यपि असत्य हैं किन्तु कथन करने वाला उसके सत्य होने का विश्वास करता है, तो ऐसे कथन "मिथ्यावर्णन" कहलाते हैं। उदाहरण के लिए, क अपना खेत ख को बेचते समय कहता है कि उसके खेत में 100 क्विंटल चावल पैदा होता है। क को अपने कथन की सत्यता का विश्वास था। बाद में पता चलता है कि उसके खेत में केवल 80 क्विंटल चावल पैदा होता है। यहां पर क ने मिथ्यावर्णन किया है।

2 **कर्तव्य भंग** (Breach of duty) : धारा 18 (2) के अनुसार, जब धोखा देने के इरादे के बिना, एक पक्ष कोई कर्तव्य भंग करता है जिससे उसे स्वयं या उसके अधीन पक्ष को लाभ पहुँचता है तथा दूसरे पक्ष या उसके अधीन दावा करने वाले व्यक्ति का अहित होता है, तो ऐसे कर्तव्य भंग को मिथ्यावर्णन कहते हैं। ऐसी स्थिति में वास्तव में धोखा देने का कोई इरादा नहीं होता परन्तु कथन करने वाले व्यक्ति से ऐसा कर्तव्य भंग हो जाता है जिसका दूसरे पक्ष के प्रति पालन करने के लिए वह बाध्य था। जब कुछ तथ्यों को प्रकट करना किसी पक्ष का कर्तव्य हो और वह इस कर्तव्य का पालन नहीं करता, तो इस प्रकार से तथ्यों को प्रकट न करना मिथ्यावर्णन कहलाता है। उदाहरण के लिए, जीवन बीमा पालिसी लेते समय बीमा कराने वाला

व्यक्ति यह नहीं प्रकट करता कि उसे पहले गंभीर बीमारियाँ हुई थीं। इस तथ्य को चाहे कितने ही निर्दोष भाव से प्रकट न किया गया हो, बीमा कम्पनी को अधिकार है कि वह मिथ्यावर्णन के आधार पर अनुबन्ध रद्द कर सकती है। इस प्रकार का कर्तव्य बैंकर एवं ग्राहक, मकान मालिक एवं किरायेदार तथा समस्तपूर्ण सद्विश्वास के अनुबन्धों में माना जाता है। ऐसे मामलों को "रचनात्मक कपट" भी कह सकते हैं।

3 **करार की विषय वस्तु के बारे में गलती करा देना**: अनुबन्ध की विषय-वस्तु के बारे में सम्बन्धित पक्षकारों को अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए। यदि एक पक्ष, दूसरे पक्ष को, चाहे निष्कपट भाव से, अनुबन्ध की विषय-वस्तु के गुण या प्रकृति के बारे में गलती करने के लिए प्रेरित करता है, तो इसे मिथ्यावर्णन समझा जाता है। अधिनियम की धारा 18 (3) में बताया गया है कि जब एक पक्ष, चाहे कितने निष्कपट भाव से क्यों न हो, दूसरे पक्षकार को अनुबन्ध की विषय-वस्तु के सारतत्व के बारे में गलती कराता है, तो यह मिथ्यावर्णन होता है। उदाहरण में ख ने क से एक जहाज़ भाड़े पर लिया, चार्टर पार्टी में उसे यह बताया गया कि जहाज़ की भार वहन क्षमता 2,800 टन से अधिक नहीं है। बाद में पता चला कि यह रजिस्टर्ड क्षमता 3045 टन है। चार्टर पार्टी अनुबन्ध के अन्तर्गत ख ने जहाज़ को भाड़े पर लेने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि जहाज़ की भार वहन क्षमता के बारे में गलत बयानी के कारण वह अनुबन्ध को रद्द कर सकता है (दि ओशियानिक स्टीम नेवीगेशन कम्पनी बनाम सुन्दरदास धर्मसी)।

4.8.2 मिथ्यावर्णन के अनिवार्य तत्व

1 वर्णन निर्दोष भाव से उसकी सत्यता में पूर्ण विश्वास करते हुए तथा दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे के बिना किया जाना चाहिए।

2 मिथ्यावर्णन अनुबन्ध के महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में होना चाहिए। केवल राय प्रकट करने को तथ्य सम्बन्धी कथन नहीं कह सकते।

3 वर्णन असत्य होना चाहिए, परन्तु वर्णन करने वाले पक्ष को उसकी सत्यता में पूरा विश्वास होना चाहिए।

4 दूसरे पक्ष को अनुबन्ध करने के लिए प्रेरित करने के इरादे से मिथ्यावर्णन किया जाना चाहिए तथा दूसरे पक्ष ने वर्णन के आधार पर कार्यवाही की हो। यदि कोई पक्ष साधारण होशियारी से सत्यता का पता कर सकता है तो वह मिथ्यावर्णन के आधार पर शिकायत नहीं कर सकता।

5 मिथ्यावर्णन अनुबन्ध के एक पक्षकार द्वारा, दूसरे पक्ष के समक्ष किया जाना चाहिए।

यदि जिस पक्ष को बहकाया गया है उसके नाम मिथ्यावर्णन नहीं है, तो इसे मिथ्यावर्णन नहीं कहते। **पीक बनाम गरने** के विवाद में एक कम्पनी के विवरण-पत्र में असत्य वर्णन किया गया। क ने प्रविवरण के आधार पर, एक आबंटिती ख से कुछ शेयर खरीदे। क मिथ्यावर्णन के आधार पर अनुबन्ध रद्द करना चाहता था। निर्णय दिया गया कि अनुबन्ध रद्द नहीं करा सकता क्योंकि कम्पनी का प्रविवरण ख के नाम था न कि क के नाम।

4.8.3 मिथ्यावर्णन का प्रभाव

अनुबन्ध अधिनियम की धारा 19 में प्रावधान है कि जब किसी पक्ष की सहमति मिथ्यावर्णन से प्रभावित होती है, तो जिस पक्ष की सहमति इस प्रकार प्राप्त की गयी है उस पक्ष की इच्छा पर अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। इस प्रकार पीड़ित पक्ष को निम्नलिखित दो अधिकार प्राप्त हैं:

1 वह अनुबन्ध को रद्द कर सकता है। यह अधिकार केवल ऐसी परिस्थितियों में ही प्राप्त होता है जब वह साधारण परिश्रम से सत्य का पता लगाने की स्थिति में नहीं हो। उदाहरण के लिए क मिथ्यावर्णन करके ख को गलत विश्वास करने के लिए प्रेरित करता है कि उसके कारखाने में प्रतिवर्ष 500 क्विंटल नील का उत्पादन होता है। फैक्ट्री के रिकार्डों की जाँच करता है जिनसे यह पता चलता है कि केवल 400 क्विंटल नील का ही उत्पादन हुआ है। इसके बाद ख कारखाने को खरीदने का निर्णय करता है। इस स्थिति में ख, मिथ्यावर्णन के आधार पर अनुबन्ध को रद्द नहीं कर सकता।

2 यदि पीड़ित पक्षकार उचित समझे तो वह अनुबन्ध को स्वीकार कर इसके निष्पादन के लिए आग्रह कर सकता है। वह दूसरे पक्ष को बाध्य कर सकता है कि उसे उस स्थिति में रखा जाए जिसमें कि वह वर्णन के सत्य होने पर रहा होता।

[अन]ुबन्ध को रद्द करने के अधिकार की समाप्ति: आपने पढ़ा कि जिस पक्ष की सहमति [मि]थ्यावर्णन से प्रभावित हुई है, वह अनुबन्ध को समाप्त या रद्द कर सकता है। परन्तु निम्नलिखित [परि]स्थितियों में यह अधिकार समाप्त हो जाता है:

[i)] यदि वह साधारण परिश्रम से सत्य का पता कर सकता।

[ii)] जब उसकी सहमति मिथ्यावर्णन से प्रेरित न हुई हो।

[iii]) मिथ्यावर्णन की जानकारी हो जाने के बाद यदि वह स्पष्ट रूप से पुष्टी कर देता है या वह कोई ऐसा आचरण करता है जिससे पता चले कि उसने संविदा को स्वीकार कर लिया है।

[iv]) यदि अनुबन्ध को रद्द किए जाने से पहले, कोई तीसरा पक्ष मूल्यवान प्रतिफल के बदले सद्विश्वास से विषय-वस्तु में कोई हित प्राप्त कर लेता है।

[v)] यदि पक्षकारों को अनुबन्ध से पहले की स्थिति में न रखा जा सकता हो।

[vi]) यदि पीड़ित पक्ष संविदा को समाप्त करना चाहता है तो उसे अपने इस विकल्प का उपयोग इस [ज्ञा]न के होने के बाद उपयुक्त समय के अन्दर ही कर देना चाहिए।

[vii].)अन्यथा पीड़ित पक्ष संविदा को समाप्त करने के अपने अधिकार को खो देता है।

9 कपट तथा मिथ्यावर्णन में अन्तर

[कप]ट तथा मिथ्यावर्णन में अनेक बातें एक समान हैं, जैसे कि दोनों ही स्थितियों में एक पक्ष के द्वारा [अस]त्य कथन किया जाता है। इसी प्रकार, दोनों ही दशाओं में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। परन्तु [फि]र भी दोनों में पर्याप्त अन्तर है। संक्षेप में ये निम्नलिखित हैं।

[क]पट	मिथ्यावर्णन
[1)] असत्य वर्णन जानबूझकर किया जाता है।	1) असत्य वर्णन निर्दोष भाव से किया जाता है।
[2)] असत्य वर्णन करने वाला व्यक्ति स्वयं इसे सत्य नहीं समझता।	2) असत्य वर्णन करने वाला व्यक्ति इसे सत्य मानता है।
[3)] इसमें धोखा देने का इरादा होता है।	3) इसमें धोखा देने का कोई इरादा नहीं होता।
[4)] अनुबन्ध को रद्द करने के अतिरिक्त पीड़ित पक्ष हर्जाने की माँग कर सकता है।	4) पीड़ित पक्ष केवल अनुबन्ध को रद्द कर सकता है लेकिन हर्जाना नहीं माँग सकता।
[5)] उन परिस्थितियों को छोड़कर जब मौन कपट होता है, चाहे साधारण प्रयास से सत्यता का पता चल सकता था फिर भी अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है।	5) यदि पीड़ित पक्ष साधारण परिश्रम से सत्यता का पता कर सकता था, तब वह अनुबन्ध को रद्द नहीं कर सकता।

[बोध] प्रश्न [3]

[1)] "कपट" की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

....

[2)] **"मिथ्यावर्णन" क्या है?**

....

....

3 कपट के क्या परिणाम होते हैं?

4 बताइए कि निम्नलिखित सही हैं या गलत।

i) जब कोई व्यक्ति निश्चयात्मक ढंग से किसी तथ्य के सत्य होने के बारे में कहता है, जबकि ऐसा कहने के लिए उसके पास पर्याप्त सूचना नहीं थी, यद्यपि वह उसे सत्य मानता है, यह मिथ्यावर्णन है।

ii) कपट से प्रेरित अनुबन्ध दोनों में से किसी भी पक्ष की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है।

iii) धोखा देने का प्रयास मात्र ही कपट है।

iv) ऐसे तथ्यों के बारे में मौन, जिससे दूसरे व्यक्ति की अनुबन्ध करने की इच्छा प्रभावित होती है, कपट नहीं है।

v) नुकसान के बिना, कपट नहीं होता।

vi) कपट की दशा में यदि पीड़ित पक्ष के पास साधारण परिश्रम से सत्य का पता करने के साधन उपलब्ध थे, तो उसका अनुबन्ध रद्द करने का अधिकार समाप्त हो जाता है।

4.10 गलती (Mistake)

जैसे कि ऊपर कहा गया है यदि सहमति बल प्रयोग, अनुचित प्रभाव, कपट, मिथ्यावर्णन या गलती से प्राप्त की जाती है, तो सहमति को स्वतन्त्र नहीं माना जाता। आपने बल प्रयोग, अनुचित प्रभाव, कपट तथा मिथ्यावर्णन के बारे में ऊपर पढ़ा है। अब हम "गलती" के बारे में चर्चा करेंगे।

गलती का अर्थ है, किसी बात के बारे में भ्रामक विश्वास करना। जब कभी कोई करार गलती से किया जाता है तब कोई सहमति नहीं होती है और वह करार वैध नहीं होता है। गलती को दो भागों में बाँटा जा सकता है: (i) कानून की गलती तथा (ii) तथ्य की गलती। कानून की गलती को पुन: दो वर्गों में बाँटा जा सकता है (क) भारतीय कानून की गलती, तथा (ख) विदेशी कानून की गलती। इसी प्रकार तथ्य की गलती (क) द्विपक्षीय गलती या (ख) एक पक्षीय गलती हो सकती है। गलतियों के वर्गीकरण के लिए चित्र 4.2 देखिए।

चित्र 4.2

गलतियों के प्रकार

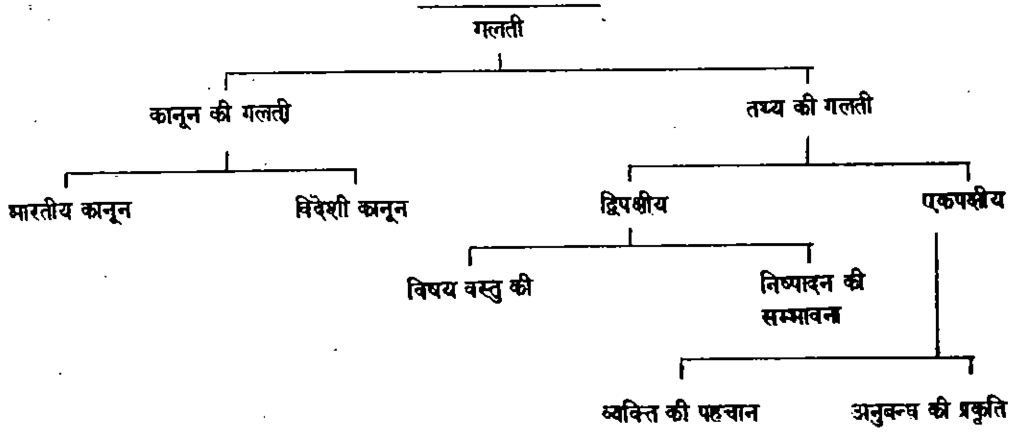

.10.1 कानून की गलती

सा कि पहले बनाया जा चुका है कानून की गलती (क) भारतीय कानून सम्बन्धी ा (ख) विदेशी कानून के सम्बन्ध में हो सकती है।

) **भारतीय कानून की गलती**: प्रत्येक व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि उसे उन सभी कानूनों का ज्ञान होगा जो उस पर लागू होते हैं अत: यह एक सामान्य नियम है कि अपने देश के कानून के सम्बन्ध में गलती करना कोई बहाना नहीं है। धारा 21 में बताया गया है कि कोई अनुबन्ध इस कारण व्यर्थनीय नहीं होगा क्योंकि वह भारत में प्रचलित किसी कानून सम्बन्धी गलती के कारण किया गया है। अत: भारतीय कानून सम्बन्धी गलती का अनुबन्ध की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, क तथा ख इस भ्रामक विश्वास के आधार पर अनुबन्ध करते हैं कि एक विशिष्ट ऋण भारतीय परिसीमा अधिनियम के अनुसार कालबाधित है। यह अनुबन्ध वैध है।

) **विदेशी कानून की गलती**: प्रत्येक व्यक्ति से यह तो अपेक्षा की जाती है कि उसे अपने देश के कानूनों की जानकारी हो परन्तु उससे यह अपेक्षा नहीं कि जा सकती कि उसे अन्य देशों के कानूनों की भी जानकारी हो। अत: यह नियम है कि "कानून की अज्ञानता का बहाना कोई बहाना नहीं है" (Ignorance of law is no excuse) विदेशी कानूनों पर लागू नहीं किया जा सकता। विदेशी कानून के सम्बन्ध में किसी गलती को तथ्य सम्बन्धी गलती के समान समझा जाता है। धारा 21 में बताया गया है कि ऐसे कानून की गलती जो भारत में प्रचलित नहीं है, उसका ठीक वही प्रभाव होता है जो तथ्य की गलती का होता है।

.10.2 तथ्य की गलती

ह आप पढ़ ही चुके हैं कि तथ्य की गलती को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है, (क) द्विपक्षीय लती तथा (ख) एकपक्षीय गलती। आइए अब हम इन गलतियों की प्रकृति एवं प्रभाव के बारे में ध्ययन करें।

पक्षीय गलती (Bilateral Mistake)

व करार के दोनों पक्ष, करार के किसी अनिवार्य तथ्य के बारे में गलती करते हैं, तो इस प्रकार की लती को द्विपक्षीय तथ्य की गलती कहते हैं। ऐसी स्थिति में कोई करार होता ही नहीं है क्योंकि हमति का पूर्ण अभाव है। अधिनियम की धारा 20 में बताया गया है कि जब दोनों पक्ष करार के सी महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में गलती करते हैं, तो करार व्यर्थ होता है। इस प्रकार इस धारा के न्तर्गत किसी करार को व्यर्थ घोषित करने के लिए निम्नलिखित तीन शर्तों को पूरा करना होगा:

गलती दोनों पक्षकारों से होनी चाहिए: गलती परस्पर होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, क के पास दो गाड़ियां हैं, एक फिएट तथा दूसरी मारुति। वह अपनी फिएट कार ख को बेचने का प्रस्ताव करता है। ख को इस तथ्य की जानकारी नहीं है कि क के पास दो गाड़ियां हैं, वह मारुति कार के लिए प्रस्ताव को समझ कर उसे खरीदने की स्वीकृति दे देता है। इस स्थिति में सहमति है ही नहीं दोनों पक्ष अपनी-अपनी समझ के अनुसार करार का अर्थ लगाते हैं, अत: इस प्रकार होने वाले करार को व्यर्थ माना जाएगा।

गलती तथ्य की हो: धारा 20 के स्पष्टीकरण में बताया गया है कि करार की विषय-वस्तु के मूल्य के बारे में त्रुटिपूर्ण राय को तथ्य सम्बन्धी गलती नहीं माना जाएगा। उदाहरण के लिए, क किसी चित्र को 10,000 रुपये का समझकर खरीद लेता है जबकि वह वास्तव में 2,000 रुपये का ही था। यह अनुबन्ध वैध रहेगा। चित्र के वास्तविक मूल्य की अज्ञानता के लिए क स्वयं दोषी है।

गलती महत्त्वपूर्ण तथ्य के बारे में होनी चाहिए: करार सम्बन्धी किसी महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में गलती की जानी चाहिए। अन्य शब्दों में, केवल ऐसी गलतियाँ जो करार की जड़ों तक जाती हैं, करार का व्यर्थ कर देती हैं। उदाहरण के लिए, क, ख से एक विशिष्ट घोड़ा खरीदने का करार करता है। बाद में पता चलता है कि सौदा किए जाने के समय घोड़ा मर चुका था तथा दोनों पक्षकारों में से किसी को भी इस तथ्य की जानकारी नहीं थी। यहाँ पर गलती अनुबन्ध के लिए महत्वपूर्ण ऐसी चीज (घोड़ा) के सम्बन्ध में है, अत: करार व्यर्थ है।

क्षीय गलती विषय-वस्तु सम्बन्धी गलती, या निष्पादन की सम्भावना के सम्बन्ध में गलती हो ती है।

क) **अनुबन्ध की विषय-वस्तु** (Subject matter) **सम्बन्धी गलती**: जब करार के दोनों पक्षकार अनुबन्ध की विषय-वस्तु के सम्बन्ध में गलती करते हैं, तो करार व्यर्थ होता है। विषय-वस्तु सम्बन्धी गलती के निम्नलिखित रूप हो सकते हैं:

i) **विषय-वस्तु के अस्तित्व से संबंधित गलती**: जब दोनों पक्ष विषय-वस्तु के अस्तित्व के सम्बन्ध में गलती पर हों, तो करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, क एक विशिष्ट जहाज़ में लदे माल को बेचने का करार करता है। दोनों ही पक्षों का अनुमान था कि माल इंग्लैंड से बम्बई आ रहा है। बाद में पता चला कि माल लाने वाला जहाज़, सौदा करने के दिन से पहले ही नष्ट हो चुका था तथा माल भी नष्ट हो चुका था। परन्तु दोनों में से किसी भी पक्ष को इन तथ्यों की जानकारी नहीं थी। यह करार व्यर्थ है।

ii) **विषय-वस्तु की पहचान से सम्बन्धित गलती**: जब अनुबन्ध करने वाले पक्षकार भिन्न-भिन्न चीजों को विषय-वस्तु समझते हैं अर्थात् एक पक्ष किसी के बारे में सोचता है और दूसरा पक्ष किसी और बात के बारे में। ऐसी स्थिति में पक्षकारों में कोई मतैक्य नहीं होता और करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, क अपनी पुरानी दिल्ली वाला मकान ख को बेचने का प्रस्ताव करता है। क का एक और मकान दक्षिणी दिल्ली में है। ख यह सोचता है कि वह दक्षिणी दिल्ली वाला मकान खरीद रहा है और वह क के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। यहाँ पर दोनों पक्ष एकमत नहीं हैं अत: क और ख के बीच कोई करार नहीं हुआ।

iii) **विषय-वस्तु के स्वामित्व संबंधी गलती**: कभी-कभी विक्रेता ऐसी सम्पत्ति क्रेता को बेचना चाहता है जिसका क्रेता पहले से ही स्वामी है, परन्तु संबंधित दोनों पक्षकारों को ही इस तथ्य की जानकारी नहीं है। ऐसी स्थिति में यह करार व्यर्थ है क्योंकि विषय-वस्तु के स्वामित्व के सम्बन्ध में दोनों ने गलती की है **(कपूर बनाम फिल्स)**

iv) **विषय-वस्तु की मात्रा के सम्बन्ध में गलती**: जब विक्रेता एवं क्रेता, दोनों ही विषय-वस्तु की मात्रा के सम्बन्ध में गलती करते हैं तो करार व्यर्थ होता है। **हैंकिल बनाम पोप** के विवाद में क ने ख से राइफलों का मूल्य पूछा और यह सुझाव दिया कि वह 50 राइफलें खरीद सकता है। निवेदित भाव प्राप्त करने पर क ने ख को तार दिया कि "तीन राइफलें भेज दें।" परन्तु तार विभाग की गलती के कारण ख के पास संदेश पहुँचा "राइफलें भेज दें"। ख ने 50 राइफलें भेज दीं। क ने तीन राइफलें रखकर शेष 47 राइफलें ख को लौटा दीं। न्यायालय ने निर्णय दिया कि यहाँ कोई अनुबन्ध नहीं हुआ। परन्तु क उन तीन राइफलों का मूल्य चुकाने के लिए बाध्य है, क्योंकि यह गर्भित अनुबन्ध है।

v) **विषय-वस्तु के गुण सम्बन्धी गलती**: यदि विषय-वस्तु दोनों पक्षकारों द्वारा सोची गयी वस्तु सोची गयी वस्तु से एकदम भिन्न है, तो करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, क एक विशेष घोड़ा ख को बेचने का करार करता है। क और ख दोनों का ही यह विश्वास था कि वह घुड़दौड़ का घोड़ा है। परन्तु वह तांगे में जोता जाने वाला घोड़ा निकलता है। यह करार व्यर्थ है।

vi) **विषय-वस्तु के मूल्य के सम्बन्ध में गलती**: जब दोनों ही पक्ष विषय-वस्तु के मूल्य के बारे में परस्पर गलती पर हों, तो करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, वस्तुओं का एक विक्रेता अपने पत्र में वस्तुओं का मूल्य 1,250 रुपये लिख देता है जबकि वास्तव में वह 2,250 रुपये लिखना चाहता था, यह करार व्यर्थ होगा। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे (जैसा कि आप पहले भी पढ़ चुके हैं) कि करार की विषय-वस्तु के मूल्य के बारे में त्रुटिपूर्ण राय होने पर इसे तथ्य की गलती नहीं माना जाता।

ख) **निष्पादन की सम्भावना** (Possibility of performance) **के सम्बन्ध में गलती**: जब करार करने वाले दोनों पक्ष यह समझते हैं कि इसका निष्पादन सम्भव हैं जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है, तो असम्भवता के आधार पर करार को व्यर्थ माना जाता है। यह असंभवता भौतिक या कानूनी हो सकती है।

i) **भौतिक असंभवता**: एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक के जलूस को देखने के लिए कमरे को किराए पर लेने के अनुबन्ध को व्यर्थ माना गया क्योंकि जलूस का निकलना पहले ही रद्द हो चुका था परन्तु इसकी जानकारी दोनों में से किसी भी पक्ष को नहीं थी। ऐसी स्थिति में जलूस देखने का कोई प्रश्न ही नहीं है **(क्रेल बनाम हैनरी)**।

ii) **कानूनी असंभवता**: यदि कोई ऐसा कार्य करने का करार किया जाता है जो कानूनन नहीं किया जा सकता, तो करार व्यर्थ होता है।

एकपक्षीय गलती (Unilateral Mistake)

"एकपक्षीय गलती" का अर्थ है कि जब करार का केवल एक ही पक्ष गलती पर हो। सामान्यत:, एकपक्षीय गलती की दशा में करार व्यर्थ नहीं होता है। धारा 22 के अनुसार कोई अनुबन्ध केवल इस कारण व्यर्थनीय नहीं होता है कि उसका एक पक्षकार तथ्य सम्बन्धी गलती करता है। यदि कोई व्यक्ति अनुबन्ध करने से पहले यह नहीं देखता कि वह क्या कर रहा है तो अपनी इस लापरवाही या असावधानी का परिणाम उसे स्वयं ही भुगतना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, क ने नमूने के द्वारा ख को जई बेची और ख ने यह सोच कर कि जई पुरानी है, उसे खरीद लिया। जई वास्तव में नई थी। निर्णय दिया गया कि ख इस अनुबन्ध से बाध्य है (**स्मिथ बनाम हुग्ज**)।

कुछ परिस्थितियों में एकपक्षीय गलती इतनी मूलभूत हो सकती है कि वह अनुबन्ध की प्रकृति को प्रभावित करती है, ऐसी दशा में होने वाला करार व्यर्थ होता है। निम्नलिखित परिस्थितियों में, यद्यपि गलती एकपक्षीय है, परन्तु करार व्यर्थ होता है:

1 **अनुबन्ध करने वाले पक्षकार की पहचान सम्बन्धी गलती**: व्यक्ति की पहचान सम्बन्धी गलती होने पर अनुबन्ध व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, जब क केवल ख के साथ अनुबन्ध करना चाहता है, परन्तु ग को समझकर, ग के साथ अनुबन्ध कर बैठता है, तो यह करार व्यर्थ होता है। इस बारे में यह ध्यान रहे कि अनुबन्ध करने वाले पक्षकार की पहचान सम्बन्धी गलती किए जाने पर करार केवल तभी व्यर्थ होगा यदि (क) करार के लिए पक्षकार की पहचान महत्वपूर्ण है, तथा (ख) दूसरा पक्ष यह जानता है कि उसके साथ पहले पक्ष का करार करने का इरादा नहीं है। निम्नलिखित वादों से यह तथ्य स्पष्ट किया जा सकता है।

कण्डी बनाम लिण्डसे के वाद में, एक व्यक्ति ब्लेंकर्न ने यह जानते हुए कि लिण्डसे एण्ड कम्पनी की एक प्रतिष्ठित ग्राहक ब्लेंकर्न एण्ड क. है, ब्लेंकर्न के हस्ताक्षर की नकल करके एक आदेश लिण्डेस एण्ड कम्पनी को भेजा। यह माल एक निर्दोष, ग्राहक कण्डी को बेच दिया गया। लिण्डसे एण्ड क. ने कण्डी पर माल की वापसी के लिए मुकदमा दायर कर दिया। निर्णय दिया गया कि लिण्डसे कभी भी ब्लेंकर्न नामक व्यक्ति के साथ अनुबन्ध नहीं करना चाहता था, उन दोनों के बीच कोई अनुबन्ध नहीं माना गया और निर्दोष क्रेता (कण्डी) को माल पर स्वामित्व सम्बन्वी कोई अधिकार नहीं मिला। अत: कण्डी को माल वापस करना पड़ेगा या मूल्य चुकाना होगा।

लेक बनाम सिम्मनस के वाद में उस महिला ने मिथ्यावर्णन करके स्वयं को एक प्रतिष्ठित लखपति की पत्नी बताकर, अपने पति को दिखाने के बहाने एक जौहरी की दुकान से दो हीरे के हार ले लिए। उस महिला ने एक दलाल के पास हार गिरवी रख दिए। दलाल ने सदविश्वास में हार गिरवी रखकर महिला को 10,000 रुपये दे दिए। निर्णय दिया गया कि महिला और जौहरी में कोई अनुबन्ध नहीं हुआ तथा एक निर्दोष ग्राहक या गिरवीग्राही को श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त नहीं हुए, अत: दलाल को वह हार जौहरी को लौटाने पड़ेंगे। यहाँ पर जौहरी उस महिला के साथ अनुबन्ध नहीं करना चाहता था बल्कि उस प्रतिष्ठित लखपति की पत्नी से अनुबन्ध करना चाहता है।

सईद बनाम बट के वाद में, S को यह मालूम था कि भूतकाल में उसके द्वारा की गई नाटकों की कटु आलोचना के कारण, उसे थियेटर में नाटक देखने के लिए प्रवेश नहीं करने दिया जाएगा। थियेटर के प्रबन्ध संचालन ने अपने कर्मचारियों को हिदायत दी कि S को टिकट नहीं बेचा जाए। परन्तु S ने अपने एक मित्र से टिकट खरीदवा लिया। जब S को थियेटर में घुसने नहीं दिया गया तो उसने अनुबन्ध भंग के लिए हर्जाने के लिए दावा दायर कर दिया। निर्णय दिया गया कि S के साथ कोई अनुबन्ध नहीं हुआ था, क्योंकि थियेटर कम्पनी S के साथ अनुबन्ध करना ही नहीं चाहती थी।

2 **अनुबन्ध की प्रकृति के सम्बन्ध में गलती**: जब कोई एक पक्ष अपनी गलती के बिना अनुबन्ध की प्रकृति के सम्बन्ध में गलती करता है, तो करार व्यर्थ होता है। इस प्रकार जब किसी व्यक्ति को किसी लिखित दस्तावेज-हस्ताक्षर करने के लिए प्रेरित किया जाए और जिस दस्तावेज पर वह हस्ताक्षर करता है वह उस दस्तावेज से भिन्न है जो वह सोचता था, तो यह करार व्यर्थ होता है।

फास्टर बनाम मैकिनॉन के वाद में एक वृद्ध अनपढ़ व्यक्ति को एक विनिमय बिल पर

हस्ताक्षर करने के लिए यह कह कर प्रेरित किया गया कि वह मात्र गारंटी का दस्तावेज है। निर्णय दिया गया कि वह विनिमय बिल के लिए उत्तरदायी नहीं है क्योंकि विनिमय बिल पर हस्ताक्षर करने का उसका कभी भी इरादा नहीं था।

4.10.3 गलती का प्रभाव

गलती के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करते समय, प्रत्येक प्रकार की गलती के प्रभाव को भी स्पष्ट कर दिया गया है। अब हम संक्षेप में कह सकते हैं कि :

1 जब दोनों पक्षकार, करार से सम्बन्धित किसी महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में गलती पर हों, तो करार व्यर्थ होता है।

2 एकपक्षीय गलती की दशा में, अधिकांश परिस्थितियों में अनुबन्ध व्यर्थ नहीं होता। परन्तु जब एकपक्षीय गलती पक्षकारों की सहमति को ही परास्त कर देती है, तो करार व्यर्थ माना जाता है।

3 इस प्रकार के किसी करार के अन्तर्गत यदि किसी व्यक्ति ने कोई लाभ प्राप्त किया है तो उसे वह लाभ लौटाना पड़ेगा या जिस पक्ष से लाभ प्राप्त किया है उसे उसका उचित मुआवजा देना पड़ेगा।

4 यदि किसी व्यक्ति को कोई वस्तु या धन गलती से दिया गया है तो उसे वह वापस लौटाना चाहिए।

बोध प्रश्न ग

1 गलती क्या होती है?

....

....

....

....

2 तथ्य की गलती से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

....

3 एकपक्षीय गलती क्या होती है?

....

....

....

....

4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) जब करार के दोनों पक्ष तथ्य सम्बन्धी गलती करते हैं तो करार व्यर्थनीय होता है। ....

ii) यदि दोनों पक्षों का यह विश्वास है कि अनुबन्ध की विषय-वस्तु अस्तित्व में है, जबकि वास्तव में वह अस्तित्व में नहीं होती, अनुबन्ध व्यर्थ होता है। ....

iii) ऐसा करार जिसका पालन न किया जा सके, व्यर्थ होता है। ....

iv) कानून की अज्ञानता कोई बहाना नहीं है। ....

v) अनुबन्ध करने वाले व्यक्ति की पहचान सम्बन्धी गलती होने पर अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। ....

vi) यदि अनुबन्ध का एक पक्षकार तथ्य की गलती पर हो तो अनुबन्ध व्यर्थ होता है। ....

4.11 सारांश

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी एक बात पर समान विचार रखते हैं, तो उनमें सहमति हुई मानी जाती है। जब सहमति निम्न से प्रभावित नहीं हो तो यह स्वतन्त्र कहलाती है: (1) बल प्रयोग, (2) अनुचित प्रभाव, (3) कपट, (4) मिथ्यावर्णन, या (5) गलती।

बल प्रयोग: भारतीय दण्ड संहिता द्वारा निषिद्ध किसी कार्य को करना या करने की धमकी देना अथवा उसके हितों के प्रतिकूल किसी सम्पत्ति को अपने पास कानून विरुद्ध ढंग से रोक लेना या रोकने की धमकी देना, बल प्रयोग कहलाता है। इस स्थिति में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है।

अनुचित प्रभाव: जब पक्षकारों के मध्य सम्बन्ध ऐसे हों कि एक पक्ष दूसरे पक्ष की इच्छा शक्ति पर अधिशासित होने की स्थिति में हो और वह अपनी इस स्थिति का प्रयोग करके दूसरे से कोई अनुचित लाभ प्राप्त करता है, तो सहमति अनुचित प्रभाव से प्राप्त की गई मानी जाती है ऐसी दशा में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है।

एक पक्ष, दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में तब माना जाता है (क) जब वह दूसरे पर वास्तविक या प्रत्यक्ष अधिकार रखता है या दूसरे के साथ उसका वैश्वासिक सम्बन्ध हो, अथवा (ख) जब वह किसी ऐसे व्यक्ति से अनुबन्ध करता है जिसकी मानसिक क्षमता आयु, बीमारी या मानसिक या शारीरिक संताप के कारण स्थायी या अस्थायी रूप से प्रभावित हुई है।

जब दूसरे पक्ष की इच्छा को अधिशासित करने वाला बलवान पक्ष अनुबन्ध करता है और वह संव्यवहार नृशंस प्रतीत होता है, तो यह सिद्ध करने का भार कि सहमति अनुचित प्रभाव से प्राप्त नहीं की गई है, उस पक्ष पर होता है जो प्रभावशाली स्थिति में होता है।

कपट: दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे से जानबूझकर असत्य वर्णन करने को कपट कहते हैं। कपट के लिए यह आवश्यक है कि (i) असत्य कथन या वर्णन किया जाए, (ii) यह तथ्य सम्बन्धी हो, (iii) असत्यता के बारे में जानते हुए या सत्यता में विश्वास किए बिना या लापरवाही से किया जाए, (iv) यह दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे से किया जाए (v) दूसरे पक्ष ने इस कथन के आधार पर कार्य किया हो, तथा (vi) दूसरे पक्ष को कुछ हानि अवश्य होनी चाहिए। कपट की दशा में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है तथा पीड़ित पक्ष हर्जाने की माँग भी कर सकता है।

मिथ्यावर्णन: दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे के बिना, जब एक पक्ष महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में अनजाने में असत्य वर्णन करता है या महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रकट नहीं करता, तो यह मिथ्यावर्णन कहलाता है। मिथ्यावर्णन की दशा में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है परन्तु हर्जाना नहीं मांगा जा सकता।

गलती: किसी बात के बारे में त्रुटिपूर्ण (भ्रामक) विश्वास को गलती कहते हैं। गलती कानून सम्बन्धी या तथ्य सम्बन्धी हो सकती है।

कानून सम्बन्धी गलती दो प्रकार की हो सकती है (i) अपने देश (भारतीय) के कानून के सम्बन्ध में गलती, तथा (ii) विदेशी कानून के सम्बन्ध में गलती। भारतीय कानून सम्बन्धी गलती अक्षम्य है जबकि विदेशी कानून की गलती को तथ्य की गलती माना जाता है। तथ्य की गलती को भी दो वर्गों में बाँटा जा सकता है: (क) द्विपक्षीय गलती तथा (ख) एकपक्षीय गलती।

द्विपक्षीय गलती विषय-वस्तु के सम्बन्ध में या निष्पादन की सम्भावना के सम्बन्ध में हो सकती है। तथ्य सम्बन्धी विषय-वस्तु के सम्बन्ध में गलती (i) विषय-वस्तु के अस्तित्व, (ii) विषय-वस्तु की पहचान, (iii) विषय-वस्तु का स्वत्वाधिकार, (iv) विषय-वस्तु की मात्रा, (v) विषय-वस्तु का गुण (vi) विषय-वस्तु के मूल्य के बारे में हो सकती है। ऐसी तथ्य की गलती होने पर करार व्यर्थ होता है। एकपक्षीय गलती होने पर, साधारणतया अनुबन्ध व्यर्थ नहीं होता है। परन्तु जब अनुबन्ध करने वाले व्यक्ति की पहचान के सम्बन्ध में गलती होती है या अनुबन्ध की प्रकृति के सम्बन्ध में गलती होती है, तब करार व्यर्थ होता है।

4.12 शब्दावली

पीड़ित पक्ष: करार का वह पक्ष जिसकी सहमति स्वतन्त्र नहीं हो।

द्विपक्षीय गलती: जब अनुबन्ध के दोनों पक्षकार एक ही गलती करते हों।

बल प्रयोग: दूसरे पक्ष को अनुबन्ध के लिए सहमति देने के लिए जब भारतीय दण्ड संहिता में निषिद्ध कोई कार्य किया जाता है या करने की धमकी दी जाती है अथवा दूसरे के हितों के प्रतिकूल उसकी किसी सम्पत्ति को रोका जाता है या रोकने की धमकी दी जाती है।

स्वतन्त्र सहमति: ऐसी सहमति जो किसी दबाव या प्रभाव के बिना दी गई हो।

कपट: दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे से जानबूझकर असत्य वर्णन करना।

मिथ्यावर्णन: दूसरे पक्ष को धोखा देने के इरादे के बिना जब अनजाने में असत्य वर्णन किया जाए।

पर्दानशीन महिला: ऐसी महिला जो अपने देश या अपनी जाति के रिवाज़ों के अनुसार एकदम एकान्त में या पूर्ण परदे में रहती है।

अनुचित प्रभाव: दूसरे पक्ष से अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए, उसकी इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति का प्रयोग।

एकपक्षीय गलती: जब अनुबन्ध का केवल एक पक्षकार की गलती पर हो।

4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 6 (i) सही (ii) गलत (iii) गलत (iv) सही (v) सही (vi) गलत (vii) सही

ख) 4 (i) सही (ii) गलत (iii) गलत (iv) सही (v) सही (vi) गलत

ग) 4 (i) गलत (ii) सही (iii) सही (iv) सही (v) गलत (vi) गलत

4.14 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1 सहमति की परिभाषा कीजिए। सहमति कब स्वतन्त्र होती है?

2 अनुबन्ध की वैधता पर बल प्रयोग का क्या प्रभाव पड़ता है?

3 आत्महत्या करने की धमकी देना, क्या बल प्रयोग है?

4 कोई व्यक्ति दूसरे की इच्छा को अधिशासित करने की स्थिति में कब समझा जाता है?

5 कपट की परिभाषा कीजिए तथा अनुबन्ध की वैधता पर इसके प्रभाव बताइए।

6 "तथ्यों के बारे में मौन रहना कपट नहीं है।" उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

7 अन्तर बताइए:
   i) बल प्रयोग तथा अनुचित प्रभाव
   ii) कपट तथा मिथ्यावर्णन

8 पर्दानशीन महिला के साथ अनुबन्धों की क्या स्थिति होती है?

9 गलती की परिभाषा कीजिए तथा गलती के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कीजिए।

10 अनुबन्ध पर "तथ्य की गलती" के प्रभावों को उदाहरण दे कर समझाइए।

11 अनुचित प्रभाव की स्थिति में सिद्ध करने का भार किस पर होता है? वे परिस्थितियाँ बताइए जब अनुचित प्रभाव की उपधारणा होती है।

12 निम्नलिखित समस्याओं का कारण सहित उत्तर दीजिए।

   i) क, ख को धमकी देता है कि यदि वह अपना स्कूटर 1,000 रुपये में उसे (क) नहीं बेच देता तो ख को गोली मार देगा। स्कूटर की बिक्री के कागजातों पर ख

हस्ताक्षर कर देता है। बाद में ख अनुबन्ध को रद्द करना चाहता है, क्या वह सफल होगा ? यदि हाँ तो क्यों ?
(**संकेत:** बल प्रयोग के आधार पर अनुबन्ध रद्द कर सकता है)।

ii) महेश किसी रोग से पीड़ित है और अत्यंत कष्ट में है। उसका डाक्टर उसका इलाज करने को इस शर्त पर तैयार होता है कि वह (महेश) 20,000 रुपये के प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर दे। रोग मुक्त होने पर महेश प्रतिज्ञा पत्र का आदर करने से इंकार कर देता है। डाक्टर प्रतिज्ञा पत्र की राशि को क्या वसूल कर सकेगा ?
(**संकेत:** डाक्टर ने महेश पर अनुचित प्रभाव का प्रयोग किया। महेश केवल उचित फीस देने के लिए बाध्य है)।

iii) हरि अपना घोड़ा राजेश को बेचता है। हरी को पता है कि घोड़ा अस्वस्थ है। घोड़े की अस्वस्थता के बारे में हरी, राजेश को कुछ नहीं कहता। क्या यह अनुबन्ध वैध है ?
(**संकेत:** हाँ, यह अनुबन्ध वैध है, क्योंकि दोष प्रकट करना विक्रेता का कर्तव्य नहीं है)।

iv) N एक जौहरी की दुकान में जाकर कुछ जवाहरात छाँट लेता है। वह एक विख्यात व्यक्ति G.B के नाम से चैक लिख कर देता है। जौहरी चैक को स्वीकार करके N को जवाहरात ले जाने देता है। उन जवाहरातों को B के पास गिरवी रख देता है, जिसे इस कपट की कोई जानकारी नहीं है। जौहरी क्या B से जवाहरात प्राप्त कर सकता है ?
(**संकेत:** नहीं। जौहरी तीसरे पक्ष से जवाहरात नहीं ले सकता। यह अनुबन्ध करने वाले पक्ष की पहचान सम्बन्धी गलती नहीं है बल्कि उसके विशेष गुणों के बारे में गलती है)।

v) राकेश को एक अस्वस्थ घोड़ा बेचते समय, अविनाश अस्तबल के दरवाजे पर जानवरों के डाक्टर का एक जाली सर्टीफिकेट लगा देता है कि घोड़ा स्वस्थ है। राकेश सरसरी तौर से घोड़े को देखता है लेकिन उस सर्टीफिकेट को नहीं देखता और घोड़ा खरीद लेता है। राकेश कपट के आधार पर अनुबन्ध रद्द करना चाहता है। क्या वह सफल होगा ?
(**संकेत:** नहीं। जौहरी तीसरे पक्ष से जवाहरात नहीं ले सकता। यह अनुबन्ध करने वाले हुई)।

vi) क,ख को एक चित्र बेचते समय कहता है कि यह पिकासो की मूल कलाकृति है। मूल कलाकृति चुरा ली गयी थी और उसके स्थान पर नकल लगा दी गयी थी, लेकिन दोनों ही पक्षकारों को इसकी जानकारी नहीं थी। क्या यह अनुबन्ध वैध है ?
(**संकेत:** विषय-वस्तु के गुण के सम्बन्ध में दोनों पक्षकार गलती पर हैं, अत: करार व्यर्थ है)।

vii) प्रेम, विकास को एक चित्र बेचने का प्रस्ताव करता है और प्रेम को यह मालूम है कि यह एक प्रसिद्ध कलाकृति की नकल मात्र है विकास उस कलाकृति को मौलिक समझकर, ऊँची कीमत पर खरीदने के लिए तैयार हो जाता है। क्या यह अनुबन्ध वैध है ?
(**संकेत:** हाँ, यह अनुबन्ध वैध है। विकास कलाकृति के मूल्य के सम्बन्ध में गलती पर है)।

> **नोट:** इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन.डी. कपूर एवं दिनकर पगारे : **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली: सुल्तान चंद एण्ड सन्स, 1988) अध्याय 1 से 4

आर.के. ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश: **व्यापारिक सन्नियम** (दिल्ली: श्री महावीर बुक डिपो, 1989) अध्याय 1 से 6

आर.पी. माहेश्वरी एवं एस.एन. माहेश्वरी: **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1988) अध्याय 1 - 4

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-2
व्यापारिक सन्नियम

खंड

2

अनुबंध सम्बंधी सामान्य कानून II

इकाई 5

प्रतिफल तथा उद्देश्य की वैधता 5

इकाई 6

व्यर्थ करार तथा सांयोगिक अनुबंध 20

इकाई 7

निष्पादन तथा समाप्ति 35

इकाई 8

अनुबंध-भंग के उपचार तथा अर्ध-अनुबंध 57

खंड 2 सामान्य अनुबन्ध कानून II

खंड 1 में आपने वैध अनुबन्ध के अनिवार्य तत्वों के बारे में पढ़ा तथा प्रस्ताव एवं स्वीकृति, पक्षकारों की क्षमता एवं स्वतंत्र सहमति से सम्बन्धित नियमों का विस्तार से अध्ययन किया। इस खंड में आप प्रतिफल तथा उन परिस्थितियों के बारे में विस्तार से पढ़ेंगे जब करार व्यर्थ होते हैं। इस खंड में अनुबन्ध समाप्त करने के विभिन्न तरीकों, अनुबन्ध भंग होने पर उपलब्ध उपचार तथा सांयोगिक व अर्ध अनुबन्धों को भी सम्मिलित किया गया है।

इकाई 5 में प्रतिफल का अर्थ तथा वैध प्रतिफल से संबंधित नियमों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इसमें "लोक नीति" की संकल्पना की भी व्याख्या की गई है तथा उन करारों का वर्णन किया गया है जो लोक नीति के विरुद्ध हैं।

इकाई 6 में ऐसे करारों का वर्णन किया गया है जिन्हें व्यर्थ घोषित किया गया है। इसमें सांयोगिक अनुबंधों से संबंधित नियमों की भी चर्चा की गई है।

इकाई 7 में अनुबंध के निष्पादन संबंधी नियमों की व्याख्या की गई है तथा अनुबन्ध समाप्त करने के विभिन्न तरीकों का वर्णन किया गया है।

इकाई 8 में अनुबन्ध भंग का अर्थ, भंग के प्रकार तथा पीड़ित पक्ष को उपलब्ध विभिन्न उपचारों का वर्णन किया गया है। इसमें ऐसे संबंधों का भी वर्णन किया गया है जो अनुबंध से मिलते-जुलते (अर्ध-अनुबंध) हैं।

इकाई 5 प्रतिफल तथा उद्देश्य की वैधता

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य
5.1 प्रस्तावना
5.2 प्रतिफल का अर्थ
5.3 वैध प्रतिफल संबंधी कानूनी नियम
5.4 अनुबंध के लिये अजनबी और प्रतिफल के लिये अजनबी
5.5 प्रतिफल की पर्याप्तता
5.6 प्रतिफल के बिना करारों की वैधता
5.7 उद्देश्य और प्रतिफल की वैधता
5.8 लोकनीति के विरुद्ध करार
5.9 सारांश
5.10 शब्दावली
5.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.12 स्वपरख प्रश्न

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- प्रतिफल क्या है, यह बता सकें
- वैध प्रतिफल क्या होता है यह समझा सकें और अनुबंध की वैधता के संबंध में इसका महत्व बता सकें
- यह बता सकें कि प्रतिफल की अपर्याप्तता किस प्रकार एक सौदे की वैधता को प्रभावित नहीं करती
- "प्रतिफल नहीं तो अनुबंध नहीं" नियम के अपवाद बता सकें
- यह बता सकें कि अनुबंध का उद्देश्य या प्रतिफल कब गैर-कानूनी होता है
- उन करारों का वर्णन कर सकें जो लोकनीति के विरुद्ध समझे जाते हैं।

5.1 प्रस्तावना

इकाई 1 में आपने एक वैध अनुबंध के आवश्यक तत्वों के बारे में पढ़ा था। भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 10 के अनुसार एक ऐसा आवश्यक तत्व "वैध प्रतिफल" है। इस इकाई में आप प्रतिफल का अर्थ, वैध प्रतिफल के नियम, अपर्याप्त प्रतिफल के करार की वैधता पर प्रभाव, बिना प्रतिफल के अनुबंधों की प्रवर्तनीयता और वे परिस्थितियाँ जिनमें प्रतिफल को विधि-विरुद्ध माना जाता है, आदि के बारे में पढ़ेंगे। आप उन अनुबंधों के बारे में भी अध्ययन करेंगे जो लोकनीति के विरुद्ध घोषित किये गये हैं।

5.2 प्रतिफल का अर्थ

व्यापारिक कानून में "प्रतिफल" (consideration) शब्द से तात्पर्य है प्रतिदान या "बदले में कुछ" (quid-pro-quo)। यह "कुछ" एक पक्ष को मिलने वाला हित, अधिकार, सुविधा या लाभ हो सकता है या दूसरे पक्ष पर कुछ हानि, जिम्मेवारी, परिहार (forbearance) व क्षति हो सकता है। प्रतिफल की यह व्याख्या इंग्लैण्ड में एक बहुत लोकप्रिय मुकदमें (Currie बनाम Misa) में दी गई थी।

"प्रतिफल" का एक अन्य सरल व अच्छा वर्णन सर पोलक द्वारा दी गई परिभाषा में उपलब्ध है। अपनी पुस्तक Pollock on Contracts में उन्होंने लिखा है, "प्रतिफल वह मूल्य है जिस पर दूसरे पक्ष का वचन खरीदा जाता है और इस प्रकार मूल्य के लिये दिया गया वचन प्रवर्तनीय है।" भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 2 (डी) ने प्रतिफल की परिभाषा इस प्रकार दी है — 'जब वचनदाता (promisor) की इच्छा पर, वचनग्रहीता (promisee) ने या किसी अन्य व्यक्ति ने कुछ कार्य किया है या करने से रुका है, करता है या करने से रुकता है या करने का वायदा करता है या करने से रुकने का वायदा करता है, तो ऐसा कार्य करना, न करना या करने से रुकने का वायदा करना उस वचन का प्रतिफल कहलाता है।'

उदाहरण

1. **क** अपना मकान **ख** को 10 लाख रु. में बेचने का करार करता है। यहाँ **ख** का 10 लाख रु. देने का वचन **क** के मकान बेचने के वचन के लिये प्रतिफल है और **क** का मकान बेचने का वचन **ख** के 10 लाख रु. देने के वचन के लिये प्रतिफल है।

2. **अ** अपने ऋणी **ब** से उसके 100 रु. अधिक देने पर राजी होने पर उस पर 1 साल तक मुकदमा न करने का वचन देता है। यहाँ **अ** का मुकदमा न करना **ब** के भुगतान करने के वचन के लिये प्रतिफल है।

इस प्रकार प्रत्येक अनुबंध के दो स्पष्टतया विभाज्य भाग होते हैं—(i) वचन, तथा (ii) वचन के लिये प्रतिफल। जब एक पक्ष किसी कार्य को करने या न करने का वचन देता है, तो वह ऐसा इसलिए करता है क्योंकि इस वचन के बदले दूसरे पक्ष को बदले में लगभग उतनी ही हानि या असुविधा हो रही है।

इस प्रकार से प्राप्त हुआ लाभ या इस प्रकार से हुई हानि, क्षति या असुविधा कानून की दृष्टि में वचन के लिये प्रतिफल माना जाता है। यह ध्यान रखें कि बिना प्रतिफल के कोई वचन नि:शुल्क होता है और यह कितना भी पवित्र और नैतिक दृष्टि से बाध्यकारी हो, यह कानूनी दायित्व उत्पन्न नहीं करता। "प्रतिफल नहीं, तो अनुबंध नहीं" यही कानूनी नियम है। इस बात को निम्नलिखित दो मुकदमें सिद्ध करते हैं।

अब्दुल अज़ीज बनाम मजूम अली: इस मुकदमें में एक व्यक्ति ने मस्जिद के लिये बनी कमेटी के सचिव से मस्जिद को पुन: बनवाने के लिये 500 रु. चन्दा देने का मौखिक रूप से वायदा किया। बाद में उसने चन्दा देने से मना कर दिया। निर्णय दिया गया कि कोई प्रतिफल न होने के कारण करार व्यर्थ है।

केदारनाथ बनाम गौरी मोहम्मद: इस मुकदमें में प्रतिवादी ने हावड़ा में एक टाउन हॉल बनाने के लिए 100 रु. चन्दा देने का वचन दिया। इस वचन के आधार पर सचिव ने ठेकेदारों को यह काम सौंप दिया और उन्हें भुगतान करने का दायित्व अपने ऊपर ले लिया। निर्णय दिया गया कि करार प्रवर्तनीय था क्योंकि यह प्रतिफल से समर्थित था। सचिव ने ठेकेदारों को पैसे देने का दायित्व प्रतिवादी के वचन के विश्वास पर स्वयं ले लिया था। यहाँ प्रतिफल सचिव को हानि के रूप में है।

5.3 वैध प्रतिफल संबंधी कानूनी नियम

यदि आप धारा 2(घ) में दी गयी प्रतिफल की परिभाषा का विश्लेषण करें तो आप कुछ ऐसी आवश्यक विशेषताएँ देखेंगे जो प्रतिफल के वैध और कानूनी रूप से स्वीकार्य होने के लिये आवश्यक हैं। इन विशेषताओं को प्रतिफल के लिये विधिक नियम भी कहते हैं। अब हम इन नियमों का विस्तार से अध्ययन करते हैं।

1 **प्रतिफल वचनदाता की इच्छा पर होना चाहिये**: अनुबंध को बाध्यकारी और प्रवर्तनीय बनाने के लिए प्रतिफल का होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि यह भी आवश्यक है कि प्रतिफल वचनदाता की इच्छा पर दिया गया हो। इस प्रकार जब कोई काम वचनदाता की बजाय किसी तीसरे पक्ष की इच्छा पर किया जाता है तो वह काम वैध प्रतिफल नहीं माना

जा सकता। उदाहरण के लिये घ ने एक जिले के जिलाधीश के कहने पर एक मार्किट का निर्माण किया। इस मार्किट की दुकानों के अधिभोक्ताओं ने घ को अपनी दुकानों से बेचे गये माल पर कमीशन देने का वचन दिया। निर्णय दिया गया कि यहाँ कोई प्रतिफल नहीं था क्योंकि वादी द्वारा खर्च प्रतिवादी के कहने पर नहीं किया गया गया, बल्कि स्वेच्छा से तीसरे पक्ष के लिये किया गया और इसलिये अनुबंध व्यर्थ है। (दुर्गा दास बनाम बलदेव)।

इसका अर्थ यह नहीं है कि वचनदाता को व्यक्तिगत रूप में लाभ मिलना चाहिये। वचनदाता की इच्छा या प्रार्थना पर प्रतिफल या लाभ तीसरे पक्ष को प्राप्त हो सकता है। उदाहरण के लिये, **क** को **ख** के 20 हजार रु. देने हैं। **क**, **ग** से आग्रह करता है कि वह इस रकम का प्रोनोट **ख** के नाम लिख दे। **ग**, **ख** को रकम चुकाने का वचन देता है (एक प्रोनोट लिखकर)। **ख** ने अपनी लेखा पुस्तकों में यह राशि **क** के खाते में जमा कर दी। **ग** के वचन के लिए **क** के खाते का निबटारा प्रतिफल है (यहाँ यद्यपि **ग** वचनदाता को कोई लाभ नहीं हुआ) **नेशनल बैंक ऑफ अपर इंडिया बनाम बंसीधर**।

प्रतिफल वचनग्रहीता या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है: प्रतिफल के बारे में दूसरा नियम यह है कि वह कार्य जिसे प्रतिफल बनना है, वचनग्रहीता द्वारा स्वयं या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है। ''किसी अन्य व्यक्ति'' (यानि वचनग्रहीता से अन्य व्यक्ति) को तकनीकी दृष्टि से **प्रतिफल के लिये अजनबी** कहा जाता है। इस नियम को कभी-कभी प्रलक्षित प्रतिफल का सिद्धान्त भी कहा जाता है। इसका अर्थ है कि जब तक वचन के लिये प्रतिफल है यह महत्वहीन (immaterial) है कि इसे किसने प्रदान किया है।

इस विषय पर **चिन्नया बनाम रेम्मय्या** का मामला एक अच्छा उदाहरण है। इस मामले में **क** ने एक उपहार विलेख द्वारा कुछ संपत्ति अपनी लड़की को हस्तांतरित की और यह आदेश किया कि वह (लड़की) **क** के भाई को एक वार्षिकी देती रहेगी, जिस प्रकार वह स्वयं देता था। उसी दिन लड़की ने **क** के भाई के पक्ष में लिखित रूप में उक्त वार्षिकी देने का वचन दिया। बाद में उसने यह कहकर वचन पूरा करने से मना कर दिया कि चाचा की ओर से उसे कोई प्रतिफल नहीं मिला है। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि धारा 2(घ) में ये शब्द ''वचनग्रहीता या कोई अन्य व्यक्ति'' स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि प्रतिफल वचनग्रहीता द्वारा ही दिया जाए यह आवश्यक नहीं है, यह किसी अन्य व्यक्ति द्वारा भी दिया जा सकता है। अतः **क** के भाई को दावा दायर करने का अधिकार है।

प्रतिफल भूतकालिक, वर्तमान अथवा भविष्यत् हो सकता है: धारा 2(घ) के ये शब्द ''किया या करने से रुका'' भूतकाल के बारे में हैं। इसी प्रकार ये शब्द —''करता है या करने से रुकता है'' वर्तमान से संबंधित हैं और ये शब्द —''करने का वचन देता है या करने से रुकने का वचन देता है'' भविष्य के संबंध में हैं। अतः, प्रतिफल भूतकालिक, वर्तमान अथवा भविष्यत् हो सकता है।

भूतकालिक प्रतिफल: भूतकालिक प्रतिफल वह कार्य है जो अनुबंध करने से पहले पूरी तरह कर दिया गया है या कोई हानि है जो उठाई जा चुकी है।

उदाहरण

वादी द्वारा एक नाबालिग **क** को कुछ सेवाएँ प्रदान की गईं। वादी ने ये सेवाएँ स्वेच्छा से प्रदान नहीं कीं बल्कि **क** की इच्छा पर की थी। **क** के बालिग होने पर भी ये सेवाएँ **क** की प्रार्थना पर जारी रहीं और **क** ने बाद में वादी को एक वार्षिकी देने का वचन दिया। निर्णय दिया गया कि भूतकालिक प्रतिफल एक अच्छा प्रतिफल है। **(सिंध्या बनाम अब्राहम)**

क नवम्बर के महीने में **ख** की प्रार्थना पर कुछ सेवाएँ प्रदान करता है। दिसम्बर में **ख** उसे उसकी सेवाओं के लिए 100 रु. देने का वचन देता है। **क** की सेवाएँ भूतकालिक प्रतिफल हैं। **क** रकम वसूल कर सकता है।

परन्तु अंग्रेज़ी कानून में भूतकालिक प्रतिफल को प्रतिफल नहीं माना जाता। इस प्रकार यदि उपर्युक्त वचन इंग्लैण्ड में किया गया होता तो उसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता था।

वर्तमान प्रतिफल: जब वचन देते समय ही प्रतिफल दिया जाता है तो वह वर्तमान प्रतिफल कहलाता है। नकद विक्रय वर्तमान प्रतिफल का सर्वोत्तम उदाहरण है।

भविष्यत् प्रतिफल: जब प्रतिफल भविष्य में मिलना है तो उसे भविष्यत् प्रतिफल कहते हैं। यह एक ऐसे वचन का रूप लेता है जिसे भविष्य में पूरा करना है। उदाहरण के लिये **क**, **ख** को गेहूँ की 100 बोरी भविष्य में किसी तारीख पर पहुँचाने का वचन देता है। **ख** गेहूँ की सुपुर्दगी पर कीमत देने का वचन देता है। यहाँ प्रतिफल भविष्य में दिया जाएगा।

4 **प्रतिफल का कुछ मूल्य होना चाहिए:** भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 2 (ग) में प्रतिफल की जो परिभाषा दी गई है उसका अर्थ है—वचनग्रहीता या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा वचनदाता की इच्छा पर कोई कार्य, परिवर्जन (abstinence) या वचन देना। इसका क्या यह अर्थ है कि एक बेकार कार्य भी एक अच्छा प्रतिफल होगा यदि वह केवल वचनदाता की इच्छा पर किया गया हो। उदाहरण के लिये, यदि **क** अपनी नई मारूति कार **ख** को देने का वचन देता है, बशर्ते की वह कार को गैराज से लाए। कार को गैराज से लाने के कार्य को किसी भी तरह से वचन के लिये प्रतिफल नहीं कहा जा सकता। लेकिन वचनदाता ने केवल यही काम वचनग्रहीता द्वारा किये जाने की इच्छा प्रकट की थी। ऐसे कार्य निसंदेह परिभाषा के शब्दों के अन्तर्गत तो आते हैं लेकिन वे उनमें छिपी भावना से परे होते हैं। **चिदम्बरा बनाम पी. एस. रंगा** के मुकदमें में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश सुब्बा राव ने कहा कि प्रतिफ़ल ऐसा कुछ होना चाहिए जिसमें न केवल इसके पक्षों के लिये मूल्य हो बल्कि कानून भी माने कि इसका कुछ मूल्य है। इसी प्रकार **कुलशेखर पैरूमल बनाम पथाकुट्टी** के मुकदमें में मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्रीनिवासन ने कहा यद्यपि भारतीय अनुबंध अधिनियम के अनुसार यह आवश्यक नहीं है, फिर भी प्रतिफल श्रेष्ठ एवं मूल्यवान होना चाहिये। यह वास्तविक होना चाहिये, भ्रमात्मक नहीं। उदाहरण के लिये **क** अपने ऋण को ठीक समय पर चुकाने का वचन देता है बशर्ते ऋणदाता उसे कुछ कटौती दे। यह करार बिना प्रतिफल के है क्योंकि कटौती, जोकि अवास्तविक और भ्रमात्मक है, को प्रतिफल के रूप में प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।

5 **प्रतिफल वैध होना चाहिए:** जो प्रतिफल वैध नहीं है उसका कानून की दृष्टि में कोई मूल्य नहीं है, अत: वह वास्तव में प्रतिफल नहीं होता।

इस प्रकार प्रतिफल के लिये कानूनी नियमों की मुख्य बातें निम्नलिखित हैं।

1 प्रतिफल वचनदाता की इच्छा पर दिया जाना चाहिए।
2 प्रतिफल वचनग्रहीता या अन्य किसी व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है।
3 प्रतिफल भूतकालिक, वर्तमान या भविष्यत् हो सकता है।
4 प्रतिफल का कुछ मूल्य अवश्य होना चाहिये अर्थात् यह वास्तविक होना चाहिये, भ्रमात्मक नहीं।
5 प्रतिफल सदैव वैध होना चाहिये।

5.4 अनुबंध के लिये अजनबी और प्रतिफल के लिये अजनबी

आप यह पढ़ चुके हैं कि भारत में, प्रतिफल किसी भी व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है, यह आवश्यक नहीं है कि वचनग्रहीता ही स्वयं इसे दे। इस प्रकार "प्रतिफल के लिये अजनबी" (stranger to a contract) यह अवधारणा वैध और स्वीकार्य है। लेकिन 'प्रतिफल के लिये अजनबी' (stranger to consideration) और अनुबंध के लिये अजनवी इन दोनों में अंतर करना आवश्यक है। अनुबंध के लिये अजनवी का अर्थ ऐसे व्यक्ति से है जो अनुबंध का पक्षकार नहीं है। ऐसे व्यक्ति द्वारा, भारत में भी, वैध मुकदमा नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिये, **क**, **ख** का ऋणी है, वह अपनी जायदाद **ग** को बेचता है, और **ग**, **ख** का ऋण चुकाने का वचन देता है। यदि **ग** ऋण नहीं चुका पाता तो **ख** को **ग** पर मुकदमा चलाने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि वह अनुबंध के लिये अजनवी है।

अपवाद

इस नियम के, कि अनुबंध के लिये अजनबी व्यक्ति मुकदमा नहीं कर सकता, कुछ अपवाद हैं। दूसरे शब्दों में, निम्नलिखित परिस्थितियों में अनुबंध के लिये अजनबी भी दावे को प्रवर्तित करा सकता है —

1 ट्रस्टों की स्थिति में हिताधिकारी अनुबंध को प्रवर्तित करा सकता है। **ख्वाजा मौहम्मद बनाम हुसैनी बेगम** के मुकदमें में तथ्य इस प्रकार थे। **क** और **ख** क्रमश: नाबालिग लड़की और लड़का थे। **क** के पिता **अ** थे। **क** और **ख** के पिता के बीच हुए अनुबंध के अंतर्गत **क** की शादी **ब** के बेटे **ख** से होने के प्रतिफल के रूप में **ब** ने **क** को खर्चापानदान के रूप में कुछ भत्ता देने का वचन दिया। **क** ने अपने ससुर **ब** पर भत्ते की बकाया राशि 15,000 रु. वसूल करने के लिये मुकदमा दायर कर दिया। प्रीवी कौंसिल ने निर्णय दिया कि **क** इस वचन को प्रवर्तित करा सकती है।

2 इसी नियम के आधार पर एक संयुक्त हिन्दू परिवार की महिला सदस्यों की शादी के खर्चे का प्रावधान इन सदस्यों को इस बात का अधिकार देता है कि वे ऐसे खर्चों के लिये पुरुष सदस्यों के बीच परिवार की सम्पत्ति का विभाजन होने पर मुकदमा चला सकें। **(राखमा बाई बनाम गोविंदा मोरेश्वर)**

3 दायित्व की स्वीकृति की स्थिति में या उसके कारण भूतकालीन कार्य से। उदाहरण के लिये जहाँ **क**, **ख** से **ग** को देने के लिये धन प्राप्त करता है और **क**, **ग** से उस धन की प्राप्ति स्वीकार करता है, तब **क** **ग** का एजेंट बन जाता है और उसे धन देने के लिये उत्तरदायी होगा।

4 पारिवारिक समझौते की स्थिति में, यदि समझौते की शर्तें लिखित हैं, तो परिवार के वे सदस्य भी जो मूलत: उस समय समझौते में पक्षकार नहीं थे, अनुबंध को प्रवर्तित करा सकते हैं। **(सुप्पु बनाम सुब्रामनियम)**

5 अनुबंध के समनुदेशन की स्थिति में जब अनुबंध के अंतर्गत हितों को समनुदेशित कर दिया गया है, तब समनुदेशिती (assignee) अनुबंध को प्रवर्तित करा सकता है **(किशन लाल सन्धु बनाम प्रमिला बाला दासी)**

5.5 प्रतिफल की पर्याप्तता

वास्तव में प्रतिफल की पर्याप्तता हमेशा वचनदाता के देखने की बात है। न्यायालय यह नहीं देखते कि प्रत्येक वचनदाता ने वचन के लिये पूरा प्रतिफल वसूल कर लिया है या नहीं।

अत: यदि **क** 8 लाख रु. के अपने मकान को केवल 80 हजार रु. में बेचने का वचन देता है, तो कीमत की अपर्याप्तता अपने आप से इस करार को व्यर्थ नहीं कर देगी। लेकिन यदि एक पक्ष यह दलील देता है कि उसे मजबूर किया गया, या उस पर अनुचित प्रभाव डाला गया या उसके साथ कपट किया गया, तब प्रतिफल की अपर्याप्तता पर भी साक्ष्य (evidence) के रूप में विचार किया जाएगा। उदाहरण के लिये **ख** 1,000 रु. का घोड़ा 10 रु. में बेचने का करार करता है। **ख** इस बात से इंकार करता है कि अनुबंध के लिये उसकी सहमति स्वतंत्र रूप से दी गयी थी। प्रतिफल की अपर्याप्तता एक तथ्य है जिसे न्यायालय को यह विचार करते समय कि **ख** ने स्वतंत्र रूप से सहमति दी थी या नहीं, ध्यान में रखना चाहिए। भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 25 (दूसरी व्याख्या) बताती है कि कोई समझौता जिसमें पक्षकार की सहमति स्वतंत्र रूप से दी गई है, केवल प्रतिफल की अपर्याप्तता के कारण व्यर्थ नहीं होता है, लेकिन इस प्रश्न पर विचार करते समय कि क्या वचनदाता की सहमति स्वतंत्र रूप से दी गई थी, प्रतिफल की अपर्याप्तता को ध्यान में रखा जा सकता है।

बोध प्रश्न क

1 प्रतिफल किसे कहते हैं ?

....

....

....

....

2 "बदले में कुछ" (quid–pro–quo) से क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

3 प्रतिफल किसकी इच्छा पर दिया जाना चाहिए ?

....

....

....

....

4 क्या भूतकालीन प्रतिफल वैध है ?

....

....

....

....

5 क्या प्रतिफल अजनवी द्वारा दिया जा सकता है ?

....

....

....

....

6 रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) प्रतिफल .... ही .... की इच्छा पर दिया जाना चाहिए।

ii) प्रतिफल .... होना जरूरी नहीं है, परंतु कानून की निगाह में इसका कुछ .... होना चाहिए।

iii) प्रतिफल के बिना अनुबंध .... होता है।

7 बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत —

i) प्रतिफल संबंधी कार्य वचनदाता या तीसरे पक्ष की इच्छा या प्रार्थना पर किया जाना चाहिए। ....

ii) प्रतिफल से दोनों पक्षों को लाभ पहुँचना चाहिए। ....

iii) भूतकालीन प्रतिफल कोई प्रतिफल नहीं होता। ....

iv) प्रतिफल वचनग्रहीता या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दिया जा सकता है। ....

v) अनुबंध के लिये अजनबी व्यक्ति मुकदमा कर सकता है यदि अनुबंध उसके हित के लिये हो। ....

vi) प्रतिफल वचन के मूल्य के अनुपातिक अवश्य होना चाहिए। ....

vii) प्रतिफल के लिये अजनवी मुकदमा कर सकता है।

5.6 प्रतिफल के बिना करारों की वैधता

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 10 के अनुसार एक अनुबंध के वैध होने के लिये प्रतिफल एक महत्वपूर्ण तत्व है। धारा 25 भी यह मत प्रकट करती है और प्रतिफल के बिना अनुबंधों को व्यर्थ घोषित करती है। लेकिन यह धारा कुछ अपवादों को भी स्वीकार करती है। इसके अतिरिक्त धारा 185 में भी एक स्थिति बताई गई है जिसमें प्रतिफल के बिना अनुबंध को वैध माना गया है। इस प्रकार वे परिस्थितियाँ जिनमें प्रतिफल के बिना भी अनुबंध वैध होता है, निम्नलिखित हैं:

1 **लिखित और रजिस्ट्री कराए हुए करार:** बिना प्रतिफल के किया गया करार वैध है यदि —

क) यह लिखित है।
ख) इसकी रजिस्ट्री करवायी हुई है।
ग) यह स्वाभाविक प्रेम और स्नेह के कारण किया गया है।
घ) यह निकट संबंधियों के बीच किया गया है।

उदाहरण के लिये स्वाभाविक प्रेम व स्नेह के कारण बड़े भाई ने अपने छोटे भाई के ऋण को चुकाने का वचन दिया है। करार लिखित और रजिस्टर्ड था। निर्णय दिया गया कि यह करार वैध हैं। **(वेंकटस्वामी बनाम रंगास्वामी)** यह ध्यान रखिए कि इस धारा के अंतर्गत करार की वैधता के लिये यह आवश्यक है कि करार स्वाभाविक प्रेम एवं स्नेह के परिणामस्वरूप हो। रिश्ते की नजदीकी अपने आप से सदैव ही स्वाभाविक प्रेम व स्नेह उत्पन्न नहीं करती। एक हिन्दू पति ने अपनी पत्नी से होने वाले झगड़ों और मतभेदों का उल्लेख करते हुए अपनी पत्नी को उसके अलग रहने और भरण-पोषण के लिये निश्चित धनराशि देने का वचन दिया। निर्णय दिया गया कि यह वचन प्रवर्तनीय नहीं है। **(राजलक्ष्मी देवी बनाम भूतनाथ)**

2 **क्षतिपूर्ति करने का वचन:धारा 25(2) :** बिना प्रतिफल के दिया गया वचन वैध है, यदि —

क) यह क्षतिपूर्ति (पूर्ण या आंशिक) करने का वचन है।

ख) जिस व्यक्ति की क्षतिपूर्ति की जाती है वह स्वेच्छा से पहले ही कुछ कर चुका हो या उसने ऐसा कुछ किया हो जिसे वचनदाता करने के लिये कानूनी रूप से बाध्य था।

उदाहरण

1 **क** को **ख** का पर्स पड़ा मिलता है और वह इसे **ख** को वापस कर देता है। **ख**, **क** को 100 रु. देने का वचन देता है। यह एक वैध अनुबंध है यद्यपि **क** ने **ख** को इस काम के लिये नियुक्त नहीं किया था। अत: प्रतिफल वचनदाता **ख** की इच्छा पर नहीं दिया गया है।

2 **क**, **ख** के लड़के (शिशु) की बिना कहे देखभाल करता है। **ख**, **क** द्वारा किए गये खर्चों की पूर्ति करने का वचन देता है। यह एक वैध अनुबंध है।

3 **परिसीमा अधिनियम द्वारा कालबाधित ऋण के भुगतान का वचन: धारा 25(3) :** परिसीमा अधिनियम द्वारा घोषित कालबाधित ऋण के भुगतान करने का वचन प्रतिफल के बिना भी वैध होता है, क्योंकि कानूनी दृष्टि से इसे वसूल नहीं किया जा सकता। आपको यह ज्ञात होना चाहिए कि यदि किसी ऋण की वसूली के लिए 3 साल तक दावा नहीं किया जाता तो यह ऋण विधि के अंतर्गत कालबाधित हो जाता है। फिर भी, एक कालबाधित ऋण को चुकाने (पूर्ण या आंशिक) का वचन वैध होता है, यदि —

i) यह वचन लिखित हो।

ii) ऋणी या उसके एजेंट द्वारा इस पर हस्ताक्षर किए गये हों।

iii) यह ऐसे ऋण के संबंध में है जो केवल परिसीमा कानून के कारण वसूल नहीं किया जा सकता हो।

उदाहरण: अ ने ब को 800 रु. देने हैं, लेकिन यह ऋण कालबाधित हो चुका है। अ 600 रु. देने का हस्ताक्षर किया हुआ लिखित वचन देता है। यह वैध अनुबंध है। (धारा 25)

4 **दिया जा चुका उपहार (Completed gift) :** दिये जा चुके उपहारों पर "प्रतिफल नहीं तो अनुबंध नहीं" का नियम लागू नहीं होता। यह जरूरी नहीं कि ये उपहार स्वाभाविक प्रेम व स्नेह या निकट संबंध के परिणामस्वरूप दिये गये हों। लेकिन उपहार दिया जा चुका होना चाहिए। (धारा 25 की पहली व्याख्या)। दिये जा चुके उपहार का अर्थ है जो उपहार दिये और लिये जा चुके हों। यद्यपि उपहार देने का वचन वैध नहीं है।

5 **एजेंसी:** एजेंसी के निर्माण के लिए प्रतिफल की आवश्यकता नहीं है। (धारा 185)। यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि एजेंट को प्रतिफल प्राप्त नहीं हो रहा, तो उसे नि:शुल्क एजेन्ट कहते हैं, उस दशा में जो कार्य उसे सौंपा गया है उसे करने के लिए वह बाध्य नहीं है। परंतु यदि उसने कार्य आरम्भ कर दिया है तो उसे इससे अपने प्रधान को संतुष्ट करना चाहिए।

6 **दान:** यदि कोई व्यक्ति दान देने का वचन देता है और उसके वचन के विश्वास पर वचनग्रहीता उसके द्वारा वचन दी गई दान की राशि के बराबर दायित्व उठा लेता है तो यह अनुबंध वैध है। **(केदारनाथ बनाम गौरी मौहम्मद)**

सारांश रूप में एक करार बिना प्रतिफल के निम्नलिखित स्थितियों में वैध होता है —

1 यदि करार नजदीकी रिश्तेदारों के बीच स्वाभाविक प्रेम व स्नेह के फलस्वरूप लिखित और रजिस्टर्ड किया गया हो।

2 यदि वचनदाता के लिए स्वेच्छा से कुछ करने के बदले में यह क्षतिपूर्ति करने का वचन है।

3 यदि यह परिसीमा कानून द्वारा कालबाधित किसी ऋण को चुकाने का लिखित वचन है।

4 यदि यह दिये जा चुके और अन्य व्यक्ति द्वारा लिये जा चुके उपहारों के बारे में वचन है।

5 यदि यह एजेन्सी के निर्माण से संबंधित है।

6 यदि यह दान देने के लिये वचन है और इसके विश्वास पर वचनग्रहीता ने दायित्व ले लिया है।

5.7 उद्देश्य और प्रतिफल की वैधता

अधिकांश स्थितियों में उद्देश्य और प्रतिफल शब्दों का एक ही अर्थ होता है। लेकिन कुछ स्थितियों में इनके अर्थ भिन्न हो सकते हैं। उदाहरण के लिए जब एक नाबालिग की शादी के लिए धन उधार लिया जाता है तो अनुबंध के लिए प्रतिफल ऋण है और उद्देश्य शादी है। हम यह पहले ही बता चुके हैं कि ऐसे करार को प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता जिसका उद्देश्य या प्रतिफल अवैध है। अधिनियम की धारा 23 के अनुसार, निम्नलिखित स्थितियों में एक करार का प्रतिफल और उद्देश्य अवैध होता है:

1 **जब यह कानून द्वारा वर्जित या निषिद्ध है** — यदि करार का उद्देश्य या प्रतिफल ऐसे कार्य के लिये है जो कानून द्वारा वर्जित है तो करार व्यर्थ होता है। कोई कार्य या वचन कानून द्वारा वर्जित माना जाता है जब यह देश के फौजदारी कानून द्वारा दण्डनीय हो या जब यह किसी कानून द्वारा निषिद्ध घोषित किया गया हो।

उदाहरण

i) एक नाबालिग के संरक्षक को उस नाबालिग की शादी के लिये दिया गया ऋण, जबकि यह शादी बाल-विवाह अवरोध अधिनियम (Child marriage restraint Act)

का उल्लंघन है, अवैध है और इसे वसूल नहीं किया जा सकता। **(श्रीनिवास बनाम राजा राम मोहन)**

ii) **क**, उस मुकदमे को, जो उसने डकैती/लूट के बारे में **ख** के विरुद्ध दायर कर दिया है, छोड़ देने का वचन देता है तथा **ख** ली गयी वस्तुओं का मूल्य लौटा देने का वचन देता है, यह करार व्यर्थ होगा क्योंकि इसका उद्देश्य विधि विरुद्ध है। (धारा 23 का उदाहरण (एच))

2 **जब यदि किसी कानून के प्रावधानों को विफल करता है:** यदि यह इस प्रकार का है कि यदि इसकी अनुमति दी गई तो यह किसी अन्य कानून के प्रावधानों को विफल करेगा। दूसरे शब्दों में, यदि करार का उद्देश्य या प्रतिफल ऐसा है कि वह प्रत्यक्ष रूप से कानून द्वारा वर्जित तो नहीं है लेकिन वह कानून के प्रावधानों को विफल करेगा, तो करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए कानून के प्रावधानों के अंतर्गत **क** की जायदाद राजस्व की बकाया राशि वसूल करने के लिए बेची जाती है और कानून के अनुसार दोषी व्यक्ति उसे स्वयं नहीं खरीद सकता। **ख**, **क** से मिलकर उस जायदाद को खरीद लेता है और **ख** ने जो कीमत अदा की है उस पर वह उसे **क** को हस्तांतरित करने का वचन देता है। यह करार व्यर्थ है क्योंकि उसका यह प्रभाव है कि यह दोषी व्यक्ति द्वारा क्रय बन जाता है और इस प्रकार कानून के उद्देश्य को विफल कर देगा। (धारा 23 का उदाहरण (1)) .

3 **यदि यह कपटपूर्ण है** — दूसरों के साथ कपट करने के उद्देश्य से किया गया करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिये **क**, **ख** और **ग** उनके द्वारा किये गये कपट से प्राप्त हुए लाभों या प्राप्त होने वाले लाभों का आपस में बंटवारा करने का करार करते हैं। यह करार व्यर्थ है क्योंकि इसका उद्देश्य विधि-विरुद्ध है।

4 **यदि इससे किसी अन्य व्यक्ति के शरीर या सम्पत्ति को हानि होती है** — यदि करार का उद्देश्य किसी अन्य व्यक्ति को शारीरिक चोट या उसकी सम्पत्ति को हानि पहुँचाना है तो यह करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, **क** ने **ख** से 100 रु. उधार लिये और लिखकर वचन दिया कि वह दो वर्ष तक बिना वेतन के **ख** के लिये काम करेगा और यह भी माना कि ऐसा न करने पर बहुत ही ऊँची दर पर ब्याज तथा मूल राशि दोनों तुरंत अदा कर देगा। यह अनुबंध व्यर्थ है। **(राम सरूप बनाम बंशी)**

5 **यदि न्यायालय इसे अनैतिक या लोकरीति के विरुद्ध मानता है** — वह करार जिसका उद्देश्य या प्रतिफल अनैतिक है या लोक नीति के विरुद्ध है, व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिए, क एक वेश्या **ख** को यह जानते हुए कि कार का प्रयोग अनैतिक काम के लिए किया जाएगा, कार किराये पर देता है। यह करार व्यर्थ है। **(पीयर्स बनाम ब्रुक्स)**

आंशिक अवैधता (Partial Illegality)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 24 में प्रावधान है कि यदि एक या अधिक उद्देश्यों के लिये एक ही प्रतिफल का कोई भाग या एक उद्देश्य के लिये विभिन्न प्रतिफलों में से कोई एक या किसी एक का कोई भाग अवैध है तो करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिये **क**, **ख** की ओर से व्यापार की देखरेख करने का वचन देता है। **ख** कुछ अनुज्ञेय (permissible) रसायनों का लाइसेंस शुदा और कुछ निषिद्ध माल का निर्माता है। **ख**, **क** को 10,000 रु. प्रति माह वेतन देने का वचन देता है। यह करार व्यर्थ है, क्योंकि **क** के वचन का उद्देश्य और **ख** के वचन के लिये प्रतिफल आंशिक रूप में अवैध हैं।

यह भलीभाँति तय हो चुका है कि जब एक ही वैध प्रतिफल के लिये कई भिन्न-भिन्न वचन दिये गये हैं और उनमें से एक या एक से अधिक कार्य ऐसा हो जिसे कानून परवर्तित नहीं करेगा, तो यह अपने आप से बाकी के वचनों को प्रवर्तनीय होने से नहीं रोक सकता। इसकी सही कसौटी यह है कि क्या कोई प्रतिफल जो पूर्णतया वैध है, इस वचन के लिये हो सकता है। न्यायाधीश विल्स (Wiles) के अनुसार सामान्य नियम यह है कि, जहाँ आप प्रतिज्ञा-पत्र के अवैध भाग को वैध भाग से अलग नहीं कर सकते, वहाँ अनुबंध पूर्ण रूप से व्यर्थ है, लेकिन जहाँ इन्हें पृथक् किया जा सकता है, अवैधता चाहे सामान्य नियम के कारण हो या संविधि के कारण इसके अवैध भाग को अस्वीकार कर सकते हैं तथा शेष वैध भाग को रख सकते हैं।

बोध प्रश्न ख

1 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत —

i) उपहार देने का वचन आदाता (Donee) दवारा प्रवर्तनीय है। . . . .

ii) परिसीमा अधिनियम द्वारा कालबाधित ऋण को अदा करने का मौखिक वचन प्रवर्तनीय है। . . . .

iii) भूतकाल में किये गये स्वैच्छिक कार्य की क्षतिपूर्ति करने का वचन वैध है। . . . .

iv) एक एजेंट बिना "बदले में कुछ" प्राप्त किए भी एक वचनबद्ध कार्य करने को बाध्य है। . . . .

v) छल कपट करने के लिये किया गया करार व्यर्थ है। . . . .

2 क, ख के साथ अवैध संभोग के लिए राजी हो जाती है। ख उसे इसके लिये एक निश्चित मासिक भत्ता देने को राजी हो जाता है, बताइए —

i) यह करार वैध है या नहीं, कारण बताइए:

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

ii) यदि भुगतान किसी विवाहित स्त्री के साथ भूतकाल में सहवास के लिये है, जो उसके पति की जानकारी या बिना जानकारी के किया गया है, तब क्या करार वैध है?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

3 कुछ व्यक्ति एक कंपनी के शेयर, अन्य व्यक्तियों में यह विश्वास पैदा करने के लिये कि उन शेयरों के लिये वास्तव में बाजार में माँग है, जो कि वास्तविकता के एकदम विपरीत है, खरीदने के लिये राजी हो जाते हैं। क्या ऐसा करार वैध है?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

5.8 लोक नीति के विरुद्ध करार (Agreements Opposed to Public Policy)

"लोकनीति" शब्द की स्पष्ट एवं सूक्ष्म परिभाषा देना अत्यंत कठिन है क्योंकि यह अपनी प्रकृति के कारण बहुत अनिश्चित और लचीली है। यह वाणिज्य और व्यापार के विकास के साथ और लोगों की आदत और फैशन के साथ परिवर्तित होती रहती है। इंग्लैण्ड में हैल्सबरी ने **जैनसन बनाम ड्रीफ्टेन कन्सालिडेटेड मांइस लिमिटेड** के मुकदमें में कहा था कि "लोकनीति की श्रेणियाँ अब बन्द हो चुकी हैं तथा कोई न्यायालय लोकनीति का नया शीर्षक ईजाद नहीं कर सकता।" भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 23 के अंतर्गत न्यायालय यदि किसी अनुबंध को लोकनीति के विरुद्ध समझते हैं तो इसे अवैध घोषित कर सकते हैं।

सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि ऐसे अनुबंध जो समय के अनुसार नैतिकता के मापदण्ड के विरुद्ध हैं और जो समाज के किसी भी सुस्थापित हित के विपरीत हैं, वे लोकनीति

के विरुद्ध होने के कारण व्यर्थ हैं। इस प्रकार ऐसा अनुबंध जो जनता या जनता की भलाई के लिये हानिकारक होने की ओर प्रवृत्त है, व्यर्थ है क्योंकि यह लोकनीति के विरुद्ध है। श्री मुल्ला के अनुसार, "अनुबंध लोकनीति पर आघात कर सकते हैं, या युद्ध के समय राज्य को क्षति पहुँचा सकते हैं (दुश्मनों के साथ व्यापार आदि), या न्यायिक प्रक्रिया का गलत ढंग से उपयोग करके नुकसान पहुँचा सकते हैं (कानूनी कार्यवाही करने से रोकना वादपोषण (maintenance) एवं वादक्रय (champerty)) या किसी व्यक्ति के विवाह के स्वतंत्र अधिकार पर अनुचित एवं असुविधाजनक प्रतिबन्ध लगाना या उसके द्वारा किसी वैध व्यापार या पेशे को करने की स्वतंत्रता पर रोक लगा सकते हैं।

लोकनीति के विषय

लोकनीति के सामान्यतया स्वीकार्य आधार में निम्नलिखित शामिल हैं।

1 **शत्रु के साथ व्यापार:** वे सभी अनुबंध जो विदेशी शत्रु के साथ किये गये हैं, जब तक कि वे सरकार की अनुमति से न किये हों, लोकनीति के आधार पर अवैध हैं।

2 **कानूनी कार्यवाही रोकने के करार:** सार्वजनिक प्रकृति के अपराधों का समझौता करने के लिये या दण्डय आरोपों को छुपाने के लिये किये गये करार अवैध और व्यर्थ होते हैं। कानून के नियम हैं कि "आप अपने अपराधों का व्यापार नहीं कर सकते, आप अपराध को लाभ के स्रोत में परिवर्तित नहीं कर सकते।" **सुधीन्द्र कुमार बनाम गणेश चन्द्र** के मुकदमें में यह कहा गया कि "कोई भी न्यायालय ऐसे करारों को समर्थन या प्रवर्तन नहीं कर सकता जिसका उद्देश्य न्याय करने का कार्य न्यायाधीशों से लेकर निजी व्यक्तियों के हाथों में सौंपना हो।" उदाहरण के लिये क यह जानते हुए कि ख ने एक कत्ल किया है, ख से 1 लाख रु. प्राप्त करने का वचन लेता है, इसका प्रतिफल ख का भंडाफोड़ नहीं करना है। यह कानूनी कार्यवाही रोकने का एक उदाहरण है और करार अवैध और व्यर्थ है।

3 **वादक्रय (Champerty) और वादपोषण (Maintenance) की प्रकृति के अनुबंध:** इंग्लैण्ड में वादक्रय और वादपोषण के करार लोकनीति के विरुद्ध होने के कारण व्यर्थ हैं। वादपोषण का अर्थ है ऐसी मुकदमेंबाजी को प्रोत्साहन देना जिसमें व्यक्ति का अपना कोई हित नहीं हो। दूसरे शब्दों में, जब एक व्यक्ति किसी ऐसे मुकदमें, जिसमें उसका कोई हित नहीं है, को जारी रखने के लिये सहायता देने को राजी होता है, तो इस कार्यवाही को वादपोषण कहते हैं। इस प्रकार वादपोषण अपेक्षी (speculative) मुकदमेंबाजी को प्रोत्साहित करता है। दूसरी ओर वादक्रय एक ऐसा करार है जिससे एक पक्ष दूसरे पक्ष को मुकदमें द्वारा सम्पत्ति वापस दिलाने के लिये सहायता करने का वचन देता है और बदले में जो सम्पत्ति उसे प्राप्त होगी, उसमें से हिस्सा लेता है। अंग्रेजी कानून के अंतर्गत ये दोनों करार अवैध और व्यर्थ घोषित किये गये हैं। परंतु भारतीय कानून इससे भिन्न है। **राजा वेंकट सुभद्रयम्मा गुरू बनाम श्री पशुपति वेंकटपति राजू** के मुकदमें में, प्रिवी काउंसिल ने निर्णय दिया कि वादक्रय और वादपोषण भारत में अवैध नहीं है और न्यायालय ऐसे करारों को प्रवर्तित करने से केवल तभी मना करेंगे जब ये लूट-खसोट वाले और अनैतिक हों और उस व्यक्ति, जो स्वयं मुकदमेंबाजी जारी रखने योग्य नहीं है, के अधिकारों को प्राप्त करने के असली उद्देश्य से नहीं किये गये हों। दूसरे शब्दों में, केवल वे करार जो मुकदमें में जुएबाजी करने और दूसरों को हानि या उनके दमन के लिये, दुष्ट प्रकृति की मुकदमेंबाजी को प्रोत्साहित करके, किये जाते हैं, वे प्रवर्तित नहीं किये जाएँगे, लेकिन ऐसा नहीं है कि वादपोषण और वादक्रय के सभी करार प्रवर्तित नहीं किये जाएँगे। इस प्रकार मुकदमे चलाने के लिये सेवाएँ प्रदान करने का करार, जिसका प्रतिफल न्यायालय के जरिये प्राप्त की गई राशि का 50 प्रतिशत भुगतान है, कानूनी रूप से प्रवर्तनीय होगा। यदि प्रिवी कौंसिल में अपील करने के लिए कोई व्यक्ति 12,000 रु. की वित्तीय सहायता प्रदान करता है और इसके बदले दूसरा पक्ष उसे 64,000 रुपये मूल्य की जायदाद हस्तांतरित करने का वचन देता है, तो निर्णय दिया गया कि यद्यपि वचन सद्‌विश्वास में दिया गया है, किन्तु इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता क्योंकि बदले में दिया जाने वाला पारितोषिक नृशंस एवं ठगने वाला है।

4 **लोक-पदों और उपाधियों की बिक्री के लिये करार:**
लोक पदों की बिक्री और नियुक्तियों के व्यापार से लोक सेवा को क्षति पहुँचती है क्योंकि

इससे सर्वोत्तम योग्य व्यक्ति के चुनाव में बाधा होती है। ऐसी बिक्री के करार अवैध और व्यर्थ होते हैं।

उदाहरण

1 **क**, **ख** को सार्वजनिक सेवा में रोजगार दिलाने के लिये 500 रु. देने का वचन देता है। यह करार व्यर्थ है।

2 इसी प्रकार **क**, **ख** को रुपया देने का करार करके रिटायर होने के लिये प्रोत्साहित करता है ताकि **ख** के सार्वजनिक पद पर **क** की नियुक्ति हो सके। यह करार व्यर्थ है **(सामीनाथ बनाम मुत्तुस्वामी)**

5 **पैतृक अधिकारों में रुकावट डालने वाले करार:** कानून के अनुसार पिता अपने नाबालिग बच्चों का अभिभावक होता है। पिता के बाद संरक्षण का अधिकार माँ का हो जाता है। इस अधिकार का किसी भी करार द्वारा क्रय-विक्रय नहीं किया जा सकता। इस प्रकार पिता का अधिकार इससे नहीं लिया जा सकता और ऐसा करने वाला कोई भी करार व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिये, एक पिता ने अपने दो अवयस्क लड़कों का संरक्षण श्रीमती एनी बेसेन्ट को दे दिया और वचन दिया कि वह कभी भी अधिकार के इस हस्तांतरण को समाप्त नहीं करेगा। बाद में, उसने बच्चों को वापस लेने के लिये मुकदमा किया और घोषित किया कि वही न्यायसंगत अभिभावक है। न्यायालय ने निर्णय दिया कि वह दिए गये अधिकार का खंडन कर सकता है और उसे बच्चे वापस लेने का अधिकार है। **(गिद्दू नारायनीश बनाम श्रीमती एनी बेसेंट)**

6 **विवाह में रुकावटें डालने वाले करार:** धारा 26 के अंतर्गत कोई भी ऐसा करार जो अवयस्क के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति के विवाह में रुकावट डालता है, व्यर्थ होता है। (इस बारे में आप इकाई 6 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

7 **विवाह की दलाली या दलाली के अनुबंध:** विवाह की दलाली का अनुबंध वह है जिसमें, विवाह के प्रतिफल के लिये, पक्षकरों में से किसी पक्ष या उनके माता-पिता या तीसरे पक्षों को कुछ राशि प्राप्त होती है। इसलिये दहेज, विवाह की दलाली है और अवैध तथा व्यर्थ है।

वेंकटकृष्ण बनाम वेंकटचलम के मुकदमें में अपनी पुत्री की शादी के प्रतिफल के रूप में पिता को कुछ पैसा देने का करार किया गया था। निर्णय दिया गया कि ऐसा वचन विवाह की दलाली के अनुबंध के समान है और व्यर्थ है। इसी प्रकार, एक पुरोहित को प्रतिवादी के लिये दूसरी पत्नी दिलवाने के लिये एक निश्चित राशि देने का वायदा किया गया। निर्णय दिया गया कि यह वचन लोकनीति के विरुद्ध है और इस प्रकार व्यर्थ है। **(वैथनाथन् बनाम गंगाराजू)**। उपयुर्वत परिस्थितियों में, यदि विवाह हो जाता है और धन की अदायगी नहीं होती तो न्यायालय में उस राशि को वसूल नहीं किया जा सकता। लेकिन यदि धनराशि दी जा चुकी है और विवाह भी हो गया है तो धनराशि वापस नहीं ली जा सकती।

8 **कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले करार:** धारा 28 में दो प्रकार के करारों को व्यर्थ बताया गया है — (i) ऐसा करार जिसके द्वारा एक पक्ष को अनुबंध के अंतर्गत प्राप्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए कानूनी कार्यवाही करने से पूरी तरह रोका जाए और (ii) ऐसा करार जिसमें कानूनी कार्यवाही करने के लिये समय की सीमा लगा दी जाती है। इस पर इकाई 6 में विस्तार से विचार किया गया है।

9 **कानूनी प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने वाले करार:** ऐसा कोई करार जिसका उद्देश्य न्यायाधीशों या न्याधिकारियों पर किसी प्रकार अनुचित प्रभाव डालना है, व्यर्थ होता है।

10 **व्यापार में रुकावट डालने वाले करार:** भारत में व्यापार में रुकावट डालने वाले करार, चाहे ये रुकावट पूर्ण हो या आंशिक, धारा 27 के अंतर्गत व्यर्थ घोषित किये गये हैं। (इनका इकाई 6 में विस्तार से वर्णन किया गया है)।

11 **एकाधिकार निर्माण करने वाले करार:** सार्वजनिक हित के विरुद्ध होने के कारण, ऐसे अनुबंध, जिनसे एकाधिकार की स्थापना में सहायता मिलती है, व्यर्थ होते हैं। उदाहरण के लिये, एक स्थानीय निकाय (local body) ने **क** को एक खास इलाके में सब्जी बेचने

का एकाधिकार प्रदान किया। यह करार व्यर्थ ठहराया गया। **(डिस्ट्रिक्ट बोर्ड ऑफ झेलम बनाम हरी चन्द)**

12 **व्यक्तिगत स्वतंत्रता में रुकावट डालने वाले करार:** ऐसे करार जो लोगों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता में अनुचित रूप से रुकावट डालते हैं, व्यर्थ एवं अवैध होते हैं क्योंकि ये लोकनीति के विरुद्ध हैं। उदाहरण के लिये, ऋणी **अ** ने ऋणदाता **ब** से धन उधार लिया और यह करार किया कि वह **ब** की लिखित सहमति के बिना अपनी नौकरी नहीं छोड़ेगा, धन उधार नहीं लेगा, अपनी जायदाद नहीं बेचेगा या अपना निवास-स्थान नहीं बदलेगा। यह करार व्यर्थ और अवैध घोषित किया गया क्योंकि यह **क** की व्यक्तिगत स्वतंत्रता में रुकावट डालता है **(हारवुड बनाम मिलर्स टिम्बर एंड ट्रेडिंग कम्पनी)**

बोध प्रश्न ग

1 **क** अपने वकील को यह वचन देता है कि यदि वह मुकदमा जीतता है तो उसे 5,000 रु. फीस देगा और विवाद वाली जगह का एक हिस्सा उसे हस्तांतरित कर देगा। क्या वकील अपनी फीस वसूल कर सकता है और जायदाद के हिस्से के लिए भी दावा कर सकता है?

....

....

....

....

....

2 **क** एक विवाहित महिला **ख** को अपने साथ व्यभिचार के लिये और अपने घर की देखभाल के लिये 1000 रुपये प्रति माह देने का वचन देता है। यदि **क**, **ख** को पैसा देने से इन्कार कर दे तो क्या **ख** कानूनी रूप से पैसा वसूल कर सकती है?

....

....

....

....

....

5.9 सारांश

प्रतिफल (बदले में कुछ) (quid–pro–quo) अनुबंध को वैध और प्रवर्तनीय बनाने के लिये एक आवश्यक तत्व है। प्रतिफल, वैध होने के लिये आवश्यक है कि वह न केवल वचनदाता की इच्छा पर प्रदान किया गया हो बल्कि वास्तविक और कानूनी भी हो। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वह वचनग्रहीता द्वारा ही दिया गया हो या पर्याप्त हो।

धारा 25, जो यह घोषित करती है कि 'प्रतिफल नहीं तो अनुबंध नहीं' कुछ ऐसे अपवादों को भी मान्यता प्रदान करती है जिनके अंतर्गत प्रतिफल न होने पर भी अनुबंध वैध और प्रवर्तनीय होता है। धारा 185 इन अपवादों की सूची को और बढ़ाती है। इस तरह, निम्नलिखित स्थितियों में बिना प्रतिफल के भी अनुबंध वैध होते हैं:

) निकट संबंधियों के बीच लिखित एवं रजिस्टर्ड रूप में, स्वाभाविक प्रेम व स्नेह के फलस्वरूप होने वाले करार।

i) स्वेच्छा से किये गये किसी कार्य की क्षतिपूर्ति करने का वचन।

ii) किसी कालबाधित ऋण को लौटाने का वचन।

v) दिये जा चुके और प्राप्त किए जा चुके उपहार वैध हैं लेकिन उपहार देने के वचन को प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

v) एजेंसी के अनुबंध।

किसी अनुबंध का प्रतिफल या उद्देश्य गैर-कानूनी होगा जब:

i) यह कानून द्वारा वर्जित है।

ii) इसकी अनुमति देने पर यह कानून के प्रावधानों को विफल कर देगा।

iii) यह कपटपूर्ण है।

iv) इससे किसी अन्य व्यक्ति के शरीर को या उसकी सम्पत्ति को हानि होती है।

v) न्यायालय इसे अनैतिक या लोकनीति के विरुद्ध मानता है।

अधिनियम में कहीं भी यह नहीं बताया गया है कि किन व ों को लोकनीति के विरुद्ध माना जाएगा। विभिन्न न्यायिक निर्णयों के विश्लेषण के आधार पर ऐसे करारों में निम्नलिखित करार शामिल किये जा सकते हैं: — 1) शत्रु के साथ व्यापार, 2) कानूनी कार्यवाही रोकने के करार, 3) वादक्रय और वादपोषण के अनुबंध, 4) लोक-पदों और उपाधियों को बेचने के करार, 5) पैतृक अधिकारों में रुकावट डालने वाले करार, 6) विवाह की दलाली के करार, 7) कानूनी प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने वाले करार, 8) एकाधिकार निर्माण करने के करार, 9) व्यापार में रुकावट डालने वाले करार, 10) विवाह में रुकावट डालने वाले करार, 11) व्यक्तिगत स्वतंत्रता में रुकावट डालने वाले करार और 12) कानूनी कार्यवाही में बाधा डालने वाले करार।

5.10 शब्दावली

क्षति (Detriment): इसका तात्पर्य हानि से ही है। विशेष रूप में इसका अर्थ किसी व्यक्ति के हितों को नुकसान या चोट पहुँचाना है।

वादपोषण और वादक्रय (Maintenance and Champerty): कानून में इन दोनों शब्दों का प्रयोग सामान्यतया एक साथ किया जाता है। वादपोषण का अर्थ है ऐसी मुकदमेंबाजी को बढ़ावा देना जिसमें व्यक्ति का अपना कोई हित न हो। दूसरी ओर, वादक्रय एक ऐसा लेन-देन है जिसके द्वारा एक पक्ष दूसरे की जायदाद वसूल करने में सहायता करता है और इसके बदले उसे इस कार्य से जो प्राप्त होता है उसमें से उसे एक हिस्सा मिलता है।

प्रतिदान (Quid-pro-quo): यह लैटिन भाषा का मुहावरा है जिसका अर्थ है "बदले में कुछ"।

कानूनी कार्यवाही रोकना (Stifling Prosecution): ऐसी सूचना प्रदान न करना जिससे दूसरे के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही हो सकती है। इसका उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करना है।

प्रतिफल के लिये अजनबी (Stranger to Consideration): ऐसा व्यक्ति जो अनुबंध में तो एक पक्ष है लेकिन जिसने स्वयं कोई प्रतिफल नहीं दिया है। बल्कि उसके स्थान पर उसके लिये किसी अन्य व्यक्ति ने प्रतिफल दिया है।

अनुबंध के लिये अजनबी (Stranger to Contract): वह व्यक्ति जो अनुबंध में पक्षकार नहीं है।

5.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 प्रतिफल वह मूल्य है जिससे दूसरे का वचन खरीदा जाता है।

2 Quid-pro-quo लैटिन भाषा का मुहावरा है, जिसका अर्थ है – "बदले में कुछ"।

3 वचनदाता।

4 हाँ।

5 हाँ।

6 i) अवश्य, वचनदाता, ii) पर्याप्त, मूल्य, iii) आरम्भ से ही व्यर्थ।
7 i) गलत, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही, vi) गलत, vii) सही

ख 1 i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) गलत
2 i) नहीं, प्रतिफल गैर-कानूनी है (धारा 23), ii) प्रतिफल अवैध है।
3 नहीं, धारा 23 के अनुसार उद्देश्य अवैध है (इससे दूसरे को या उसकी संपत्ति को नुकसान होता है)। इसी तरह का फैसला घेरूलाल पारिख बनाम महादेव के मुकदमें में दिया गया था।

ग 1 वकील वह फीस वसूल कर सकता है जिसका वचन दिया गया था। लेकिन वह सम्पत्ति में से कोई हिस्सा प्राप्त नहीं कर सकता। वादपोषण और वादक्रय पर की गयी चर्चा को पढ़िये।
2 नहीं, करार एक अनैतिक काम के लिये होने के कारण लोकनीति के विरुद्ध है और इस प्रकार व्यर्थ है।

5.12 स्वपरख प्रश्न

1 प्रतिफल की परिभाषा दीजिए। प्रतिफलों के विभिन्न प्रकारों का विवेचन कीजिए।

2 क्या आप इस मत से सहमत हैं कि "प्रतिफल नहीं तो अनुबंध नहीं" ?

3 किन स्थितियों में बिना प्रतिफल के एक अनुबंध वैध होता है ?

4 इस नियम का विवेचन कीजिए कि एक अनुबंध के लिये अजनबी मुकदमा नहीं कर सकता। क्या इस नियम के कुछ अपवाद हैं ?

5 "अनुबंध के लिये अजनबी मुकदमा नहीं कर सकता लेकिन प्रतिफल के लिये अजनबी ऐसा कर सकता है", क्या आप सहमत हैं ?

6 "प्रतिफल की अपर्याप्तता महत्वहीन है, लेकिन एक वैध अनुबंध के लिये वैध और वास्तविक प्रतिफल आवश्यक है।" टिप्पणी कीजिए।

7 किन परिस्थितियों में अनुबंध का उद्देश्य या प्रतिफल अवैध माना जाता है ? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

8 लोकनीति के सिद्धान्त की विवेचना कीजिए। उन करारों के उदाहरण दीजिए जो लोकनीति के विरुद्ध समझे जाते हैं।

> **नोट:** इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 6 व्यर्थ करार एवं सांयोगिक अनुबंध

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य
6.1 प्रस्तावना
6.2 व्यर्थ करार
6.2.1 विवाह में रुकावट डालने वाले करार
6.2.2 व्यापार में रुकावट डालने वाले करार
6.2.3 कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले करार
6.2.4 अनिश्चित करार
6.2.5 बाजी के करार
6.2.6 असम्भव कार्य करने के करार
6.2.7 प्रत्यास्थापन
6.3 सांयोगिक अनुबंध
6.3.1 सांयोगिक अनुबंध का अर्थ
6.3.2 सांयोगिक अनुबंध के प्रवर्तन सम्बन्धी नियम
6.3.3 सांयोगिक अनुबंध और बाजी के करार में अंतर
6.4 सारांश
6.5 शब्दावली
6.6 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.7 स्वपरख प्रश्न

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- उन करारों की पहचान और वर्णन कर सकें जो शुरू से ही व्यर्थ हैं या बाद में व्यर्थ हो जाते हैं
- विवाह, व्यापार और कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले करारों की स्थिति समझा सकें
- अनिश्चित करारों का वर्णन कर सकें और यह बता सकें कि ऐसे करार वैध होंगे या नहीं
- बाजी के करारों की परिभाषा कर सकें, उनकी कानूनी स्थिति बता सकें और इन करारों तथा अन्य ऐसे अनुबन्धों में अन्तर बता सकें
- असम्भवता का अनुबंधों पर प्रभाव और उनकी विधिक स्थिति बता सकें।

6.1 प्रस्तावना

आप "व्यर्थ करार" शब्द के बारे में पहले ही पढ़ चुके हैं। इस इकाई में आप उन विभिन्न करारों के बारे में पढ़ेंगे जो विशेष रूप से व्यर्थ घोषित किये गये हैं और उन करारों के बारे में भी पढ़ेंगे जो स्पष्टत: व्यर्थ प्रतीत होते हैं, लेकिन जिन्हें ऐसा नहीं माना जाता। इस इकाई में सांयोगिक अनुबंधों (Contingent Contracts) पर भी विस्तार से विचार किया गया है।

6.2 व्यर्थ करार (Void Agreements)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 2(जी) ने व्यर्थ करार की परिभाषा इस प्रकार दी है — "वह करार जो विधि द्वारा प्रवर्तनीय नहीं है"। कुछ करार आरम्भ से ही व्यर्थ (void–ab–initio) होते हैं, यानि वे जब से किये जाते हैं तभी से व्यर्थ होते हैं। उदाहरणार्थ के

लिये, एक अवयस्क या पागल के साथ किया गया करार शुरू से ही व्यर्थ है। ऐसे करार कभी भी अनुबंध नहीं बनते। हाँ, कुछ करार ऐसे होते हैं जो किये जाते समय तो प्रवर्तनीय होते हैं लेकिन बाद में किन्हीं परिस्थितियों के उत्पन्न होने से या परिस्थितियों में परिवर्तन होने से अप्रवर्तनीय हो जाते हैं। जब ये अप्रवर्तनीय हो जाते हैं तो इन्हें "व्यर्थ अनुबंध" कहते हैं। **क** क्यूबा से भारत आते हुए एक चीनी से भरे जहाज को **ख** को बेचने का करार करता है। भयंकर तूफान के कारण जहाज़ में पानी भर जाता है और सारी चीनी भीग जाती है। **क**, **ख** को यह चीनी स्वीकार करने के लिये यह कहकर मजबूर नहीं कर सकता कि चीनी तो है, केवल उसका रूप बदल गया है। अत: यह अनुबंध व्यर्थ हो गया। इसी प्रकार **ख**, **क** को चीनी देने के लिये बाध्य नहीं कर सकता या उसे हर्जाना देने के लिये बाध्य नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त, कुछ ऐसे करार हैं जो अनुबंध अधिनियम के कुछ प्रावधानों के अंतर्गत या किसी अन्य कानून द्वारा स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित किये गये हैं। भारतीय अनुबंध अधिनियम की विभिन्न धाराओं के अंतर्गत निम्नलिखित करार स्पष्ट रूप से व्यर्थ घोषित किये गये हैं:

1 ऐसे करार जो अनुबंध के लिये असमर्थ व्यक्तियों द्वारा या उनके साथ किये गये हों। (धारा 10 और 11)

2 ऐसे करार जो पक्षकारों के बीच तथ्य संबंधी पारस्परिक गलती के कारण हुए हों (धारा 20)

3 ऐसे करार जिनका प्रतिफल या उद्देश्य अवैधानिक है। (धारा 23)

4 ऐसे करार जिनका प्रतिफल या उद्देश्य आंशिक रूप से अवैधानिक है। (धारा 24)

5 बिना प्रतिफल के किये गये करार। (धारा 25)

6 विवाह में रुकावट डालने वाले क़रार। (धारा 26)

7 व्यापार में रुकावट डालने वाले करार। (धारा 27)

8 कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले करार। (धारा 29)

9 बाजी के करार। (धारा 30)

10 असम्भव करार। (धारा 56)

11 भविष्य में करार करने का करार।

3 से 5 इकाइयों में आप ऊपर की सूची में 1 से 5 मदों में दिये गये करारों के बारे में पढ़ चुके हैं। अब 6 से 11 मदों में दिये गये "व्यर्थ करारों" के बारे में पढ़ेंगे।

6.2.1 विवाह में रुकावट डालने वाले करार (Agreements in Restraint of Marriage)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 26 के अनुसार अवयस्क के अलावा किसी भी व्यक्ति के विवाह में रुकावट डालने वाला प्रत्येक करार व्यर्थ होता है। रुकावट व्यापक या आंशिक हो सकती है। इस प्रकार पक्षकार को शादी कभी भी करने से रोका जा सकता है या एक निश्चित समय के लिये शादी करने से, या एक विशेष व्यक्ति या व्यक्तियों के वर्ग से शादी करने से रोका जा सकता है। उदाहरण के लिये **क** ने केवल **ख** से ही शादी करने का वचन दिया और शादी न करने पर उसे 2,000 रु. देने का वचन दिया। **क** ने किसी और से शादी कर ली और **ख** ने **क** पर 2,000 रु. वसूल करने के लिये दावा कर दिया। यह निर्णय दिया गया कि यह विवाह में रुकावट डालने वाला करार था इसलिये व्यर्थ था। **(लोव बनाम पीयर्स)**। तथापि, पुन: विवाह करने पर दण्ड लगाने को विवाह में रुकावट नहीं माना जा सकता। इस प्रकार एक व्यक्ति की दो विधवाओं में यह करार हुआ कि यदि उनमें से किसी ने पुन: विवाह किया तो वह मृत पति की सम्पत्ति में अपना हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार खो बैठेगी। इस करार को वैध ठहराया गया **(राव रानी बनाम गुलाब रानी)**। इसी प्रकार निकाहनामे (विवाह का करार) के अंतर्गत एक मुस्लिम पति ने अपनी पत्नी को यह अधिकार दिया कि दूसरी शादी करने पर पहली पत्नी उसे छोड़ सकेगी। इस तलाक को वैध ठहराया गया तथा पत्नी को भरण-पोषण पाने का हकदार माना गया **(बदू बनाम बदरुन्निसा)**।

6.2.2 व्यापार में रुकावट डालने वाले करार (Agreements in Restraint of Trade)

व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(जी) द्वारा संरक्षित एक मौलिक अधिकार है। जिस प्रकार विधान मंडल (legislature) व्यापार करने की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को नहीं छीन सकता, उसी प्रकार व्यक्ति भी करार द्वारा इस अधिकार का परित्याग नहीं कर सकते। न्यायाधीश वी. सी. जेम्स के अनुसार "लोकनीति यह अपेक्षा करती है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने लिये काम करने को स्वतंत्र होगा, परन्तु उसे इस बात की स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिए कि वह कोई अनुबंध करके स्वयं को या राष्ट्र को अपनी मेहनत, कुशलता या गुणों के लाभों से वंचित कर दे। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी कुशलता एवं योग्यता स्वयं अपने तथा राष्ट्र के भले के लिए प्रयोग करने की छूट होनी चाहिए।" **इसलिए, न्यायालय एक व्यक्ति की कोई व्यापार या व्यवसाय या पेशा करने की स्वतंत्रता पर पाबंदी लगाने वाली किसी प्रवृत्ति की अनुमति नहीं देता।**

भारत में इस विषय में कानून का प्रावधान धारा 27 में है, जो इस प्रकार है: "**प्रत्येक ऐसा करार जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को कोई वैध पेशा, व्यापार या व्यवसाय करने से रोका जाए तो वह, उस सीमा तक व्यर्थ होता है।**" इस प्रकार व्यापार में रुकावट डालने वाले सभी करार, चाहे वे रुकावट सामान्य हो या आंशिक, शर्तपूर्ण हो या शर्तरहित, व्यर्थ होते हैं।

उदाहरण

1. पटना शहर में कंघों के 30 में से 29 निर्माताओं ने **र** के साथ करार किया कि वे केवल उसे ही कंघे सप्लाई करेंगे, किसी अन्य को नहीं। इस करार के अंतर्गत **र** को यह स्वतंत्रता थी कि माल के न बिकने पर वह उसे अस्वीकार कर सकेगा। निर्णय दिया गया कि यह करार व्यापार में रुकावट डालने वाला था और इसलिये व्यर्थ था। **(शेख कालू बनाम राम सरन भगत)**।
2. एक कम्पनी के कर्मचारी **ज** ने यह करार किया कि वह कम्पनी की नौकरी छोड़ने के बाद मद्रास से 800 किलोमीटर तक उसी प्रकार के व्यापार में नौकरी नहीं करेगा। निर्णय दिया गया कि यह करार व्यर्थ है। **(ओकस एवं कंपनी बनाम जैक्सन)**।
3. **क** और **ख** कलकत्ता में किसी इलाके में अंगीठियों का व्यापार करते थे। **क** ने वचन दिया कि **ख** यदि उसे 900 रु. दे, जो उसने अपने कारीगरों को अग्रिम के रूप में दिये थे, तो वह उस इलाके में व्यापार बंद कर देगा। **क** ने अपना व्यापार बंद कर दिया लेकिन **ख** ने उसे वह राशि नहीं दी। निर्णय दिया गया कि करार व्यर्थ था अतः कुछ भी वसूल नहीं किया जा सकता था। **(माधव बनाम राज कुमार)**

अपवाद

इस नियम के दो प्रकार के अपवाद हैं: (1) संविधि द्वारा निर्मित और (2) धारा 27 की न्यायिक व्याख्या से उत्पन्न होने वाले।

सांविधिक अपवाद: संविधि द्वारा निर्मित अपवाद निम्नलिखित हैं:

1. **ख्याति का विक्रय:** किसी व्यापार की ख्याति (goodwill) का विक्रेता क्रेता से यह समझौता कर सकता है कि वह एक निश्चित स्थानीय क्षेत्र में उस तरह का व्यापार नहीं करेगा। यदि प्रतिबन्ध उचित है तो इस प्रकार की रोक वैध है (धारा 27)। पाबन्दियों का औचित्य कई बातों पर निर्भर करता है जैसे वह क्षेत्र जिसमें ख्याति (goodwill) का प्रभावपूर्ण रूप में फायदा उठाया जाता है, इसके लिये दी गई कीमत और व्यापार की प्रकृति। उदाहरण के लिये, इंग्लैण्ड में एक नकली गहनों के विक्रेता ने अपना व्यापार **ख** को बेच दिया और वचन दिया कि वह दो साल तक i) इंग्लैण्ड में नकली गहनों का व्यापार नहीं करेगा और ii) कुछ देशों में असली गहनों का व्यापार नहीं करेगा। केवल पहले वचन को वैध माना गया। दूसरा वचन व्यापार की प्रकृति और दूरी के विषय में अनुचित पाबन्दी लगाता है इसलिये व्यर्थ है। **(गोल्डसोल बनाम गोल्डमैन)**।
2. **साझेदारी के कुछ प्रतिबन्ध:** साझेदारी अधिनियम के अंतर्गत 4 प्रावधान ऐसे हैं जो व्यापार में रुकावट डालने वाले करारों को वैध मानते हैं। ये करार निम्नलिखित हैं:

   क) एक साझेदार, जब तक वह फर्म में साझेदार है, फर्म के व्यापार के अलावा कोई

अन्य व्यापार नहीं करेगा (भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 की धारा 11(2))

ख) एक साझेदार, साझेदार न रहने पर, वैसा ही व्यापार एक निश्चित अवधि में और निश्चित स्थानीय सीमाओं में नहीं करेगा बशर्ते यह रोक उचित हो (भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 की धारा 36(2))

ग) साझेदार, फर्म की समाप्ति की प्रत्याशा में यह करार कर सकते हैं कि उनमें से कुछ या सभी वैसा ही व्यापार एक निश्चित अवधि और निश्चित स्थानीय क्षेत्र में नहीं करेंगे। ऐसा करार तभी वैध होगा जबकि लगाई गई पाबंदियाँ उचित हों (भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932, की धारा 54)।

घ) फर्म की ख्याति बेचे जाने पर, एक साझेदार यह करार कर सकता है कि वह फर्म द्वारा किये जाने वाले व्यापार जैसा व्यापार एक निश्चित अवधि में और निश्चित क्षेत्र में नहीं करेगा। इस प्रकार का कोई भी करार तब वैध होगा जब ये प्रतिबन्ध उचित हों (भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 की धारा 55(3))।

न्यायिक व्याख्याओं के अंतर्गत अपवाद: भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 27 की न्यायिक व्याख्याओं से उत्पन्न अपवाद निम्नलिखित हैं:

1 **व्यावसायिक संयोजन (Trade Combinations) :** व्यापार का नियमन करने के लिए न कि इसमें रुकावट डालने के लिये, बनाये गये व्यावसायिक संयोजनों को लोकहित में वांछनीय माना गया है। ऐसे संगठनों द्वारा लगाई गई पाबन्दियों को व्यापार में रुकावट के आधार पर व्यर्थ घोषित नहीं किया जाएगा। **हरी भाई बनाम शरीफ** अली के मुकदमें में चार ओटाई करने वाली फैक्ट्रियों ने कपास की ओटाई के एक से दर निश्चित करने और अपनी कमाई को इकट्ठा करके उसे आपस में निश्चित अनुपात में बांटने का करार किया। बम्बई उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि यह करार वैध है और प्रवर्तनीय है। लेकिन सरकार ऐसे प्रतिबन्ध लगाने की अनुमति नहीं देगी जो व्यापार नियमनों में छिपा हो यानि उसकी ओट में लगाया गया हो। इस प्रकार कुछ लोगों के बीच अपनी ही जाति के सदस्यों के साथ व्यापार करने के करार **(वैथलिंगा बनाम समीनादा)** और एक चीनी की मिल के व्यापार को उसको सौंपे गये क्षेत्र तक सीमित करने के करार को व्यर्थ घोषित किया गया। **(केरियू एण्ड कं. बनाम नार्थ बंगाल शुगर मिल्स)**।

2 **एकाकी व्यापार (Exclusive Dealing) के करार:**
एक ही निर्माता की वस्तुओं में व्यापार करने के या अपने सारे उत्पादन को एक ही व्यापारी को बेचने के उचित करार को वैध माना गया है अर्थात् ऐसे करार को व्यापार में रुकावट डालने वाला नहीं माना गया। इस प्रकार निम्नलिखित करार प्रवर्तनीय माने गये हैं:

i) एक धोती के निर्माता द्वारा एक खास किस्म के 1,36,000 जोड़े प्रतिवादी को सप्लाई करने और इस किस्म का माल किसी अन्य व्यक्ति को एक निर्धारित समय तक न बेचने का करार **(कारलाईल्स नैफ्यू एंड कं. बनाम रिक नाथ)।**

ii) एक व्यक्ति द्वारा निर्मित किया गया सारा नमक पांच साल एक फर्म को बेचने का करार। **(मैकेनजी बनाम रामदिया)**

iii) एक व्यक्ति द्वारा उत्पादित सारी अभरक वादी को देने और उसका कोई भाग अपने पास न रखने और किसी अन्य को न बेचने का करार। **(सुभा नायडू बनाम हाजी बादशाह साहिब)**

iv) एक क्रेता द्वारा माल कलकत्ते के मार्किट के लिये खरीदना और उसे मद्रास में न बेचने का करार। तथापि जब एक निर्माता के पास एक क्रेता की सारी माँग पूरी करने के बाद अन्यों को बेचने के लिये माल है तो उसे ऐसा करने से नहीं रोका जा सकता। **(शेख कालू बनाम रामसरन भगत)** इसी प्रकार, यदि एकाकी व्यापार के करार की शर्तें अनुचित हैं या वे अनुचित तरीके से प्रतिस्पर्धा को रोकती हैं तो ये करार वैध नहीं होंगे। **(एस्सो पैट्रोलियम कं. बनाम हारपर गैराज लि.)**

3 **सेवा करार (Service Agreements) :** ऐसा करार जिसके अंतर्गत कोई व्यक्ति करार की समयावधि में किसी अन्य के यहाँ नौकरी न करने के लिये या प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में

अपने स्वामी के प्रतियोगी व्यापार में हिस्सा न लेने, सहायता न करने या बढ़ावा न देने के लिये वचन देता है, वैध है **(चार्ल्सवर्थ बनाम मैकडोनाल्ड)**। उदाहरण के लिये **क** ने एक डॉक्टर **ख** का, जो जंजीबार में व्यवसाय करता था, 3 वर्ष के लिये सहायक बनने के लिये करार किया। यह तय किया गया कि करार की अवधि के दौरान **क** जंजीबार में अपनी प्रैक्टिस नहीं करेगा। एक साल के बाद **क** ने अपनी प्रैक्टिस शुरू कर दी। निर्णय दिया गया कि करार वैध था और **क** को निषेधाज्ञा द्वारा ऐसा करने से रोका जा सकता है।

आजकल प्रशिक्षार्थियों की नियुक्ति करना एक आम रिवाज है। एक सेवा अनुबन्धपत्र पर हस्ताक्षर करा लिये जाते हैं जिसके अंतर्गत प्रशिक्षार्थी संस्था में एक निश्चित अवधि के लिये नौकरी करने का करार करता है। ऐसे करार यदि उचित हैं तो व्यापार में रुकावट डालने वाले नहीं माने जाते हैं और ये प्रवर्तनीय होते हैं।

लेकिन ऐसा करार जो कर्मचारी पर यह प्रतिबन्ध लगाता है कि वह सेवानिवृत्त हो जाने के बाद अपने स्वामी की प्रतिस्पर्धा में व्यापार नहीं करेगा, न्यायालयों द्वारा स्वीकार्य नहीं होगा। इस प्रकार **ब्रह्मपुत्र टी. क. बनाम ई. स्कार्थ** के मुकदमें में, जिसमें एक कर्मचारी को नौकरी खत्म होने पर 5 साल तक प्रतिस्पर्धा करने से रोका गया था, न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया।

बोध प्रश्न क

1 क्या निम्नलिखित करार वैध हैं ?

i) **क** दक्षिणी दिल्ली के अपने व्यापार की ख्याति **ख** को बेचता है और उससे करार करता है कि वह दक्षिणी दिल्ली की सीमा में वैसा ही व्यापार नहीं करेगा।

. . . .

. . . .

ii) **अ** एक नेत्र सर्जन है, उसने **ब** को अपने सहयोगी के रूप में 3 वर्ष के लिये नियुक्त किया। **ब** ने इस अवधि में सर्जन के रूप में स्वतंत्र रूप से कार्य न करने का करार किया।

. . . .

. . . .

iii) हौज खास मार्किट का एक दुकानदार **क** व्यापार में अपने प्रतिद्वंद्वी **ख** को क्षतिपूर्ति के रूप में कुछ पैसा देने का करार करता है, यदि **ख** वहाँ से अपना व्यापार बन्द कर दे।

. . . .

. . . .

2 **न** ने अपना व्यापार और ख्याति एक करार के अंतर्गत बेच दी। करार में प्रावधान था कि वह: (1) 25 साल तक वही व्यापार नहीं करेगा और (2) किसी ऐसे व्यापार में नहीं लगेगा जो उस व्यापार से प्रतिस्पर्धा करता हो या कर सकता हो।

. . . .

. . . .

3 क और **ख** एक ही इलाके में प्रतिद्वंद्वी दुकानदार थे। क ने **ख** को कुछ धनराशि देने का करार किया, यदि **ख** अपना व्यापार उस इलाके में करना बन्द कर दे। **ख** ने ऐसा ही किया लेकिन क ने पैसा देने से इंकार कर दिया। क्या **ख** उस धनराशि का दावा कर सकता है ?

. . . .

. . . .

4 क मद्रास में डॉक्टर है। उसने एक अन्य डॉक्टर ख को 3 वर्ष के लिये 1000 रु. प्रतिमाह पर सहायक के रूप में काम पर नियुक्त किया। क और ख के बीच करार में प्रावधान था कि नौकरी खत्म होने पर ख डॉक्टर की हैसियत से क के दवाखाने के 1 मील की परिधि में 1 साल तक काम नहीं करेगा और यदि ख ने ऐसा किया तो उसे 10,000 रु. निर्धारित हर्जाने के रूप में देने पड़ेंगे। नौकरी खत्म होने के तुरंत बाद ख ने क के दवाखाने के पास अपना काम शुरू कर दिया। यदि क, ख पर मुकदमा करे तो क्या वह 10,000 रु. वसूल करने में सफल होगा ?

....

....

....

6.2.3 कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले करार (Agreements in Restraint of Legal Proceedings)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 28 कानूनी कार्यवाही में निम्नलिखित 2 रुकावटों को व्यर्थ मानती है:

1 **कानूनी कार्यवाही पर प्रतिबन्ध:** ऐसा कोई करार जिसके द्वारा अनुबंध के एक पक्षकार को अनुबंध के अंतर्गत उत्पन्न अधिकारों को किसी सामान्य न्यायालय में प्रवर्तित कराने से रोका जाता है, व्यर्थ होता है। उदाहरण के लिये, एक अनुबंध में यह प्रावधान है कि अनुबंध भंग की स्थिति में कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी। ऐसा प्रावधान व्यर्थ होगा, क्योंकि यह दोनों पक्षों को साधारण न्यायालयों में अनुबंध के अंतर्गत अपने अधिकारों को प्रवर्तित करने से रोकेगा। लेकिन ऐसा अनुबंध अवैध नहीं है जिसमें यह शर्त है कि पक्षों के बीच सभी झगड़े पंच निर्णय के लिये सौंप दिये जाएंगे और उसका निर्णय दोनों पक्षों को अंतिम रूप में स्वीकार्य होगा और उन पर बाध्यकारी होगा। ऐसी शर्त के बावजूद न्यायालयों को यह अधिकार है कि वे पंच के दुराचरण के आधार पर उसके निर्णय को रद्द कर दें।

अनुबंध में दोहरी शर्तें हो सकती हैं कि पक्षों के बीच किसी झगड़े का निपटारा पंच द्वारा होगा और किसी भी पक्ष द्वारा इसके अंतर्गत अपने अधिकारों को न्यायालय में प्रवर्तित करने का अधिकार नहीं होगा। ऐसी शर्तों का पहला भाग वैध होगा (यानि पक्षों के बीच सभी झगड़े पंच निर्णय के लिये सौंप दिये जाने चाहिये) क्योंकि इस शर्त द्वारा अपने आपसे न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र को समाप्त नहीं किया जा रहा है। लेकिन अगली शर्त, यानि किसी भी पक्ष को अपने अधिकारों को न्यायालयों में प्रवर्तित कराने का अधिकार नहीं होगा, व्यर्थ है क्योंकि यह शर्त न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र को अवश्य ही अपवर्जित कर देती है। इसके अलावा यह ध्यान रखना चाहिये कि दावा करने के अधिकार पर पाबन्दी इस अर्थ में पूर्ण होनी चाहिये कि सभी पक्ष साधारण अधिकरणों (tribunals) में कानूनी उपचार प्राप्त करने से प्रतिबन्धित कर दिये जाएँ। इस तरह, जहाँ दो न्यायालय हैं और मुकदमा दोनों के अधिकार क्षेत्र में आता है, तो पक्षों के बीच यह करार कि मुकदमा उनमें से केवल एक न्यायालय में दाखिल किया जाएगा दूसरे में नहीं, धारा 28 के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं करता (मिल्टन एंड कं. बनाम ओझा आटोमोबाईल कं.)।

2 **समय को परिसीमित करना:** एक अन्य प्रकार का करार जिसे धारा 28 ने व्यर्थ बना दिया वह है जहाँ पक्षकारों द्वारा उस समय को सीमित करने का प्रयास किया जाता है जिसमें कार्यवाही की जा सके, ताकि इसे परिसीमा कानून द्वारा नियत समय से कम किया जा सके। उदाहरण के लिए भारतीय परिसीमा अधिनियम के अनुसार अनुबंध भंग होने पर भंग होने की तिथि से 3 साल के भीतर कार्यवाही की जा सकती है। यदि करार में कोई ऐसी धारा है जिसके अनुसार 2 वर्ष बाद कोई कार्यवाही नहीं की जा सके, तो वह धारा व्यर्थ है।

जीवन बीमा की पॉलिसी की एक धारा जो यह घोषित करती है कि "इस पॉलिसी के अंतर्गत वसूली का कोई दावा बीमाकृत की मृत्यु के एक वर्ष बाद नहीं किया जाएगा", व्यर्थ घोषित की गई। ऊपर बताए गये मामलों में और ऐसे मामलों में भेद किया जाता है जिसमें एक

अनुबंध समय में कार्यवाही न करने पर अधिकारों के जब्त होने और त्यागने का प्रावधान है। जीवन बीमा पॉलिसी की एक धारा के अनुसार "यदि दावा किया जाता है और वह अस्वीकार कर दिया जाता है तो ऐसी अस्वीकृति के 3 महीने के भीतर दावा या कार्यवाही आरम्भ न करने पर इस पॉलिसी के अन्तर्गत मिलने वाले सभी लाभ जब्त हो जाएँगे। यह धारा वैध ठहराई गई।

6.2.4 अनिश्चित करार (Uncertain Agreements)

कोई करार अनिश्चित करार तब कहलाता है जब उस करार का अर्थ निश्चित नहीं हो या निश्चित किए जा सकने के योग्य नहीं हो। ऐसे करार धारा 29 के अंतर्गत व्यर्थ घोषित किये गये हैं।

उदाहरण

1 **क, ख** को 100 टन तेल बेचने का करार करता है। यह करार अनिश्चितता के कारण व्यर्थ है क्योंकि इस करार में यह स्पष्ट नहीं है कि किस किस्म का तेल बेचने का इरादा था।

2 **क** ने **ख** को "अपना सफेद घोड़ा 5,000 रु. या 10,000 रु. में बेचने का करार किया। इसमें यह स्पष्ट नहीं है कि दोनों कीमतों में से कौन सी दी जानी थी, इसलिए करार व्यर्थ है।"

गूथिंग बनाम लिन के मुकदमें में एक घोड़ा एक निश्चित मूल्य पर इस शर्त पर खरीदा गया कि यदि घोड़ा भाग्यशाली सिद्ध हुआ तो 5 पौंड और दिये जाएंगे। अनिश्चितता के कारण यह करार व्यर्थ घोषित किया गया। न्यायालय के पास ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी जिससे यह निर्धारित किया जा सके कि क्रेता के लिये घोड़ा भाग्यशाली सिद्ध हुआ या नहीं। अनिश्चित करारों के मामले साधारणतया वस्तुओं के ऐसे विक्रय से उत्पन्न होते हैं जिनमें कीमत संबंधी अनिश्चितता होती है। उदाहरण के लिये जब माल बेचा जाता है और मूल्य किराया खरीद (hire–purchase) की शर्तों के अधीन देय है **(स्केमैल बनाम कस्टन)** या ऐसे मूल्य पर बेचा जाता है जो पक्षों के बीच तय होनी चाहिये, **(मे. एंड बूचर बनाम दी किंग)** तब इनमें से प्रत्येक मामले में करार मूल्य की अनिश्चितता के कारण व्यर्थ माना गया। यहाँ यह ध्यान रखें कि जहाँ मूल्य किसी तीसरे पक्ष द्वारा निर्धारित करने के लिये छोड़ दिया जाता है, वहाँ कोई अनिश्चितता नहीं होती और करार प्रवर्तनीय होता है। उदाहरण के लिए **क, ख** को 1,000 किलो ग्राम चावल उस मूल्य पर बेचने का करार करता है जो **ग** निश्चित करेगा, इसमें कोई अनिश्चितता नहीं है क्योंकि मूल्य निश्चित किया जा सकता है। इसलिए ये करार व्यर्थ नहीं है। इसी प्रकार, यदि करार मूल्य के बारे में पूर्णतया खामोश है तो ऐसा करार वैध होगा क्योंकि ऐसी स्थिति में वस्तु-विक्रय अधिनियम की धारा 2 लागू होगी और उचित मूल्य देय होगा।

कुछ अन्य उदाहरण जहाँ अनिश्चितता के कारण करारों को व्यर्थ घोषित किया गया।

1 पट्टा देने का ऐसा करार जिसमें इसके शुरू होने की कोई तिथि स्पष्ट या निहित ढंग से निश्चित नहीं की गई। **(गिरीबाला दासी बनाम कालीदास भंगा)**। लेकिन जब पट्टे की शुरूआत किसी संयोग पर, जो घटित हो चुका है, निर्भर है तो करार व्यर्थ नहीं है **(सितलानी बनाम वीरूसिंग)**।

2 एक निश्चित राशि में से पक्षकारों द्वारा आपस में तय की गई राशि को घटाकर भुगतान करने का करार **(कल्पना देवार बनाम कृष्णा मित्तर)**।

3 मोल तोल करने के करार **(कर्टने और फेयरबेएन लि. बनाम तोलानी ब्रा. (होटल्स लि.)**।

4 एक प्रतिवादी ने एक दस्तावेज आगरा सेविंग्ज बैंक को दिया जिसके मुताबिक उसने बैंक के मैनेजर को एक निश्चित तारीख पर या उससे पहले 10 रु. देने का और यही राशि आगे के महीनों में प्रति माह देने का वचन दिया। यह निर्णय दिया गया कि इस दस्तावेज को प्रतिज्ञा-पत्र नहीं माना जा सकता क्योंकि इसकी भाषा से यह पता लगाना असंभव है कि इसके अन्तर्गत कितना पैसा देना था और यह किस अवधि तक जारी रहना था। **(कारटर बनाम दी आगरा सेविंग्ज बैंक)**

ुछ ऐसे मामले जिनमें करार को अनिश्चित नहीं माना गया:

क जो केवल नारियल के तेल का व्यापार करता है **ख** को 100 टन तेल बेचने का करार करता है। **क** के व्यापार की प्रकृति शब्दों के अर्थ को दर्शाती है और **क** ने 100 टन नारियल का तेल बेचने का अनुबंध किया है।

क, ख के साथ रामनगर के अपने अन्न भंडार का सारा अनाज बेचने का करार करता है। यहाँ कोई अनिश्चितता नहीं है जो करार को व्यर्थ बना दे।

क, ख को 100 टन नारियल का तेल **ग** द्वारा निर्धारित किए गये मूल्य पर बेचने का करार करता है क्योंकि मूल्य निश्चित किया जा सकता है इसलिये यहाँ कोई अनिश्चितता नहीं है जो करार को व्यर्थ बना दे।

.2.5 बाजी के करार (Wagering Agreements)

ारतीय अनुबंध अधिनियम ने बाजी की कोई परिभाषा नहीं दी है। सर विलियम एनसन के ुनुसार बाजी का करार ऐसा करार है जिसमें किसी अनिश्चित घटना के घटित होने या ाश्चित होने पर कुछ धन या माल देने का वचन दिया जाता है। सी. जे. काकबर्न ने इसकी रिभाषा इस प्रकार दी है "क द्वारा ख को एक घटना के घटित होने पर पैसा देने का अनुबंध ासका प्रतिफल घटना के घटित न होने पर ख द्वारा क को पैसा देने का वचन है।" इस कार बाजी का करार एक ऐसा करार है जिसके अन्तर्गत धन या माल, भविष्य में किसी निश्चित घटना के घटित होने या न होने पर एक व्यक्ति द्वारा दूसरे को देय है। उदाहरण के ाये, क और ख ने इस बात पर शर्त लगाई कि एक खास दिन वर्षा होगी या नहीं। वर्षा होने ा क ने ख को 100 रु. देने का वचन दिया तथा यदि वर्षा न हो तो ख, क को उतनी ही ाशि देगा। यह बाजी का करार है।

ाजी के करार के आवश्यक तत्व: बाज़ी के करार के उपर्युक्त विवरण के आधार पर ाम्नलिखित लक्षण प्रकट होते हैं:

अनिश्चित घटना: बाजी के लिये पहली आवश्यक बात यह है कि वचन का निष्पादन अनिश्चित घटना के निर्धारण पर निर्भर होना चाहिए। एक घटना इसलिये अनिश्चित हो सकती है क्योंकि यह अभी घटित नहीं हुई है या इसलिये कि यह घटित तो हो चुकी है लेकिन पक्षकारों को इसका परिणाम ज्ञात नहीं है।

प्रत्येक पक्ष को हार या जीत के समान अवसर: दूसरा आवश्यक लक्षण यह है कि अपेक्षित घटना के निर्धारण पर प्रत्येक पक्ष जीत या हार सकता है। यदि दोनों पक्षों में से कोई एक जीत तो सकता है लेकिन हार नहीं सकता तो यह बाजी का करार नहीं होगा।

घटना पर किसी भी पक्ष का नियंत्रण नहीं: घटना का एक तरह या दूसरी तरह घटित होना दोनों में से किसी भी पक्ष के नियंत्रण में नहीं होना चाहिए। यदि घटना का होना किसी एक व्यक्ति के पक्ष के अपने हाथ में है तो इस सौदे में बाजी के एक आवश्यक तत्व की कमी होती है।

घटना में कोई अन्य स्वार्थ नहीं: घटना के घटित होने में, जीतने या हारने वाले पक्षकारों का धन या वस्तु के अतिरिक्त कोई अन्य स्वार्थ या हित नहीं होना चाहिए।

धन या माल देने का वचन: अन्त में बाजी के करार के लिये यह जरूरी है कि वचन धन या धन के बदले माल देने का होना चाहिये।

ाजी के करार का प्रभाव: बाजी का करार व्यर्थ होता है। धारा 30 के अनुसार, बाजी के ारार व्यर्थ होते हैं तथा बाजी में जीती गई राशि वसूल करने के लिए कोई मुकदमा ाायालय में दायर नहीं किया जा सकता तथा यदि दाँव पर लगाई गई रकम या वस्तु किसी सरे व्यक्ति के पास जमा कर दी गई है तब भी उसे वसूल करने के लिए न्यायालय में दावा ायर नहीं किया जा सकता। इस प्रकार भारत में जब तक बाजी लाटरी न बन जाए (यह रतीय दंड संहिता की धारा 294-ए के अनुसार जुर्म है), यह गैर कानूनी नहीं है, केवल व्यर्थ । उदाहरण के लिये **क, ख** से 500 रु. **ग** को देने के लिए उधार लेता है। **क, ग** से शर्त ा गया था। **क** और **ख** के बीच करार वैध है। महाराष्ट्र और गुजरात में इन्हें गैरकानूनी ाषित किया गया है।

लॉटरी (Lottery)

लॉटरी के टिकट खरीदने वालों के बीच, संयोग द्वारा वितरण की व्यवस्था है। इसमें भाग लेने वालों का प्रमुख उद्देश्य जुएबाजी होना जरूरी नहीं है परंतु जहाँ बाजी का सौदा लॉटरी के बराबर है, यह गैरकानूनी है और भारतीय दंड संहिता की धारा 294-ए के अन्तर्गत आता है। इस धारा के अनुसार: "ऐसा कोई भी व्यक्ति, जो सरकार से अनुमति प्राप्त किए बिना, लॉटरी के व्यापार के संचालन के लिए कोई कार्यालय या स्थान रखता है, उसे छः माह की कैद या जुर्माना या दोनों हो सकते हैं। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति यह प्रस्ताव प्रकाशित करता है कि वह किसी सांयोगिक घटना पर या टिकटों में से कोई नम्बर निकलने पर धन देगा या वस्तुएँ देगा या जीतने वाले व्यक्ति के हित के लिए कोई कार्य करेगा या करने से विरत रहेगा, तो ऐसे व्यक्ति पर एक हजार रुपये तक का जुर्माना किया जा सकता है।

यूनीवर्सल म्यूच्यूअल ऐंड पूअर हाउसेज एसोसियेशन बनाम थोप्पा नायडू के मुकदमे में परोपकारी उद्देश्यों के लिये एक दान कोष बनाने हेतु मासिक चन्दा इकट्ठा किया जाता था। इस प्रकार एकत्रित कोष पर मिलने वाले ब्याज की राशि के एक बड़े भाग का उपयोग बिना ब्याज उधार और कुछ अभिदान कर्त्ताओं, जिनके नाम व राशि लॉटरी द्वारा निर्धारित होती थी, को नकद बोनस देकर किया जाता था। न्यायालय ने निर्णय दिया कि कम्पनी द्वारा किया जाने वाला व्यापार लॉटरी है और इसलिये गैर कानूनी है हालाँकि लॉटरी से जुड़ा कार्य लोकोपकारी और धमार्थ भी था। इसलिये कम्पनी को समापन का आदेश दिया गया।

एक साइकिल व ग्रामोफोन के व्यापारी ने चिट शुरू की जिसके 100 सदस्य बने और प्रत्येक सदस्य को 3 रु. प्रतिमाह की दर से 20 माह तक चन्दा देना था। प्रति माह एक लॉटरी निकाली जाती थी और जिस ग्राहक का भी नाम या नम्बर निकलता था उसे उसकी इच्छा पर एक साइकिल या एक ग्रामोफोन दिया जाता था और उसे आगे और चन्दा नहीं देना था। 21वें महीने में प्रत्येक उस ग्राहक को जिसका किसी भी ड्रा में नाम या नम्बर नहीं निकला था एक साइकिल या ग्रामोफोन दिया गया। यह निर्णय दिया गया कि यह सौदा लॉटरी के समान था और इसलिये गैरकानूनी था। **(पब्लिक प्रोसीक्यूटर बनाम एम. नायडू)**

क्या सरकार द्वारा लॉटरी के संचालन की अनुमति इसे कानूनी बनाती है ? सर दोराबजी बनाम एडवर्ड एफ. लान्स के मुकदमें में, जहाँ सरकार ने बार लोन लॉटरी नामक एक लॉटरी की स्वीकृति दी थी, वादी ने एक खास नम्बर वाले टिकट को खरीदने के अनुबन्ध पर और टर्फ क्लब के सचिव को ड्रा करने से रोकने हेतु निषेधाज्ञा के लिये दावा किया। प्रतिवाद यह था कि इसके बाजी अनुबंध होने के कारण दावा नहीं चलाया जा सकता। न्यायालय ने निर्णय दिया कि सरकार द्वारा अनुमति देने से भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 30 की अवहेलना नहीं हो सकती और इससे लाटरी भी कानूनी नहीं बन सकती। सरकार की अनुमति का प्रभाव केवल यही है कि लॉटरी का संचालन करने वाले व्यक्ति को भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत दण्डनीय नहीं किया जाएगा।

क्या लॉटरी का टिकट खरीदना जुर्म है ?

लॉटरी टिकट खरीदना जुर्म नहीं है। भारत दंड संहिता की धारा 294-ए लॉटरियों के प्रोत्साहकों के लिये है। **(बार्कले बनाम पियरसन)**। हाल ही के एक निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि लॉटरी के टिकट की बिक्री क्रेता को दो अधिकार प्रदान करती है: (क) ड्रा में भाग लेने का अधिकार और (ख) ड्रा में सफल होने पर इनाम का दावा करने का अधिकार **(एच. अनराज बनाम तमिलनाडु सरकार)**। इस प्रकार उच्चतम न्यायालय ने लॉटरी टिकट के क्रेता के अधिकारों को मान्यता देकर इस विषय पर पहले के दृष्टिकोण को उलट दिया। यह कहा जा सकता है कि **सर दोराबजी टाटा बनाम एडवर्ड एफ. लान्स** के केस में लाटरी को गैर कानूनी ठहराया गया था, अब स्थिति यह है कि यदि लाटरी सरकार द्वारा अधिकृत है तो यह गैर कानूनी नहीं है। इसके परिणामस्वरूप सहवर्ती (collateral) सौदे भी अब प्रवर्तनीय होते हैं। इस प्रकार जब क, ख को लॉटरी के टिकट खरीदने के लिए 2,000 रु. उधार देता है, क, इस राशि को वसूल कर सकता है।

बाजी के करारों के अपवाद (सौदे जो बाजी नहीं कहे जाते)

निम्नलिखित सौदों को बाजी नहीं कहा गया:

1. स्टाक व शेयरों का क्रय-विक्रय या वस्तुओं का विक्रय व सपुर्दगी जिसमें शेयरों या

वस्तुओं की सुपुर्दगी देने व लेने की स्पष्ट इच्छा है। यह ध्यान रखिए कि यदि इच्छा केवल कीमत के अन्तर को निबटाने की है तो सौदा बाजी का है और व्यर्थ है।

2 इनाम प्रतियोगिताएँ जो बुद्धि के खेल हैं, उदाहरण के लिये चित्र पहेली, खेल-कूद प्रतियोगिताएँ आदि। एक कुश्ती प्रतियोगिता में जिसमें विजेता को टिकटों की बिक्री से प्राप्त समस्त राशि इनाम में मिलनी थी, हिस्सा लेने का करार एक बाजी का करार नहीं माना गया **(बाबा साहेब बनाम राजा राम)**। एक वर्ग पहेली प्रतियोगिता जिसमें इनाम प्रतियोगी के हल के अखबार के सम्पादक के पास रखे हुए हल से मिलने पर निर्भर करता है, एक लॉटरी है और इसलिये यह बाजी का व्यवहार है। इनाम प्रतियोगिता अधिनियम 1955 के अनुसार बुद्धि वाली इनाम प्रतियोगिता बाजी नहीं है बशर्ते कि इनाम की राशि 1000 रु. से अधिक न हो।

3 घुड़दौड़ में जीतने वालों को 500 रुपये या अधिक का इनाम देने के लिए चंदा या अंशदान देने के करार को बाजी नहीं माना जाता है और वे वैध होते हैं (धारा 30)।

4 बीमा अनुबंध बाजी का करार नहीं है। यद्यपि बीमा अनुबंध में बीमा कर्ता किसी भावी अनिश्चित घटना के निश्चित हो जाने पर धनराशि देने का वचन देता है, फिर भी इन्हें वैध अनुबंध माना जाता है। बीमा अनुबंधों और बाजी के करारों में निम्नलिखित मुख्य अंतर हैं:

   i) केवल वही व्यक्ति जीवन या सम्पत्ति का बीमा करा सकता है जिसका उस व्यक्ति के जीवन या सम्पत्ति में बीमा योग्य हित होता है, कोई अन्य व्यक्ति नहीं जैसा कि बाजी में होता है।

   ii) अग्नि या समुद्री बीमा में बीमा कम्पनी द्वारा पक्षकार को उसके द्वारा उठाई गई वास्तविक हानि ही दी जाती है, वह पूरी राशि नहीं जितने का बीमा कराया गया है। बीमाकृत की मृत्यु के कारण हुई हानि का अनुमान लगाने में कठिनाई के कारण जीवन बीमा में देय राशि निश्चित होती है लेकिन इसके पीछे मुख्य विचार केवल क्षतिपूर्ति है।

   iii) बीमा अनुबंध जनता के लिये हितकारी समझे जाते हैं और इसलिये इन्हें प्रोत्साहित किया जाता है। दूसरी ओर, बाजी के अनुबंध लोकहित के विरुद्ध समझे जाते हैं।

6.2.6 असम्भव कार्य करने के करार (Agreements to do Impossible Acts)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 56 के अनुसार ऐसा कार्य करने का करार जो स्वयं में असम्भव है, व्यर्थ है। इस तरह **क**, **ख** के साथ जादू द्वारा ख़जाना ढूंढ़ने के लिये करार करता है, यह करार व्यर्थ है। हम यह कह सकते हैं कि वे पक्षकार जो असम्भव कार्य करने के लिए करार करते हैं तो यह समझना चाहिये कि या तो वे गम्भीर नहीं है या वे यह नहीं समझते कि वे क्या कर रहे हैं। इसके अलावा, कानून ऐसे किसी वचन का कोई मूल्य नहीं समझता जो स्पष्टतया किसी असंभव कार्य को करने के लिये दिया गया हो और इसलिये इस प्रकार का वचन प्रतिफल नहीं है।

एक स्वयं में असम्भव कार्य करने के करार और एक ऐसा अनुबंध जो निष्पादन के लिये असम्भव बन जाता है, में अन्तर करना चाहिये। बाद की असम्भवता अनुबंध को उस समय व्यर्थ बना देती है जब वह कार्य असम्भव हो जाता है। बाद की असम्भवता पर विस्तृत विवरण और इसके प्रभाव पर इकाई 7 में विचार किया जाएगा।

6.2.7 प्रत्यास्थापन (Restitution)

प्रत्यास्थापन का अर्थ है "वापस देना" या "मूल अवस्था में लाना"। जब एक करार या अनुबंध व्यर्थ हो जाता है तो जिस व्यक्ति ने ऐसे करार या अनुबंध के अन्तर्गत कोई लाभ प्राप्त किया है उसे उस व्यक्ति को वापस देना पड़ेगा या क्षतिपूर्ति करनी होगी जिससे ये प्राप्त किया गया था। (धारा 65) उदाहरण:

क, **ख** को 1,000 रु. देता है जिसका प्रतिफल **ख** का **क** की बेटी **ग** से शादी करने का वचन है। वचन के समय **ग** की मृत्यु हो चुकी थी। यह करार व्यर्थ है। **ख** को **क** को 1,000 रु. वापस करने होंगे।

2 क ने ख को 250 क्विंटल चावल 1 मई से पहले देने का अनुबंध किया। क ने इस तारीख से पहले केवल 130 क्विंटल चावल दिया और इसके बाद कुछ नहीं दिया। ख ने 1 मई के बाद भी 130 क्विंटल चावल अपने पास रखा। ख 130 क्विंटल चावल का मूल्य भुगतान करने के लिए बाध्य है।

3 एक गायिका. क थियेटर के मैनेजर ख के साथ उसके थियेटर में अगले दो माह तक सप्ताह में दो बार गाने का अनुबंध करती है और ख उसे प्रति रात गाने के लिए 100 रु. देने को राजी हुआ। छठी रात को क जानबूझकर थियेटर से अनुपस्थित हो गई और फलस्वरूप ख ने अनुबंध रद्द कर दिया। ख उन 5 रातों के लिए भुगतान करने के लिए बाध्य है जिनमें उसने गाना गाया था।

4 उपर्युक्त उदाहरण में यदि क को 1,000 रु. अग्रिम राशि प्राप्त होती है और वह बीमारी के कारण गाना गाने में असमर्थ हो जाती है तो क को अग्रिम राशि वापिस करनी पड़ेगी। ख. क पर उस हानि का दावा नहीं कर सकता जो उसे क की बीमारी के कारण उठानी पड़ी है।

यहाँ यह ध्यान रहे कि प्रत्यास्थापन का नियम केवल उन अनुबंधों पर लागू होता है जो किसी घटना के कारण जिसे वचनदाता रोक नहीं सकता या बाद की असम्भवता के कारण. व्यर्थ हुए हों। प्रत्यास्थापन का नियम उन अनुबंधों पर लागू नहीं होता जो शुरू से ही व्यर्थ हैं. इसका केवल एक अपवाद यह है कि जब अवयस्क अपनी आयु गलत बता कर करार करता है।

6.3 सांयोगिक अनुबंध (Contingent Contracts)

6.3.1 सांयोगिक अनुबंध का अर्थ

सांयोगिक अनुबंध किसी कार्य को करने या न करने का एक ऐसा अनुबंध है जिसका निष्पादन उस अनुबंध की समपार्श्विक किसी घटना के घटित होने या न होने पर निर्भर करता है (धारा 31)। उदाहरण के लिये. क, ख को ख का मकान जल जाने पर 10,000 रु. देने का अनुबन्ध करता है। यह एक सांयोगिक अनुबंध है।

एक सांयोगिक अनुबंध के आवश्यक लक्षण निम्नलिखित हैं:

1 एक सांयोगिक अनुबंध का निष्पादन किसी भावी निश्चित घटना के घटित होने या न होने पर निर्भर करता है।

2 वह घटना, जिस पर निष्पादन निर्भर कर दिया जाता है, ऐसी है जो अनुबंध की समपार्श्विक घटना होती है यानि ये अनुबंध के पारस्परिक वचनों का हिस्सा नहीं है। उदाहरण के लिए क, ख को 100 बोरी गेहूँ देने का करार करता है और ख बाद में मूल्य चुकाने का करार करता है। यह अनुबंध शर्तपूर्ण अनुबंध हैं, सांयोगिक अनुबंध नहीं क्योंकि वह घटना जिस पर ख का दायित्व निर्भर करता है, वचन का ही एक भाग है और एक समपार्श्विक घटना नहीं। इसी प्रकार जब क, ख को ग से विवाह करने पर 10,000 रु. देने का वचन देता है, तो यह सांयोगिक अनुबंध नहीं है।

3 सांयोगिक घटना वचनदाता की केवल इच्छा नहीं होनी चाहिए। उदाहरण के लिये, यदि क, ख को 1,000 रु. देने का वचन देता है यदि क ऐसा चाहे तो। यह सांयोगिक अनुबंध नहीं है। तथापि, यदि घटना वचनदाता की केवल इच्छा मात्र नहीं है बल्कि इसकी इच्छा में है, तब यह सांयोगिक अनुबंध हो सकता है। उदाहरण के लिये यदि क, ख को 1,000 रु. देने का वचन देता है, यदि क दिल्ली से बम्बई चला जाए। यह सांयोगिक अनुबंध है क्योंकि बम्बई जाना क की केवल इच्छा नहीं है बल्कि एक घटना है जो क की इच्छा में शामिल है।

6.3.2 सांयोगिक अनुबंधों के प्रवर्तन सम्बन्धी नियम

सांयोगिक अनुबंधों के नियमों का सारांश नीचे दिया गया है (धारा 32 से धारा 36)

1 ऐसे अनुबंध, जो भविष्य में किसी अनिश्चित घटना के घटित होने पर आश्रित हैं उन्हें

तब तक प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता जब तक कि यह घटना घटित न हो जाए। और यदि उक्त घटना का घटित होना असम्भव हो जाता है तो ऐसा अनुबंध व्यर्थ हो जाता है। (धारा 32)

दाहरण

1 क, **ख** से उसका घोडा खरादन का अनुबंध करता है यदि **ग**. क से पहले मर जाए। इस अनुबंध को तब तक प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता जब तक **क** के जीवनकाल में **ग** की मृत्यु न हो जाए।

2 क, **ख** को कुछ रुपया देने का अनुबंध करता है, यदि **ख**, **ग** से शादी करे। **ख** से शादी होने से पहले ही **ग** की मृत्यु हो जाती है। यह अनुबंध व्यर्थ हो गया।

ऐसे सांयोगिक अनुबंध जो किसी भावी अनिश्चित घटना के घटित न होने पर निर्भर हैं उस समय प्रवर्तित कराए जा सकते हैं जब उस घटना का घटित होना असम्भव हो जाए उससे पहले नहीं (धारा 33)। उदाहरण के लिए **क** एक विशिष्ट जहाज के वापस न लौटने की स्थिति में **ख** को कुछ रुपया देने का वचन देता है। जहाज डूब जाता है। जहाज के डूबने पर अनुबंध को प्रवर्तित कराया जा सकता है।

यदि अनुबंध किसी व्यक्ति द्वारा किसी अनिर्दिष्ट समय पर किये जाने वाले कार्य पर निर्भर है, तो ऐसी घटना का घटित होना उस समय असम्भव मान लिया जाएगा जब वह व्यक्ति कोई ऐसा कार्य करता है जिसके फलस्वरूप उसके लिये, किसी निश्चित अवधि के भीतर, वह कार्य करना असम्भव हो जाए (धारा 34)। उदाहरण के लिए. क. **ख** को **ग** से शादी करने पर कुछ रुपया देने का करार करता है। लेकिन **ग**, **घ** से शादी करती है। अब **ख** की **ग** से शादी होनी असम्भव है। यद्यपि यह सम्भव है कि **घ** की मृत्यु हो जाए और बाद में **ग**. **ख** से शादी कर ले।

ऐसे सांयोगिक अनुबंध जो किसी अनिश्चित निर्दिष्ट घटना के निश्चित अवधि के भीतर घटित होने पर निर्भर हैं उस समय व्यर्थ हो जाते हैं जब उस निश्चित अवधि के पूरा होने पर ऐसी घटना घटित न हों या उस निश्चित अवधि से पूर्व ही उस घटना का घटित होना असम्भव हो गया हो (धारा 35)। उदाहरण के लिए क. **ख** को एक निश्चित जहाज के एक वर्ष के भीतर लौटने पर कुछ राशि देने का वचन देता है। यदि जहाज एक साल में लौट आता है तो इस अनुबंध को प्रवर्तित कराया जा सकता है और यदि जहाज एक वर्ष के भीतर जल जाता है, तो यह अनुबंध व्यर्थ हो जाता है।

ऐसे सांयोगिक अनुबंध जो किसी निर्दिष्ट घटना के एक निश्चित समय में घटित न होने पर निर्भर हैं, उस समय प्रवर्तित कराए जा सकते हैं जब निश्चित अवधि समाप्त हो जाती है और वह घटना घटित नहीं होती या निश्चित अवधि के व्यतीत होने से पहले ही यह निश्चित हो जाता है कि वह घटित नहीं होगी (धारा 35)। उदाहरण के लिये, **क** एक निर्दिष्ट जहाज के एक वर्ष के भीतर न लौटने पर **ख** को कुछ रुपया देने का वचन देता है। यदि जहाज एक वर्ष तक वापस नहीं आता या एक वर्ष में जल जाता है तो यह अनुबंध प्रवर्तित कराया जा सकता है।

ऐसे सांयोगिक अनुबंध, जो किसी असंभव घटना के घटित होने पर किसी कार्य के करने या न करने के लिये हैं, व्यर्थ होते हैं, चाहे करार के पक्षकारों को करार करते समय घटना की असंभवता की जानकारी थी या नहीं।

उदाहरण

i) क, **ख** को 1,000 देने का करार करता है यदि दो समानान्तर रेखाएँ किसी स्थान को घेर दें। यह करार व्यर्थ है।

ii) क, **ख** को 1,000 देने का वचन देता है यदि **ख**, क की लड़की **ग** से शादी कर ले। इस करार के किए जाने के समय **ग** मर चुकी थी। यह करार व्यर्थ है।

3.3 सांयोगिक अनुबंध और बाजी के करार में अन्तर

बाजी के करार में पारस्परिक वचन होते हैं जब कि सांयोगिक अनुबंध में पारस्परिक वचनों का होना जरूरी नहीं है।

2 बाजी का करार एक सांयोगिक प्रकृति का है जबकि सांयोगिक अनुबंध बाजी की प्रकृति का नहीं भी हो सकता है।

3 बाजी का करार व्यर्थ होता है जबकि सांयोगिक अनुबंध वैध होता है।

4 बाजी के करार में पक्षों का विषय वस्तु में बाजी की रकम हारने या जीतने के अलावा अन्य कोई स्वार्थ नहीं होता जबकि सांयोगिक अनुबंध में ऐसा नहीं है।

5 बाजी के करार में भविष्य की घटना एक मात्र निर्धारक कारक होती है जब कि सांयोगिक अनुबंध में भविष्य की घटना केवल समपार्श्विक होती है।

बोध प्रश्न ख

1 क्या निम्नलिखित अनुबंध वैध और कानून द्वारा प्रवर्तनीय हैं ?

i) **क**, **ख** को 10,000 रु. देने का अनुबंध करता है यदि **ख** का मकान जल जाए।

. . . .

. . . .

ii) **क**, **ख** के साथ **ख** का घोड़ा खरीदने का अनुबंध करता है यदि **ग**, **क** से पहले मर जाए ।

. . . .

. . . .

iii) **क**, **ख** को 10,000 रु. देने का वचन देता है यदि **ख** दो समानान्तर रेखाओं को मिला दे।

. . . .

. . . .

2 **म**. घुड़ दौड़ की शर्त में एल. एंड क. से 8,500 रु. हार गया और उसके पैसा न देने पर घुड़दौड़ कराने वाली क्लब को सूचित किया गया। बाद में **म** ने एल एंड क. के पक्ष में 8,500 की हुण्डी लिख दी जिससे कि उसका नाम क्लब से न हटा दिया जाए और वह चूककर्ता (defaulter) की सूची में न आ जाए। जब एल एंड क. ने भुगतान मांगा तो **म** ने कहा कि प्रतिफल अवैध है। फैसला दीजिये।

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

6.4 सारांश

व्यर्थ करार ऐसे करार होते हैं जो कानून द्वारा प्रवर्तनीय नहीं कराए जा सकते। ऐसे करार विवाह में रुकावट डालने वाले, व्यापार में रुकावट डालने वाले, कानूनी कार्यवाही में रुकावट डालने वाले, अनिश्चित अर्थ वाले और बाजी के करार होते हैं। ऊपर बताए गये सभी मामलों में कुछ अपवादिक परिस्थितियों को छोड़कर करार का कोई कानूनी प्रभाव नहीं होता।

बाजी का करार एक निर्दिष्ट अनिश्चित घटना के घटित होने या घटित न होने पर धन या उस मूल्य का माल देने का करार है। भारत में बाजी के करार व्यर्थ हैं। परन्तु महाराष्ट्र और गुजरात में ये गैर कानूनी हैं।

सांयोगिक अनुबंध एक प्रकार के शर्त सहित अनुबंध हैं। यह किसी कार्य को करने या न करने का अनुबंध है , यदि कोई घटना जो इस अनुबंध के लिये समपार्श्विक है, घटित हो या न घटित हो। सांयोगिक अनुबंधों की मुख्य विशेषताएँ यह हैं कि इनका निष्पादन भविष्य में

कसी निश्चत घटना के घटित होने या न घटित होने पर निर्भर करता है और ऐसी घटना ग्रनिश्चित तथा अनुबंध के लिये समपार्श्विक होनी चाहिये।

).5 शब्दावली

ोकनीति के विरुद्ध (Opposed to Public Policy): जनता के सामान्य हितों के विरुद्ध।

ामपार्श्विक व्यवहार (Collateral Transactions): वह व्यवहार जो मुख्य व्यवहार का ाहायक व्यवहार है।

ेकान्तिक व्यापार के करार (Exclusive Dealing Agreement): केवल एक निर्माता की स्तुओं का व्यापार करने का करार या केवल समस्त उत्पादन को एक व्यापारी को विक्रय रने का करार।

ोमा योग्य हित (Insurable Interest): एक व्यक्ति की, बीमाकृत वस्तु के बारे में ऐसी स्थिति हो कि उस वस्तु के ठीक हालत में रहने से उसे लाभ हो और उसके नष्ट होने से ानि।

थमदृष्ट्या (Prima facie): लैटिन शब्द जिसका अर्थ है "देखने पर"

ायब्युनल: न्यायालय तथा अन्य न्यायिक मशीनरी।

ारंभ से ही व्यर्थ (Void–ab–initio): लैटिन शब्द जिसका अर्थ है आरम्भ से ही अप्रवर्तित ना।

.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1 i) हाँ. ii) हाँ. iii) नहीं, व्यापार में रुकावट

2 करार का पहला भाग वैध है क्योंकि क्रेता के हित की सुरक्षा के लिये उचित रूप में आवश्यक है। लेकिन दूसरा भाग जिसके द्वारा उसे कम्पनी के साथ किसी भी व्यापार में जो कम्पनी करे प्रतिस्पर्धा करने से रोका गया, अनुचित था और इसलिये व्यर्थ था **(नोरडेन फैल्ट बनाम मैक्सिम नोरडेन फैल्ट गन क.)**

3 नहीं, करार व्यापार में रुकावट डालने के कारण व्यर्थ है **(मधूब चन्द्र बनाम राजकुमार)**

4 क सफल नहीं होगा। नौकरी समाप्त होने के बाद व्यापार पर कोई रोक लगाना कानून की निगाह में बुरा है। **(ओएक्स एंड क. बनाम जैकसन)**

1 i) हाँ. यह सांयोगिक अनुबंध है

ii) हाँ. यह भी सांयोगिक अनुबंध है लेकिन तभी प्रवर्तित कराया जा सकता है जब ग. क से पहले मरे।

iii) नहीं, करार व्यर्थ है। (धारा 36 और धारा 56)

2 म पैसा देने के लिये उत्तरदायी होगा। एल एण्ड क. का म का नाम क्लब से वापस लेने का वचन ताकि उसका नाम चूककर्त्ता की सूची में न आए, एक वैध प्रतिफल था। एक बाजी का सौदा केवल व्यर्थ होने से समपार्श्विक व्यवहारों को प्रभावित नहीं करता। **(लीसेस्टर एंड क. बनाम एस. पी. मिलिक)**

.7 स्वपरख प्रश्न

व्यापार में रुकावट डालने वाला करार व्यर्थ है। इस कथन की जाँच कीजिये. कोई अपवाद हो, तो बताइये।

2 भारतीय अनुबंध अधिनियम के अन्तर्गत बाजी के करार सम्बन्धी कानून की विवेचना कीजिये।

3 क केवल ख से शादी करने का वचन देता है और किसी से नहीं तथा उल्लंघन करने पर 50,000 रु. देने का करार करता है। क, ग से शादी करता है, क्या ख 50,000 रु. का दावा कर सकती है।

4 सांयोगिक अनुबंध क्या होते हैं ? ऐसे अनुबंधों के प्रवर्तन सम्बन्धी नियमों का उल्लेख कीजिये। उदाहरण दीजिये।

नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 7 निष्पादन एवं समाप्ति (Performance and Discharge)

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 निष्पादन का अर्थ
  7.2.1 निष्पादन के प्रकार
  7.2.2 टेंडर के प्रकार
  7.2.3 वैध टेंडर के अनिवार्य तत्व
  7.2.4 वचन का सम्पूर्ण निष्पादन करने से इंकार कर देने का प्रभाव
7.3 निष्पादन की मांग कौन कर सकता है ?
7.4 निष्पादन किसे करना चाहिए ?
7.5 निष्पादन के समय एवं स्थान
7.6 समय अनुबंध का सारतत्व
7.7 पारस्परिक वचनों का निष्पादन
  7.7.1 पारस्परिक वचनों के प्रकार
  7.7.2 पारस्परिक वचनों के निष्पादन के नियम
  7.7.3 पारस्परिक वचनों के निष्पादन का क्रम
  7.7.4 पारस्परिक वचनों के निष्पादन को रोकने का प्रभाव
7.8 अनुबंधों का समनुदेशन
7.9 भुगतान का विनियोजन
7.10 अनुबंध समाप्ति के तरीके
  7.10.1 निष्पादन द्वारा समाप्ति
  7.10.2 पारस्परिक सहमति से समाप्ति
  7.10.3 समय बीतने से समाप्ति
  7.10.4 कानून के प्रवर्तन द्वारा समाप्ति
  7.10.5 निष्पादन की असंभवता से समाप्ति
  7.10.6 भंग से समाप्ति
7.11 सारांश
7.12 शब्दावली
7.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.14 स्वपरख प्रश्न

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- निष्पादन के अर्थ को समझ सकें
- निष्पादन के विभिन्न प्रकारों की व्याख्या कर सकें
- वैध टेंडर के आवश्यक तत्वों को बता सकें
- निष्पादन किसके द्वारा हो, इस प्रश्न का उत्तर दे सकें
- संयुक्त वचनों के निष्पादन सम्बन्धी नियमों की व्याख्या कर सकें
- बिष्पादन के समय, स्थान व तरीके से संबंधित नियम बता सकें
- अनुबंध की समाप्ति के विभिन्न प्रकार बता सकें।

7.1 प्रस्तावना

आप अनुबंध के निर्माण से सम्बन्धित नियमों को पढ़ चुके हैं। अनुबंध करने के पश्चात् तर्कसंगत यही है कि पक्षकार अपने-अपने वचनों का पालन करें। जब अनुबंध करने वाले

पक्षकार अपने विधिक दायित्वों का निष्पादन (perform) कर देते हैं तो अनुबंध समाप्त (discharge) हो जाता है। इस इकाई में आप अनुबंध के निष्पादन के अर्थ, निष्पादन के प्रकार, संयुक्त वचनों के निष्पादन, निष्पादन के समय, स्थान एवं तरीके के बारे में पढ़ेंगे। आप पारस्परिक वचनों के निष्पादन, अनुबंध के समनुदेशन तथा भुगतान के विनियोजन से सम्बन्धित नियमों का भी अध्ययन करेंगे। इसके अतिरिक्त, अनुबंध की समाप्ति के विभिन्न तरीकों की भी चर्चा की जाएगी।

7.2 निष्पादन का अर्थ

आप पढ़ चुके हैं कि प्रत्येक वैध अनुबंध सम्बन्धित पक्षकारों पर वैधानिक दायित्व डालता है और यह दायित्व उस समय तक चलता रहता है जब तक कि अनुबंध का वास्तविक पालन न कर दिया जाए या वह समाप्त न हो जाए। अनुबंध को समाप्त करने के अनेक तरीकों में से एक तरीका उसका निष्पादन करना है तथा दायित्वों की समाप्ति का यही स्वाभाविक, वांछित एवं सामान्य तरीका है।

'निष्पादन' शब्द से आशय है कि अनुबंध के पक्षकारों ने अनुबंध से उत्पन्न अपने-अपने दायित्वों का पालन कर दिया है। उदाहरणार्थ, **क** अपनी पुस्तक 50 रुपये में **ख** को बेचने का अनुबन्ध करता है। **क** पुस्तक दे देता है तथा **ख** भुगतान कर देता है, इस दशा में निष्पादन के द्वारा अनुबंध समाप्त हुआ कहा जाता है।

अनुबंध अधिनियम की धारा 37 में पक्षकारों द्वारा निष्पादन के दायित्वों को बताया गया है। इसमें प्रावधान किया गया है कि जब तक इस अधिनियम या किसी अन्य कानून के प्रावधानों के अन्तर्गत निष्पादन से मुक्ति या छुटकारा न मिल गया हो, अनुबंध के पक्षकारों को या तो अपने-अपने वचनों का पालन करना चाहिए अथवा निष्पादन का प्रस्ताव करना चाहिए।

7.2.1 निष्पादन के प्रकार

धारा 37 से आप यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि निष्पादन वास्तविक या प्रस्तावित हो सकता है। आईए अब इनका विस्तार से अध्ययन करते हैं।

1 **वास्तविक निष्पादन (Actual performance) :** जब अनुबंध के एक पक्ष ने वह सब कर दिया है जिसे करने का उसने वचन दिया था तथा अब उसके करने के लिए कुछ शेष नहीं है, तो यह कहा जाता है कि वचन का वास्तविक निष्पादन हो गया और ऐसे पक्ष का दायित्व समाप्त हो गया। उदाहरणार्थ, **क** जो **ख** को 1,000 रुपये का ऋणी है, वह दो माह बाद राशि का भुगतान करने का वचन देता है। देय तिथि पर **क** भुगतान कर देता है। यह वास्तविक निष्पादन है।

2 **प्रस्तावित निष्पादन (Attempted performance) :** कभी-कभी निष्पादन के देय होने पर वचनदाता (promisor) तो अपने दायित्व का पालन करने का प्रस्ताव करता है, परन्तु वचनग्रहीता (promisee) ऐसे प्रस्ताव को अस्वीकार कर देता है, इसे 'प्रस्तावित निष्पादन' या 'टेंडर' कहते हैं। उदाहरणार्थ, **क**, **ख** को निश्चित माल देने का वचन देता है। **क** माल को कार्य समय में नियत स्थान पर ले जाता है परन्तु **ख** माल की सुपुर्दगी लेने से इंकार कर देता है। इस प्रकार यहाँ **क** ने अनुबंध के अन्तर्गत वह सब कुछ कर दिया जो उसने करना था। यह प्रस्तावित निष्पादन है। प्रस्तावित निष्पादन की स्थिति में वचनदाता को अपालन (non-performance) के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि निष्पादन या टेंडर अनुबंध के निष्पादन के समान है। अनुबंध अधिनियम की धारा 38 में प्रावधान है कि जब वचनदाता ने वचनग्रहीता को निष्पादन का प्रस्ताव किया हो और यह प्रस्ताव स्वीकार न किया जाए, तब वचनदाता न तो अनुबंध के अपालन के लिए उत्तरदायी होता है और न ही वह अनुबंध के अन्तर्गत अपने अधिकारों से वंचित होता है।

7.2.2 टेंडर के प्रकार

टेंडर या प्रस्तावित निष्पादन दो प्रकार का हो सकता है: (i) माल या सेवाओं का टेंडर, तथा (ii) द्रव्य का टेंडर।

) **माल या सेवाओं का टेंडर:** माल की सुपुर्दगी या सेवा प्रदान करने का अनुबंध उस समय पूर्णत: समाप्त हुआ माना जाता है जब अनुबंध की शर्तों के अनुसार माल की सुपुर्दगी का प्रस्ताव किया जाता है। यदि माल या सेवाओं को अस्वीकार कर दिया जाता है तब उनके लिए दोबारा प्रस्ताव करना आवश्यक नहीं है तथा वचनदाता अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। इसके साथ-साथ वह वचनग्रहीता के विरुद्ध अस्वीकृति के लिए दावा भी दायर कर सकता है।

i) **द्रव्य का टेंडर:** जब एक देनदार (वचनदाता) वैध टेंडर करता है अर्थात् वह लेनदार को राशि भुगतान करने का प्रस्ताव करता है परन्तु लेनदार उसे स्वीकार करने से मना कर देता है, तो देनदार राशि के भुगतान करने के अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो जाता। अन्य शब्दों में, रुपये के टेंडर को ऋण की समाप्ति नहीं माना जा सकता। देनदार, ऋण की राशि चुकाने के लिए बराबर उत्तरदायी बना रहता है। किन्तु यहां यह ध्यान रहे कि रुपये के वैध टेंडर की तिथि से देनदार ब्याज के लिए उत्तरदायी नहीं रहता अर्थात् रुपये के वैध टेंडर को अस्वीकार करने की तिथि से कोई ब्याज देय नहीं होता।

.2.3 वैध टेंडर के अनिवार्य तत्त्व

र्वोक्त पैराग्राफ में आपने पढ़ा कि निष्पादन का प्रस्ताव करने पर वह पक्ष अपने अगले ायित्वों से मुक्त हो जाता है। किन्तु, इसके लिए यह जरूरी है कि टेंडर वैध हो। वैध टेंडर ै लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना आवश्यक है:

यह शर्तरहित होना चाहिए: शर्तरहित टेंडर वह होता है जो अनुबंध की शर्तों के अनुसार होता है। इस प्रकार, सशर्त निष्पादन के प्रस्ताव को ठीक टेंडर नहीं माना जा सकता तथा दूसरा पक्ष इसे अस्वीकार कर सकता है। उदाहरणार्थ, **क** एक देनदार, अपने लेनदार **ख** को राशि का भुगतान करने का प्रस्ताव करता है बशर्ते **ख** कुछ माल उसे बेचे। यह सशर्त टेंडर है, अत: अमान्य है।

) **यह उचित समय एवं स्थान पर किया जाना चाहिए:** आमतौर से पक्षकारों द्वारा अनुबंध के निष्पादन के समय व स्थान के बारे में पहले से तय किया जाता है, तथा उसी अनुसार टेंडर होना चाहिए। इस प्रकार, कार्य समय के बाद माल का टेंडर या देय तिथि से पहले माल या रुपये का टेंडर, वैध टेंडर नहीं है। उदाहरणार्थ, यदि वचनदाता प्रात: 10 बजे माल की सुपुर्दगी देना चाहता है तो यदि ऐसा समझौता नहीं हुआ हो, यह वैध टेंडर नहीं है।

) माल के टेंडर की स्थिति में वचनग्रहीता को यह ज्ञात करने का पर्याप्त अवसर दिया जाना चाहिए कि दिया जाने वाला माल वही है जिसे वचनदाता द्वारा दिया जाना है। इस प्रकार ऐसे समय माल का टेंडर जब पक्षकार उसकी जांच नहीं कर सके, वैध टेंडर नहीं है।

) **यह सम्पूर्ण दायित्व के लिए होना चाहिए:** माल की थोड़ी-थोड़ी सुपुर्दगी या देय राशि का किस्तों में भुगतान, वैध टेंडर नहीं है। उदाहरणार्थ, **क** एक नियत तिथि पर 100 बोरी चावल देने का अनुबंध करता है। यदि नियत तिथि व स्थान पर वह केवल 80 बोरी देने का प्रस्ताव करता है, तो यह वैध टेंडर नहीं कहलाएगा तथा **क** अपने दायित्व से मुक्त नहीं माना जाएगा। परन्तु यदि अनुबंध की शर्तों से मामूली सा विचलन हो, तो टेंडर अमान्य नहीं हो जाता।

यह वचनग्रहीता या उसके प्राधिकृत एजेंट को किया जाना चाहिए: अत: किसी अजनबी के समक्ष किया गया प्रस्ताव व्यर्थ होता है। संयुक्त वचनग्रहिताओं की स्थिति में वचनदाता के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह प्रत्येक के समक्ष प्रस्ताव करे। संयुक्त वचनग्रहिताओं में से किसी एक के समक्ष टेंडर किया जा सकता है। इस प्रकार, संयुक्त वचनग्रहिताओं में से किसी एक के समक्ष टेंडर करने का वही प्रभाव होता है जैसे कि उन सबके समक्ष टेंडर किया हो।

) **द्रव्य के भुगतान की दशा में, देय राशि का ठीक-ठीक तथा वैध मुद्रा में टेंडर किया जाना चाहिए:** यह किसी अन्य रूप जैसे विदेशी मुद्रा या चैक के रूप में नहीं होना चाहिए। जिस व्यक्ति को चैक से भुगतान किया जाए वह यदि उसे स्वीकार करने को तैयार हो, तब चैक द्वारा भुगतान को वैध टेंडर माना जाता है।

7.2.4 वचन का सम्पूर्ण निष्पादन करने से इंकार कर देने का प्रभाव

जब अनुबंध के किसी पक्ष ने निष्पादन करने से मना कर दिया है अथवा वचन के पूर्णत: पालन के लिए स्वयं को अयोग्य बना लिया है, तो वचनग्रहीता अनुबंध को समाप्त कर सकता है। किन्तु यदि वचनग्रहीता ने अपने आचरण या शब्दों से अनुबंध को बनाए रखने की अपनी सहमति व्यक्त की है, तो वह इसे समाप्त नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, एक गायिका **क** ने थियेटर के मैनेजर **ख** के साथ अगले दो माह में प्रति सप्ताह दो रात्रियों को गाना गाने का अनुबंध किया तथा **ख** ने उसे प्रति रात्रि गाना गाने के लिए 100 रुपये देना तय किया। छठी रात्रि को क जानबूझ कर थियेटर से अनुपस्थित रहती है। इस स्थिति में, **ख** अनुबंध को समाप्त करने के लिए स्वतन्त्र है। परन्तु यदि **ख** की सहमति से **क** सातवीं रात्रि को गाना गाती है तो इसका अर्थ है कि **ख** ने अनुबंध को बनाए रखने की सहमति दी है और अब वह अनुबंध को समाप्त नहीं कर सकता। हाँ, क द्वारा छठी रात्रि को गाना न गाने के कारण **ख** को जो हानि हुई है उसके लिए वह हर्जाना प्राप्त करने का हकदार है।

7.3 निष्पादन की मांग कौन कर सकता है ?

1 **वचनग्रहीता:** साधारणत:, वचनग्रहीता ही ऐसा एकमात्र व्यक्ति है जो अनुबंध के अन्तर्गत वचन के निष्पादन की मांग कर सकता है। कोई तीसरा पक्षकार अनुबंध के निष्पादन की मांग नहीं कर सकता, भले ही अनुबंध उसके लाभ के लिए किया गया हो। उदाहरणार्थ, **क, ख** को वचन देता है कि वह **ग** को 500 रुपये देगा। इस वचन के पालन की मांग **ख** ही कर सकता है, **ग** नहीं।

2 **विधिक प्रतिनिधि:** वचनग्रहीता की मृत्यु की दशा में उसका विधिक प्रतिनिधि निष्पादन की मांग कर सकता है, बशर्ते कि अनुबंध से कोई प्रतिकूल आशय प्रकट न होता हो या वह व्यक्तिगत रूप का न हो। उदाहरणार्थ, **क, ख** से विवाह करने का करार करता है। किन्तु, विवाह से पूर्व ही **ख** की मृत्यु हो जाती है। क्योंकि यह व्यक्तिगत प्रकार का अनुबंध है, अत: **ख** का विधिक प्रतिनिधि **क** से वचन के निष्पादन की मांग नहीं कर सकता।

3 **तीसरा पक्ष:** कुछ अपवादात्मक स्थितियों में, तीसरा पक्ष भी अनुबंध के निष्पादन की मांग कर सकता है यद्यपि वह अनुबंध का पक्षकार नहीं भी है। इस प्रकार की स्थितियों का वर्णन इकाई 5 में "अनुबंध के लिए अजनबी व्यक्ति" शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है।

4 **संयुक्त वचनग्रहीता:** जब किसी व्यक्ति ने दो या अधिक व्यक्तियों को संयुक्त रूप से वचन दिया है, तब यदि अनुबंध से कोई प्रतिकूल आशय प्रकट न होता हो तो अनुबंध के निष्पादन की मांग इनमें से किसी के द्वारा की जा सकती है — (i) सब संयुक्त वचनग्रहिताओं द्वारा मिलकर, या (ii) किसी एक वचनग्रहीता की मृत्यु होने पर उसके विधिक प्रतिनिधि का जीवित बचे वचनग्रहिताओं के साथ मिलकर, या (iii) सभी संयुक्त वचनग्रहिताओं की मृत्यु होने पर, उन सबके विधिक प्रतिनिधियों द्वारा मिलकर। इस प्रकार आपने देखा कि संयुक्त वचनग्रहीता का अधिकार संयुक्त ही है और जब तक इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट करार न हो, कोई भी संयुक्त वचनग्रहीता अकेले ही निष्पादन की मांग नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, **ख** और **ग** ने संयुक्त रूप से 5,000 रुपये **क** को उधार दिए, इसके प्रतिफलस्वरूप **क** ने उन्हें वचन दिया कि वह उक्त राशि निश्चित तिथि को ब्याज सहित चुका देगा। **ख** की मृत्यु हो जाती है। निष्पादन की मांग करने का अधिकार **ख** के विधिक प्रतिनिधि को **ग** के साथ मिलकर है, तथा **ग** की मृत्यु के बाद **ख** और **ग** के विधिक प्रतिनिधि मिलकर, **क** से वचन के निष्पादन की मांग कर सकते हैं।

7.4 निष्पादन किसे करना चाहिए ?

आप पढ़ चुके हैं कि निष्पादन की मांग कौन कर सकता है। आइए अब देखते हैं कि अनुबंध का निष्पादन किसके द्वारा होना चाहिए। आमतौर से वचनदाता द्वारा स्वयं अनुबंध का पालन

किया जाना चाहिए। परन्तु कुछ दशाओं में उसका एजेंट या विधिक प्रतिनिधि भी निष्पादन कर सकता है। यह सब कुछ पक्षकारों के इरादे पर निर्भर करता है। आमतौर से निम्नलिखित व्यक्तियों के द्वारा अनुबंध का निष्पादन किया जाना चाहिए:

1 **स्वयं वचनदाता:** यदि अनुबंध की प्रकृति से ऐसा प्रतीत होता है कि पक्षकारों का आशय उसमें दिए गये किसी वचन का निष्पादन स्वयं वचनदाता से ही कराने का रहा है तो ऐसे वचन का पालन स्वयं वचनदाता के द्वारा ही किया जाना चाहिए। यह नियम प्राय: वैयक्तिक कौशल, पसन्द या कला कार्य की स्थिति में लागू होता है। उदाहरणार्थ, **क** ने **ख** के लिए एक चित्र बनाने का वचन दिया। क्योंकि यह वचन वैयक्तिक कौशल का है, अत: **क** को स्वयं इसका पालन करना चाहिए।

2 **वचनदाता या एजेंट:** जब अनुबंध वचनदाता के वैयक्तिक कौशल या योग्यता पर आधारित नहीं है तब वचनदाता के द्वारा या उसके द्वारा नियुक्त किसी योग्य व्यक्ति द्वारा अनुबंध का निष्पादन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, क, **ख** को कुछ रकम चुकाने का वचन देता है। **क** अपने इस वचन का पालन चाहे तो स्वयं **ख** को रकम का भुगतान करके कर सकता है या अपने किसी अधिकृत प्रतिनिधि के द्वारा रकम का भुगतान कर सकता है।

3 **विधिक प्रतिनिधि:** ऐसे अनुबंध जिनमें वैयक्तिक कौशल या रुचि आधार नहीं है, वचनदाता की मृत्यु के बाद उसके विधिक प्रतिनिधि (legal representative) वचन का निष्पादन कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, **क** ने 2,000 रुपये के भुगतान के बदले **ख** को किसी नियत दिन को माल देने का करार किया। नियत समय से पूर्व **क** की मृत्यु हो जाती है। क का विधिक प्रतिनिधि माल देने के लिए बाध्य होगा तथा **ख** 2,000 रुपये **क** के विधिक प्रतिनिधियों को देने के लिए बाध्य होगा, परन्तु यदि अनुबंध वैयक्तिक कौशल या रुचि पर आधारित है, तो वह वचनदाता की मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाता है।

4 **तीसरा व्यक्ति:** कुछ परिस्थितियों में तीसरे व्यक्ति के द्वारा अनुबंध का निष्पादन किया जा सकता है बशर्ते वचनग्रहीता इसे स्वीकार कर ले। धारा 41 के अनुसार यदि वचनग्रहीता किसी तीसरे व्यक्ति के द्वारा किए गये निष्पादन को स्वीकार कर लेता है तो वह बाद में उसके पालन के लिए वचनदाता को बाध्य नहीं कर सकता।

5 **संयुक्त वचनों का निष्पादन:** धारा 42 के अनुसार जब दो या अधिक व्यक्तियों ने कोई संयुक्त वचन दिया हो, तो संयुक्त वचनदाताओं को अपने जीवन काल में संयुक्त रूप से उसका निष्पादन करना होता है। यदि उनमें से किसी एक की मृत्यु हो जाती है, तो उसका विधिक प्रतिनिधि शेष जीवित वचनदाताओं के साथ मिलकर उस वचन का निष्पादन करेगा। उदाहरणार्थ, क, **ख** और **ग** संयुक्त रूप से **घ** को 3,000 रुपये चुकाने का वचन देते हैं। क की मृत्यु हो जाती है। **क** के विधिक प्रतिनिधि के साथ **ख** तथा **ग** संयुक्त रूप से तथा पृथक-पृथक **घ** को रकम चुकाने के लिए उत्तरदायी हैं। इस नियम को 'संयुक्त दायित्वों का हस्तांतरण' (devolution of joint liabilities) कहते हैं। यह नियम तभी लागू होता है जब अनुबंध में इसके विपरीत कोई आशय प्रकट न होता हो। अन्य शब्दों में, यदि अनुबंध से विपरीत आशय प्रकट होता है, तो उपर्युक्त नियम लागू नहीं होगा। यदि संयुक्त वचनदाता अपने वचन का निष्पादन संयुक्त रूप से नहीं करते, तब धारा 43 यदि संयुक्त वचनदाता अपने वचन का निष्पादन संयुक्त रूप से नहीं करते, तब धारा 43 के प्रावधान लागू हो जाते हैं। इसके अनुसार, जब दो या दो से अधिक व्यक्ति संयुक्त वचन देते हैं, तो किसी स्पष्ट विपरीत करार के अभाव में, अनुबंध के निष्पादन के लिए वचनग्रहीता उनमें से किसी एक या कुछ को सम्पूर्ण वचन का पालन करने के लिए बाध्य कर सकता है। इस प्रकार संयुक्त वचनदाताओं का दायित्व "संयुक्त एवं पृथक्" होता है तथा किसी भी संयुक्त वचनदाता को निष्पादन के लिए बाध्य किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, क, **ख** और **ग** ने संयुक्त रूप से **घ** को 3,000 रुपये चुकाने का वचन दिया। इस स्थिति में **घ**, **क** या **ख** या **ग** तीनों में से किसी को भी 3,000 रुपये की सम्पूर्ण राशि चुकाने के लिए बाध्य कर सकता है।

धारा 43 में आगे कहा गया है कि जब तक अनुबंध से कोई विपरीत आशय प्रकट न होता हो, संयुक्त वचनदाताओं में से प्रत्येक वचनदाता वचन के निष्पादन के लिए, अन्य वचनदाताओं को समान योगदान देने के लिए बाध्य कर सकता है। यदि किसी संयुक्त वचनदाता द्वारा ऐसा योगदान करने में त्रुटि होती है, तो इस प्रकार से हुई हानि को शेष वचनदाता आपस में

बराबर-बराबर बाँटेंगे। उदाहरणार्थ, **क ख** और **ग** संयुक्त रूप से **घ** को 3,000 रुपये देने का वचन देते हैं। **ग** को सम्पूर्ण राशि देनी पड़ सकती है। यदि **क** दिवालिया है और उसकी सम्पत्ति से उसकी देनदारियों का केवल आधा भाग ही दिया जा सकता है। **ग** को **क** की सम्पत्ति से 500 रुपये तथा **ख** से 1,250 रुपये प्राप्त करने का अधिकार है।

उपर्युक्त उदाहरण में यदि **क** की सम्पत्ति में से कुछ भी वसूल न किया जा सके तब **ग**, **ख** से 1,500 रुपये प्राप्त करने का अधिकारी होगा, अर्थात् **क** की हानि को **ख** और **ग** आपस में बराबर-बराबर बाँटेंगे। यहाँ यह ध्यान रहे कि जब वचनग्रहीता संयुक्त वचनदाताओं में से किसी एक को मुक्त कर देता है तो इससे अन्य संयुक्त वचनदाताओं का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। इसका अर्थ हुआ कि शेष संयुक्त वचनदाता राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य रहते है। परन्तु मुक्त हुआ वचनदाता अन्य संयुक्त वचनदाताओं के प्रति योगदान करने के लिए बाध्य रहता है (धारा 44)।

उदाहरण: **क**, **ख** और **ग** संयुक्त रूप से **घ** को 3,000 रुपये देने का वचन देते हैं। **घ**, **क** को दायित्व से मुक्त कर देता है। **क** के इस प्रकार मुक्त होने से **ख** और **ग** अपने दायित्व से मुक्त नहीं होते। यदि **घ**, **ग** से सम्पूर्ण राशि वसूल कर लेता है, तो **ग**, **क** और **ख** से योगदान की मांग कर सकता है।

7.5 निष्पादन के समय एवं स्थान

अनुबंध के निष्पादन का समय व स्थान निश्चित करना पक्षकारों पर निर्भर करता है। निष्पादन के समय एवं स्थान से सम्बन्धित नियम धारा 46 से 50 में दिए गए हैं। ये निम्नलिखित हैं:

1 **वचन का निष्पादन उचित समय के भीतर:** धारा 46 के अनुसार, अनुबंध में निष्पादन का समय जब निश्चित न किया गया हो तथा वचनग्रहीता के कहे बिना ही वचनदाता को निष्पादन करना है, तो उचित समय के भीतर अनुबंध का निष्पादन कर देना चाहिए। "उचित समय क्या है" ? यह प्रत्येक स्थिति में तथ्य संबन्धी प्रश्न है अर्थात् यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि यदि अनुबंध में निष्पादन का समय नहीं दिया हो, तो इस अनिश्चितता के कारण अनुबंध दोषपूर्ण नहीं होता।

2 **समय निर्धारित होने पर वचन का निष्पादन:** कभी-कभी अनुबंध में निष्पादन का समय निर्दिष्ट किया जाता है तथा वचनदाता ने वचनग्रहीता के कहे बिना ही निष्पादन करना स्वीकार कर लिया है। ऐसी स्थिति में, वचनदाता को उस दिन सामान्य कार्य-समय के दौरान् उचित स्थान पर अपने वचन का पालन करना चाहिए (धारा 47)। उदाहरणार्थ **क**, **ख** को वचन देता है कि वह 1 जनवरी, 1990 को **ख** के गोदाम में माल की सुपुर्दगी देगा। **क** उस दिन कार्य काल का समय समाप्त होने के बाद **ख** के गोदाम पर माल लेकर पहुँचता है। **ख** माल की सुपुर्दगी नहीं लेता। **क** का निष्पादन वैध नहीं है।

3 **वचनग्रहीता के कहने पर वचन का निष्पादन:** यह भी हो सकता है कि अनुबंध में निष्पादन का दिन तो नियत किया गया है परन्तु वचनदाता ने वचनग्रहीता द्वारा मांग या कहे बिना निष्पादन करना स्वीकार नहीं किया है। ऐसी स्थिति में, वचनग्रहीता को उचित स्थान पर कार्य-काल के दौरान निष्पादन की मांग करनी चाहिए (धारा 48)।

4 **स्थान निश्चित नहीं होने पर तथा वचनग्रहीता द्वारा कहे बिना निष्पादन:** जब वचनग्रहीता के कहे बिना या मांग किए बिना वचन का निष्पादन किया जाना है और निष्पादन का स्थान तय नहीं किया गया है, तो वचनदाता का यह कर्तव्य है कि वह वचनग्रहीता को निष्पादन के लिए उचित जगह बताने के लिए कहे और उस जगह पर वचन का निष्पादन करे (धारा 49)। उदाहरणार्थ, **क**, **ख** को एक निश्चित दिन 1,000 क्विंटल जूट की सुपुर्दगी देने का वचन देता है। **क** का कर्तव्य है कि वह **ख** से सुपुर्दगी का स्थान तय करने के लिए कहे और बताए गये स्थान पर माल की सुपुर्दगी करे।

5 **वचनग्रहीता द्वारा निर्धारित समय व तरीके से वचन का निष्पादन:** कभी-कभी वचनग्रहीता स्वयं वचन के निष्पादन का तरीका व समय निर्धारित करता है। ऐसी स्थिति

में, वचनग्रहीता द्वारा बताए गये तरीके से निर्धारित समय में वचन का निष्पादन किया जाना चाहिए। यदि वचनग्रहीता द्वारा तय किए गये तरीके से व समय पर वचनदाता वचन का निष्पादन कर देता है तो वह अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है (धारा 50)। उदाहरण (क) **ख**, **क** का 2,000 रुपये का ऋणी है। **क**, **ख** से कहता है कि वह इस राशि को **ग** बैंक में उसके खाते में जमा करा दे। तदनुसार **ख**, जिसका अपना खाता भी **ग** बैंक में है **ग** को आदेश देता है कि वह 2,000 रुपये उसके खाते में से निकालकर **क** के खाते में जमा कर दे और बैंक इस आदेश का पालन करता है। बाद में, इससे पहले कि **क** को उक्त राशि के हस्तांतरण की जानकारी हो, **ग** बैंक फेल हो जाता है। **ख** के द्वारा किया गया भुगतान वैध होगा तथा वह अपने दायित्व से मुक्त हो गया। (ख) **क** का **ख** पर 100 रुपये का ऋण है। वह **ख** को सूचित करता है कि वह 100 रुपये का नोट उसे डाक से भेज दे। जैसे ही **ख**, **क** का पता लिखकर लिफाफे में 100 रुपये का नोट रखकर उस लिफाफे को डाक में डालता है, वह ऋण के दायित्व से मुक्त हो जाता है।

7.6 समय अनुबंध का सारतत्व (Time as an Essence of the Contract)

यह वाक्यांश कि "समय अनुबंध का सारतत्व" है का अर्थ है कि समय एक आवश्यक तत्व है तथा सम्बन्धित पक्षकारों को निर्धारित समय में अपने-अपने वचन का पालन कर देना चाहिए। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि एक पक्ष समय पर अपने वचन का पालन करने में असमर्थ होता है तो क्या दूसरा पक्ष अनुबंध समाप्त कर सकता है? इसका उत्तर देने के लिए यह देखना होगा कि क्या समय, अनुबंध का सारतत्व है या नहीं? केवल इस कारण से कि अनुबंध में निष्पादन का समय निर्धारित है यह मानना पर्याप्त नहीं है कि अनुबंध में समय सारतत्व है। इसके लिए हमें पक्षकारों के वास्तविक आशय को देखना चाहिए। निम्नलिखित परिस्थितियों में समय को प्राय: अनुबंध का सारतत्व माना जाता है:

क) जब पक्षकार समय को अनुबंध का सारतत्व मानने के लिए स्पष्ट रूप से सहमत हुए हैं,

ख) जब देर होने से पक्षकार को हानि होती है; तथा

ग) जब अनुबंध की प्रकृति एवं आवश्यकता से अनुबंध का निष्पादन किसी निश्चित समय के भीतर किया जाना आवश्यक है।

व्यापारिक अनुबंधों में, जब तक कोई विपरीत आशय प्रकट न होता हो, माल की सुपुर्दगी का समय हमेशा ही अनुबंध का सारतत्व माना जाता है परन्तु मूल्य के भुगतान के समय को सारतत्व नहीं माना जाता। ऐसा इस कारण से है कि बाज़ार में माल के कीमतों में इतनी तेज़ी से परिवर्तन होता रहता है कि यदि समय का ध्यान न रखा जाए तो भारी हानि होने की सम्भावना रहती है। परन्तु अचल सम्पत्ति के विक्रय की स्थिति में, समय को अनुबंध का सारतत्व नहीं माना जाता।

धारा 55 के पैराग्राफ 1 के अनुसार जब अनुबंध में समय मुख्य तत्व है तथा वचनदाता समय पर अपने वचन का पालन नहीं कर पाता या कर पाती, तो दूसरे पक्ष की इच्छा पर इसे व्यर्थ (void) करार दिया जा सकता है अर्थात् यदि वचनग्रहीता चाहे तो वह अनुबंध को समाप्त कर सकता है। परन्तु ऐसे अनुबंधों में, जिनमें समय मुख्य तत्व नहीं है, यदि एक पक्ष नियत समय पर अपने वचन का पालन करने में असमर्थ रहता है तो दूसरा पक्ष अनुबन्ध को समाप्त नहीं कर सकता, परन्तु वह देरी के कारण हुई हानि के लिए हर्जाने की मांग कर सकता है।

बोध प्रश्न क

1 अनुबंध के निष्पादन से क्या तात्पर्य है?

. . . .

. . . .

. . . .

2 टेंडर क्या है ?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

3 अनुबंध के निष्पादन की मांग कौन कर सकता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

4 अनुबंध में समय सारतत्व कब होता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

5 [illegible]ए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत:

i) वैयक्तिक कौशल वाले अनुबंध का निष्पादन वचनदाता के एजेंट या विधिक प्रतिनिधि द्वारा किया जा सकता है। . . . .

ii) ऋण के भुगतान की स्थिति में, लेनदार द्वारा भुगतान स्वीकार करने से मना कर देने पर देनदार दायित्व मुक्त नहीं हो जाता। . . . .

iii) वचन का अंशत: पालन करना वैध टेंडर होता है। . . . .

iv) यदि संयुक्त वचनदाताओं में से कोई एक भुगतान करने में त्रुटि करता है, तो ऐसी त्रुटि से उत्पन्न हानि को अन्य संयुक्त वचनदाता को बराबर-बराबर बांटना होता है। . . . .

v) वचनग्रहीता संयुक्त वचनदाताओं में से किसी भी एक को वचन का पालन करने के लिए बाध्य कर सकता है। . . . .

vi) एक वचनदाता को मुक्त कर देने पर अन्य संयुक्त वचनदाता दायित्व मुक्त नहीं हो जाते। . . . .

vii) ऐसे अनुबंध में जहाँ समय सारतत्व है, यदि वचनदाता समय पर निष्पादन नहीं करता, तो अनुबंध व्यर्थ हो जाता है। . . . .

viii) यदि वचनग्रहीता किसी तीसरे पक्ष से निष्पादन स्वीकार कर लेता है, तो वह फिर वचनदाता को निष्पादन करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। . . . .

ix) जब निष्पादन का समय निश्चित है परन्तु वचनग्रहीता के कहने पर ही वचनदाता को निष्पादन करना हो तो वचनग्रहीता का कर्तव्य है कि वह निष्पादन के लिए मांग करे। . . . .

7.7 पारस्परिक वचनों का निष्पादन (Performance of Reciprocal Promises)

आप पढ़ चुके हैं कि करार के पक्षकार किसी कार्य को करने या कार्य से अलग रहने का परस्पर वचन देते हैं, इन्हें 'पारस्परिक वचन' कहा जाता है। अनुबंध अधिनियम की धारा

2(f) के अनुसार "ऐसे वचन जो एक-दूसरे के लिए प्रतिफल या अंशत: प्रतिफल होते हैं, पारस्परिक वचन कहलाते हैं।" इस स्थिति में प्रत्येक पक्ष पर यह दायित्व है कि वह अपने वचन का निष्पादन करे तथा दूसरे के वचन के निष्पादन को स्वीकार करे।

7.7.1 पारस्परिक वचनों के प्रकार

जोन्स बनाम वार्कले के विवाद में लार्ड मेन्सफील्ड ने पारस्परिक वचनों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया है:

क) **पारस्परिक एवं स्वतंत्र (Mutual and independent) :** जब प्रत्येक पक्षकार को बिना इस बात की प्रतीक्षा किए कि दूसरे पक्ष ने अपने वचन का निष्पादन किया है या नहीं, या कि वह निष्पादन के लिए तैयार भी है या नहीं, अपने वचन का स्वतन्त्र रूप से निष्पादन करना होता है तो ऐसे वचनों को स्वतन्त्र एवं पारस्परिक कहा जाता है।

ख) **सशर्त एवं आश्रित (Conditional and dependent) :** जब एक पक्ष द्वारा अपने वचन का निष्पादन, दूसरे पक्ष द्वारा उसके वचन के निष्पादन पर निर्भर करता है, तो ऐसे वचनों को सशर्त एवं आश्रित कहते हैं।

ग) **पारस्परिक एवं समवर्ती (Mutual and concurrent) :** जब पक्षकारों को अपने-अपने वचनों का निष्पादन एक ही समय पर करना होता है, तो उन्हें पारस्परिक एवं समवर्ती कहते हैं।

7.7.2 पारस्परिक वचनों के निष्पादन के नियम

पारस्परिक वचनों का अर्थ तथा प्रकार पढ़ने के बाद, आइए अब उनके निष्पादन सम्बन्धी नियमों की चर्चा करते हैं।

पारस्परिक एवं समवर्ती: धारा 51 में निर्धारित नियम के अनुसार जब पारस्परिक वचनों का निष्पादन एक ही समय किया जाना है, तब वचनदाता को अपने वचन का निष्पादन तब तक करने की आवश्यकता नहीं है जब तक वचनग्रहीता अपने पारस्परिक वचन का निष्पादन करने के लिए तैयार और इच्छुक न हो। उदाहरणार्थ, **क** और **ख** अनुबंध करते हैं कि **क**, **ख** को कुछ माल की सुपुर्दगी देगा और **ख** माल की सुपुर्दगी के समय उसकी कीमत चुकाएगा। इस स्थिति में, जब तक **ख** भुगतान करने के लिए तैयार व इच्छुक न हो तब तक **क** को माल की सुपुर्दगी देने की आवश्यकता नहीं है। इसी तरह जब तक **क** माल की सुपुर्दगी देने के लिए तैयार व इच्छुक न हो तब तक **ख** को कीमत का भुगतान करने की आवश्यकता नहीं है।

सशर्त एवं आश्रित: इस स्थिति में एक पक्ष द्वारा वचन का निष्पादन दूसरे पक्ष के वचन के पूर्व-निष्पादन पर निर्भर करता है। जिस पक्ष को अपने वचन का पालन पहले करना है यदि वह वचन का निष्पादन नहीं करता तो वह दूसरे पक्ष से उसके वचन के निष्पादन की मांग नहीं कर सकता। यही नहीं, बल्कि अनुबंध के अपालन से यदि दूसरे पक्ष को कुछ हानि होती है तो दोषी पक्षकार उसे मुआवज़ा देने के लिए भी बाध्य होगा (धारा 54)। उदाहरणार्थ, **क** ने एक निश्चित कीमत पर **ख** के लिए मकान बनाने का अनुबंध किया। **ख** को उसके लिए आवश्यक पाड़ (scaffolding) तथा लकड़ी उपलब्ध करानी थी। **ख** ने पाड़ व लकड़ी देने से इंकार कर दिया, इसलिए कार्य पूरा नहीं किया जा सकता। **क** को मकान बनाने की आवश्यकता नहीं है तथा अनुबंध के अपालन से जो हानि **क** को हुई है उसकी पूर्ति करने के लिए **ख** बाध्य होगा।

पारस्परिक एवं स्वतन्त्र: जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, इस प्रकार के वचनों का पालन, दूसरे पक्षकार द्वारा वचनपालन की तत्परता की प्रतीक्षा किए बिना, प्रत्येक पक्ष को स्वतन्त्र रूप से करना होता है। यदि एक पक्ष अपने वचन का पालन नहीं करता, तो इस आधार पर कि दोषी पक्ष ने अपने वचन का पालन नहीं किया है, दूसरा पक्ष स्वयं को दायित्व मुक्त नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में, पीड़ित पक्ष दोषी पक्ष से हर्जाने की मांग कर सकता है।

7.7.3 पारस्परिक वचनों के निष्पादन का क्रम

कई बार यह समस्या उत्पन्न होती है कि पारस्परिक वचनों का निष्पादन किस क्रम में किया

जाए। इस सम्बन्ध में धारा 52 में प्रावधान किया गया है कि जब अनुबंध में पारस्परिक वचनों के निष्पादन का क्रम स्पष्ट रूप से व्यक्त है तो उनका निष्पादन उसी क्रम से किया जाना चाहिए तथा यदि अनुबंध में उनके निष्पादन के लिए कोई क्रम स्पष्ट रूप से तय नहीं किया गया है तो उनका पालन उसी क्रम से किया जाना चाहिए जो व्यवहार की प्रकृति के अनुसार हो। उदाहरणार्थ, **क** तथा **ख** अनुबंध करते हैं कि **क** एक निश्चित कीमत पर **ख** के लिए एक मकान बनाएगा। यहाँ पर **क** द्वारा मकान बनाने के वचन का निष्पादन पहले होगा, उसके बाद **ख** कीमत चुकाने के वचन का पालन करेगा।

7.7.4 पारस्परिक वचनों के निष्पादन को रोकने का प्रभाव

कभी-कभी ऐसा होता है कि पारस्परिक वचनों का एक पक्ष दूसरे पक्ष को अपने वचन का पालन करने से रोकता है। ऐसी स्थिति में रोके गये पक्षकार की इच्छा पर अनुबंध व्यर्थ हो जाता है तथा वह दूसरे पक्ष से उस हानि के लिए हर्जाने को प्राप्त करने का अधिकारी होता है जो अनुबंध के अपालन के कारण उसे हुई है। उदाहरणार्थ, **क** और **ख** अनुबंध करते हैं कि **ख** 1,000 रुपये के बदले **क** के लिए कुछ काम करेगा। **ख** तद्नुसार काम करने के लिए तैयार व तत्पर है, परन्तु **क** उसे काम करने से रोक देता है। यह अनुबंध **ख** की इच्छा पर व्यर्थ हो जाता है, यदि वह अनुबंध समाप्त करने का निश्चय करता है तो वह **क** से उस हानि का मुआवज़ा ले सकता है जो उसने अनुबंध का पालन न होने के कारण उठाई है।

7.8 अनुबंधों का समनुदेशन (Assignment of Contracts)

अनुबंध के समनुदेशन का अर्थ है अनुबंध से उत्पन्न अधिकारों एवं दायित्वों को किसी तीसरे पक्ष के नाम अंतरित करना। समनुदेशन को पूर्ण एवं प्रभावकारी बनाने के लिए यह एक लिखित प्रपत्र (instrument) के द्वारा किया जाना चाहिए। वास्तव में अनुबंध अधिनियम में समनुदेशन सम्बन्धी कोई निश्चित प्रावधान नहीं हैं। यह एक ऐसा शब्द है जिसका उपयोग सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम में किया गया है।

यह तो आप पहले पढ़ ही चुके हैं कि वैयक्तिक-कौशल, रुचि या योग्यता के अनुबंधों का पालन स्वयं वचनदाता द्वारा ही किया जाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार के अनुबंधों का समनुदेशन नहीं किया जा सकता। परन्तु जब अनुबंध वैयक्तिक प्रकृति का नहीं है, तब कुछ शर्तों के अन्तर्गत इसे समनुदेशित किया जा सकता है।

आइए अब यह पढ़ते हैं कि अनुबंध का समनुदेशन कैसे किया जाता है? समनुदेशन दो प्रकार से किया जा सकता है (क) पक्षकारों द्वारा तथा (ख) कानून के प्रवर्तन द्वारा।

क) पक्षकारों द्वारा समनुदेशन: इससे आशय है कि पक्षकार स्वयं समनुदेशन करते हैं। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं:

i) अनुबंध के अन्तर्गत उत्पन्न देयताओं एवं दायित्वों का समनुदेशन नहीं किया जा सकता। इसका अर्थ है कि वचनदाता, वचनग्रहीता को अपने स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को वचनदाता स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, **क** द्वारा **ख** को 500 रुपये दिए जाने हैं तथा **क** को **र** से 500 रुपये वसूल करने हैं। **क, ख** को **र** से राशि वसूल करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। परन्तु वचनग्रहीता तथा समनुदेशिती (assignee) की सहमति से वचनदाता अपने दायित्व को किसी तीसरे व्यक्ति को अंतरित कर सकता है। उपर्युक्त उदाहरण में, **ख** और **र** की सहमति से **क** अपना दायित्व **र** को अंतरित कर सकता है। तकनीकी दृष्टि से इसे 'नवीयन' (novation) कहते हैं।

ii) यदि अनुबंध में स्पष्ट या अंतर्निहित रूप से यह प्रावधान नहीं है कि वचनदाता द्वारा ही अनुबंध का निष्पादन किया जाएगा, तब पक्षकार आपस में फैसला कर सकते हैं कि कोई अन्य सक्षम व्यक्ति निष्पादन करेगा। परन्तु इस स्थिति में भी ठीक ढंग से निष्पादन के लिए वचनदाता वचनग्रहीता के प्रति उत्तरदायी रहता है।

iii) अनुबंध के अन्तर्गत ऐसे हित या अधिकार जो वैयक्तिक प्रकृति के न हों, उनका समनुदेशन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, **क**, **ख** का 1,000 रुपये का ऋणी है, **ख** इस

अधिकार को ग को समनुदेशित कर सकता है। परन्तु ऐसी स्थिति में समनुदेशिती अधिकारों एवं हितों का समनुदेशन अनुबंध के आरम्भिक पक्षकारों के साम्यिक अधिकारों के अधीन ग्रहण करता है। उपर्युक्त उदाहरण में, यदि क ने ऋण का आंशिक भुगतान ख को कर दिया है, तो अब ख, ग को शेष राशि का ही भुगतान करेगा।

iiv) वादयोग्य दावे (actionable claim) का कभी भी समनुदेशन किया जा सकता है परन्तु यह सदैव एक लिखित प्रपत्र के द्वारा किया जाना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि देनदार को समनुदेशन की सूचना दे दी जाए। वाद-योग्य दावा ऐसा दावा है जो किसी ऋण (रक्षित ऋण के अतिरिक्त) या किसी चल सम्पत्ति में हित के लिए दावा है। वाद-योग्य दावों के उदाहरण हैं: खाता ऋण (book debts), रकम का ऋण, अनुबंध से उत्पन्न अधिकार आदि।

ख) कानून के प्रवर्तन द्वारा समनुदेशन: ऐसे अनुबंध जो वैयक्तिक प्रकृति के नहीं होते उन्हें कानून के प्रवर्तन द्वारा समनुदेशित किया जा सकता है। अनुबंध के किसी पक्षकार की मृत्यु या दिवालिया होने पर कानून के प्रवर्तन द्वारा समनुदेशन होता है। अनुबन्ध के पक्षकार की मृत्यु होने पर उसके अधिकार एवं दायित्व उसके वारिसों या विधिक प्रतिनिधियों को स्वत: अंतरित हो जाते हैं। दिवालिएपन की स्थिति में, उसके अधिकार एवं दायित्व सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती को अन्तरित हो जाते हैं।

7.9 भुगतान का विनियोजन (Appropriation of Payments)

'भुगतान के विनियोजन' शब्द का अर्थ है भुगतान का लागू होना। जब किसी देनदार पर एक ही लेनदार के कई ऋण होते हैं और वह लेनदार को इतना भुगतान करता है जो उसके सब ऋणों को चुकाने के लिए अपर्याप्त है, तब यह प्रश्न उठता है किस ऋण के प्रति भुगतान की राशि को प्रयुक्त किया जाए? कुछ स्थितियों में देनदार स्वयं ही यह स्पष्ट कर देता है कि भुगतान को किस ऋण के प्रति प्रयुक्त किया जाए तथा कुछ में पारिस्थितियों से यह प्रकट होता है कि भुगतान किस ऋण के प्रति विनियोजित किया जाए। परन्तु कठिनाई तब उत्पन्न होती है जब विनियोजन के लिए न तो कोई स्पष्ट निर्देश है और न ही परिस्थितियों से कुछ आभास होता है। भारत में, विनियोजन के सम्बन्ध में नियम धारा 59 से 61 तक में दिए गये हैं। ये नियम इस प्रकार हैं:

1 **जब देनदार ने स्पष्ट या अंतर्निहित सूचना दी है** (धारा 59): देनदार (debtor) को यह अधिकार है कि वह लेनदार (lender) को आदेश दे कि भुगतान को किस ऋण के प्रति विनियोजित करे। यदि लेनदार भुगतान को स्वीकार कर लेता है तो वह देनदार के आदेश का पालन करने के लिए कर्त्तव्यबद्ध है। यदि भुगतान करते समय देनदार, लेनदार को स्पष्ट सूचना देता है कि भुगतान को किस ऋण-विशेष की अदायगी माना जाए, तो लेनदार को उसी आदेशानुसार कार्य करना चाहिए। परन्तु यदि देनदार की तरफ से कोई स्पष्ट सूचना नहीं है तब परिस्थितियों से उसका आशय ज्ञात करना चाहिए।

आइए अब निम्नलिखित दो उदाहरणों के द्वारा इस नियम को स्पष्ट करते हैं:

i) क पर ख के कई ऋण हैं, इनमें से 1,000 रुपये का एक ऋण एक प्रोनोट पर लिया गया है जो 1 जून को देय है। क पर ख का इस राशि का कोई और ऋण नहीं है। 1 जून को क, ख को 1,000 रुपये का भुगतान करता है। इस भुगतान को प्रोनोट के ऋण के प्रति विनियोजित किया जाना चाहिए।

ii) क पर ख के कई ऋण हैं, जिनमें से एक ऋण 567 रुपये का है। ख एक पत्र लिखकर क से इस ऋण के भुगतान की मांग करता है। क 567 रुपये भेज देता है। इस भुगतान को उस ऋण के लिए माना जाना चाहिए जिसके भुगतान की मांग ख ने की थी।

यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि देनदार के स्पष्ट या अंतर्निहित आदेश का पालन लेनदार नहीं करना चाहता तो उसे भुगतान स्वीकार करने से मना कर देना चाहिए। परन्तु भुगतान को स्वीकार करने के पश्चात् लेनदार विनियोजन में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता।

2 **जब कोई स्पष्ट या अंतर्निहित सूचना नहीं है:** यदि भुगतान करते समय देनदार कोई सूचना नहीं देता और परिस्थितियों से भी यह प्रकट नहीं होता कि भुगतान की राशि को किस ऋण की अदायगी माना जाए, तब लेनदार उस भुगतान की राशि को देनदार द्वारा देय किसी भी वैध ऋण की अदायगी मान सकता है। ऐसी स्थिति में किसी कालातीत (time–barred) ऋण के प्रति भी भुगतान का विनियोजन किया जा सकता है। परन्तु भुगतान को किसी विवादास्पद या अवैध ऋण के लिए प्रयुक्त नहीं किया जा सकता। परन्तु जब लेनदार भुगतान का एक बार विनियोजन कर लेता है और इसकी सूचना देनदार को दे देता है, तब फिर लेनदार इसमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकता।

3 **जब किसी भी पक्ष ने विनियोजन नहीं किया है:** जब न तो देनदार और न लेनदार भुगतान का विनियोजन करता है, तब उस भुगतान को ऋणों के समय-क्रम के अनुसार विनियोजित किया जाएगा, चाहे ऋण कालातीत हो या नहीं। यदि अनेक ऋण एक ही समय पर देय हैं तो भुगतान की राशि का विनियोजन, आनुपातिक रूप से, उन सभी ऋणों के लिए किया जाएगा। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना चाहिए कि जब बिना किसी स्पष्ट या अंतर्निहित आदेश के लेनदार राशि स्वीकार कर लेता है, तो भुगतान की राशि पहले ब्याज के भुगतान के लिए तथा शेष को मूलधन के लिए विनियोजित करना चाहिए।

बोध प्रश्न ख

1 पारस्परिक वचन क्या होते हैं ?

....

....

....

....

2 पारस्परिक वचनों का वर्गीकरण कीजिए।

....

....

....

3 अनुबंध के समनुदेशन से आपका क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

....

4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) ऐसे वचन जो एक-दूसरे के लिए प्रतिफल हैं, पारस्परिक वचन कहलाते हैं। ....

ii) ऐसे वचन जिनका निष्पादन एक ही समय में किया जाना हो, पारस्परिक एवं स्वतन्त्र कहलाते हैं। ....

iii) जब एक पक्ष का निष्पादन, दूसरे पक्ष के निष्पादन पर निर्भर करता है तो उन्हें सशर्त एवं आश्रित वचन कहते हैं। ....

iv) वैयक्तिक कौशल एवं योग्यता के अनुबन्धों के दायित्वों का समनुदेशन नहीं किया जा सकता। ....

v) मृत्यु या दिवालिएपन की स्थिति में कानून के द्वारा समनुदेशन होता है। ....

vi) भुगतान करते समय यदि देनदार स्पष्ट रूप से लेनदार को सूचित करता है कि भुगतान को किस ऋण की अदायगी

माना जाए, तो लेनदार ऐसा मानने के लिए बाध्य नहीं है। . . . .

vii) जब देनदार कोई सूचना नहीं देता और न ही परिस्थितियों से यह प्रकट हो कि भुगतान को किस ऋण की अदायगी माना जाए तो लेनदार, अपनी इच्छानुसार किसी भी वैध ऋण की अदायगी मान सकता है। . . . .

viii) भुगतान करते समय यदि देनदार यह स्पष्ट नहीं करता कि भुगतान को किस ऋण के लिए प्रयुक्त किया जाए, तब लेनदार किसी भी ऋण की अदायगी मान सकता है चाहे वह कालातीत ही क्यों न हो। . . . .

'.10 अनुबंध समाप्ति के तरीके (Modes of Discharge of a Contract)

ाप पढ़ चुके हैं कि वैध अनुबंध से अनुबंध करने वाले पक्षकारों के लिए कुछ दायित्व उत्पन्न ते हैं तथा पक्षकार अपने-अपने वचन का पालन करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। जब इन चनों का पालन कर दिया जाता है तब अनुबंध को समाप्त हुआ समझा जाता है। 'अनुबंध ो समाप्ति' शब्द का अर्थ है कि अब पक्षकार अनुबंध के अन्तर्गत उत्तरदायी नहीं रहे अर्थात् नुबंध समाप्त होते ही उससे उत्पन्न समस्त अधिकार एवं कर्तव्य समाप्त हो जाते हैं। नुबंध को समाप्त करने का सबसे सहज और सरल तरीका उसका निष्पादन करना है। ष्पादन सम्बन्धी नियमों का अध्ययन हम पिछले पृष्ठों में कर चुके हैं। आइए अब अनुबंध ो समाप्त करने के अन्य तरीकों पर एक नजर डालते हैं।

नुबंध की समाप्ति निम्नलिखित में से किसी भी एक प्रकार से हो सकती है:

निष्पादन द्वारा
पारस्परिक सहमति द्वारा
समय व्यतीत हो जाने से
कानून के प्रवर्तन द्वारा
निष्पादन की असंभवता
अनुबंध भंग द्वारा

चित्र 7.1 में अनुबंध की समाप्ति के तरीकों को दर्शाया गया है —

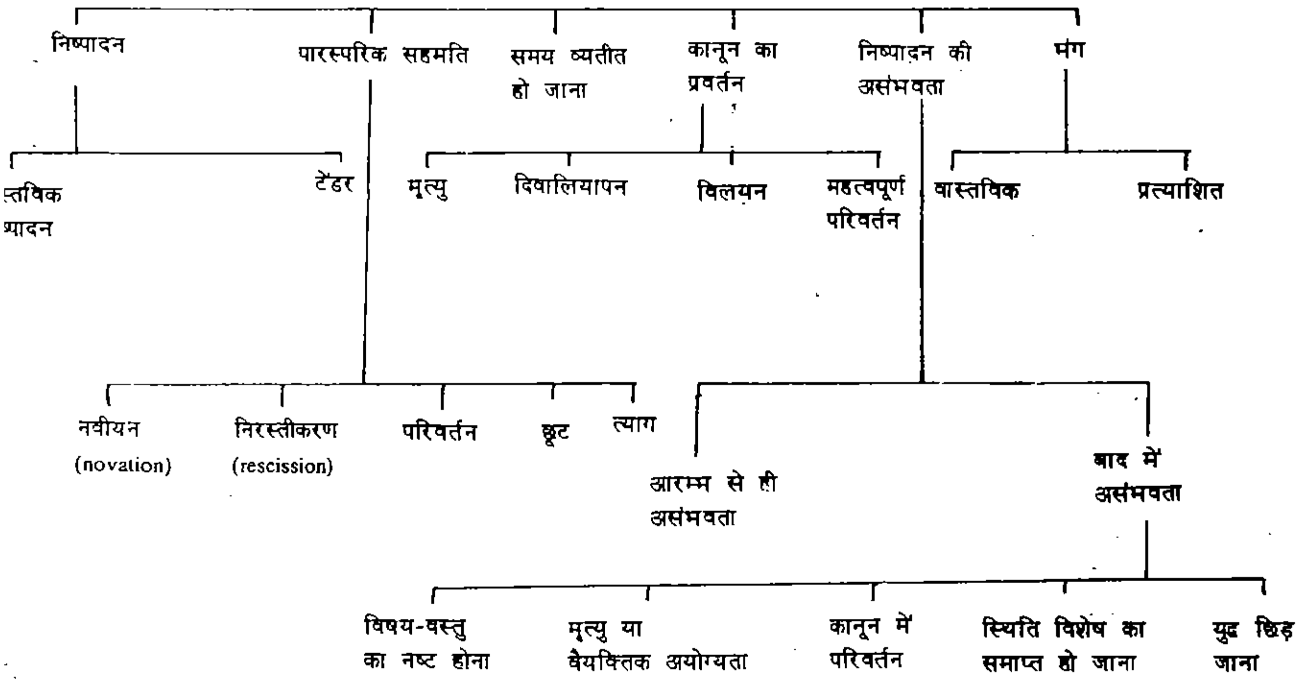

अब हम इन विभिन्न तरीकों का बारी-बारी से वर्णन करते हैं।

7.10.1 निष्पादन द्वारा समाप्ति

अनुबंध को समाप्त करने का सबसे सहज और स्वाभाविक तरीका उसका निष्पादन करना है। निष्पादन, वास्तविक या प्रयास किया हुआ हो सकता है। इस इकाई के 7.2 में निष्पादन के बारे में आप विस्तार से पढ़ चुके हैं।

7.10.2 पारस्परिक सहमति से समाप्ति

जिस प्रकार पक्षकारों की सहमति से अनुबंध का निर्माण होता है, उसी प्रकार पारस्परिक सहमति से इसे समाप्त भी किया जा सकता है। यदि अनुबंध के पक्षकार मूल अनुबंध के स्थान पर नया अनुबंध करने के लिए सहमत हैं, तब मूल अनुबंध समाप्त हो जाता है। पारस्परिक सहमति से अनुबंध को निम्नलिखित में से किसी भी एक तरीके से समाप्त किया जा सकता है।

क) **नवीयन (Novation)** : नवीयन का अर्थ है किसी विद्यमान अनुबन्ध के स्थान पर एक नया अनुबंध करना। प्रतिस्थापित नया अनुबंध उन्हीं पुराने पक्षकारों में अथवा नये पक्षकारों में हो सकता है। मूल अनुबंध की समाप्ति ही नये अनुबंध के लिए प्रतिफल होती है। क्योंकि नवीयन में एक नया अनुबन्ध किया जाता है अत: मूल अनुबंध के सभी पक्षकारों की सहमति आवश्यक है।

उदाहरण:

i) एक अनुबंध के अन्तर्गत **क**, **ख** का ऋणी है। **क**, **ख** और **ग** के बीच यह करार होता है कि भविष्य में **ख**, **क** के स्थान पर **ग** को अपना ऋणी समझेगा। **ख** के प्रति **क** का पुराना ऋण समाप्त हो गया तथा **ग** ने **ख** से एक नये ऋण का अनुबंध किया। नवीयन की इस स्थिति में पक्षकारों में परिवर्तन हुआ है।

ii) **क** ने **ख** को 10,000 रुपये देना है। **क**, **ख** से एक करार करता है जिसके अनुसार वह 10,000 रुपये के इस ऋण के बदले अपनी जायदाद **ख** के पास 5,000 रुपये में बंधक रखता है। इससे एक नया अनुबंध हुआ जिसने मूल अनुबंध को समाप्त कर दिया।

ख) **निरस्तीकरण (Rescission)** : निरस्तीकरण का अर्थ है अनुबंध को रद्द या निरसन करना। यदि अनुबंध के पक्षकार परस्पर सहमति से अनुबंध को समाप्त करने के लिए सहमत हो जाते हैं, तो अनुबंध समाप्त हुआ समझा जाता है। अनुबंध के निष्पादन की तारीख से पहले इसका विखंडन किया जा सकता है। जब अनुबंध के दोनों पक्षकारों ने काफी लम्बी अवधि तक उसका पालन नहीं किया हो और उन्हें इस सम्बन्ध में एक दूसरे से कोई शिकायत भी न हो, तो इसे अंतर्निहित निरस्तीकरण माना जाएगा। निरस्तीकरण, नवीयन से इस अर्थ में भिन्न है कि नवीयन में तो मूल अनुबंध के स्थान पर एक नया अनुबंध प्रतिस्थापित हो जाता है जबकि निरस्तीकरण में पुराने अनबंध को रद्द कर दिया जाता है, उसके स्थान पर नया अनुबंध नहीं किया जाता।

ग) **परिवर्तन (Alteration)** : जब अनुबंध की एक या अधिक शर्तों में पारस्परिक सहमति से परिवर्तन किया जाता है, तो इसे 'परिवर्तन' कहते हैं। परिवर्तन किए जाने पर मूल अनुबंध समाप्त हो जाता है। परिवर्तन की दशा में केवल अनुबंध की शर्तों में फेर-बदल किया जाता है परन्तु पक्षकारों में कोई परिवर्तन नहीं होता, जबकि नवीयन में पक्षकारों में भी परिवर्तन हो सकता है।

घ) **छूट (Remission)** : इसका अर्थ है जब अनुबंध के अन्तर्गत देय राशि से कम राशि या दिए गये वचन से कम कार्य को स्वीकार कर लिया जाए। धारा 63 के अनुसार, प्रत्येक वचनग्रहीता, (i) दिए गये वचन के निष्पादन में पूर्ण या आंशिक छूट दे सकता है, या (ii) निष्पादन के समय में वृद्धि कर सकता है, या (iii) उसके स्थान पर कोई अन्य निष्पादन स्वीकार कर सकता है। उदाहरणार्थ, **क** पर **ख** का 5,000 रुपये का ऋण है। **क** ऋण के पूर्ण भुगतान में **ख** को 3,000 रुपये देता है जो उसे पूरे ऋण के लिये स्वीकार कर लेता है। इस स्थिति में पूरा ऋण चुकता हुआ माना जाएगा।

ड) **त्याग (Waiver) :** त्याग से तात्पर्य है अनुबंध के अन्तर्गत अधिकारों को जानबूझकर त्याग देना। जब कोई एक पक्ष अपने अधिकारों का परित्याग करता है, तो दूसरा पक्ष भी अपने दायित्वों से मुक्त हो जाता है। उदाहरणार्थ, **क, ख** के लिए एक चित्र बनाने का वचन देता है। बाद में, **ख** उसे ऐसा करने से रोक देता है। अब **क** अपने वचन का पालन करने के लिए बाध्य नहीं रहा।

7.10.3 समय बीतने से समाप्ति

अनुबंध के अन्तर्गत अधिकारों व दायित्वों को केवल एक निश्चित अवधि के भीतर ही प्रवर्तित किया जा सकता है, इसे 'परिसीमा अवधि' कहते हैं। परिसीमा अधिनियम में विभिन्न अनुबंधों के लिए परिसीमा की अवधि निर्धारित की गई है। उदाहरणार्थ, अचल सम्पत्ति को प्राप्त करने के अधिकार के लिए यह अवधि 12 वर्ष है तथा ऋण की वसूली के लिए तीन वर्ष है। परिसीमा की अवधि व्यतीत हो जाने पर, अनुबंध से उत्पन्न अधिकारों को लागू नहीं किया जा सकता। अन्य शब्दों में यदि किसी ऋण को उसके देय होने की तारीख के तीन वर्षों के भीतर वसूल नहीं किया जाता, तो यह अवधि वर्जित हो जाता है तथा समय व्यतीत हो जाने से यह दायित्व समाप्त हो जाता है।

7.10.4 कानून के प्रवर्तन द्वारा समाप्ति

कानून के प्रवर्तन द्वारा निम्नलिखित परिस्थितियों में अनुबंध समाप्त हो सकता है:

i) **वचनदाता की मृत्यु:** वैयक्तिक कौशल या योग्यता पर आधारित अनुबंध वचनदाता की मृत्यु हो जाने पर समाप्त हो जाते हैं।

ii) **दिवालियापन:** जब किसी व्यक्ति को न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित किया जाता है तो वह उस समय विद्यमान समस्त दायित्वों से मुक्त हो जाता है। इस प्रकार यदि वचनदाता को दिवालिया घोषित किया जाता है तो वह समस्त दायित्वों से मुक्त माना जाता है।

iii) **विलय:** जब किसी पक्ष के अनुबंध से उत्पन्न कम महत्व के अधिकार उसी अनुबंध के अधिक महत्व के अधिकारों में समाकर अर्थहीन हो जाते हैं, तब पहला अनुबंध समाप्त हो जाता है। उदाहरणार्थ, **क** ने एक ज़मीन का टुकड़ा **ख** से पट्टे पर लिया। बाद में **क** उसी जमीन को खरीद लेता है। अब **क** उस जमीन का स्वामी हो गया और पट्टे का पहला अनुबंध समाप्त हो गया।

iv) **महत्वपूर्ण परिवर्तन:** यदि किसी लिखित अनुबंध की शर्तों में कोई पक्ष, दूसरे पक्ष की सहमति के बिना ही परिवर्तन कर देता है तो अनुबंध को समाप्त हुआ समझा ज़ाता है। कोई भी ऐसा परिवर्तन जो पक्षकारों के अधिकारों एवं कर्तव्यों में या उनकी स्थिति में परिवर्तन कर दे, महत्वपूर्ण परिवर्तन कहलाता है। यह ध्यान रहे कि कोई मामूली परिवर्तन या ऐसा परिवर्तन जो महत्वपूर्ण नहीं है, जैसे क्लर्क की गलती को सुधारने या नाम के हिज्जे बदलने से अनुबंध की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

7.10.5 निष्पादन की असंभवता से समाप्ति

इकाई 1 में आपने पढ़ा कि वैध अनुबंध के लिए वह निष्पादन योग्य होना चाहिए। परन्तु कई बार कुछ ऐसी घटनाएँ घटित हो जाती हैं जो पक्षकारों के वश के बाहर होती हैं और जिनके कारण निष्पादन असम्भव हो जाता है। ऐसी स्थिति में, असंभवता (impossibility) के आधार पर अनुबंध को समाप्त हुआ समझा जाता है। धारा 56 में बताया गया है कि किसी असम्भव कार्य को करने का करार अपने आप में व्यर्थ होता है। यह नियम इस सिद्धान्त पर आधारित है कि कानून असम्भव कार्यों को मान्यता नहीं देता और जो असम्भव है उससे कोई दायित्व उत्पन्न नहीं होता।

असंभवता दो प्रकार की हो सकती है: (i) प्रारंभिक तथा (ii) बाद वाली।

प्रारंम्भिक असंभवता: इसका अर्थ है अनुबंध करते समय की असम्भावना। इस असंभावना की जानकारी पक्षकारों को चाहे है या नहीं, करार को आरम्भ से व्यर्थ माना जाता है।

उदाहरणार्थ, क जादू के बल से खजाने को ढूढ़ने का करार ख से करता है। यह कार्य आरम्भ से ही असम्भव है अतः करार व्यर्थ है।

परन्तु, यदि अनुबंध करते समय प्रारंभिक असंभवता की जानकारी केवल वचनदाता को हो, तो वचन के अपालन से हुई वचनग्रहीता की हानि को पूरा करने का दायित्व वचनदाता का होता है। यह नियम धारा 56 के पैरा 3 में दिया गया है। उदाहरणार्थ, क, ख से विवाह करने का अनुबंध करता है, जबकि वह पहले से ही ग से विवाहित है। प्रचलित कानून के अनुसार क एक से अधिक विवाह नहीं कर सकता। अतः क, ख को उस हानि का मुआवज़ा देने के लिए बाध्य है जो उसने क द्वारा अपने वचन का पालन न करने के कारण उठाई है।

यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि अनुबंध करते समय प्रारम्भिक असंभवता की जानकारी दोनों ही पक्षों को नहीं है, तब पारस्परिक गलती के कारण अनुबंध व्यर्थ (void) हुआ माना जाएगा। उदाहरणार्थ, क अपना घोड़ा 1,000 रुपये में ख को बेचने का करार करता है। करार के समय घोड़ा मर चुका था, परन्तु उसकी मृत्यु की जानकारी किसी भी पक्ष को नहीं थी। यह करार व्यर्थ है।

परवर्ती या आकस्मिक असंभवता: अनुबंध करने के बाद जब असंभवता उत्पन्न होती है तो इसे आकस्मिक असंभावना कहते हैं। यदि अनुबंध करते समय उसका निष्पादन सम्भव था, परन्तु उसके बाद किसी ऐसी घटना के परिणामस्वरूप (जिस पर किसी भी पक्ष का वश नहीं है) निष्पादन असम्भव या अवैध हो जाता है, तो अनुबंध व्यर्थ हो जाता है तथा पक्षकार अपने-अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं।

यहाँ आपने गौर किया होगा कि आकस्मिक असम्भावना प्रारम्भिक असम्भावना से भिन्न है। प्रारम्भिक असंभावना की स्थिति में करार आरम्भ से ही व्यर्थ होता है जबकि आकस्मिक असम्भावना की स्थिति में अनुबंध **व्यर्थ हो जाता है।**

आकस्मिक असंभावता के सिद्धान्त को धारा 56 के पैरा 2 में बताया गया है, इसके अनुसार, **कोई ऐसा कार्य करने का अनुबंध, जो अनुबंध करने के बाद असम्भव हो जाता है, या किसी ऐसी घटना के कारण, जिसे वचनदाता रोक नहीं सकता था, विधि विरुद्ध हो जाता है तब कार्य के असम्भव या विधि विरुद्ध हो जाने पर अनुबंध व्यर्थ हो जाता है।**

आकस्मिक असंभवता के आधार पर अनुबंध केवल तभी व्यर्थ होता है जब निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाता है:

क) कार्य असम्भव हो जाना चाहिए।

ख) असम्भवता किसी ऐसी घटना से उत्पन्न होनी चाहिए जिसे वचनदाता रोक नहीं सकता हो।

ग) असम्भवता, वचनदाता द्वारा स्वयं उत्पन्न नहीं हो।

निम्नलिखित किसी भी कारण से अनुबंध का निष्पादन बाद में असम्भव हो जाता है:

1 **विषय-वस्तु का नाश:** यदि अनुबंध करने के पश्चात्, किसी भी पक्ष की गलती के बिना, अनुबंध की विषय-वस्तु नष्ट हो जाती है, तो अनुबंध व्यर्थ हो जाता है।

उदाहरण:

i) निर्धारित तिथियों पर संगीत-कार्यक्रमों के लिए एक हाल किराए पर दिया गया। परन्तु उस तारीख से पहले ही आग लग जाने से हाल नष्ट हो गया। निष्पादन की असम्भवता के आधार पर अनुबंध को व्यर्थ हुआ माना गया **(टेलर बनाम काल्डवैल)**।

ii) एक व्यक्ति ने आलू की फसल का एक भाग बेचने का अनुबंध किया। कीड़ा लग जाने से आलू नष्ट हो गये और कीड़ा लगने में किसी भी पक्ष का दोष नहीं था। इस अनुबंध को शून्य माना गया **(हावेल बनाम कूपलैंड)**।

2 **मृत्यु या वैयक्तिक अक्षमता:** जब अनुबंध का निष्पादन किसी पक्ष की वैयक्तिक कुशलता या योग्यता पर निर्भर है, तो उस व्यक्ति की मृत्यु या वैयक्तिक अक्षमता पर अनुबंध समाप्त हुआ माना जाता है। उदाहरणार्थ, क ने एक नियत तिथि पर एक संगीत कार्यक्रम में भाग लेने का करार किया। गंभीर रूप से बीमार हो जाने के कारण वह नियत

दिन भाग नहीं ले सका। निर्णय दिया गया कि असम्भवता के आधार पर अनुबंध समाप्त हो गया **(रोबिन्सन बनाम डेविसन)**।

3 **कानून में परिवर्तन:** यदि अनुबंध करते समय वह न्याय संगत है, परन्तु बाद में कानून में कोई परिवर्तन हो जाने से वह विधि विरुद्ध हो जाता है, तो निष्पादन असम्भव हो जाता है तथा अनुबंध समाप्त माना जाता है।

उदाहरण

i) **क** ने **ख** का माल एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने का करार किया। इसके पश्चात्, कानूनी शक्ति के अन्तर्गत सरकार ने **क** के ट्रकों का अधिग्रहण कर लिया। निर्णय दिया गया कि **क** अपने दायित्व से मुक्त हो गया **(नूर बक्श बनाम कल्याण)**।

ii) **क** ने अपनी जमीन **ख** को बेचने का करार किया। बाद में, सरकार ने उस जमीन का अभिग्रहण (acquisition) कर लिया। अब **क** अपने वचन का पालन नहीं कर सकता, असम्भवता के आधार पर अनुबंध को व्यर्थ हुआ माना गया **(श्याम सुन्दर बनाम दुर्गा)**।

4 **स्थिति-विशेष के समाप्त होने पर:** यदि किसी स्थिति-विशेष के बने रहने पर या घटना के घटित होने पर अनुबंध आधारित है, तो उस स्थिति-विशेष के समाप्त हो जाने या उसमें परिवर्तन हो जाने पर, अनुबंध समाप्त हो जाता है। यहाँ यह ध्यान रहे कि अनुबंध को केवल तभी समाप्त माना जाता है जब इस घटना का घटित होना अनुबंध का आधार हो।

उदाहरण

i) **क** और **ख** एक दूसरे से विवाह करने का अनुबंध करते हैं। विवाह के नियत समय से पहले **क** पागल हो जाता है। यह अनुबंध व्यर्थ हुआ माना जाएगा।

ii) **क** ने सम्राट एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक जुलूस को देखने के लिए एक होटल में एक कमरा किराए पर लिया। सम्राट के बीमार हो जाने के कारण जुलूस का कार्यक्रम रद्द कर दिया गया। निर्णय दिया गया कि **क** उस कमरे का किराया देने के लिए बाध्य नहीं है क्योंकि जिस कार्य-विशेष के लिए कमरा लिया गया था वह ही विफल हो गया **(क्रेल बनाम हेनरी)**। इस प्रकार की आकस्मिक असम्भावना को अनुबंध की विवशता भी कहा जाता है।

5 **युद्ध छिड़ना:** यदि अनुबंध करने के बाद युद्ध छिड़ जाता है, तो ऐसे सभी अनुबंध जो युद्ध छिड़ने से पहले किए गये थे, उन्हें या तो स्थगित कर दिया जाता है या व्यर्थ हुआ माना जाता है। यदि युद्ध थोड़े से समय के लिए है, तो युद्ध के समाप्त होने के बाद ऐसे अनुबंधों को पुनर्जीवित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ **क** एक विदेशी बन्दरगाह से **ख** का माल लाने का अनुबंध करता है। इसके बाद **क** की सरकार का उस देश की सरकार के साथ युद्ध छिड़ जाता है जिस देश में वह बन्दरगाह स्थित है। युद्ध छिड़ जाने पर यह अनुबंध व्यर्थ हुआ माना जाता है।

अपवाद अर्थात आकस्मिक असम्भवता की परिधि में न आने वाले मामले: उपर्युक्त नियम कुछ परिस्थितियों में लागू नहीं होता है। जब किसी व्यक्ति ने कोई कार्य करने का वचन दिया है, तो उसे उस वचन का तब तक पालन करना चाहिए जब तक कि निष्पादन पूर्णत: असम्भव न हो जाए। यह एक नियम है कि **निष्पादन की असम्भावना अनुबंध का निष्पादन न करने का कोई बहाना नहीं है।** कुछ मामले जो आकस्मिक असम्भवता के सिद्धान्त के अन्तर्गत नहीं आते, निम्नलिखित हैं:

क) **निष्पादन में कठिनाई:** केवल इसी बात पर कि अब निष्पादन बहुत कठिन हो गया है या अधिक खर्चीला हो गया है या पहले जितना लाभप्रद नहीं रहा, अनुबंध को समाप्त नहीं माना जाता।

उदाहरण

i) **क** ने एक नियत अवधि में कोयला सप्लाई करने का करार किया। सरकार द्वारा खदानों से कोयला लाने पर प्रतिबन्ध लगा देने के कारण वह समय पर कोयला सप्लाई नहीं कर सका। लेकिन खुले बाज़ार में कोयला उपलब्ध था जहाँ से **क** खरीद सकता था, ऐसी स्थिति में असम्भवता के आधार पर **क** अपने दायित्व से मुक्त नहीं होगा।

ii) क ने सितम्बर में कुछ माल बम्बई से ऐन्टवर्प भेजने का करार किया। अगस्त में युद्ध छिड़ गया जिसके कारण जहाज़ पर बहुत अधिक भाड़े पर स्थान उपलब्ध था। निर्णय दिया गया कि माल भाड़े में वृद्धि हो जाने से निष्पादन को माफ नहीं किया जा सकता।

ख) **व्यापारिक असंभवता:** व्यापारिक असम्भवता भी निष्पादन न करने का पर्याप्त आधार नहीं है। यदि कच्चा माल बहुत अधिक मूल्य पर उपलब्ध है या मज़दूरी की दरों में इतनी वृद्धि हो गई है कि निष्पादन अब अपेक्षा से कम लाभकारी है तो यह कहा जाता है कि निष्पादन का पालन व्यापारिक दृष्टि से असम्भव हो गया है, परन्तु इससे अनुबंध समाप्त हुआ नहीं माना जाता। व्यापारिक असंभवता की दशा में पक्षकारों का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। उदाहरणार्थ, **क** ने कुछ निश्चित माल **ख** को सप्लाई करने का करार किया। कच्चे माल के मूल्य में और मज़दूरी की दरों में वृद्धि हो जाने के कारण, अनुबन्धित मूल्य पर माल सप्लाई करना **क** के लिए अब लाभकारी नहीं रहा। **क** निष्पादन के दायित्व से मुक्त नहीं होगा।

ग) **तीसरे पक्षकार द्वारा त्रुटि:** यदि किसी तीसरे पक्षकार के कार्य पर भरोसा करके वचन दिया गया है और वह तीसरा पक्ष त्रुटि करता है, तो वचनदाता दायित्व मुक्त नहीं होता है। उदाहरणार्थ, **क** ने **ख** को कुछ सूती माल सप्लाई करने का करार किया जो कि इस प्रकार के माल के निर्माता **ग** द्वारा उत्पादित होना है। **ग** ने उक्त माल का उत्पादन नहीं किया। **क** का दायित्व समाप्त नहीं हुआ तथा वह **ख** को हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी है।

घ) **हड़ताल, तालाबन्दी और नागरिक उपद्रव:** जब तक इस सम्बन्ध में अनुबंध में कोई शर्त न हो तब तक श्रमिकों की हड़ताल या मालिक द्वारा तालाबन्दी करने या नागरिक उपद्रव होने के कारण पक्षकारों को अनुबन्ध के निष्पादन से छुटकारा नहीं मिल सकता। उदाहरणार्थ, दो व्यापारियों के बीच किसी ऐसे माल के विक्रय का अनुबंध हुआ जो अल्जीरिया से आयात किया जाना था। अल्जीरिया में दंगे व नागरिक उपद्रवों के कारण माल आयात नहीं किया जा सका। निर्णय दिया गया कि इसे अनुबन्ध का निष्पादन न करने का बहाना नहीं बनाया जा सकता।

च) **आंशिक असंभवता:** जब कोई अनुबंध कई उद्देश्यों के लिए किया जाता है, तो उनमें से किसी एक या अधिक के विफल हो जाने से अनुबंध समाप्त नहीं हो जाता। उदाहरणार्थ, **क** ने **प** को एक नाव (i) राजा के राज्याभिषेक पर नौसेना का प्रदर्शन देखने, तथा (ii) युद्ध बेड़े के चारों तरफ घूमने के लिए किराए पर दी। राजा के बीमार हो जाने के कारण नौसेना का प्रदर्शन रद्द कर दिया गया परन्तु युद्ध बेड़े को जमा किया गया तथा युद्ध बेड़े के चारो ओर घूमने के लिए नाव का उपयोग किया जा सकता था। निर्णय दिया गया कि अनुबंध समाप्त नहीं हुआ।

आकस्मिक असंभवता के परिणाम

क) **अनुबंध व्यर्थ हो जाता है:** यदि अनुबंध करने के पश्चात् अनुबन्ध का निष्पादन असम्भव या विधि विरुद्ध हो जाता है, तो अनुबंध व्यर्थ हो जाता है (धारा 56, पैराग्राफ 2)।

ख) **अपालन के लिए मुआवज़ा:** जब केवल वचनदाता को उस कार्य के असम्भव या विधि विरुद्ध होने की जानकारी होती है, तो उसे उसका पालन न होने से वचनग्रहीता को जो हानि हुई है, उसका मुआवज़ा देना होगा (धारा 56 पैराग्राफ 3)।

ग) **लाभ लौटाना:** जब कोई अनुबंध व्यर्थ हो जाता है, तो उसके अन्तर्गत जिस पक्ष ने जो भी लाभ प्राप्त किया है, वह उसे लौटाना होगा या जिससे लाभ प्राप्त हुआ है उसे मुआवज़ा देना होगा (धारा 65)। उदाहरणार्थ, **क** एक संगीत समारोह में **ख** के लिए 1,000 रुपये में गाना गाने का अनुबन्ध करती है और यह राशि उसे अग्रिम दी जाती है। **क** इतनी बीमार है कि वह गा नहीं सकती। **क** को 1,000 रुपये की अग्रिम राशि **ख** को लौटानी होगी।

7.10.6 भंग से समाप्ति

आप पढ़ चुके हैं कि जब कोई अनुबंध किया जाता है तो पक्षकारों से यह आशा की जाती है कि जब तक उन्हें इससे मुक्त न कर दिया जाए, तब तक वे इसका पालन करेंगे। जब कोई

भी पक्ष अनुबंध के अन्तर्गत अपने वचन का पालन करने में त्रुटि करता है या मना कर देता है तो इसे अनुबंध मंग (breach of contract) कहते हैं तथा अनुबंध समाप्त हो जाता है। अनुबंध भंग की स्थिति में पीड़ित पक्ष अपने वचन का पालन करने के दायित्व से मुक्त हो जाता है तथा दोषी पक्ष के विरुद्ध कार्यवाही करने का हकदार हो जाता है। अनुबंध भंग दो प्रकार से हो सकता है — (i) वास्तविक भंग (actual-breach), तथा (ii) प्रत्याशित या समय से पूर्व भंग (anticipatory breach)।

वास्तविक अनुबंध भंग: निष्पादन की नियत तारीख पर या उसके दौरान वास्तविक अनुबंध भंग हो सकता है। उदाहरणार्थ, **क** निश्चित मूल्य पर 10 जुलाई को **ख** को 100 बोरी चावल देने का करार करता है। यदि नियत तारीख पर **क** माल देने में त्रुटि करता है या माल देने से इंकार करता है, तो इसे वास्तविक अनुबंध भंग कहते हैं। यदि वचनदाता ने अनुबंध का आंशिक निष्पादन कर दिया है तथा वह बकाया माल देने या शेष कार्य को पूरा करने से इंकार कर देता है, तो इसे भी वास्तविक अनुबंध भंग कहते हैं।

प्रत्याशित अनुबंध भंग: जब अनुबंध के निष्पादन के नियत समय से पूर्व कोई एक पक्ष अपने वचन का पालन नहीं करने की घोषणा करता है, तो इसे प्रत्याशित या समय से पूर्व भंग कहते हैं। यह इरादा स्पष्ट या अन्तर्निहित हो सकता है।

उदाहरणार्थ, **क** कुछ निश्चित माल **ख** को 10 जुलाई को देने का वचन देता है। इस तारीख से पहले **क**, **ख** को सूचित कर देता है कि वह माल नहीं देगा या स्पष्ट तौर से माल न देने के अपने इरादे की सूचना देने के स्थान पर **क** कोई ऐसा कार्य करता है कि अब वचन का पालन करना उसके लिए असम्भव हो जाता है। इसे भी प्रत्याशित अनुबंध भंग कहते हैं। यदि उपर्युक्त उदाहरण में नियत तारीख से पहले **क** वह सारा माल अधिक मूल्य पर **र** को बेच देता है, तब **क** की यह कार्यवाही स्पष्ट तौर से उसके इरादे को प्रकट करती है।

अत: अनुबंध भंग होने पर अनुबंध समाप्त हुआ माना जाता है। अनुबंध भंग की स्थिति में पीड़ित पक्ष को दोषी पक्ष से मुआवज़ा या हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार मिल जाता है। पीड़ित पक्ष को प्राप्त विभिन्न उपचारों का वर्णन इकाई 8 में किया जाएगा।

बोध प्रश्न ग

1 नवीयन क्या है ?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

2 क्या वचनदाता की मृत्यु पर सभी दशाओं में अनुबंध समाप्त हो जाता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

3 आकस्मिक असम्भावना का सिद्धान्त बताइए।

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

4 कानून के प्रवर्तन द्वारा अनुबंध कब समाप्त होता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

. . . .

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) यदि किसी विद्यमान अनुबंध के स्थान पर नया अनुबंध प्रतिस्थापित किया जाता है, यह परिवर्तन कहलाता है। ....

ii) वचनदाता के दिवालिएपन से अनुबंध समाप्त हो जाता है। ....

iii) निष्पादन की असम्भावना, अनुबन्ध का निष्पादन न करने का बहाना नहीं है।

iv) निष्पादन की कठिनाई अनुबंध को व्यर्थ कर देती है। ....

v) यदि किसी ऐसे तीसरे पक्ष द्वारा त्रुटि किए जाने पर अनुबंध का निष्पादन नहीं हो सका, जिसके काम पर वचनदाता ने भरोसा किया था, तो अनुबंध व्यर्थ हो जाता है। ....

vi) किसी ऐसे कार्य को करने का करार जो अपने आप में असम्भव है, व्यर्थ होता है। ....

vii) प्रत्याशित भंग अनुबन्ध के निष्पादन के समय से पहले होता है।

7.11 सारांश

अनुबंध को समाप्त करने का सबसे स्वाभाविक तरीका इसका पालन करना है। निष्पादन वास्तविक या प्रयास किया गया (जिसे टेंडर भी कहते हैं) हो सकता है। जब एक पक्ष अनुबंध के अनुसार अपने वचन के पालन करने का प्रस्ताव करता है और दूसरा पक्ष इसे स्वीकार करने से मना कर देता है, तो अनुबंध समाप्त हो जाता है। निष्पादन के प्रयास या टेंडर को वास्तविक निष्पादन के समान माना जाता है। जिस पक्ष ने निष्पादन का प्रस्ताव किया है वह दायित्व से मुक्त हो जाता है। वैध टेंडर कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि वह शर्तरहित हो, उचित समय पर व उचित स्थान पर एवं ढंग से किया गया हो, वचनग्रहीता या उसके विधिक प्रतिनिधि को किया जाए तथा सम्पूर्ण वचन के पालन के लिए हो।

केवल वचनग्रहीता द्वारा ही निष्पादन की मांग की जा सकती है। उसकी मृत्यु होने पर उसके वारिस निष्पादन की मांग कर सकते हैं। वैयक्तिक प्रकृति के अनुबंधों का निष्पादन केवल वचनदाता द्वारा ही किया जाना चाहिए। अन्य स्थितियों में, निष्पादन उसके एजेंट द्वारा तथा उसकी मृत्यु की स्थिति में उसके विधिक प्रतिनिधियों द्वारा किया जा सकता है।

जब दो या अधिक व्यक्ति मिलकर संयुक्त वचन देते हैं, तो जब तक अनुबंध से कोई विपरीत आशय प्रकट न होता हो, उन सबको संयुक्त रूप से इसका निष्पादन करना होता है। यदि किसी एक संयुक्त वचनदाता की मृत्यु हो जाती है, तो उसका विधिक प्रतिनिधि, शेष जीवित संयुक्त वचनदाताओं के साथ मिलकर निष्पादन करेगा।

अनुबंध का निष्पादन नियत समय पर एवं नियत स्थान पर होना चाहिए। यदि कोई समय निश्चित नहीं किया गया है तो वचनदाता को उचित समय के भीतर निष्पादन कर देना चाहिए। यदि निष्पादन के लिए कोई स्थान व समय निश्चित नहीं किया गया है, तो वचनदाता को वचनग्रहीता से समय व स्थान निश्चित करने की मांग करनी चाहिए। व्यापारिक अनुबंधों में समय सार तत्त्व होता है।

ऐसे वचन, जो एक-दूसरे के लिए प्रतिफल स्वरूप हैं, पारस्परिक वचन कहलाते हैं। पारस्परिक वचन (क) पारस्परिक एवं स्वतंत्र, (ख) सशर्त एवं आश्रित, तथा (ग) पारस्परिक एवं समवर्ती हो सकते हैं। पारस्परिक वचनों का निष्पादन उसी क्रम में किया जाना चाहिए जो अनुबंध में निर्धारित है।

समनुदेशन से आशय है अनुबंध के अन्तर्गत अधिकारों एवं दायित्वों को किसी तीसरे पक्ष को अन्तरित करना। यह पक्षकारों के किसी कार्य या कानून के प्रवर्तन द्वारा हो सकता है। अनुबंध के अन्तर्गत अधिकारों एवं हितों को अन्तरित किया जा सकता है, परन्तु वचनदाता अपने

ायित्व का समनुदेशन नहीं कर सकता। वैयक्तिक प्रकृति के अनुबंधों का समनुदेशन नहीं केया जा सकता।

केसी भुगतान को किसी विशेष ऋण की अदायगी मानने को भुगतान का विनियोजन कहते हैं। ादि भुगतान करते समय देनदार यह स्पष्ट कर देता है कि इसे किस ऋण की अदायगी माना ाए, तब लेनदार को भुगतान उसी ऋण के लिए विनियोजित करना होता है। यदि देनदार यह पष्ट नहीं करता कि भुगतान को किस ऋण की अदायगी माना जाए, तो लेनदार उसे किसी भी ाध ऋण के लिए विनियोजित कर सकता है।

ानुबंध को पारस्परिक सहमति से भी समाप्त किया जा सकता है, इसके ये रूप हो सकते हैं: ावीयन, परिवर्तन, निरस्तीकरण, परित्याग या विलयन। यदि परिसीमा अवधि के भीतर अनुबंध का निष्पादन नहीं होता तथा वचनदाता कोई कार्यवाही भी नहीं करता, तो अनुबंध ामाप्त हो जाता है। कानून के प्रवर्तन द्वारा भी अनुबंध समाप्त हो सकता है। इसमें मृत्यु, देवालियापन, विलयन तथा महत्वपूर्ण परिवर्तन शामिल हैं।

ाब अनुबंध करने के पश्चात् इसका निष्पादन असम्भव या विधि विरुद्ध हो जाता है, तो ाकस्मिक असम्भावना के आधार पर अनुबंध व्यर्थ हो जाता है। विषय-वस्तु के नष्ट होने, चनदाता की मृत्यु या अक्षम होने, कानून में परिवर्तन, युद्ध छिड़ जाने और किसी स्थिति शेष के न बने रहने पर आकस्मिक असम्भवता उत्पन्न होती है। इन स्थितियों में अनुबंध माप्त हो जाता है। परन्तु निम्न परिस्थितियों में अनुबंध समाप्त नहीं होता (क) निष्पादन में ठिनाई, (ख) व्यापारिक असम्भावना, (ग) तीसरे पक्ष द्वारा त्रुटि, तथा (घ) हड़ताल, ालाबन्दी एवं नागरिक उपद्रव।

ानुबंध भंग किए जाने पर भी अनुबंध समाप्त हो जाता है। जब कोई भी पक्ष अपने वचन का ाष्पादन करने में त्रुटि या इंकार करता है, तो इसे अनुबंध भंग कहते हैं। अनुबंध भंग ास्तविक या प्रत्याशित हो सकता है। जब निष्पादन की नियत तिथि पर या निष्पादन के रान अनुबंध भंग होता है तो इसे वास्तविक अनुबंध भंग कहते हैं। प्रत्याशित अनुबंध भंग तात्पर्य है कि जब निष्पादन के समय से पहले ही कोई पक्ष अपने वचन का पालन न करने ी सूचना दे देता है।

.12 शब्दावली

डर (Tender): वचन पालन करने का प्रस्ताव।

युक्त वचनदाता (Joint promisors): जब दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा मिलकर वचन या जाता है, तो वे संयुक्त वचनदाता कहलाते हैं।

ादान (Contribution): जब किसी संयुक्त वचनदाता ने सम्पूर्ण वचन का पालन कर दिया तो वह दूसरे संयुक्त वचनदाताओं से उनके हिस्से की मांग कर सकता है। इसे अंशदान हते हैं।

रस्परिक वचन (Reciprocal promises): दूसरे पक्ष के वचन के प्रतिफल स्वरूप जो वचन या जाता है, वह पारस्परिक वचन कहलाता है।

मनुदेशन (Assignment): जब कोई पक्ष अनुबंध के अपने अधिकारों व हितों को किसी न्य व्यक्ति को अन्तरित करता है, तो इसे समनुदेशन कहते हैं।

रिसीमा की अवधि (Period of limitation): परिसीमा अधिनियम में विभिन्न अनुबंधों का लन करने की निर्धारित अवधि। यदि इस अवधि में निष्पादन नहीं किया जाता, तो निष्पादन लातीत हो जाता है।

नियोजन (Appropriation): किसी भुगतान को किसी ऋण-विशेष की अदायगी मानने को नियोजन कहते हैं।

ीयन (Novation): जब उन्ही पक्षकारों में या नये पक्षकारों मे किसी विद्यमान अनुबंध के ान पर नया अनुबंध प्रतिस्थापित किया जाता है, इसे नवीयन कहते हैं।

निरस्तीकरण (Rescission) : जब अनुबंध की एक या सभी शर्तें रद्द कर दी जाती हैं, तो यह निरस्तीकरण कहलाता है।

छूट (Remission) : अनुबन्धित निष्पादन से कम निष्पादन स्वीकार करना।

भंग (Breach) : जब अनुबंध का पक्षकार अपने वचन का पालन करने से मना कर देता है, तो अनुबंध भंग होता है।

7.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 5 i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही, v) सही, vi) सही, vii) गलत, viii) सही, ix) सही।

ख 4 i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) सही, vi) गलत, vii) सही, viii) सही।

ग 5 i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत, vi) सही, vii) सही।

7.14 स्वपरख प्रश्न

1 अनुबंध के निष्पादन से आपका क्या तात्पर्य है ?

2 टेंडर किसे कहते हैं ? वैध टेंडर के आवश्यक तत्व क्या हैं ?

3 अनुबंध का निष्पादन किसे करना चाहिए ? क्या तीसरे पक्ष द्वारा निष्पादन वैध है ?

4 अनुबंध के निष्पादन के समय एवं स्थान सम्बन्धी नियमों की व्याख्या कीजिए।

5 "समय, अनुबंध का सार-तत्व है", टिप्पणी कीजिए।

6 अनुबंध के समनुदेशन से सम्बन्धित नियमों की चर्चा कीजिए।

7 'पारस्परिक वचन' शब्द की परिभाषा कीजिए। पारस्परिक वचनों के निष्पादन से सम्बन्धित नियम बताइए।

8 अनुबंध समाप्त करने के विभिन्न तरीके बताइए।

9 आकस्मिक असंभवता के सिद्धान्त को उदाहरण देकर समझाइए।

10 'नवीयन' का अर्थ स्पष्ट कीजिए। नवीयन, निरस्तीकरण से किस प्रकार भिन्न है ?

11 भुगतान के विनियोजन सम्बन्धी नियम बताइए।

> **नोट:** इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजे। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 8 अनुबंध भंग के उपचार एवं अध-अनुबंध

काई की रूपरेखा

.0 उद्देश्य
1 प्रस्तावना
2 अनुबंध भंग का अर्थ
8.2.1 प्रत्याशित अनुबंध-भंग
8.2.2 वास्तविक अनुबंध-भंग
3 अनुबंध-भंग के उपचार
8.3.1 अनुबंध का निरस्तीकरण
8.3.2 हर्जाने के लिए दावा
8.3.3 निर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा
8.3.4 निषेधादेश के लिए दावा
8.3.5 अर्जित राशि के आधार पर दावा
4 अर्ध-अनुबंध
8.4.1 अर्ध-अनुबंध की परिभाषा
8.4.2 अर्ध-अनुबंध तथा अनुबंध में अन्तर
8.4.3 अर्ध-अनुबंध के प्रकार
5 अर्जित राशि
6 सारांश
7 शब्दावली
8 बोध प्रश्नों के उत्तर
9 स्वपरख प्रश्न

.0 उद्देश्य

। इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- यह स्पष्ट कर सकें कि अनुबंध भंग किसे कहते हैं
- अनुबंध भंग की दशा में उपचारों की गिनती कर सकें
- उन परिस्थितियों का वर्णन कर सकें जिनमें विभिन्न उपचार उपलब्ध होते हैं
- अर्ध-अनुबंध की परिभाषा कर सकें तथा उनके विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें।

.1 प्रस्तावना

पने इकाई 7 में पक्षकारों द्वारा अनुबंध के निष्पादन तथा तत्पश्चात् अनुबंध के समापन के रे में पढ़ा। यदि पक्षकार अपने दायित्वों का पालन नहीं करते या पालन करने से मना कर हैं, तो क्या होता है? इस प्रकार की चूक या मना करने के परिणामस्वरूप अनुबंध-भंग होता इस इकाई में आप अनुबंध-भंग (breach of contract) के अर्थ तथा उनके विभिन्न प्रकारों । अनुबंध-भंग के उपचारों के बारे में पढ़ेंगे। आप कुछ ऐसे लेन-देन की प्रकृति एवं प्रभावों बारे में भी पढ़ेंगे जिन्हें अर्ध-अनुबंध (quasi contract) के नाम से जाना जाता है जो कि अर्थ में अनुबंध नहीं कहे जा सकते परन्तु वे अनुबंध से उत्पन्न अधिकारों व दायित्वों की तरह दायित्व उत्पन्न करते हैं।

2 अनुबंध-भंग का अर्थ

प जानते ही हैं कि धारा 2(e) के अन्तर्गत 'करार' का अर्थ 'पारस्परिक वचन' बताया गया इस प्रकार से दोनों ही पक्षों पर किसी कार्य को करने या न करने का दायित्व होता है।

यदि अनुबंध का कोई भी पक्ष अपने निर्धारित कर्तव्य का पालन नहीं करता या अपने किसी कार्य से ऐसे कर्तव्य पालन करने को असम्भव बना देता है, तो यह कहा जाता है कि उसने अनुबंध-भंग किया। अनुबंध-भंग दो प्रकार से हो सकता है: (i) प्रत्याशित भंग, तथा (ii) वास्तविक भंग। आइए अब इन दोनों का विस्तार से अध्ययन करते हैं।

8.2.1 प्रत्याशित अनुबंध-भंग (Anticipatory Breach of Contract)

प्रत्याशित अनुबंध-भंग की स्थिति तब होती है जब निष्पादन के लिए निश्चित समय से पहले ही कोई पक्ष अनुबंध समाप्त कर देता है या वह कोई ऐसा कार्य करता है जिससे वह स्वयं को अनुबंध पालन के अयोग्य बना लेता है।

उदाहरण:

1 **क**, **ख** के साथ विवाह करने का अनुबंध करता है, परंतु विवाह के लिए तय की गई तिथि से पहले ही वह **ग** के साथ विवाह कर लेता है। इस स्थिति में **क** ने अनुबंध का प्रत्याशित भंग किया।

2 **क** कुछ विशिष्ट वस्तुएं **ख** को 1 अगस्त को बेचने का अनुबंध करता है। 20 जुलाई को वह **ख** को सूचित करता है कि वह वस्तुएं नहीं दे पाएगा। **क** ने अनुबंध का प्रत्याशित भंग किया।

धारा 39 में प्रत्याशित अनुबंध-भंग का वर्णन किया गया है। इसके अनुसार 'जब अनुबंध के एक पक्ष ने अपने वचन का पूर्णत: पालन करने से इंकार कर दिया हो या ऐसा पालन करने के लिए स्वयं को अयोग्य बना लिया हो तो वचनग्रहीता अनुबंध को समाप्त हुआ मान सकता है।' ऐसा तब होता है जब वचनग्रहीता ने, शब्दों या आचरण द्वारा, अनुबंध को बनाए रखने की अपनी इच्छा प्रकट न कर दी हो। उदाहरण के लिए, एक गायिका **क**, एक थियेटर के मैनेजर **ख** के साथ अनुबंध करती है कि वह अगले दो माह में प्रति सप्ताह दो रातों को उसके थियेटर में गाएगी। प्रत्येक रात्रि के गाने के लिए **ख** उसे 100 रुपये देने का करार करता है। छठी रात्रि को **क** जानबूझकर थियेटर से अनुपस्थित रहती है। **ख** अनुबंध समाप्त करने के लिए स्वतंत्र है। इस उदाहरण में, यदि सांतवीं रात्रि को **ख**, **क** को गाना गाने की अनुमति दे देता है, तो यह समझा जाएगा कि **ख** ने अपनी सहमति दे दी है और अनुबंध चालू रहेगा। अब वह अनुबंध को समाप्त नहीं कर सकता परन्तु **क** द्वारा छठी रात्रि को गाना न गाने से उसे जो हानि हुई है, उसके लिए वह हर्जाना पाने का अधिकारी है।

धारा 39 के प्रावधान तथा उपर्युक्त उदाहरण को पढ़ने के पश्चात् आपने ध्यान किया होगा कि प्रत्याशित अनुबंध-भंग की दशा में (जब अनुबंध का एक पक्षकार निष्पादन की वास्तविक तिथि से पहले अपने वचन का पालन करने से इंकार कर देता है), वचनग्रहीता के पास दो विकल्प उपलब्ध हैं:

i) वह अनुबंध को निरस्त कर दे तथा अनुबंध पालन के लिए नियत तिथि तक प्रतीक्षा न करके अनुबंध-भंग के लिए हर्जाने का दावा कर दे, या

ii) वह अनुबंध को समाप्त हुआ न मानकर उसे चालू रखे व निष्पादन के समय तक प्रतीक्षा करे और उसके बाद दूसरे पक्ष का अनुबंध का पालन न करने के परिणामों के लिए उत्तरदायी ठहराए। **यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि वचनग्रहीता अनुबंध को समाप्त करने का निर्णय नहीं करता, तो दोनों पक्षों के लाभ के लिए, अनुबंध चालू रहेगा।** परन्तु यदि इसी अवधि के दौरान (अनुबंध-भंग तथा उसके पालन की तिथि के बीच का समय) कोई ऐसी घटना घटित हो जाती है (जैसे आकस्मिक असंभावना) जिससे वचनदाता को लाभ होता है, तो वचनग्रहीता हर्जाना प्राप्त करने का अपना अधिकार खो बैठता है। उदाहरण, **क** ने एक नियत तिथि तक **ख** के जहाज पर गेहूँ लादने का करार किया। जब जहाज़ आया तो **क** ने माल लादने से इंकार कर दिया, परन्तु **ख** ने इस इंकार को नहीं माना तथा माल को लादने की मांग करता रहा। माल लादने की अन्तिम तिथि से पहले युद्ध छिड़ गया, जिससे कि अनुबंध का पालन करना अवैधानिक हो गया। विवशता के कारण अनुबंध समाप्त हो गया और **ख**, **क** से हर्जाना नहीं मांग सकता **(एवरी बनाम बाउडन)**।

प्रत्याशित अनुबंध की स्थिति में पीड़ित पक्ष अनुबंध भंग होने पर दोषी पक्ष से हर्जाने की मांग कर सकता है या वह अनुबंध का पालन करने की तिथि तक प्रतीक्षा कर सकता है तथा फिर

भी यदि वचन का पालन नहीं होता, तब वह हर्जाने के लिए दावा कर सकता है। परन्तु इन दो स्थितियों में हर्जाने की राशि में अन्तर होगा। इस अन्तर को एक उदाहरण की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है। अ, ब को एक निश्चित मात्रा में गेहूँ 300 रु. प्रति क्विंटल की दर से बेचने का अनुबंध करता है, जिसकी सुपुर्दगी 3 अगस्त को होनी है। 2 जुलाई को अ, ब को सूचना देता है कि वह गेहूँ नहीं बेच सकेगा, तथा उस तिथि को गेहूँ का मूल्य 400 रु. प्रति क्विंटल है। यदि ब उसी समय अनुबंध को समाप्त मान लेता है (ऐसा करने का उसके पास विकल्प है) तो वह उस तिथि पर गेहूँ के बाज़ार मूल्य तथा अनुबन्धित मूल्य के अन्तर यानि 100 रु. प्रति क्विंटल की दर से हर्जाना वसूल कर सकता है। यदि वह तुरन्त कार्यवाही करने के स्थान पर 3 अगस्त तक अनुबंध को चालू रखता है तथा इसी दौरान गेहूँ का मूल्य बढ़कर 500 रु. प्रति क्विंटल हो जाता है, तो ब 200 रु. प्रति क्विंटल की दर से हर्जाना वसूल कर सकेगा। यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि यदि इसी दौरान किसी आकस्मिक घटना के परिणामस्वरूप अनुबंध व्यर्थ हो जाता है, तब ब, अ से कुछ भी मुआवजा प्राप्त नहीं कर सकेगा।

8.2.2 वास्तविक अनुबंध-भंग (Actual Breach of Contract)

वास्तविक अनुबंध-भंग इन दो तरीकों में से किसी भी तरह हो सकता है: (i) जब अनुबंध का निष्पादन अपेक्षित है तब अनुबंध-भंग, अथवा (ii) अनुबंध के निष्पादन के दौरान अनुबंध-भंग। आइए अब इन दोनों के बारे में विस्तार से चर्चा करते हैं।

जब अनुबंध का निष्पादन अपेक्षित है तब वास्तविक अनुबंध-भंग: अनुबंध के निष्पादन के लिए नियत समय पर जब अनुबंध का एक पक्ष अपने वचन का पालन करने से इंकार कर देता है या वचन का पालन करने में चूक करता है, तो वह पक्ष अनुबंध-भंग के लिए उत्तरदायी होगा। उदाहरण, क, ख को अपनी कार 2 जुलाई को बेचने का करार करता है। 2 जुलाई को क अपनी कार ख के हाथ बेचने से इंकार कर देता है। क द्वारा कार बेचने से इंकार कर देने पर वास्तविक अनुबंध-भंग हुआ। यदि 2 जुलाई के बाद क अपने वचन का पालन करना चाहता है तो प्रश्न यह उठता है कि इस निष्पादन को स्वीकार किया जाए या नहीं? क्या वचनग्रहीता इस निष्पादन को अस्वीकार करके वचनदाता को अनुबंध-भंग के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है? इसका उत्तर इस बात पर निर्भर करेगा कि क्या पक्षकार समय को अनुबंध का सार मानते हैं या नहीं?

इस सम्बन्ध में धारा 55 में प्रावधान है कि "जब अनुबंध का एक पक्ष किसी नियत समय पर या उससे पहले किसी कार्य को करने का वचन देता है तथा नियत समय पर या उससे पहले ऐसे कार्य को करने में असमर्थ रहता है, तो सम्पूर्ण अनुबंध या उसका वह भाग जिसका पालन अभी नहीं हुआ है, वचनग्रहीता की इच्छा पर व्यर्थनीय हो जाता है, यदि पक्षकारों का इरादा अनुबंध में समय को सार मानना है।"

यदि अनुबंध में समय को सार मानने का पक्षकारों का इरादा नहीं था, तब नियत समय पर या उससे पहले अनुबंध का पालन न किए जाने पर, अनुबंध व्यर्थनीय नहीं हो जाता। परन्तु वचनग्रहीता को यह अधिकार है कि अनुबंध का पालन न होने से जो हानि उसे हुई है, वह वचनदाता से वसूल कर सकता है।

यदि अनुबंध के पालन करने के नियत समय पर वचनदाता द्वारा वचन का पालन न किए जाने पर अनुबंध व्यर्थनीय हो जाता है तथा वचनग्रहीता नियत समय के अलावा वचन का निष्पादन स्वीकार कर लेता है तो नियत समय पर वचन का पालन नहीं करने पर वचनग्रहीता को यदि कोई हानि हुई है तो वह इसके लिए मुआवज़े की मांग नहीं कर सकता जब तक कि वह निष्पादन स्वीकार करने के समय वचनदाता को हर्जाना वसूल करने के अपने इरादे की सूचना नहीं दे देता। उदाहरण के लिये क, एक गायिका, एक थियेटर के मैनेजर ख के साथ अनुबंध करती है कि वह अगले दो माह में उसके थियेटर में प्रति सप्ताह दो रात्रि को गाना गाएगी तथा ख प्रत्येक रात्रि को गाना गाने के लिए 100 रुपये देने का करार करता है। छठी रात्रि को क जानबूझकर थियेटर से अनुपस्थित रहती है, इसके परिणामस्वरूप ख अनुबंध को निरस्त कर देता है। क के द्वारा अनुबंध का पालन नहीं किए जाने से ख को जो भी हानि हुई है, उसके लिए ख, क से हर्जाना वसूल करने का अधिकारी है।

उपयुर्क्त प्रावधान के अनुसार, यदि नियत समय के बाद भी निष्पादन स्वीकार किया जाता है तब वचनग्रहीता को हर्जाना वसूल करने के अपने इरादे की सूचना वचनदाता को अवश्य दे देनी चाहिए। यदि वह इस प्रकार की सूचना नहीं देता, तो यह मान लिया जाता है कि उसने अपने इस अधिकार का परित्याग कर दिया है।

अनुबंध के निष्पादन के दौरान वास्तविक अनुबंध-भंग: वास्तविक अनुबंध-भंग उस समय भी होता है जब अनुबंध के निष्पादन के दौरान एक पक्ष अनुबंध के अन्तर्गत अपने वचन का पालन करने में असफल होता है या इंकार कर देता है। उदाहरण के लिए, **क** ने एक रेलवे कम्पनी से अनुबंध किया कि वह निश्चित मूल्य पर निश्चित मात्रा में रेलवे कुर्सियाँ देगा। कुर्सियों की सुपुर्दगी किस्तों में होनी थी। कुछ किस्तों की सुपुर्दगी देने के बाद, रेलवे कम्पनी ने **क** को और आगे कुर्सियाँ देने से रोक दिया। निर्णय दिया गया कि **क** अनुबंध-भंग के लिए मुकदमा दायर कर सकता है (Cort V. Ambergate, etc. Rly Co.)।

8.3 अनुबंध-भंग के उपचार

जब किसी पक्ष के द्वारा अनुबंध-भंग किया जाता है तो दूसरे पक्ष के पास कार्यवाही करने के अनेक उपाय (उपचार) उपलब्ध हैं। इन उपचारों में निम्नलिखित शामिल हैं:

1 अनुबंध का निरस्तीकरण
2 हर्जाने के लिए दावा
3 निर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा
4 निषेधादेश के लिए दावा
5 अर्जित राशि के आधार पर दावा

8.3.1 अनुबंध का निरस्तीकरण (Rec sion of the Contract)

जैसा कि आप अधिनियम की धारा 39 में पढ़ चुके हैं कि जब अनुबंध का एक पक्ष अपने वचन का पालन करने से इंकार कर देता है या स्वयं को वचन का पूर्णत: पालन करने के अयोग्य बना लेता है, तो वचनग्रहीता अनुबंध को समाप्त कर सकता है। इसे निरस्तीकरण का अधिकार कहते हैं। इसका अर्थ है अनुबंध को समाप्त कर देना। ऐसी स्थिति में पीड़ित पक्ष अनुबंध के अन्तर्गत अपने समस्त दायित्वों से मुक्त हो जाता है। उदाहरण के लिए, **क** एक नियत तिथि पर **ख** के कायालय के लिए फर्नीच ने का अनुबंध करता है। फर्नीचर के प्राप्त होने पर **ख** मूल्य चुकाने का वचन देता है। नियत तिथि पर **क** फर्नीचर नहीं देता। **ख** मूल्य का भुगतान करने के अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है तथा वह अनुबंध समाप्त कर सकता है। यहाँ यह स्मरण रहे कि अनुबंध अधिनियम की धारा 75 के द्वारा अनुबंध समाप्त करने वाले पक्ष को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वह अनुबंध का पालन न होने पर उत्पन्न हानि के लिए हर्जाना प्राप्त का अधिकारी हो जाता है। उपयुर्क्त उदाहरण में **ख** न केवल अनुबंध समाप्त कर सकता है बल्कि नियत तिथि पर **क** द्वारा फर्नीचर न दिए जाने से उसे जो हानि हुई है, उसके लिए वह हर्जाने की मांग भी कर सकता है।

8.3.2 हर्जाने के लिए दावा (Suit for Damages)

अनुबंध-भंग की स्थिति में, पीड़ित पक्षकार अनुबंध को समाप्त करने के साथ-साथ हर्जाने के लिए दावा भी कर सकता है। अनुबंध-भंग के परिणामस्वरूप पीड़ित पक्ष को जो हानि हुई है, उसकी पूर्ति के लिए जो धन मुआवज़े के तौर पर दिया जाता है, उसे हर्जाना कहते हैं। अनुबंध-भंग होने पर हर्जाने के लिए आदेश देते समय न्यायालय का उद्देश्य यह होता है कि जहाँ तक सम्भव हो पीड़ित पक्ष को उस स्थिति में पहुँचाया जाए जहाँ पर वह होता यदि अनुबंध-भंग नहीं होता। कानून अनुबंध-भंग करने वाले पक्ष को दंडित नहीं करता, परन्तु यदि उसके गलत आचरण के कारण किसी दूसरे पक्ष को कोई आर्थिक (मौद्रिक) हानि हुई है, तो न्यायालय दोषी पक्ष को क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य करेगा अर्थात् दोषी पक्ष पीड़ित पक्ष को हर्जाना देगा।

भारत में हर्जाने सम्बन्धी नियम **हैडले बनाम बैक्सेंडेल** के मामले में दिए गये निर्णय पर आधारित हैं। इस मामले के तथ्य इस प्रकार थे: **ह** की मिल में एक धुरी (shaft) टूट जाने के

कारण मिल बंद हो गई। उसने यह धुरी एक वाहक ख को निर्माताओं के पास ले जाने के लिए दिया ताकि उसी नमूने का एक नया धुरी बना सकें। ह ने ख को यह नहीं बताया था कि इस कार्य में देरी होने से उसे मुनाफे की हानि उठानी पड़ेगी। ख की लापरवाही के कारण धुरी पहुँचाने में आवश्यकता से अधिक देर हो गई। निर्णय दिया गया कि देरी की अवधि में मुनाफे की हानि के लिए ख उत्तरदायी नहीं है क्योंकि ख को यह नहीं बताया गया था कि धुरी को लाने में देर होने से ह को मुनाफे की हानि होगी। इस केस में यह नियम तय किया गया: जब दो पक्षकारों में अनुबंध हुआ है जिसे उनमें से किसी एक ने भंग किया है, तो दूसरे पक्ष को इस अनुबंध भंग के परिणामस्वरूप जो हर्जाना प्राप्त होगा वह उतना होना चाहिए जो अनुबंध-भंग से उचित व स्वाभाविक ढंग से उत्पन्न हुआ है अर्थात् अनुबंध-भंग से सामान्य ढंग से उत्पन्न हो अथवा इतना हो जितना कि सम्बन्धित पक्षकारों ने अनुबंध करते समय अनुबंध भंग की दशा में दिए जाने का इरादा किया था।

अनुबंध अधिनियम की धारा 73 जो अनुबंध-भंग होने पर दिए जाने वाले हर्जाने से सम्बन्धित है, वह उक्त केस में दिए गये निर्णय पर आधारित है। इस धारा में यह बताया गया है कि पीड़ित पक्षकार निम्न प्रकार से हर्जाने के लिए दावा कर सकता है:

क) ऐसा हर्जाना, जो अनुबंध-भंग से स्वाभाविक रूप से उत्पन्न हुआ है। यह सामान्य हर्जाने से सम्बन्धित है जो सामान्य ढंग से उत्पन्न होता है।

ख) ऐसा हर्जाना, जिसे अनुबंध करते समय ही पक्षकारों ने अनुबंध-भंग होने पर दिया जाना तय कर लिया था। यह विशेष हर्जाने से सम्बन्धित है।

ग) उपर्युक्त हर्जाना अनुबंध-भंग के कारण किसी दूरवर्ती या अप्रत्यक्ष हानि के लिए नहीं दिया जाएगा।

घ) अर्ध-अनुबंध के भंग होने पर दिया जाने वाला हर्जाना उतना ही होगा जितना कि किसी अन्य अनुबंध-भंग होने पर दिया जाता है।

विभिन्न प्रकार के हर्जानों से सम्बन्धित नियम

अब हम हर्जानों के विभिन्न प्रकार तथा उनसे सम्बन्धित नियमों की विस्तार से चर्चा करते हैं।

साधारण हर्जाना: साधारण हर्जाना वह होता है जो अनुबंध-भंग के कारण सामान्य परिस्थितियों में स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होता है। साधारण हर्जाने की राशि का निर्धारण उस वस्तु का अनुबन्धित मूल्य तथा अनुबंध-भंग की तिथि पर बाज़ार मूल्य के अन्तर के आधार पर किया जाता है। यदि अनुबंध-भंग के बाद विक्रेता उस वस्तु को अपने पास रखे रहता है तो वह मूल्य में और गिरावट से हुई हानि के लिए हर्जाना वसूल नहीं कर सकता तथा मूल्य में वृद्धि हो जाने पर हर्जाने की रकम में कोई कमी भी नहीं होती। उदाहरण के लिए, क ने भविष्य में किसी तिथि पर 100 बोरी चावल 100 रु. प्रति बोरी की दर से देने का अनुबंध किया। नियत समय पर वह माल देने से इंकार कर देता है। उस दिन चावल का बाज़ार मूल्य 110 रु. प्रति बोरी है। हर्जाने की राशि, अनुबंध-भंग की तिथि पर बाज़ार मूल्य तथा अनुबन्धित मूल्य का अन्तर होगा, अर्थात् 110 रु. − 100 रु. = 10 रु. प्रति बोरी।

यहाँ पर आपको यह विशेष तौर से याद रखना चाहिए कि धारा 73 में स्पष्टत: प्रावधान किया गया है कि अनुबंध-भंग से सामान्य ढंग से स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होने वाली हानि के लिए मांग की जा सकती है, अत: अनुबंध-भंग से दूरवर्ती तथा अप्रत्यक्ष हानि के लिए हर्जाने की मांग नहीं की जा सकती। उदाहरण के लिए, एक रेल यात्री की पत्नी को रेलवे स्टेशन के अतिरिक्त किसी अन्य स्थान पर उतार देने से उसे काफी दूर तक बारिश में पैदल चलना पड़ा जिससे उसे सर्दी लग गई और वह बिमार पड़ गई। वादी द्वारा रेलवे कम्पनी पर दावा किए जाने पर निर्णय दिया गया कि व्यक्तिगत असुविधा के लिए केवल हर्जाना दिया जाएगा, वादी की पत्नी की बिमारी के लिए नहीं क्योंकि यह एक दूरवर्ती परिणाम था (**हॉब्स बनाम लंदन तथा एस. डब्ल्यू रेल क.**)।

विशेष हर्जाना: अनुबंध-भंग से प्रत्यक्ष रूप से हुई हानि के अतिरिक्त भी हर्जाना वसूल किया जा सकता है, यदि यह ज्ञात हो कि अनुबंध करते समय पक्षकारों के मन में अनुबंध-भंग होने पर कितना हर्जाना दिया जाना है। इस प्रकार के हर्जाने को 'विशेष

हर्जाना' कहते हैं। इस प्रकार, जब विशेष या असाधारण परिस्थितियाँ विद्यमान हों तथा इनकी सूचना वचनदाता को दे दी गयी थी, तब वचन का पालन न किए जाने पर वचनग्रहीता को न केवल साधारण हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार है बल्कि उससे उत्पन्न हानि के लिए विशेष हर्जाना भी प्राप्त करने का अधिकार होता है। उदाहरण के लिए, एक भवन निर्माता **क**, 1 जनवरी तक भवन पूरी तरह बना कर **ख** को देने का अनुबंध करता है ताकि **ख** उस भवन का कब्ज़ा **ग** को दे सके, जिसे **ख** ने किराए पर भवन देना था। **क** को **ख** तथा **ग** के बीच हुए अनुबंध का ज्ञान था। **क** ने भवन इतना खराब बनाया कि वह 1 जनवरी से पहले ही गिर गया। इसके परिणामस्वरूप, **ख** को **ग** से प्राप्त होने वाले किराए की हानि हुई तथा अनुबंध-भंग करने पर **ख** को **ग** को हर्जाना देना पड़ा। इस स्थिति में **क** को **ख** को हर्जाना देना होगा जिसमें भवन को फिर से बनवाने की लागत, किराए की हानि तथा **ग** को दिए गये हर्जाने की राशि शामिल होगी। इस सम्बन्ध में **हैडले बनाम बैक्सन्डेल** का मामला अतयन्त महत्वपूर्ण है जिसमें इंगलैंड में दिए जाने वाले 'विशेष हर्जाने' के नियम बताए गये हैं। इस मामले के तथ्यों की पहले ही चर्चा की जा चुकी है।

3 **उदाहरणात्मक या दंडात्मक हर्जाना (Exemplary and Punitive Damages) :** उदाहरणात्मक (जिसे सज़ा या दंडात्मक हर्जाना भी कहते हैं) हर्जाना तब दिया जाता है जब न्यायालय प्रतिवादी के आचरण की घोर निन्दा करना चाहता है। इस स्थिति में हर्जाने की राशि, पीड़ित पक्ष द्वारा उठाई गई वास्तविक हानि के अनुपात में नहीं होती, बल्कि दोष पक्ष पर दण्ड के रूप में दी जाती है। साधारणत: यह तब दिया जाता है जब (i) विवाह करने का वचन भंग किया जाता है, अथवा (ii) बैंक द्वारा, बिना किसी उचित कारण के, ग्राहक का चैक अनादरण किया जाता है। विवाह करने का वचन भंग किए जाने पर हर्जाने की राशि इस बात पर निर्भर करेगी कि वचनग्रहीता की भावनाओं को कितनी चोट पहुंची है तथा उसकी नेकनामी को कितना नुकसान पहुँचा है। चैक के गलत अनादरण किए जाने पर, नियम है —चैक की राशि जितनी कम होगी, हर्जाने की राशि उतनी ही अधिक होगी।

4 **नाम-मात्र हर्जाना:** नाम-मात्र का हर्जाना तब दिलाया जाता है जबकि अनुबंध-भंग होने के कारण कोई हानि नहीं होती, केवल तकनीकी दृष्टि से अधिकारों का उल्लंघन होता है। ऐसी स्थिति में दिए जाने वाले हर्जाने की राशि नाम-मात्र की या बहुत ही कम होती है, जैसे एक रुपया। यहाँ यह ध्यान रहे कि पीड़ित पक्ष इस हर्जाने को अधिकार के रूप में नहीं मांग सकता। नाम-मात्र का हर्जाना दिलाना या नहीं दिलाना, यह न्यायालय की इच्छा पर निर्भर है।

5 **देरी के कारण खराबी के लिए हर्जाना:** यदि देरी के कारण माल खराब हो जाता है, तो सूचना दिए बिना माल वाहक से हर्जाना वसूल किया जा सकता है। यहाँ पर 'खराबी' से आशय माल को हुई वास्तविक हानि ही नहीं है बल्कि इसमें माल बेचने के विशेष अवसर की हानि भी शामिल है। **विलसन बनाम लैंकाशायर व यॉर्कशायर रेलवे क.** के मामले में वादी ने वसंत ऋतु में टोपीयाँ बेचने के लिए मखमल का कपड़ा खरीदा। परन्तु मार्ग में देर हो जाने के कारण वह मौसम में बेचने के लिए टोपियाँ नहीं बना सका। मौसम के बाद कपड़े के मूल्य में कमी हो जाने को 'खराबी' ही माना गया जिसके लिए सूचना दिए बिना वादी हर्जाना प्राप्त करने का अधिकारी है।

6 **असुविधा तथा बेआरामी के लिए हर्जाना:** जब अनुबंध-भंग होने के कारण किसी पक्ष को शारीरिक असुविधा या बेआरामी होती है, तो वह पक्ष इसके लिए हर्जाने के लिए दावा कर सकता है। परन्तु सामान्य नियमों के अनुसार अनुबंध-भंग का तरीका या उद्देश्य हर्जाने की राशि को प्रभावित नहीं करते हैं।

उदाहरण:

i) **क** को **भ** ने नौकरी से गलत ढंग से कठोर व अपमानजनक तरीके से निकाल दिया। निर्णय दिया गया कि अ) **क** नोटिस की अवधि के लिए वेतन तथा उस अवधि में अर्जित होने वाले कमीशन की राशि को वसूल कर सकता है। ब) परन्तु उसकी भावनाओं को ठेस के लिए तथा अन्यत्र नौकरी प्राप्त करने में कठिनाई होने के लिए वह हर्जाना वसूल नहीं कर सकता (**एडिस बनाम ग्रामोफोन क. लि.**)

ii) **ह** ने अपनी पत्नी तथा बच्चों का रात्रि रेलगाड़ी का, अपने घर जाने के लिए टिकट खरीदा। परन्तु उन्हें गलत स्थान पर ले जाया गया तथा उन्हें बारिश की रात में काफी मील तक पैदल चल कर घर आना पड़ा। इस असुविधा के लिए **ह** को 8 पौंड हर्जाने के तौर पर दिलवाए गये। परन्तु सर्दी लग जाने के कारण उसकी पत्नी के उपचार व्यय को नहीं माना गया, क्योंकि यह भंग का एक दूरवर्ती परिणाम है **(हॉब्स बनाम लन्दन एण्ड साउथ वैस्टर्न रेलवे कम्पनी)**।

7 . **निर्धारित हर्जाना एवं दंड (Liquidated Damages and Penalty) :** कभी-कभी हर्जाने की राशि निश्चित करने तथा उसके भुगतान में देरी होने को दूर करने के इरादे से, पक्षकार अनुबंध करते समय ही एक राशि परस्पर तय कर लेते हैं जो अनुबंध-भंग होने पर हर्जाने के रूप में देय होती है। यदि इस प्रकार तय की गई राशि अनुबंध-भंग से हो सकने वाली हानि किसी उचित पूर्वानुमान पर आधारित है तो इसे **'निर्धारित हर्जाना'** कहते हैं। इसके विपरीत, अनुबंध करते समय जो राशि तय की जाती है यदि वह होने वाली हानि की तुलना में कहीं अधिक है, तब उस राशि को **'दण्ड'** कहते हैं। यह राशि इसलिए तय की जाती है ताकि सम्बन्धित पक्ष अनुबंध का पालन करें।

अंग्रेज़ी कानून के अन्तर्गत 'निर्धारित हर्जाने' को प्रवर्तित कराया जा सकता है,'दण्ड' को नहीं। परन्तु भारत में 'निर्धारित हर्जाना' तथा 'दण्ड' में कोई अन्तर नहीं माना जाता। भारत में न्यायालय केवल 'उचित हर्जाना या मुआवज़ा' ही दिलाते हैं (धारा 74)।

8 **ब्याज सम्बन्धी शर्त:** धारा 74 के अन्तर्गत निर्णित मामलों में सबसे अधिक संख्या उन मामलों की है जिनमें अनुबंध में ब्याज के भुगतान सम्बन्धी शर्त होती है।

i) **चूक किए जाने पर ब्याज का भुगतान:** चूक किए जाने पर ब्याज के भुगतान सम्बन्धी शर्त को दण्ड के रूप में नहीं माना जाएगा, यदि ब्याज की दर उचित है। यदि न्यायालय की राय में ब्याज की दर अत्यधिक ऊंची है तथा प्रकृति में दण्ड के समान है, तो वह कुछ छूट दे सकता है।

ii) **बढ़ी हुई दर से ब्याज का भुगतान:** अनुबंध में इस प्रकार की शर्त के दो स्वरूप हो सकते हैं:

अ) देनदार द्वारा देय तिथि पर ब्याज या मूलधन या मूलधन की किस्त चुकाने में त्रुटि किए जाने पर यदि अनुबंध में शर्त है कि अनुबंध की तिथि से बढ़ी हुई दर से ब्याज लगाया जाएगा अथवा,

ब) इसमें यह प्रावधान हो सकता है कि त्रुटि किए जाने की तारीख से बढ़ी हुई दर से ब्याज लगाया जाएगा। त्रुटि की तिथि से नहीं बल्कि बांड की तिथि से बढ़ी हुई दर से ब्याज को हमेशा ही 'दण्ड' के रूप में माना जाता है, तथा पक्षकार को राहत दिलाई जाती है। न्यायालय केवल उचित मुआवज़ा ही दिलवाते हैं **(रामेश्वर प्रसाद सिंह बनाम राय श्याम किशन)**। इस प्रकार जब 15% वार्षिक ब्याज दर पर ऋण इस शर्त पर दिया जाता है कि किसी किस्त के चुकाने में त्रुटि किए जाने पर, ब्याज की दर बढ़कर 20% वार्षिक हो जाएगी। इस प्रकार की शर्त दण्ड स्वरूप है तथा न्यायालय केवल उचित दर से ही ब्याज देने का आदेश देते हैं। त्रुटि किए जाने की तिथि से बढ़ी हुई ब्याज दर की शर्त को दण्ड स्वरूप माना जा सकता है। यदि ऐसा है तो राहत प्रदान की जाती है। इस प्रकार की शर्त दण्ड स्वरूप है या नहीं, यह अनुबंध की शर्तों व परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उदाहरण, **क**, **ख** को छः माह बाद 1,000 रुपये 12% वार्षिक ब्याज सहित लौटाने का एक बांड इस शर्त के साथ लिखकर देता है कि भुगतान में चूक होने पर चूक की तिथि से 75% वार्षिक हो जाएगी। यह शर्त दण्ड के रूप में है तथा **ख**, **क** से केवल उतना ही हर्जाना प्राप्त करने का अधिकारी है जितना न्यायालय उचित समझे।

iii) **चूक किए जाने पर चक्रवृद्धि ब्याज का भुगतान:** किसी बांड में यह शर्त कि साधारण ब्याज का भुगतान न किए जाने पर ऋण की राशि पर उसी दर से चक्रवृद्धि ब्याज दिया जाएगा, दण्ड नहीं माना जाता। परन्तु बांड की यह शर्त, कि चूक किए जाने पर बढ़ी हुई दर से चक्रवृद्धि ब्याज देना होगा, दण्ड मा जाती है तथा न्यायालय पीड़ित पक्ष को कुछ छूट देता है।

9 **बयाने की राशि या 'जमानत जमा' की ज़ब्ती:** अनुबंध के उचित निष्पादन की जमानत के रूप में जो राशि जमा कराई जाती है और जिसे अनुबंध का पालन होने पर निर्धारित मूल्य के प्रति समायोजित किया जाना है, उसे 'बयाना' कहते हैं। क्या किसी अनुबंध में यह वाक्य कि अनुबंध का पालन न किए जाने पर बयाने की राशि ज़ब्त कर ली जाएगी, दण्ड के समान है ? अनेक न्यायिक निर्णयों द्वारा इस प्रकार के वाक्य को दण्ड के रूप में माना है तथा केवल उचित मुआवज़े की मांग को ही ठीक माना है। **(मुहम्मद सुल्तान बनाम नेसा मुम्मद; वैरायटी बाडी बिल्डर्ज बनाम यूनियन आफ इण्डिया; फतेह चंद बनाम बाल किशन दास)**

8.3.3 निर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा (Suit for Specific Performance)

अनुबंध-भंग की कुछ परिस्थितियों में, हर्जाने को पर्याप्त उपचार नहीं माना जा सकता। पीड़ित पक्ष मुद्रा के रूप में हर्जाने का इच्छुक न हो। ऐसी स्थिति में न्यायालय अनुबंध-भंग के दोषी पक्ष को अनुबंध में दी गई शर्तों के अनुसार अनुबंध का पालन करने के लिए आदेश दे सकता है। इसे अनुबंध का 'निर्दिष्ट निष्पादन' कहते हैं।

न्यायालय की इच्छानुसार अनुबंध के ''निर्दिष्ट निष्पादन' का प्रवर्तन तभी कराया जा सकता है जब अनुबंध किसी ऐसे मकान या दुर्लभ वस्तु के विक्रय के लिए है जिसके लिए आर्थिक हर्जाना पर्याप्त उपचार न हो, क्योंकि पीड़ित पक्ष उस वस्तु के बदले में कोई दूसरी वस्तु पाने में असमर्थ है।

उदाहरणार्थ, **क** ने एक पुराना चित्र **ख** को 10,000 रुपये में बेचने का अनुबंध किया। बाद में, **क** ने चित्र बेचने से मना कर दिया। इस दशा में **ख**, **क** के विरूद्ध दावा करके अनुबंध के निर्दिष्ट निष्पादन की मांग कर सकता है।

निम्नलिखित परिस्थितियों में निर्दिष्ट निष्पादन का आदेश नहीं दिया जाता:

i) जहाँ आर्थिक मुआवजा पर्याप्त उपचार हो।

ii) जब अनुबंध वैयक्तिक प्रकृति का हो, जैसे विवाह करने या चित्र बनाने का अनुबंध आदि। ऐसी स्थिति में निर्दिष्ट निष्पादन के स्थान पर निषेधादेश जारी किया जाता है।

iii) जहाँ अनुबंध के निष्पादन की देख-भाल करना न्यायालय के लिए सम्भव नहीं हो, जैसे भवन निर्माण का अनुबन्ध।

iv) जब किसी कम्पनी द्वारा किया गया अनुबंध उसके पार्षद् सीमानियम में दिए गये अधिकारों से बाहर है।

v) जब अनुबंध किसी भी पक्ष के लिए असाम्यिक है

vi) जहाँ अनुबंध का एक पक्षकार नाबालिग है।

8.3.4 निषेधादेश के लिए दावा (Suit for Injunction)

जब कोई पक्ष अनुबंध की नकारात्मक शर्तों को भंग करता है (अर्थात् वह कोई ऐसा कार्य करता है जिसको नहीं करने का उसने वचन दिया है), तब न्यायालय एक आदेश जारी करके उसे ऐसा करने से रोक सकता है। न्यायालय द्वारा जारी किए गये ऐसे आदेश को 'निषेधादेश' कहते हैं।

उदाहरण:

i) **र** ने अपने मकान के लिए आवश्यक सारी बिजली एक ही कम्पनी से लेने का अनुबंध किया। उसे निषेधादेश के द्वारा किसी और से बिजली लेने से रोक दिया गया **(मैट्रोपालिटन इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी बनाम जिण्डर)।**

ii) **त** ने **म** के थियेटर में गाने का अनुबंध किया, तथा निश्चित अवधि में और कहीं नहीं गाएगी। बाद में **त** ने **ल** के साथ अनुबंध करके किसी और थियेटर में गाने का अनुबंध कर लिया तथा **म** के साथ हुए अनुबंध का पालन करने से इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि निषेधादेश के द्वारा **त** को **ल** के थियेटर में गाने से रोका जा सकता है **(ल्यूमली बनाम वैग्नर)।**

8.3.5 अर्जित राशि के आधार पर दावा (Suit upon Quantum Meriut)

वाक्यांश 'अर्जित मात्रा' का अर्थ है 'जितना अर्जित किया हो या कमाया हो'। कानून का यह एक सामान्य नियम है कि जब तक किसी पक्ष ने अपने वचन का पूर्णत: पालन न कर दिया हो, वह दूसरे से निष्पादन की मांग नहीं कर सकता। इस नियम के अर्जित मात्रा के आधार पर कुछ अपवाद हैं। जब अनुबंध के अन्तर्गत किसी व्यक्ति ने कुछ कार्य कर दिया है तथा दूसरा पक्ष अंनुबंध समाप्त कर देता है या कोई ऐसी घटना घटित हो जाती है कि और आगे अनुबंध का पालन करना असम्भव हो जाता है, तब जिस पक्ष ने कार्य कर दिया है वह किए गये कार्य के लिए भुगतान की मांग कर सकता है। अनुबंध समाप्त करने से पहले या अनुबंध का निष्पादन असम्भव होने से पहले, किए जा चुके कार्य के लिए भुगतान की मांग करने के अधिकार को अर्जित मात्रा के आधार पर दावा कहते हैं। उदाहरण के लिये, एक पत्रिका के सम्पादक म तथा एक लेखक स में अनुबंध हुआ कि वह 12 लेख लिखेगा जो उस पत्रिका में प्रकाशित होंगे। स द्वारा 6 लेख दिए जाने के बाद पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो गया। स को अधिकार है कि वह 6 लेख के लिए पारिश्रमिक प्राप्त करे। अर्जित मात्रा के बारे में आप इस इकाई में बाद में और अध्ययन करेंगे।

बोध प्रश्न क

1 अनुबंध-भंग क्या होता है?

....
....
....
....

2 प्रत्याशित अनुबंध-भंग क्या है?

....
....
....
....

3 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) कानूनी अधिकार के तौर पर विशेष हर्जाना उपलब्ध है। ....

ii) विशेष हर्जाने की मांग तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि उन विशेष परिस्थितियों की सूचना दूसरे पक्ष को नहीं दे दी जाती, जिनसे उसे हानि हुई है। ....

iii) केवल मानहानि की स्थिति में उदाहरणात्मक हर्जाना उपलब्ध है जैसे बैंक द्वारा बिना किसी उचित कारण के चैक अनादरण करना। ....

iv) भारत में यद्यपि निर्धारित हर्जाने की अनुमति है, अनुबंध में दण्ड स्वरूप प्रावधान व्यर्थ हैं। ....

v) वचनग्रहीता को मुद्रा के रूप में हर्जाना प्राप्त करने से मना करने का अधिकार है तथा वचनदाता से विनिर्दिष्ट निष्पादन का आग्रह करने का अधिकार है। ....

4 रिक्त स्थान भरिए।

i) विशेष हर्जाने का नियम सर्वप्रथम .... के मामले में निर्धारित किया गया।

ii) साधारण हर्जाने की मात्रा .... मूल्य तथा .... मूल्य का अन्तर होती है।

iii) अनुबंध के विनिर्दिष्ट निष्पादन का आदेश तब जारी नहीं किया जाएगा जब अनुबंध .... का है।

iv) अर्जित मात्रा का अर्थ है .... ।

v) वास्तविक अनुबंध भंग हो सकता है
अ) उस समय जब निष्पादन देय है, या
ब) ....

8.4 अर्ध-अनुबंध (Quasi Contracts)

ऐसी अनेक परिस्थितियाँ हैं जब किसी व्यक्ति को कोई दायित्व पूरा करने के लिए जिम्मेदार ठहराया जाए, यद्यपि उसने न तो कोई अनुबंध तोड़ा है और न ही वह अप्रकृत्य (tort) का दोषी है उदाहरण के लिये, क कुछ वस्तुएं ख के मकान में भूल आया। ख का कर्तव्य है कि वह उन्हें क को वापस कर दे। इस प्रकार के दायित्वों को साधारणत: अर्ध-अनुबंध के दायित्व कहते हैं। अर्ध-अनुबंध साम्यिकता तथा न्याय के सिद्धान्त पर आधारित हैं। इसमें बताया गया है कि कोई व्यक्ति किसी दूसरे को हानि पहुँचाकर अन्यायपूर्ण ढंग से अमीर नहीं बन सकता। वास्तव में अर्ध-अनुबंध, अनुबंध होता ही नहीं है। जब किसी पक्ष के आचरण के द्वारा कोई वस्तु, धन या और कोई मूल्यवान चीज़ ऐसी परिस्थितियों में किसी व्यक्ति के अधिकार में आ जाती है जिन्हें उसे नहीं रखना चाहिए या जो न्यायपूर्ण ढंग से दूसरे व्यक्ति की सम्पत्ति है, तब किसी करार के न होने पर भी उस पर दायित्व डाला गया है। उसका तब यह कर्तव्य है कि वह प्राप्त किए गये लाभ को लौटाए या उसका मूल्य चुकाए।

8.4.1 अर्ध-अनुबंध की परिभाषा

अर्ध-अनुबंध की कोई कानूनी परिभाषा न तो अंग्रेज़ी कानून में उपलब्ध है और न ही भारतीय अनुबंध अधिनियम में। पॉलक ने अर्ध-अनुबंध का वर्णन इस प्रकार किया है — ये वास्तव में नहीं, कानून की दृष्टि में अनुबंध हैं, जो अनुबंध के क्षेत्र का कृत्रिम विस्तार करके ऐसे दायित्वों को इनके अन्तर्गत लाते हैं जो वास्तव में इनके अन्तर्गत नहीं आते। एक प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक सर विलियम एन्सन ने बताया है कि किसी भी कानून की पद्धति में ऐसी परिस्थितियाँ अवश्य होती हैं जब किसी एक पक्ष को दूसरे के प्रति उत्तरदायी होना पड़ता है, भले ही उनमें इस प्रकार से उत्तरदायी होने का समझौता नहीं हो। ऐसा तब होता है जब किसी व्यक्ति के पास कोई लाभ या धन आ जाता है जो कानून की दृष्टि में दूसरे व्यक्ति का है अथवा यदि वह उसे नहीं लौटाता तो दूसरे को अन्यायपूर्ण हानि होगी। इस प्रकार की परिस्थितियों में उपचार उपलब्ध कराने के लिए 'अर्ध-अनुबंध' होते हैं।

'अर्ध-अनुबंधों' को 'निहित अनुबंध' भी कहते हैं। इन्हें निहित इसलिए कहा जाता है क्योंकि ये अनुबंध से उत्पन्न दायित्वों से मिलते-जुलते दायित्व उत्पन्न करते हैं। अनुबंध के निर्माण के लिए आवश्यक तत्व यहाँ विद्यमान नहीं होते हैं, परन्तु उनका परिणाम अनुबंध से उत्पन्न परिणामों से मिलता-जुलता है, इसीलिए इन्हें अर्ध-अनुबंध कहते हैं। अंग्रेजी कानून के अन्तर्गत इन्हें प्रलक्षित अनुबंध या कानूनी अनुबंध भी कहा गया है। भारतीय अनुबंध अधिनियम ने अर्ध-अनुबंधों को "अनुबंध से उत्पन्न सम्बन्धों से मिलते-जुलते कुछ सम्बन्ध" के नाम से कहा है तथा इनका वर्णन धारा 68 से 72 तक में किया गया है।

8.4.2 अर्ध-अनुबंध तथा अनुबंध में अन्तर

अनुबंध की स्थिति में पक्षकार की सहमति से दायित्व उत्पन्न होता है। परन्तु अर्ध-अनुबंध की दशा में सहमति का प्रश्न ही नहीं उठता, इसमें तो केवल कानून या प्राकृतिक न्याय से दायित्व उत्पन्न होता है। जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि अर्ध-अनुबंध इस नियम पर आधारित है कि कोई व्यक्ति किसी दूसरे को हानि पहुँचाकर अन्यायपूर्ण ढंग से अमीर नहीं बन सकता। परन्तु जहाँ तक हर्जाने के दावे का प्रश्न है, अनुबंध तथा अर्ध-अनुबंध में समानता है। अर्ध-अनुबंध भंग होने की दशा में अनुबंध अधिनियम की धारा 73 के द्वारा उन्हीं उपचारों (हर्जाने के लिए दावा) का प्रावधान किया गया है जो अनुबंध भंग होने पर उपलब्ध होते हैं। इस धारा के अनुसार, "जब अनुबंध से उत्पन्न दायित्वों के समान कोई दायित्व उत्पन्न कर दिया गया है और उसका पालन नहीं किया जाता तब कोई भी व्यक्ति, जिसे उसके पालन में

त्रुटि करने से क्षति हुई हो, दोषी पक्षकार से वही मुआवज़ा पाने का अधिकारी है, जैसे कि ऐसे व्यक्ति ने उस दायित्व का पालन करने का अनुबंध किया है और उसने उस अनुबंध को भंग किया हो।"

8.4.3 अर्ध-अनुबंध के प्रकार

आपने यह पढ़ा कि अर्ध-अनुबंध क्या होता है तथा यह अनुबंध से किस प्रकार भिन्न है। आइए अब हम भारतीय अनुबंध अधिनियम के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त अर्ध-अनुबंध के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करते हैं। धारा 68 से 72 तक में पाँच प्रकार के अर्ध-अनुबंध दायित्वों का वर्णन किया गया है।

आवश्यक वस्तुओं की पूर्ति

धारा 68 के अनुसार, अनुबंध करने में अयोग्य व्यक्ति को (इसमें अवयस्क, मूर्ख तथा पागल शामिल हैं), या ऐसे व्यक्ति को जिसका पालन-पोषण करने के लिए ऐसा अयोग्य व्यक्ति कानूनन बाध्य हो, उसके जीवन स्तर के अनुकूल आवश्यकता की वस्तुएँ यदि कोई व्यक्ति प्रदान करता है, तो उसे ऐसे अयोग्य व्यक्ति की सम्पत्ति से उक्त वस्तुओं का मूल्य प्राप्त करने का अधिकार है। यहाँ पर आप ध्यान दें कि आवश्यकता की वस्तुओं के मूल्य के लिए दावा अर्ध-अनुबंध दायित्व पर आधारित है, क्योंकि अनुबंध करने के अयोग्य व्यक्ति के साथ किए गये अनुबंध प्रारम्भ से ही व्यर्थ होते हैं। इस सम्बन्ध में, निम्नलिखित दो बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए:

क) अयोग्य व्यक्ति की सम्पत्ति (यदि कोई है) से ही मूल्य वसूल किया जा सकता है, उस व्यक्ति से व्यक्तिगत रूप से नहीं।

ख) जो वस्तुएँ या सेवाएँ प्रदान की गई हैं, वे "आवश्यकता" की परिधि में आती होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में विस्तार से जानकारी प्राप्त करने के लिए आप खंड 1 की इकाई 3 में 'अवयस्क के साथ अनुबंध' शीर्षक के अन्तर्गत पढ़िए।

किसी अन्य व्यक्ति द्वारा देय राशि का भुगतान

यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसी धनराशि का भुगतान कर देता है जिसके भुगतान में उसका हित है, परन्तु जिसका भुगतान करने के लिए कोई अन्य व्यक्ति कानूनन बाध्य है, तो वह उस अन्य व्यक्ति से प्रतिपूर्ति पाने का अधिकारी है (धारा 69)।

उदाहरण

ख ने एक जमींदार **क** से बंगाल में कुछ भूमि पट्टे पर ले रखी है। **क** द्वारा सरकार को देय मालगुज़ारी बकाया होने के कारण सरकार उस जमीन की बिक्री के लिए विज्ञापन निकालती है। राजस्व कानून के अनुसार उक्त विक्रय के परिणामस्वरूप **ख** का पट्टा रद्द हो जाएगा। **ख** उक्त बिक्री को रोकने तथा पट्टे को रद्द होने से बचाने के लिए सरकार को बकाया मालगुज़ारी का भुगतान कर देता है। **क**, **ख** को यह राशि चुकाने के लिए बाध्य है **(हजारीलाल बनाम नौरंगलाल)**।

धारा 69 को लागू करने के लिए निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना आवश्यक है:

i) भुगतान करने वाले व्यक्ति का भुगतान करने में निजी हित अवश्य होना चाहिए। जैसे **प** अपनी गाड़ी **ड** के यहाँ छोड़ आता है तथा **ड** का मकान मालिक किराए की बकाया राशि के लिए गाड़ी को अपने अधिकार में ले लेता है। अपनी गाड़ी प्राप्त करने के लिए **प** किराए का भुगतान कर देता है। निर्णय दिया गया कि **प**, **ड** से राशि वसूल कर सकता है **(Exall V. Patriage)**

ii) यह भुगतान स्वेच्छा से नहीं किया जाना चाहिए।

iii) भुगतान ऐसा होना चाहिए जिसे करने के लिए दूसरा पक्ष कानूनन बाध्य हो।

उदाहरण

ज द्वारा देय बकाया सरकारी राजस्व की वसूली के लिए **क** का माल गलती से अभिग्रहण (attach) कर लिया गया। अपने माल को बिक्री के बचाने के लिए **क** उक्त बकाया राशि का

भुगतान कर देता है। निर्णय दिया गया कि वह ज से रकम वसूल करने का हकदार है **(आबिद हुसेन बनाम गंगा सहाय)**।

मूल्य पाने के लिए किए गये कार्यों के लिए भुगतान करने का दायित्व

जब कोई व्यक्ति, नि:शुल्क अभिप्राय के बिना, किसी दूसरे व्यक्ति के लिए विधिपूर्वक कोई कार्य करता है या उसे कोई वस्तु प्रदान करता है और वह दूसरा व्यक्ति उसका लाभ उठा लेता है तो वह (लाभ उठाने वाला व्यक्ति) उस किए गये कार्य या वस्तु के लिए पहले व्यक्ति को उचित मुआवज़ा देने या वस्तु लौटाने के लिए बाध्य होता है (धारा 70)।

उदाहरण:

i) **क**, एक व्यापारी, गलती से कुछ माल **ख** के घर पर छोड़ जाता है। **ख** इसे अपना ही माल समझता है। वह माल के मूल्य का भुगतान **क** को करने के लिए बाध्य है।

ii) **क**, **ख** की सम्पत्ति को आग से बचाता है। यदि परिस्थितियों से यह प्रकट होता है कि उसने यह कार्य नि:शुल्क किया है तो **क**, **ख** से मुआवजे की मांग नहीं कर सकता।

धारा 70 के अन्तर्गत, किसी व्यक्ति द्वारा अन्य किसी के लिए कार्य करने पर, कार्यवाही का अधिकार पाने के लिए निम्नलिखित तीन शर्तों को पूरा करना आवश्यक है:

i) कार्य विधिपूर्वक किया जाना चाहिए।
ii) यह कार्य किसी व्यक्ति द्वारा नि:शुल्क या सेवा भाव से नहीं किया जाना चाहिए।
iii) जिस व्यक्ति के लिए कार्य किया गया है उसने उस कार्य का लाभ उठाया हो।

अनुबंध का लिखित में होना: आप यह ध्यान रखें कि जब किसी अधिनियम में आज्ञापक प्रावधान है कि अनुबंध लिखित में होना चाहिए, तब मौखिक अनुबंध व्यर्थ होते हैं। परन्तु सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया है कि जब कार्य किया जा चुका है तथा दूसरे पक्ष ने इसे स्वीकार भी कर लिया है, तब धारा 70 लागू होती है तथा किए गये कार्य के लिए भुगतान किया जाना चाहिए **(स्टेट ऑफ वेस्ट बंगाल बनाम बी. के. मंडल एण्ड सन्स)**।

खोई हुई वस्तु पाने वाले का दायित्व

जब किसी व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति की कोई वस्तु पड़ी मिल जाती है और वह उसे अपने अधिकार में ले लेता है तो उसका दायित्व एक निक्षेपिती (bailer) के समान ही होता है। ऐसी दशा में कानून की दृष्टि में, माल के स्वामी तथा पाने वाले व्यक्ति के मध्य एक निहित अनुबंध माना जाता है तथा माल पाने वाले को निक्षेपिती समझा जाता है। वस्तु पाने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह पाई हुई वस्तु की उतनी ही सावधानी से देख-भाल करे, जितनी कि सामान्य परिस्थितियों में एक सामान्य बुद्धिवाला व्यक्ति उतनी ही मात्रा, गुण और मूल्य वाली स्वयं अपनी वस्तु की करता। इसके अतिरिक्त, उसे वस्तु के स्वामी का पता लगाने के लिए यथासम्भव प्रयत्न भी करना चाहिए।

वस्तु पाने वाले के अधिकार: वस्तु पाने वाले व्यक्ति को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं:

1 वस्तु पाने वाले को अधिकार है कि वह उन वस्तुओं को अपने कब्ज़े में तब तक रखे जब तक वास्तविक स्वामी नहीं मिल जाता। उसे वास्तविक स्वामी के अलावा संसार के हर व्यक्ति से अधिक उस वस्तु को अपने कब्ज़े में रखने का अधिकार है। उदाहरणार्थ, **क** को **ख** की दुकान के फर्श पर एक हीरा पड़ा मिलता है, वह उसे **ख** को उसके वास्तविक स्वामी के पता चलने तक रखने के लिए दे देता है। भरसक प्रयास करने के बावजूद वास्तविक स्वामी का पता नहीं चल सका। कुछ समय बाद **क** ने **ख** को वास्तविक स्वामी को ढूंढने में किया गया व्यय देने का प्रस्ताव करते हुए उससे हीरा लौटा देने का अनुरोध किया। **ख** ने इंकार कर दिया। निर्णय दिया गया कि **ख** को **क** का हीरा लौटाना पड़ेगा, क्योंकि **क** को वास्तविक स्वामी के अलावा संसार के हर व्यक्ति के मुकाबले हीरे को अपने पास रखने का अधिकार है **(हलिन्स बनाम फाउलर)**।

2 उसने वस्तु के सम्बन्ध में जो कुछ भी व्यय किया है, उसे प्राप्त करने के लिए उसे वस्तुओं पर ग्रहणाधिकार (lien) भी प्राप्त है।

3 जब वस्तु के स्वामी ने खोई हुई वस्तु को वापस लौटाने के लिए कुछ ईनाम देने की घोषणा की है, तो वह इस ईनाम के लिए दावा दायर कर सकता है और जब तक उसे ईनाम

प्राप्त नहीं हो जाता वह वस्तु को अपने पास रोके रख सकता है (धारा 168)। **हरभजन बनाम हरचरन** के मामले में इस अधिकार को पुन: अनुमोदित किया गया।

। वस्तु पाने वाला व्यक्ति निम्न परिस्थितियों में वस्तु को बेच सकता है:

क) जब पाई हुई वस्तु के नष्ट हो जाने का भय हो।

ख) जब सामान्य प्रयत्नों से वस्तु के स्वामी का पता नहीं लगाया जा सकता।

ग) जहाँ वास्तविक स्वामी का पता चल जाता है परन्तु वह वस्तु पाने वाले के खर्चे चुकाने से मना कर देता है।

घ) जहाँ वस्तु पाने वाले के विधिक खर्चे, वस्तु के मूल्य के दो-तिहाई के बराबर या अधिक हों।

ऐसे व्यक्ति का दायित्व जिसे गलती से या बल प्रयोग के फलस्वरूप कोई धनराशि या वस्तु दी गई है।

यदि किसी व्यक्ति को गलती से या बल प्रयोग के फलस्वरूप कोई धनराशि या वस्तु दी गई , तो उसे वह वस्तु या धनराशि वापस लौटानी होगी (धारा 72)।

उदाहरण:

क तथा **ख** ने संयुक्त रूप से **ग** को 100 रुपये देने हैं। अकेला **क** यह राशि **ग** को लौटा देता है। इस तथ्य की जानकारी के बिना **ख** फिर 100 रु. **ग** को चुका देता है। अब **ग** 100 रुपये **ख** को लौटाने के लिए बाध्य है।

एक रेलवे कम्पनी ने एक गैर-कानूनी प्रभार लिए बिना परेषिती को माल की सुपुर्दगी देने से इंकार कर दिया। परेषिती को अवैध रूप से अधिक ली गई राशि वसूल करने का अधिकार है।

यहाँ यह ध्यान रहे कि साम्यिक प्रत्यास्थापन (restitution) के नियम पर धारा 72 आधारित । एक व्यक्ति यदि गलती से ऐसी राशि का भुगतान कर देता है जिसे वह देय समझता है, परन्तु वास्तव में वह देय नहीं है, तो ऐसे व्यक्ति द्वारा गलती से भुगतान की गई राशि उसे वापस मिलनी चाहिए। जब गलती से कोई भुगतान किया जाता है, तब गलती चाहे कानून की या तथ्य की, उसे वापस वसूल किया जा सकता है। **सेल्स टैक्स आफिसर बनाम कन्हैया लाल** के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया है कि अनुबंध अधिनियम की धारा 72 पर्याप्त रूप से व्यापक है, इसमें तथ्य सम्बन्धी तथा कानून सम्बन्धी दोनों ही प्रकार की गलतियाँ आती हैं। इस केस में अग्रिम लेन देन पर विक्रय कर लगाने को इलाहाबाद हाई कोर्ट ने विधि विरूद्ध ठहराया। कानून की गलती में जो राशि जमा कराई गई उसे प्रत्यार्थी ने वापस मांगा। निर्णय दिया गया कि प्रत्यार्थी रकम वापस प्राप्त कर सकता है।

इस धारा में 'बल प्रयोग' शब्द का जो प्रयोग किया गया है, उसे सामान्य अर्थों में प्रयोग किया गया मानना चाहिए जैसे कि अन्यायपूर्ण दबाव या उद्दापन या इसी तरह का कोई अन्य कार्य (**सेठ कन्हैया लाल बनाम नैशनल बैंक ऑफ इण्डिया**)।

.5 अर्जित राशि (Quantum Merium)

जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है, वाक्यांश 'अर्जित राशि' का अर्थ है 'किए गये कार्य अनुपात में' या 'जितना अर्जित किया हो उतना'। कानून का यह सामान्य नियम है कि जब तक किसी व्यक्ति ने अपने सम्पूर्ण दायित्वों का पालन नहीं किया है, तब तक वह दूसरे निष्पादन की मांग नहीं कर सकता (**कटर बनाम पावेल**)। परन्तु कुछ विशेष परिस्थितियों में जब एक पक्ष अनुबंध के अन्तर्गत कोई कार्य करता है तथा दूसरा पक्ष उस अनुबंध को समाप्त कर देता है या कोई ऐसी घटना घटित होती है कि अब आगे अनुबंध का पालन करना असम्भव हो गया है, तो जिस पक्ष ने कुछ कार्य किया है वह किए गये कार्य के लिए पारिश्रमिक की मांग कर सकता है। जैसे कि अनुबंध भंग किए जाने पर हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार उत्पन्न होता है, 'अर्जित राशि' के आधार पर दावा वैसे उत्पन्न नहीं होता। यह अर्ध-अनुबंध से उत्पन्न दायित्व है जिसे परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए कानून मान्यता देता है (**पटेल इन्जीनियरिंग क. लि. बनाम इण्डियन आयल कार्पोरेशन लि.**)। भारतीय

न्यायालयों में अर्जित मात्रा के आधार पर दावा अनुबंध अधिनियम की धारा 70 के अन्तर्गत किया जा सकता है।

निम्नलिखित परिस्थितियों में 'अर्जित राशि' के आधार पर दावा उत्पन्न होता है:

1 **जब किसी करार के अप्रवर्तनीय होने का पता चलता है:** जब किसी करार के व्यर्थ होने का पता चलता है, या कोई अनुबंध व्यर्थ हो जाता है, तो जिस किसी ने भी उसके अन्तर्गत लाभ प्राप्त किया हो, उसे वह लाभ लौटाना पड़ेगा या इसके बदले उस व्यक्ति को मुआवज़ा देना होगा, जिससे वह लाभ प्राप्त हुआ है। उदाहरण के लिये, कम्पनी के संचालक-मंडल ने एक लिखित अनुबन्ध के अधीन 5,000 रुपये प्रति माह वेतन पर **ग** को प्रबन्ध-संचालक के पद पर नियुक्त कर दिया। तीन माह तक काम करने के बाद पता चला कि जिस 'संचालक-मंडल' ने **ग** को नियुक्त किया, उसे ऐसा करने का अधिकार ही नहीं था। यहाँ अनुबंध को व्यर्थ पाया गया। निर्णय दिया गया कि अर्जित मात्रा के आधार पर, **ग** अपनी सेवाओं के लिए पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार है (क्रेवन एलिस बनाम कैनन्स लि.)।

2 **जब एक पक्ष अनुबंध का त्याग करता है या उसका निष्पादन करने से इंकार कर देता है:** जब कोई अनुबंध-भंग किया जाता है, तो पीड़ित पक्ष को यह अधिकार है कि वह अनुबंध के अन्तर्गत किए गये कार्य के लिए उचित मुआवज़ा प्राप्त करे। उदाहरणार्थ, एक पत्रिका के स्वामी **ग** ने **प** को एक पुस्तक लिखने के लिए नियुक्त किया। इसे उसकी पत्रिका में किस्तों में छपना था। कुछ किस्तें छपने के बाद, पत्रिका का प्रकाशन बन्द कर दिया गया। निर्णय दिया गया कि **प** प्रकाशित हुए भाग के लिए अर्जित मात्रा के आधार पर पारिश्रमिक प्राप्त कर सकता है **(प्लांश बनाम कोलबर्न)**। एक अन्य मामले में, एक भवन निर्माण ठेकेदार **स** ने **ह** के लिए एक मकान 565 डालर में बनाने का अनुबन्ध किया। उसने 333 डालर तक का कार्य करने के बाद अनुबंध त्याग दिया। तत्पश्चात्, **ह** ने किसी अन्य व्यक्ति से कार्य पूर्ण कराया। इस स्थिति में किए गये कार्य के लिए **स** कुछ भी वसूल नहीं कर सकता, क्योंकि कार्य पूर्ण होने पर ही वह रकम वसूल करने का हकदार होता था **(सम्पटर बनाम हैजेस)**।

3 **जब अनुबंध विभाज्य है:** जब अनुबंध विभाज्य है तथा निर्दोष पक्ष ने अनुबंध के आंशिक निष्पादन से कुछ लाभ प्राप्त किया है, तो दोषी पक्ष अर्जित मात्रा के आधार पर दावा कर सकता है। परन्तु यदि अनुबंध विभाज्य नहीं है, तो पीड़ित पक्ष इस आधार पर मुआवजे के लिए दावा नहीं कर सकता।

4 **जब एक अविभाज्य अनुबंध का निष्पादन तो किया जाता है, परन्तु ठीक ढंग से नहीं:** जब एक मुश्त राशि के लिए एक अविभाज्य अनुबंध का पूर्णतः पालन तो किया जाता है, परन्तु खराब ढंग से किया जाता है, तब निष्पादन करने वाला पक्ष एक मुश्त राशि में से खराब कार्य के लिए कटौती किए जाने के बाद शेष राशि की मांग कर सकता है। उदाहरणार्थ, **क** ने 10,000 रुपये में **ख** के फ्लेट की साज-सज्जा करने का अनुबंध किया। **क** ने कार्य कर दिया, परन्तु **ख** ने दोषपूर्ण कारीगरी की शिकायत की। इन दोषों को दूर करने के लिए **ख** को 2,000 रुपये खर्च करने पड़े। **क**, **ख** से 8,000 रुपये (10,000 रु. में से 2,000 घटाकर) की मांग कर सकता है (होइंग बनाम इसाक)।

बोध प्रश्न ख

1 अनुबंध तथा अर्ध-अनुबंध में अन्तर बताइए।

....

....

....

....

2 अर्जित मात्रा से आपका क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

3 रिक्त स्थान भरिए:

i) अर्ध-अनुबंध का एक अन्य नाम .... है।

ii) अवयस्क को .... प्रदान किए जाने पर अवयस्क की सम्पत्ति को कुर्क कराया जा सकता है।

4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) अवयस्क पर आश्रित किसी व्यक्ति को जीवन की आवश्यकता की वस्तुएँ प्रदान किए जाने पर अवयस्क की सम्पत्ति को कुर्क किया जा सकता है। ....

ii) एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से कानून की गलती के अन्तर्गत हुए भुगतान को वसूल नहीं कर सकता। ....

iii) कोई व्यक्ति दूसरे से निष्पादन की मांग तब तक नहीं कर सकता जब तक उसने अपने वचन का पूर्णत: पालन न कर दिया हो। ....

iv) पा लेना रखना है। ....

v) खोई हुई वस्तु के स्वामी के बाद उसे पाने वाला व्यक्ति उसका दूसरा श्रेष्ठ स्वामी होता है। ....

3.6 सारांश

जब कोई एक पक्ष अपने वचन का पालन करने में त्रुटि करता है या इंकार कर देता है, तो कहा जाता है कि उसने अनुबंध भंग किया। ऐसी स्थिति में दूसरे पक्ष, जिसे पीड़ित पक्ष कहते हैं के पास कुछ उपचार हैं। इन उपचारों में ये शामिल हैं: (1) निरस्त करने का अधिकार (पालन करने का अधिकार), (2) हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार (साधारण हर्जाना, विशेष हर्जाना, उदाहरणात्मक या दंडात्मक हर्जाना, नाममात्र का हर्जाना, निर्धारित हर्जाना या दण्ड), (3) विनिर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा, (4) निषेधादेश प्राप्त करने के लिए दावा तथा (5) अर्जित मात्रा के आधार पर दावा।

कुछ ऐसे दायित्व व अधिकार होते हैं जो अनुबंध जनित नहीं होते हैं परन्तु वे अनुबंध से उत्पन्न दायित्वों से मिलते-जुलते हैं। समन्याय के सिद्धान्त पर कानून उन्हें भी अनुबंध ही मानता है। इस प्रकार की परिस्थितियों को अर्ध-अनुबंध के नाम से जाना जाता है। अनुबंध अधिनियम की धारा 68 से 72 तक में विभिन्न अर्ध-अनुबंधों का वर्णन किया गया है। इसमें शामिल हैं: (1) अनुबंध करने में अयोग्य व्यक्ति को या उसके नाम पर किसी अन्य को जीवन की आवश्यकता की वस्तुएं प्रदान करने के लिए दावा, (2) किसी अन्य व्यक्ति द्वारा देय राशि का किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा भुगतान जिसका उसमें निजी स्वार्थ हो, (3) नि:शुल्क कार्य या सेवा प्रदान करने के इरादे के बिना ऐसी सेवाओं का लाभ उठाने वाले व्यक्ति का दायित्व, (4) खोई हुई वस्तु पाने वाले का दायित्व, तथा (5) जिस व्यक्ति को गलती या बल-प्रयोग के कारण धनराशि का भुगतान किया है, उसका दायित्व।

3.7 शब्दावली

प्रत्याशित भंग (Anticipatory Breach): अनुबंध के निष्पादन के समय से पूर्व अनुबंध-भंग।

हर्जाना (Damages): यह मुद्रा के रूप में वह धनराशि है जो किसी पक्ष के द्वारा अनुबंध किए जाने पर न्यायालय द्वारा उससे दिलवाई जाती है।

उदाहरणात्मक हर्जाना (Exemplary Damages): उदाहरण स्थापित करने के लिए दिया गया हर्जाना।

विफलता (Frustration): भारतीय विधि में 'आकस्मिक असम्भावना' के लिए अंग्रेजी कानून में प्रयुक्त शब्द।

निषेधादेश (Injunction): न्यायालय का ऐसा आदेश जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने से रोका जाता है, इसे 'स्टे आर्डर' भी कहते हैं।

दण्ड (Penalty): अनुबंध भंग किए जाने पर अनुबंध में वर्णित देय राशि।

दण्डस्वरूप (Punitive): जो दण्ड की प्रकृति का हो।

अर्ध-अनुबंध (Quasi Contract): जो अनुबंध की प्रकृति के या उससे मिलते-जुलते हों।

अर्जित राशि (Quantum Meriut): किए गये काम के अनुसार या 'जितना कमाया उतना'।

निरस्तीकरण (Rescission): अनुबंध के अन्तर्गत दायित्वों का पालन न करने का अधिकार।

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 3 i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) गलत

4 i) हैडले बनाम बैक्सन्डेल ii) बाजार, अनुबन्धित, iii) व्यक्तिगत प्रकृति, iv) जितना अर्जित किया उतना v) अनुबंध के निष्पादन के दौरान।

ख 3 i) अनुबंध से उत्पन्न सम्बन्धों से मिलते-जुलते कुछ सम्बन्ध, ii) आवश्यकता की वस्तुएँ

4 i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) सही।

8.9 स्वपरख प्रश्न

1 प्रत्याशित अनुबंध भंग से आप क्या समझते हैं ? ऐसी स्थिति में पक्षकारों की क़ानूनी स्थिति बताइए।

2 अनुबंध-भंग किए जाने पर हानि या हर्जाने की राशि निर्धारित करने के सम्बन्ध में भारतीय अनुबंध अधिनियम में क्या नियम हैं ?

3 अनुबंध क्या होता है ? अनुबंध भंग होने पर पीड़ित पक्ष को क्या उपचार उपलब्ध हैं ?

4 "अनुबंध भंग के कारण दूरवर्ती या अप्रत्यक्ष हानियों के लिए मुआवजा नहीं दिया जाता।" व्याख्या कीजिए।

5 'दण्ड' और 'निर्धारित हर्जाना' शब्दों की व्याख्या कीजिए, तथा दोनों में अन्तर को स्पष्ट कीजिए।

6 अर्ध-अनुबंध क्या होते हैं ? भारतीय अनुबंध अधिनियम में वर्णित ऐसे अनुबंधों के प्रकार गिनाइए।

7 'अर्जित मात्रा' पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

> नोट: इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

आर. के. ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश: **व्यापारिक सन्नियम** (दिल्ली: श्री महाबीर बुक डिपो, 1986) अध्याय 7 से 14

आर. पी. माहेश्वरी एवं एस. एन. माहेश्वरी: **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1988) अध्याय 5–11

एन. डी. कपूर एवं दिनकर पगारे: **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली: सुल्तान चंद एण्ड संस, 1988) अध्याय 5 से 15

NOTES

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-2
व्यापारिक सन्नियम

खंड

3

विशेष अनुबंध

इकाई 9

क्षतिपूर्ति तथा गारंटी **5**

इकाई 10

निक्षेप तथा गिरवी **23**

इकाई 11

एजेंसी **43**

इकाई 12

पंचनिर्णय **73**

खंड 3 विशिष्ट अनुबंध और पंचनिर्णय

खंड 1 और 2 में आपने अनुबंधों के सामान्य नियमों के संबंध में पढ़ा जो सभी प्रकार के अनुबंधों पर लागू होते हैं। परन्तु कुछ अनुबंधों के लिए अनुबंध अधिनियम में विशेष प्रकार के नियम निर्धारित किए गए हैं। ये अनुबंध हैं: क्षतिपूर्ति (indemnity) और गारंटी (guarantee) के अनुबंध, निक्षेप (bailment) और गिरवी (pledge) के अनुबंध तथा एजेंसी (agency) का अनुबंध। इस खंड में आप इन विशिष्ट अनुबंधों से संबंधित नियमों को विस्तारपूर्वक पढ़ेंगे। इस खंड में पंचनिर्णय (arbitration) से संबंधित नियमों को भी दिया गया है, जो किसी अनुबंध के विभिन्न पक्षकारों के बीच के विवाद के निपटारे के लिए एक प्रमुख अधिनियम बन गया है।

इकाई 9 में क्षतिपूर्ति और गारंटी के अनुबंधों के संबंध में विचार किया है जिसमें उनके अर्थ, उनके बीच अंतर, क्षतिपूर्तिधारी (indemnity holder) के अधिकार, प्रतिभू (surety) के अधिकार एवं प्रतिभू के दायित्व के निर्वाह के संबंध में भी चर्चा की गई है।

इकाई 10 में निक्षेप और गिरवी के अनुबंधों के संबंध में चर्चा की गई है, जिसमें उनके अर्थ और उनके बीच अंतर, निक्षेपक (bailor) और निक्षेपिती (bailee) के अधिकार और कर्तव्य, गिरवीकर्ता (pawnor) और गिरवीग्राही (pawnee) के अधिकार और कर्तव्य तथा गैर-स्वामियों द्वारा निक्षेप और गिरवी की समाप्ति के संबंध में विचार किया गया है।

इकाई 11 में एजेंसी के अनुबंध के संबंध में विचार किया गया है। इसमें एजेंसी के अर्थ, एजेंसी के निर्माण की विधि, एजेंट के अधिकार के क्षेत्र और उसकी सीमा, एजेंट के अधिकार और कर्तव्य, तीसरे पक्ष के प्रति प्रधान (principal) के दायित्व तथा एजेंसी की समाप्ति के संबंध में भी चर्चा की गई है।

इकाई 12 में पंचनिर्णय करार के संबंध में विचार किया गया है। इसमें पंचनिर्णय करार के लिए आवश्यक बातों, पंचनिर्णय की विधियों, पंच की नियुक्ति, पंच के अधिकार और कर्तव्य एवं पंचाट (award) आदि के संबंध में चर्चा की गई है।

इकाई 9 क्षतिपूर्ति एवं गारंटी

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 क्षतिपूर्ति अनुबंध का अर्थ
9.3 क्षतिपूर्तिधारी के अधिकार
9.4 क्षतिपूरक का दायित्व आरम्भ होने का समय
9.5 गारंटी अनुबंध का अर्थ
9.6 क्षतिपूर्ति अनुबंध एवं गारंटी अनुबंध में अन्तर
9.7 गारंटीकर्ता के दायित्व की सीमा
9.8 गारंटी के प्रकार
9.9 चलत गारंटी का खंडन
9.10 गारंटीकर्ता के अधिकार
- 9.10.1 मूल ऋणी के विरुद्ध अधिकार
- 9.10.2 लेनदार के विरुद्ध अधिकार
- 9.10.3 सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध अधिकार

9.11 गारंटीकर्ता का अपने दायित्व से मुक्ति
- 9.11.1 गारंटी अनुबंध के खंडन द्वारा
- 9.11.2 लेनदार के आचरण द्वारा
- 9.11.3 अनुबंध के अविधिमान्य होने पर

9.12 सारांश
9.13 शब्दावली
9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.15 स्वपरख प्रश्न

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:
- क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिभाषा कर सकें
- क्षतिपूर्तिधारी के अधिकारों का वर्णन कर सकें
- गारंटी अनुबंध की परिभाषा कर सकें
- गारंटी अनुबंध एवं क्षतिपूर्ति अनुबंध में अन्तर बता सकें
- गारंटीकर्ता के दायित्व की सीमा की व्याख्या कर सकें
- गारंटीकर्ता के अधिकारों का वर्णन कर सकें
- यह बता सकें कि गारंटीकर्ता का दायित्व कब समाप्त होता है।

9.1 प्रस्तावना

अब तक आपने अनुबंध के सामान्य सिद्धान्तों का अध्ययन किया है। आइए अब हम अनुबंध के एक विशेष प्रकार, क्षतिपूर्ति अनुबंध एवं गारंटी अनुबंध, का वर्णन करते हैं। क्योंकि यह अनुबंध का एक विशिष्ट प्रकार है, अत: अनुबंध के सामान्य सिद्धान्त, इस प्रकार के अनुबंधों पर भी समान तरह से लागू होते हैं। इस इकाई में आप क्षतिपूर्ति अनुबंध का अर्थ, क्षतिपूर्तिधारी (indemnity holder) के अधिकार तथा क्षतिपूरक का दायित्व आरम्भ होने के समय के बारे में पढ़ेंगे। आप गारंटी अनुबंध के अर्थ, क्षतिपूर्ति अनुबंध एवं गारंटी अनुबंध के बीच अन्तर, गारंटी के प्रकार, गारंटीकर्ता (surety) के अधिकारों एवं गारंटीकर्ता के दायित्व के समाप्त होने के बारे में भी पढ़ेंगे।

9.2 क्षतिपूर्ति अनुबंध (Contract of Indemnity) का अर्थ

'क्षतिपूर्ति' शब्द का अर्थ है उस पक्ष की हानि को पूरा करना या उसे हर्जाना देना, जिसको हानि हुई है। अनुबंध अधिनियम की धारा 124 ने क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिभाषा इस प्रकार की है, "**यह ऐसा अनुबंध है जिसके अंतर्गत एक पक्षकार दूसरे पक्षकार को, स्वयं वचनदाता (promisor) के आचरण से अथवा किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से उस दूसरे पक्षकार को हुई हानि से बचाने का वचन देता है।**" जो पक्ष हानि की पूर्ति करने का वचन देता है उसे क्षतिपूरक (indemnifier) कहते हैं, तथा जिस पक्ष को वचन दिया जाता है या जिस पक्ष की हानि की पूर्ति की जानी है उसे 'क्षतिपूर्तिधारी' या 'हानि-रक्षाधारी' (indemnity holder or indemnified) कहते हैं। उदाहरण के लिये, A 200 रुपये के एक दावे के सम्बन्ध में, B के विरुद्ध C द्वारा की जाने वाली कानूनी कार्यवाही के परिणामस्वरूप उसे (B) जो भी हानि होगी, उस हानि की पूर्ति करने का वचन देता है, यह क्षतिपूर्ति का अनुबंध है। इस अनुबंध में A 'क्षतिपूरक' तथा B 'क्षतिपूर्तिधारी' है।

उपर्युक्त परिभाषा क्षतिपूर्ति अनुबंध के क्षेत्र को सीमित करती है क्योंकि इसमें केवल ऐसी हानि को पूरा करने का वचन दिया जाता है जो वचनदाता के स्वयं अपने आचरण या किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से उत्पन्न होती है। यदि इस परिभाषा का शाब्दिक अर्थ लगाया जाए तो दुर्घटनाओं से होने वाली हानि इसके क्षेत्र से बाहर मानी जाएंगी। उस स्थिति में, बीमा अनुबंध, क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिधि में नहीं आएंगे। परन्तु वास्तविकता यह है कि बीमे के सभी अनुबंध (जीवन बीमा को छोड़कर) क्षतिपूर्ति के अनुबंध हैं। बीमा अनुबंधों को क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिधि से बाहर करने का, कानून बनाने वालों का कभी भी इरादा नहीं था। इसीलिए हम उस अंग्रेजी कानून की परिभाषा का पालन करते हैं, जिसके अनुसार, "**किसी निर्दोष व्यक्ति को ऐसे लेन-देन के कारण हुई हानि से बचाने का वचन दिया जाता है जो वचनदाता के अनुरोध पर किया गया हो।**" इस परिभाषा में ऐसी सब हानियों को पूरा करने का वचन शामिल है जो किसी भी कारण से उत्पन्न हुई हों, जैसे अग्नि, समुद्री जोखिमें, दुर्घटना से हुई हानि। जब एक पक्ष दूसरे पक्ष को हुई हानि की पूर्ति करने का स्पष्ट वचन देता है तो इसे अभिव्यक्त (express) क्षतिपूर्ति कहते हैं। इसके विपरीत जब पक्षकारों के आचरण या मामले की परिस्थितियों से क्षतिपूर्ति करने का आभास होता हो, तो उसे निहित (implied) क्षतिपूर्ति का अनुबंध कहते हैं। अनुबंध अधिनियम की धारा 69 (इसका वर्णन इकाई 8 में किया जा चुका है) के द्वारा भी क्षतिपूर्ति करने के निहित वचन का वर्णन किया गया है। इसके अन्तर्गत यदि किसी व्यक्ति का रुपये के किसी भुगतान में हित है, जिसका भुगतान करने के लिए दूसरा व्यक्ति कानूनन बाध्य है, तो भुगतान करने वाले व्यक्ति को क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार है। इसी प्रकार, नीलाम द्वारा विक्रय में, नीलामकर्ता तथा उस व्यक्ति के बीच जो उसे नीलाम द्वारा वस्तुएं बेचने के लिए कहता है, क्षतिपूर्ति का एक निहित अनुबंध होता है। उदाहरण के लिये नीलामकर्ता A ने, B के आदेश पर कुछ वस्तुएं नीलाम द्वारा बेच दी। बाद में पता चलता है कि बेची गई वस्तुओं का स्वामी B नहीं बल्कि C है। अत: A द्वारा C का माल बेच देने के लिए, C, A से हर्जाना वसूल करता है। इस दशा में A, B से हर्जाना प्राप्त करने का हकदार है। इस स्थिति में B के स्वामित्व में दोष होने के कारण यदि नीलामकर्ता को कुछ हानि होती है तो उस हानि की पूर्ति करने का निहित वचन है।

जैसा कि आप जानते हैं कि क्षतिपूर्ति अनुबंध, एक विशेष प्रकार का अनुबंध है, अत: इस प्रकार के अनुबंधों को प्रवर्तित कराने के लिए यह आवश्यक है कि वैध अनुबंध के समस्त आवश्यक तत्त्व (जिनका इकाई 1 में वर्णन किया गया है) यहाँ पर भी विद्यमान होने चाहिए। यदि कोई भी एक आवश्यक तत्त्व विद्यमान नहीं है तो अनुबंध को प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। अत: यदि क्षतिपूर्ति अनुबंध का उद्देश्य या प्रतिफल अवैधानिक है तो इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। उदाहरण के लिए, A, B को C की पिटाई करने को कहता है तथा इससे उत्पन्न परिणामों के लिए B को क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है,। इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता। मान लीजिए B, C की पिटाई कर देता है और उस पर 500 रुपये का जुर्माना किया जाता है। B यह राशि A से वसूल नहीं कर सकता, क्योंकि करार का उद्देश्य अवैधानिक है।

9.3 क्षतिपूर्तिधारी के अधिकार (Rights of Indemnity Holder)

अधिनियम की धारा 125 के अनुसार, क्षतिपूर्तिधारी यदि अपने अधिकारों के अन्तर्गत कार्य करता है तो वह क्षतिपूरक (वचनदाता) से निम्नलिखित राशियां वसूल कर सकता है:

1 वह उस सारे हर्जाने का वसूल करने का हकदार है जो उसे ऐसे मुकदमें के सम्बन्ध में देना पड़े जिस पर क्षतिपूर्ति का वचन लागू होता है।

2 वह क्षतिपूरक से ऐसे सारे खर्चे वसूल करने का हकदार है जो उसने क्षतिपूर्ति के अनुबन्ध से सम्बन्धित किसी मुकदमे को दायर करने या उससे बचाव करने के लिए किए हैं। मुकदमा दायर करने या बचाव करने में क्षतिपूरित को क्षतिपूरक के आदेशों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए तथा उसे उसी तरह से काम करना चाहिए जिस प्रकार कि एक सामान्य सूझबूझ वाला व्यक्ति, समान परिस्थितियों में अपने लिए करता।

3 वह क्षतिपूरक से ऐसी समस्त राशि वसूल करने का हकदार है जो उसने ऐसे दावों का समझौता करने में चुकाई हो। परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि वह समझौता क्षतिपूरक के आदेशों के प्रतिकूल नहीं हो तथा समझौता करते समय उसने पर्याप्त सूझबूझ से कार्य किया हो। जब क्षतिपूरक द्वारा अधिकृत किए जाने पर, क्षतिपूर्तिधारी किसी समझौते के अन्तर्गत रकम चुकाता है, तब भी उसे यह राशि वसूल करने का अधिकार है।

9.4 क्षतिपूरक का दायित्व आरम्भ होने का समय (Commencement of Indemnifier's Liability)

इस सम्बन्ध में यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्षतिपूरक भुगतान करने के लिए कब उत्तरदायी होता है या क्षतिपूर्तिधारी हर्जाने की रकम कब वसूल करने का हकदार होता है। जैसे ही क्षतिपूर्तिधारी का दायित्व निश्चित हो जाता है चाहे उसने स्वयं कुछ भी भुगतान न किया हो, क्षतिपूर्तिधारी उपर्युक्त अधिकारों का हकदार हो जाता है। **क्षतिपूर्ति का यह अर्थ नहीं है कि पहले क्षतिपूर्तिधारी भुगतान करे और उसके बाद क्षतिपूरक उसकी क्षतिपूर्ति करे।** क्षतिपूर्ति अनुबन्ध में यह अपेक्षा की जाती है कि जिस पक्षकार की क्षतिपूर्ति की जानी है उससे कभी भी भुगतान करने के लिए न कहा जाए। अत: यदि क्षतिपूर्तिधारी का दायित्व सुनिश्चित हो गया है तो वह क्षतिपूरक से उसे बचाने के लिए तथा भुगतान करने के लिए कह सकता है। सरल शब्दों में, जैसे ही क्षतिपूर्तिधारी का दायित्व निश्चित हो जाता है, वैसे ही क्षतिपूरक का दायित्व आरम्भ हो जाता है।

बोध प्रश्न क

1 क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिभाषा कीजिए।

. . . .

. . . .

. . . .

2 क्षतिपूर्ति का अनुबंध एक सांयोगिक अनुबंध है। क्या आप सहमत हैं ?

. . . .

. . . .

3 अनुबंध अधिनियम में दी गई क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिभाषा में क्षतिपूर्ति करने का निहित वचन भी शामिल है। क्या यह सत्य है ?

. . . .

. . . .

4 A किसी राशि के सम्बन्ध में C द्वारा की जाने वाली कार्यवाही के परिणामों के लिए B की क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है। C उस राशि के लिए B के विरुद्ध अदालत से निर्णय प्राप्त कर लेता है। डिक्री की राशि का भुगतान किए बिना, B इसकी वसूली के लिए A के विरुद्ध दावा करता है, क्या वह सफल होगा ?

. . . .

. . . .

5 बताइए कि क्या निम्नलिखित को प्रवर्तित कराया जा सकता है: जब एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को किसी तीसरे पक्ष की पिटाई करने को कहता है तथा इससे उत्पन्न परिणामों की क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है।

. . . .

. . . .

9.5 गारंटी अनुबंध (Contract of Guarantee) का अर्थ

गारंटी अनुबंध का उद्देश्य किसी व्यक्ति को नौकरी दिलाना, ऋण दिलाना या उधार माल दिलाना होता है। भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 126 के अनुसार **"गारंटी का अनुबंध एक ऐसा अनुबंध है जिसमें किसी तीसरे व्यक्ति द्वारा चूक करने पर, उसके वचन का पालन करने अथवा दायित्व का भुगतान करने का वचन दिया जाता है।" गारंटी देने वाले व्यक्ति को 'गारंटीकर्ता' या प्रतिभू (surety) कहते हैं; जिस व्यक्ति की चूक के सम्बन्ध में गारंटी दी जाती है उसे 'मूल ऋणी' (principal debtor) कहते हैं; तथा जिस व्यक्ति को गारंटी दी जाती है उसे लेनदार (creditor) कहते हैं। गारंटी मौखिक या लिखित हो सकती है।** उदाहरणार्थ, A तथा उसका मित्र B एक व्यापारी की दुकान में प्रवेश करते हैं और A व्यापारी से कहता है, "B द्वारा मांगी जाने वाली वस्तुएँ उसे दे दो, यदि वह भुगतान नहीं करेगा तो मैं कर दूंगा"। यह गारंटी का अनुबंध है। रकम चुकाने का मुख्य दायित्व B का है, परन्तु यदि B रकम चुकाने में चूक करता है तो A रकम चुकाने के लिए उत्तरदायी हो जाता है। इसके विपरीत, यदि A व्यापारी से कहता है, "B को माल लेने दो, मैं देखूंगा कि तुम्हें भुगतान कर दिया जाता है", यह गारंटी का नहीं बल्कि क्षतिपूर्ति का अनुबंध है। गारंटी की उपर्युक्त परिभाषा में आपने गौर किया होगा कि गारंटी के अनुबंध में तीन पक्षकार होते हैं, जिन्हें लेनदार, मूल ऋणी तथा गारंटीकर्ता कहते हैं। जब ये तीनों पक्ष सहमत होते हैं तब गारंटी का अनुबंध बनता है। इसे एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। A और B एक दुकान में जाते हैं तथा A कुछ माल B को उधार देने के लिए कहता है। दुकानदार कहता है "मैं उधार माल दे सकता हूँ बशर्ते A भुगतान की गारंटी दे"। A भुगतान की गारंटी का वचन देता है। इस उदाहरण में, B मूल ऋणी है, A गारंटीकर्ता है तथा दुकानदार लेनदार है और यह गारंटी का अनुबंध है।

गारंटी का अनुबंध एक विशेष प्रकार का अनुबंध है, अत: इसमें वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्व विद्यमान होने चाहिए। जैसे अनुबंध करने वाले पक्षकार अनुबंध करने के योग्य या सक्षम होने चाहिए। मान लीजिए कि उपर्युक्त उदाहरण में B अवयस्क है, अर्थात् वह अनुबंध करने के अयोग्य है। ऐसी स्थिति में A को ही मूल ऋणी माना जाएगा और वह रकम चुकाने के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाएगा। इस प्रकार मूल ऋणी के अयोग्य या अक्षम होने से गारंटी की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। परन्तु यह आवश्यक है कि लेनदार तथा गारंटीकर्ता अनुबंध करने के योग्य होने चाहिए।

अब आप यह प्रश्न पूछ सकते हैं कि यदि गारंटी के अनुबंध में वैध गारंटी के सभी आवश्यक तत्व विद्यमान होने चाहिए तो गारंटीकर्ता एवं मूल ऋणी के बीच प्रतिफल कहाँ है ? इसके उत्तर में यह कह सकते हैं कि गारंटीकर्ता और लेनदार के मध्य प्रत्यक्ष प्रतिफल होना आवश्यक नहीं है अर्थात् गारंटीकर्ता को लाभ मिलना आवश्यक नहीं है। जहाँ तक प्रतिफल का प्रश्न है, यदि मूल ऋणी के लिए कोई कार्य किया जाता है या वचन दिया जाता है, तो यह पर्याप्त है। यहाँ यह मान लिया जाता है कि मूल ऋणी द्वारा प्राप्त प्रतिफल, गारंटीकर्ता के

लिए भी पर्याप्त प्रतिफल होता है। यदि आप धारा 127 को ध्यान से पढ़ें तो यह एकदम स्पष्ट हो जाता है। इस धारा के अनुसार, "**मूल ऋणी के लाभ के लिए किया गया कोई कार्य या देया गया कोई वचन, गारंटीकर्ता द्वारा गारंटी देने के लिए पर्याप्त प्रतिफल होगा**"।

गारंटी अनुबंध की परिभाषा का परीक्षण करने पर आपको यह पता चलेगा कि यहाँ पर क्योंकि तीन पक्षकार होते हैं, अत: उनमें तीन अनुबंध भी होते हैं। पहला अनुबंध लेनदार (creditor) गारंटीकर्ता और मूल ऋणी के बीच होता है जिसके अनुसार मूल ऋणी द्वारा चूक किए जाने पर गारंटीकर्ता को रकम भुगतान करने के लिए कहा जाएगा। यहाँ यह बात निहित है कि मूल ऋणी, गारंटीकर्ता की क्षतिपूर्ति करेगा। तीसरा अनुबंध गारंटीकर्ता तथा लेनदार के बीच होता है जिसके अन्तर्गत मूल ऋणी द्वारा चूक किए जाने पर गारंटीकर्ता स्वयं मूल ऋणी का ऋण चुकाने का वचन देता है।

गारंटी के वैध अनुबंध के लिए यह आवश्यक है कि गारंटी दिए जाते समय कोई गारंटी विद्यमान होना चाहिए या वचन मौजूद होना चाहिए जिसके पालन के लिए गारंटी दी जा रही है। यदि उस समय कोई ऋण या वचन विद्यमान नहीं है तो दी गई गारंटी वैध नहीं मानी जाएगी। वास्तव में, गारंटी के अनुबंध में हम यह बात मानकर चलते हैं कि वहाँ पहले से ही कानून द्वारा प्रवर्तनीय कोई दायित्व विद्यमान है। उदाहरणार्थ, C द्वारा देय कालातीत (time barred) ऋण के लिए, A, B को गारंटी देता है। यह गारंटी का वैध अनुबंध नहीं है क्योंकि B तथा C के बीच का मुख्य दायित्व कानून द्वारा प्रवर्तनीय नहीं है। यदि A रकम का भुगतान कर देता है तब भी वह C से रकम वसूल नहीं कर सकेगा।

गारंटी के अनुबंध का एक दिलचस्प पहलू यह है कि यद्यपि यह चरम विश्वास (uberriamae fidei) का अनुबंध नहीं है, और इसलिए अनुबंध करने से पहले मूल ऋणी या लेनदार को सभी आवश्यक तथ्य गारंटीकर्ता के समक्ष प्रकट करने आवश्यक नहीं है, तथापि ऐसे तथ्य जो गारंटीकर्ता के निर्णय को प्रभावित कर सकते हैं, वे ठीक-ठीक उसे बता देने चाहिए। अधिनियम की धारा 142 में प्रावधान किया गया है कि "**ऐसी गारंटी जो लेनदार द्वारा स्वयं या उसकी जानकारी और सहमति से लेनदेन के महत्वपूर्ण तथ्य के सम्बन्ध में किए गये मिथ्या वर्णन द्वारा प्राप्त की जाती है, वह अविधिमान्य (invalid) होती है।**"

आपको यह भी स्मरण रखना चाहिए कि न केवल मिथ्या वर्णन से गारंटी प्राप्त नहीं करनी चाहिए बल्कि यह भी आवश्यक है कि कुछ तथ्यों को छुपा कर गारंटी प्राप्त नहीं करनी चाहिए। धारा 143 के अनुसार "**महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में मौन रखकर लेनदार जो भी गारंटी प्राप्त करता है वह अविधिमान्य होती है।**" उदाहरणार्थ, A रकम वसूल करने के लिए B को क्लर्क नियुक्त करता है। B, वसूल हुए कुछ धन का ठीक हिसाब नहीं दे पाता। इसके परिणामस्वरूप A ने उससे (B) इस सम्बन्ध में गारंटी मांगी कि वह ठीक हिसाब दिया करेगा। C, B के ठीक हिसाब देने के लिए A को गारंटी देता है। A, C को B के पिछले आचरण के बारे में कुछ भी नहीं बताता। बाद में B फिर हिसाब देने में चूक करता है। यहाँ C की गारंटी अविधिमान्य है क्योंकि A ने महत्वपूर्ण तथ्य छुपाकर गारंटी प्राप्त की थी।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर, गारंटी के अनुबंध के आवश्यक लक्षणों को संक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णित किया जा सकता है:

i) ऋण विद्यमान होना चाहिए, जिसे चुकाने के लिए गारंटीकर्ता के अतिरिक्त कोई अन्य व्यक्ति मूल रूप से उत्तरदायी हो।

ii) प्रतिफल होना चाहिए, परन्तु गारंटीकर्ता को लाभ मिलना आवश्यक नहीं है।

iii) वैध अनुबंध के सभी आवश्यक लक्षण विद्यमान होने चाहिए।

iv) लेनदार एवं गारंटीकर्ता अनुबंध करने के योग्य होने चाहिए अर्थात् मूल ऋणी को अनुबंध करने के योग्य होना आवश्यक नहीं है।

v) गारंटीकर्ता का दायित्व, मूल ऋणी द्वारा चूक किए जाने पर निर्भर करता है।

vi) गारंटी मिथ्यावर्णन करके प्राप्त नहीं की जानी चाहिए।

vii) महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपा कर गारंटी प्राप्त नहीं करनी चाहिए।

9.6 क्षतिपूर्ति अनुबंध एवं गारंटी अनुबंध के बीच अन्तर

क्षतिपूर्ति अनुबंध तथा गारंटी अनुबंध के बीच निम्नलिखित मुख्य अन्तर हैं:

i) क्षतिपूर्ति अनुबंध में केवल दो पक्षकार —क्षतिपूरक तथा क्षतिपूर्तिधारी होते हैं, जबकि गारंटी के अनुबन्ध में तीन पक्षकार —लेनदार, मूल ऋणी तथा गारंटीकर्ता, होते हैं।

ii) क्षतिपूर्ति के अनुबंध में केवल एक ही अनुबंध होता है, जब कि गारंटी के अनुबंध में तीन अनुबंध होते हैं।

iii) क्षतिपूर्ति के अनुबंध में क्षतिपूरक, क्षतिपूर्तिधारी को अपने स्वयं के आचरण या किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से होने वाली हानि से बचाने का वचन देता है, जबकि गारंटी के अनुबंध में मूल ऋणी द्वारा ऋण की अदायगी न किए जाने पर, गारंटीकर्ता स्वयं ऋण का भुगतान करने का वचन देता है।

iv) क्षतिपूर्ति के अनुबंध में क्षतिपूरक का दायित्व प्राथमिक (primary) एवं स्वतन्त्र होता है, जबकि गारंटी के अनुबंध में गारंटीकर्ता का दायित्व गौण (secondary) होता है अर्थात् मूल ऋणी द्वारा चूक करने पर ही यह उत्पन्न होता है, प्राथमिक दायित्व मूल ऋणी का होता है।

v) क्षतिपूर्ति के अनुबंध में क्षतिपूरक का दायित्व किसी सम्भाव्य घटना के घटित होने पर ही उत्पन्न होता है, जबकि गारंटी के अनुबंध में गारंटीकर्ता किसी विद्यमान ऋण की अदायगी या कर्त्तव्य के पालन की गारंटी देता है।

vi) क्षतिपूर्ति के अनुबंध में क्षतिपूरक, देनदार या अन्य पक्षकार के किसी अनुरोध के बिना स्वतन्त्र रूप से क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है जबकि गारंटी के अनुबंध में गारंटीकर्ता, देनदार के अनुरोध पर गारंटी देता है।

vii) गारंटी के अनुबंध में जब मूल ऋणी अदायगी करने में त्रुटि करता है और गारंटीकर्त्ता ऋण की राशि अदा कर देता है तो गारंटीकर्ता स्वयं अपने नाम से मूल ऋणी के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है, जबकि क्षतिपूर्ति के अनुबंध में क्षतिपूरक स्वयं अपने नाम से तीसरे पक्षकार के विरुद्ध तब तक कोई मुकदमा दायर नहीं कर सकता जब तक कि उसके पक्ष में समनुदेशन (assignment) न किया जाए। यदि इस प्रकार से समनुदेशन नहीं किया जाता तब क्षतिपूरक तीसरे पक्षकारों के विरुद्ध केवल क्षतिपूर्तिधारी के नाम से ही मुकदमा कर सकता है।

9.7 गारंटीकर्ता के दायित्व की सीमा (Extent of Surety's Liability)

किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, गारंटीकर्ता का दायित्व मूल ऋणी के दायित्व के साथ सह-विस्तृत (co-extensive) होता है। इससे आशय है कि गारंटीकर्ता का दायित्व उतना ही होता है जितना कि मूल ऋणी का है। उदाहरणार्थ, A, B को गारंटी देता है कि C नामक एक सकारी (acceptor) द्वारा एक बिल (bill of exchange) का भुगतान हो जाएगा। देय तिथि पर C बिल को स्वीकार नहीं करता। A का दायित्व बिल की राशि तक ही सीमित नहीं है बल्कि वह ब्याज एवं अन्य खर्चों के लिए भी उत्तरदायी होता है।

आपने पढ़ा कि गारंटीकर्ता का दायित्व मूल ऋणी के दायित्व के बराबर होता है। परन्तु यदि गारंटी का अनुबंध करते समय गारंटीकर्ता ने एक नियत राशि के लिए गारंटी दी है, तो उस दशा में गारंटीकर्ता का दायित्व कभी भी उस नियत राशि से अधिक नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए A, 5,000 रुपये B को ऋण देता है तथा C केवल 3,000 रुपये के लिए गारंटी देता है। यदि B भुगतान करने में चूक करता है तब C का दायित्व केवल 3,000 रुपये ही होगा।

यह सत्य है कि गारंटीकर्ता का दायित्व मूल ऋणी के दायित्व के साथ सह-विस्तृत होता है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि यदि किसी कारण से मूल ऋणी को उत्तरदायी नहीं ठहराया

जा सकता तो गारंटीकर्ता भी उत्तरदायी नहीं होगा। इसका कारण है कि गारंटीकर्ता और लेनदार के बीच हुआ अनुबंध अपने आप में स्वतन्त्र अनुबंध है, यह किसी अनुबंध का समपार्श्विक (collateral) नहीं है। उदाहरण के लिये जब मूल ऋणी अवयस्क है तब गारंटीकर्ता उत्तरदायी होता है। यहीं नहीं, बल्कि यदि किसी अधिनियम के द्वारा मूल ऋणी के दायित्व को कम कर दिया जाता है या बिल्कुल समाप्त कर दिया जाता है, तब भी गारंटीकर्ता का दायित्व बना रहता है। यदि लेनदार, मूल ऋणी के विरुद्ध मुकदमा दायर करने में चूक करता है और ऋण कालातीत हो जाता है, तब भी गारंटीकर्ता उत्तरदायी बना रहता है।

यद्यपि लेनदार को भुगतान करने या वचन पालन करने का प्राथमिक दायित्व मूल ऋणी का होता है, परन्तु किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, जैसे ही मूल ऋणी चूक करता है वैसे ही तुरन्त गारंटीकर्ता का दायित्व उत्पन्न हो जाता है। गारंटीकर्ता चूक किए जाने पर लेनदार से इसके बारे में नोटिस की मांग नहीं कर सकता। गारंटीकर्ता, लेनदार से यह भी नहीं कह सकता कि वह (लेनदार) उसके (गारंटीकर्ता) विरुद्ध कार्यवाही करने से पहले देनदार के विरुद्ध समस्त उपलब्ध उपचार अपना ले। इस प्रकार लेनदार इसके लिए बाध्य नहीं है कि वह गारंटीकर्ता के विरुद्ध दावा करने से पहले मूल-ऋणी के विरुद्ध दावा दायर करे अर्थात् लेनदार सीधे ही गारंटीकर्ता के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है।

यदि अनुबंध में गारंटीकर्ता को उत्तरदायी बनाने के लिए किसी शर्त को पहले पूरा किया जाना आवश्यक हो, तो गारंटीकर्ता को तभी उत्तरदायी ठहराया जा सकता है जब वह शर्त पूरी कर दी जाती है। इस बारे में धारा 144 में प्रावधान किया गया है। इसके अनुसार जब कोई व्यक्ति इस शर्त पर गारंटी देता है कि लेनदार गारंटी के अन्तर्गत तब तक कोई ऋण नहीं देगा जब तक कि कोई दूसरा व्यक्ति सह-गारंटीकर्ता न बन जाए, तब गारंटी उस समय तक वैध नहीं होती जब तक कि कोई दूसरा व्यक्ति सह-गारंटीकर्ता नहीं बनता। उदाहरण के लिए, आपके मित्र A को बैंक से 10,000 रुपये का ऋण चाहिए। आप तथा आपके दो मित्र C और D ऋण के भुगतान की गारंटी देने के लिए सहमत होते हैं। C सम्बन्धित कागज़ातों पर हस्ताक्षर नहीं करता। आप और आपके मित्र D भी इस गारंटी के लिए उत्तरदायी नहीं होंगे क्योंकि आपकी गारंटी के लिए यह शर्त थी कि ऋण के भुगतान की गारंटी तीनों द्वारा दी जाएगी और जब C ने हस्ताक्षर नहीं किए तो आप और आपके मित्र D भी उत्तरदायी नहीं होंगे।

चलत गारंटी (continuing guarantee) की स्थिति में, गारंटीकर्ता उन सभी लेन-देनों के लिए उत्तरदायी होता है जो गारंटी को समाप्त करने से पहले किए गये हैं। इस विषय में आप इसी इकाई में आगे विस्तार से पढ़ेंगे।

9.8 गारंटी के प्रकार (Kinds of Guarantee)

गारंटी अनुबंधों को दो वर्गों में रखा जा सकता है — विशिष्ट (specific) गारंटी तथा चलत (continuing) गारंटी। जब गारंटी किसी एक ऋण के लिए या किसी विशिष्ट संव्यवहार (transaction) के लिए दी जाती है, जो उस ऋण के अदा किए जाने पर या वचन का पालन किए जाने पर समाप्त हो जाती है, तो ऐसी गारंटी को विशिष्ट या साधारण गारंटी कहते हैं। परन्तु जब गारंटी एक ही संव्यवहार के लिए नहीं बल्कि संव्यवहारों की शृंखला के लिए दी जाती है तो इसे चलत या चालू गारंटी कहते हैं (धारा 129)। इस स्थिति में जब तक वह कार्य पूरा नहीं होता या जब तक गारंटीकर्ता अपनी गारंटी का खंडन नहीं करता, तब तक गारंटीकर्ता का उत्तरदायित्व बना रहता है। ईमानदारी (fidelity) के लिए दी गई गारंटी चलत गारंटी है क्योंकि यह एक अवधि तक चलती है।

उदाहरण

क) S, एक पुस्तक विक्रेता पुस्तकों का एक सेट P को इस अनुबंध के अन्तर्गत देता है कि यदि P पुस्तकों का मूल्य नहीं चुकाता तो उसका मित्र K मूल्य चुका देगा। यह विशिष्ट गारंटी का अनुबंध है। जैसे ही S को पुस्तकों का मूल्य चुका दिया जाता है वैसे ही K का दायित्व समाप्त हो जाता है।

ख) S नामक मकानों का एक धनी स्वामी, M की सिफारिश पर P को अपनी सम्पत्ति का मैनेजर नियुक्त करता है। P का यह कर्तव्य है कि वह S के किराएदारों से हर माह किराया वसूल करके उसे (S को) हर माह 15 तारीख तक भेज दे। M इस व्यवस्था की गारंटी देता है तथा P द्वारा चूक किए जाने पर रकम चुकाने का वचन देता है। यह चलत गारंटी का अनुबंध है।

चलत गारंटी को ठीक से समझने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:

i) चलत गारंटी का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है कि यह पृथक्करणीय (separable) और सुभिन्न (distinct) संव्यवहारों की शृंखला पर लागू होती है। अतः जब सम्पूर्ण प्रतिफल के लिए या सम्पूर्ण संव्यवहार के लिए गारंटी दी जाती है तो इसे चलत गारंटी नहीं कह सकते। उदाहरण के लिये K अपना मकान निश्चित किराए पर 10 वर्ष के लिए पट्टे पर S को देता है। P ने गारंटी दी कि S अपने दायित्वों का पालन करता रहेगा। सात वर्ष बाद S ने पट्टे का किराया देना बन्द कर दिया। किराया की अदायगी के लिए K ने उस पर मुकदमा दायर किया। P ने सूचना दे कर शेष तीन वर्षों के लिए अपनी गारंटी का खंडन कर दिया। P गारंटी का खंडन नहीं कर सकता क्योंकि 10 वर्ष का पट्टा एक अविभाज्य प्रतिफल है अर्थात् यह एक संव्यवहार है और इसे पृथक्करणीय संव्यवहारों की शृंखला नहीं माना जा सकता। इसलिए इस अनुबंध को चलत गारंटी का अनुबंध नहीं कहा जा सकता।

ii) यह निश्चित करने के लिए कि कोई गारंटी चलत गारंटी है या विशिष्ट गारंटी, आपको पक्षकारों के इरादे को देखना चाहिए जो कि अनुबंध की शर्तों एवं परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिये, A, B द्वारा C को दिए जाने वाले आटे के पांच बोरों की कीमत का भुगतान एक माह के भीतर किए जाने के सम्बन्ध में गारंटी देता है। B आटे के पांच बोरे C को दे देता है और C उनकी कीमत अदा कर देता है। B, तत्पश्चात् C को आटे के चार बोरे और सप्लाई करता है जिनकी कीमत का भुगतान C नहीं करता। यहाँ A को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि अनुबंध की शर्तों से यह स्पष्ट है कि A का इरादा केवल पहले पांच आटे के बोरों की कीमत का भुगतान की गारंटी देने तक ही था।

iii) चलत गारंटी, किसी सम्पूर्ण ऋण के किसी भाग के लिए या सम्पूर्ण ऋण के लिए एक सीमा तक दी जा सकती है। आईए, इसे एक उदाहरण से स्पष्ट करते हैं। P द्वारा समय-समय पर C से लिए जाने वाले ऋणों के लिए S ने गारंटी दी। P, C का 10,000 रुपये का ऋणी है। S निम्नलिखित दो तरह से गारंटी दे सकता है:

क) मैं P द्वारा C को देय ऋण के भुगतान की 5,000 रुपये तक के लिए गारंटी देता हूँ। इस स्थिति में सम्पूर्ण ऋण के एक भाग के लिए गारंटी दी गई है।

ख) मैं P द्वारा C को देय किसी भी ऋण की 5,000 रुपये तक गारंटी देता हूँ। यह सम्पूर्ण ऋण के भुगतान के लिए एक निश्चित राशि तक गारंटी है।

उपर्युक्त दोनों परिस्थितियों को पढ़कर इनमें अन्तर के बारे में आप हैरान हो रहे होंगे, क्योंकि दोनों ही परिस्थितियों में S केवल 5,000 रुपयों के लिए ही उत्तरदायी प्रतीत होता है। इन दोनों का अन्तर तब स्पष्ट होता है जब मूल ऋणी P दिवालिया हो जाता है। मान लीजिए P दिवालिया घोषित हो जाता है और उसकी सम्पत्ति से रुपये में चालीस पैसे ही केवल वसूल होते हैं।

पहली स्थिति में जबकि सम्पूर्ण ऋण के एक भाग के लिए गारंटी दी गई है, C, S से गारंटी की गई 5,000 रुपये की राशि वसूल कर सकता है तथा P की सम्पत्ति से 2,000 रुपये (शेष 5,000 रुपयों का चालीस प्रतिशत) वसूल कर सकता है। इस प्रकार C को कुल 7,000 रुपये प्राप्त होंगे। C को 5,000 रुपये का भुगतान करने के बाद, S, P की सम्पत्ति से 2,000 रुपये प्राप्त कर सकेगा। परन्तु यदि एक निश्चित राशि तक सम्पूर्ण ऋण के लिए गारंटी दी है, तो C, S से 5,000 रुपये (गारंटी की गई राशि तक) वसूल करेगा तथा P से 4,000 रुपये (सम्पूर्ण ऋण 10,000 रुपये का 40 प्रतिशत) वसूल करेगा। जब तक C के सम्पूर्ण ऋण 10,000 रु. को चुका नहीं दिया जाता तब तक S, P की सम्पत्ति में कुछ भी वसूल न कर सकेगा।

.9 चलत गारंटी का खंडन (Revocation of Continuing Guarantee)

लत गारंटी का खंडन निम्नलिखित में से किसी भी तरीके से किया जा सकता है:

खंडन की सूचना द्वारा (By notice of revocation) : गारंटीकर्ता, भावी संव्यवहारों के लिए, लेनदार को किसी भी समय सूचना दे कर, गारंटी का खंडन कर सकता है। इस स्थिति में गारंटीकर्ता उन संव्यवहारों के लिए उत्तरदायी होता है जो सूचना दिए जाने से पहले किए जा चुके थे। उदाहरणार्थ, A, C द्वारा B से अगले तीन माह के दौरान खरीदे जाने वाले माल के मूल्य का भुगतान किए जाने की 10,000 रुपये तक की गारंटी देता है। B 6,000 रुपये मूल्य का माल C को दे देता है। A गारंटी के खंडन की सूचना देता है, इस दशा में A 6,000 रुपये के लिए उत्तरदायी है। यदि गारंटी के खंडन की सूचना दिए जाने के बाद भी कुछ माल C को बेचा जाता है, तो उसके लिए A उत्तरदायी नहीं होगा।

गारंटीकर्ता की मृत्यु के द्वारा (By death of surety) : जब तक कोई विपरीत अनुबंध न हो, गारंटीकर्ता की मृत्यु हो जाने पर मृत्यु के बाद के संव्यवहारों के लिए चलत गारंटी खंडित हो जाती है।

किसी भी ऐसे तरीके से जिससे गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त होता है (In the same manner in which the surety is discharged) : जिन परिस्थितियों में गारंटीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त होता है, उन सभी दशाओं में चलत गारंटी भी खंडित हो जाती है, ये परिस्थितियां इस प्रकार हैं:

i) नवीकरण (novation) (धारा 62)
ii) अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन किए जाने पर (धारा 133)
iii) मूल ऋणी को दायित्व से मुक्त किए जाने पर (धारा 134)
iv) जब लेनदार, मूल ऋणी से कोई समझौता कर लेता है (धारा 135)
v) लेनदार द्वारा कोई ऐसा कार्य या भूल किए जाने पर जिससे गारंटीकर्ता को प्राप्त अन्तिम उपचार में बाधा आए (धारा 139)
vi) प्रतिभूति के खो जाने पर (धारा 141)।

र्युक्त का वर्णन इसी इकाई के 9.11 में गारंटीकर्ता के दायित्व की समाप्ति शीर्षक के तर्गत किया गया है।

10 गारंटीकर्ता के अधिकार

ऋणी के दायित्व को पूरा करने या ऋण का पालन करने या भुगतान करने के बाद, टीकर्ता को अनेक अधिकार प्राप्त हो जाते हैं। इन अधिकारों का तीन शीर्षकों के अन्तर्गत नयन किया जा सकता है: (i) मूल ऋणी के विरुद्ध अधिकार, (ii) लेनदार के विरुद्ध कार, तथा (iii) सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध अधिकार। इन अधिकारों को चित्र 9.1 में या गया है तथा इनके संबंध में आगे विस्तार से वर्णन किया गया है।

चित्र 9.1

गारंटीकर्ता के अधिकार

- मूल ऋणी के विरुद्ध
  - ासन का धिकार
  - क्षतिपूर्ति का अधिकार
- लेनदार के विरुद्ध
  - प्रतिभूति प्राप्त करने का अधिकार
  - मुजराई का अधिकार
- सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध
  - अंशदान का अधिकार

9.10.1 मूल ऋणी के विरुद्ध अधिकार (Rights Against Principal Debtor)

गारंटीकर्ता को मूल ऋणी के विरुद्ध निम्नलिखित दो अधिकार प्राप्त होते हैं:

1 **प्रत्यासन का अधिकार (Right of subrogation) :** गारंटीकर्ता को वे सब अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो लेनदार को मूल ऋणी के विरुद्ध प्राप्त थे। धारा 140 में प्रावधान किया गया है, "**जब गारंटी किया हुआ ऋण देय हो जाता है या जब मूल ऋणी गारंटी किए गये वचन का पालन करने में चूक करता है तो भुगतान करने पर या वचन का पूर्णत: पालन कर दिये जाने के बाद, गारंटीकर्ता को वे सभी अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो लेनदार को मूल ऋणी के विरुद्ध प्राप्त थे।**" गारंटीकर्ता के इस अधिकार को 'प्रत्यासन' का अधिकार कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि गारंटी किए गये ऋण का भुगतान करने के बाद या गारंटी किए हुए वचन का पालन करने के बाद, गारंटीकर्ता, लेनदार का स्थान ले लेता है।

2 **क्षतिपूर्ति का अधिकार (Right of indemnity) :** धारा 145 के द्वारा गारंटीकर्ता को एक अन्य अधिकार भी प्रदान किया गया है, इसे क्षतिपूर्ति का अधिकार कहते हैं। गारंटी के प्रत्येक अनुबंध में, मूल ऋणी द्वारा गारंटीकर्ता की क्षतिपूर्ति करने का निहित वचन होता है। इसके अनुसार गारंटीकर्ता, मूल ऋणी से ऐसी सब धनराशि वसूल करने का हकदार होता है जो उसने गारंटी अनुबंध के अधीन वैध रूप से भुगतान की है। गारंटीकर्ता उस धनराशि को वसूल करने का हकदार नहीं है जो उसने गलत या अनुचित रूप से भुगतान की है।

उदाहरण

i) B, C का ऋणी है तथा A ने इस ऋण की गारंटी दे रखी है। C, A से ऋण के भुगतान की मांग करता है और A के इंकार करने पर उसकी वसूली के लिए A के विरुद्ध मुकदमा दायर कर देता है। A प्रतिवाद के लिए पर्याप्त आधार पर इस मुकदमे का प्रतिवाद करता है, परन्तु उसे मुकदमे के खर्चे सहित ऋण की राशि का भुगतान करना पड़ता है। वह B से ऋण की मूल धनराशि तथा मुकदमे के खर्चे वसूल कर सकता है।

ii) C द्वारा B को दिए जाने वाले चावल के सम्बन्ध में, A, C को 2,000 रुपये तक के भुगतान की गारंटी देता है। C, B को 2,000 रुपये से कम मूल्य का चावल देता है परन्तु वह A से 2,000 रुपये प्राप्त कर लेता है। A, B से, उसे वास्तव में दिए गये चावल की कीमत से अधिक राशि वसूल नहीं कर सकता।

9.10.2 लेनदार के विरुद्ध अधिकार (Rights Against Creditor)

1 **प्रतिभूतियाँ प्राप्त करने का अधिकार (Right to securities) :** जब गारंटीकर्ता, मूल ऋणी द्वारा देय ऋण का भुगतान लेनदार को कर देता है, तब वह उन सभी प्रतिभूतियों की मांग करने का हकदार हो जाता है, जो मूल ऋणी ने लेनदार को दी थी। गारंटीकर्ता उन सभी प्रतिभूतियों का हकदार होता है जो गारंटी का अनुबंध करने से पहले या बाद में लेनदार द्वारा प्राप्त की जाती हैं (धारा 141)। गारंटीकर्ता को इन प्रतिभूतियों की जानकारी है या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। उदाहरणार्थ, C द्वारा गारंटी दिए जाने पर A, B को 5,000 रुपये का ऋण देता है। ऋण की प्रतिभूति के रूप में, B के मकान के पट्टे के कागज समनुदेशन के द्वारा A को सौंपे जाते हैं। B ऋण का भुगतान करने में चूक करता है और ऋण की राशि C को अदा करनी पड़ती है। B के ऋण का भुगतान करने के बाद C को यह अधिकार है कि वह मकान के समनुदेशन विलेख (assignment deed) अपने नाम में प्राप्त करे।

2 **मुजराई करने का अधिकार (Right to set-off) :** जब लेनदार मूल ऋणी के ऋण के लिए, गारंटीकर्ता पर मुकदमा करता है तो गारंटीकर्ता को लेनदार के विरुद्ध ऐसा कोई प्रतिदावा (counter claim) या मुजराई मांगने का भी अधिकार है जो मूल ऋणी, लेनदार के विरुद्ध करने का अधिकारी होता।

9.10.3 सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध अधिकार (Rights Against co-sureties)

जब मूल ऋणी के किसी ऋण की अदायगी के लिए एक से अधिक व्यक्ति गारंटी देते हैं तो उन्हें सह-गारंटीकर्ता कहते हैं। सह-गारंटीकर्ता, गारंटी किए हुए ऋण के भुगतान के लिए

अपने मध्य हुए करार के अनुसार अंशदान करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। धारा 138 में बताया गया है कि **सह-गारंटीकर्ताओं की दशा में, यदि लेनदार किसी गारंटीकर्ता को उसके दायित्व से मुक्त कर देता है तो इस मुक्ति से न तो अन्य गारंटीकर्ता अपने-अपने दायित्व से मुक्त होते हैं और न ही इस प्रकार से मुक्त किया गया गारंटीकर्ता अन्य गारंटीकर्ताओं के प्रति अपने उत्तरदायित्व से मुक्त होता है।** अतः, जब सह-गारंटीकर्ता किसी ऋण के भुगतान या वचन के पालन की गारंटी देते हैं और मूल ऋणी अपने दायित्व का पालन करने में चूक करता है, तथा लेनदार, किसी एक या अन्य सह-गारंटीकर्ताओं से सम्पूर्ण अनुबंध का पालन करवा लेता है तो अनुबंध को करने वाले सह-गारंटीकर्ता या सह-गारंटीकर्ताओं को शेष सह-गारंटीकर्ताओं से अंशदान प्राप्त करने का अधिकार होता है। धारा 146 के अनुसार, **किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में सह-गारंटीकर्ता बराबर-बराबर अंशदान करने के लिए उत्तरदायी होते हैं।** यह सिद्धान्त तब भी लागू होता है जब सह-गारंटीकर्ताओं का दायित्व संयुक्त या पृथक् है, तथा चाहे उन्होंने उसी अनुबंध या भिन्न-भिन्न अनुबंधों के अन्तर्गत गारंटी दी है तथा चाहे उन्हें एक-दूसरे के सह-गारंटीकर्ता होने की जानकारी है या नहीं। उदाहरण, A, B, C और D 2,000 रुपये के ऐसे ऋण के गारंटीकर्ता हैं जो Z ने R को दिया है। R ऋण का भुगतान करने में चूक करता है। A, B, C और D प्रत्येक 500 रुपये का अंशदान करने के लिए उत्तरदायी हैं।

धारा 147 के अनुसार जब **सह-गारंटीकर्ताओं ने भिन्न-भिन्न राशियों के लिए गारंटी दी है तब प्रत्येक गारंटीकर्ता अपनी-अपनी गारंटी की सीमा तक बराबर-बराबर अंशदान करेगा।** इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि गारंटीकर्ता संयुक्त रूप से उत्तरदायी है या पृथक्-पृथक्, एक अनुबंध के अन्तर्गत हैं या अलग-अलग अनुबंधों के तथा चाहे उन्हें एक-दूसरे की जानकारी है या नहीं। उदाहरण, A, B और C, D के लिए गारंटीकर्त्ता के रूप में भिन्न-भिन्न राशियों के लिए अलग-अलग बाण्ड लिखते हैं, जिनके अनुसार A 10,000 रुपये, B 20,000 रुपये तथा C 40,000 रुपयें तक की राशि की गारंटी देता है। D 30,000 रुपये चुकाने में चूक करता है। A, B और C प्रत्येक 10,000 रुपये चुकाने के लिए उत्तरदायी हैं। मान लीजिए कि ऐसी बकाया ऋण की राशि 40,000 रुपये है, तब A 10,000 रुपये (उस गारंटी की अधिकतम सीमा), तथा B और C प्रत्येक 15,000 रुपये चुकाने के लिए उत्तरदायी हैं।

बोध प्रश्न ख

1. गारंटी के अनुबंध की परिभाषा कीजिए।

. . . .

. . . .

. . . .

2. चलत गारंटी क्या होती है ?

. . . .

. . . .

. . . .

3. **बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:**

i) **मौखिक गारंटी, कोई गारंटी नहीं होती।** . . . .

ii) **गारंटी के अनुबंध में गारंटीकर्ता का दायित्व प्राथमिक होता है।** . . . . .

iii) **गारंटी का अनुबंध चरम विश्वास** (uberriamae fedie) **का अनुबंध नहीं है।** . . . .

iv) **गारंटीकर्ता, लेनदार को ऋण अदा करने के बाद मूल ऋणी पर दावा नहीं कर सकता।** . . . .

v **चलत गारंटी का खंडन कभी भी नहीं किया जा सकता।** . . . .

4 रिक्त स्थान भरिए:

i) यदि कोई ऋण नहीं है तो गारंटी का वैध अनुबंध ············ हो सकता।

ii) मूल ऋणी के लिए किया गया कोई कार्य या उसके लाभ के लिए दिया गया वचन, गारंटीकर्ता द्वारा गारंटी देने के लिए पर्याप्त ············ होता है।

iii) मिथ्यावर्णन करके प्राप्त की गई गारंटी ············ होती है।

iv) जब तक अनुबंध में इसके विपरीत व्यवस्था न हो, गारंटीकर्ता का दायित्व ············ के दायित्व के साथ सह-विस्तृत होता है।

5 निम्नलिखित समस्याओं का कारण बताकर हल कीजिए:

i) A, B को माल बेचता है और उसकी सुपुर्दगी दे देता है। बाद में, C, A से प्रार्थना करता है कि वह उक्त रकम के लिए B पर एक वर्ष तक मुकदमा न करे और यह वचन देता है कि B द्वारा ऋण का भुगतान न किए जाने पर वह (C) स्वयं ऋण का भुगतान कर देगा। तदनुसार A, B पर एक वर्ष तक मुकदमा न करने के लिए सहमत हो जाता है। क्या C के वचन के लिए पर्याप्त प्रतिफल है ?

ii) A, B को माल बेचता है और उसकी सुपुर्दगी दे देता है। बाद में C बिना किसी प्रतिफल के, B द्वारा चूक किए जाने पर राशि चुकाने का वचन देता है। बताइए कि क्या यह करार वैध है ?

iii)) A, C द्वारा स्वीकार किए गये विनिमय बिल के भुगतान के सम्बन्ध में B को गारंटी देता है। C उक्त बिल का अनादरण (dishonour) कर देता है। A की स्थिति बताइए।

9.11 गारंटीकर्ता की अपने दायित्व से मुक्ति (Discharge of Surety from Liability)

निम्नलिखित किसी भी परिस्थिति में गारंटीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है:

i) गारंटी अनुबंध के खंडन द्वारा,
ii) लेनदार के आचरण द्वारा,
iii) अनुबंध के अविधिमान्य होने पर।

गारंटीकर्ता के दायित्व की मुक्ति के विभिन्न तरीकों के लिए चित्र 9.2 देखिए।

चित्र 9.2

गारंटीकर्ता की दायित्व से मुक्ति

- दायित्व से मुक्ति
  - खंडन द्वारा
    - गारंटीकर्ता द्वारा सूचना
    - गारंटीकर्ता की मृत्यु
    - नवीकरण
  - लेनदार के आचरण द्वारा
    - अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन किए जाने से
    - मूल ऋणी का दायित्व से छुटकारा या मुक्ति होने पर
    - मूल ऋणी तथा लेनदार के बीच समझौता होने पर
    - लेनदार का कोई कार्य या भूल जिससे गारंटीकर्ता के अन्तिम उपचार को क्षति होती है
    - प्रतिभूति खो जाने पर
  - अनुबंध के अविधिमान्य होने पर
    - मिथ्यावर्णन द्वारा गारंटी प्राप्त करने पर
    - छिपाकर प्राप्त की गई गारंटी
    - सह-गारंटीकर्ता के गारंटी में शामिल न होने पर

9.11.1 गारंटी अनुबंध के खंडन द्वारा

1) **गारंटीकर्त्ता द्वारा सूचना (Notice by surety) :** आप पढ़ चुके हैं कि गारंटी विशिष्ट या चलत हो सकती है। विशिष्ट गारंटी की स्थिति में यदि ऋण दिया जा चुका है तो इसका खंडन नहीं किया जा सकता। जैसे A, C द्वारा गारंटी देने पर B को कुछ रकम उधार देता है तो इस दशा में C गारंटी का खंडन नहीं कर सकता। परन्तु यदि अभी A ने B को धनराशि दी नहीं है, तब यद्यपि C द्वारा गारंटी का अनुबंध किया जा चुका है तो भी C लेनदार को सूचना दे कर गारंटी का खंडन कर सकता है।

   जब गारंटी चलत है जो संव्यवहारों की श्रृंखला के लिए है, तो लेनदार को सूचना दे कर भावी संव्यवहारों के लिए गारंटी का खंडन किया जा सकता है। अधिनियम के अनुसार चलत गारंटी से तात्पर्य विभिन्न और पृथक्करणीय संव्यवहारों की श्रृंखला से है, जिसे सूचना दे कर खंडित किया जा सकता है।

ii) **गारंटीकर्त्ता की मृत्यु (Death of surety) :** किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, गारंटीकर्ता की मृत्यु होने पर, चलत गारंटी भविष्य के संव्यवहारों के लिए खंडित हो जाती है। परन्तु, गारंटीकर्ता के जीवनकाल के दौरान किए गये संव्यवहारों के लिए मृत गारंटीकर्ता की जायदाद उत्तरदायी बनी रहती है। गारंटीकर्ता की मृत्यु के बाद किए गये संव्यवहारों के लिए मृत गारंटीकर्ता की जायदाद उत्तरदायी नहीं होगी, चाहे लेनदार को गारंटीकर्ता की मृत्यु की सूचना हो या नहीं।

iii) **नवीकरण (Novation) :** जब उन्हीं पक्षकारों के मध्य या अन्य पक्षकारों के साथ नया अनुबंध किया जाता है जिसके लिए पुराने अनुबन्ध की समाप्ति प्रतिफल है, तब गारंटी का अनुबंध समाप्त हो जाता है। गारंटी का मूल अनुबंध समाप्त हो जाता है और इस प्रकार पुराने अनुबंध के लिए दी गई गारंटी के सम्बन्ध में गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त हो जाता है।

9.11.2 लेनदार के आचरण द्वारा

i) **अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन (Variance in terms of the contract) :** लेनदार के किसी भी ऐसे आचरण से जिसके कारण गारंटी के अनुबंध की शर्तों में महत्वपूर्ण परिवर्तन होता है, गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त हो जाता है। उदाहरणार्थ, C, B को 1 जनवरी को 2,000 रुपये उधार देने का अनुबंध करता है। A ऋण के भुगतान की गारंटी देता है। C, B को 2,000 रुपये 30 दिसम्बर को दे देता है। A अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है क्योंकि अनुबंध में परिवर्तन कर दिया गया है। गारंटीकर्ता केवल उसी बात के लिए उत्तरदायी होता है जिसके लिए उसने गारंटी दी है। गारंटीकर्ता की सहमति के बिना लेनदार और मूल ऋणी के मध्य हुए अनुबंध की शर्तों में यदि किसी भी प्रकार का परिवर्तन किया जाता है तो ऐसे परिवर्तन के बाद के संव्यवहारों के लिए गारंटीकर्ता उत्तरदायी नहीं होता (धारा 133)। उदाहरणार्थ, A, C के बैंक में, B के मैनेजर के रूप में काम करने के सम्बन्ध में C को गारंटी देता है। बाद में B और C, A की सहमति के बिना यह अनुबंध कर लेते हैं कि B का वेतन बढ़ाया जाएगा और बैंक को ओवरड्राफ्टों के कारण जो हानि होगी, B उसके चौथाई भाग के लिए उत्तरदायी होगा। B एक ग्राहक को ओवरड्राफ्ट की अनुमति देता है और बैंक को कुछ धनराशि की हानि उठानी पड़ती है। यहाँ A की सहमति के बिना अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन किए जाने के कारण A अपने दायित्व से मुक्त हो गया।

ii) **मूल ऋणी का दायित्व से छुटकारा या मुक्ति होने पर (Release or discharge of principal debtor) :** यदि लेनदार, मूल ऋणी के साथ अनुबंध करके, मूल ऋणी को दायित्व से मुक्त कर देता है तो गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त हो जाता है अथवा लेनदार के किसी ऐसे कार्य या भूल किए जाने पर जिससे मूल ऋणी अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है तब भी गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त हो जाता है (धारा 134)। उदाहरणार्थ, C द्वारा गारंटी दिए जाने पर A, B को माल सप्लाई करता है। बाद में B भुगतान करने में असमर्थ हो जाता है और वह A के साथ अनुबंध करता है कि यदि सप्लाई किए गये माल के मूल्य के लिए वह (A) तकादा करे तो इसके प्रतिफल स्वरूप वह (B) अपनी कुछ सम्पत्ति A को अन्तरित कर देगा। इस दशा में B अपने ऋण के दायित्व से मुक्त हो गया

और C भी अपनी गारंटी से मुक्त हो गया। एक और उदाहरण लेते हैं। A, B के साथ अनुबंध करता है कि वह एक निश्चित राशि के लिए निर्धारित समय के भीतर B के लिए एक मकान बनाएगा, जिसके लिए B इमारती लकड़ी प्रदान करेगा। C, A द्वारा अनुबंध का पालन करने की गारंटी देता है। B इमारती लकड़ी प्रदान नहीं करता। A अपने वचन का पालन करने से मुक्त हो गया अतः, C भी अपनी गारंटी से मुक्त हो जाता है।

परन्तु जब कानूनी प्रक्रिया के कारण मूल ऋणी दायित्व से मुक्त हो जाता है, जैसे दिवालिया होने पर, तो इससे गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। इसी तरह सह-गारंटीकर्ताओं की स्थिति में, लेनदार द्वारा किसी सह-गारंटीकर्ता को दायित्व से मुक्त होते हैं और न ही इस प्रकार मुक्त किया गया गारंटीकर्ता अन्य गारंटीकर्ताओं के प्रति अपने दायित्व से मुक्त होता है।

iii) **मूल ऋणी तथा लेनदार के बीच समझौता होने पर (Arrangement between principal debtor and creditor) :** जब गारंटीकर्ता की सहमति के बिना लेनदार मूल ऋणी के साथ ऋण के प्रशमन (composition) या निपटारे के बारे में कोई समझौता करता है या उसे ऋण चुकाने के लिए अवधि बढ़ाने या उस पर मुकदमा न चलाने का वचन देता है; तो गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त हो जाता है (धारा 135)।

परन्तु यदि मूल ऋणी को ऋण चुकाने की अवधि बढ़ाने का अनुबंध लेनदार और किसी तीसरे पक्ष के मध्य होता है, मूल ऋणी के साथ नहीं, तब गारंटीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता है (धारा 136)। उदाहरणार्थ, C, A द्वारा B के गारंटीकर्ता के रूप में लिखे और B द्वारा स्वीकार किए गये अवधि-वर्जित एक विनिमय बिल का धारक है। C, M के साथ B के भुगतान की अवधि बढ़ाने का अनुबंध करता है, इससे A का दायित्व समाप्त नहीं होगा।

इसी प्रकार, यदि लेनदार, मूल ऋणी के विरुद्ध मुकदमा नहीं चलाता या उसके विरुद्ध उपलब्ध उपचार का प्रयोग नहीं करता, तो किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, गारंटीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त नहीं होता (धारा 137)। उदाहरणार्थ, A, K का 10,000 रुपये का ऋणी है। इस ऋण की गारंटी M ने दे रखी है। यह ऋण देय हो जाता है परन्तु ऋण देय हो जाने की तारीख के छः माह बाद तक K, A के विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं करता। इससे M अपने दायित्व से मुक्त नहीं होगा।

iv) **लेनदार का कोई कार्य या भूल जिससे गारंटीकर्ता के अन्तिम उपचार को क्षति होती है (Creditor's act or omission impairing surety's eventual remedy) :** यदि लेनदार कोई ऐसा कार्य करता है जो गारंटीकर्ता के अधिकारों क प्रतिकूल हो; या कोई ऐसा कार्य नहीं करता जिसे करना गारंटीकर्ता के प्रति उसका कर्तव्य हो और ऐसे कार्य या भूल के कारण गारंटीकर्ता के मूल ऋणी के विरुद्ध उपचार प्राप्त करने के अधिकार को क्षति पहुँचती है, तो गारंटीकर्ता अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है (धारा 139)। उदाहरणार्थ B नामक जहाज का निर्माता, C के साथ निश्चित धनराशि के लिए एक जहाज़ बनाने का अनुबंध करता है। उक्त धनराशि का भुगतान निर्माण-कार्य की प्रगति के अनुसार किश्तों में किया जाएगा (अन्तिम किश्त का भुगतान जहाज़ का निर्माण-कार्य पूरा होने से पहले नहीं किया जाएगा)। A, C को गारंटी देता है कि B उक्त अनुबंध का पालन करेगा। C, A को बताए बिना, B को अन्तिम किश्त का पहले ही भुगतान कर देता है। इस भुगतान से A का दायित्व समाप्त हो गया। एक अन्य उदाहरण लेते हैं। A, M को B के पास प्रशिक्षार्थी रखवाता है तथा B को M की ईमानदारी के लिए अपनी गारंटी देता है। B अपनी ओर से यह वचन देता है कि वह महीने में कम से कम एक बार M के नकद लेन-देनों की जाँच करता रहेगा। B अपने वचन का पालन करना भूल जाता है और M गबन कर लेता है। A अपनी गारंटी के अन्तर्गत B के प्रति उत्तरदायी नहीं है।

v) **प्रतिभूति खो जाने पर (Loss of security) :** यदि लेनदार, गारंटी के अनुबंध के समय प्राप्त की गई प्रतिभूति खो देता है या गारंटीकर्ता की अनुमति के बिना उसे मूल ऋणी को लौटा देता है, तो गारंटीकर्ता प्रतिभूति के मूल्य की सीमा तक अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है (धारा 141)। उदाहरणार्थ, A, B के गारंटीकर्ता की हैसियत से, B के साथ संयुक्त रूप से C को एक बाण्ड देता है ताकि C, B को ऋण दे दे। बाद में, उसी ऋण के लिए C, B से कुछ और प्रतिभूति प्राप्त करता है। तत्पश्चात् C इस अतिरिक्त प्रतिभूति

को लौटा देता है। इस अतिरिक्त प्रतिभूति के लौटाने पर गारंटीकर्ता का दायित्व समाप्त नहीं होता है।

9.11.3 अनुबंध के अविधिमान्य (invalid) होने पर

अन्य अनुबंधों की तरह, यदि गारंटी का अनुबंध व्यर्थ या व्यर्थनीय हो जाता है तो गारंटीकर्ता के विकल्प पर इसे समाप्त किया जा सकता है। निम्नलिखित परिस्थितियों में गारंटीकर्ता का दायित्व हो सकता है.

) **मिथ्यावर्णन द्वारा गारंटी प्राप्त करने पर (Guarantee obtained by misrepresentation) :** जब लेनदार द्वारा या उसकी जानकारी और सहमति से, गारंटी के अनुबंध से सम्बन्धित किसी महत्वपूर्ण तथ्य के बारे में मिथ्यावर्णन किया जाता है, तो अनुबंध अविधिमान्य होता है (धारा 142)।

i) **तथ्यों को छिपाकर प्राप्त की गई गारंटी (Guarantee obtained by concealment) :** जब लेनदार ने अनुबंध से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों के बारे में मौन रह कर या छिपाकर गारंटी प्राप्त की है, तो वह अनुबंध अविधिमान्य होता है (धारा 143)।

ii) **सह-गारंटीकर्ता के गारंटी में शामिल न होने पर (Failure of co–surety to join a surety) :** जब गारंटी के अनुबंध में यह प्रावधान है कि लेनदार गारंटी के अधीन तब तक कोई कार्यवाही नहीं करेगा जब तक दूसरा व्यक्ति सह-गारंटीकर्ता न बन जाए, वहाँ यदि दूसरा व्यक्ति गारंटी में शामिल नहीं होता तो गारंटी अविधिमान्य होती है।

बोध प्रश्न ग

प्रत्यासन (subrogation) क्या है ?

....

....

....

अनुबंध अधिनियम की धारा 145 के अन्तर्गत गारंटीकर्ता की क्षतिपूर्ति करने के निहित वचन से आपका क्या तात्पर्य है ?

....

....

....

नवीकरण (novation) का क्या अर्थ है ?

....

....

....

बताईए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत:

i) देनदार द्वारा गारंटीकर्ता की क्षतिपूर्ति करने के निहित वचन के द्वारा गारंटीकर्ता न केवल ऐसी किसी भी राशि को मूल ऋणी से वसूल करने का हकदार हो जाता है जो उसने गारंटी के अन्तर्गत वैध रूप से भुगतान की हैं बल्कि वह भी वसूल कर सकता है जो उसने अनुचित रूप से भुगतान की हैं। ....

ii) लेनदार, अपनी इच्छानुसार, किसी भी सह-गारंटीकर्ता को उसके दायित्व से मुक्त कर सकता है। ....

iii) किसी एक सह-गारंटीकर्ता को दायित्व मुक्त कर देने पर अन्य सह-गारंटीकर्ता भी अपने-आप दायित्व मुक्त हो जाते हैं। ....

iv) मूल ऋणी और लेनदार के बीच हुए अनुबंध की शर्तों में

यदि गारंटीकर्ता की सहमति के बिना कोई परिवर्तन किया जाता है, तो ऐसे परिवर्तन के बाद हुए संव्यवहारों के लिए गारंटीकर्ता का कोई दायित्व नहीं होता।

v) लेनदार द्वारा मूल ऋणी पर परिसीमा (limitation) अवधि के भीतर मुकदमा नहीं करने से, गारंटीकर्ता दायित्व मुक्त हो जाता है।

5 निम्नलिखित समस्याओं का तर्कसहीत उत्तर दीजिए:

i) A ने P से अवक्रय (hire purchase) करार के अन्तर्गत एक मोटर कार खरीदी, जिसके लिए उसे (A) 10,000 रुपये हर माह देना था। C ने इस भुगतान की गारंटी दी। A ने किश्त चुकाने में चूक की और A और B में यह समझौता हुआ कि A 2,000 रुपये का एक चैक देगा तथा शेष बकाया रकम महीने के अन्त में चुका दी जाएगी। बताईए क्या C का दायित्व समाप्त हो गया ?

ii) X ने C की फर्म के एक नौकर की ईमानदारी की गारंटी दी। नौकरी के दौरान नौकर बेईमानी करने का दोषी पाया गया परन्तु C ने उसे नौकरी पर लगाए रखा तथा X को भी कोई सूचना नहीं दी। नौकर ने और बेईमानी के कार्य किए। C ने X से हानि वसूल करने के लिए दावा कर दिया। क्या X उत्तरदायी है ?

iii) B ने किराया वसूल करने के लिए X को एजेंट नियुक्त किया तथा उसे ईमानदारी की गारंटी देने के लिए कहा, C ने X की ईमानदारी के लिए गारंटी दी। गारंटी बाण्ड लिखे जाने के कुछ समय बाद C की मृत्यु हो गई तथा X ने बेईमानी के कई कार्य किए। B को हुई हानि के लिए क्या C की जायदाद उत्तरदायी है ?

iv) A, B को दिए जाने वाले माल के मूल्य के भुगतान के लिए, C को गारंटी देता है। कालांतर में C, B को माल सप्लाई करता है। बाद में B आर्थिक कठिनाईयों में फंस जाता है और वह अपने लेनदारों से अनुबंध करता है कि यदि वे उसे समस्त दायित्वों से मुक्त कर दें तो बदले में वह अपनी सारी जायदाद उनके नाम कर देगा। जायदाद को बेचकर रुपये में से केवल 75 पैसे का ही भुगतान किया जा सकता है। C, शेष राशि के लिए A पर दावा करता है। निर्णय कीजिए।

v) 1 दिसम्बर, 1986 को Y, Z का ऋणी है और X ने इस ऋण की गारंटी दी है। देय तारीख के बाद दो वर्ष व्यतीत हो जाते हैं और Y ने ऋण नहीं चुकाया है तथा Z ने मूल ऋणी Y के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं की। क्या X का दायित्व समाप्त हो गया ?

vi) D द्वारा E को सही-सही हिसाब देने के लिए A, B और C गारंटी देते हैं। वे भिन्न-भिन्न राशि के लिए गारंटी देते हैं. A, 10,000 रुपये की B, 20,000 रुपये की तथा C, 40,000 रुपये की। D, 30,000 रुपये का गबन करता है। A, B और C का क्रमश: दायित्व बताइए।

9.12 सारांश

क्षतिपूर्ति (indemnity) एवं गारंटी के अनुबंध, विशेष प्रकार के अनुबंध हैं, जिनके लिए भारतीय अनुबंध अधिनियम में विस्तृत नियम दिए गये हैं।

क्षतिपूर्ति अनुबंध की परिभाषा इस प्रकार कर सकते हैं; यह ऐसा अनुबंध है जिसमें एक पक्ष स्वयं अपने या किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से होने वाली हानि से, दूसरे पक्ष को बचाने का वचन देता है। ये अनुबंध स्पष्ट या निहित हो सकते हैं। जो व्यक्ति क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है उसे क्षतिपूरक, तथा जिस व्यक्ति को यह वचन दिया जाता है उसे क्षतिपूर्तिधारी कहते हैं।

क्षतिपूर्तिधारी पर दावा किए जाने पर वह क्षतिपूरक (वचनदाता) से ये वसूल करने का हकदार होता है —(i) ऐसे समस्त हर्जाने जो उसे चुकाने पड़े हैं, (ii) मुकदमे के सब खर्चे जो उसे करने पड़े हैं, तथा (iii) ऐसी राशि जो उसने किसी मुकदमे के समझौते की शर्तों के अधीन चुकाई है। जैसे ही उसका (क्षतिपूर्तिधारी) दायित्व निश्चित हो जाता है, वह ये रकम वसूल कर सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि पहले क्षतिपूर्तिधारी रकम अदा करे और फिर बाद में क्षतिपूरक से उस रकम को वसूल करे।

गारंटी का अनुबंध ऐसा अनुबंध है जिसमें किसी तीसरे व्यक्ति द्वारा चूक किए जाने पर, उसके वचन का पालन करने या दायित्व को पूरा करने का वचन दिया जाता है। जो व्यक्ति गारंटी देता है वह 'गारंटीकर्ता' कहलाता है, जिस व्यक्ति के लिए गारंटी दी जाती है वह 'मूल ऋणी' कहलाता है तथा जिस व्यक्ति को गारंटी दी जाती है वह 'लेनदार' कहलाता है।

गारंटी का अनुबंध विशिष्ट या चलत हो सकता है। किसी एक संव्यवहार के लिए दी गई गारंटी 'विशिष्ट' कहलाती है जबकि संव्यवहारों की शृंखला के लिए दी गई गारंटी को चलत या निरन्तर गारंटी कहते हैं। चलत गारंटी को इस प्रकार खंडित किया जा सकता है — (i) लेनदार को सूचना दे कर, (ii) गारंटीकर्ता की मृत्यु होने पर तथा (iii) लेनदार और मूल ऋणी के मध्य हुए अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन करके।

जब तक अनुबंध में इसके विपरीत प्रावधान न हो, गारंटीकर्ता का दायित्व मूल-ऋणी के दायित्व के साथ सह-विस्तृत होता है। उसके अधिकारों को तीन शीर्षकों में बाँटा जा सकता है: (i) मूल-ऋणी के विरुद्ध अधिकार, (ii) लेनदार के विरुद्ध अधिकार, तथा (iii) सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध अधिकार। उसे मूल ऋणी के विरुद्ध प्रत्यासन का अधिकार और क्षतिपूर्ति का अधिकार प्राप्त है। लेनदार के विरुद्ध उसे प्रतिभूतियों को प्राप्त करने और मुजराई मांग करने का अधिकार है तथा सह-गारंटीकर्ताओं से अंशदान मांगने का अधिकार है।

गारंटीकर्ता इन स्थितियों में दायित्व मुक्त हो जाता है: (i) चलत गारंटी की दशा में नोटिस दे कर, (ii) चलत गारंटी की दशा में गारंटीकर्ता की मृत्यु होने पर, (iii) नवीकरण द्वारा, (iv) अनुबंध की शर्तों में परिवर्तन किए जाने पर, (v) मूल ऋणी को मुक्त कर दिए जाने पर, (vi) लेनदार और मूल ऋणी में समझौता होने पर, (vii) लेनदार के किसी ऐसे कार्य या भूल, जिसके कारण गारंटीकर्ता का अन्तिम उपचार समाप्त होता है, (vii लेनदार द्वारा प्रतिभूति खो देने पर, (ix) गारंटी अनुबंध के अमान्य हो जाने पर।

9.13 शब्दावली

क्षतिपूर्ति: वचनदाता के स्वयं के आचरण या किसी अन्य व्यक्ति के आचरण से दूसरे पक्ष को होने वाली हानि से बचाने का वचन।

क्षतिपूरक: जो व्यक्ति क्षतिपूर्ति करने का वचन देता है।

क्षतिपूर्तिधारी: जिस व्यक्ति की क्षतिपूर्ति करने के लिए वचन दिया जाता है।

गारंटी: किसी तीसरे व्यक्ति द्वारा चूक किए जाने पर, उसके वचन के पालन या दायित्व का भुगतान का वचन देना।

गारंटीकर्ता: जो व्यक्ति गारंटी देता है।

चलत गारंटी: ऐसी गारंटी जो संव्यवहारों की शृंखला के लिए दी जाती है।

नवीकरण: पुराने पक्षकारों या अन्य पक्षकारों के बीच हुआ नया अनुबंध जिसके परिणामस्वरूप गारंटी का मूल अनुबंध समाप्त हो जाता है।

9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 2) हाँ, 3) नहीं, 4) हाँ, 5) नहीं, क्योंकि करार का उद्देश्य अवैधानिक है।

ख 3 i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) गलत

4 i) नहीं, ii) प्रतिफल, iii) अविधिमान्य, iv) मूल ऋणी

5 i) हाँ, धारा 127 पढ़िए।

ii) नहीं, करार व्यर्थ है।

iii) A विनिमय बिल की राशि के ही लिए न केवल उत्तरदायी है बल्कि उस पर हुए देय ब्याज तथा खर्चों के लिए भी वह उत्तरदायी है — धारा 128।

ग 4 i) गलत, ii) सही, iii) गलत, iv) सही, v) गलत

5 i) C अनुबंध के दायित्व से मुक्त हो गया, क्योंकि B ने A को ऋण चुकाने की अवधि बढ़ा दी तथा यह सारा एक ही अनुबंध है, माहवारी अनुबंधों की शृंखला नहीं।

ii) X उत्तरदायी नहीं है और C, X से हानि वसूल नहीं कर सकता।

iii) यह चलत गारंटी है। गारंटीकर्ता की मृत्यु होने से यह भावी संव्यवहारों के लिए खंडित हो जाती है। इस मामले में C की मृत्यु के समय तक किए गये संव्यवहारों के लिए उसकी जायदाद उत्तरदायी होगी।

iv) यहाँ गारंटीकर्ता की सहमति के बिना समझौता किया गया है अत: गारंटीकर्ता दायित्व मुक्त हो गया।

v) मूल ऋणी पर मुकदमा न करने मात्र से गारंटीकर्ता दायित्व मुक्त नहीं होता, चाहे ऋण कालातीत ही क्यों न हो गया हो।

vi) A, B तथा C प्रत्येक 10,000 रु. देने के लिए बाध्य हैं (धारा 147)

9.15 स्वपरख प्रश्न

1 क्षतिपूर्ति अनुबंध तथा गारंटी के अनुबंध में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

2 "सह-गारंटीकर्ताओं में परस्पर दायित्व और लाभ की दृष्टि से समानता होती है।" व्याख्या कीजिए।

3 गारंटीकर्ता के दायित्व की प्रकृति स्पष्ट कीजिए। वह अपने दायित्व से कब मुक्त हो जाता है ?

4 "गारंटीकर्ता 'अनुग्रही देनदार' (favoured debtor) होता है", क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? अपने उत्तर के लिए तर्क दीजिए।

5 गारंटीकर्ता के (i) मूल ऋणी के विरुद्ध, (ii) लेनदार के विरुद्ध तथा, (iii) सह-गारंटीकर्ताओं के विरुद्ध अधिकार बताइए।

6 वैध गारंटी के आवश्यक लक्षणों की चर्चा कीजिए।

7 प्रत्यासन (subrogation) के अधिकार से आपका क्या तात्पर्य है ? उदाहरण दे कर समझाइए।

> **नोट:** इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 10 निक्षेप एवं गिरवी

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 निक्षेप का अर्थ
10.3 निक्षेप के प्रकार
10.4 निक्षेपक कर्तव्य
10.5 निक्षेपिती के कर्तव्य
10.6 निक्षेपक के अधिकार
10.7 निक्षेपिती के अधिकार
10.8 निक्षेपक और निक्षेपिती का दोषकर्ता के विरुद्ध अधिकार
10.9 माल पाने वाला व्यक्ति
10.9.1 माल पाने वाले व्यक्ति के अधिकार
10.9.2 माल पाने वाले व्यक्ति के कर्तव्य
10.10 निक्षेप की समाप्ति
10.11 गिरवी का अर्थ
10.12 गिरवी कौन कर सकता है ?
10.13 गिरवी तथा निक्षेप के बीच भेद
10.14 गिरवी तथा बंधक
10.15 गिरवीग्राही के अधिकार
10.16 गिरवीग्राही के कर्तव्य
10.17 गिरवीकर्ता के अधिकार एवं कर्तव्य
10.17.1 गिरवीकर्ता के अधिकार
10.17.2 गिरवीकर्ता के कर्तव्य
10.18 अस्वामी द्वारा गिरवी
10.19 सारांश
10.20 शब्दावली
10.21 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.22 स्वपरख प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- निक्षेप की परिभाषा कर सकें तथा अन्य प्रकार के अनुबन्धों से इसका अन्तर स्पष्ट कर सकें
- निक्षेप के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें
- निक्षेपक और निक्षेपिती के अधिकारों एवं कर्तव्यों की व्याख्या कर सकें
- माल पाने वाले व्यक्ति के अधिकारों एवं कर्तव्यों की विवेचना कर सकें
- 'गिरवी' की परिभाषा कर सकें
- गिरवीकर्ता और गिरवीग्राही के अधिकारों एवं कर्तव्यों की व्याख्या कर सकें
- गिरवी का अन्य प्रकार के अनुबन्धों से अन्तर बता सकें।

10.1 प्रस्तावना

'निक्षेप' (bailment) तथा 'गिरवी' (pledge) विशिष्ट अनुबन्धों के उदाहरण हैं।
भारतीय अनुबन्ध अधिनियम 1872 सर्वव्यापी अधिनियम नहीं है, इसमें सभी प्रकार के विशेष अनुबंधों की चर्चा नहीं की गई है। ऐसे और कई अन्य अधिनियम हैं जो विशेष अनुबन्धों की

चर्चा करते हैं, जैसे रेलवे अधिनियम 1890, वाहक अधिनियम 1865 आदि। 'निक्षेप' शब्द, फ्रेंच शब्द 'बेलर' से लिया गया है जिसका अर्थ है 'सुपुर्दगी देना'।

कानून में निक्षेप शब्द को तकनीकी आशय में प्रयुक्त किया जाता है जिसका तात्पर्य है वस्तुओं का अधिकार या कब्जा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को मिलना। इसके विपरीत, गिरवी किसी विशेष उद्देश्य के लिए वस्तुओं का निक्षेप है। जब कुछ माल या वस्तुएं, किसी वचन के पालन या ऋण के भुगतान के लिए, जमानत के तौर पर एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के सुपुर्द की जाती हैं, तो इसे गिरवी करना कहते हैं। गिरवी, निक्षेप से भिन्न है। इस इकाई में आप निक्षेप का अर्थ, इसके प्रकार और निक्षेपक तथा निक्षेपिती के अधिकार एवं कर्तव्यों का अध्ययन करेंगे। आप गिरवी का अर्थ भी समझेंगे। यह निक्षेप तथा अन्य अनुबन्धों से किस प्रकार भिन्न है तथा गिरवीकर्ता व गिरवीग्राही के अधिकार एवं कर्तव्य क्या हैं, उनकी भी जानकारी प्राप्त करेंगे।

10.2 निक्षेप का अर्थ

अनुबंध अधिनियम की धारा 148 के अनुसार निक्षेप (bailment) का अर्थ है "किसी उद्देश्य के लिये **इस शर्त पर एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को दी गई माल की सुपुर्दगी, के उद्देश्य पूरा होते ही या तो माल सुपुर्दगी देने वाले व्यक्ति को लौटा दिया जाएगा अथवा, उसके आदेशानुसार माल का निपटारा कर दिया जाएगा।**" माल की सुपुर्दगी देने वाले को निक्षेपक (bailor) तथा जिस व्यक्ति को माल की सुपुर्दगी दी जाती है उसे निक्षेपिती (bailee) कहते हैं। उदाहरण के लिए, A कुछ सोना एक सुनार B को अपनी बहन के लिए चूड़ियाँ बनाने के लिए देता है। इस स्थिति में A निक्षेपक तथा B निक्षेपिती है तथा जब B को सोना सुपुर्द किया जाता है तब A तथा सुनार B के बीच निक्षेप का संबन्ध हुआ माना जाता है।

यदि आप निक्षेप की उपर्युक्त परिभाषा का विश्लेषण करें तो आप देखेंगे कि निक्षेप का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए निम्नलिखित लक्षण अवश्य ही विद्यमान होने चाहिए:

i) करार
ii) माल की सुपुर्दगी
iii) उद्देश्य
iv) विशिष्ट माल की वापसी

i) **करार**: निक्षेप के लिए पहली आवश्यकता है कि निक्षेपक और निक्षेपिती के बीच कोई करार अवश्य होना चाहिए। निक्षेपक और निक्षेपिती के बीच यह करार स्पष्ट या निहित हो सकता है।

ii) **माल की सुपुर्दगी**: निक्षेप के लिए यह आवश्यक है कि निक्षेपक द्वारा निक्षेपिती को माल की सुपुर्दगी दी जाए। यह निक्षेप के अनुबंध का सार-तत्व है। इससे यह स्पष्ट होता है कि केवल चल वस्तुओं का ही निक्षेप किया जा सकता है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि माल का कब्ज़ा स्वेच्छा से दूसरे व्यक्ति को दिया जाना चाहिए तथा यह अनुबंध की शर्तों के अनुरूप होना चाहिए। उदाहरणार्थ, A एक चोर किसी मकान में घुसकर रिवाल्वर दिखाकर मकान के स्वामी को सारे गहने सुपुर्द करने का आदेश देता है। मकान का स्वामी उसे अपने सारे गहने सौंप देता है। इस स्थिति में यद्यपि वस्तुओं का कब्ज़ा दूसरे व्यक्ति को दिया गया है, परन्तु क्योंकि यह सुपुर्दगी स्वेच्छा से नहीं की गई है अत: इसे निक्षेप नहीं माना जाएगा।

माल की सुपुर्दगी वास्तविक (actual) या रचनात्मक या सांकेतिक (constructive) हो सकती है। वास्तविक सुपुर्दगी का अर्थ है कि माल का कब्ज़ा एक व्यक्ति से दूसरे को मिलना। उदाहरणार्थ, जब कोई व्यक्ति अपना स्कूटर मरम्मत के लिए मिस्त्री को देता है, तो यह वास्तविक सुपुर्दगी कहलाती है। जब माल का वास्तविक कब्ज़ा नहीं दिया जाता, लेकिन निक्षेपक कोई ऐसा कार्य करता है जिसका प्रभाव यह होता है कि निक्षेपिती के कब्ज़े या अधिकार में माल आ जाता है अथवा निक्षेपिती द्वारा अधिकृत किसी अन्य व्यक्ति के अधिकार में माल आ जाता है, तो इसे रचनात्मक या सांकेतिक सुपुर्दगी कहते

है, जैसे गोदाम की चाबी देना या रेलवे रसीद (बिल्टी) को हस्तांरित करना। कई बार दूसरे व्यक्ति का पहले से ही निक्षेपक के माल पर कब्ज़ा होता है और बाद में निक्षेप का अनुबंध किया जाता है जिसके अन्तर्गत वह दूसरा व्यक्ति उस माल को निक्षेपिती के रूप में अपने पास रखना स्वीकार करता है। इसे भी माल की रचनात्मक सुपुर्दगी कहते हैं। रेलवे रसीद माल के स्वामित्व सम्बन्धी प्रपत्र है, जब किसी व्यक्ति को यह हस्तांतरित की जाती है तो इसे रचनात्मक सुपुर्दगी समझा जाता है। यहाँ यह ध्यान रहे कि निक्षेप में माल का केवल कब्ज़ा ही दिया जाता है स्वामित्व नहीं, माल पर निक्षेपक का ही स्वामित्व बना रहता है।

i) **उद्देश्य:** निक्षेप में माल किसी विशेष प्रयोजन के लिए दिया जाता है तथा जिस प्रयोजन के लिए माल दिया जाता है वह निक्षेपक तथा निक्षेपिती को पता होता है।

') **विशिष्ट माल की वापसी:** यह महत्वपूर्ण है कि निक्षेप की विषय-वस्तु, प्रयोजन के पूर्ण होने पर या निक्षेप की नियत अवधि व्यतीत होने पर, निक्षेपक को या तो लौटा दिया जाना चाहिए या उसके आदेशानुसार उसका निपटारा कर दिया जाना चाहिए। जब मूल्य प्रतिफल के बदले, माल का स्वामी अपना माल दूसरे को सुपुर्द करता है, तो यह 'विक्रय' (sale) का अनुबंध होता है, निक्षेप का नहीं। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति किसी बैंक में किए गये नोटों को ठीक वैसे ही मूल रूप में वापस करने के लिए बाध्य नहीं है, बल्कि वह देनदार का सम्बन्ध उत्पन्न होता है, निक्षेपक या निक्षेपिती का नहीं, क्योंकि बैंक जमा किए गये नोटों को ठीक वैसे ही मूल रूप में वापस करने के लिए बाध्य नहीं है, बल्कि वह जमा की गई राशि के बराबर राशि देने के लिए उत्तरदायी है। परन्तु जब मूल्यवान वस्तुएं, सिक्के या नोट किसी बक्से में रखकर बैंक को सुरक्षित रखने के लिए सुपुर्द किए जाते हैं तो यह निक्षेप का अनुबंध होता है, क्योंकि वस्तुओं या नोटों को उनके मूल रूप में ही वापस करना होता है, उसके मूल्य के बराबर धनराशि नहीं।

क्षेप के कुछ अन्य उदाहरण हैं। जब घड़ी मरम्मत के लिए घड़ीसाज को दी जाती है या हीरे ा अंगूठी में लगाने के लिए सुनार को दिया जाता है। इन दोनों ही स्थितियों में, प्रयोजन पूर्ण ने पर वही घड़ी तथा वही हीरा वापस किया जाना चाहिए। जब सोने के जेवर बैंक को रक्षित रखने के लिए दिए जाते हैं या प्रेषिती तक माल ले जाने के लिए जब माल रेलवे को पुर्द किया जाता है, तो ये निक्षेप के अनुबन्ध कहलाते हैं।

0.3 निक्षेप के प्रकार

क्षेप का वर्गीकरण दो आधारों पर किया जा सकता है — शुल्क तथा लाभ। इसके लिए त्र 10.1 देखिए।

चित्र 10.1

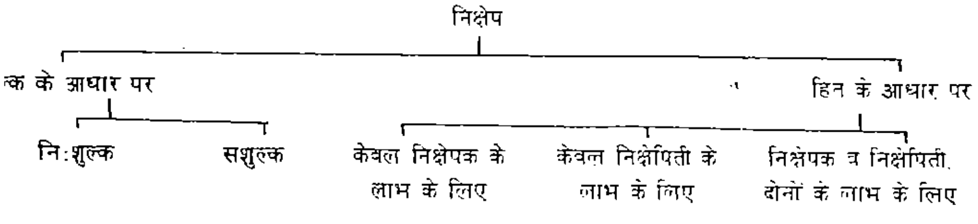

ल्क के आधार पर: शुल्क के आधार पर निक्षेप का वर्गीकरण नि:शुल्क (gratitous) तथा शुल्क (non-gratuitous) किया जा सकता है। यहाँ यह देखना होगा कि निक्षेप के अनुबंध से कारों को कुछ लाभ मिल रहा है या नहीं। जब निक्षेप के लिए कोई किराया, फीस या ल्क नहीं लिया जाता तो इसे नि:शुल्क निक्षेप कहते हैं। उदाहरणार्थ, जब आप अपनी साईकल पने मित्र को सवारी के लिए देते हैं या जब आप उससे पढ़ने के लिए पुस्तक उधार लेते हैं, ये नि:शुल्क निक्षेप कहलाते हैं क्योंकि यहाँ रुपया या अन्य किसी रूप में प्रतिफल नहीं या जाता। यहाँ पर न तो आप तथा न ही आपका मित्र कोई शुल्क प्राप्त करने का हकदार ा। दूसरी ओर जब निक्षेप में कोई किराया, फीस या शुल्क लिया जाता है तो उसे शुल्क' निक्षेप कहते हैं। उदाहरणार्थ, जब आपका मित्र साईकल की दुकान से किराए पर

साईकल लेता है या जब किसी पुस्तकों की दुकान से आप किराए पर पुस्तक पढ़ने के लिए लेते हैं, तो ये सशुल्क निक्षेप कहलाते हैं।

लाभ के आधार पर: पक्षकारों को प्राप्त होने वाले लाभ के आधार पर निक्षेप के अनुबंध को निम्नलिखित में बांटा जा सकता है:

i) **केवल निक्षेपक के लाभ के लिए:** यह ऐसी स्थिति है जब निक्षेप का अनुबंध केवल निक्षेपक के लाभ के लिए ही किया जाता है तथा जिससे निक्षेपिती को कोई भी लाभ प्राप्त नहीं होता। उदाहरणार्थ, जब आप शहर से बाहर जा रहे हैं और अपना कीमती सामान अपने पड़ोसी के यहां सुरक्षित रखने के लिए छोड़ जाते हैं, तो इस दशा में निक्षेपक के रूप में केवल आप ही लाभान्वित हो रहे हैं।

ii) **केवल निक्षेपिती के लाभ के लिए:** यह ऐसी स्थिति होती है जब केवल निक्षेपिती के लाभ के लिए निक्षेप अनुबंध किया जाता है तथा निक्षेपक को इस अनुबंध से कोई लाभ नहीं मिलता। उदाहरण, जब आप अपनी पुस्तकें अपने मित्र को बिना किसी शुल्क के पढ़ने के लिए देते हैं ताकि वह परीक्षा के लिए पढ़ सके, तो इस दशा में इस निक्षेप में केवल आपके मित्र को ही निक्षेपिती के रूप में लाभ मिल रहा है।

iii) **निक्षेपक तथा निक्षेपिती दोनों के पारस्परिक लाभ के लिए:** इस स्थिति में निक्षेप से निक्षेपक तथा निक्षेपिती दोनों ही को कुछ लाभ मिलता है। उदाहरण, जब आप दर्जी को कमीज सिलने के लिए कपड़ा देते हैं, तो इस अनुबंध से दोनों को ही लाभ प्राप्त होता है। आपको सिली हुई कमीज़ मिलती है तो दर्जी को सिलाई का पारिश्रमिक मिलता है।

बोध प्रश्न क

1 निक्षेप के कोई दो आवश्यक लक्षण लिखिए।

....

....

2 वैध निक्षेप के लिए क्या यह आवश्यह है कि निक्षेपक द्वारा निक्षेपिती को माल का वास्तविक कब्ज़ा दिया जाए ?

....

3 बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) निक्षेप तथा गिरवी विशेष अनुबंधों के उदाहरण हैं। ....

ii) करार के बिना निक्षेप नहीं किया जा सकता। ....

iii) निक्षेप में जिस प्रयोजन के लिए माल दिया जाता है वह निक्षेपक तथा निक्षेपिती इन दोनों को ही पता होता है। ....

iv) निक्षेप के अनुबंध के लिए जब प्रतिफल नहीं होता, तो इसे सशुल्क निक्षेप कहते हैं। ....

v) निक्षेप में माल देने वाले व्यक्ति को निक्षेपिती कहते हैं। ....

vi) निक्षेप में माल का स्वामित्व निक्षेपक से निक्षेपिती को हस्तांतरित हो जाता है। ....

10.4 निक्षेपक के कर्तव्य

निक्षेपक के निम्नलिखित कर्तव्य हैं:

1 **दोषों को प्रकट करना:** निक्षेप के कानून द्वारा निक्षेपक पर यह कर्तव्य डाला गया है कि वह निक्षेपित माल के दोष प्रकट करे। जिस प्रयोजन के लिए माल निक्षेप किया जा रहा है, यदि उसके प्रयोग में किसी दोष से बाधा पहुँचती है या उससे अधिक खतरा है तो निक्षेपक का कर्तव्य है कि वह उस दोष को प्रकट करे। माल का निक्षेप निःशुल्क (जिसमें निक्षेपक या निक्षेपिती, किसी को भी कोई शुल्क या फीस नहीं मिलती) या सशुल्क (फीस

या शुल्क सहित) हो सकता है। नि:शुल्क निक्षेप की स्थिति में, कानून के द्वारा निक्षेपक पर यह कर्तव्य डाला गया है वह ऐसे समस्त दोष निक्षेपिती को बताए जो उसकी जानकारी में हैं तथा जिनसे माल के उपयोग में बाधा पहुँचती है। यदि निक्षेपक ज्ञात दोषों को प्रकट नहीं करता जिसके परिणामस्वरूप निक्षेपिती को कुछ हानि होती है, तो निक्षेपिती की हानि के लिए निक्षेपक मुआवजा देने के लिए उत्तरदायी होता है। उदाहरण, A, अपना स्कूटर अपने मित्र को सवारी करने के लिए ले जाने देता है। A को यह ज्ञात है कि स्कूटर के ब्रेक ठीक नहीं हैं, लेकिन A यह बात B को नहीं बताता। परिणामस्वरूप B दुर्घटनाग्रस्त हो जाता है। A, B की क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है।

सशुल्क निक्षेप अर्थात् पुरस्कार या फीस के लिए निक्षेप की स्थिति में निक्षेपक का कर्तव्य है कि वह निक्षेप किए जाने वाले माल को ठीक हालत में रखे। माल जिस प्रयोजन के लिए हैं वह उस प्रयोजन के लिए दुरुस्त होना चाहिए। सशुल्क निक्षेप की दशा में निक्षेपक माल के समस्त दोषों के लिए उत्तरदायी होता है, चाहे उसे उन दोषों की जानकारी थी या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। यदि निक्षेपिती को कोई नुकसान होता है तो निक्षेपक को निक्षेपिती की क्षतिपूर्ति करनी होगी। उदाहरणार्थ, A खेतों में जोतने के लिए B का ट्रैक्टर किराए पर लेता है। ट्रैक्टर का शेफ्ट (धुरा) टूटा हुआ था परन्तु B को इस दोष की जानकारी नहीं थी। जब A अपने खेत जोत रहा था तब इस दोष के कारण ट्रैक्टर उलट जाता है और A को चोट लगती है। B, A की क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है।

यहाँ यह ध्यान रहे कि नि:शुल्क निक्षेप की स्थिति में निक्षेपक केवल उन्हीं दोषों के लिए उत्तरदायी होता है जिनकी जानकारी उसे है, परन्तु सशुल्क निक्षेप की स्थिति में निक्षेपक हर हालत में उत्तरदायी होता है। उसे दोषों की जानकारी थी या नहीं, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। इससे स्पष्ट है कि सशुल्क निक्षेप में निक्षेपक का उत्तरदायित्व और अधिक हो जाता है।

जब निक्षेप किया जाने वाला माल खतरनाक प्रकृति का है, तब इस तथ्य को प्रकट करना और भी महत्वपूर्ण है, नहीं तो परिणामों के लिए निक्षेपक उत्तरदायी होगा। उदाहरणार्थ, A कुछ रसायन पदार्थ B को बम्बई ले जाने के लिए सुपुर्द करता है। यदि इन पदार्थों को एक नियत तापमान से कम तापमान पर न रखा जाए, तो इनके फटने की सम्भावना होती है। A इस सावधानी के बारे में B को कुछ भी नहीं बताता। रसायन पदार्थ ले जाते समय उनमें विस्फोट हो जाता है और B को चोट पहुँचती है। B को हुई हानि के लिए A उत्तरदायी है।

व्यय सहन करना: ऐसे निक्षेप जहाँ निक्षेपिती को कोई पारिश्रमिक नहीं मिलता, सामान्य नियम है कि माल को रखने या माल को ले जाने या निक्षेपिती द्वारा उस पर कोई कार्य करने में जो कुछ भी व्यय होता है, उन सामान्य व्ययों को निक्षेपक सहन करेगा। अन्य शब्दों में, निक्षेप के प्रयोजन के लिए निक्षेपिती जो भी आवश्यक खर्च करता है, निक्षेपक उन सबका भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है। उदाहरणार्थ, A एक किसान कुछ सोना अपने सुनार मित्र B को अंगूठी बनाने के लिए देता है। इस कार्य के लिए B को कुछ भी पारिश्रमिक नहीं मिलना था। यहाँ A का कर्तव्य है कि अंगूठी बनाने में आये समस्त व्ययों का वह B को भुगतान करे।

सशुल्क निक्षेप की स्थिति में (जब निक्षेपिती को कुछ पारिश्रमिक मिलता है) निक्षेपक का कर्तव्य है कि वह निक्षेपिती द्वारा किए गये "असाधारण व्ययों" का भुगतान करे। परन्तु इस दशा में निक्षेपक "सामान्य व्ययों" के लिए उत्तरदायी नहीं होता। उदाहरणार्थ, जब कोई घोड़ा किसी यात्रा के लिए दिया जाता है तो उसके खाने-पीने का खर्च निक्षेपिती स्वयं सहन करेगा। परन्तु यदि घोड़ा बीमार हो जाता है और उसके इलाज पर कुछ व्यय किया जाता है अथवा घोड़े के चोरी हो जाने पर उसको पुन: प्राप्त करने के लिए कुछ खर्च किया जाता है, तो निक्षेपक को इन खर्चों का भुगतान करना चाहिए।

निक्षेपिती की क्षतिपूर्ति करना: निक्षेप किए गये माल पर निक्षेपक का दोषपूर्ण स्वामित्व होने के कारण यदि निक्षेपिती को कुछ हानि होती है तो निक्षेपक का कर्तव्य है वह निक्षेपिती की क्षतिपूर्ति करे। इसका कारण है कि निक्षेपक को माल निक्षेप करने का हक नहीं था या निक्षेपित माल को वापस प्राप्त करने का हक नहीं था या निक्षेपित माल के

सम्बन्ध में निर्देश देने का अधिकार नहीं था। उदाहरणार्थ, A अपने मित्र B से उसकी साईकल एक घंटे के लिए मांगता है। B अपनी साईकल के स्थान पर C की साईकल A को दे देता है। साईकल पर सवारी करते हुए, साईकल का वास्तविक स्वामी A को पकड़ लेता है और उसे पुलिस के सुपुर्द कर देता है। इस स्थिति से छुटकारा पाने के लिए A जो कुछ भी खर्च करता है उस सबकी पूर्ति करने के लिए B उत्तरदायी होगा।

4 **जोखिम सहन करना:** निक्षेपक का कर्तव्य है कि वह निक्षेप की गई वस्तुओं के नष्ट होने या खराब होने के जोखिमों को सहन करे, बशर्ते कि निक्षेपिती ने माल को हानि से बचाने के लिए यथोचित देखभाल की हो।

5 **माल वापस लेना:** निक्षेप के अनुबंध की शर्तों के अनुसार जब निक्षेपिती माल वापस करता है तो निक्षेपक का कर्तव्य है कि वह उस माल को वापस ले ले। यदि उचित समय व स्थान पर माल वापस दिए जाने पर, बिना किसी उचित कारण के निक्षेपक उसे वापस लेने से इन्कार करता है, तब माल की सुरक्षा व देखभाल से सम्बन्धित निक्षेपिती के सभी आवश्यक खर्चों की प्रतिपूर्ति करने के लिए निक्षेपक जिम्मेदार होता है।

10.5 निक्षेपिती के कर्तव्य

निक्षेपिती के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं:

1 **निक्षिप्त माल की उचित देखभाल करना:** भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 151 में, निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में निक्षेपिती द्वारा की जाने वाली देखभाल की मात्रा का वर्णन किया गया है। इस धारा के अनुसार निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह निक्षिप्त माल की उतनी ही सावधानीपूर्वक देखभाल करे जितनी कि एक साधारण दूरदर्शिता वाला व्यक्ति, समान परिस्थितियों में उसी किस्म एवं मूल्य के अपने माल की करता। निक्षेप चाहे नि:शुल्क है या सशुल्क, देखभाल करने का स्तर एक समान ही होता है। अत: यदि निक्षेपिती की लापरवाही के कारण माल को हानि पहुँचती है, तो इसके लिए निक्षेपिती उत्तरदायी होता है।

हाँ, माल की देखभाल के बारे में विशेष अनुबंध करके, साधारण दूरदर्शिता वाले व्यक्ति द्वारा की जाने वाली देखभाल के मानक में वृद्धि की जा सकती है। उस स्थिति में, स्वयं को उत्तरदायित्व से बचाने के लिए, निक्षेपिती को अनुबंध की शर्तों के अनुसार माल की देखभाल करनी चाहिए। यदि विशेष अनुबंध के द्वारा निक्षेपिती के उत्तरदायित्व में वृद्धि कर भी दी गई हो तब भी वह ऐसी हानि के लिए उत्तरदायी नहीं होता जो राज्य के शत्रु या प्राकृतिक प्रकोप जैसे आग, बिजली गिरना, बाढ़ आदि से हुई है (सुन्दर बनाम रामस्वरूप)। किसी विशेष अनुबंध के अभाव में, यदि निक्षेपिती ने माल की उचित देखभाल की है, तब वह माल के गुम या खराब या नष्ट हो जाने से हुई हानि के लिए उत्तरदायी नहीं होता। उदाहरण के लिए, यदि A अपनी हीरे की अंगूठी B को सुरक्षित रखने के लिए देता है तथा इसके लिए B को कोई पारिश्रमिक नहीं मिलना था। इस स्थिति में B का कर्तव्य है कि वह इस हीरे की अंगूठी को ताला लगाकर तिजोरी में या किसी अन्य सुरक्षित स्थान पर रखे। केवल इसलिए कि यह नि:शुल्क निक्षेप है उसे इस अंगूठी को अपने कबाड़खाने (lumber room) में नहीं रखना चाहिए। इसी प्रकार जब गाय सुरक्षित रखने के लिए दी जाती है तो यदि उसे पिछवाड़े आहते में बाँध दिया जाता है तो यह पर्याप्त है। यदि निक्षेप सशुल्क भी है तो भी यह अपेक्षा की जाती है कि वह गाय को अपने ड्राईगरूम (बैठक घर) में बाँधेगा।

2 **माल का अनाधिकृत प्रयोग न करना:** निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि निक्षेपित माल का उपयोग एकदम अनुबंध की शर्तों के अनुसार करे। यदि निक्षेपिती माल के सम्बन्ध में कोई भी ऐसा कार्य करता है जो निक्षेप अनुबंध की शर्तों के अनुकूल नहीं है, तो इसे माल का अनाधिकृत उपयोग माना जाता है तथा उस दशा में निक्षेपक निक्षेप के अनुबंध को समाप्त भी कर सकता है। इसके अलावा यदि अनाधिकृत उपयोग करने से माल को कोई हानि होती है तो निक्षेपक इस हानि की पूर्ति के लिए जिम्मेदार होगा। माल का अनाधिकृत उपयोग किए जाने पर, निक्षेपिती अपने उत्तरदायित्व से उस समय भी नहीं बच सकेगा

जब उसने सामान्य दूरदर्शिता वाले व्यक्ति द्वारा की जाने वाली देखभाल की हो।
उदाहरण:

i) A अपनी कार B को हैदराबाद से दिल्ली जाने के लिए उधार देता है। कार B द्वारा स्वयं चलानी थी। B अपने साथ अपने मित्र C को भी ले गया, जो अपनी कार गत 10 वर्षों से चला रहा था। B, दिल्ली जाने के स्थान पर कलकत्ता रवाना हो गया। यह अनुबंध निक्षेपक A के विकल्प पर रद्द किया जा सकता है। कलकत्ता जाते समय B, C को गाड़ी चलाने की अनुमति दे देता है। इसके बावजूद कि C, B के निर्देशानुसार बहुत धीमी गति से कार चला रहा था, एक दुर्घटना हो जाती है और कार क्षतिग्रस्त हो जाती है। A इस नुकसान के लिए मुआवज़ा पाने का हक़दार है।

ii) A, B को एक घोड़ा केवल सवारी करने के लिए देता है। B वह घोड़ा अपने परिवार के सदस्य C को सवारी के लिए देता है। C पूर्ण सावधानी से सवारी करता है, इसके बावजूद दुर्घटनावश घोड़ा गिरकर ज़ख्मी हो जाता है। घोड़े के जख्मी होने के कारण जो हानि A को हुई है उसके लिए B उत्तरदायी है। इन दोनों उदाहरणों में निक्षेपिती ने माल का अनाधिकृत उपयोग किया है।

निक्षेपक के माल को अपने माल के साथ न मिलाना: निक्षेपिती का अगला कर्तव्य है कि वह निक्षेपक के माल को अपने माल से अलग रखे। धारा 155 से 157 में उसके इस कर्तव्य के बारे में निम्नलिखित व्यवस्था की गई है:

i) यदि निक्षेपिती ने, निक्षेपक की सहमति से, निक्षेपित माल को अपने माल के साथ मिला दिया हो तो मिश्रित माल में निक्षेपक तथा निक्षेपिती का हित उनके हिस्सों के अनुपात में होता है (धारा 155)।

ii) यदि निक्षेपिती ने, निक्षेपक की सहमति के बिना अपने माल को निक्षेपक के माल के साथ मिला दिया है और माल को विभाजित या छांट कर अलग किया जा सकता है, तो दोनों पक्षों का अपने हिस्से के माल पर स्वामित्व बना रहता है, परन्तु माल को छांटकर अलग करने का खर्च या माल के मिल जाने से हुई हानि के लिए निक्षेपिती उत्तरदायी होता है (धारा 156)। उदाहरणार्थ, A रूई की 100 गांठें, जिन पर विशेष निशान लगा हुआ है, B के पास निक्षेप करता है। B, A की सहमति के बिना उसकी 100 गांठों में अपनी कुछ गांठे मिला देता है जिन पर एक अलग किस्म का निशान बना हुआ है। A, B से अपनी 100 गांठें वापस प्राप्त करने का हकदार है, परन्तु उन्हें अलग करने का खर्च तथा किसी अन्य प्रांसगिक हानि के लिए B उत्तरदायी है।

iii) यदि निक्षेपिती, निक्षेपक की सहमति के बिना उसके माल को अपने माल के साथ इस तरह मिला देता है कि निक्षेप किए गये माल को निक्षेपिती के माल से अलग करना और वापस सुपुर्दगी देना असम्भव हो गया है तो निक्षेपिती निक्षेपक को उसके माल की हानि का मुआवज़ा देने के लिए बाध्य होता है (धारा 157)। उदाहरणार्थ, A, 50 रुपये मूल्य का एक बैरल केप आटा, B के पास निक्षेप करता है। B, A की सहमति के बिना, उसके केप आटे में 20 रुपये प्रति बैरल मूल्य वाला अपना देशी आटा मिला देता है। ऐसी स्थिति में B, A को उसके आटे की हानि का मुआवज़ा देने के लिए बाध्य है।

जब निक्षेपिती अपने माल को निक्षेपक के माल के साथ मिला देता है और जब उसे माल वापस लौटाने के लिए कहा जाता है तो वह उन्हें अलग किए बिना वापस लौटाने का प्रस्ताव करता है। ऐसी स्थिति में निर्णय दिया गया कि निक्षेपक सारे माल को लेने से मना कर सकता है तथा हानि के लिए मुआवज़े की मांग कर सकता है।

प्रतिकूल स्वामित्व न जमाना: निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह कोई भी ऐसा कार्य न करे जो निक्षेपक के स्वामित्व के अधिकार के प्रतिकूल हो। उसे निक्षिप्त माल पर न तो अपना और न ही किसी अन्य व्यक्ति का स्वामित्व जताना चाहिए।

माल वापस करना: निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह निक्षेप का प्रयोजन पूर्ण हो जाने पर या निक्षेप की अवधि व्यतीत होने पर, निक्षेपिती को उसका माल, उसके मांगे बिना वापस कर दे या उसके निर्देशानुसार माल का निबटारा कर दे। यदि वह माल वापस नहीं करता या निक्षेपक के निर्देशानुसार सुपुर्दगी नहीं देता या उचित

समय पर माल नहीं लौटाता, तो वह उस समय से माल के गुम, नष्ट या खराब होने से हुई हानि के लिए निक्षेपक के प्रति उत्तरदायी हो जाता है (धारा 161)। यदि माल उचित समय पर वापस नहीं किया जाता, तो उस समय के बाद निक्षेपिती ऐसी समस्त हानियों के लिए उत्तरदायी होता है जो उसकी लापरवाही के बिना हुई हैं। उदाहरणार्थ, एक जिल्दसाज़ ने नियत समय से अधिक समय तक किताबों को अपने पास रखा और अचानक आग लग जाने से वे नष्ट हो गईं। ऐसी स्थिति में हानि के लिए जिल्दसाज़ को उत्तरदायी ठहराया गया। परन्तु नि:शुल्क निक्षेप की स्थिति में, भले ही माल किसी निर्दिष्ट प्रयोजन या अवधि के लिए दिया गया हो, निक्षेपक द्वारा मांग किए जाने पर, निक्षेपिती को माल वापस करना होगा। परन्तु यदि निर्दिष्ट प्रयोजन या नियत अवधि के लिए उधार के आधार पर निक्षेपिती ने उसका इस ढंग से उपयोग कियां है कि समय से पहले वापस कर देने से निक्षेपिती को उस लाभ से अधिक हानि होती है जो उसने माल के उपयोग से प्राप्त किया है, तब निक्षेपक को निक्षेपिती को होने वाली उस हानि की पूर्ति करनी होगी जो उसने लाभ की अपेक्षा अधिक उठाई है।

6 **माल में हुई वृद्धि वापस करना:** किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह निक्षिप्त माल में हुई किसी वृद्धि या लाभ को निक्षेपक को या उसके आदेश पर किसी अन्य व्यक्ति को वापस कर दे (धारा 163)। उदाहरणार्थ, A अपनी गाय देखभाल के लिए B के पास छोड़ जाता है। गाय एक बछड़े को जन्म देती है। B, गाय तथा बछड़े दोनों को ही वापस करने के लिए बाध्य है।

10.6 निक्षेपक के अधिकार

निक्षेपक के निम्नलिखित अधिकार हैं:

1 **निक्षेपिती के कर्तव्यों का प्रवर्तन:** अभी आपने निक्षेपिती के कर्तव्यों के बारे में पढ़ा। निक्षेपिती के कर्तव्य, निक्षेपक के अधिकार होते हैं। उदाहरण के लिए जब निक्षेपिती माल वापस करता है, तो उसे उसके साथ समस्त प्राकृतिक वृद्धि भी वापस करनी चाहिए। यह निक्षेपिती का कर्तव्य है तथा निक्षेपक को यह अधिकार है कि जब माल वापस किया जाता है तब वह समस्त प्राकृतिक वृद्धि को पाने का हकदार होता है।

2 **हर्जाना पाने का अधिकार:** निक्षेपक का यह निहित अधिकार है कि निक्षिप्त माल को यदि निक्षेपिती की लापरवाही के कारण हानि होती है, तो वह निक्षेपिती से मुआवज़ा पाने का हकदार होता है (धारा 151)।

3 **अनुबंध रद्द करने का अधिकार:** यदि निक्षेपिती निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में कोई ऐसा कार्य करता है जो निक्षेप की शर्तों के अनुकूल नहीं है तो निक्षेपक को अनुबंध समाप्त करने का अधिकार होता है (धारा 153)। उदाहरणार्थ, A अपनी कार B को सवारी के लिए देता है। B कार को टैक्सी के रूप में उपयोग करने लगता है। A अनुबंध समाप्त कर सकता है।

4 **मुआवज़ा प्राप्त करने का अधिकार:** यदि निक्षिप्त माल के अनाधिकृत उपयोग के कारण माल को कुछ नुकसान पहुँचता है, तो इस हानि के लिए निक्षेपक, निक्षेपिती से मुआवज़ा मांगने का हकदार होता है (धारा 154)। इसी प्रकार यदि अनाधिकृत ढंग से निक्षिप्त माल को किसी दूसरे माल के साथ मिला दिया जाता है तो उससे उत्पन्न हुई हानि के लिए निक्षेपक, निक्षेपिती से हर्जाने की मांग कर सकता है (धारा 155, 156)।

5 **माल को वापस मांगने का अधिकार:** निक्षेप का प्रयोजन पूरा हो जाने या नियत अवधि समाप्त हो जाने पर, निक्षेपक को निक्षेपिती से माल वापस मांगने का अधिकार है। नि:शुल्क निक्षेप की स्थिति में निक्षेपक किसी भी समय माल की वापसी की मांग कर सकता है भले ही निक्षेप किसी विशेष प्रयोजन या नियत अवधि के लिए हो।

10.7 निक्षेपिती के अधिकार

निक्षेपक के कर्तव्य, निक्षेपिती के अधिकार होते हैं तथा निक्षेपिती इन अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए निक्षेपक पर मुकदमा दायर कर सकता है। निक्षेपिती के विभिन्न अधिकार निम्नलिखित हैं:

1 **हर्जाने (damages) का दावा करने का अधिकार:** यदि निक्षेपक माल निक्षिप्त करते समय ज्ञात दोषों को प्रकट नहीं करता तथा इसके परिणामस्वरूप निक्षेपिती को हानि होती है तो निक्षेपिती हर्जाने के लिए निक्षेपक पर मुकदमा दायर कर सकता है। उदाहरणार्थ, A एक घोड़ा B को उधार देता है। A को यह मालूम है कि घोड़ा शरारती है, लेकिन वह इस तथ्य को B को नहीं बताता। घोड़ा दौड़ पड़ता है और B गिर कर जख्मी हो जाता है। A, B के प्रति उत्तरदायी है। किराए के लिए निक्षेप में, माल में कोई भी दोष होने से उत्पन्न हानि के लिए निक्षेपक प्रत्येक स्थिति में उत्तरदायी होता है, भले ही निक्षेपक को उन दोषों की जानकारी न हो।

2 **प्रतिपूर्ति (reimbursement) के लिए दावा करने का अधिकार:** सशुल्क निक्षेप की स्थिति में, निक्षेप के प्रयोजन को पूर्ण करने के लिए निक्षेपिती जो कुछ भी खर्च करता है, उसे इन खर्चों की निक्षेपक से प्रतिपूर्ति कराने का अधिकार है। निःशुल्क निक्षेप की स्थिति में, निक्षेप के सम्बन्ध में किए गये असाधारण खर्चों की प्रतिपूर्ति के लिए निक्षेपिती, निक्षेपक पर दावा कर सकता है (धारा 158)।

3 **क्षतिपूर्ति (indemnity) पाने का अधिकार:** निक्षेपक को माल को निक्षेप करने या निक्षेप किए हुए माल को वापस लेने या माल के सम्बन्ध में निर्देश देने का अधिकार नहीं होने से यदि निक्षेपिती को कोई हानि होती है तो निक्षेपिती क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकारी है (धारा 164)।

4 **संयुक्त निक्षेपकों में से किसी एक को माल की सुपुर्दगी देने का अधिकार:** जब कई सह-स्वामियों द्वारा माल निक्षिप्त किया जाता है तो, किसी विपरीत समझौते के अभाव में, निक्षेपिती किसी एक निक्षेपक को, या उसके निर्देशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को, माल की सुपुर्दगी दे सकता है। इसके लिए अन्य सह-स्वामियों की सहमति प्राप्त करना आवश्यक नहीं है (धारा 165)।

5 **निक्षेपक को माल सुपुर्द करने का अधिकार:** यदि निक्षेपक का माल पर स्वामित्व दोषपूर्ण है और निक्षेपिती पूर्ण सद्विश्वास से निक्षेपक को या उसके निर्देश पर किसी अन्य व्यक्ति को माल लौटा देता है, तो इस प्रकार की माल की सुपुर्दगी के लिए निक्षेपिती माल के वास्तविक स्वामी के प्रति उत्तरदायी नहीं होता (धारा 166)।

6 **पूर्वाधिकार:** जब निक्षेपिती ने निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में, निक्षेप के उद्देश्य के अनुसार कोई ऐसी सेवा प्रदान की है जिसमें श्रम या कौशल प्रयुक्त हुआ है तो, किसी विपरीत करार के अभाव में, निक्षेपिती उस माल को तब तक अपने पास रोके रख सकता है जब तक कि उसे अपनी सेवा का उचित पारिश्रमिक नहीं मिल जाता। निक्षिप्त माल को इस प्रकार रोकने के अधिकार को निक्षेपिती का पूर्वाधिकार (lien) कहते हैं (धारा 170)।

आईए, अब 'पूर्वाधिकार' का विस्तार से अध्ययन करते हैं:

पूर्वाधिकार (Right of Lien)

निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में निक्षेपिती ने जो श्रम या कौशल किया है, उसके लिए पारिश्रमिक जब तक नहीं मिल जाता, निक्षेपिती उस माल को अपने पास रोक रख सकता है। यह तो आप पढ़ ही चुके हैं कि पूर्वाधिकार (right of lien) ऐसा अधिकार है जिसके अनुसार एक व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति के माल को अपने पास तब तक रोके रख सकता है जब तक उसे देय राशि प्राप्त नहीं हो जाती। भारतीय अनुबंध अधिनियम ने निम्न प्रकार के पूर्वाधिकार का वर्णन किया है: (i) माल पाने वाले व्यक्ति का पूर्वाधिकार (धारा 168); (ii) निक्षेपिती का विशिष्ट पूर्वाधिकार (धारा 170); (iii) बैंकर्स, आढ़तिया, घाटपाल (wharfinger), अटार्नी तथा बीमा दलाल को प्राप्त सामान्य पूर्वाधिकार (धारा 171); (iv) गिरवीग्राही का पूर्वाधिकार (धारा 173, 174); तथा (v) एजेंट का पूर्वाधिकार (धारा 221)। गिरवीग्राही के पूर्वाधिकार के

बारे में इस इकाई में आगे अलग से वर्णन किया गया है। 'एजेंट के पूर्वाधिकार' के संबंध में एक अलग इकाई 'एजेन्सी के अनुबंध' में व्यख्या की गई है।

पूर्वाधिकार का उपयोग करने के लिए माल पर कब्ज़ा होना अति आवश्यक है। कब्ज़ा न्यायपूर्ण तथा लगातार होना चाहिए, किसी विशेष प्रयोजन के लिए ही नहीं। उदाहरणार्थ, A, B के गोदाम को 5 वर्ष के लिए पट्टे पर लेता है। A और B में यह भी करार हुआ कि गोदाम में से A कभी भी माल निकाले या जमा कर सकता है। छः माह के बाद A ने पट्टे का किराया देना बन्द कर दिया। B ने A के माल को रोक कर किराए की मांग की। B पूर्वाधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता क्योंकि उनमें परस्पर यह तय हुआ था कि A जब भी चाहे वह अपना माल निकाल सकता है।

पूर्वाधिकार 'विशिष्ट' या 'सामान्य' हो सकता है।

विशिष्ट पूर्वाधिकार (Particular lien) : जब केवल उसी माल को रोके रखा जा सकता है जिसके सम्बन्ध में कोई रकम बकाया है, तो इसे विशिष्ट पूर्वाधिकार कहते हैं। जब निक्षेपिती ने निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में, निक्षेप के प्रयोजन के अनुसार, कोई ऐसी सेवा प्रदान की है जिसमें श्रम तथा कौशल का उपयोग हुआ है तो, किसी विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, उसे ऐसे माल को तब तक अपने पास रोके रखने का अधिकार है जब तक उसे इस सेवा का उचित पारिश्रमिक नहीं मिल जाता (धारा 170)। उदाहरणार्थ, A, एक खुरदुरा हीरा, एक जौहरी B को तराशने और पालिश करने के लिए देता है। जब B तदनुसार यह कार्य कर देता है तब वह उक्त हीरे को तब तक अपने पास रोके रखने का हकदार है जब तक उसे अपनी सेवाओं का पारिश्रमिक नहीं मिल जाता। इसी प्रकार, A कुछ कपड़ा एक दर्जी B को कोट सिलने के लिए देता है। B, A को वचन देता है कि जैसे ही कोट बनकर तैयार होगा वह उसकी सुपुर्दगी उसे कर देगा और वह उसकी सिलाई के लिए तीन माह तक मांग नहीं करेगा। B को पारिश्रमिक का भुगतान मिलने तक कोट को रोके रखने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि B ने A को तीन माह के लिए साख सुविधा प्रदान की है।

सामान्यत: निक्षेपिती को विशिष्ट पूर्वाधिकार ही प्राप्त होता है जिसका अर्थ है कि वह केवल उन्हीं वस्तुओं को रोके रख सकता है जिनके सम्बन्ध में उसे भुगतान प्राप्त करना बकाया है। यह अधिकार कुछ शर्तों के पूरा करने पर ही मिलता है। सबसे पहली महत्वपूर्ण शर्त यह है कि निक्षेपिती ने माल के सम्बन्ध में पारिश्रमिक के बदले कोई सेवा प्रदान की हो। दूसरी शर्त यह है कि निक्षेपिती ने माल के सम्बन्ध में "श्रम एवं कौशल" का प्रयोग किया है जिससे उक्त माल के मूल्य में कुछ वृद्धि हुई हो। अत: जब कोई व्यक्ति किसी जानवर को दाना-पानी देने के लिए अपने पास रखता है तो उसे यह पूर्वाधिकार प्राप्त नहीं होता। परन्तु जब पशु चिकित्सक उस जानवर का इलाज करता है तो उसे पूर्वाधिकार प्राप्त है। अन्त में, यह भी आवश्यक है कि अनुबंध की शर्तों के अनुसार उसका पूर्णत: निष्पादन हो गया हो। पूर्वाधिकार का प्रयोग केवल तभी किया जा सकेगा जब उधार पर सेवा प्रदान करने का करार न हो।

सामान्य पूर्वाधिकार (General lien) : धारा 171 के अनुसार, सामान्य पूर्वाधिकार से तात्पर्य है, दूसरे व्यक्ति के खाते में बकाया कुल राशि के भुगतान की जमानत के रूप में निक्षिप्त माल को रोकना। विशिष्ट पूर्वाधिकार के अन्तर्गत, निक्षेपिती को केवल वही माल रोके रखने का अधिकार है जिसके सम्बन्ध में कुछ बकाया राशि देय है, इसके विपरीत 'सामान्य पूर्वाधिकार' के अन्तर्गत उस व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के किसी भी माल को किसी भी बकाया राशि के भुगतान के लिए रोकने का अधिकार होता है, यह बकाया राशि उस माल से सम्बन्धि है या नहीं इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। सामान्य पूर्वाधिकार एक विशेषाधिकार (privilege) है तथा धारा 171 के अनुसार यह अधिकार कुछ विशेष प्रकार के निक्षेपितियों को ही दिया गया है, ये हैं बैंकर्स, आढ़तिया, घाटपाल, हाई कोर्ट के अटार्नी तथा बीमा दलाल।

10.8 निक्षेपक और निक्षेपिती का दोषकर्ता के विरुद्ध अधिकार

यदि कोई तीसरा व्यक्ति निक्षेपिती को निक्षिप्त माल का उपयोग करने या उसे अपने पास रखने से अनुचित ढंग से वंचित कर देता है या माल को कोई नुकसान पहुँचाता है तब निक्षेपिती को य अधिकार दिया गया है कि वह उस दोषी व्यक्ति के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करे। धारा 180 में इ अधिकार का वर्णन इस प्रकार किया गया है, यदि कोई तीसरा व्यक्ति निक्षेपिती को निक्षिप्त माल ं

प्रयोग या कब्ज़े से अनुचित रूप से, वंचित कर देता है या माल को कोई नुकसान पहुंचाता है तो निक्षेपिती को ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध वे समस्त कार्रवाइयाँ करने का अधिकार होता है जो माल का स्वामी, माल के निक्षिप्त न किए जाने की समान स्थिति में स्वयं कर सकता था तथा निक्षेपक या निक्षेपिती, दोनों में से कोई भी दोषकर्ता के विरुद्ध इस प्रकार वंचित किए जाने या नुकसान पहुँचाए जाने के सम्बन्ध में मुकदमा दायर कर सकता है।

उपर्युक्त प्रकार के दावों में हर्जाने की राशि को निक्षेपक एवं निक्षेपिती में बाँटने के अनुपात का वर्णन धारा 181 में किया गया है। इस धारा के अनुसार, इस प्रकार के मुकदमें में प्राप्त होने वाली राशि, निक्षेपक और निक्षेपिती अपने-अपने हितों के अनुपात में आपस में बाँट लेते हैं। उदाहरणार्थ, A जबरदस्ती B की टी. वी. मरम्मत की दुकान से रंगीन टेलीविज़न उठा लाता है। इस दशा में अब या तो टी. वी. का असली स्वामी या B, A पर मुकदमा दायर कर सकता है। यदि B मुकदमा दायर करता है तो जो भी राशि हर्जाने के रूप में प्राप्त होती है उसमें से मरम्मत का खर्च काटकर शेष राशि टी. वी. के असली स्वामी को दे दी जाएगी।

बोध प्रश्न ख

निक्षेपक के कोई तीन कर्तव्य बताइए।

....

....

....

रिक्त स्थान भरिए:

i) निक्षेप कानून के द्वारा निक्षेपक पर यह कर्तव्य डाला गया है कि वह निक्षिप्त माल के दोषों को .... ।

ii) सशुल्क निक्षेप की स्थिति में निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह माल को .... में रखे।

iii) निक्षेपिती का यह कर्तव्य है कि वह निक्षिप्त माल की उतनी ही देखभाल करे जितनी कि एक सामान्य .... वाला व्यक्ति, समान परिस्थितियों में, उसी प्रकार, आकार और मूल्य के अपने माल की करता।

iv) किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, निक्षेपिती को निक्षिप्त माल में हुई .... निक्षेपक को सुपुर्द करनी चाहिए।

v) .... का प्रयोग करने के लिए माल पर कब्ज़ा आवश्यक है।

vi) निक्षिप्त माल को हुई हानि के लिए, निक्षेपक निक्षेपिती से .... वसूल करने का हकदार है।

निक्षेपिती के किन्हीं चार अधिकारों का वर्णन कीजिए।

....

....

....

....

0.9 माल पाने वाला व्यक्ति (Finder of Goods)

दि किसी व्यक्ति को कोई वस्तु पड़ी मिलती है जो उसकी अपनी नहीं है, तो ऐसे व्यक्ति को ाल पाने वाला' (finder of goods) कहते हैं। उसका यह कर्तव्य है कि वह माल के असली ामी को ढूँढें तथा उसे माल लौटा दे। माल के स्वामी को ढूँढ़ने तथा तब तक अपने पास ख़ने में वह जो कुछ भी राशि खर्च करता है, उस रकम की वसूली तथा अपनी परेशानी के ाए वह माल के असली स्वामी के विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं कर सकता। परन्तु उसे वह ल तब तक अपने पास रोके रखने का अधिकार है जब तक उसे माल के स्वामी से मुआवज़ा प्त नहीं हो जाता। यदि माल के स्वामी ने खोये माल को ढूँढ़ने के लिए किसी इनाम की

घोषणा की है तब माल पाने वाला व्यक्ति इनाम की राशि के लिए असली स्वामी पर मुकदमा कर सकता है, परन्तु इसके लिए एक शर्त है कि उसे माल पाने के समय से पहले इनाम की घोषणा की जानकारी होनी चाहिए तथा जब तक उसे इनाम नहीं मिल जाता तब तक वह माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है।

माल पाने वाला व्यक्ति का, सारे संसार के विरुद्ध, असली स्वामी को छोड़कर, माल पर स्वामित्व होता है। अत: यदि किसी व्यक्ति को किसी दुकान के फर्श पर नोटों का एक बंडल पड़ा मिलता है जो किसी अजनबी व्यक्ति से अचानक वहाँ गिर गया था, तो असली स्वामी को छोड़कर, अन्य सब व्यक्तियों के विरुद्ध वह उस बंडल को अपने पास रखने का हकदार है।

10.9.1 माल पाने वाले व्यक्ति के अधिकार

माल पाने वाले व्यक्ति के निम्नलिखित अधिकार हैं:

1 **पूर्वाधिकार:** माल पाने वाले व्यक्ति को तब तक माल अपने कब्ज़े में रखने का अधिकार है जब तक उसे अपने खर्चों का भुगतान नहीं मिल जाता। वह केवल पाए हुए माल के सम्बन्ध में ही पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है। उसे यह अधिकार माल के असली स्वामी के विरुद्ध प्राप्त है, जब तक उसे उस कष्ट और मेहनत का मुआवज़ा नहीं मिल जाता जो उसने ऐसे माल को सुरक्षित रखने और उसके असली स्वामी को ढूँढने के लिए किया है। परन्तु किए गये खर्चों की वसूली के लिए वह माल के असली स्वामी के विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं कर सकता।

2 **इनाम के लिए दावा करने का अधिकार:** यदि माल के असली स्वामी ने माल को ढूँढ़ने के लिए इनाम की घोषणा की है, तब माल पाने वाला उस इनाम को पाने के लिए असली स्वामी पर मुकदमा दायर कर सकता है। जब तक उसे इनाम की राशि प्राप्त नहीं हो जाती तब तक वह माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है।

3 **बेचने का अधिकार:** माल पाने वाला व्यक्ति निम्नलिखित परिस्थितियों में माल को बेच सकता है:

i) जब पूरी कोशिश के बावजूद भी असली स्वामी को ढूँढ़ा न जा सके तथा पता चल जाने पर वह पाने वाले व्यक्ति द्वारा किए गये कानूनी व्ययों का भुगतान करने से मना कर देता है, या

ii) जब पायी हुई वस्तु इस प्रकार की है जो प्राय: बेची जाती है; या

iii) जब माल के नष्ट होने या उसके मूल्य में बहुत कमी हो जाने की आशंका हो; या

iv) जब माल की देखभाल एवं असली स्वामी को ढूँढ़ने के लिए किया गया व्यय, माल के मूल्य का दो-तिहाई हो।

10.9.2 माल पाने वाले व्यक्ति के कर्तव्य

अनुबंध अधिनियम की धारा 71 के अनुसार, माल पाने वाले व्यक्ति के ठीक वही कर्त्तव्य होते हैं जो कि एक निक्षेपिती के होते हैं। तदनुसार, माल पाने वाले व्यक्ति के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं:

1 माल पाने वाले व्यक्ति को उस माल की उचित देखभाल करनी चाहिए।

2 यथोचित समय के भीतर जब तक असली स्वामी का पता नहीं चलत, उसे माल का उपयोग नहीं करना चाहिए।

3 पाये हुए माल को अपने माल के साथ नहीं मिलाना चाहिए।

4 माल के असली स्वामी को ढूँढ़ने के लिए उचित प्रयास करना चाहिए तथा पता चलने पर माल उसे सुपुर्द कर देना चाहिए। उदाहरणार्थ, जन्मदिवस की एक पार्टी के अवसर पर एक अतिथि को फर्श पर सोने की अंगूठी पड़ी मिलती है। वह इस बारे में मेज़बान (host) तथा अन्य अतिथियों को सूचित कर देता है। यहाँ यह समझा जाएगा कि उसने अपने कर्त्तव्य का पालन कर दिया। यदि वह असली स्वामी को नहीं ढूँढ पाता तो वह उस अँगूठी को निक्षेपिती की हैसियत से अपने पास रख सकता है।

10.10 निक्षेप की समाप्ति

निम्नलिखित परिस्थितियों में निक्षेप का अनुबंध समाप्त हो जाता है:

1 **नियत अवधि समाप्त होने पर:** यदि माल का निक्षेप किसी नियत अवधि के लिए है, तब उस अवधि के समाप्त होने पर निक्षेप का अनुबंध भी समाप्त हो जाता है।

2 **उद्देश्य पूर्ण होने पर:** यदि किसी विशेष प्रयोजन या प्रयोजनों के लिए माल का निक्षेप किया गया है, तब उस प्रयोजन या उद्देश्य के पूर्ण होते ही निक्षेप समाप्त हो जाता है।

3 **निक्षिप्त माल का अनुचित उपयोग होने पर:** यदि निक्षेपिती निक्षिप्त माल का इस तरह से उपयोग करता है जो अनुबंध की शर्तों के प्रतिकूल है, तब निक्षेप की नियत अवधि से पहले ही निक्षेपक उस अनुबंध को समाप्त कर सकता है।

4 **विषय-वस्तु के नष्ट होने पर:** यदि निक्षेप की विषय-वस्तु नष्ट हो जाती है या निक्षिप्त माल की प्रकृति में कोई परिवर्तन होने के कारण उसका निक्षेप के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता, तब निक्षेप अनुबंध समाप्त हो जाता है।

5 **नि:शुल्क निक्षेप की समाप्ति:** यह आप पहले पढ़ चुके हैं कि यदि निक्षेप नियत अवधि के लिए या विशेष प्रयोजन के लिए है तो भी इसे कभी भी समाप्त किया जा सकता है। परन्तु ऐसी स्थिति में, समय से पहले समाप्ति से निक्षेपिती की हानि निक्षेप से प्राप्त हुए लाभ से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि हानि, प्राप्त हुए लाभ से अधिक है, तो निक्षेपक को निक्षेपिती की क्षतिपूर्ति करनी होती है।

6 **मृत्यु:** निक्षेपक या निक्षेपिती में से किसी की भी मृत्यु होने पर नि:शुल्क निक्षेप समाप्त हो जाता है।

बोध प्रश्न ग

1 रिक्त स्थान भरिए:

i) ऐसा व्यक्ति जिसे किसी दूसरे की कोई वस्तु पड़ी मिलती है, ... व्यक्ति कहलाता है।

ii) माल के वास्तविक स्वामी को ढूंढने के लिए, माल पाने वाले व्यक्ति स्वेच्छा से किए गये .... की वसूली नहीं कर सकता।

iii) यदि खोये हुए माल के स्वामी ने माल को खोजने के लिए किसी इनाम की घोषणा की है, तब माल पाने वाला व्यक्ति इस इनाम के लिए असली स्वामी के विरुद्ध .... कर सकता है।

iv) जब निक्षिप्त माल की .... में कोई ऐसा परिवर्तन होता है कि अब उसका निक्षेप के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सकता, तब निक्षेप समाप्त हो जाता है।

v) निक्षेपक या निक्षेपिती में से किसी की भी .... होने पर नि:शुल्क निक्षेप समाप्त हो जाता है।

2 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) माल पाने वाले व्यक्ति को तब तक माल रोके रखने का अधिकार है जब तक माल का स्वामी उसके खर्चों का भुगतान नहीं कर देता। ....

ii) यदि पाये हुए माल को सुरक्षित रखने का व्यय माल के मूल्य के 3/5 के बराबर है तब माल पाने वाला व्यक्ति उस माल को बेच सकता है। ....

iii) यदि नियत समय के लिए माल निक्षिप्त किया गया है तो यह आवश्यक नहीं है कि उक्त अवधि के समाप्त होने पर निक्षेप भी समाप्त हो जाए। ....

iv) यदि निक्षेप की विषय-वस्तु नष्ट हो जाती है तो निक्षेप समाप्त हो जाता है। . . . .

v) जिस अवधि के लिए माल निक्षिप्त किया गया है, उसके समाप्त होने से पहले निक्षेपक निःशुल्क निक्षेप को समाप्त नहीं कर सकता। . . . .

10.11 गिरवी का अर्थ

गिरवी (pledge) एक विशेष प्रकार का निक्षेप है जिसमें किसी ऋण की अदायगी या किसी वचन के निष्पादन की जमानत के तौर पर चल वस्तुओं को निक्षेप किया जाता है। उदाहरणार्थ, जब आप B से सौ रुपये उधार लेते हैं और इस ऋण के भुगतान की जमानत के रूप में अपनी साईकल B को दे देते हैं, तो इसे गिरवी का अनुबंध कहते हैं। उधार लेने वाले व्यक्ति (निक्षेपक) को 'गिरवीकर्ता' (pledger or pawnor) तथा जिस व्यक्ति के पास माल गिरवी रखा जाता है, उसे 'गिरवीग्राही' (pledgee or pawnee) कहते हैं। गिरवी की दशा में माल का स्वामित्व गिरवीग्राही को हस्तांतरित नहीं होता। माल का सामान्य स्वामित्व या हित गिरवीकर्ता का ही रहता है, केवल "विशेष स्वामित्व या हित" ही गिरवीग्राही को प्राप्त होता है। विशेष स्वामित्व या हित का अर्थ है माल पर कब्ज़ा होना और त्रुटि करने पर माल को बेचने का अधिकार। गिरवी को पूर्ण करने के लिए माल की सुपुर्दगी अवश्य की जानी चाहिए अर्थात् जिस वस्तु या माल को गिरवी रखा जा रहा है उसकी सुपुर्दगी गिरवीग्राही को दी जानी चाहिए। इस प्रकार जब एक फिल्म निर्माता ने किसी वित्तदाता-वितरक से रकम उधार ली और उससे करार किया कि जब फिल्म बन कर तैयार हो जाएगी वह उसके पास गिरवी रख दी जाएगी। निर्णय दिया गया कि यह गिरवी नहीं है क्योंकि माल की वास्तविक सुपुर्दगी नहीं की गई। माल की सुपुर्दगी वास्तविक या सांकेतिक (प्रलक्षित) हो सकती है। जिस गोदाम में माल रखा हुआ है जब उसकी चाबी दी जाती है तो इसे प्रलक्षित या सांकेतिक सुपुर्दगी कहते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि माल किसी तीसरे व्यक्ति के कब्ज़े में है और यह तीसरा व्यक्ति गिरवीकर्ता के निर्देशानुसार उस माल को गिरवीग्राही के लिए अपने पास रखने का करार करता है, इसे माल की पर्याप्त सुपुर्दगी (enough delivery) माना जाता है। रेलवे रसीद माल के स्वामित्व सम्बन्धी दस्तावेज़ है। इस रसीद को गिरवी रखना, माल को गिरवी रखने के समान है।

गिरवी, निक्षेप का ही विस्तार है अतः गिरवीकर्ता और गिरवीग्राही के वही अधिकार एवं कर्तव्य होते हैं जो कि निक्षेपक एवं निक्षेपिती के होते हैं।

10.12 गिरवी कौन कर सकता है ?

निम्नलिखित में से कोई भी व्यक्ति वैध गिरवी कर सकता है:

i) माल का स्वामी या उसका प्राधिकृत एजेंट, या

ii) कई सह-स्वामी होने पर उस सह-स्वामी द्वारा जिसके कब्ज़े में अन्य सह-स्वामियों की अनुमति से माल है; या

iii) व्यापारिक एजेंट द्वारा जिसके अधिकार में असली स्वामी की सहमति से माल है; या

iv) एक व्यर्थ अनुबंध के अन्तर्गत माल पर अधिकार रखने वाले व्यक्ति द्वारा, **बशर्ते यह** अनुबंध रद्द करने से पहले किया जाए; या

v) ऐसा विक्रेता जो माल विक्रय करने के बाद भी माल पर अधिकार रखता है या ऐसा क्रेता जिसके अधिकार में माल खरीदने से पहले आ जाए; या

vi) माल में सीमित हित रखने वाले व्यक्ति के द्वारा। इस स्थिति में, हित की सीमा तक ही गिरवी वैध होती है।

10.13 गिरवी तथा निक्षेप के बीच भेद

गिरवी तथा निक्षेप में अनेक समानताएँ हैं। दोनों ही स्थितियों में चल माल की सुपुर्दगी इस शर्त पर की जाती है कि उद्देश्य के पूर्ण होने या नियत अवधि के समाप्त होने पर वह माल वापस लौटा दिया जाएगा। गिरवी तथा निक्षेप दोनों ही अनुबंध पक्षकारों के बीच हुए करार से उत्पन्न होते हैं।

परन्तु गिरवी, निक्षेप से इस अर्थ में भिन्न है कि गिरवी में किसी विशेष प्रयोजन के लिए माल निक्षिप्त किया जाता है जैसे ऋण की अदायगी या वचन का निष्पादन। जबकि निक्षेप किसी भी प्रयोजन के लिए हो सकता है। दूसरा अन्तर यह है कि गिरवीग्राही गिरवी रखे माल का उपयोग नहीं कर सकता परन्तु निक्षेप की स्थिति में यदि निक्षेप अनुबंध में इसका प्रावधान है तो निक्षेपिती माल का उपयोग कर सकता है। तीसरा अन्तर है कि यदि गिरवीकर्ता नियत समय पर ऋण की अदायगी नहीं करता या वचन का पालन नहीं करता तो गिरवीग्राही, उसे उचित सूचना दे कर माल को बेच सकता है जबकि निक्षेपिती को या तो माल अपने पास रखना पड़ता है या वह प्राप्य राशि के लिए निक्षेपक के विरुद्ध मुकदमा दायर कर सकता है अर्थात् किसी भी हालत में निक्षेपिती माल को बेच नहीं सकता।

10.14 गिरवी तथा बंधक

गिरवी तथा बंधक (hypothecation), दोनों ही पक्षकारों में किए गये करार से उत्पन्न होते हैं। दोनों ही स्थितियों में, किसी ऋण की अदायगी या वचन के पालन के लिए बतौर जमानत के चल वस्तुएँ दी जाती हैं। गिरवी तथा बंधक में मुख्य अन्तर यह है कि बंधक की दशा में माल ऋणी के कब्ज़े में ही रहता है, वह अनुबंध की शर्तों के अनुसार माल का उपयोग कर सकता है। ऋणी का यह कर्तव्य है कि वह बंधक रखे गये माल का विवरण ऋणदाता को भेजे। बंधक की स्थिति में, ऋणदाता को अधिकार है कि वह अपनी सुविधानुसार माल का निरीक्षण कर सकता है जबकि गिरवी की स्थिति में गिरवीकर्ता के कब्ज़े में माल नहीं रहता तथा वह गिरवी रखे गये माल का उपयोग भी नहीं कर सकता।

10.15 गिरवीग्राही के अधिकार

जैसा कि आपको ज्ञात ही है कि गिरवी, निक्षेप का ही विस्तार है, अत: गिरवीकर्ता और गिरवीग्राही के लगभग वही अधिकार व कर्तव्य हैं जो निक्षेपक और निक्षेपिती के होते हैं। इनके अधिकारों का वर्णन निम्न प्रकार से किया जा सकता है:

माल रोकने का अधिकार: गिरवीग्राही अपनी प्राप्य राशि की अदायगी होने तक गिरवी रखे गए माल को अपने पास रोके रख सकता है।

वह निम्नलिखित भुगतानों के लिए माल को रोक सकता है:

क) ऋण की अदायगी या वचन के निष्पादन के लिए,

ख) ऋण पर देय ब्याज के लिए; तथा

ग) गिरवी रखे गये माल को सुरक्षित रखने के लिए किए गये समस्त आवश्यक खर्चों के लिए। गिरवीग्राही का यह अधिकार कि जब तक उसे भुगतान नहीं मिल जाता वह माल को रोके रख सकता है, उसे गिरवीग्राही का पूर्वाधिकार कहते हैं। किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में गिरवीग्राही केवल उसी माल को रोक सकता है जिसकी जमानत पर ऋण दिया गया है, किसी अन्य माल को नहीं। लेकिन किसी विपरीत करार के अभाव में यह समझा जाएगा कि बाद में दिए गये बिना जमानत के ऋणों के लिए भी यही अनुबंध है। यदि नये ऋण के लिए अलग से नयी जमानत दी जाती है तब यह मान्यता नहीं समझी जाएगी।

2 **असाधारण खर्चों के सम्बन्ध में अधिकार** (धारा 175): गिरवीग्राही को गिरवीकर्ता से ऐसे सभी असाधारण खर्चों को पाने का अधिकार है जो उसने माल को सुरक्षित रखने के लिए किए हैं। परन्तु, असाधारणखर्चों की वसूली के लिए वह गिरवी रखे माल को रोक नहीं सकता, लेकिन वह इसके लिए गिरवीकर्ता पर मुकदमा दायर कर सकता है।

3 **माल बेचने का अधिकार** (धारा 176): यदि गिरवीकर्ता ऋण का भुगतान करने या वचन का पालन करने में त्रुटि करता है, तो गिरवीग्राही को दो अधिकार प्राप्त हो जाते हैं प्रथम, वह गिरवी रखे गये माल को समपार्शिवक जमानत (collateral security) के रूप में अपने पास रोक कर प्राप्य राशि के लिए या वचन के पालन के लिए मुकदमा दायर कर सकता है। द्वितीय, वह गिरवीकर्ता को उचित सूचना दे कर गिरवी रखे माल को बेच सकता है।

यदि विक्रय करने के बाद भी विक्रय से प्राप्त राशि ऋण के भुगतान के लिए कम पड़ती है, तो गिरवीकर्ता शेष राशि के भुगतान के लिए उत्तरदायी रहता है। परन्तु, यदि विक्रय से प्राप्त राशि देय राशि से अधिक है तो वह इस आधिक्य को गिरवीकर्ता को लौटाने के लिए बाध्य है।

इसके अतिरिक्त, गिरवीग्राही गिरवी रखे हुए माल को स्वयं नहीं खरीद सकता। यदि वह ऐसा करता है तो यह विक्रय व्यर्थ होता है तथा गिरवीकर्ता देय राशि का भुगतान करके अपना माल वापस ले सकता है।

4 **माल के असली स्वामी के विरुद्ध अधिकार** (धारा 178 A): जब गिरवीकर्ता ने कोई माल एक व्यर्थ अनुबंध के अन्तर्गत प्राप्त किया है, और माल गिरवी रखते समय उस अनुबंध को निरस्त नहीं किया गया है तो माल के असली स्वामी के विरुद्ध गिरवीग्राही को श्रेष्ठ अधिकार मिलते हैं बशर्ते गिरवीग्राही को गिरवीकर्ता के अधिकार में दोष होने की जानकारी न हो तथा उसने सद्विश्वास से काम किया हो।

10.16 गिरवीग्राही के कर्तव्य

गिरवीग्राही के निम्नलिखित कर्तव्य हैं:

1 गिरवी रखे हुए माल की उचित देखभाल करना।

2 गिरवी रखे हुए माल का अनाधिकृत उपयोग नहीं करना।

3 जब ऋण की पूर्ण अदायगी या वचन का पूर्ण पालन हो जाए तो गिरवी रखे हुए माल को लौटाना।

4 अपने माल के साथ गिरवी रखे माल को नहीं मिलाना।

5 कोई भी ऐसा कार्य न करना जो गिरवी की शर्तों के प्रतिकूल है।

6 यदि गिरवी रखे हुए माल में कोई वृद्धि हुई है, तो उसे गिरवीकर्ता के सुपुर्द कर देना।

10.17 गिरवीकर्ता के अधिकार एवं कर्तव्य

10.17.1 गिरवीकर्ता के अधिकार

त्रुटि करने वाले गिरवीकर्ता को माल वापस पाने का अधिकार: जब ऋण के भुगतान या वचन के पालन का कोई समय नियत किया गया है और गिरवीकर्ता समय पर ऋण का भुगतान या वचन का पालन नहीं करता तब भी गिरवीकर्ता का माल वापस पाने का अधिकार तब तक बना रहता है जब तक गिरवी रखे माल को बेच न दिया गया हो। परन्तु उस स्थिति में, उसे गिरवीग्राही को त्रुटि के परिणामस्वरूप किए जाने वाले खर्चों का भी भुगतान करना होगा। इसके अलावा गिरवीग्राही के कर्तव्य गिरवीकर्ता के अधिकार होते हैं, अत: वह गिरवीग्राही के कर्तव्यों के पालन को प्रवर्तित करा सकता है।

10.17.2 गिरवीकर्ता के कर्तव्य

गिरवीकर्ता के मुख्य कर्तव्य निम्नलिखित हैं:

1 गिरवी अनुबन्ध की शर्तों का पालन करना तथा नियत समय पर ऋण की अदायगी करना या वचन पालन करना।

2 गिरवीग्राही द्वारा किए गये असाधारण खर्चों की प्रतिपूर्ति करना।

10.18 अस्वामी द्वारा गिरवी (Pledge by Non-owners)

जैसा कि आपको ज्ञात ही है कि सामान्यत: माल का असली स्वामी ही उन्हें गिरवी रख सकता है तथा कोई भी व्यक्ति दूसरे को अपने से श्रेष्ठ अधिकार नहीं सौंप सकता। परन्तु व्यापारिक लेन-देन की सुविधा के लिए कुछ अपवादों को मान्यता दी गई है। ये अपवाद उन व्यक्तियों के लिए हैं जिनके कब्ज़े में माल है परन्तु वे माल के असली स्वामी नहीं है तथा वे सद्विश्वास से गिरवी करते हैं। आईए अब हम उन परिस्थितियों का अध्ययन करते हैं जहाँ कि अस्वामी (non- owner) द्वारा भी वैध गिरवी की जा सकती है।

1 **व्यापारिक एजेंट द्वारा गिरवी**: जब किसी व्यापारिक एजेंट के पास, माल के स्वामी की सहमति से, कोई माल या उसके स्वामित्व सम्बन्धी कागज़ात रखे हैं, तो व्यापार के सामान्य अनुक्रम में काम करते हुए, ऐसा व्यापारिक एजेंट वैध गिरवी कर सकता है। इसके लिए एक शर्त है कि गिरवीग्राही ने पूर्ण सद्विश्वास से काम किया हो तथा गिरवी करते समय उसे इस तथ्य की जानकारी नहीं हो कि एजेंट को गिरवी करने का अधिकार नहीं है। इस धारा के अन्तर्गत गिरवी के अनुबंध को वैध बनाने के लिए निम्नलिखित शर्तें पूर्ण करना आवश्यक है:

   i) गिरवी रखने वाला व्यक्ति व्यापारिक एजेंट होना चाहिए;

   ii) व्यापारिक एजेंट के कब्ज़े में माल या माल के सम्बन्धी कागज़ात होने चाहिए;

   iii) यह कब्ज़ा असली स्वामी की सहमति से होना चाहिए। यदि बेइमानी के द्वारा या चालाकी से माल पर कब्ज़ा किया गया है तब गिरवी का वैध अनुबंध नहीं किया जा सकता;

   iv) व्यापारिक एजेंट द्वारा व्यापार के सामान्य अनुक्रम में काम करते हुए गिरवी की जानी चाहिए;

   v) गिरवीग्राही ने सद्विश्वास से काम किया हो;

   vi) गिरवीग्राही को गिरवीकर्ता के दोषपूर्ण स्वामित्व की जानकारी नहीं होनी चाहिए। यदि गिरवीग्राही को यह मालूम है कि गिरवीकर्ता का स्वामित्व दोषपूर्ण है तो वैध गिरवी नहीं होगी।

2 **व्यर्थनीय अनुबंध के अधीन माल पर कब्ज़ा रखने वाले व्यक्ति द्वारा गिरवी**: आप प्रारम्भिक इकाइयों में पढ़ चुके हैं कि वैध अनुबंध के लिए सहमति स्वतन्त्र होनी चाहिए अर्थात् सहमति बल प्रयोग, मिथ्या वर्णन, कपट, अनुचित प्रभाव या गलती से किसी से भी प्रभावित नहीं होनी चाहिए। यदि अनुबंध करने वाले किसी पक्ष की सहमति इनमें से किसी के भी द्वारा प्राप्त की जाती है, तो भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 19 तथा 19–A के अन्तर्गत ऐसा अनुबंध उस पक्ष की इच्छा पर व्यर्थनीय होता है जिसकी सहमति इस प्रकार प्राप्त की गई है। अनुबंध अधिनियम की धारा 178–A में प्रावधान किया गया है कि जब किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा माल गिरवी रखा जाता है जिसने एक व्यर्थनीय अनुबंध के अन्तर्गत उन्हें प्राप्त किया है और वह उन्हें अनुबंध रद्द किए जाने से पहले ही गिरवी रख देता है, तो गिरवी का यह अनुबंध वैध होगा बशर्ते गिरवीग्राही ने सद्विश्वास से काम किया हो तथा उसे गिरवीकर्ता के दोषपूर्ण अधिकार के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। उदाहरणार्थ, A कपट के द्वारा B को माल बेचने के लिए प्रेरित करता है। इससे पहले कि B इस अनुबंध को रद्द करता, उसने वह माल C के पास गिरवी रख दिया। C ने सद्विश्वास में माल स्वीकार कर लिया। यह गिरवी का वैध अनुबंध है।

3 **सीमित हित रखने वाले गिरवीकर्ता द्वारा गिरवी:** जब गिरवीकर्ता माल का निरपेक्ष स्वामी नहीं है बल्कि उसका माल में सीमित हित है और ऐसा व्यक्ति उस माल को गिरवी रख देता है तो उस हित की सीमा तक गिरवी वैध होती है। माल पाने वाला व्यक्ति, बन्धकग्राही, या माल पर पूर्वाधिकार रखने वाला व्यक्ति, माल में अपने हित की सीमा तक वैध गिरवी कर सकता है। उदाहरणार्थ, A को सड़क पर एक खराब घड़ी पड़ी मिलती है। वह इस घड़ी को उठा लेता है और उसकी मरम्मत कराने पर 50 रुपये खर्च करता है। बाद में A उस घड़ी को 100 रुपये में गिरवी रख देता है। घड़ी का असली स्वामी गिरवीग्राही को 50 रुपये अदा करके अपनी घड़ी वापस ले सकता है।

4 **कब्ज़ाधारी सह-स्वामी द्वारा गिरवी:** जब किसी माल के एक से अधिक स्वामी हैं और अन्य सह-स्वामियों की सहमति से वह माल किसी एक के कब्ज़े में है, तो ऐसा कब्ज़ाधारी सह-स्वामी माल को वैध रूप से गिरवी रख सकता है।

5 **कब्ज़ाधारी विक्रेता या क्रेता द्वारा गिरवी:** ऐसा विक्रेता जिसके कब्ज़े में माल छोड़ दिया गया है या ऐसा क्रेता जिसने स्वामी की सहमति से माल खरीदने से पहले माल पर कब्ज़ा कर लिया है, वैध गिरवी कर सकते हैं बशर्ते गिरवीग्राही ने सद्‌विश्वास से काम किया हो तथा उसे गिरवीकर्ता को दोषपूर्ण स्वामित्व के बारे में जानकारी न हो। उदाहरण, A एक साईकल B से खरीदता है लेकिन साईकल विक्रेता के पास ही छोड़ जाता है। B उसी साईकल को C के पास गिरवीं रख देता है। C को उस विक्रय की जानकारी नहीं थी तथा उसने सद्‌विश्वास से काम किया। यह गिरवी वैध है।

बोध प्रश्न घ

1 गिरवीग्राही के माल रोकने के अधिकार का वर्णन कीजिए।

....

....

....

2 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) गिरवी एक विशेष प्रकार का निक्षेप है। ....

ii) गिरवी में, गिरवी रखे गये माल का स्वामित्व, गिरवीग्राही को हस्तांतरित नहीं होता। ....

iii) चल तथा अचल, दोनों ही प्रकार के माल का गिरवी रखा जा सकता है। ....

iv) बंधक की स्थिति में ऋणी माल का उपयोग करने का अधिकार खो बैठता है। ....

v) गिरवीकर्ता का यह कर्तव्य है कि वह गिरवीग्राही के ऐसे खर्चों को अदा करे जो उसने माल को सुरक्षित रखने के लिए किए हैं। ....

vi) व्यर्थनीय अनुबंध के अधीन माल पर कब्जा रखने वाला व्यक्ति ऐसे माल की वैध गिरवी नहीं कर सकता। ....

vii) गिरवी के अनुबंध में, नियत समय बीत जाने के बाद भी, गिरवीकर्ता माल को वापस प्राप्त कर सकता है। ....

10.19 सारांश

निक्षेप, एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को माल की ऐसी सुपुर्दगी है जो किसी विशेष प्रयोजन के लिए की जाती है कि उस प्रयोजन के पूर्ण हो जाने पर वह माल निक्षेपक को या उसके निर्देशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को वापस कर दिया जाएगा।

निक्षेप को तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है: केवल निक्षेपक के लाभ के लिए, केवल निक्षेपिती के लाभ के लिए तथा निक्षेपक और निक्षेपिती दोनों के परस्पर लाभ के लिए। पुरस्कार के आधार पर निक्षेप, सशुल्क तथा नि:शुल्क हो सकता है।

पूर्वाधिकार का अर्थ है कि निक्षेपिती, निक्षिप्त माल को तब तक अपने पास रख सकता है जब तक उसे अपनी राशि वसूल नहीं हो जाती। पूर्वाधिकार, विशिष्ट या सामान्य हो सकता है। विशिष्ट पूर्वाधिकार केवल उसी माल के प्रति प्राप्त होता है जिसके सम्बन्ध में निक्षेपिती कोई सेवा, श्रम या कौशल का उपयोग किया है। जबकि सामान्य पूर्वाधिकार में निक्षिप्त माल के साथ-साथ निक्षेपक के किसी भी माल को तब तक रोके रखा जा सकता है जब तक निक्षेपिती को अपनी सारी राशि वसूल नहीं हो जाती।

नियत अवधि की समाप्ति पर, निक्षेप का उद्देश्य पूर्ण हो जाने पर, निक्षेप की शर्तों के प्रतिकूल किसी कार्य के लिए जाने पर, तथा विषय-वस्तु के नष्ट होने पर, निक्षेप समाप्त होता है। नि:शुल्क निक्षेप को नियत अवधि से पहले भी समाप्त किया जा सकता है, परन्तु तब निक्षेपिती को जो हानि होती है, उसकी पूर्ति निक्षेपक को करनी होती है।

इसके विपरीत, किसी ऋण की अदायगी या वचन के पालन की जमानत के रूप में जब कोई माल सुपुर्द किया जाता है, तो यह गिरवी कहलाती है। गिरवी एक विशेष प्रकार का निक्षेप है। गिरवीकर्ता तथा गिरवीग्राही के अधिकार एवं कर्तव्य अधिकांशत: वही हैं जो कि निक्षेपक तथा निक्षेपिती के होते हैं। परन्तु यदि गिरवीकर्ता समय पर ऋण का भुगतान नहीं करता या वचन का पालन नहीं करता तो गिरवीग्राही, गिरवी रखे हुए माल को बेचकर अपनी राशि वसूल कर सकता है। यदि इस प्रकार माल बेचने से ऋण की पूर्ण अदायगी नहीं हो पाती, तो शेष के लिए गिरवीकर्ता उत्तरदायी बना रहता है। परन्तु यदि माल बेचने पर ऋण की राशि से अधिक राशि वसूल होती है तो गिरवीग्राही का कर्तव्य है कि वह इस आधिक्य को गिरवीकर्ता को लौटा दे। गिरवीग्राही स्वयं अपने आप को गिरवी रखा माल नहीं बेच सकता।

यद्यपि सामान्य नियम है कि कोई भी व्यक्ति स्वयं से श्रेष्ठ अधिकार नहीं सौंप सकता, इसका अर्थ हुआ कि केवल माल का असली स्वामी ही उन्हें गिरवी रख सकता है। परन्तु कुछ परिस्थितियों में, व्यापारिक एजेंट द्वारा, व्यर्थनीय अनुबंध के अधीन माल पर कब्ज़ा रखने वाले व्यक्ति द्वारा, माल में सीमित हित रखने वाले व्यक्ति द्वारा, कब्जाधारी सह-स्वामी द्वारा तथा कब्जाधारी विक्रेता या क्रेता द्वारा की गई गिरवी को भी वैध माना जाता है।

10.20 शब्दावली

निक्षेप: निक्षेप, एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को, एक ऐसे अनुबंध के अन्तर्गत किसी विशेष प्रयोजन के लिए माल की सुपुर्दगी है कि प्रयोजन के पूर्ण होने पर या तो उसे माल वापस लौटा दिया जाएगा या माल देने वाले के निर्देशानुसार, उसका निपटारा कर दिया जाएगा।

निक्षेपक: माल की सुपुर्दगी देने वाले को निक्षेपक कहते हैं ।

निक्षेपिती: जिस व्यक्ति को माल सुपुर्द किया जाता है, उसे निक्षेपिती कहते हैं।

विशिष्ट पूर्वाधिकार: जब निक्षेप की शर्तों के अनुसार, निक्षेपिती ने निक्षिप्त माल के सम्बन्ध में कोई ऐसी सेवा या कार्य किया है जिसमें श्रम या कौशल का उपयोग हुआ है, तो किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, निक्षेपिती को ऐसा माल अपने पास तब तक रोकने का अधिकार है जब तक उसे प्रदान की गई सेवाओं का पारिश्रमिक नहीं मिल जाता।

सामान्य पूर्वाधिकार: बैंकर, आढ़तिया, घाटपाल, हाईकोर्ट के अटार्नी, पालिसी दलाल को, किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, किसी भी बकाया राशि की वसूली के लिए निक्षिप्त माल को रोके रखने का अधिकार होता है। परन्तु कोई अन्य व्यक्ति इस प्रकार से निक्षिप्त माल को तब तक बकाया राशि के लिए नहीं रोक सकता जब तक कि इस संबंध में स्पष्ट रूप से अनुबंध न हो।

आढ़तिया (factor): ऐसा एजेंट जिसे प्रधान ने माल बेचने के लिए माल पर कब्जा दिया है।

व्यापारिक एजेंट: ऐसा एजेंट, जिसे व्यापार के सामान्य अनुक्रम में कार्य करते हुए, माल बेचने, खरीदने या माल की जमानत पर ऋण लेने का अधिकार होता है।

घाटपाल (Wharfinger): पानी के निकट का ऐसा स्थान जिस पर से माल को लादा या उतारा जाता है, उसे घाट कहते हैं। घाटपाल वह व्यक्ति है जो उस घाट का स्वामी है या प्रबन्धक है।

गिरवी: यह विशेष प्रकार का निक्षेप है जिसमें किसी ऋण की अदायगी या वचन के पालन की जमानत के लिए माल निक्षेप किया जाता है।

10.21 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 इस इकाई के 10.3 को पढ़िए।

2 नहीं

3 i) सही, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत, vi) गलत

ख 1 इस इकाई का 10.5 पढ़िए।

2 i) प्रकट करे, ii) ठीक हालत, iii) दूरदर्शिता, iv) वृद्धि, v) पूर्वाधिकार, vi) हर्जाना

3 इस इकाई का 10.8 पढ़िए।

ग 1 i) माल पाने वाला, ii) खर्चों, iii) मुकदमा, iv) प्रकृति, v) मृत्यु

2 i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) गलत

घ 1 इस इकाई का 10.16 पढ़िए।

2 i) सही, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) सही, vi) गलत, vii) सही

10.22 स्वपरख प्रश्न

1 निक्षेप के आवश्यक तत्वों की व्याख्या कीजिए तथा निक्षेपिती के अधिकार व कर्तव्य बताइए।

2 निक्षेपक के अधिकार एवं कर्तव्यों की जांच कीजिए।

3 गिरवीकर्ता तथा गिरवीग्राही के अधिकार व कर्तव्य बताइए।

4 पूर्वाधिकार से क्या तात्पर्य है? निक्षेपिती के विशिष्ट पूर्वाधिकार और सामान्य पूर्वाधिकार की व्याख्या कीजिए।

5 गिरवी से क्या आशय है? इसके आवश्यक लक्षण बताइए।

6 वे परिस्थितियाँ बताइए जबकि माल का अस्वामी भी वैध गिरवी कर सकता है।

7 माल पाने वाले व्यक्ति के अधिकार एवं कर्तव्यों की चर्चा कीजिए।

8 'व्यापारिक एजेंट द्वारा गिरवी' पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

नोट: इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 11 एजेंसी

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 एजेंसी अनुबंध क्या है ?
11.2.1 एजेंट कौन नियुक्त कर सकता है ?
11.2.2 एजेंट कौन हो सकता है ?
11.2.3 एजेंसी के लिए प्रतिफल
11.2.4 एजेंसी का निर्माण एवं कसौटी
11.3 एजेंट, नौकर तथा स्वतन्त्र ठेकेदार के बीच अन्तर
11.4 एजेंसी की स्थापना
11.5 पति-पत्नी के बीच एजेंसी सम्बन्ध
11.6 एजेंटों का वर्गीकरण
11.7 अधिकार का क्षेत्र एवं सीमा
11.8 एजेंट द्वारा अधिकारों का प्रत्यायोजन
11.9 उप-एजेंट तथा स्थानापन्न एजेंट
11.10 पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी
11.11 एजेंट के अधिकार
11.12 एजेंट के कर्तव्य
11.13 एजेंट का व्यक्तिगत दायित्व
11.14 तीसरे पक्षकारों के प्रति प्रधान का दायित्व
11.15 एजेंसी की समाप्ति
11.16 अखंडनीय एजेंसी
11.17 सारांश
11.18 शब्दावली
11.19 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.20 स्वपरख प्रश्न

11.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि

- एजेंट की परिभाषा दे सकें और एजेंट, नौकर एवं स्वतन्त्र ठेकेदार में अन्तर, तथा एजेंट के विभिन्न प्रकारों का अर्थ बता सकें।
- यह बता सकें कि एजेंसी की स्थापना कैसी होती है तथा एजेंट अपने अधिकार कब हस्तांतरित कर सकता है।
- एजेंट के अधिकार, कर्तव्य एवं अधिकार की सीमा का वर्णन कर सकें।
- उन परिस्थितियों का वर्णन कर सकें जब एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है तथा तीसरे पक्षकारों के प्रति प्रधान के दायित्व की सीमा बता सकें।
- यह बता सकें कि एजेंसी को कैसे समाप्त किया जा सकता है।

11.1 प्रस्तावना

आधुनिक व्यावसायिक संगठन की एक महत्वपूर्ण विशेषता मध्यस्थों की उत्पत्ति, विकास एवं महत्व है। आधुनिक व्यावसायिक संगठन में किसी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं रह गया कि वह सभी कार्य स्वयं कर ले। अतः यह आवश्यक है कि वह अपने कामों को किसी अन्य व्यक्ति से करवाने के लिए उसे अधिकार सौंपे। ऐसे अन्य व्यक्ति को 'एजेंट' कहते हैं तथा

जिस अनुबंध के द्वारा उसे नियुक्त किया जाता है उसे 'एजेंसी का अनुबंध' कहते हैं। एजेंसी सम्बन्धित कानून इस सिद्धान्त पर आधारित है कि "जो कार्य कोई व्यक्ति किसी दूसरे से कराता है, उसे वह स्वयं करता है"।

इस इकाई में आप एजेंसी का अर्थ, एजेंसी की स्थापना, एजेंट के अधिकार एवं कर्तव्य, एजेंट द्वारा अधिकारों का हस्तांतरण और उप-एजेंट तथा स्थानापन्न एजेंट में अन्तर के बारे में अध्ययन करेंगे। आप तीसरे पक्षकारों के प्रति एजेंट व प्रधान के दायित्वों के सम्बन्ध में तथा एजेंसी को समाप्त करने के तरीकों के बारे में भी पढ़ेंगे।

11.2 एजेंसी अनुबंध क्या है ?

अनुबंध अधिनियम की धारा 182 के अनुसार, "**एजेंट एक ऐसा व्यक्ति है जो किसी अन्य व्यक्ति की ओर से कार्य करने के लिए या अन्य व्यक्तियों के साथ किए गये व्यवहारों में प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया जाता है। जिस व्यक्ति के लिए कार्य किया जाता है, या जिसका इस प्रकार प्रतिनिधित्व किया जाता है, उसे 'प्रधान' (principal) कहते हैं**। अतः इस परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रधान तथा तीसरे पक्षकारों को जोड़ने की कड़ी के समान एजेंट होता है। केवल इसी आधार पर कि एक व्यक्ति किसी दूसरे को व्यापार से सम्बन्धित मामलों पर सलाह देता है, वह दूसरे का एजेंट नहीं बन जाता। कम्पनी के प्रवर्तक (promoter) की स्थिति कम्पनी के एजेंट की नहीं होती क्योंकि वह जिस कम्पनी के लिए कार्य करता है अभी तो उसकी स्थापना होनी बाकी है। कोई व्यक्ति जब किसी दूसरे व्यक्ति को अपनी ओर से धन विनियोजित करने तथा देनदारों के साथ अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त करता है, तो धारा 182 की परिभाषा के अन्तर्गत, ऐसे व्यक्ति को एजेंट माना जाता है (हरबंस लाल बनाम प्रोडयूसर एक्सचेंज कार्पोरेशन)। क्योंकि एजेंट की नियुक्ति प्रधान एवं तीसरे पक्षकारों में अनुबंध कराने के लिए की जाती है, अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि प्रधान तथा तीसरा पक्षकार, दोनों ही अनुबंध करने के योग्य हों।

11.2.1 एजेंट कौन नियुक्त कर सकता है ?

धारा 183 में इस प्रकार बताया गया है: **कोई भी व्यक्ति, जो उस पर लागू होने वाले कानून के अनुसार वयस्क हो, और जो स्वस्थ मस्तिष्क वाला हो, एजेंट नियुक्त कर सकता है**। अतः अवयस्क तथा अस्वस्थ मस्तिष्क वाला व्यक्ति प्रधान के रूप में कार्य नहीं कर सकता। यद्यपि इस धारा के द्वारा अवयस्क को एजेंट नियुक्त करने से रोका गया है परन्तु अवयस्क का संरक्षक, अवयस्क के लिए एजेंट नियुक्त कर सकता है **(मदनलाल बनाम भेरूलाल)**।

11.2.2 एजेंट कौन हो सकता है ?

इस प्रश्न का उत्तर धारा 184 में दिया गया है। इसके अनुसार, **प्रधान और तीसरे पक्षकारों में सम्बन्ध स्थापित करने के लिए कोई भी व्यक्ति एजेंट बन सकता है, परन्तु कोई भी ऐसा व्यक्ति जो वयस्क नहीं है और स्वस्थ मस्तिष्क का नहीं है वह एजेंट नहीं बन सकता तथा वह यहाँ बताए गये प्रावधानों के अन्तर्गत अपने कार्यों के लिए प्रधान के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है**। इस धारा से यह स्पष्ट है कि प्रधान और तीसरे पक्षकारों के बीच, कोई भी व्यक्ति एजेंट बन सकता है। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या अवयस्क या पागल व्यक्ति एजेंट बन सकता है ? इसका उत्तर 'हाँ' है। इस धारा की भाषा से यह प्रकट होता है कि अवयस्क या पागल व्यक्ति को एजेंट नियुक्त किए जाने से रोका नहीं गया है। परन्तु सतर्कता की दृष्टि से उन्हें एजेंट नियुक्त नहीं करना चाहिए, क्योंकि यदि प्रधान उन्हें अपना एजेंट नियुक्त करता है तो वह बहुत बड़ा जोखिम उठाता है। क्योंकि ऐसा अयोग्य व्यक्ति जो भी कार्य करेगा, उनसे प्रधान तो बाध्य होगा परन्तु वह एजेंट के दुराचार या लापरवाही के लिए उसके (एजेंट) विरुद्ध कोई भी कार्यवाही नहीं कर सकेगा। अतः, किसी भी व्यक्ति को एजेंट नियुक्त किया जा सकता है। उदाहरणार्थ A, एक प्रधान 11,000 रुपये मूल्य वाली अपनी हीरे की अंगूठी एक अवयस्क एजेंट B को सुपुर्द करता है और एजेंट को निर्देश देता है कि वह इसे 9,000 रुपये से कम में या उधार में नहीं बेचे। यदि B उस अंगूठी

को C को 5,000 रुपये में उधार बेच देता है, तो यह व्यवहार A और C के बीच बाध्य होगा, परन्तु A, B के दुराचार के कारण हुई हानि के लिए उसके विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सकेगा, क्योंकि B अवयस्क है। लेकिन यदि इस उदाहरण में B वयस्क होता, तो वह दुराचार के कारण A को हुई हानि के लिए हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी होता।

11.2.3 एजेंसी के लिए प्रतिफल

यह तो आप पढ़ ही चुके हैं कि प्रत्येक अनुबंध की वैधता के लिए प्रतिफल अवश्य ही होना चाहिए तथा प्रतिफल का हानि के रूप में होना अनुबंध के लिए पर्याप्त है। धारा 185 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि **एजेंसी का निर्माण करने के लिए प्रतिफल होना आवश्यक नहीं है।** प्रधान द्वारा एजेंट के कार्यों से आबद्ध होना स्वीकार करना ही प्रधान के लिए पर्याप्त हानि है। इसलिए अलग से प्रतिफल होना आवश्यक नहीं है। उदाहरणार्थ, जब A, B को एजेंट नियुक्त करता है तो A का कारोबार B के हाथ में आ जाता है और A को हानि होती है, अत: एजेंट को पारिश्रमिक के रूप में और कोई प्रतिफल देना आवश्यक नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि एजेंसी, निशुल्क भी हो सकती है तथा नि:शुल्क एजेंट भी अनुबंधों से उसी तरह बाध्य होता है जैसे कि शुल्क सहित एजेंट होता है।

11.2.4 एजेंसी का निर्माण एवं कसौटी

प्रधान एवं एजेंट के सम्बन्ध इस प्रकार स्थापित किए जा सकते हैं: (i) प्रधान द्वारा स्पष्ट रूप से नियुक्ति या प्रधान द्वारा प्राधिकृत किसी व्यक्ति के द्वारा नियुक्ति; (ii) पक्षकारों के आचरण या परिस्थितियों को देखते हुए कानून के आशय द्वारा या मामले की आवश्यकता के अनुसार; या (iii) प्रधान की ओर से किए गये कार्यों का बाद में उसके द्वारा पुष्टिकरण करके। जहाँ तक एजेंसी की कसौटी का प्रश्न है, हमें प्रयोग किए गये शब्दों को नहीं बल्कि सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उनकी वास्तविक स्थिति को देखना चाहिए। एजेंसी की निर्णायक कसौटी यह है कि उसके कार्यों से प्रधान बाध्य होता है।

11.3 एजेंट, नौकर एवं स्वतन्त्र ठेकेदार के बीच अन्तर

एजेंट और नौकर में बहुत अधिक समानताएँ हैं क्योंकि दोनों की ही नियुक्ति प्रधान के लिए और प्रधान की ओर से कार्य करने के लिए की जाती है। परन्तु इन दोनों में भारी अन्तर है। एजेंट अपने प्रधान और तीसरे पक्षकारों के मध्य अनुबंधात्मक सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार रखता है, जबकि एक नौकर को साधारणत: यह अधिकार प्राप्त नहीं होता। आमतौर से नौकर एक ही मालिक के लिए काम करता है परन्तु एजेंट एक ही समय में कई प्रधानों के लिए कार्य कर सकता है। नौकर को साधारणत: वेतन या मज़दूरी दी जाती है, जबकि एजेंट को कमीशन के आधार पर पारिश्रमिक दिया जा सकता है। इस प्रकार आपने देखा कि एजेंट, नौकर नहीं होता।

जहाँ तक स्वतन्त्र ठेकेदार का प्रश्न है, उसे एक निर्धारित कार्य को पूर्ण करने के लिए नियुक्त किया जाता है परन्तु वह नियोक्ता की देख रेख या नियन्त्रण में काम नहीं करता बल्कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करता है। एजेंट, प्रधान के निरीक्षण और नियन्त्रण में कार्य करता है। एजेंट प्रधान का प्रतिनिधित्व करता है तथा वह अपने कार्यों से प्रधान को आबद्ध करता है परन्तु ठेकेदार स्वतन्त्र होता है वह अपने कार्यों से नियोक्ता को आबद्ध नहीं कर सकता।

11.4 एजेंसी की स्थापना (Creation of Agency)

प्रधान और एजेंट के मध्य सम्बन्ध, निम्नलिखित किसी भी तरीके से स्थापित किया जा सकता है:

1. स्पष्ट करार,
2. निहित करार,

3 पुष्टीकरण, तथा
4 कानून का प्रवर्तन

सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए चित्र 11.1 देखिए।

चित्र 11.1

एजेंसी की स्थापना

- स्पष्ट करार
- निहित करार
  - विबन्धन द्वारा
  - प्रदर्शन द्वारा
  - आवश्यकता द्वारा
- पुष्टीकरण
- कानून का प्रवर्तन

आईए, अब इनका एक-एक करके विस्तार में अध्ययन करते हैं।

1 **स्पष्ट करार (Express agreement) :** जब एजेंट अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्य करता है तो उसके कार्यों से प्रधान एवं तीसरे पक्षकार बाध्य होते हैं। एजेंट को जिस अनुबंध के द्वारा नियुक्त किया गया है वह उस अनुबंध से अधिकार प्राप्त करता है। यह अनुबंध स्पष्ट या निहित हो सकता है। अधिनियम की धारा 186 में बताया गया है कि "**एजेंट का अधिकार स्पष्ट या निहित हो सकता है।** धारा 187 में बताया गया है कि **जब बोलकर या लिखकर अधिकार दिया जाता है, तो इसे स्पष्ट अधिकार कहते हैं।** जब मामले की परिस्थितियों से आभास होता हो और बोल कर या लिखकर या व्यवहार के सामान्य अनुक्रम के आधार पर, अधिकार दिया गया प्रतीत होता हो, तो इन बातों को देखते हुए इसे निहित अधिकार कहा जाता है। उदाहरण, A दिल्ली में रहता है लेकिन बम्बई में उसका कृषि-फार्म है। A, एक मुख्तारनामे (power of attorney) के द्वारा, कृषि-फार्म की देखभाल करने के लिए B को नियुक्त करता है। इस स्थिति में A और B के बीच स्पष्ट करार (मुख्तारनामा) के द्वारा प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध स्थापित हुआ।

2 **निहित एजेंसी** (Implied agency) : धारा 187 में आप पढ़ चुके हैं कि जब मामले की परिस्थितियों से, उनके व्यवहार से या व्यवहार के सामान्य अनुक्रम से अधिकार दिया जाता है तो उसे निहित एजेंसी कहते हैं। उदाहरण, A के पास एक मोटर कार है परन्तु वह उसे चला नहीं सकता। वह अपने पड़ोसी B को कार चलाने की अनुमति देता है। A के साथ बैठकर जब B कार चला रहा था तो र्घटनाग्रस्त हो जाती है तथा C को चोट लगती है। C हर्जाने के लिए A पर मुकदमा कर सकता है क्योंकि B उसका (A) निहित एजेंट है। आइए एक अन्य उदाहरण लेते हैं। A और B दो भाई हैं, A दिल्ली में रहता है व B कानपुर में। B का दिल्ली में एक फ्लैट है। B की जानकारी से A उस फ्लैट को किराए पर दे देता है। A किराया वसूल करके B को भेजता रहता है तथा B किराया स्वीकार करता रहता है। इस स्थिति में यद्यपि B ने स्पष्ट रूप से A को एजेंट नियुक्त नहीं किया है, परन्तु उसे निहित एजेंट माना जाएगा। निहित एजेंसी में निम्नलिखित शामिल हैं: अ) विबन्ध द्वारा एजेंसी, ब) प्रदर्शन द्वारा एजेंसी, तथा स) आवश्यकता द्वारा एजेंसी।

अ) **विबन्ध द्वारा एजेंसी** (Agency by estoppel) : सर्वप्रथम हमें 'विबन्ध' शब्द का अर्थ ठीक से समझ लेना चाहिए। विबन्ध के नियम के अनुसार, जब कोई व्यक्ति अपने कथन या आचरण से किसी दूसरे व्यक्ति को यह विश्वास करने के लिए स्वेच्छा से प्रेरित करता है कि किन्हीं विशेष परिस्थितियों या तथ्यों का अस्तित्व है, और उस दूसरे व्यक्ति ने उस बात पर विश्वास करके कोई कार्य कर लिया है, तब यद्यपि वे परिस्थितियाँ वास्तव में विद्यमान नहीं थी फिर भी वह व्यक्ति ऐसे कथन या आचरण की सत्यता से इंकार नहीं कर सकता। इस प्रकार, जब कोई व्यक्ति अपने कथन या आचरण से किसी दूसरे व्यक्ति को यह विश्वास दिलाता है कि अमुक व्यक्ति उसका एजेंट है, तब वह बाद में उस व्यक्ति के एजेंट होने के तथ्य से इंकार नहीं कर सकता। उदाहरण, X, Z की उपस्थिति में और उसे सुनाते हुए Y से कहता है कि वह (X) Z का एजेंट है। Z मौन रहता है और वह इस कथन का खंडन नहीं करता। बाद में, Y, सत्यनिष्ठा में X को Z का एजेंट समझते हुए, X से एक अनुबंध कर लेता है। Z इस अनुबंध से बाध्य होगा तथा Z और Y के बीच मुकदमे में, Z को

यह कहने की अनुमति नहीं होगी कि X उसका एजेंट नहीं है, जबकि वास्तव में X, Z का एजेंट नहीं है।

अधिनियम की धारा 237 में विबन्ध द्वारा एजेंसी की बात कही गई है। इसके अनुसार, **जब एजेंट ने बिना अधिकार के, अपने प्रधान की ओर से कुछ कार्य कर लिए हैं या अन्य व्यक्तियों के प्रति दायित्व ले लिए हैं, तब यदि प्रधान ने अपने शब्दों या आचरण से इन तीसरे पक्षकारों को यह विश्वास करने के लिए प्रेरित किया हो कि ऐसे कार्य या दायित्व एजेंट के अधिकार क्षेत्र में थे, तो प्रधान ऐसे कार्यों और दायित्वों से आबद्ध होता है।**

ब) **प्रदर्शन द्वारा एजेंसी** (Agency by holding out): प्रदर्शन द्वारा एजेंसी वास्तव में विबन्ध द्वारा एजेंसी का एक स्वरूप है। इस स्थिति में, तथाकथित प्रधान किसी निश्चयात्मक या सकारात्मक आचरण करके दूसरे व्यक्ति को यह विश्वास करने के लिए प्रेरित करता है कि कार्य करने वाले व्यक्ति ने उससे अधिकार प्राप्त करके वह कार्य किया है। उदाहरण, A अपने नौकर को पास की दुकान से माल उधार खरीदने की अनुमति देता है और बाद में वह (A) खरीदे गये माल की कीमत भी अदा कर देता है। कुछ समय पश्चात्, जब वह नौकर A के यहाँ नौकरी छोड़ चुका था, वह (नौकर) उस दुकान से A के नाम में कुछ माल उधार खरीद लेता है। दुकानदार माल की कीमत A से वसूल कर सकता है, क्योंकि पहले कई बार A ने नौकर को अपना एजेंट प्रदर्शित किया था, अत: उन्हीं परिस्थितियों में बाद के व्यवहार के लिए A उत्तरदायी होगा।

स) **आवश्यकता द्वारा एजेंसी** (Agency by necessity): कई बार विशेष परिस्थितियों में कानून एक व्यक्ति को, दूसरे व्यक्ति की सहमति की प्रतीक्षा किए बिना भी, एजेंट बनने का अधिकार देता है। परन्तु, आवश्यकता द्वारा एजेंसी मान लेने से पहले, निम्नलिखित शर्तों को पूर्ण करना आवश्यक होता है:

(i) प्रधान की ओर से कार्य करना वास्तव में निश्चित रूप से आवश्यक होना चाहिए,
(ii) उपलब्ध समय के भीतर प्रधान से सम्पर्क करना असम्भव होना चाहिए,
(iii) एजेंट के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति को सद्भावना से कार्य करना चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में, प्रधान एजेंट के कार्यों से आबद्ध होता है। उदाहरणार्थ, बम्बई से कुछ दूध दिल्ली भेजा गया। दूध लाने वाला टैंकर दुर्घटनाग्रस्त हो गया। दूध के नाशवान प्रकृति के होने के कारण, वाहक ने उसे बेच दिया। दूध की यह बिक्री प्रधान पर बाध्य होगी। इस स्थिति में मालवाहक 'आवश्यकता द्वारा एजेंट' बन गया।

आवश्यकता द्वारा एजेंसी के परंम्परागत उदाहरण हैं, आपातकाल में जहाज़ के कप्तान को कार्य करने का अधिकार है तथा बिल के स्वीकर्ता को यह अधिकार है कि वह उस पक्ष से प्रतिपूर्ति प्राप्त करे जिसे उसने भुगतान किया है।

पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी (Agency by ratification): पुष्टीकरण से हमारा तात्पर्य है जब किसी व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति की जानकारी या अधिकार के बिना उसकी ओर से कुछ कार्य कर लिए हैं, तो वह दूसरा व्यक्ति उन कार्यों का पुष्टीकरण कर सकता है या उन्हें अस्वीकार कर सकता है। यदि वह उन कार्यों का पुष्टीकरण करता है तो उसके वही परिणाम होंगे जैसे कि वे कार्य उसके अधिकार से किए गये थे। पुष्टीकरण या तो स्पष्ट हो सकता है या जिस व्यक्ति के लिए कार्य किए गये हैं उसके आचरण में निहित हो सकता है। उदाहरणार्थ A से अधिकार प्राप्त किए बिना, उसका भाई B कुछ धनराशि C को उधार देता है। बाद में ऋण की राशि पर C ब्याज A को अदा करता है और A इसे स्वीकार कर लेता है। A के आचरण से स्पष्ट है कि उसने ऋण देने के कार्य को स्वीकार कर लिया है और यहाँ यह माना जा सकता है कि उसके (A) भाई B का अचरण ठीक उसी तरह से वैध है जैसे कि यह कार्य A से अधिकार मिलने पर किया गया है। इस प्रकार की एजेंसी को 'पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी' कहते हैं।

पुष्टीकरण का प्रभाव (Effect of ratification): पुष्टीकरण का यह प्रभाव है कि एजेंट द्वारा अधिकारों के बिना किए गये कार्यों को प्रधान पर उसी तरह आबद्ध करना है जैसे कि वे कार्य प्रधान के अधिकार से किए गये थे। वास्तव में पुष्टीकरण उस पूर्व तिथि से लागू होता है जबकि एजेंट ने वह कार्य किया है न कि प्रधान द्वारा पुष्टीकरण की तिथि से।

4 **कानून के प्रवर्तन द्वारा** (By operation of law): एजेंसी स्थापित करने का एक अन्य तरीका कानून के प्रवर्तन द्वारा हैं। कुछ विशेष परिस्थितियों में, कानून एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति का एजेंट मान लेता है। इसे एक उदाहरण से अच्छी तरह से स्पष्ट किया जा सकता है —जब साझेदारी का निर्माण किया जाता है, तो कानून के प्रवर्तन द्वारा प्रत्येक साझेदार स्वत: दूसरे साझेदारों का एजेंट बन जाता है।

11.5 पति-पत्नी के बीच एजेंसी सम्बन्ध

विवाह के द्वारा प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध स्थापित नहीं होता। पति को अपने कार्यों से आबद्ध करने के लिए पत्नी के लिए यह आवश्यक है कि या तो उसे पति से स्पष्ट अधिकार प्राप्त हुए हों या पति के आचरण से निहित अधिकार मिले हों। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए:

i) यदि पति-पत्नी साथ-साथ रहते हैं तथा पत्नी पर घर की देख-भाल करने का दायित्व है, तब पत्नी को अपने पति की साख पर जीवन की आवश्यक वस्तुओं को उधार खरीदने का निहित अधिकार माना जाता है (Debenham Vs. Mellon)। परन्तु निम्नलिखित परिस्थितियों में इन मान्यताओं से बचा जा सकता है:

   अ) जब पति ने पत्नी को कोई भी वस्तु उधार खरीदने या ऋण लेने के सम्बन्ध में स्पष्ट मनाही कर दी है;

   ब) जब उधार गई वस्तुएँ 'आवश्यक वस्तुएँ' नहीं हैं,

   स) जब पत्नी को आवश्यक वस्तुएँ खरीदने के लिए पर्याप्त धनराशि दी जाती है तथा उसे पति की साख को गिरवी रखने से मना किया गया है (Movel Bros Vs. Westmoveland), या जब उसे पर्याप्त राशि दी जाती है, या पत्नी के अपने स्वतन्त्र साधन हैं, धन के रूप में या उसकी अर्जित क्षमता के रूप में (Biberfeld Vs. Bevens) ;

   द) जब पत्नी को उधार न देने के सम्बन्ध में व्यापारियों को स्पष्ट रूप से चेतावनी दे दी गयी है।

ii) जब न्यायसंगत कारणों की वजह से पत्नी को पति से अलग रहना पड़ता है तो कानून की दृष्टि में उसके भरण-पोषण का दायित्व पति का होता है तथा उस अवधि में उसके भरण-पोषण के बिलों का भुगतान करने के लिए पति उत्तरदायी होता है। परन्तु जब बिना किसी उचित कारण पत्नी अलग रहती है, तब आवश्यक वस्तुओं के लिए भी वह अपने पति की साख पर उधार नहीं ले सकती।

11.6 एजेंटों का वर्गीकरण

एजेंटों को कई तरह से वर्गीकृत किया जा सकता है। उन्हें सौंपे गये अधिकारों की दृष्टि से, उन्हें सामान्य एजेंट (general agent) या विशिष्ट एजेंट (special agent) कहा जा सकता है। सामान्य एजेंट को किसी व्यापार या पेशे से सम्बन्धित सभी कार्यों को करने का अधिकार होता है या उसके व्यापार या पेशे के सामान्य संचालन के लिए कुछ कार्य करने का अधिकार होता है, जबकि विशिष्ट एजेंट को किसी विशेष सौदे को करने का अधिकार दिया जाता है। उदाहरण के लिए, जब किसी एजेंट को कोई कार या मकान बेचने के लिए नियुक्त किया जाता है। विशिष्ट एजेंट के अधिकार केवल उसी कार्य विशेष तक ही सीमित होते हैं तथा जब वह कार्य पूर्ण हो जाता है तो विशिष्ट एजेंट का अधिकार भी समाप्त हो जाता है। अत: ऐसे एजेंटों से व्यवहार करने वाले तीसरे पक्षकारों को उनके प्रधान से एजेंट के अधिकारों की सीमा के बारे में पूछताछ कर लेनी चाहिए। इसके विपरीत सामान्य एजेंटों को व्यापार के सामान्य कार्य संचालन के लिए समस्त वैध कार्य करने का अधिकार होता है। यहाँ यह बात ध्यान रखनी चाहिए कि विशिष्ट एजेंट के विपरीत सामान्य एजेंट के अधिकार तब तक निरन्तर बने रहते हैं जब तक उ[illegible] समाप्त नहीं कर दिया जाता।

सामान्य एजेंट तथा पूर्णाधिकारी (universal) एजेंट में भी अन्तर होता है। पूर्णाधिकारी एजेंट ऐसे सब कार्य कर सकता है जिन्हें प्रधान कानूनी रूप से कर सकता है या सौंप सकता है। वह प्रधान के व्यापार से सम्बन्धित सभी प्रकार के कार्य करने के लिए अधिकृत होता है। उसे प्रधान को आबद्ध करने का असीमित अधिकार होता है।

एजेंटों के वर्गीकरण का सबसे महत्वपूर्ण आधार उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति है। उनका वर्गीकरण इस तरह किया जा सकता है: i) व्यापारिक एजेंट तथा ii) गैर-व्यापारिक एजेंट। व्यापारिक एजेंट भी कई प्रकार के हो सकते हैं, जैसे दलाल, आढ़तिया, नीलामकर्ता, आश्वासी (del credere) एजेंट, कमीशन एजेंट, इन्श्योरेंस एजेंट, बैंकर आदि। गैर-व्यापारिक एजेंट ये हैं —सम्पत्ति दलाल, मकानों के एजेंट, वकील, चुनाव एजेंट आदि। यहाँ हमारा सम्बन्ध मुख्यत: व्यापारिक एजेंटों से है।

दलाल (Broker) : जो दूसरों के लिए सौदा करता है तथा अपने कार्य के लिए दलाली के रूप में कमीशन प्राप्त करता है। यह ऐसा एजेंट है जिसका सामान्य कार्य ऐसे माल को खरीदने या बेचने का सौदा करना है जो उसके अधिकार या कब्ज़े में नहीं होता। यह अपने प्रधान के नाम से कार्य करता है।

आढ़तिया (Factor) : यह ऐसा एजेंट है जिसके अधिकार में माल होता है तथा जिसे वस्तुएँ या माल खरीदने, बेचने या माल की ज़मानत पर धन उधार लेने का अधिकार होता है। आढ़तिया, साधारणत: अपने नाम से माल बेचता है। उसे माल पर सामान्य पूर्वाधिकार प्राप्त होता है।

नीलामकर्ता (Auctioneer) : नीलामकर्ता ऐसा एजेंट है जिसे सार्वजनिक नीलामी में सबसे ऊँची बोली लगाने वाले व्यक्ति को माल बेचने के लिए, माल सुपुर्द किया जाता है। उसे माल का मूल्य प्राप्त करके माल की सुपुर्दगी देने का अधिकार होता है। वह अपने नाम से बेचे गये माल के मूल्य के लिए दावा भी कर सकता है। परन्तु आढ़तिये की तरह उसे सामान्य पूर्वाधिकार नहीं बल्कि अपने खर्चों के लिए केवल विशिष्ट पूर्वाधिकार प्राप्त है।

आश्वासी एजेंट (Del credere agent) : आश्वासी एजेंट ऐसा एजेंट होता है जो अतिरिक्त कमीशन के बदले, जिसे आश्वासनार्थ कमीशन कहते हैं, अपने प्रधान को इस बात की गारंटी देता है कि जिन व्यक्तियों के साथ वह अनुबंध करेगा, वे अपने वचन का पालन करेंगे। इस प्रकार से ऐसा एजेंट, बेचे गये माल के मूल्य के भुगतान की गारंटी अपने प्रधान को देता है।

कमीशन एजेंट (Commission agent) : ऐसा एजेंट जो अपने प्रधान के लिए माल खरीदता-बेचता है तथा अपनी सेवाओं के लिए कमीशन प्राप्त करता है। वास्तव में यह एजेंट की पृथक् श्रेणी नहीं है क्योंकि दलाल और आढ़तिए भी कमीशन एजेंट के रूप में कार्य कर सकते हैं।

बैंकर (Banker) : सामान्यत: बैंकर और ग्राहक का सम्बन्ध लेनदार और देनदार का होता है। लेकिन जब बैंक अपने ग्राहकों की ओर से चैकों की उगाही करता है या अपने ग्राहक की ओर से प्रतिभूतियाँ खरीदता-बेचता है, तब वह ग्राहक के एजेंट के रूप में कार्य करता है। बैंक को ग्राहक से बकाया सामान्य-राशि के लिए सामान्य पूर्वाधिकार (lien) का अधिकार प्राप्त है।

11.7 अधिकार का क्षेत्र एवं सीमा (Scope and Extent of Authority)

जिस कार्य को करने के लिए एजेंट की नियुक्ति की जाती है, उसे उस कार्य को करने के लिए सभी आवश्यक कार्य करने का अधिकार होता है। जब किसी व्यक्ति को किसी विशेष उद्देश्य या व्यापार के लिए एजेंट प्रदर्शित किया जाता है, तो उसके साथ व्यवहार करने वाले व्यक्तियों को यह मान लेने का अधिकार है कि एजेंट को ऐसे सब कार्य करने का अधिकार है जो उस व्यापार के लिए आववश्यक या प्रासंगिक हैं। ऐसे अधिकार को एजेंट के प्रत्यक्ष या दृश्यमान अधिकार कहते हैं। प्रधान और उसके एजेंट के मध्य हुए क़रार के द्वारा वास्तविक अधिकार निर्मित होते हैं। एजेंट के प्रत्यक्ष या दृश्यमान अधिकार ही वास्तव में उसके अधिकार क्षेत्र को निर्धारित करते हैं। प्रधान द्वारा एजेंट के दृश्यमान अधिकारों को सीमित

किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में भारतीय कानून की धारा 188 तथा 237 में दिया गया है। यह निम्न प्रकार है:

किसी कार्य को करने का अधिकार रखने वाले एजेंट को ऐसे समस्त वैध कार्य करने का अधिकार होता है जो उस कार्य को करने के लिए आवश्यक हों। किसी व्यापार को चलाने का अधिकार रखने वाले एजेंट को ऐसे समस्त वैध कार्य करने का अधिकार है जो उस व्यापार के लिए आवश्यक हैं या उस व्यापार के संचालन में प्राय: किए जाते हैं (धारा 188)। उदाहरणार्थ, A, B को जहाज़ बनाने के अपने व्यापार में एजेंट नियुक्त करता है। उस व्यापार का संचालन करने के लिए B इमारती लकड़ी तथा अन्य सामग्री खरीद सकता है और मज़दूरों को काम करने के लिए नियुक्त कर सकता है।

"जब एजेंट ने, बिना अधिकार के, प्रधान की ओर से कोई कार्य कर लिया है या तीसरे पक्षकारों के प्रति दायित्व ले लिया है, तब यदि प्रधान ने अपने शब्दों या आचरण से ऐसे तीसरे पक्षकारों को यह विश्वास करने के लिए प्रेरित किया है कि एजेंट के कार्य या दायित्व एजेंट के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत हैं, तब प्रधान ऐसे कार्यों या दायित्वों के लिए उत्तरदायी होता है (धारा 237)। उदाहरणार्थ, A कुछ माल बेचने के लिए B को प्रेषित करता है तथा एक निश्चित मूल्य से कम मूल्य पर माल बेचने से मना करता है। C, जिसे B के निर्देश की जानकारी नहीं है, वह B से वही माल निश्चित मूल्य से कम मूल्य पर खरीदने का अनुबन्ध करता है। A इस अनुबंध से बाध्य है।

यद्यपि, सामान्य परिस्थितियों में एजेंटों के अधिकारों का वर्णन धारा 188 में किया गया है, परन्तु आपातकालीन परिस्थितियों में उसके अधिकारों में विस्तार किया गया है। इस सम्बन्ध में धारा 189 में बताया गया है, **"आपातकाल में, प्रधान को हानि से बचाने के लिए, एजेंट को वे समस्त कार्य करने का अधिकार होता है जिन्हें एक सामान्य बुद्धिवाला व्यक्ति समान परिस्थितियों में स्वयं अपने लिए करता।"** ऐसी परिस्थितियों में यह माना जाता है कि एजेंट को आवश्यकता पड़ने पर अधिकार दिए गये हैं। सिम्स एण्ड क. बनाम मिडलेंड रेल्वे क. के मुकदमें में, मार्ग में देरी होने के कारण मक्खन के पूर्णत: नष्ट हो जाने का भय था। अत: रेलवे कम्पनी ने उसे सर्वोत्तम उपलब्ध मूल्य पर बेच दिया। यहाँ यह पाया गया कि प्रधान से निर्देश पाना एकदम असम्भव था, अत: इस बिक्री से प्रधान आबद्ध माना गया।

11.8 एजेंट द्वारा अधिकारों का प्रत्यायोजन (Delegation of Authority by Agent)

एजेंट, स्वयं ऐसा व्यक्ति है जिसे प्रधान से अधिकार प्रत्यायोजित हुए हैं, अत: वह प्रधान की अनुमति के बिना अपने अधिकारों को प्रत्यायोजित नहीं कर सकता। इसे लेटिन में इस प्रकार कहा गया है, 'delegatus non protest delegare' (प्रत्यायोजित अधिकारों का और आगे प्रत्यायोजन नहीं हो सकता)। इसका अर्थ है एक एजेंट अपने अधिकारों को और आगे प्रत्यायोजित नहीं कर सकता है अर्थात् जिस व्यक्ति को जो कार्य स्वयं करने के लिए लिया है, वह उस कार्य को किसी अन्य से नहीं करवा सकता। एजेंसी भरोसे व विश्वास पर आधारित है तथा किसी व्यक्ति को एजेंट इसी लिए नियुक्त किया जाता है कि उसकी इमानदारी व योग्यता में प्रधान को भरोसा है। अत: प्रधान की अनुमति के बिना, एजेंट किसी अन्य को अपने अधिकार प्रत्यायोजित नहीं कर सकता और अन्य व्यक्ति को वही कार्य करने के लिए नहीं कह सकता। इस नियम के निम्नलिखित अपवाद हैं:

i) जब एजेंट के कार्य ऐसे हैं जिनके लिए विशेष कौशल या विश्वास की आवश्यकता नहीं है तथा जिन्हें कोई भी व्यक्ति सन्तोषप्रद ढंग से कर सकता है;

ii) जब व्यापारिक प्रथा प्रत्यायोजन करने की अनुमति देती है;

iii) जब प्रधान को एजेंट के इरादे की जानकारी है कि वह अधिकारों का प्रत्यायोजन करेगा और प्रधान उसे ऐसा करने से नहीं रोकता है;

iv) जब व्यापार की प्रकृति ऐसी है कि प्रत्यायोजन आवश्यक है;

v) जब आपातकालीन परिस्थितियाँ प्रत्यायोजन को अनिवार्य बना देती हैं।

एजेंट ने जिन कार्यों को स्वयं करने का वचन स्पष्ट या निहित रूप से प्रधान को दिया हो उन्हें करने के लिए वह कानूनी रूप से किसी दूसरे व्यक्ति को नियुक्त नहीं कर सकता जब तक कि व्यापार की सामान्य प्रथा या एजेंसी की प्रकृति के अनुसार किसी उप एजेंट की नियुक्ति करनी आवश्यक न हो। कानूनी सलाहकार या एडवोकेट, अपने पेशे के रीति-रिवाज के अनुसार, किसी अन्य वकील को अपनी ओर से पैरवी करने के लिए नियुक्त कर सकता है। परन्तु ऐसे मामलों में जहाँ उसने स्पष्ट रूप से स्वयं पैरवी का वचन दिया है, वहाँ वह अधिकारों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता।

उप-एजेंसी (Sub-Agency)
जब मूल एजेंट को अधिकारों के प्रत्यायोजन करने का स्पष्ट या निहित अधिकार है और वह एजेंसी का काम-काज करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त करता है, तो ऐसा अन्य व्यक्ति उप-एजेंट कहलाता है। यदि वह मूल एजेंट के नियन्त्रण में काम करता है तो वह 'उप-एजेंट' कहलाता है और यदि मूल एजेंट के जाने के बाद उसके स्थान पर जो व्यक्ति एजेंसी का कार्य करता है, वह 'स्थानापन्न एजेंट' (substituted agent) कहलाता है।

प्रधान और उप-एजेंट के बीच सम्बन्ध (Relationship between principal and sub-agent): आपने पढ़ा कि कुछ परिस्थितियों में एजेंट, उप-एजेंट की नियुक्ति कर सकता है। ऐसी परिस्थितियों में उप-एजेंट के कार्यों से प्रधान आबद्ध होता है क्योंकि उप-एजेंट अपने कार्यों के लिए प्रधान के प्रति उत्तरदायी नहीं है बल्कि वह मूल एजेंट के प्रति होता है। कपट या जानबूझकर की गई गलती को छोड़कर प्रधान, उप-एजेंट के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सकता। जहाँ तक मूल एजेंट और उप-एजेंट के परस्पर सम्बन्धों का प्रश्न है, उनके बीच प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध होता है।

यदि उप-एजेंट की नियुक्ति उचित नहीं है तब उप-एजेंटों के कार्यों के लिए प्रधान आबद्ध नहीं होता है। ऐसी परिस्थिति में उप-एजेंट के कार्यों के लिए, प्रधान एवं तीसरे पक्षकारों के प्रति, मूल एजेंट ही व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। ऐसी परिस्थिति में प्रधान के प्रति उप-एजेंट का भी कोई दायित्व नहीं होता।

11.9 उप-एजेंट तथा स्थानापन्न एजेंट (Sub-Agent and Substituted Agent)

भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 191 में उप-एजेंट की परिभाषा इस प्रकार से की गई है: **"उप-एजेंट ऐसा व्यक्ति है जो एजेंसी के काम-काज में मूल एजेंट द्वारा नियुक्त किया जाता है तथा उसी के नियन्त्रण में काम करता है।"** धारा 194 के द्वारा स्थानापन्न एजेंट की परिभाषा इस प्रकार की गई है: **"जब एजेंट, एजेंसी के कारोबार में प्रधान की ओर से कार्य करने के लिए किसी दूसरे व्यक्ति को नामित करने का प्रत्यक्ष या निहित अधिकार रखता है और तदनुसार वह किसी दूसरे व्यक्ति को नामित कर देता है तो ऐसा नामित व्यक्ति, उसे सौंपे गये एजेंसी के कारोबार के सम्बन्ध में, प्रधान का उप-एजेंट नहीं बल्कि स्थानापन्न एजेंट होता है।"**

इस प्रकार इन दोनों में मुख्य अन्तर यह है कि मूल एजेंट न केवल उप-एजेंट की नियुक्ति करता है बल्कि उप-एजेंट उसके नियन्त्रण में काम करता है तथा उप-एजेंटों के कार्यों के लिए एजेंट स्वयं उत्तरदायी होता है, परन्तु स्थानापन्न एजेंट की स्थिति में, स्थानापन्न एजेंट नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति का नाम बताने या उसकी नियुक्ति हो जाने के साथ ही मूल एजेंट का कर्तव्य समाप्त हो जाता है। जैसे ही स्थानापन्न एजेंट की नियुक्ति कर दी जाती है, उसके और प्रधान के बीच तत्काल एजेंट व प्रधान के सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं तथा मूल एजेंट की भूमिका एकदम से समाप्त हो जाती है। स्थानापन्न एजेंट के नाम को सुझाते समय एजेंट का यह कर्तव्य है कि वह उतनी ही सावधानी से कार्य करे जितनी कि एक सामान्य बुद्धिवाला व्यक्ति स्वयं अपना कार्य करते समय होता है।

बोध प्रश्न क

1 'एजेंट' की परिभाषा कीजिए।

. . . .

. . . .

. . . .

2 'निहित एजेंसी' से क्या तात्पर्य है ?

. . . .

. . . .

. . . .

3 आपातकाल में क्या कोई एजेंट अपने अधिकार से अधिक कार्य कर सकता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

4 उप-एजेंट कौन होता है ?

. . . .

. . . .

. . . .

5 एजेंट के निहित अधिकार से क्या तात्पर्य है ?

. . . .

. . . .

. . . .

6 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) एजेंट, नौकर से भिन्न नहीं होता। . . . .

ii) नौकर, एक स्वतन्त्र ठेकेदार से भिन्न होता है। . . . .

iii) अवयस्क व्यक्ति एजेंट हो सकता है। . . . .

iv) एजेंसी का अनुबंध स्पष्ट तौर से किया जा सकता है, निहित ढंग से नहीं। . . . .

v) स्थानापन्न एजेंट और प्रधान में कोई अनुबंधात्मक संबंध नहीं होता। . . . .

vi) एजेंट के समस्त कार्यों के लिए प्रधान उत्तरदायी होता है। . . . .

vii) उप-एजेंट, सामान्यतः, प्रधान के सीधे नियन्त्रण में नहीं होता। . . . .

viii) निःशुल्क एज़ेंसी का अनुबंध अविधिमान्य होता है। . . . .

7 निम्नलिखित मामलों का आप किस प्रकार निर्णय करेंगे:

i) B, A की उपस्थिति में और उसे सुनाते हुए C से कहता है कि वह (B) A के कारोबार के लिए A का एजेंट है और A इस कथन का खंडन नहीं करता। बाद में C ईमानदारी से यह विश्वास करते हुए कि B, A का एजेंट है उसके साथ एक सौदा कर लेता है। क्या इस अनुबंध के अन्तर्गत प्रधान उत्तरदायी है, जबकि वास्तव में B, A का एजेंट नहीं है।

ii) A अपने एजेंट B को C से उधार माल खरीदने की अनुमति देता है। इस अधिकार का प्रयोग करते हुए B अपने निजी उपयोग के लिए C से कुछ माल उधार खरीद लेता है। क्या प्रधान A, C के प्रति उत्तरदायी है ?

iii) एक एडवोकेट A, अपने पेशे की प्रथा के अनुसार, एक अन्य वकील B को अपनी ओर से न्यायालय में पैरवी करने के लिए अधिकार प्रत्यायोजित करता है। तदनुसार B न्यायालय में पैरवी करता है। वह मुकदमा हार जाता है। इसके लिए मुवक्किल ने A को उत्तरदायी ठहराया। क्या A उत्तरदायी है ?

iv) Z किसी अन्य नगर में अपने वकील को यह आदेश देता है कि वह एक जायदाद एजेंट को नियुक्त करके उसका मकान बेच दे। आदेशानुसार वकील B का चुनाव करता है जो उस नगर का प्रमुख जायदाद एजेंट है। B अच्छी कीमत पर मकान बेच देता है, परन्तु B विक्रय से प्राप्त राशि Z को भेजने में देर करता है और इसी दौरान वह दिवालिया हो जाता है। इस हानि के लिए Z अपने वकील को उत्तरदायी ठहराता है। आप इस मामले का क्या निर्णय देंगे ? तर्क सहित उत्तर दीजिए।

11.10 पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी (Agency by Ratification)

कई बार कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से स्पष्ट या निहित अधिकार प्राप्त किए बिना उसकी ओर से कार्य कर सकता है। जिस व्यक्ति के नाम से ऐसा कार्य किया गया है, वह उस दूसरे व्यक्ति के ऐसे कार्यों को या तो अस्वीकार कर सकता है या उन्हें स्वीकार कर सकता है। जिस व्यक्ति के नाम से ऐसे कार्य किए गये हैं, जब वह उन्हें स्वीकार्य कर लेता है तो इसे "पुष्टीकरण" करना कहते हैं। उदाहरण, A, B के एजेंट के रूप में कार्य करता है यद्यपि A को B से ऐसा करने का कोई अधिकार पहले से प्राप्त नहीं था। जब B को पता चलता है तो वह A के ऐसे कार्यों को या तो अस्वीकार कर दे या उन्हें मान ले। अनाधिकृत कार्यों को बाद में पुष्टीकरण करने का यह प्रभाव होता है कि पक्षकार उसी स्थिति में पहुँच जाते हैं जिसमें कि वे होते यदि अनुबंध करते समय प्रधान की ओर से एजेंट को अधिकार दिए गये हैं। इसी प्रकार जब कोई एजेंट अपने अधिकारों से बाहर कोई कार्य करता है तो प्रधान उन्हें अस्वीकार कर सकता है या स्वीकार कर सकता है। यदि प्रधान, एजेंट के ऐसे कार्यों को स्वीकार कर लेता है, तो वह एजेंट के कार्यों के लिए उत्तरदायी हो जाता है। उदाहरण, A, B को गेहूँ खरीदने के लिए एजेंट नियुक्त करता है। गेहूँ खरीदने के साथ-साथ, B, A के लिए 10 बोरे चावल भी खरीद लेता है। बाद में, A चावल की सुपुर्दगी लेना भी स्वीकार कर लेता है। A चावल का मूल्य चुकाने के लिए बाध्य है। यह अनाधिकृत कार्यों के पुष्टीकरण का एक उदाहरण है। अनुबंध अधिनियम की धारा 196 में प्रावधान किया गया है, **जब किसी व्यक्ति ने किसी दूसरे व्यक्ति की जानकारी या अधिकार के बिना उसकी ओर से कोई कार्य कर लिया है तो ऐसा दूसरा व्यक्ति उन कार्यों का पुष्टीकरण करने या उन्हें अस्वीकार करने का हकदार होता है। यदि वह उनका पुष्टीकरण करता है तो उसके वही परिणाम होंगे जैसे कि वे कार्य उसके अधिकार से किए गए थे।** धारा 197 में आगे बताया गया है कि पुष्टीकरण या तो स्पष्ट हो सकता है अथवा जिस व्यक्ति की ओर से कार्य किए जाते हैं उसके आचरण में निहित हो सकता है। उदाहरण, A, B के अधिकार के बिना, उसके लिए माल खरीदता है। बाद में B उस माल को C को बेच देता है तथा विक्रय से प्राप्त धनराशि बैंक में अपने खाते में जमा कर देता है। B ने अपने आचरण से A के कार्य का पुष्टीकरण कर दिया। इस सम्बन्ध में आपको यह ध्यान देना चाहिए कि पुष्टीकरण उस पूर्व तिथि से लागू होता है जब एजेंट ने वह कार्य किया है अर्थात् पुष्टीकरण "पूर्व अधिकार" (prior authority) के समान होता है। अत: एजेंसी का सम्बन्ध उस समय से स्थापित हुआ माना जाता है जबकि एजेंट ने पहली बार कार्य किया है न कि उस समय से जब प्रधान ने पुष्टीकरण किया है। उदाहरण, **बोल्टन पार्टनर्स बनाम लैम्बर्ट** के मुकदमें में, एक कम्पनी के प्रबन्ध संचालक ने, कम्पनी से अधिकार प्राप्त किए बिना परन्तु कम्पनी की ओर से काम करते हुए, B के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। बाद में B ने प्रस्ताव का खंडन कर दिया, परन्तु कम्पनी ने प्रबन्ध संचालक की स्वीकृति का पुष्टीकरण कर दिया। निर्णय दिया गया क्योंकि पुष्टीकरण उस तिथि से लागू माना जाता है जब प्रबन्ध संचालक ने स्वीकृति दी, अत: B पुष्टीकरण से बाध्य है और वह अपने प्रस्ताव को वापस नहीं ले सकता।

वैध पुष्टीकरण के आवश्यक तत्व (Essentials of a Valid Ratification)

आपने यह पढ़ा कि पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी स्थापित की जा सकती है। परन्तु वैध पुष्टीकरण के लिए निम्नलिखित शर्तों का पूरा होना आवश्यक है:

1 **एजेंट किसी ऐसे अन्य व्यक्ति के लिए कार्य करे जिसे पहचाना जा सके:** अनुबंध करते समय एजेंट को स्पष्ट रूप से एजेंट के रूप में अनुबंध करना चाहिए। इसके अतिरिक्त अनुबंध में ऐसे प्रधान का नाम दिया जाना चाहिए जिसे पहचाना जा सके। उदाहरण, A, B की जानकारी या अधिकार के बिना स्वयं को B का एजेंट बताता है और C से 100 बोरे रूई की गांठे खरीदने का अनुबंध कर लेता है। बाद में रूई की गांठों के मूल्य में वृद्धि हो जाती है। B को जब यह पता चलता है कि उसके नाम से सौदा किया गया है तो वह इसका पुष्टीकरण कर देता है। C अनुबंध का पालन करने से मना कर देता है। B, C को अनुबंध का पालन करने के लिए बाध्य कर सकता है। यदि कथित एजेंट यह नहीं बताता कि वह किसी अन्य व्यक्ति के लिए कार्य कर रहा है यद्यपि उसके मन में यह विचार था कि वह प्रधान के लिए कार्य कर रहा है, तब ऐसे कार्यों का पुष्टीकरण नहीं किया जा सकता। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एजेंट द्वारा स्वयं अपने नाम से किए गये अनुबंधों का बाद में पुष्टीकरण नहीं किया जा सकता।

2 **प्रधान का अस्तित्व में होना:** वैध पुष्टीकरण के लिए यह आवश्यक है कि जिस समय प्रधान के नाम से कार्य किया जाता है उस समय प्रधान का अस्तित्व होना चाहिए। इस कारण से जब किसी नई कम्पनी के प्रवर्तक कम्पनी के अस्तित्व में आने से पहले, कम्पनी की ओर से कोई अनुबंध करते हैं, तो बाद में कम्पनी ऐसे अनुबंधों का पुष्टीकरण नहीं कर सकती, क्योंकि जिस समय अनुबंध किया गया था, उस समय कम्पनी (प्रधान) का अस्तित्व था ही नहीं।

3 **कार्य किए जाने के समय तथा पुष्टीकरण के समय प्रधान में अनुबंध करने की क्षमता होनी चाहिए:** वैध पुष्टीकरण के लिए यह भी आवश्यक है कि अनुबंध किए जाने के समय तथा पुष्टीकरण के समय प्रधान अनुबंध करने के योग्य होना चाहिए। आपको याद होगा कि अवयस्क अनुबंध करने के योग्य नहीं होता, अत: उसकी अवयस्कता के समय किए गये अनुबंधों को वह वयस्क होने पर पुष्टीकरण नहीं कर सकता।

4 **सभी महत्वपूर्ण तथ्यों की पूर्ण जानकारी:** जिस व्यक्ति की लेन देन के तथ्यों के बारे में जानकारी तत्वत: गलत हो वह कोई वैध पुष्टीकरण नहीं कर सकता (धारा 198)। अत: वैध पुष्टीकरण के लिए यह आवश्यक है कि पुष्टीकरण करने वाले व्यक्ति को मामले के महत्वपूर्ण तथ्यों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, A दिल्ली में एक मकान उचित किराए पर लेने के लिए B को एजेंट नियुक्त करता है। B स्वयं अपना ही मकान किराए पर दे देता है तथा यह किराया उस क्षेत्र में प्रचलित किराए से कहीं अधिक है। A उस मकान में रहना आरम्भ कर देता है। बाद में A को पता चलता है कि वह मकान B का है। A इस पुष्टीकरण से आबद्ध नहीं होगा।

5 **उचित समय के भीतर:** पुष्टीकरण बिना किसी अनुचित देर के किया जाना चाहिए। यदि उचित समय के भीतर पुष्टीकरण नहीं किया जाता तो यह बाध्यकारी नहीं होता।

6 **सम्पूर्ण संव्यवहार का पुष्टीकरण किया जाना चाहिए:** सम्पूर्ण संव्यवहार का पुष्टीकरण किया जाना चाहिए। पुष्टीकरण करने वाला व्यक्ति यह नहीं कर सकता कि जो भाग लाभकारी है उसकी पुष्टि कर दे तथा शेष भाग को अस्वीकार कर दे। जब कोई व्यक्ति अनधिकृत कार्य के किसी एक भाग की पुष्टि करता है तो इसे सम्पूर्ण संव्यवहार की पुष्टि मानी जाती है (धारा 199)।

7 **तीसरे पक्ष को हानि नहीं होनी चाहिए:** धारा 200 के द्वारा पुष्टीकरण करने वाले व्यक्ति की पुष्टि करने की शक्ति को सीमित किया गया है। इसके अनुसार, जब दूसरे व्यक्ति से अधिकार प्राप्त किए बिना, कोई व्यक्ति उसकी ओर से कार्य करता है, जो यदि अधिकार प्राप्त करके किए जाते तो उनको पुष्टि करने के परिणामस्वरूप किसी तीसरे पक्षकार को हर्जाना देना पड़ता या उसका कोई अधिकार या हित समाप्त होता, तो ऐसे कार्यों की पुष्टि नहीं की जा सकती।

उदाहरण की उदाहरणार्थ,

i) B की एक गाय A के कब्ज़े में है। C, B से अधिकार प्राप्त किए बिना, B की ओर से गाय वापस कर देने की मांग करता है। A, C को गाय वापस देने से मना कर देता है।

B, C की मांग का पुष्टीकरण नहीं कर सकता क्योंकि ऐसा करके वह A को गाय की वापसी मना कर देने के लिए उत्तरदायी बना सकता है।

ii) A, B की भूमि को पट्टे पर ले रखा है, जिसे तीन महीने का नोटिस देकर समाप्त किया जा सकता है। एक अप्राधिकृत व्यक्ति C पट्टे की समाप्ति की नोटिस A को दे देता है। A को इस नोटिस से आबद्ध करने के लिए, B इस नोटिस की पुष्टि नहीं कर सकता।

8 **पुष्टि किए जाने वाला कार्य वैध होना चाहिए:** केवल वैध तथा न्यायपूर्ण कार्यों की ही पुष्टि की जा सकती है। ऐसे कार्य जो व्यर्थ हैं या अवैधानिक या गैर कानूनी हैं, उनकी पुष्टि नहीं की जा सकती। उदाहरण, A ने B के जाली हस्ताक्षर करके बैंक से कुछ धनराशि निकाल ली। बाद में B, A के धनराशि निकालने के कार्य की पुष्टि करता है। यह पुष्टीकरण वैध नहीं है क्योंकि जालसाज़ी एक अपराध है।

9 **पुष्टि किए जाने वाला कार्य प्रधान के अधिकार में होना चाहिए:** प्रधान केवल उन्हीं कार्यों की पुष्टि कर सकता है जिन्हें करने का उसे स्वयं अधिकार है। अत: ऐसे किसी भी कार्य की पुष्टि नहीं की जा सकती जो प्रधान के अधिकार क्षेत्र से बाहर है। उदाहरणार्थ, यदि कम्पनी के संचालक कम्पनी की ओर से ऐसा कोई कार्य करते हैं जो कम्पनी के अधिकार से बाहर है, तो प्रधान (कम्पनी) उस कार्य की पुष्टि नहीं कर सकता।

इसके अतिरिक्त, पुष्टीकरण को वैध बनाने के लिए इसकी सूचना सम्बन्धित पक्षकारों को दे दी जानी चाहिए।

11.11 एजेंट के अधिकार

एजेंट के निम्नलिखित अधिकार हैं।

1 **पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार** (Right to receive remuneration) : यह तो आपको ज्ञात ही है कि एजेंट ऐसा व्यक्ति है जिसे किसी अन्य की ओर से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है तथा सेवाओं के लिए वह पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार है। एजेंसी अनुबंध की शर्तों द्वारा पारिश्रमिक की राशि तय की जा सकती है। यदि कोई पारिश्रमिक निश्चित नहीं किया गया है तो एजेंट उचित पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार होता है। किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, एजेंट पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार केवल तभी बनता है जब उसने कार्य पूरा कर दिया हो। जब एजेंट वह कार्य कर देता है जिसे करने का उसने वचन दिया था, तब यदि वह अनुबंध अभी पूर्ण नहीं भी हुआ है तब भी एजेंट अपना पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार हो जाता है। उदाहरणार्थ, एक निर्यातक संस्था द्वारा विदेशों से आर्डर प्राप्त करने के लिए A को एजेंट नियुक्त किया गया। A ने फर्म के लिए कुछ आर्डर प्राप्त किए, परन्तु फर्म विघटित हो गई। यद्यपि A द्वारा प्राप्त आर्डरों का निष्पादन नहीं किया गया है फिर भी A कमीशन प्राप्त करने का हकदार है। धारा 219 के अनुसार, **किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में, जब तक कार्य पूरा नहीं हो जाता तब तक एजेंट पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार नहीं होता। परन्तु माल बेचकर प्राप्त हुई राशि को पारिश्रमिक प्राप्त करने के लिए रोक सकता है, भले ही उसे प्रेषित किया गया सारा माल न बिका हो, या कि विक्रय अभी पूर्ण नहीं हुआ हो।** अत: महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि कार्य कब पूरा माना जाता है? यह तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है और प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। परन्तु यह आवश्यक है कि संव्यवहार (कार्य) एजेंट के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रयत्नों का परिणाम होना चाहिए। उदाहरण, एक फैक्टरी का मालिक A, फैक्टरी के लिए कच्चा माल खरीदने के लिए B को एजेंट नियुक्त करता है। B कच्चे माल के सप्लायर का परिचय A से करा देता है। सप्लायर ने A से कुछ एडवांस धनराशि मांगी जिसे A पूरा नहीं कर सका। बाद में, A, सप्लायर से सीधा सम्पर्क करके कच्चा माल खरीदने का अनुबंध कर लेता है। B पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार है। परन्तु धारा 220 में बताया गया है कि एजेंसी के कारोबार के दौरान यदि एजेंट दुराचरण का दोषी है तो एजेंट उस भाग के लिए पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार नहीं होगा जिसमें दुराचरण किया गया है।

उदाहरणार्थ, A, B को C से 20,000 रुपये वसूल करने और उन्हें किसी अच्छी प्रतिभूति में विनियोजित करने के लिए नियुक्त करता है। B, C से रकम वसूल कर लेता है और उनमें से 15,000 रुपये तो अच्छी प्रतिभूति में विनियोजित कर देता है किन्तु 5,0001 रुपये ऐसी प्रतिभूति में विनियोजित कर देता है जिसके खराब होने के बारे में उसे जानकारी होनी चाहिए थी। इस पर A को 1,000 रुपये की हानि होती है। इस स्थिति में B 20,000 रुपये वसूल करने और 15,000 रुपये विनियोजित करने के सम्बन्ध में A से पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार है। परन्तु, वह 5,000 रुपये के विनियोग के लिए पारिश्रमिक पाने का हकदार नहीं है तथा वह A को हुई 1,000 रुपये की हानि की पूर्ति करेगा।

2 **रोकने का अधिकार** (Right of retainer) : अनुबंध अधिनियम की धारा 217 के द्वारा एजेंट को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वह एजेंसी के कारोबार में प्रधान के लिए जो धनराशि प्राप्त करता है वह उसमें से निम्नलिखित भुगतानों के लिए राशिक ाट सकता है:

अ) स्वयं द्वारा अदा की गई अग्रिम राशि,
ब) ऐसे कारोबार का संचालन करने के सम्बन्ध में किए गये उचित व्यय, तथा
स) एजेंट के रूप में काम करने के लिए पारिश्रमिक।

3 **पूर्वाधिकार** (Right of lien) : आपने अभी-अभी पढ़ा कि जब तक एजेंट को अपने उचित भुगतान प्राप्त नहीं हो जाते वह प्रधान की धनराशि को अपने पास रोक सकता है। एजेंट को एक अन्य अधिकार है, वह है प्रधान के माल, कागज़ात, चल तथा अचल सम्पत्ति को अपने पास तब तक रोके रखना जब तक कि उसे अपना पारिश्रमिक, कमीशन तथा अन्य व्यय नहीं मिल जाते। एजेंट का यह पूर्वाधिकार, विशिष्ट पूर्वाधिकार होता है।
पूर्वाधिकार की निम्नलिखित सीमाएँ हैं:

अ) एजेंट को यह अधिकार तभी प्राप्त होता है जब इसके विपरीत कोई अनुबंध न हो।

ब) यह अधिकार केवल उन्हीं सम्पत्तियों पर उपलब्ध है जो वैध ढंग से एजेंट के कब्ज़े में आई हैं। यदि एजेंट अवैधानिक तरीके से कब्ज़ा प्राप्त करता है, जैसे मिथ्यावर्णन करके या प्रधान से अधिकार प्राप्त किए बिना, तब एजेंट इस अधिकार का उपयोग नहीं कर सकता।

स) यह पूर्वाधिकार केवल विशिष्ट पूर्वाधिकार है। विशिष्ट पूर्वाधिकार का अर्थ है कि एजेंट केवल वही माल रोक सकता है जिसके सम्बन्ध में उसे प्रधान से कोई रकम प्राप्त करनी हो।

द) तीसरे पक्षकार के प्रधान के प्रति सब अधिकारों एवं ईक्विटियों के अन्तर्गत ही पूर्वाधिकार का उपयोग किया जा सकता है। उदाहरण , यदि एजेंट ने प्रधान के कुछ माल को बेच दिया है तो एजेंट इस प्रकार बेचे गये माल की सुपुर्दगी क्रेता को देने से मना नहीं कर सकता।

ड) क्योंकि पूर्वाधिकार का सम्बन्ध कब्ज़े से है, अतः यदि एक बार माल पर से कब्ज़ा समाप्त हो जाता है तो इस अधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

4 **क्षतिपूर्ति पाने का अधिकार** (Right to be indemnified) : धारा 222 और 223 के द्वारा एजेंट को एजेंसी के अन्तर्गत किए गये सभी वैध कार्यों के परिणामों के लिए प्रधान से क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। धारा 222 में बताया गया है कि एजेंट द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत किए गये सभी वैध कार्यों के परिणामों के सम्बन्ध में प्रधान अपने एजेंट की क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य है। उदाहरणार्थ, सिंगापुर का निवासी B, कलकत्ता के निवासी A के निर्देशानुसार, C के साथ कुछ माल देने का अनुबंध करता है। A, B को माल नहीं भेजता और C, B पर अनुबंध भंग करने का मुकदमा दायर कर देता है। B मुकदमें के बारे में A को सूचना देता है और A उसे मुकदमें में अपना बचाव पेश करने के लिए अधिकार देता है। B मुकदमें में अपना बचाव करता है और उसे मुकदमें का खर्च और हर्जाना देने के लिए कहा जाता है। A इस हर्जाने एवं सम्पूर्ण रकम के लिए उत्तरदायी है।

ऐसे कार्य जो प्रकटत: वैध हैं परन्तु वास्तव में अवैध हैं या तीसरे पक्ष को हानि पहुँचाने वाले हैं, उनके लिए भी एजेंट क्षतिपूर्ति पाने का हकदार है। परन्तु एजेंट ऐसे कार्यों के लिए क्षतिपूर्ति प्राप्त नहीं कर सकता जो प्रकटत: अवैध या आपराधिक प्रकृति के हैं, भले ही ऐसे कार्यों के परिणामों के लिए क्षतिपूर्ति करने का स्पष्ट या निहित वचन प्रधान ने दिया हो। उदाहरण, A ने C की खड़ी फसल को आग लगाने के लिए B को नियुक्त किया तथा इसके सभी परिणामों के लिए उसकी क्षतिपूर्ति करने का वचन भी दिया। तदनुसार B, C की तैयार फसल को आग लगा देता है और उसे C को हर्जाना देने के लिए कहा जाता है। A, B की क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी नहीं है।

जब एजेंट को कोई ऐसा कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है जिससे किसी तीसरे पक्षकार के अधिकारों को हानि पहुँच सकती है और एजेंट वह कार्य सद्भावना में कर देता है, तब प्रधान एजेंट की क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है। उदाहरणार्थ, B, A के अनुरोध पर कुछ ऐसा माल बेच देता है जो उसके (A) कब्ज़े में था परन्तु जिसे बेचने का A को कोई अधिकार नहीं था। B को इस तथ्य की जानकारी नहीं थी और वह माल के विक्रय से प्राप्त धनराशि A को सौंप देता है। बाद में C, जो माल का वास्तविक स्वामी है, B पर मुकदमा करके B से माल का मूल्य तथा मुकदमे के व्यय वसूल कर लेता है। A, B को उतनी धनराशि अदा करने के लिए बाध्य है जितनी उसे C को अदा की है तथा स्वयं के जो खर्चे किए हैं।

5 **मुआवजा प्राप्त करने का अधिकार** (Right to compensation): एजेंट को प्रधान से उस क्षति या हानि का मुआवजा प्राप्त करने का अधिकार है जिसे उसने प्रधान की लापरवाही या अकुशलता के कारण उठाया है (धारा 225)। उदाहरणार्थ, एक मकान बनाने के लिए A, B को राजगीर के रूप में नियुक्त करता है और मचान या पाड़ स्वयं तैयार करता है। A मचान को कौशलपूर्ण तरीके से नहीं बांधता जिसके परिणामस्वरूप B को चोट लगती है। A को B की क्षतिपूर्ति करनी होगी। यहाँ यह ध्यान रहे कि यदि एजेंट की अपनी स्वयं की लापरवाही से उसे क्षति हुई है तो इसके लिए वह मुआवजा पाने का हकदार नहीं होता।

11.12 एजेंट के कर्त्तव्य

एजेंट के निम्नलिखित वैधानिक कर्त्तव्य हैं।

1 **प्रधान के आदेशानुसार या व्यापार की प्रथा के अनुसार कार्य करने का** कर्त्तव्य (Duty to act according to instructions or the custom of trade): धारा 211 में बताया गया है कि एजेंट का यह कर्त्तव्य है कि वह प्रधान के आदेशों का कठोरता से पालन करे। उदाहरण, यदि प्रधान ने एजेंट को माल का बीमा कराने का आदेश दिया है लेकिन एजेंट बीमा नहीं करा पाता और माल आग से नष्ट हो जाता है तब प्रधान की हानि की पूर्ति करने के लिए एजेंट बाध्य है।

परन्तु जब प्रधान ने एजेंट को कोई स्पष्ट आदेश नहीं दिए हैं तब एजेंट को व्यापार की प्रथा के अनुसार कार्य करना चाहिए। उदाहरण, B नामक एक दलाल, जिसके कारोबार में माल उधार बेचने की प्रथा नहीं है, अपने प्रधान का माल उधार बेच देता है। माल के मूल्य का भुगतान करने से पहले क्रेता दिवालिया हो जाता है। दलाल B, इस हानि की पूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है।

एजेंट द्वारा प्रधान के आदेशानुसार कार्य न करने से यदि कोई हानि होती है तो एजेंट को प्रधान की क्षतिपूर्ति करनी होगी तथा यदि कोई लाभ होता है तो एजेंट को उसका हिसाब प्रधान को देना होगा। उदाहरण, A, एक प्रधान ने अपने एजेंट B को एक विशिष्ट माल-गोदाम में माल रखने का आदेश दिया। A के आदेशों की अवहेलना करके B ने एक अन्य उतने ही सुरक्षित माल-गोदाम में माल रख दिया। B की लापरवाही के बिना आग से जल कर माल नष्ट हो गया। इस स्थिति में एजेंट, प्रधान की हानि की पूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है।

2 **उचित सावधानी एवं कौशल से कार्य करने का कर्त्तव्य** (Duty to act with reasonable care and skill): एजेंट का कर्त्तव्य है कि वह एजेंसी के कार्य को उचित सावधानी एवं कौशल से करे। एजेंट से अपेक्षित सावधानी एवं कौशल की मात्रा व्यापार की प्रकृति एवं परिस्थितियों पर निर्भर करती है। उदाहरण, बम्बई निवासी A ने दिल्ली निवासी B को C से 10,000 रुपये वसूल करने के लिए कहा। B ने उक्त राशि वसूल करके एक बैंक ड्राफ्ट बनवाया और उसे रजिस्टर्ड डाक से A के पास भेज दिया। B ने अपने कर्त्तव्य का पालन इस तरह से किया जैसे कि एक सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति स्वयं अपने मामले में करता। परन्तु यदि बैंक ड्राफ्ट रजिस्टर्ड डाक से भेजने के बजाय वह साधारण डाक से भेजता है तो B लापरवाही से कार्य करने का दोषी माना जाएगा।

एजेंट को उचित लगन से काम करना चाहिए, जितना कौशल उसके पास है उतने कौशल का उपयोग करना चाहिए तथा एजेंट की लापरवाही, कौशल की कमी या दुराचरण से होने वाली प्रत्यक्ष हानियों के लिए एजेंट को प्रधान की क्षतिपूर्ति करनी होगी। उदाहरण, B ने एक बीमा दलाल A को जहाज का बीमा कराने के लिए नियुक्त किया। A ने जहाज की बीमा तो करा दिया परन्तु उसने यह सुनिश्चित नहीं किया कि पालिसी में 'सामान्य उपबंध' (usual clauses) शामिल किए गये हैं या नहीं। बीमा पालिसी में "सामान्य उपबंधों" के न लिखे जाने के कारण बीमा कम्पनी से कुछ भी वसूल नहीं किया जा सकता। A, B की हानि को पूरा करने के लिए उत्तरदायी है।

उपर्युक्त से यह निष्कर्ष निकलता है कि लापरवाही, कुशलता की कमी या दुराचरण के कारण हुई अप्रत्यक्ष तथा दूरवर्ती हानियों के लिए एजेंट उत्तरदायी नहीं होता।

3 **हिसाब-किताब देने का कर्त्तव्य** (Duty to render accounts): एजेंट का कर्त्तव्य है कि प्रधान द्वारा मांग करने पर वह उसे सही-सही हिसाब-किताब दे तथा प्रधान के लिए प्राप्त की गई धनराशि प्रधान को सौंप दे। परन्तु वह इस धनराशि में से वैध ढंग से किए गये खर्चे एवं पारिश्रमिक काट सकता है।

4 **प्रधान से सम्पर्क करने का कर्त्तव्य** (Duty to communicate with the principal): धारा 214 के अनुसार एजेंट से कहा गया है कि कठिनाई के समय उसे प्रधान से सम्पर्क स्थापित करने और उससे आदेश प्राप्त करने के लिए उचित रूप से भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

5 **अपने नाम से व्यापार न करने का कर्त्तव्य** (Duty not to deal on his own account): एजेंसी के कारोबार के दौरान एजेंट को स्वयं अपने नाम से व्यापार नहीं करना चाहिए, क्योंकि एजेंट को स्वयं को ऐसी स्थिति में करने की अनुमति नहीं है जहाँ उसके हित और कर्तव्यों में टकराव हो। यदि एजेंसी के कारोबार के दौरान एजेंट स्वयं अपने नाम से कार्य करना चाहता है, तो उसका कर्तव्य है कि मामले के सभी महत्त्वपूर्ण तथ्य जो उसकी जानकारी में आये हैं, उन्हें प्रधान को बता देना चाहिए और प्रधान की अनुमति लेनी चाहिए (**लीवर ब्रदर्स बनाम बेल**)। यदि एजेंट प्रधान की अनुमति प्राप्त किए बिना स्वयं अपने नाम से व्यापार करता है, या प्रधान द्वारा अनुमति दिए जाने के बाद प्रधान को यह पता चलता है कि एजेंट ने महत्त्वपूर्ण तथ्य उससे बेईमानी करके छिपा लिए थे तो प्रधान के पास दो विकल्प हैं या तो वह एजेंट द्वारा किए गये कार्यों को अस्वीकार कर दे या ऐसे लेन-देन से हुए क्षति या दावे की पूर्ति करने से अस्वीकार कर दे।

उदाहरण

i) A अपनी जायदाद बेचने के लिए B को नियुक्त करता है। B, जायदाद को C के नाम से स्वयं खरीद लेता है। A को यह पता लगने पर कि B ने जायदाद स्वयं अपने लिए खरीदी है, वह (A) विक्रय को रद्द कर सकता है यदि वह यह सिद्ध कर सके कि B ने उससे कोई महत्त्वपूर्ण तथ्य छिपाया है या उस विक्रय से A को घाटा हुआ है।

ii) A, B को अपनी जायदाद बेचने के लिए कहता है। जायदाद बेचने से पहले निरीक्षण करने पर B को उसमें एक खान होने का पता चलता है जिसके बारे में A को कुछ मालूम नहीं है। B, A को सूचित करता है कि वह जायदाद स्वयं खरीदना चाहता है परन्तु वह खान की बात को छिपा लेता है। A खान के बारे में अनभिज्ञ होने के कारण B को जायदाद खरीदने की अनुमति दे देता है। यह पता लगने पर कि जिस समय B ने जायदाद खरीदी थी उसे (B) उसमें खान के होने का पता था, A को यह

अधिकार है कि वह या तो इस विक्रय को स्वीकार कर ले या अस्वीकार कर दे या इस संव्यवहार से एजेंट को हुए लाभ की मांग करे (धारा 216)

iii) A, अपने एजेंट B को एक विशिष्ट मकान खरीदने का आदेश देता है। B, A को यह बताता है कि मकान नहीं खरीदा जा सकता और उसे स्वयं खरीद लेता है। यह पता लगने पर कि B ने वह मकान स्वयं खरीद लिया है, A उस मकान को उसी मूल्य पर बेचने के लिए B को बाध्य कर सकता है जिस पर उसने (B) उसे खरीदा था।

5 **एजेंसी के दौरान प्राप्त हुई सूचना का उपयोग प्रधान के विरुद्ध न करना** (Not to use information obtained in the course of the agency against the Principal): जब एजेंट ने एजेंसी के कारोबार के दौरान कोई सूचना प्राप्त की है, तो एजेंट का कर्तव्य है कि वह प्रधान के हितों के प्रतिकूल इसका उपयोग नहीं करे। यदि एजेंट ऐसी किसी सूचना का उपयोग करता है तो प्रधान, न्यायालय से निषेधाज्ञा प्राप्त करके एजेंट को ऐसा करने से रोक सकता है।

कोई विपरीत अधिकार नहीं जताना (Not to set up adverse title): जब एजेंट ने प्रधान से कुछ माल या सम्पत्ति एजेंट के रूप में प्राप्त की है, तो एजेंट का कर्तव्य है कि वह उस पर अपना या किसी तीसरे व्यक्ति का अधिकार न जताए। अन्य शब्दों में, एजेंट को प्रधान के स्वामित्व के अधिकार के बारे में प्रश्न नहीं करना चाहिए।

गुप्त लाभ न कमाना (Not to make secret profits): जैसा कि आपको ज्ञात ही है प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध आपसी सद्विश्वास पर आधारित होता है, अत: एजेंट का कर्तव्य है कि एजेंसी के कारोबार से कोई गुप्त लाभ नहीं कमाए। उदाहरण, A ने एक नीलामकर्ता B को अपना कुछ माल बेचने के लिए नियुक्त किया। B ने C को वह माल बेच दिया और A से प्राप्त होने वाले कमीशन के अलावा C से भी अतिरिक्त कमीशन प्राप्त कर लिया। निर्णय दिया गया कि B गुप्त कमीशन A को लौटाने के लिए बाध्य है।

अपने अधिकारों को व्यक्तिगत रूप से उपयोग करने का कर्तव्य (Duty to exercise his authority personally): अधिनियम की धारा 190 के अनुसार एजेंट ने जिन कार्यों को स्वयं करने का स्पष्ट या निहित वचन दिया है, उन कार्यों को एजेंट को स्वयं करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, एजेंट को अपने अधिकार प्रत्यायोजित नहीं करने चाहिए। परन्तु, कुछ विशेष परिस्थितियों में इस अधिकार को प्रत्यायोजित किया जा सकता है (11.8 में वर्णित किया जा चुका है)।

) **प्रधान की मृत्यु अथवा पागल होने पर कर्तव्य** (Duty on the death or insanity of the Principal): धारा 209 के अनुसार जब प्रधान की मृत्यु या उसके पागल हो जाने के कारण एजेंसी समाप्त हो जाती है तो एजेंट का कर्तव्य है कि वह सौंपे गये हितों की रक्षा के लिए भूतपूर्व प्रधान के प्रतिनिधियों की ओर से समस्त उचित कदम उठाए।

प्रधान के एजेंट के प्रति अधिकार एवं कर्तव्य (Rights and Duties of Principal towards Agent): अब तक आपने जो कुछ पढ़ा है उससे आपको यह स्पष्ट हो गया होगा कि प्रधान के अधिकार एजेंट के कर्तव्य होते हैं तथा एजेंट के कर्तव्य, प्रधान के अधिकार होते हैं।

ध प्रश्न ख

पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी क्या होती है?

. . . .

. . . .

. . . .

'पुष्टीकरण पूर्व अधिकार के समान होता है' स्पष्ट कीजिए।

. . . .

. . . .

. . . .

3 पूर्वाधिकार का उपयोग करने से पहले पूर्ण की जाने वाली शर्तें बताईए।

....

....

....

4 क्या कोई एजेंट स्वयं अपने नाम से व्यापार कर सकता है? यदि नहीं तो **क्यों** ?

....

....

....

5 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) पुष्टि किए जाने वाले एजेंट के कार्य वैध होने चाहिए, अवैधानिक नहीं। ....

ii) हस्ताक्षर की जालसाज़ी की यदि पुष्टि कर भी दी जाए तो इसे कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता। ....

iii) कोई व्यक्ति संव्यवहार के एक भाग की पुष्टि नहीं कर सकता। ....

iv) एजेंसी के कारोबार के दौरान दुराचरण का दोषी एजेंट पारिश्रमिक पाने का हकदार नहीं होता। ....

v) एजेंट को उपलब्ध पूर्वाधिकार प्राय: विशिष्ट पूर्वाधिकार होता है। ....

vi) वैध पुष्टीकरण के लिए, पुष्टि के समय प्रधान अनुबंध करने के योग्य होना चाहिए। ....

vii) जब एजेंट ने तस्करी से माल प्राप्त करके उसका मूल्य अदा कर दिया तो एजेंट की क्षतिपूर्ति करने के लिए प्रधान को बाध्य किया जा सकता है। ....

viii) एजेंट को स्वयं को ऐसी स्थिति में नहीं करना चाहिए जहाँ प्रधान के प्रति उसके कर्तव्य और व्यक्तिगत हित में टकराव होता है। ....

11.13 एजेंट का व्यक्तिगत दायित्व (Personal Liability of an Agent)

एजेंसी के अनुबंध में सामान्यत: प्रधान और तीसरे पक्षकारों में सम्बन्ध स्थापित करने के लिए एजेंट नियुक्त किया जाता है तो जब तक इस बारे में कोई विपरीत अनुबंध न किया गया हो, एजेंट न तो इन अनुबंधों को स्वयं व्यक्तिगत रूप से प्रवर्तित करा सकता है और न ही वह इनके लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। **इस सम्बन्ध में किसी विपरीत अनुबंधा के अभाव में, एजेंट द्वारा अपने प्रधान की ओर से किए गये किसी अनुबधां को वह व्यक्तिगत रूप से प्रवर्तित नहीं करवा सकता और न ही वह उनके लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है।** निम्नलिखित परिस्थितियों में ऐसा अनुबंध हुआ मान लिया जाता है:

i) जब विदेश में रहने वाले व्यापारी की ओर से माल खरीदने या बेचने का अनुबंध एजेंट द्वारा किया गया है;

ii) जब एजेंट अपने प्रधान का नाम प्रकट नहीं करता;

iii) जब प्रधान को प्रकट तो कर दिया गया है परन्तु उसके विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं किया जा सकता है।

परन्तु कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जब एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। ये निम्नलिखित हैं।

1. **जब विदेशी प्रधान के लिए कार्य करता है:** जब एजेंट किसी विदेशी प्रधान (विदेश में करते समय स्पष्ट तौर से यह तय करते हैं कि अनुबंध का पालन नहीं किए जाने पर एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा, ऐसी परिस्थिति में एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। उदाहरणार्थ, एक एजेंट A एक मकान B को पट्टे पर देने का करार करता है। पट्टा विलेख में यह लिखा हुआ है कि A मकान के स्वामी C के लिए एजेंट के रूप में कार्य कर रहा है। परन्तु पट्टा विलेख में आगे यह भी लिखा हुआ है कि एजेंट पट्टे को निष्पादित करेगा। इस स्थिति में यद्यपि मकान C का है, परंतु यदि अनुबंध का पालन नहीं होता तो एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा। इसी प्रकार जब नीलामकर्ता विक्रय अनुबंध पर हस्ताक्षर करते समय अपनी स्थिति (एजेंट की) स्पष्ट नहीं करता, तो ऐसे अनुबंध को एजेंट के रूप में नहीं बल्कि उसके स्वयं अपने लिए किया गया माना जाना चाहिए।

2. **जब वह विदेशी प्रधान के लिए कार्य करता है:** जब एजेंट किसी विदेशी प्रधान (विदेश में रहने वाला व्यापारी) के लिए कार्य करता है तो यह मान्यता है कि ऐसे अनुबंधों के लिए एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। यह मान्यता इसलिए है क्योंकि विदेशी प्रधान के विरुद्ध मुकदमा दायर करना बहुत कठिन है, अत: यह प्रथा बन गई कि जब एजेंट किसी विदेशी प्रधान के लिए अनुबंध करता है तो वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होगा। परन्तु आजकल अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में परिवर्तन होने के कारण, यद्यपि उपरोक्त नियम अभी भी विद्यमान है, लेकिन एजेंट व्यक्तिगत उत्तरदायित्व नहीं लेते और अनुबंधों में यह स्पष्टत: लिखा जाता है कि अनुबंध का पालन न होने पर प्रधान उत्तरदायी होगा।

3. **जब वह अप्रकट प्रधान के लिए कार्य करता है:** जब एजेंट किसी अप्रकट प्रधान (undisclosed principal) के लिए कार्य करता है तो एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। ऐसा करने का कारण यह है कि अनुबंध करते समय तीसरे पक्षकार ने एजेंट की साख पर भरोसा करके अनुबंध किया है, अत: उस संव्यवहार के लिए एजेंट उत्तरदायी है।

4. **जब प्रधान प्रकट तो है परन्तु उस पर मुकदमा नहीं किया जा सकता हो:** जब एजेंट किसी ऐसे व्यक्ति की ओर से अनुबंध करता है जिस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता, जैसे विदेशी सर्वसत्ताधारी (sovereign), राजदूत, नाबालिग या पागल व्यक्ति, तो यह मान्यता है कि तीसरे पक्षकार ने एजेंट की साख पर कार्य किया है अत: ऐसे अनुबंधों के लिए एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है।

5. **जब प्रधान ऐसी कम्पनी है जो अभी अस्तित्व में नहीं आई है:** जब कम्पनी के प्रवर्तक किसी ऐसी कम्पनी की ओर से अनुबंध करते हैं जो अभी निगमित नहीं हुई है, तो किसी अन्य व्यक्ति के साथ किए गये अनुबंधों से उत्पन्न दायित्वों के लिए प्रवर्तक व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं। इसका कारण है कि जब अनुबंध करते समय कम्पनी का अस्तित्व था ही नहीं तो उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता।

6. **जब एजेंट का एजेंसी में हित हो:** जब अनुबंध की विषय-वस्तु में एजेंट का कोई विशेष हित (coupled with interest) होता है, तो उसके अधिकार को हित सहित कहा जाता है। वास्तव में वह हित की सीमा तक प्रधान होता है और वह अपने हित की सीमा तक स्वयं अपने नाम से मुकदमा दायर कर सकता है और उस पर मुकदमा दायर भी किया जा सकता है। उदाहरण, M अपनी भूमि बेचने का अधिकार N को देता है तथा विक्रय से प्राप्त राशि में से अपने कर्ज की राशि काट लेने का भी अधिकार N को देता है। N का अधिकार हित सहित है।

7. **जब कोई रिवाज या व्यापारिक प्रथा हो:** यदि एजेंट को उसके द्वारा किए गये अनुबंधों के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराने की कोई व्यापारिक प्रथा या रिवाज प्रचलित है तो वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है, बशर्ते कोई विपरीत अनुबंध नहीं हो। उदाहरण, शेयर बाज़ार में प्रचलित प्रथा के अनुसार दलाल (broker) स्वयं किए गये

अनुबंधों के लिए, व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है, अत: आढ़तिया (jobber) किसी दलाल को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा सकता है।

8 **गलती या कपट से धनराशि का भुगतान:** जब कोई व्यक्ति असत्य कथन करके स्वयं को किसी अन्य व्यक्ति का अधिकृत एजेंट बताता है और उस अन्य व्यक्ति को अपने साथ अनुबंध करने के लिए प्रेरित करता है अथवा एजेंट ने अपने अधिकार से अधिक कार्य कर लिया है और कथित प्रधान ऐसे कार्यों की पुष्टि नहीं करता, तो ऐसा कथित एजेंट तीसरे पक्षकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। तीसरे पक्षकार द्वारा उठाई गई हानि के लिए वह ऐसे कथित एजेंट से मुआवज़ा प्राप्त कर सकता है (धारा 235)।

9 **जब वह स्वयं अपने नाम से अनुबंध करता है:** जब कोई एजेंट स्वयं अपने नाम से तीसरे पक्षकार के साथ अनुबंध करता है अर्थात् यह प्रकट नहीं करता कि वह एजेंट के रूप में अनुबंध कर रहा है, तो वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। उदाहरण, A ने B से ऋण लिया और उसके पक्ष में एक हुंडी लिख कर दे दी। वास्तव में वह हुंडी एक फर्म द्वारा लिखी गई थी। A ने हुंडी पर एजेंट के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए और न ही उसने B को यह बताया कि फर्म का स्वामी कोई और है। इस स्थिति में हुंडी के लिए A को व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहराया गया।

धारा 233 में आप पढ़ चुके हैं कि **जिन परिस्थितियों में एजेंट को प्रधानगत रूप से उत्तरदायी ठहराया जाता है उनमें उसके साथ व्यवहार करने वाला पक्ष या तो उसे, या उसके प्रधान को, या दोनों को उत्तरदायी ठहरा सकता है।**

11.14 तीसरे पक्षकारों के प्रति प्रधान का दायित्व

यह आप पढ़ चुके हैं कि एजेंट अपने प्रधान की ओर से तीसरे पक्षकारों के साथ अनुबंध करता है अर्थात् एजेंट के कार्यों के लिए प्रधान तीसरे पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होता है। प्रधान का तीसरे पक्षकारों के प्रति दायित्व को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत लिया जा सकता है:

1) जब एजेंट, प्रधान का नाम एवं अस्तित्व तीसरे पक्षकारों पर प्रकट कर देता है,
2) जब प्रधान का नाम तो नहीं बल्कि उसका अस्तित्व प्रकट किया जाता है अर्थात् जब प्रधान का नाम नहीं बताया जाता, तथा
3) जब अप्रकट प्रधान है अर्थात् न केवल प्रधान का अस्तित्व बल्कि उसका नाम भी प्रकट नहीं किया जाता।

1 **जब प्रधान का नाम और अस्तित्व दोनों ही प्रकट किए जाते हैं, तब उसका दायित्व:**

अ) क्योंकि एजेंट को प्रधान और तीसरे पक्षकारों के बीच अनुबंधात्मक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए नियुक्त किया जाता है अत: एजेंट द्वारा किए गये अनुबंधों से प्रधान ठीक उसी तरह आबद्ध होता है जैसे कि उसने स्वयं वे अनुबंध किए हैं (धारा 226)।

ब) प्रधान अपने एजेंट के ऐसे कार्यों के लिए सामान्यत: उत्तरदायी होता है जो उसके अधिकार क्षेत्र में हैं। परन्तु जब प्रधान अपने एजेंट को किसी विशेष व्यापार में प्रतिनिधित्व करने का अधिकार देता है तो प्रधान, एजेंट के सभी ऐसे कार्यों से आबद्ध होता है जो उस व्यापार के लिए प्रासंगिक है या जो एजेंट के प्रकटत: अधिकार क्षेत्र में आते हैं, इसे एजेंट का प्रकट या दृश्यमान (ostensible) अधिकार कहते हैं। जब प्रधान अपने एजेंट को अधिकार प्रदान करते समय उसके अधिकारों पर कोई शर्त या सीमा लगा देता है तो एजेंट के ऐसे अधिकारों से बढ़कर किए हुए कार्यों के लिए प्रधान केवल तभी उत्तरदायी होता है जब अन्य पक्षकारों को इन प्रतिबन्धों की जानकारी नहीं हो। उदाहरणार्थ, A, B को माल बेचने के लिए एजेंट नियुक्त करता है परन्तु गुप्त तरीके से एजेंट को उधार माल बेचने से मना कर देता है। B, C का माल उधार बेच देता है और C को इस प्रतिबन्ध की सूचना नहीं थी, इस स्थिति में यह विक्रय A पर बाध्य है।

जब एजेंट अपने अधिकारों से बढ़कर कोई कार्य करता है तो प्रधान को अधिकार है कि वह या तो ऐसे कार्यों को अस्वीकार कर दे या स्वीकार कर ले। यदि एजेंट द्वारा किए गये किसी अनाधिकृत कार्य को उसके अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्य से पृथक् किया जा सकता हो तो प्रधान केवल अधिकृत भाग के लिए ही उत्तरदायी होता है (धारा 227)।

उदाहरण, A एक जहाज़ का तथा उस पर लदे माल का स्वामी है, वह B को जहाज़ का 5,000 रु. का बीमा कराने के लिए अधिकार देता है। B जहाज़ का 5,000 रु. का बीमा कराता है तथा एक अन्य पालिसी इसी राशि के लिए माल की लेता है। A, जहाज़ की बीमा पालिसी का प्रीमियम देने के लिए तो उत्तरदायी है परन्तु वह माल की बीमा पालिसी का प्रीमियम देने के लिए उत्तरदायी नहीं है।

यदि अनाधिकृत भाग को अधिकृत भाग से पृथक् नहीं किया जा सकता है तो प्रधान सम्पूर्ण व्यवहार को रद्द कर सकता है (धारा 228)। उदाहरणार्थ, एजेंट को केवल 100 पैंट खरीदने का अधिकार दिया गया। एजेंट 100 पैंट खरीदने के साथ-साथ 100 कमीज़े भी 10,000 रुपये में खरीद लेता है। प्रधान इसके लिए उत्तरदायी नहीं है, वह सम्पूर्ण संव्यवहार को अस्वीकार कर सकता है।

स) एजेंसी के व्यापार से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचना यदि एजेंट को दे दी गई है तो यह माना जाता है कि प्रधान को सूचना दे दी गई है। तद्नुसार धारा 229 में बताया गया है कि एजेंसी के व्यापार के दौरान यदि एजेंट को कोई सूचना दी जाती है या एजेंट कोई जानकारी प्राप्त करता है, तो जहाँ तक प्रधान और तीसरे पक्षकारों का प्रश्न है यह समझा जाता है कि प्रधान को सूचना दे दी गई तथा इसके वही परिणाम होते हैं जैसे कि सूचना प्रधान को दे दी गई थी या प्रधान ने प्राप्त की थी। उदाहरणार्थ: B, C से कुछ माल, जिसका प्रकटत: C स्वामी है, खरीदने के लिए A को नियुक्त करता है। विक्रय की बातचीत के दौरान A को पता चलता है कि वह माल वास्तव में D का है और C केवल एजेंट है। B को इस तथ्य की जानकारी नहीं है। B को C से कुछ रकम वसूल करनी है और वह उक्त माल के मूल्य में से अपने ऋण की राशि काटना या मुजराई (set off) करना चाहता है, परन्तु वह ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि माल D का है C का नहीं। इस स्थिति में एजेंट की जानकारी को प्रधान की जानकारी माना गया।

द) यदि एजेंसी के व्यापार के दौरान एजेंट कोई मिथ्यावर्णन करता है या कपट करता है, उसका करार पर ठीक वही प्रभाव होता है जैसे कि यह प्रधान द्वारा की गई हैं। उदाहरणार्थ, A चीनी बेचने के लिए B का एजेंट है, वह (A) मिथ्यावर्णन करके C को चीनी खरीदने के लिए प्रेरित करता है। B और C के बीच हुआ यह अनुबंध C की इच्छा या विकल्प पर व्यर्थनीय है। परन्तु यदि एजेंट द्वारा किया गया मिथ्यावर्णन या कपट किसी ऐसे मामले से सम्बन्धित है जो एजेंट के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं है, तब प्रधान उत्तरदायी नहीं होता (धारा 238)।

2 **जब प्रधान का अस्तित्व तो प्रकट किया जाता है परन्तु उसका नाम नहीं प्रकट किया जाता तब उसका दायित्व:**

यदि तीसरे पक्षकारों के साथ अनुबंध करते समय एजेंट यह तो बता देता है कि वह एजेंट के रूप में कार्य कर रहा है परन्तु प्रधान का नाम नहीं बताता, तो ऐसे अनुबंधों से प्रधान आबद्ध हो जाता है। परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है कि ऐसे कार्य एजेंट के अधिकार क्षेत्र में आते हों तथा अनुबंध करते समय अनाम प्रधान अस्तित्व में हो। ऐसे अनुबंधों के लिए एजेंट व्यक्तिगत रूप से तब तक उत्तरदायी नहीं होता जब तक किसी बात से यह स्पष्ट प्रकट न होता हो कि एजेंट ने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व लेना स्वीकार कर लिया है। परन्तु यदि तीसरे पक्षकारों द्वारा पूछे जाने पर एजेंट अपने प्रधान का नाम प्रकट नहीं करता तब एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है।

3 **अप्रकट प्रधान** (Undisclosed Principal):

कई बार एजेंट तीसरे पक्षकारों के साथ अनुबंध करते समय प्रधान का नाम व अस्तित्व प्रकट नहीं करता। वह ऐसा आभास देता है जैसे कि वह स्वयं स्वतन्त्र रूप से अपने लिए अनुबंध कर रहा है जबकि वास्तव में वह प्रधान की ओर से अनुबंध कर रहा है और

तीसरे पक्षकारों को न तो यह मालूम है और न ही यह शक करने का कोई पर्याप्त कारण है कि अनुबंध करने वाला व्यक्ति वास्तव में एजेंट है। ऐसी स्थिति में प्रधान अप्रकट रहता है और वह 'अप्रकट प्रधान' कहलाता है। इस स्थिति में प्रधान और एजेंट के आपसी अधिकार एवं कर्तव्य निम्नलिखित हैं:

i) अ) **एजेंट का दायित्व** (Liability of agent): क्योंकि एजेंट ने स्वयं अपने नाम से अनुबंध किया है अत: तीसरा पक्षकार उसे व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी ठहरा सकता है। तीसरे पक्षकार एजेंट के विरुद्ध और एजेंट तीसरे पक्षकार के विरुद्ध मुकदमा दायर कर सकता है। जहाँ तक प्रधान के प्रति उसके अधिकारों का सम्बन्ध है, उसे प्रधान के विरुद्ध एजेंट के समस्त अधिकार प्राप्त होते हैं।

ब) **प्रधान का दायित्व** (Liability of Principal): यदि तीसरे पक्षकार को प्रधान के अस्तित्व का पता चल जाता है तो वह या तो प्रधान, या एजेंट, या दोनों पर मुकदमा चला सकते हैं। तीसरे पक्षकार को यह विकल्प केवल तभी प्राप्त है जब तक कि एजेंट के विरुद्ध निर्णय प्राप्त न किया गया है। यदि तीसरा पक्षकार प्रधान पर मुकदमा करने का निर्णय करता है तो उसे (तीसरा पक्ष) एजेंट से प्राप्त भुगतानों का लाभ प्रधान को देना पड़ेगा। उदाहरण, प्रधान का नाम प्रकट किए बिना एक एजेंट A, B के साथ 10,000 रुपये का माल खरीदने का अनुबंध करता है तथा 500 रुपये एडवांस के रूप में चुका देता है। वास्तव में A, C का एजेंट है। यदि इस अनुबंध का पालन नहीं किया जाता तो B (तीसरा पक्षकार), C पर मुकदमा चला सकता है, परन्तु B को 500 रुपये का लाभ C को देना पड़ेगा जो B ने A से प्राप्त किए हैं।

यहाँ यह ध्यान रहे कि तीसरे पक्षकार को यह चुनाव करना पड़ता है कि वह प्रधान, या एजेंट या दोनों के विरुद्ध मुकदमा दायर करे। परन्तु जब किसी एक के विरुद्ध मुकदमा दायर करने का निर्णय कर लिया जाता है तब बाद में वह किसी दूसरे पर मुकदमा नहीं चला सकता (धारा 234)।

ii) धारा 231 में बताया गया है कि यदि अनुबंध का पालन किए जाने से पहले ही प्रधान स्वयं को प्रकट कर देता है तो तीसरा पक्षकार अनुबंध का पालन करने से इन्कार कर सकता है। परन्तु ऐसा वह तभी कर सकता है जब वह यह सिद्ध कर सके कि यदि वह जानता कि इस अनुबंध के लिए कौन व्यक्ति प्रधान है, या यदि वह यह जानता होता कि एजेंट, प्रधान नहीं है तो वह कभी भी अनुबंध नहीं करता। **सईद बनाम बट** के मामले में एक एजेंट ने अप्रकट प्रधान A के लिए थियेटर का एक टिकट खरीद लिया। क्योंकि थियेटर के प्रबन्धक ने A को टिकट न बेचने का निर्देश दे रखा था, थियेटर का मैनेजर A को थियेटर में नहीं घुसने देता। यद्यपि A के पास टिकट है परन्तु उसे घुसने से रोका जा सकता है क्योंकि थियेटर के स्वामी ने A को कोई टिकट नहीं बेचा था।

iii) जब कोई व्यक्ति किसी ऐसे दूसरे व्यक्ति के साथ अनुबंध करता है और उसे दूसरे व्यक्ति, जिसके साथ वह अनुबंध करता है, के एजेंट होने की जानकारी या संदेह नहीं है, तो प्रधान उस अनुबंध का पालन करा सकता है किन्तु एजेंट और अन्य पक्षकार के बीच अधिकारों एवं दायित्वों का लाभ प्रधान को देना पड़ेगा (धारा 232)। उदाहरण, A, B का 1,000 रुपये का ऋणी है। A, B को 2,000 रुपये मूल्य का चावल बेचता है। इस संव्यवहार में A, C के एजेंट के रूप में कार्य कर रहा है परन्तु B को न तो इस तथ्य की जानकारी है और न ही संदेह करने का कोई पर्याप्त कारण है। A के ऋण की मुजराई किए बिना C, B को चावल स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

यदि अनुबंध में कोई स्पष्ट या निहित शर्त है तो प्रधान हस्तक्षेप नहीं कर सकता। उदाहरणार्थ, 100 क्विंटल लकड़ी बेचने के अनुबंध में एजेंट ने स्वयं को प्रधान या स्वामी बतलाया, इस स्थिति में ऐसे प्रकटीकरण से यह साफ़ पता चलता है कि प्रधान के साथ नहीं बल्कि एजेंट के साथ व्यक्तिगत अनुबंध किया गया है। परन्तु प्रधान को हस्तक्षेप करने और यह सिद्ध करने का अधिकार है कि वास्तव में वह स्वयं प्रधान है। उदाहरणार्थ, A अपना फ्लैट

एक प्रापर्टी एजेंट C के माध्यम से B को किराए पर दे देता है। अनुबंध में एजेंट स्वयं को फ्लैट का स्वामी बतलाता है। अप्रकट प्रधान इसका खंडन कर सकता है।

11.15 एजेंसी की समाप्ति

उन परिस्थितियों को छोड़कर जब एजेंसी अखंडनीय होती है, एजेंसी को धारा 201 में वर्णित किसी भी परिस्थिति में समाप्त किया जा सकता है। इस धारा के अनुसार **प्रधान एजेंट के अधिकारों का खंडन करके एजेंसी समाप्त कर सकता है, या एजेंट एजेंसी का परित्याग कर सकता है; या एजेंसी का कार्य पूर्ण होने पर या प्रधान अथवा एजेंट की मृत्यु या पागल हो जाने पर, या किसी अधिनियम के अन्तर्गत प्रधान के दिवालिया घोषित कर दिए जाने पर एजेंसी समाप्त हो जाती है।**

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि एजेंसी को किसी भी एक तरीके से समाप्त किया जा सकता है:

1 पक्षकारों के कार्य द्वारा, या
2 कानून के प्रवर्तन द्वारा।

इसे निम्न चित्र 11.2 में दर्शाया गया है।

चित्र 11.2

एजेंसी की समाप्ति

- पक्षकारों के कार्य द्वारा
  - प्रधान द्वारा
  - एजेंट द्वारा
  - करार द्वारा
- कानून के प्रवर्तन द्वारा
  - एजेंसी का कार्य पूर्ण होने पर
  - प्रधान या एजेंट की मृत्यु होने पर
  - पागल हो जाने पर
  - प्रधान के दिवालिया हो जाने पर
  - आकस्मिक घटना होने पर (विषय वस्तु नष्ट हो जाने पर)
  - अवधि व्यतीत होने पर
  - कम्पनी के समापन पर
  - प्रधान के विदेशी शत्रु बन जाने पर
  - उप-एजेंट के अधिकार की समाप्ति पर

I **पक्षकारों के कार्य द्वारा** (By Act of Parties)

i) **प्रधान द्वारा:** जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं कि एजेंट द्वारा अपने अधिकारों का प्रयोग किए जाने और प्रधान को अपने कार्यों से आबद्ध किए जाने से पहले, प्रधान अपने एजेंट के अधिकारों का खंडन कर सकता है। अत: प्रधान द्वारा अधिकारों का खंडन किए जाने पर एजेंसी समाप्त हो जाती है। परन्तु यदि एजेंट ने अधिकारों का आंशिक उपयोग कर लिया है तब प्रधान केवल भावी व्यवहारों के लिए एजेंट के अधिकारों का खंडन कर सकता है। यदि एजेंसी के व्यापार में एजेंट का कोई व्यक्तिगत हित है, तब भी एजेंसी को समाप्त नहीं किया जा सकता (इसे इसी इकाई में 11.16 में विस्तार से समझाया गया है)।

धारा 205 में प्रावधान है कि जब एजेंसी को एक निश्चित अवधि के लिए चलाने का कोई स्पष्ट या निहित अनुबंध है तो कोई भी पक्ष उक्त अवधि के व्यतीत होने से पहले, बिना किसी पर्याप्त कारण के एजेंसी के अनुबंध को समाप्त नहीं कर सकता। यदि कोई पक्ष ऐसा कर देता है तो खंडन करने के परिणामस्वरूप दूसरे पक्ष को होने वाली हानि के लिए वह मुआवज़ा देने के लिए बाध्य होता है। यदि एजेंसी का अनुबंध एक निश्चित अवधि के लिए किया गया है, तो एजेंट के अधिकारों का खंडन करने से पहले, प्रधान को एजेंट को इसकी उचित सूचना अवश्य देनी चाहिए। यदि इस प्रकार से सूचना नहीं दी जाती तो प्रधान, एजेंट को होने वाली हानि के लिए मुआवजा देने के लिए बाध्य होगा।

ii) **एजेंट द्वारा:** एजेंट भी प्रधान को अपने पद से त्याग-पत्र की उचित सूचना दे कर एजेंसी को समाप्त कर सकता है। धारा 206 में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि एजेंसी के खंडन या परित्याग के सम्बन्ध में प्रधान को उचित सूचना अवश्य देनी चाहिए अन्यथा दोषी पक्ष दूसरे पक्ष को हर्जाना देने के लिए बाध्य होगा। खंडन या परित्याग, स्पष्ट या निहित हो सकता है। उदाहरण, A, B को अपनी कार बेचने के लिए एजेंट नियुक्त करता है। बाद में, A स्वयं वह कार बेच देता है। यह एजेंट के अधिकारों का निहित खंडन है।

iii) **करार द्वारा:** अन्य करारों के समान, प्रधान और एजेंट आपस में समझौता करके किसी भी समय एजेंसी को समाप्त कर सकते हैं।

2 **कानून के प्रवर्तन द्वारा** (By Operation of Law)

प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध कानून के प्रवर्तन द्वारा निम्नलिखित किसी भी परिस्थिति में समाप्त हो जाता है:

i) **एजेंसी-कार्य पूर्ण हो जाने पर:** एजेंसी के कार्य के पूर्ण हो जाने पर एजेंसी स्वत: समाप्त हो जाती है। उदाहरण, A, B को कार बेचने के लिए नियुक्त करता है। जब कार बेच दी जाती है, एजेंसी स्वत: समाप्त हो जाती है।

ii) **प्रधान या एजेंट की मृत्यु या पागल होने पर:** प्रधान या एजेंट की मृत्यु या पागल हो जाने पर प्रधान और एजेंट का सम्बन्ध समाप्त हो जाता है। यद्यपि प्रधान की मृत्यु होने पर एजेंसी समाप्त हो जाती है परन्तु धारा 209 में प्रावधान किया गया है कि ऐसी स्थिति में एजेंट का कर्त्तव्य है कि वह खुद को सौंपे गये हितों की रक्षा के लिए भूतपूर्व प्रधान के प्रतिनिधियों की ओर सभी उचित कदम उठाए।

iii) **प्रधान का दिवालियापन:** प्रधान के दिवालिया हो जाने पर एजेंसी स्वत: समाप्त हो जाती है। इसका कारण है कि दिवालिया व्यक्ति अनुबंध करने के अयोग्य हो जाता है।

iv) **विषय-वस्तु के नष्ट होने पर:** जब अनुबंध की विषय-वस्तु नष्ट हो जाती है, तो उस विषय-वस्तु से सम्बन्धित अनुबंध भी समाप्त हो जाता है। अत: किसी विषय-वस्तु के सम्बन्ध में लेन-देन के लिए स्थापित एजेंसी, उस विषय-वस्तु के नष्ट हो जाने पर समाप्त हो जाती है। उदाहरण, A, कार बेचने के लिए B को एजेंट नियुक्त करता है। कार दुर्घटनाग्रस्त हो जाती है तथा विक्रय योग्य नहीं रहती। दुर्घटना के बाद एजेंसी समाप्त हो जाती है।

v) **अवधि की समाप्ति:** यदि एजेंट को किसी निश्चित अवधि के लिए नियुक्त किया जाता है तो जब तक एजेंसी की अवधि को बढ़ाया नहीं जाता, निश्चित अवधि के समाप्त होने पर एजेंसी समाप्त हो जाती है चाहे एजेंसी का कार्य अभी पूरा नहीं भी हुआ हो।

vi) **कम्पनी का समापन:** यदि प्रधान या एजेंट कोई निगमित कम्पनी है, तो कम्पनी के समापन पर एजेंसी स्वत: समाप्त हो जाती है।

vii) **प्रधान के विदेशी शत्रु बन जाने पर:** यदि दो विभिन्न देशों के निवासी प्रधान और एजेंट कोई अनुबंध करते हैं तथा दोनों देशों के बीच युद्ध छिड़ जाता है तो एजेंसी समाप्त हो जाती है क्योंकि युद्ध छिड़ जाने पर युद्धरत देशों के नागरिक विदेशी शत्रु बन जाते हैं तथा एजेंसी का अनुबंध अवैधानिक हो जाता है।

एजेंसी की समाप्ति कब प्रभावकारी होती है ?

एजेंसी की समाप्ति कब प्रभावकारी होती है ? इस सम्बन्ध में धारा 208 में कानूनी स्थिति स्पष्ट की गई है, यह निम्न प्रकार है:

1) जहाँ तक एजेंट का सम्बन्ध है, उसका अधिकार उस समय समाप्त माने जाते हैं जब अधिकार समाप्त होने की सूचना उसे मिल जाती है।

2) इसी प्रकार जहाँ तक तीसरे पक्षकारों का सम्बन्ध है, एजेंट का अधिकार तब समाप्त होता है जब उसके अधिकारों के खंडन की सूचना उन्हें दे दी जाती है। सरल शब्दों में यह कह सकते हैं कि एजेंसी उस समय से समाप्त मानी जाती है जब इसकी सूचना एजेंट या

तीसरे पक्षकारों को मिल जाती है। इस प्रकार तीसरे पक्ष और एजेंट के लिए एजेंसी के समापन होने का समय अलग-अलग होता है।

इससे यह स्पष्ट है कि तीसरे पक्षकार एजेंट के साथ तब तक लेन-देन कर सकते हैं जब तक उन्हें एजेंट के अधिकार खंडित होने की सूचना नहीं मिल जाती। उदाहरणार्थ, A, B को अपना माल बेचने के लिए एजेंट नियुक्त करता है और उसे माल के विक्रय मूल्य पर पांच प्रतिशत की दर से कमीशन देने का वचन देता है। बाद में, पत्र लिखकर A, B के अधिकार का खंडन कर देता है। B, उसे पत्र भेजे जाने के बाद परन्तु उसके प्राप्त होने से पहले, माल को 100 रुपये में बेच देता है। A इस विक्रय से आबद्ध है और B निर्धारित कमीशन प्राप्त करने का हकदार है।

आईए एक अन्य उदाहरण लेते हैं। A जो दिल्ली में है, B को पत्र लिख कर आदेश देता है कि वह कलकत्ता के एक गोदाम में रखे हुए सरसों के तेल को बेच दे। बाद में A एक पत्र लिखकर B के अधिकार का खंडन कर देता है और B को आदेश देता है कि वह सरसों का तेल दिल्ली भेज दे। B, खंडन का पत्र प्राप्त करने के बाद C के साथ सरसों का तेल बेचने का अनुबंध कर लेता है। C को पहले पत्र की जानकारी है परन्तु दूसरे पत्र की जानकारी नहीं है। C एजेंट को मूल्य का भुगतान कर देता है जो रुपया लेकर फरार हो जाता है। A अनुबंध से बाध्य है तथा C द्वारा किया गया भुगतान A के प्रति वैध है।

11.16 अखंडनीय एजेंसी (Irrevocable Agency)

अखंडनीय एजेंसी से आशय ऐसी एजेंसी से है जिसे प्रधान द्वारा खंडित या समाप्त नहीं किया जा सकता है। अनुबंध अधिनियम में निम्नलिखित परिस्थितियों में एजेंसी अखंडनीय होती है:

1) **जब एजेंसी हित सहित होती है** (If the agency is coupled with interest): आप यह पढ़ चुके हैं जब एजेंट को मिलने वाले पारिश्रमिक के अलावा भी एजेंट को मिलने वाले किसी लाभ या हित के लिए एजेंसी की स्थापना की जाती है, तो ऐसी एजेंसी 'हित सहित एजेंसी' कहलाती है। धारा 202 में इस प्रकार की एजेंसी की व्याख्या इस प्रकार की गई है, **जब एजेंसी की विषय-वस्तु में स्वयं एजेंट का भी हित विद्यमान हो, तो ऐसी एजेंसी को किसी विपरीत स्पष्ट अनुबंध के अभाव में, इस हित के विरुद्ध समाप्त नहीं किया जा सकता।** सरल शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जब एजेंसी की विषय-वस्तु में एजेंट का कोई हित होता है, तो जब तक यह हित विद्यमान है, एजेंसी को समाप्त नहीं किया जा सकता। उदाहरणार्थ, A, B का 10,000 रुपये का ऋणी है और A, B को यह अधिकार देता है कि वह (B) उसके (A के) आगरा वाले मकान को बेच दे तथा विक्रय से प्राप्त धनराशि में से अपने ऋण की राशि काट ले। जब A ने इस प्रकार से B को अधिकार एक बार दे दिया तो फिर A इस अधिकार का खंडन नहीं कर सकता और न ही A की मृत्यु या उसके पागल होने पर एजेंसी समाप्त होगी। इस सम्बन्ध में हमें यह याद रखना चाहिए कि इस सिद्धान्त के अन्तर्गत लाभ प्राप्त करने के लिए यह आववश्यक है कि एजेंसी स्थापित करने का उद्देश्य एजेंट को कोई लाभ या हित प्रदान करना होना चाहिए। यह नियम ऐसी एजेंसी पर लागू नहीं होता जहाँ एजेंट का हित एजेंसी की स्थापना के बाद उत्पन्न होता है। इसे और स्पष्ट करने के लिए हम एक उदाहरण लेते हैं, A, B को रूई की 100 गांठे सौंपता है तथा B को आदेश देता है कि वह इसे उसकी (A) की ओर से बेच दे। बाद में, B कुछ धनराशि A को देता है। A ऋण चुकाने में असफल रहता है तथा वह B को आदेश देता है कि रूई न बेचे। A के आदेश की अवहेलना करके तथा अपनी रकम वसूल करने के लिए B रूई की गांठें बेच देता है। इस स्थिति में B रूई नहीं बेच सकता, क्योंकि एजेंसी की स्थापना के समय यह हित सहित एजेंसी नहीं थी। एजेंट का हित एजेंसी की स्थापना के बाद उत्पन्न हुआ है।

) **जब एजेंट ने अधिकार का आंशिक उपयोग कर लिया है** (Where the agent has partly exercised his authority): धारा 204 में एक अन्य स्थिति का वर्णन किया गया है जब एजेंसी अखंडनीय होती है। इसके अनुसार, जब एजेंट ने अपने अधिकारों का आंशिक उपयोग करके कुछ कार्य कर लिए हैं तो ऐसे कार्यों से उत्पन्न दायित्वों को प्रधान खंडित

नहीं कर सकता। इसका अर्थ है कि एजेंट ने जो कार्य कर लिए हैं उनके सम्बन्ध में प्रधान एजेंट के अधिकार का खंडन नहीं कर सकता तथा प्रधान की ओर से किए गये ऐसे कार्यों से प्रधान आबद्ध माना जाता है। उदाहरणार्थ, A अपने एजेंट B को अधिकार देता है कि वह (B) उसके (A) खाते में 1000 टन स्टेनल्स स्टील की चादरें खरीद ले और उसका (A) जो धन B के पास शेष है उसमें से इस का मूल्य भुगतान कर दे। एजेंट प्रधान के नाम से स्टील की चादरें खरीद लेता है। A 1000 टन स्टेनलेस स्टील की चादरें खरीदने के अधिकार का खंडन नहीं कर सकता।

3) **जब एजेंट ने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व ले लिया है (When the agent has incurred a personal liability) : यदि एजेंसी के करार का पालन करते हुए एजेंट ने कोई अनुबंध कर लिया है तथा कोई व्यक्तिगत उत्तरदायित्व ले लिया है, तो प्रधान ऐसी एजेंसी को समाप्त नहीं कर सकता। क्योंकि यदि प्रधान को एजेंट के अधिकार खंडित करने की अनुमति दे दी जाए तो उठाए गये दायित्व के सम्बन्ध में एजेंट को भारी जोखिम उठाना पड़ेगा। उदाहरणार्थ यदि उपर्युक्त उदाहरण में प्रधान के नाम के स्थान पर एजेंट अपने नाम से स्टेनलेस स्टील की चादरें खरीद लेता है, तो एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है। अत: एजेंसी अखंडनीय हो जाती है और प्रधान एकतरफा एजेंसी को समाप्त नहीं कर सकता।**

बोध प्रश्न ग

1 कोई भी ऐसी दो परिस्थितियाँ बताइए जिनमें एजेंट व्यक्तिगत दायित्व लेता है।

....

....

....

2 एजेंसी 'हित सहित एजेंसी' कब होती है ?

....

....

....

3 अप्रकट प्रधान कौन होता है ?

....

....

....

4 अखंडनीय एजेंसी क्या है ?

....

....

....

5 एजेंसी की समाप्ति कब प्रभावकारी होती है ?

....

....

....

6 निम्नलिखित मामलों का आप क्या निर्णय देंगे:

i) A, B का ऐसा एजेंट है जिसे उसकी (B) ओर से रकम प्राप्त करने का अधिकार है। C द्वारा B को देय रकम A प्राप्त करता है। क्या C अपने दायित्व से मुक्त हो गया ?

ii) R, E को 300 भेड़ें खरीदने का अधिकार सौंपता है। E 300 भेड़ें तथा 100 मेमनें 5,000 रुपये की एकमुश्त रकम में खरीद लेता है। R को क्या उपचार उपलब्ध है ?

iii) A पर B का 500 रुपये का ऋण है, वह B को 1,000 रुपये मूल्य का चावल बेचता है। इस संव्यवहार में A, C के एजेंट के रूप में कार्य कर रहा है परन्तु B को न तो इस बात की कोई जानकारी है और न ही उसके पास यह संदेह करने का उचित आधार ही है कि बात ऐसी है। C की B के विरुद्ध चावल लेने के लिए क्या स्थिति है ?

iv) A, B के साथ रूई की 100 गाँठे बेचने का अनुबंध करता है। बाद में A को यह पता चलता है कि B, C के एजेंट के रूप में कार्य कर रहा था। इस स्थिति में A का क्या अधिकार है ?

v) A, B को कुछ माल बेचने के लिए प्रेषित करता है तथा उसे निर्देश देता है कि एक निश्चित मूल्य से कम पर माल न बेचे। C, जिसे A के निर्देश की जानकारी नहीं है, B के साथ रिजर्व मूल्य से कम मूल्य पर माल खरीदने का अनुबंध कर लेता है। क्या प्रधान A इस अनुबंध से बाध्य है?

11.17 सारांश

एजेंट ऐसा व्यक्ति है जो तीसरे पक्षकारों के साथ लेन-देन करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति, जिसे प्रधान कहते हैं, का प्रतिनिधित्व करता है। अवयस्क एवं अस्वस्थ मस्तिष्क वाले व्यक्ति एजेंट नियुक्त किए जा सकते हैं परन्तु वे प्रधान नहीं हो सकते। प्रधान सदैव वयस्क तथा स्वस्थ मस्तिष्क का होना चाहिए। एजेंसी स्थापित करने के लिए प्रतिफल की कोई आवश्यकता नहीं होती।

नौकर तथा स्वतन्त्र ठेकेदार से एजेंट भिन्न होता है। उसकी स्थिति इन दोनों के बीच वाली है। पत्नी को पति का एजेंट नहीं कहा जाता। उसे अपने पति से स्पष्ट रूप से या उसके आचरण से निहित अधिकार मिलना चाहिए। पत्नी कुछ विशेष परिस्थितियों में ही पति की साख पर उधार ले सकती है।

एजेंटों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है —सामान्य या विशिष्ट एजेंट तथा व्यापारिक या गैर-व्यापारिक एजेंट। एजेंसी को ऐसे स्थापित किया जा सकता है (अ) स्पष्ट करार के द्वारा, (ब) निहित करार के द्वारा, (स) पुष्टीकरण द्वारा तथा (द) कानून के प्रवर्तन द्वारा। निहित करार के द्वारा एजेंसी होती है (i) प्रदर्शन के द्वारा, (ii) विबंधन द्वारा, (iii) आवश्यकता द्वारा। एजेंट का अधिकार वास्तविक या प्रत्यक्ष हो सकता है, जो स्पष्ट या निहित हो सकता है तथा यह दृश्यमान या प्रकटत: अधिकार हो सकता है।

एजेंट अपने अधिकारों का प्रत्यायोजन करके उप-एजेंट नियुक्त नहीं कर सकता। परन्तु इस नियम के कुछ अपवाद हैं। उप-एजेंट स्थानापन्न एजेंट से भिन्न होता है।

यदि कोई एजेंट अपने अधिकारों से बढ़कर कोई कार्य करता है या अधिकार के बिना कार्य करता है तो प्रधान ऐसे कार्यों की पुष्टि या अस्वीकार कर सकता है। पुष्टीकरण का अर्थ है स्वीकार करना और यह उस पूर्व तिथि से लागू होता है जब एजेंट ने मूलत: वह कार्य किया था। वैध पुष्टीकरण के लिए कुछ शर्तों को पूरा करना अत्यन्त आवश्यक है।

एजेंट के अधिकार ये हैं: (1) पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार, (2) माल रोकने का अधिकार, (3) पूर्वाधिकार तथा (4) क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार। एजेंट के कर्तव्य इस प्रकार हैं: (1) प्रधान के आदेशानुसार या व्यापार की प्रथा के अनुसार कार्य करना, (2) उचित सावधानी एवं कौशल से कार्य करना, (3) सही-सही हिसाब देना, (4) प्रधान से सम्पर्क बनाए रखना, (5) अपने नाम से व्यापार न करना, (6) एजेंसी के व्यापार के दौरान प्राप्त की गई सूचनाओं का प्रधान के विरुद्ध उपयोग न करना (7) कोई विपरीत अधिकार नहीं जताना, (8) गुप्त लाभ प्राप्त नहीं करना, (9) अधिकारों का स्वयं उपयोग करना, (10) प्रधान की मृत्यु या पागल हो जाने पर उसके हितों की रक्षा के लिए आवश्यक कदम उठाना।

एजेंट व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है, (1) जब वह स्पष्टत: सहमत होता है (2) जब वह विदेशी प्रधान के लिए कार्य करता है, (3) जब वह अप्रकट प्रधान के लिए कार्य करता है,

(4) जब प्रधान का पता लग जाता है किन्तु उस पर मुकदमा नहीं किया जा सकता हो, (5) जब प्रधान ऐसी कम्पनी है जिसका अभी अस्तित्व नहीं है, (6) जब एजेंट का अधिकार 'हित सहित' होता है, (7) जब व्यापार की प्रथा या रिवाज़ ऐसा चाहते हैं, (8) जब एजेंट कपट या गलती से धनराशि प्राप्त करता है, (9) जब एजेंट अपने अधिकारों से बाहर या अधिकार बिना कार्य करता है, (10) जब एजेंट स्वयं अपने नाम से अनुबंध करता है।

तीसरे पक्षकारों के प्रति एजेंट का दायित्व तीन शीर्षकों के अन्तर्गत आता है: (अ) जब प्रधान का नाम तथा अस्तित्व प्रकट कर दिया जाता है, तो एजेंट के अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्यों के लिए प्रधान उत्तरदायी होता है। एजेंट के द्वारा किए गये मिथ्यावर्णन तथा कपट के लिए प्रधान उत्तरदायी होता है। व्यापार के दौरान एजेंट को दी गई सूचना प्रधान को दी गई मानी जाती है। (ब) यदि प्रधान का अस्तित्व प्रकट किया जाता है नाम नहीं। यदि अनुबंध करने के समय प्रधान अस्तित्व में है तो वह उत्तरदायी होता है बशर्ते इसके विपरीत कोई स्पष्ट या निहित व्यापारिक प्रथा न हो। (स) जब प्रधान का न तो अस्तित्व प्रकट किया जाता है और न ही नाम (अप्रकट प्रधान)। एजेंट तीसरे पक्षकारों पर और तीसरे पक्षकार एजेंट पर मुकदमा चला सकते हैं। प्रधान स्वयं हस्तक्षेप कर सकता है। उस दशा में तीसरा पक्ष अनुबंध को समाप्त कर सकता है अन्यथा उसे वही अधिकार प्राप्त हैं जो उसे एजेंट के विरुद्ध प्राप्त थे, यदि एजेंट प्रधान होता तो।

एजेंसी को समाप्त किया जा सकता है: (अ) पक्षकारों के कार्य द्वारा अर्थात् प्रधान या एजेंट के कार्य द्वारा या दोनों के करार द्वारा। (ब) कानून के प्रवर्तन द्वारा। कानून के प्रवर्तन द्वारा एजेंसी समाप्तयों होती है: व्यापार का कार्य पूर्ण होने पर, किसी भी पक्षकार की मृत्यु या अस्वस्थ मस्तिष्क के हो जाने पर, प्रधान के दिवालिया होने पर, विषय-वस्तु के नष्ट होने पर, एजेंसी के लिए निश्चित अवधि के व्यतीत होने पर, जब प्रधान कम्पनी है तो उसके समापन पर, प्रधान के विदेशी शत्रु बन जाने पर। एजेंसी उस समय समाप्त होती है जब एजेंट को इसकी जानकारी होती है तथा तीसरे पक्षकारों के प्रति एजेंसी तब समाप्त होती है जब उन्हें इसकी जानकारी हो जाती है।

एजेंसी अखंडनीय होती है: (i) यदि एजेंसी 'हित सहित' एजेंसी है, (ii) जब एजेंट ने अधिकारों का आंशिक उपयोग कर लिया है, तथा (iii) जब एजेंट ने कोई व्यक्तिगत उत्तरदायित्व ले लिया है।

11.18 शब्दावली

एजेंट और प्रधान: एजेंट ऐसा व्यक्ति है जिसे तीसरे पक्षकारों के साथ लेन-देन करने में किसी व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार दिया जाता है। जिस व्यक्ति के लिए वह कार्य या प्रतिनिधित्व करता है, वह 'प्रधान' कहलाता है।

विबंध द्वारा एजेंसी: जब कोई व्यक्ति अपने कथन या आचरण से किसी दूसरे व्यक्ति को यह विश्वास करने के लिए स्वेच्छा से प्रेरित करता है कि कुछ विशेष परिस्थितियाँ या तथ्यों का अस्तित्व है, और दूसरे व्यक्ति ने उस पर विश्वास करके कार्य कर लिया है, तो वह प्रथम व्यक्ति ऐसे कथन या आचरण की सत्यता से इंकार नहीं कर सकता।

प्रदर्शन द्वारा एजेंसी: इसमें प्रधान की ओर से कोई स्वीकारात्मक आचरण होता है।

पुष्टीकरण द्वारा एजेंसी: यदि एजेंट को प्रधान की ओर से अनुबंध करने का अधिकार नहीं है या एजेंट अधिकारों से बाहर कार्य करता है तो प्रधान बाद में ऐसे कार्यों को स्वीकार करके वैध बना सकता है।

आवश्यकता द्वारा एजेंसी: कई बार ऐसी परिस्थिति हो जाती है कि किसी व्यक्ति को, जो वास्तव में एजेंट नहीं है, दूसरे के एजेंट के रूप में कार्य करना पड़ता है।

नीलामकर्ता: यह ऐसा एजेंट है जिसे सार्वजनिक प्रतियोगिता में अधिकतम बोली लगाने वाले व्यक्ति को माल बेचने के इरादे से सुपुर्द किया जाता है।

वास्तविक अधिकार: प्रधान और एजेंट के बीच हुए करार द्वारा निर्मित अधिकार।

हित सहित एजेंसी: जब एजेंसी के व्यापार की विषय-वस्तु में एजेंट का कोई हित विद्यमान हो।

दलाल: जो दूसरों के लिए सौदे करता है तथा अपने कार्यों के लिए कमीशन (दलाली) प्राप्त करता है।

आश्वासी (डेल-क्रेडर) एजेंट: यह ऐसा एजेंट है जो अतिरिक्त कमीशन, जिसे आश्वासनार्थ कमीशन कहते हैं, के बदले प्रधान को इस बात की गारंटी देता है कि जिन व्यक्तियों के साथ उसने अनुबंध किया है वे अपने वचन का पालन करेंगे।

अधिकारों को और आगे प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता: एक एजेंट अपने अधिकारों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता अर्थात् जिस कार्य को करने का दायित्व उसने स्वयं लिया है वह उस कार्य को किसी अन्य से नहीं करवा सकता।

आढ़तिया: यह ऐसा एजेंट है जिसके कब्जे में माल होता है तथा जिसे माल खरीदने, बेचने या अन्यथा लेन-देन करने या उसकी जमानत पर रुपया उधार लेने का अधिकार होता है।

सामान्य एजेंट: ऐसा व्यक्ति जो किसी विशेष व्यापार या रोजगार से सम्बन्धित सभी कार्य कर सकता है या जो व्यापार के सामान्य कार्य संचालन में किया जाता है।

दृश्यमान अधिकार: जब किसी व्यक्ति को किसी व्यापार या उद्देश्य के लिए एजेंट प्रदर्शित किया जाता है, तो उसके साथ लेन-देन करने वाले व्यक्तियों को यह मान लेने का हक है कि उसे उस व्यापार से सम्बन्धित सभी आवश्यक व प्रासंगिक कार्य करने का अधिकार है।

विशेष एजेंट: किसी विशेष लेन-देन के लिए नियुक्त किया गया व्यक्ति।

उप-एजेंट: ऐसा व्यक्ति जो एजेंट द्वारा नियुक्त किया जाता है तथा एजेंट के नियन्त्रण में कार्य करता है।

स्थानापन्न एजेंट: मूल एजेंट द्वारा नामित एजेंट, यह प्रधान के नियन्त्रण में कार्य करता है।

11.19 बोध प्रश्नों के उत्तर

6 i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) गलत, vi) गलत, vii) सही, viii) गलत।

7 i) यह विबन्ध द्वारा एजेंसी है। यहाँ A, C के प्रति उत्तरदायी है।

ii) हाँ। प्रदर्शन द्वारा एजेंसी होने के कारण प्रधान C को भुगतान करने के लिए बाध्य है। A ने पहले B को अपना एजेंट प्रदर्शित किया है, अत: वह B के बाद के लेन-देनों के लिए उत्तरदायी है।

iii) नहीं। A उत्तरदायी नहीं है। इस रोजगार में एक एडवोकेट अपने अधिकारों का दूसरे को प्रत्यायोजन करता है, जब तक कि इस संबंध में मुवक्किल और वकील के बीच अन्यथा सहमति न हुई हो। यह इस रोजगार की प्रथा है। यहाँ पर B स्थानापन्न एजेंट है।

iv) स्थानापन्न एजेंट सीधा प्रधान के प्रति उत्तरदायी होता है। अत: वकील Z के प्रति उत्तरदायी नहीं है।

5 i) सही, ii) सही, iii) सही, iv) सही, v) सही, vi) गलत, vii) गलत viii) सही

6 i) हाँ। B को अदा की जाने वाली रकम के दायित्व से C मुक्त हो गया (धारा 226)
ii) R सम्पूर्ण संव्यवहार को रद्द कर सकता है (धारा 228)
iii) C, A पर बकाया ऋण की मुजराई किए बिना, B को चावल लेने के लिए बाध्य नहीं कर सकता (धारा 232)

iv) A, B पर या C पर या दोनों पर मुकदमा चला सकता है (धारा 233)

v) A अनुबंध से बाध्य है (धारा 237)

11.20 स्वपरख प्रश्न (Terminal Questions)

1 'एजेंट' तथा 'प्रधान' की परिभाषा कीजिए। अवयस्क क्या एजेंट हो सकता है ?

2 एजेंसी किस प्रकार स्थापित की जा सकती है ?

3 पत्नी किस सीमा तक पति की साख पर उधार ले सकती है जब वह: (i) पति के साथ रहती है, तथा (ii) पति से अलग रहती है ?

4 एजेंट के अधिकारों एवं कर्तव्यों की व्याख्या कीजिए।

5 प्रधान की ओर से किए गये अनुबंधों के लिए एजेंट कब व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है?

6 "प्रत्यायोजित अधिकार का और आगे प्रत्यायोजन नहीं हो सकता (Delegatus non protest delgare)"। एजेंसी के सम्बन्ध में इस नियम के परिणाम बताइए तथा इस नियम के अपवाद बताइए।

7 प्रधान के दायित्व का क्षेत्र बताइए जब एजेंट ने (i) दृश्यमान अधिकारों के अन्तर्गत, (ii) व्यापार के दौरान कार्य किया है।

8 'प्रधान एजेंट के अधिकार का खंडन कर सकता है, परन्तु ऐसा करने का उसे अधिकार नहीं है'। इस कथन की सत्यता उदाहरण दे कर स्पष्ट कीजिए।

9 किन परिस्थितियों में कोई व्यक्ति उसकी ओर से किए गये ऐसे कार्यों की पुष्टि कर सकता है जो उसके अधिकार के बिना किए गये हैं ?

10 यदि एजेंट: (अ) प्रकट प्रधान के लिए, (ब) अप्रकट प्रधान के लिए, तथा (स) अनामित प्रधान के लिए कार्य करता है तो एजेंट, प्रधान एवं तीसरे पक्षकारों के क्रमशः अधिकार लिखिए।

11 वे परिस्थितिया बताइए जब एजेंसी को समाप्त किया जा सकता है। यह समाप्ति कब प्रभावकारी होती है ?

12 एजेंसी कब अखंडनीय होती है ?

> **नोट:** इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 12 पंचनिर्णय

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 पंचनिर्णय किसे कहते हैं ?
 12.2.1 पंचनिर्णय करार
 12.2.2 पंचनिर्णय करार के आवश्यक तत्व
 12.2.3 पंचनिर्णय के लाभ और हानियाँ
 12.2.4 पंचनिर्णय करार का प्रभाव
12.3 पंचनिर्णय के लिए कौन सौंप सकता है ?
12.4 सौंपी जाने वाली विषय-वस्तु
12.5 पंचनिर्णय की विधियाँ
12.6 पंचनिर्णय करार में निहित प्रावधान
12.7 पंचों की नियुक्ति
12.8 प्राधिकार का खंडन
 12.8.1 न्यायालय की अनुमति से खंडन
 12.8.2 न्यायालय द्वारा हटाना
 12.8.3 पंच के हटाये जाने या उसके प्राधिकार के खंडन की स्थिति में न्यायालय की शक्तियाँ
12.9 पंच या अधिनिर्णायक के अधिकार
12.10 पंच या अधिनिर्णायक के कर्तव्य
12.11 पंच का पारिश्रमिक
12.12 पंचाट
 12.12.1 पंचाट में संशोधन
 12.12.2 पंचाट को पुनर्विचार के लिए वापस भेजना
 12.12.3 पंचाट को रद्द करना
12.13 न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय, जब कोई वाद विचाराधीन न हो
12.14 पंचनिर्णय जब कोई वाद विचाराधीन हो
12.15 सारांश
12.16 शब्दावली
12.17 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.18 स्वपरख प्रश्न

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकें कि:

- पंचनिर्णय का अर्थ बता सकें
- पंचनिर्णय का प्रभाव बता सकें
- उन मामलों की सूची बना सकें जिन्हें पंचनिर्णय के लिए सौंपा जा सकता है और जिन्हें सौंपा नहीं जा सकता है
- पंच की नियुक्ति की प्रक्रिया की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकें
- उन परिस्थितियों को बता सकें जब पंच के प्राधिकार का खंडन किया जा सकता है
- पंचों के अधिकार और कर्तव्य बता सकें
- उन परिस्थितियों का वर्णन कर सकें जब पंचाट में संशोधन किया जा सके या पुनर्विचार के लिए वापस भेजा जा सके या उसे रद्द किया जा सके।

12.1 प्रस्तावना

पंचनिर्णय (Arbitration) का अर्थ केवल यह है कि दो या अधिक पक्षकारों के बीच विवाद का निपटारा एक साधारण न्यायालय की बजाय एक या एक से अधिक ऐसे व्यक्तियों द्वारा किया जाए जिनकी नियुक्ति विवाद के पक्षकारों द्वारा की गई हो। भारत में विवादों को निपटाने की यह प्रथा अतिप्राचीन समय से प्रचलित है। अभी भी, ग्रामीण क्षेत्रों में बड़ी संख्या में विवादों का निपटारा पंच या पंचायत द्वारा किया जाता है। यह पक्षकारों के बीच विवादों को शीघ्र निपटाने का एक कम खर्चीला तरीका है। इस इकाई में आप पढ़ेंगे कि किन मामलों को पंच निर्णय के लिए सौंपा जा सकता है तथा पंचों की नियुक्ति सम्बन्धी प्रक्रिया क्या होती है। आप उन परिस्थितियों के बारे में भी पढ़ेंगे जब पंचों के प्राधिकार का खंडन किया जा सकता है। पंच का निर्णय पंचाट के रूप में होता है। लेकिन कभी-कभी इसमें संशोधन किया जा सकता है या उसे पुनर्विचार के लिए वापस भेजा जा सकता है या इसे रद्द किया जा सकता है। जब कोई वाद-विवाद न्यायालय में विचाराधीन नहीं है तो न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय सम्बन्धी नियमों के बारे में भी आप इस इकाई में पढ़ेंगे।

12.2 पंचनिर्णय किसे कहते हैं ?

पंचनिर्णय पक्षकारों के बीच विवाद के किसी मामले या मामलों को एक या एक से अधिक व्यक्तियों को निर्णय के लिए सौंपना है। सरल शब्दों में पंचनिर्णय से अभिप्राय एक या एक से अधिक व्यक्तियों, जिन्हें पंच कहते हैं, द्वारा दिये गये फैसले के आधार पर विवाद का निपटारा करने से है। यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके द्वारा विवाद की छानबीन की जाती है और पक्षकारों द्वारा चुने हुए एक या एक से अधिक गैर सरकारी व्यक्तियों द्वारा विवाद का निपटारा किया जाता है। साधारण न्यायालय की प्रक्रिया के तकनीकी और खर्चीली होने के कारण कभी-कभी लोग न्यायालय जाना पसंद नहीं करते। यह विवादों को न्यायिककल्प (quasi–judicial) ढंग से निपटाने का एक तरीका है। सम्बन्धित पक्षकार पंचों द्वारा दिए गए निर्णय से बाध्य होते हैं। पंच को विवाद का फैसला एक न्यायिक ढंग से करना चाहिए। कानून, जहाँ तक संभव हो, पक्षकारों को अपने मतभेदों या विवादों को पंचनिर्णय द्वारा निपटाने के लिये प्रोत्साहित करता है। भारत में "पंचनिर्णय सम्बन्धी कानून" पंचनिर्णय अधिनियम, 1940 में दिया गया है। उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि प्रत्येक पंचनिर्णय के तीन आवश्यक तत्त्व हैं।

i) दो व्यक्तियों के बीच ऐसा विवाद जिसके निपटाने की जरूरत है

ii) किसी तीसरे व्यक्ति को विवाद निपटाने के लिये सौंपना, और

iii) तीसरे व्यक्ति द्वारा अपनी विवेक बुद्धि के अनुसार निर्णय देना।

12.2.1 पंचनिर्णय करार

"पंचनिर्णय करार" से आशय एक ऐसे लिखित करार से होता है जिसके अन्तर्गत वर्तमान या भावी मतभेदों या विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने की व्यवस्था की जाती है, चाहे उसमें पंच के नाम का उल्लेख हो या न हो। अधिनियम की धारा 2(a) में दी गई इस परिभाषा से यह स्पष्ट है कि एक पंच निर्णय करार के वैध और आबद्धकर होने के लिये इसका लिखित रूप में होना जरूरी है और यह किसी वर्तमान या भविष्य के विवादों के सम्बन्ध में होना चाहिए। लिखित करार में पंच के नाम का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है और न ही पक्षकारों के हस्ताक्षर होना आवश्यक है। यह भी आवश्यक नहीं है कि करार एक प्रारूपिक दस्तावेज़ के रूप में हो। लिखित करार को पक्षकारों द्वारा मौखिक रूप में स्वीकार करना ही पर्याप्त है।

12.2.2 पंचनिर्णय करार के आवश्यक तत्त्व

1 **करार होना चाहिये**: क्योंकि पंच निर्णय एक प्रकार का अनुबंध है, इसलिए यह

आवश्यक है कि पक्षों के बीच एक करार हो। जब हम यह कहते हैं कि एक करार होना चाहिए तो इसका अर्थ यह है कि इसमें एक वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्व होने चाहिये जैसे कि दोनों विरोधी पक्षों की स्वतंत्र सम्मति होनी चाहिये अर्थात् यह किसी ज़बरदस्ती, कपट, मिथ्या निरूपण से प्राप्त नहीं की गई हो।

यह लिखित होना चाहिये: पंचनिर्णय करार का लिखित होना आवश्यक है। विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का मौखिक करार आबद्धकर नहीं होता। इसका किसी विशेष रूप में होना जरूरी नहीं है और न ही इस पर पक्षकारों के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं। परन्तु इस बात का पर्याप्त प्रमाण होना चाहिये कि पक्षकारों का अपने मतभेदों को पंचनिर्णय द्वारा निपटाने का इरादा है। किसी निविदा (tender) या कार्य आदेश की स्वीकृति जिसमें पंचनिर्णय खण्ड है, या ऐसी संस्था की सदस्यता जिसके संविधान में पंचनिर्णय का प्रावधान है या एक अनुबंध जिसमें पंचनिर्णय खण्ड है, पंच निर्णय करार के होने को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त हैं। पक्षकारों के बीच हुए पत्र-व्यवहार द्वारा भी करार को साक्ष्यित किया जा सकता है।

विवाद का होना आवश्यक है: वर्तमान या भविष्य में विवाद होना चाहिये, जिसे पंचनिर्णय को सौंपने का विचार है। "विवाद" शब्द की अधिनियम में परिभाषा नहीं दी गई है। हम कह सकते हैं कि विवाद का अर्थ है एक पक्ष द्वारा किसी अधिकार का प्राख्यान और दूसरे पक्ष द्वारा इसका निराकरण भविवष्य के विवादों को पंच निर्णय के लिए सौंपने के करार में, जब तक वास्तव में विवाद उत्पन्न न हो, पंच की अधिकारिता उत्पन्न नहीं होती। कोई खास विवाद करार के क्षेत्र में आता है या नहीं, यह व्याख्या का प्रश्न है। यह याद रखिये की जिस मामले पर विवाद है वह सिविल प्रकृति का होना चाहिये क्योंकि आपराधिक (criminal) प्रकृति के मामले पंचनिर्णय के लिए नहीं सौंपे जा सकते। सिविल प्रकृति के मामलों से हमारा तात्पर्य धन सम्बन्धी विवादों, सम्पत्ति सम्बन्धी मामलों और अनुबंध के निष्पादन न करने सम्बन्धी मामलों से है।

इसमें एक वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्व होने चाहिये: पंचनिर्णय करार एक विशेष प्रकार का अनुबंध है। अत: इसमें एक वैध करार के सभी आवश्यक तत्व होने चाहिये। अनुबंध करने योग्य प्रत्येक व्यक्ति पंचनिर्णय करार का एक पक्षकार हो सकता है। इस प्रकार एक व्यक्ति जो अनुबंध करने के लिये अक्षम है (उदाहरण के लिये एक अवयस्क या एक विकृत चित्त वाला व्यक्ति) पंचनिर्णय के लिए सौंप नहीं सकता। यदि किसी पक्ष की सहमति कपट या अनुचित प्रभाव से प्राप्त की गई है, तो अन्य किसी करार की तरह इस करार को समाप्त किया जा सकता है। पंचनिर्णय करार की शर्तें सुस्पष्ट और निश्चित होनी चाहियें। यदि शर्तें अस्पष्ट हैं तो इसे प्रवर्तित नहीं कराया जा सकता।

पंचनिर्णय के लिए सौंपने का निर्णय एकमत से होना चाहिए: विवाद के मामले में दिलचस्पी रखने वाले सभी व्यक्ति विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के लिये एकमत से सहमत होने चाहियें। एकमत करार के बिना करार अवैध होगा और इससे पंच को विवाद का निर्णय करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता। ऐसी स्थिति में यदि पंच निर्णय दिया जाता है तो वह अवैध होगा और सहमत पक्षों को भी आबद्ध नहीं करेगा। आपने इस तथ्य पर ध्यान दिया होगा कि पंचनिर्णय करार लिखित होना चाहिये लेकिन करार में पंचों के नाम का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। इस बारे में बाद में निर्णय किया जा सकता है। यदि पंचनिर्णय करार में ऊपर बताये गये आवश्यक तत्व नहीं हैं तो वह अविधिमान्य (invalid) तथा अप्रवर्तनीय होगा।

जब एक अनुबंध में पंचनिर्णय खण्ड है और अनुबंध बाद में होने वाली असम्भवता के कारण समाप्त हो जाता है या कपट या मिथ्या निरूपण के आधार पर व्यर्थ कर दिया जाता है, तब पंचनिर्णय खण्ड फिर भी प्रवर्तनीय हो सकता है। लेकिन यदि अनुबंध ही नहीं है तो पंचनिर्णय खण्ड आबद्धकर नहीं होगा। इसी प्रकार यदि करार ही गैर-कानूनी है तो पंचनिर्णय खण्ड जो अनुबंध का एक भाग है, भी गैर-कानूनी और अप्रवर्तनीय बन जाएगा।

12.2.3 पंचनिर्णय के लाभ और हानियाँ

i) न्यायालय में वाद की तुलना में यह कम खर्चीला है।

ii) इसमें समय कम लगता है।

iii) इसकी प्रक्रिया सरल और अनौपचारिक होती है।

iv) इसमें प्रचार नहीं होता। न्यायालय में मुकदमें के फैसले के बाद जो कटुता उत्पन्न होती है वह इसमें नहीं होती।

v) पंचनिर्णय साधारणतया अन्तिम होता है और इसके विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती।

ये लाभ इस मान्यता पर निर्भर हैं कि पंच एक सक्षम व्यक्ति है और वह निष्पक्ष रूप में कार्य करेगा। पंचनिर्णय की मुख्य सीमा यही है कि पंच के सक्षम न होने पर और अनौपचारिक प्रक्रिया के कारण, भय रहता है कि न्याय न हो।

12.2.4 पंचनिर्णय करार का प्रभाव

जब पक्षकार विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का करार करने के लिए सहमत हो जाते हैं तो कोई भी पक्ष मामले को निपटाने के लिये उसे न्यायालय में नहीं ले जा सकता। इसका कारण बहुत सरल है, क्योंकि यदि एक पक्ष को मामले को न्यायालय में ले जाने की अनुमति दे दी जाती है तो पंचनिर्णय का उद्देश्य ही विफल हो जाता है। यदि एक पक्ष पंचनिर्णय करार की अवहेलना करके न्यायालय में वाद प्रस्तुत करता है तो दूसरा पक्ष कानूनी कार्यवाही को रोकने के लिये न्यायालय को आवेदन कर सकता है (धारा 34)। यदि न्यायालय संतुष्ट है तो वह कार्यवाहियों को रोकने का आदेश दे सकता है। यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाती हैं तो न्यायालय कार्यवाहियों के रोकने का आदेश जारी कर सकता है:

i) वाद के पक्षकारों के बीच एक वैध व आबद्धकर पंचनिर्णय करार है और रोक याचिका पंचनिर्णय करार के एक पक्ष द्वारा दी जा रही है या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा दी जा रही है जो उसके अधीन दावा कर रहा है।

ii) वाद या कार्यवाहियाँ ऐसे किसी मामले से सम्बन्धित हैं जो पंचनिर्णय करार के क्षेत्र में आता है। यदि ये ऐसे मामलों से सम्बन्धित हैं जो पंचनिर्णय करार के क्षेत्र से बाहर हैं तो रोक आदेश नहीं दिया जाएगा।

iii) रोक याचिका देने वाले पक्ष को न्यायालय को संतुष्ट करना होगा कि वह पंचनिर्णय कराने का पहले भी इच्छुक था तथा अब भी है।

iv) रोक की माँग करने वाला पक्ष पंचनिर्णय करार भंग करने का दोषी नहीं होना चाहिए।

v) रोक याचिका यथासंभव शीघ्र दी जानी चाहिये अर्थात् आवेदक द्वारा वाद या कार्यवाही के सम्बन्ध में कोई कदम नहीं उठाया जाना चाहिये। कोई लिखित बयान दाखिल करने से पहले या कार्यवाही में कोई अन्य कदम उठाने से पहले उसे रोक के लिए आवेदन करना चाहिये। लिखित बयान दाखिल करने या स्थगन या समय बढ़ाने के लिये दिये गए आवेदन-पत्र को कार्यवाहियों में उठाया गया कदम माना गया है और यह प्रार्थी को रोक माँगने के हक से वंचित करता है।

vi) पंचनिर्णय करार किसी कपट का परिणाम नहीं होना चाहिये।

vii) न्यायालय को इस बारे में भी संतुष्ट किया जाना चाहिये कि विवाद को पंचनिर्णय के लिए न सौंपने का कोई पर्याप्त कारण विद्यमान नहीं है। यदि न्यायालय संतुष्ट हो जाता है कि कार्यवाहियों को रोकने के लिए वैध और पर्याप्त कारण हैं, तो वह वाद या कार्यवाहियों को रोक देगा। इस प्रावधान का उद्देश्य यह है कि पक्षकार विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के करार का आदर करें। रोक का विरोध करने वाले पक्ष को न्यायालय को इस बात का विश्वास दिलाना होगा कि वाद या कार्यवाहियों को एक नियमित न्यायालय में जारी रखने के और रोक प्रदान न करने के सुदृढ़ कारण हैं। यह ध्यान रखें कि इस सम्बन्ध में न्यायालय के पास विवेकाधिकार है।

12.3 पंचनिर्णय के लिये कौन सौंप सकता है ?

आपने यह पढ़ा है कि पंचनिर्णय करार किसी अन्य अनुबंध के समान है, अत: केवल वही व्यक्ति जो अनुबंध के लिये सक्षम हैं विवाद को पंचनिर्णय के लिये सौंप सकते हैं। अत: पंचनिर्णय करार के पक्षकारों में अनुबंध करने की क्षमता अवश्य होनी चाहिये। पंचनिर्णय के लिए सौंपने की क्षमता अनुबंध करने की क्षमता के साथ यह-विस्तृत है। जो व्यक्ति अनुबंध करने के लिये अक्षम है वे विवाद को पंचनिर्णय के सुपुर्द नहीं कर सकते। इस प्रकार, एक अवयस्क व्यक्ति विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने में असमर्थ है। अगले भाग में विभिन्न व्यक्तियों के पंचनिर्णय को सुपुर्द करने की सामर्थ्य का विवरण दिया गया है।

i) **अवयस्क:** अवयस्क अनुबंध करने के लिये अक्षम होता है इसलिए वह विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंप नहीं सकता। परन्तु अवयस्क अपने अभिभावक के ज़रिये विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंप सकता है बशर्ते कि यह उचित हो और अवयस्क के हित में हो तथा अभिभावक का हित अवयस्क के हित के प्रतिकूल न हो।

ii) **कर्ता या संयुक्त हिन्दू परिवार का प्रबंधक:** कर्ता या संयुक्त हिन्दु परिवार का प्रबंधक परिवार के लाभ के लिये सद्भावपूर्वक कार्य करते हुए पारिवारिक सम्पत्ति सम्बन्धी विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंप सकता है और कपट व दूषित स्थितियों के न होने पर पंचनिर्णय अवयस्कों सहित परिवार के सभी सदस्यों के लिए आबद्धकर होगा।

iii) **एजेन्ट:** विधिवत् प्राधिकृत एजेंट पंचनिर्णय करार कर सकता है और अपने प्रधान को आबद्ध कर सकता है।

अटार्नी या वकील: अटार्नी या वकील के पास विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का निहित अधिकार होता है। लेकिन अभिव्यक्त करार द्वारा इस अधिकार को कम किया जा सकता है।

v) **ट्रस्टी:** एक ट्रस्टी, उचित सद्भावपूर्वक कार्य करते हुए ट्रस्ट से सम्बन्धित किसी भी विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंप सकता है।

vi) **अधिकारिक प्रतिनिधि या रिसीवर:** न्यायालय की अनुमति से ये भी किसी विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंप सकते हैं और वे सभी ऋणों, दावों और दायित्वों के संबंध में समझौता कर सकते हैं।

vii) **संयुक्त पूंजी कम्पनी:** एक कम्पनी, अपने ज्ञापन-पत्र और संस्था की अन्तर्नियमावली के उपबंधों के अधीन विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंप सकती है।

साझेदारी पर जिस इकाई में चर्चा की गई थी, वहाँ आपको बताया गया था कि किसी भी साझेदार को विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का कोई निहित अधिकार नहीं होता। इसी प्रकार एक दिवालिया भी विवाद को अपनी संपदा को आबद्ध करने के लिये पंचनिर्णय के लिए सौंप नहीं सकता।

12.4 सौंपी जाने वाली विषय-वस्तु

साधारणतया दीवानी के सभी विवाद और मामले अर्थात वे मामले जो दीवानी अदालत को सौंपे जा सकते हैं, पंचनिर्णय की विषय-वस्तु हो सकते हैं। इस प्रकार, ऐसे मामले जो पूर्णतया आपराधिक प्रकृति के हैं, पंचनिर्णय के लिए नहीं सौंपे जा सकते।

निम्नलिखित मामलों से सम्बन्धित विवाद पंचनिर्णय के सुपुर्द किए जा सकते हैं

i) पक्षों के बीच व्यक्तिगत अधिकारों से सम्बन्धित मामले, उदाहरण के लिये मंदिर में पुजारी का पद धारण करने का अधिकार, पत्नी को देय भरण-पोषण की राशि का मामला।

ii) अनुबंध भंग करने की स्थिति में हर्जाना निर्धारित करने से सम्बन्धित विवाद।

iii) दिवालिया और उसके ऋणदाताओं के बीच विवादों को भी पंचनिर्णय के सुपुर्द किया जा सकता है।

iv) प्रशंसा, गरिमा और अतिचार सम्बन्धी विवाद।

v) कालातीत दावा भी सौंपा जा सकता है।

vi) तथ्य और विधि के प्रश्नों को भी सौंपा जा सकता है।

vii) चल सम्पत्ति सम्बन्धी विवाद।

क्या नहीं सौंपा जा सकता: निम्नलिखित मामले पंचनिर्णय के लिए नहीं सौंपे जा सकते:

i) विवाह-विषयक मामले-तलाक या दांपत्य अधिकारों के प्रत्यापन का दावा।

ii) दिवाला सम्बन्धी मामले।

iii) गैर-कानूनी सौदों से उत्पन्न विवाद।

iv) सार्वजनिक दान और पुण्यार्थ न्यासों से सम्बन्धित विवाद।

v) अवयस्क के अभिभावक की नियुक्ति का प्रश्न।

vi) वसीयत के असली होने सम्बन्धी प्रश्न।

vii) पागलपन सम्बन्धी कार्यवाहियाँ।

viii) आपराधिक प्रकृति के मामले।

बोध प्रश्न क

1 पंचनिर्णय करार को परिभाषित कीजिये।

....

....

....

2 पंचनिर्णय करार के आवश्यक तत्व बताइये।

....

....

....

3 पंचनिर्णय के लाभ बताइये।

....

....

....

4 पंचनिर्णय करार का क्या प्रभाव होता है ?

....

....

....

5 कौन से मामले पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द किये जा सकते हैं ?

....

....

....

6 बताइये, निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) पंचनिर्णय करार लिखित या मौखिक हो सकता है। ....

ii) एक अवयस्क स्वयं विवादों को पंचनिर्णय के लिए नहीं सौंप सकता। . . . .

iii) जब पंचनिर्णय करार का एक पक्ष करार में शामिल किसी मामले के बारे में कानूनी कार्यवाहियाँ शुरू करता है, तो दूसरे पक्ष द्वारा आवेदन-पत्र देने पर न्यायालय कार्यवाहियों को रोक सकता है। . . . .

iv) दिवालियापन के मामले पंचनिर्णय के लिए सौंपे जा सकते हैं। . . . .

v) कालातीत दावा भी सौंपा जा सकता है। . . . .

vi) विवाह-विषयक मामले नहीं सौंपे जा सकते। . . . .

12.5 पंचनिर्णय की विधियाँ

यह पढ़ने के बाद कि कौन से मामले पंचनिर्णय के लिए सौंपे जा सकते हैं और कौन से नहीं, अगला प्रश्न यह उठता है कि विवाद पंचनिर्णय के लिए कैसे सुपुर्द किया जाए। अधिनियम में विवाद को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द करने के तीन तरीकों की व्यवस्था है। ये हैं

1 **न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना पंचनिर्णय:** विवाद के पक्षकार न्यायालय से बाहर अपने विवादों को पंचनिर्णय द्वारा निपटाने के लिये सहमत हो सकते हैं। लेकिन इन स्थितियों में भी पक्षकारों को न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप कराने का अधिकार दिया जाता है। पंचनिर्णय दाखिल कराने के समय न्यायालय के पास जाना चाहिये, ताकि न्यायालय पंचनिर्णय के अनुरूप निर्णय सुना सके और पंचनिर्णय के निबंधनों के अनुसार डिक्री दे सके।

2 **न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय, जब कोई वाद विचाराधीन न हो:** यद्यपि पक्षकारों ने अपने विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का करार किया हो तब भी कोई भी पक्षकार, विवाद को पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द करने से पहले, न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि पंचनिर्णय करार न्यायालय में फाइल किया जाये। इस प्रकार का आवेदन-पत्र लिखित होना चाहिए और इसे सिविल वाद की भांति रजिस्टर किया जायेगा। ऐसा आवेदन-पत्र प्राप्त होने पर न्यायालय अन्य पक्षों को नोटिस देगा कि वे निश्चित समय में कारण बताएँ कि करार न्यायालय में फाइल क्यों नहीं किया जाना चाहिये। यदि इसके विरुद्ध पर्याप्त कारण नहीं बताया जाता है तो न्यायालय करार फाइल करने का आदेश देगा और मामला पंचों को सौंपा जाता है। विवाद को पक्षों द्वारा नियुक्त किये गये पंचों को सौंपा जाता है। जब पक्षों में किसी पंच के लिए सहमति नहीं होती तब न्यायालय पंच नियुक्त करता है और विवाद इस पंच को सौंप दिया जाता है। यह प्रक्रिया पंचनिर्णय करार पर न्यायालय की अनुमोदन मोहर प्राप्त करने में सहायक होती है।

न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय, जब न्यायालय में कोई वाद विचाराधीन हो: कभी-कभी पक्षकार सिविल वाद फाइल करने के बाद विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के लिये सहमत हो सकते हैं। ऐसी स्थिति में पक्षों को निर्देश का आदेश (order of reference) प्राप्त करने के लिये न्यायालय में लिखित आवेदन पत्र देना होता है। ऐसा आवेदन पत्र निर्णय दिये जाने से पहले ही प्रस्तुत किया जा सकता है। जब ऐसा आवेदन पत्र दिया जाता है तो न्यायालय विवाद को पंचनिर्णय के लिये सौंपने को विधिवत आबद्ध हो जाता है और तब पंच उस ढंग से नियुक्त किये जाते हैं जैसा पक्षकारों ने तय किया हो। न्यायालय पंचाट देने के लिये समय का भी विशेष रूप से उल्लेख कर सकता है। मामले को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द करने के बाद, न्यायालय ऐसे मामले में आगे कोई कार्यवाही नहीं करेगा। यदि वाद के कुछ पक्ष न्यायालय से विवादग्रस्त विषय को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द करने के लिये कहते हैं, तो न्यायालय अपने विवेकाधिकार से

ऐसा कर सकता है, बशर्ते कि उन पक्षों का हित इस वाद की विषय-वस्तु से पृथक् किया जा सकता हो। पंचाट केवल सहमत पक्षों पर ही आबद्धकर होगा। ऐसे मामलों में, न्यायालय, उन पक्षों के बीच, जिन्होंने पंचनिर्णय के लिये सहमति नहीं दी है, निर्दिष्ट विषय वस्तु पर कार्यवाही जारी रख सकता है।

12.6 पंचनिर्णय करार में निहित प्रावधान

जब पक्षकार अपने विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का करार करते हैं तो वे पंचनिर्णय के लिये अपनी शर्तें निर्धारित करने के लिये स्वतंत्र होते हैं। जब तक पंचनिर्णय करार में कोई भिन्न इरादा न व्यक्त किया जाए, यह मान लिया जाता है कि प्रथम अनुसूची में दिये गये प्रावधान लागू होंगे। प्रथम अनुसूची में दिये गए प्रावधान इस प्रकार हैं:

1 जब तक स्पष्ट रूप से अन्यथा व्यवस्था नहीं की गई हो, मामला एकमात्र पंच को सौंपा जाएगा। इस प्रकार यदि पक्षकार एक से अधिक पंच चाहते हैं तो उन्हें करार में इसकी स्पष्ट रूप में व्यवस्था करनी चाहिए।

2 यदि मामला समसंख्यक पंचों को सौंपा गया है तो पंच अपनी नियुक्तियों की सबसे अन्तिम तिथि से एक महीने के भीतर एक अधिनिर्णायक (umpire) की नियुक्ति कर सकते हैं और इसके लिये समय निश्चित कर सकते हैं।

3 पंचों को, उन्हें मामला सौंपे जाने, अथवा पंचनिर्णय करार के किसी पक्षकार के लिखित नोटिस द्वारा कार्यवाही आरम्भ करने की माँग किए जाने की तिथि से चार माह के भीतर, अथवा न्यायालय द्वारा बढ़ायी गई अवधि के भीतर, अपना निर्णय देना होगा। इस बात पर ध्यान दीजिये कि चार महीने का समय पंचनिर्णय देने की अधिकत्तम सीमा है। इसे उपयुक्त मामलों में न्यायालय द्वारा बढ़ाया जा सकता है।

4 यदि पंचों ने पंचनिर्णय के लिए निर्धारित समय में निर्णय नहीं दिया है या पंचनिर्णय करार के किसी पक्ष को या अधिनिर्णायक को लिखित नोटिस दिया है जिसमें यह बताया गया है कि वे सहमत नहीं हो सके तो अधिनिर्णायक पंचों के स्थान पर मामले को तत्काल अपने हाथ में ले लेगा।

5 अधिनिर्णायक को मामला अपने हाथ में लेने के पश्चात् दो महीने के भीतर या ऐसे बढ़ाये हुए समय के भीतर जिसकी न्यायालय ने अनुमति दी हो, अपना निर्णय देना होगा। यदि अधिनिर्णायक इसमें असफल होता है तो पक्षकार उसके स्थान पर किसी अन्य अधिनिर्णायक की नियुक्ति की माँग कर सकते हैं।

6 पंचों और अधिनिर्णायक के पास पक्षों और गवाहों की शपथाधिन परीक्षा करने की शक्ति होती है। उन्हें पंचों या अधिनिर्णायक के समक्ष उन सभी आवश्यक खातों, दस्तावेज़ों, कागजों, लेखों और विलेखों को प्रस्तुत करना पड़ेगा जो उनके कब्ज़े या अधिकार में हैं। पक्षकार अन्य वे सभी कार्य भी करेंगे जिन्हें करने के लिए पंच या अधिनिर्णायक कहते हैं।

7 पंचों द्वारा दिया गया निर्णय अन्तिम होगा और पक्षों और उनके प्रतिनिधियों पर आबद्धकर होगा। पंचनिर्णय की अन्तिमता (finality) के विरुद्ध कोई अपील नहीं हो सकती। पीड़ित पक्ष न्यायालय में पंचनिर्णय को रद्द कराने के लिये, इसके संशोधन या छूट के लिये आवेदन कर सकता है लेकिन न्यायालय को मामले का निर्णय करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

8 पंचों या अधिनिर्णायक के पास पंचनिर्णय के खर्च के बारे में आदेश पारित करने का विवेकाधिकार होता है और वे इस बात का भी आदेश दे सकते हैं कि इन खर्चों की अदायगी किसके द्वारा और किस ढंग से की जाएगी। वह इसके हकदारों और वकीलों के बीच लागतों को प्रभावित कर सकता है। यदि पंचनिर्णय के खर्चों के बारे में कोई पंच निर्णय नहीं देता तो क्या होगा ? ऐसी स्थिति में या तो पंचाट धारा 16 के अन्तर्गत, पंचों को विप्रेषित किया जा सकता है या धारा 38 के अन्तर्गत, पंचों को विप्रेषित किया जा सकता है या धारा 38 के अन्तर्गत न्यायालय योग्य पक्ष को खर्चे दिलवा सकता है।

12.7 पंचों की नियुक्ति

जैसा कि आप पहले से जानते हैं पंच एक ऐसा व्यक्ति है जिसकी नियुक्ति विवाद को निपटाने के लिये पक्षों की आपसी सहमति से की जाती है। कोई भी व्यक्ति, जिसमें पक्षों का विश्वास है, पंच नियुक्त किया जा सकता है। पक्षकार किसी भी व्यक्ति को पंच नियुक्त करने के लिये स्वतंत्र है। पागल या अवयस्क भी पंच नियुक्त किया जा सकता है। मामले का जज भी पंच हो सकता है, लेकिन ऐसी अवस्था में पंचनिर्णय के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती। अनुबंध के एक पक्षकार को भी पंच नियुक्त किया जा सकता है। पंचों के प्राधिकार उसकी नियुक्ति की तारीख से शुरू नहीं होते बल्कि उस समय से शुरू होते हैं जब से वह मामले पर काम करना शुरू करता है। पंच ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिसका विवाद की विषय-वस्तु में कोई प्रत्यक्ष या परोक्ष स्वार्थ न हो। यदि पंच का विवाद में कोई व्यक्तिगत स्वार्थ है तो उसे सम्बन्धित पक्षों को इस बारे में स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए। कपटपूर्ण छिपाव पंचनिर्णय को अविधिमान्य बना देता है।

पंचों को निम्नलिखित तीन तरीकों में से किसी भी तरीके से नियुक्त किया जा सकता है।

i) पंचनिर्णय करार में ही उसका नाम दिया जा सकता है, या

ii) पंचनिर्णय करार में यह व्यवस्था हो कि पंच पक्षों द्वारा नियुक्त किया जाएगा या किये जाएँगे, या

iii) पंच या पंचों की नियुक्ति किसी तीसरे पक्ष द्वारा की जाती है।

पहली स्थिति में, करार में जिस व्यक्ति या व्यक्तियों का नाम दिया हुआ है, विवाद उन्हें ही सौंपा जाएगा। दिलचस्प बात यह है कि यदि किसी का नाम पंच के रूप में करार में दिया हुआ है तब भी दोनों पक्षों की आपसी सहमति से इस व्यक्ति को हटाया जा सकता है और उसके स्थान पर ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति की जा सकती है जिस पर सभी पक्षों की सहमति हो।

दूसरी स्थिति में, पंचनिर्णय करार में यह प्रावधान हो सकता है कि विवाद

क) एक पंच को सौंपा जाएगा,

ख) दो पंचों को सौंपा जाएगा, जिनकी नियुक्ति पक्षों द्वारा संयुक्त रूप से की जाएगी,

ग) दो पंचों को सौंपा जाएगा, प्रत्येक पक्ष एक पंच नियुक्त करेगा,

घ) तीन पंचों को सौंपा जाएगा। दो पंच ख) या ग) के अनुसार नियुक्त किये जाएँगे और तीसरा पंच (जो अधिनिर्णायक होगा) उपर्युक्त इन दो पंचों द्वारा नियुक्त किया जाएगा,

ङ) तीन या उससे अधिक पंचों को नियुक्त किया जाएगा, और उनकी नियुक्ति पक्षों की सहमति से होगी,

च) तीन से अधिक पंचों को नियुक्त किया जाएगा, जिनकी नियुक्ति (ङ) में दिये गये तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से की जाएगी।

ऊपर दिये गये (क) से (च) तक के तरीकों का विश्लेषण करने पर यह प्रकट होता है कि (क), (ख), (ङ) में पंच (पंचों) की नियुक्ति में विवाद के सभी पक्षकारों की सहमति होनी चाहिए। यदि सर्वसम्मति नहीं है तो विवाद का कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष को लिखित नोटिस दे सकता है और नोटिस देने के 15 दिन के अन्दर न्यायालय में पंच या पंचों या अधिनिर्णायक की नियुक्ति के लिये आवेदन-पत्र दे सकता है। न्यायालय अन्य पक्षों को सुने जाने का अवसर प्रदान करने के बाद पंच या पंचों या अधिनिर्णायक, जैसा भी हो, की नियुक्ति करता है।

उपर्युक्त (ग) की स्थिति में, विवाद का प्रत्येक पक्षकार एक पंच नियुक्त करता है। ऐसी स्थिति में यदि कोई पक्ष अपना पंच दूसरे पक्ष द्वारा लिखित नोटिस की तामील कराये जाने के बाद 15 दिनों में मनोनीत करने में असफल होता है, तब तो पक्ष नोटिस देता है उसके द्वारा मनोनीत पंच ही एक मात्र पंच बन जाता है। उसका पंचनिर्णय उसी तरह दोनों पक्षों के लिए आबद्धकर होगा जैसे कि वह आपसी सहमति से नियुक्त किया गया हो। यदि नियुक्त किया पंच, कार्य करने से इन्कार करता है या कार्य की उपेक्षा करता है या कार्य करने के अयोग्य हो

जाता है या उसकी मृत्यु हो जाती है, तब जिन पक्षों ने उसे नियुक्त किया था वे उसके स्थान पर नया पंच नियुक्त कर सकते हैं।

उपर्युक्त (घ) की स्थिति में पंचनिर्णय करार में 3 पंचों की नियुक्ति की व्यवस्था है। प्रत्येक पक्ष द्वारा एक पंच की नियुक्ति और तीसरे पंच की दोनों पंचों द्वारा नियुक्ति। ऐसी स्थिति में यह मानना चाहिये कि दोनों पंचों को तीसरा पंच नहीं बल्कि एक अधिनिर्णायक को नियुक्त करने का अधिकार दिया गया है। यदि पंचनिर्णय करार में ऊपर बताये गये तरीके के अलावा किसी अन्य तरीके से तीन पंचों की नियुक्ति की व्यवस्था है तो करार में अन्यथा कोई व्यवस्था नहीं होने पर बहुमत का पंचनिर्णय लागू होगा। यदि किसी पंचनिर्णय करार में 3 से अधिक पंचों की नियुक्ति की व्यवस्था है तो बहुमत का पंचनिर्णय मान्य होगा। यदि पक्ष-विपक्ष में बराबर-बराबर पंच हैं, तब करार में अन्यथा कोई प्रावधान नहीं होने पर, अधिनिर्णायक का निर्णय मान्य होगा।

ऊपर बताई गई स्थिति (iii) में पंचनिर्णय करार में विशेष रूप से उल्लेख होता है कि कोई खास व्यक्ति या संस्था (जैसे चैम्बर आफ कामर्स नई दिल्ली व्यापारी संघ का प्रधान या सम्बद्ध विभाग का मुख्य इंजीनियर) पंचों की नियुक्ति करेगा। जब कोई विवाद उत्पन्न होता है तो विवाद के पक्षकार उस व्यक्ति या संस्था से प्रार्थना कर सकते हैं कि पंचों की नियुक्ति की जाए ताकि उसे विवाद सौंपा जा सके।

पंच या अधिनिर्णायक की न्यायालय द्वारा नियुक्ति

कुछ स्थितियों में पंच या अधिनिर्णायक न्यायालय द्वारा नियुक्त किया जा सकता है। खण्ड (i) में पंच या पंचों की नियुक्ति पर विचार किया गया है। खण्ड (ii) पंच के अलावा अधिनिर्णायक की नियुक्ति पर विचार करता है और खण्ड(iii) में अधिनिर्णायक की नियुक्ति के संबंध में विचार किया गया है।

न्यायालय निम्नलिखित स्थितियों में इनकी नियुक्ति करता है:

i) जब पंचनिर्णय करार में यह व्यवस्था है कि पंचों की नियुक्ति पक्षकारों की सहमति से होगी, लेकिन सभी पक्ष नियुक्ति पर सहमत होने में असफल होते हैं। यहाँ यह ध्यान रखिये कि न्यायालय के अधिकार केवल तब उत्पन्न होते हैं जब मतभेद उत्पन्न होता है और इसका निर्णय भी न्यायालय को करना है कि वास्तव में मतभेद उत्पन्न हुआ है या नहीं।

ii) जब पक्षकारों द्वारा नियुक्त किया गया पंच या अधिनिर्णायक कार्य करने से मना करता है, या कार्य की उपेक्षा करता है या कार्य करने के अयोग्य है या उसकी मृत्यु हो जाती है और करार में ऐसा कुछ नहीं है जो यह दिखाए कि रिक्त स्थान की पूर्ति नहीं की जाएगी, ऐसी स्थिति में यदि पक्षकार रिक्त स्थान को नहीं भरते तो न्यायालय एक पंच को नियुक्त करके ऐसे रिक्त स्थान की पूर्ति कर सकता है।

iii) जहाँ पक्षकारों या पंचों द्वारा एक अधिनिर्णायक की नियुक्ति की जानी है और इसके लिये दिये गये नोटिस की तामील के 15 दिन के अन्दर वे नियुक्ति करने में असफल होते हैं, तो न्यायालय अधिनिर्णायक नियुक्त कर सकता है। ऐसी नियुक्ति करने से पहले न्यायालय को दूसरे पक्ष को अपनी बात स्पष्ट करने का अवसर देना होगा।

iv) जब पंच या अधिनिर्णायक को दुराचार या अन्य किसी कारण के लिये न्यायालय द्वारा हटा दिया गया है, तो करार के किसी भी पक्षकार के प्रार्थना पत्र देने पर न्यायालय पंच या अधिनिर्णायक नियुक्त कर सकता है।

यह ध्यान रखें कि न्यायालय द्वारा नियुक्त पंच या अधिनिर्णायक के पास भी मामले पर कार्य करने और पंचनिर्णय देने की वही शक्ति होती है जैसे कि वे पक्षकारों की सहमति से नियुक्त किये गये हों।

12.8 प्राधिकार का खंडन

आपने पंचों की नियुक्ति के नियमों के बारे में पढ़ा। अब प्रश्न यह उठता है कि क्या इस प्राधिकार को रद्द किया जा सकता है? पंच के प्राधिकार को अपनी इच्छा और खुशी से रद्द

करना एक पक्षकार के अधिकार में नहीं होता। एक बार जब विवाद पंचों को सौंप दिया जाता है तो पंचों को उस पर कार्य करने का प्राधिकार होता है, चाहे एक पक्ष पंचनिर्णय के लिए सौंपने को मना भी करे। धारा 5 में पंचों के प्राधिकार के खंडन पर विचार किया गया है, इसमें यह व्यवस्था है कि प्राधिकार का खंडन केवल तब किया जा सकता है जब —

i) पंचनिर्णय करार में इस बारे में व्यवस्था हो तब ऐसी स्थिति में करार की शर्तों के अनुरूप, या

ii) न्यायालय ने अनुमति दे दी हो।

इस प्रकार यदि पंचनिर्णय करार में प्राधिकार के खंडन संबंधी कोई व्यवस्था नहीं है तो इसे केवल न्यायालय की अनुमति से ही रद्द किया जा सकता है।

12.8.1 न्यायालय की अनुमति से खंडन

न्यायालय के पास अनुमति देने या न देने का विवेकाधिकार है लेकिन इस अधिकार का प्रयोग बहुत कम परिस्थितियों में और सावधानी पूर्वक करना चाहिए। न्यायालय को इस बारे में संतुष्ट होना चाहिये कि यदि आवेदन पत्र अस्वीकृत किया गया तो पूर्ण न्याय नहीं होगा। न्यायालय निम्नलिखित स्थितियों में पंच के प्राधिकार को रद्द करने की अनुमति दे सकता है।

i) जब पंच नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुसार कार्य नहीं कर रहा है।

ii) जब पंच किसी पक्षकार के साथ साँठ-गाँठ करता है।

iii) जब वह दुराचार का दोषी है।

iv) जब वह कार्य करने से मना करता है या उसकी उपेक्षा करता है।

v) जब यह साबित कर दिया जाता है कि सहमति कपट, बल प्रयोग या अनुचित प्रभाव से प्राप्त की गई है।

vi) जब वह अनुचित विलम्ब का दोषी है।

vii) जब वह अपने प्राधिकार से बढ़ कर कार्य करता है।

viii) जब वह विषय-वस्तु में हितबद्ध हो जाता है।

यहाँ यह ध्यान रखें कि पंच के प्राधिकार के खंडन पर पंचनिर्णय करार समाप्त नहीं हो जाता, उस विषय-वस्तु के लिये नये पंच नियुक्त किये जा सकते हैं।

एक पक्षकार की मृत्यु का प्रभाव

पंचनिर्णय करार के किसी भी एक पक्षकार की मृत्यु प्रायः पंचनिर्णय करार को समाप्त नहीं कर देती। मृतक के कानूनी प्रतिनिधि करार से आबद्ध होते हैं। लेकिन जब एक पक्ष की मृत्यु से दावा करने का अधिकार समाप्त हो जाता है, तब पंचनिर्णय करार भी समाप्त हो जाता है। यह व्यक्तिगत प्रकृति के कार्यों जैसे विवाह करने, गाने या चित्र बनाने पर लागू होता है।

ऐसा पंचनिर्णय करार भी किया जा सकता है जिसमें भविष्य के विवादों को पंचनिर्णय के लिये सौंपने का खण्ड हो।

) ऐसा करार दिवालियापन की कार्यवाही शुरू होने से पहले किया जा सकता है या

i) ऐसा करार दिवालियापन की कार्यवाही शुरू होने के बाद लेकिन न्यायनिर्णयन आदेश पारित करने से पहले किया जा सकता है।

उपर्युक्त स्थिति (i) में यदि प्रापक (receiver) पंचनिर्णय करार को अपनाता है, तो करार प्रापक पर आबद्धकर होगा लेकिन प्रापक करार को अपनाने से मना कर सकता है। ऐसी स्थिति में दूसरे पक्ष को दिवालियापन विषयक न्यायालय से मामला पंचों को सौंपने के लिए अनुमति प्राप्त करने का अधिकार होगा।

उपर्युक्त स्थिति (ii) में यदि भविष्य के विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के लिये करार है तो ऐसा करार प्रापक के द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवर्तनीय होगा बशर्ते कि प्रापक अनुबंध को अपनाता है। अब यह प्रश्न उठता है कि प्रापक द्वारा करार को न अपनाये जाने की स्थिति में क्या होगा ? ऐसी स्थिति में पंचनिर्णय खण्ड लागू नहीं होगा।

12.8.2 न्यायालय द्वारा हटाना

न्यायालय निम्नलिखित स्थितियों में पंच या अधिनिर्णायक को हटा सकता है।

i) **यदि वह समय के भीतर पंचनिर्णय देने में असफल होता है:** धारा (ii) के अन्तर्गत यदि पंच विवाद के मामले में आगे कार्यवाही करने में असफल रहता है, तब करार के किसी भी पक्षकार के आवेदन पत्र पर न्यायालय पंचों को हटा सकता है। आपने भाग 12.6 में पढ़ा है कि पंच को चार माह के भीतर और अधिनिर्णायक को दो माह के भीतर निर्णय देना होता है। यदि वे इस अवधि के भीतर पंचनिर्णय नहीं देते तो न्यायालय उन्हें हटा सकता है। यह याद रखिये कि इन्हें किसी पक्ष द्वारा आवेदन पत्र देने पर ही हटाया जा सकता है, यानि बिना आवेदन-पत्र के न्यायालय इन्हें नहीं हटा सकता।

ii) **यदि उसने कार्यवाही का कुसंचालन या स्वयं अवचार किया है:** ऐसी स्थिति में न्यायालय स्वयं ही पंच को हटा सकता है अर्थात् किसी पक्ष द्वारा आवेदन पत्र देने की आवश्यकता नहीं है। यह ध्यान रखिये कि पंच या अधिनिर्णायक को न केवल उसके व्यक्तिगत अवचार (misconduct) के लिये हटाया जा सकता है। बल्कि कार्यवाही के कुसंचालन यानि विधिक अवचार के लिये भी हटाया जा सकता है, अवचार शब्द बहुत विस्तृत है। यहाँ इसका अर्थ नैतिक अवचार नहीं है बल्कि इसका अर्थ पंच द्वारा कर्त्तव्य की अवहेलना है जिससे न्याय की हत्या होती है। अवचार के कुछ उदाहरण हैं: दूसरे पक्ष की अनुपस्थिति में केवल एक पक्ष की बात सुनना, मौखिक गवाही को लेखबद्ध करने से मना करना, अपनी पेशेवर कुशलता का उपयोग नहीं करना, अपने प्राधिकार को अनुचित रूप से प्रत्यायोजित करना, घूस लेना आदि। न्यायालय की पंच या अम्पायर को हटाने की शक्ति वैवेकिक (discretionary) है और इसका प्रयोग सूझबूझ से करना चाहिये।

जब पंच या अधिनिर्णायक को अवचार के कारण हटाया जाता है तो वह अपनी सेवाओं के लिए कोई पारिश्रमिक प्राप्त करने का हकदार नहीं होगा। यदि उसे कुछ फीस मिल भी गई हो तो उसे वापिस करने के लिये कहा जा सकता है।

12.8.3 पंच के हटाए जाने या उसके प्राधिकार के खंडन की स्थिति में न्यायालय की शक्तियाँ

जब न्यायालय किसी ऐसे अधिनिर्णायक को हटाता है जिसने सौंपे गये मामले में कार्यवाही आरम्भ नहीं की है या एक या अधिक पंचों (सब पंचों को नहीं) को हटाता है, तब पंचनिर्णय करार के किसी भी पक्षकार के प्रार्थना करने पर, न्यायालय रिक्त स्थानों की पूर्ति कर सकता है। जब न्यायालय की अनुमति से पंच या पंचों या अधिनिर्णायक का प्राधिकार रद्द किया जाता है या जहाँ न्यायालय ऐसे अधिनिर्णायक को, जिसने मामले पर कार्य शुरू कर दिया है, या एकमात्र पंच को या सभी पंचों को हटाता है, तब पंचनिर्णय करार के किसी पक्षकार के आवेदन पत्र पर न्यायालय या तो:

क) जिन व्यक्ति या व्यक्तियों को हटाया गया है, उनके स्थान पर किसी व्यक्ति को एकमात्र पंच के रूप में कार्य करने के लिये नियुक्त कर सकता है, या

ख) यह आदेश दे सकता है कि निर्दिशित मतभेद के संबंध में पंचनिर्णय करार प्रभावहीन हो जाएगा।

इस प्रकार नियुक्त किये गये पंचों या अधिनिर्णायक को मामले पर कार्य करने का और पंचनिर्णय देने का वैसा ही अधिकार होगा जैसे कि उसे पंचनिर्णय करार के अनुसार नियुक्त किया गया हो।

बोध प्रश्न ख

1 पंचनिर्णय के विभिन्न तरीके बताइये।

. . . .

. . . .

. . . .

2 पंच या अधिनिर्णायक की नियुक्ति के संबं निर्णय करार में निहित प्रावधान क्या है ?

....

....

....

3 पंचों को अपना पंचनिर्णय कब देना चाहिये ?

....

....

....

4 वे परिस्थितियाँ बताइए जिनमें पंच की नियुक्ति न्यायालय द्वारा की जा सकती है।

....

....

....

5 न्यायालय पंचों को कब हटा सकता है ?

....

....

....

6 बताइये कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) जब तक कि स्पष्टतया विपरीत व्यवस्था न की गई हो, मामला एकमात्र पंच को सौंपा जाएगा। ....

ii) यदि मामला पंचों की सम संख्या को सौंपा गया है तो वे दो माह के भीतर एक अधिनिर्णायक नियुक्त करेंगे। ....

iii) मामले पर कार्यवाही शुरू करने के चार माह के भीतर अधिनिर्णायक को निर्णय देना होगा। ....

iv) विधिवत् नियुक्त पंच के प्राधिकार को न्यायालय की अनुमति से रद्द किया जा सकता है। ....

v) जब पंच कार्य करने से मना करता है और पक्षकार रिक्त स्थान नहीं भर पाते तो इसे न्यायालय द्वारा भरा जा सकता है। ....

vi) नियमानुसार किसी भी एक पक्ष की मृत्यु होने पर पंचनिर्णय करार समाप्त नहीं हो जाता। ....

vii) जब किसी पंच को हटाया जाता है तो वह की गई सेवाओं के लिए पारिश्रमिक पाने का हकदार है। ....

12.9 पंच या अधिनिर्णायक के अधिकार

जैसा कि आपको मालूम है, पंच या अधिनिर्णायक एक न्यायिककल्प प्राधिकारी (quasi-judicial) है, उसकी लगभग वही शक्तियाँ हैं जो एक न्यायिक प्राधिकारी की होती हैं। जब तक कि करार में इससे भिन्न इच्छा व्यक्त न की गई हो, पंच या अधिनिर्णायक की निम्नलिखित शक्तियाँ होती हैं।

i) अपने सामने पेश होने वाले पक्षकारों और गवाहों को शपथ दिलाना,

ii) किसी अन्तर्ग्रस्त विधिविषयक प्रश्न पर न्यायालय की राय प्राप्त करने के लिये विशेष मामले को प्रेषित करना या विधि विषयक प्रश्न पर पंचनिर्णय को विशेष मामले के रूप में न्यायालय को उल्लेख करना ताकि न्यायालय अन्तिम रूप से मामले का निर्णय कर सके। यह पूर्णतया उसका विवेकाधिकार है कि वह मामले को प्रेषित करेगा या नहीं। सौंपे गये मामले का कोई पक्षकार पंच से विधि प्रश्न पर विशेष मामला न्यायालय को प्रेषित करने के लिये कह सकता है। यदि पंच ऐसा करने से इनकार करता है तो सम्बद्ध पक्ष पंच या अम्पायर के प्राधिकार को रद्द करने के लिए आवेदन कर सकता है।

iii) पंचनिर्णय देना जो कि या तो सशर्त हो या अनुकल्पी अनुतोष (relief in the alternative) मंजूर करता हो। यहाँ आप यह जानना चाहेंगे कि इसका अर्थ क्या है। इसे एक उदाहरण की सहायता से अच्छी तरह समझा जा सकता है। A और B में एक घड़ी के स्वामित्व के बारे में विवाद है। यह विवाद पंच C को सौंप दिया जाता है। C अपने पंचनिर्णय द्वारा आदेश देता है कि A, जिसके पास घड़ी है, B को 200 रु. में देगा और यदि घड़ी 7 दिन में वापस कर दी जाती है तो वह कुछ नहीं देगा। यह अनुकल्पी पंचनिर्णय है।

iv) निर्णय में किसी लिपिकीय (clerical) गलती या किसी आकस्मिक चूक या लोप के कारण उत्पन्न होने वाली त्रुटि को सुधारना।

v) पंचनिर्णय के किसी पक्ष से ऐसे परिप्रश्नों के उत्तर माँगना जो उसकी राय में आवश्यक हैं।

vi) अंतरिम पंचनिर्णय देना यदि करार इसे निर्बाधित न करता हो।

vii) किसी को निर्देश की लागतें दिलवाना और पंचनिर्णय प्रदान करना।

viii) ब्याज दिलवाना।

ix) किश्तों में भुगतान की अनुमति देना।

x) विशेष मामलों में करार के विनिर्दिष्ट पालन का आदेश देना। यह ध्यान रखें कि पंचों को निर्देश को वापस लेने का, पंचनिर्णय करार की शर्तों को बदलने का, धनराशि प्राप्त या वसूल करने का कोई अधिकार नहीं है।

12.10 पंच या अधिनिर्णायक के कर्त्तव्य

आपने पंच या अम्पायर (umpire) की शक्तियों के बारे में तो पढ़ लिया है, अब हम उनके कर्तव्यों की चर्चा करेंगे।

1 **न्यायिक रूप से कार्य करना:** पंचनिर्णय, विवाद को न्यायिककल्प तरीके से निपटाने की एक विधि है अत: पंचों का यह परम कर्त्व्य है कि वे न्यायिक रूप से कार्य करे। उसे पक्षकारों की सुनवाई के लिये समय और स्थान निश्चित करना चाहिये और उन्हें अपने पक्ष को प्रस्तुत करने का उचित नोटिस देना चाहिये। यदि वह पक्षकारों को नोटिस नहीं देता, तो यह विधिक अवचार के समान है और पंचनिर्णय दूषित हो जाता है।

2 **नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन करना:** यद्यपि पंच को न्यायालय द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को अपनाना जरूरी नहीं है, फिर भी उसे न्याय के मूल नियमों का पालन करना चाहिये। उसे कार्यवाही का उचित रिकार्ड रखना चाहिये उसे एक पक्ष की अनुपस्थिति में दूसरे पक्ष को नहीं सुनना चाहिये। एक पक्ष की अनुपस्थिति में उसे दूसरे पक्ष की गवाही रिकार्ड नहीं करनी चाहिये। उसे दूसरे पक्ष को उसके सामने पेश की गई गवाही की प्रतिपरीक्षा (cross-examine) करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

3 **निष्पक्ष रूप से कार्य करना:** उसे दोनों पक्षों के लिए निष्पक्ष रूप से कार्य करना चाहिये और उस पर जो विश्वास किया गया है उसका उसे आदर करना चाहिए। जिस पक्ष ने उसे नियुक्त किया है, वह उसका एजेंट नहीं है। उसे किसी पक्ष के लिये कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहिये जो वह दूसरे पक्ष के लिये न करता हो।

4 **सौंपे गये सभी मामलों का निर्णय करना:** पंच या अधिनिर्णायक का यह कर्तव्य है कि वह सौंपे गये सभी मामलों का निर्णय करे। अधूरा पंचनिर्णय प्रवर्तनीय नहीं होगा, जब तक कि पंच को कई पंचमिर्णय देने का अधिकार न दिया गया हो।

5 **कार्यों का व्यक्तिगत रूप से निर्वहन करना:** पंच या अधिनिर्णायक को अपने कर्तव्यों को किम्मी पक्ष को प्रत्यायोजित (delegate) नहीं करना चाहिये। लेकिन लिपिकीय प्रकृति के कार्य प्रत्यायोजित किये जा सकते हैं, जैसे कि पक्ष से लिखित ब्यान की प्राप्ति, तकनीकी और कानूनी मामलों में सहायता लेना आदि। इस संबंध में आप यह ध्यान रखें कि वह विशेषज्ञों की सहायता तो प्राप्त कर सकता है लेकिन अन्त में निर्णय उसी का होना चाहिये।

6 **अपने प्राधिकार** (authority) **से आगे नहीं बढ़ना चाहिए:** क्योंकि वह अपने प्राधिकार पंचनिर्णय करार से प्राप्त करता है, उसे अपने प्राधिकार के क्षेत्र से परे नहीं जाना चाहिये। वह ऐसे प्राधिकार को नहीं ले सकता जो पंचनिर्णय करार प्रदान नहीं करता। यदि पंचनिर्णय ऐसे मामले से संबंधित है जो उसे सौंपा नहीं गया है तब पंचनिर्णय दोषपूर्ण है और इसे रद्द किया जा सकता है।

7 **व्यक्तिगत स्वार्थ प्रकट कर देना:** यदि पंच का विवाद के विषय में या विवाद के किसी पक्ष में निजी स्वार्थ है तो उसे यह बात दूसरे पक्ष को बता देनी चाहिये।

12.11 पंच का पारिश्रमिक

पंच या अधिनिर्णायक को देय पारिश्रमिक साधारणतया पक्षकारों और पंचों के बीच करार द्वारा, पंचनिर्णय कार्यवाहियाँ शुरू होने से पहले निश्चित कर दिया जाता है। यदि पारिश्रमिक के बारे में कोई करार नहीं है तो पंच या अधिनिर्णायक स्वयं पारिश्रमिक निश्चित कर सकता है और इसे पंचनिर्णय में शामिल कर सकता है। यदि कोई पक्ष यह महसूस करता है कि पारिश्रमिक की माँग अनुचित या अत्यधिक है तो वह न्यायालय को पारिश्रमिक की राशि निर्धारित करने के लिये आवेदन कर सकता है। न्यायालय पक्षकार को अपेक्षित राशि न्यायालय में जमा कराने के लिये कहेगा और तब यह पता लगाने के लिये मामले की जाँच करेगा कि माँगी गयी फीस उचित है या नहीं। यदि यह उचित नहीं है तो न्यायालय पंच को एक उचित्त राशि के भुगतान के लिये और शेष राशि पक्षकार को वापस करने के लिये कह सकता है।

जब कोई मामला न्यायालय के सुपुर्द किया जाता है तो पंचों की फीस भी न्यायालय द्वारा निश्चित की जाएगी और इसका जिक्र निर्देश आदेश में ही कर दिया जाएगा।

12.12 पंचाट (Award)

मामलों की सुनवाई की समाप्ति पर, पंचनिर्णय देता है और इसे पंचनिर्णय या पंचाट (award) कहते हैं। पंचनिर्णय पंच या पंचों द्वारा उन सभी मामलों पर जो पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द किये गये थे, लिखित अन्तिम निर्णय है। वैध होने के लिये पंचनिर्णय निश्चित, अन्तिम और न्यायिक होना चाहिए तथा इसके द्वारा सभी निर्देशित मामलों का निर्णय किया जाना चाहिये। यदि यह स्पष्ट या अनिश्चित है या यह कुछ मामलों को अनिर्णीत छोड़ देता है तो पंचनिर्णय दोषपूर्ण और अप्रवर्तनीय है। मौखिक पंचनिर्णय अवैध है। पंचनिर्णय पर उन व्यक्तियों के हस्ताक्षर होने चाहिए जिन्होंने यह दिया है। पंचनिर्णय तैयार होने के बाद इस बारे में पक्षकारों को लिखित नोटिस दी जानी चाहिये। वे फीस व पंचनिर्णय से सम्बन्धित खर्चों के बारे में भी सूचित करेंगे।

पंचनिर्णय करार के एक पक्ष या उसके ज़रिये दावा करने वाले किसी व्यक्ति या न्यायालय के आदेश द्वारा पंच या अधिनिर्णायक को पंचनिर्णय की एक लिपि न्यायालय में फाइल करने के लिए कहा जा सकता है। लेकिन जो पक्ष ऐसी प्रार्थना करता है उसे पहले पंचों की फ़ीस और

खर्चे तथा पंचनिर्णय फाइल करने की सभी लागतें और प्रभार देने पड़ेंगे। तब पंच, पंचनिर्णय के साथ कार्यवाही के दौरान लिये गये और साबित किये गये सभी कथन और दस्तावेज़ फाइल करने को आबद्ध हो जाता है। पंचनिर्णय न्यायालय में फाइल हो जाने पर न्यायालय इस तथ्य का नोटिस सभी सम्बद्ध पक्षकारों को देगा और उनसे पंचनिर्णय के विरुद्ध आपत्ति (यदि कोई है) नोटिस की तामील के तीस दिन के अन्दर फाइल करने के लिए कहेगा। जब पंचनिर्णय इस प्रकार से फाइल कर दिया जाता है, यह न्यायालय का आदेश बन जाता है और इसका प्रभाव न्यायालय के आदेश जैसा ही होता है। जब पंचनिर्णय फाइल नहीं भी किया जाता, तब भी यह एक रद्दी कागज नहीं बन जाता, बल्कि पक्षकारों को आबद्ध करता है और इसे न्यायालय के निर्णय की भाँति मानना होता है।

पंचनिर्णय के निबंधनों के अनुसार निर्णय: पंचनिर्णय के न्यायालय में फाइल होने के बाद न्यायालय पंचनिर्णय के अनुसार निर्णय सुनाएगा और पंचनिर्णय के निबंधनों के अनुसार डिक्री पारित करेगा। यह न्यायालय की किसी अन्य डिक्री की भांति प्रवर्तनीय बन जाती है। धारा 17 में यह प्रावधान है कि जब एक पंचनिर्णय फ़ाइल कर दिया जाता है और पक्षकारों को इसका नोटिस दे दिया जाता है और निर्धारित समय में (30 दिन) पंचनिर्णय को रद्द करने के लिये कोई आवेदन पत्र नहीं दिया जाता या यदि ऐसा आवेदन-पत्र दिया जाए तो वह नामंजूर कर दिया जाता है और न्यायालय पंचनिर्णय में कोई त्रुटि नहीं पाता तो न्यायालय पंचनिर्णय के निबंधनों के अनुसार निर्णय सुना सकता है। तब पंचनिर्णय के प्रवर्तन के लिये न्यायालय डिक्री पारित करेगा। ऐसी डिक्री के विरुद्ध कोई अपील नहीं की जा सकती। न्यायालय अंतरिम आदेश पारित कर सकता है। अंतरिम आदेश चाहने वाले पक्ष को न्यायालय को संतुष्ट करना पड़ता है कि दूसरे पक्ष ने पंचनिर्णय पर पारित किसी डिक्री के निष्पादन को विफल करने, उसमें विलम्ब करने या बाधा डालने के लिये कुछ कदम उठाये हैं या उठाने वाला है। जब न्यायालय यह महसूस करता है कि पंचनिर्णय का शीघ्र निष्पादन आवश्यक व उचित है, वह अंतरिम आदेश पारित कर सकता है। पंचनिर्णय के फाइल करने के बाद, किसी भी समय अंतरिम आदेश दिया जा सकता है।

जब पंचनिर्णय फाइल किया जाता है तो न्यायालय, साधारणतया, उसमें हस्तक्षेप नहीं करता। लेकिन यदि पक्षकार उससे संतुष्ट नहीं हैं तो वे इसे विहित रीति से चुनौती दे सकते हैं। तब न्यायालय:

क) पंचनिर्णय में संशोधन या सुधार कर सकता है, या
ख) पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिए वापस भेज सकता है, या
ग) पंचनिर्णय को रद्द कर सकता है।

अब इनमें से प्रत्येक पर विस्तार से चर्चा करते हैं।

12.12.1 पंचाट में संशोधन (Modification of Award)

निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय किसी निर्णय में संशोधन या सुधार (modification) कर सकता है।

i) **सुपुर्द नहीं किये गये मामले पर पंच निर्णय:** जब न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पंचनिर्णय या इसका एक भाग ऐसे मामले के बारे में है जिसे पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द नहीं किया गया था और ऐसे भाग को बाकी भाग से सुपुर्द किये गये मामलों पर फैसले को प्रभावित किये बिना पृथक् किया जा सकता है, तो न्यायालय तदनुसार पंचनिर्णय में सुधार कर सकता है। जैसा कि आपको ज्ञात है कि पंचों को उन्हें सुपुर्द किये गये मामलों तक ही सीमित रहना पड़ता है, पंचनिर्णय का वह भाग जो पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द न किये गये मामलों से संबंधित है, अविधिमान्य होता है। यदि पंचनिर्णय में ऐसे कुछ मामले शामिल हैं जो उसे सुपुर्द नहीं किये गए थे और ऐसे मामले पंचनिर्णय को प्रभावित किये बिना बाकी पंचनिर्णय से पृथक् नहीं किये जा सकते तो पंचनिर्णय व्यर्थ होता है। ऐसी स्थिति में पंचनिर्णय को पंचों को पुन: विचार के लिये वापस भेज सकता है।

ii) **प्रारूप की दृष्टि से अपूर्ण पंचनिर्णय:** जब पंचनिर्णय प्रारूप की दृष्टि से अपूर्ण है या उसमें कोई स्पष्ट गलती है, तो न्यायालय मुख्य निर्णय को प्रभावित किये बिना अपूर्णता या गलती को दूर कर सकता है। यदि पंचनिर्णय में कोई लिपिकीय या परिकलन अशुद्धि

है तो इसे सुधारा जा सकता है। यदि पंचनिर्णय को प्रभावित किये बिना अपूर्णता या अशुद्धि को नहीं सुधारा जा सकता तो न्यायालय पंचनिर्णय को पंचों को पुन:विचार के लिये और सुधार के लिये वापस सौंप सकता है या पंचनिर्णय को रद्द कर सकता है।

iii) **लिपिकीय-अशुद्धि वाला पंचनिर्णय:** यदि पंचनिर्णय में कोई लिपिकीय गलती या आकस्मिक चूक या भूल से उत्पन्न कोई गलती या अशुद्धि है तो न्यायालय पंचनिर्णय का सुधार कर सकता है। उदाहरण के लिये यदि 10 मई 1989 के स्थान पर 10 मई 1889 या भारतीय संघ के स्थान पर भारत का राष्ट्रपति लिखा गया है तो ऐसी गलती न्यायालय द्वारा सुधारी जा सकती है। यहाँ यह याद रखें कि न्यायालय को पंचनिर्णय के प्रत्येक प्रकार के निर्णय में परिवर्तन या सुधार करने का अधिकार होता है।

12.12.2 पंचाट को पुनर्विचार के लिए वापस भेजना (Remission of Award)

पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिए भेजने का अर्थ है इसे उन्हीं पंचों या अधिनिर्णायक के पास पुर्नविचार के लिये वापस भेजना। यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इसकी आवश्यकता क्यों है? पंचनिर्णय पंचों के पास तब पुन: भेजा जाता है जब पंचनिर्णय में ऐसी त्रुटियाँ या लोप विद्यमान हों जिन्हें न्यायालय द्वारा संशोधित या सुधारा नहीं जा सकता हो। निम्नलिखित स्थितियों में न्यायालय पंचनिर्णय या किसी मामले को, जो पंचनिर्णय के लिये सुपुर्द किया गया था, पंच या अधिनिर्णायक को पुनर्विचार के लिये ऐसी शर्तों पर जिन्हें वह उचित समझता है, वापस भेज सकता है।

i) जब पंचनिर्णय ने पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द किए गये मामलों में से किसी मामले को अनिर्णीत छोड़ दिया हो, या उसमें किसी ऐसे मामले का निर्णय कर दिया हो जो उसे निर्णय के लिए सौंपा ही नहीं गया था, और ऐसा निर्णय, सौंपे गये मामले के निर्णय को प्रभावित किए बिना, अलग नहीं किया जा सकता हो, अथवा,

ii) जब पंचनिर्णय इतना अनिश्चित है कि वह निष्पादन योग्य नहीं है, अथवा

iii) जब पंचनिर्णय वैधता के सम्बन्ध में की गई आपत्ति स्पष्ट दिखाई देती हो। उदाहरण के लिये, पंचों ने ऐसी गलती की है और वह निर्णय को देखने से ही प्रकट है, तो पंचनिर्णय को वापस भेजा जा सकता है।

जब पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिये वापस भेजा जाता है तो न्यायालय वह अवधि भी निश्चित करेगा जिसके भीतर पंचों या अधिनिर्णायक को न्यायालय में नया निर्णय प्रस्तुत करना होगा। इस प्रकार निर्धारित अवधि को न्यायालय वाद के आदेश द्वारा बढ़ा सकता है। यदि पंच या अधिनिर्णायक पुनर्विचार के लिए वापस भेजे गये पंचनिर्णय पर पुनर्विचार नहीं करता या निर्धारित समय में अपना निर्णय प्रस्तुत नहीं करता, तो पंचनिर्णय व्यर्थ हो जाता है। यह ध्यान रखिये कि पंचनिर्णय केवल तभी व्यर्थ होता है जब सारा पंचनिर्णय पुनर्विचार के लिये वापस भेजा गया हो। यदि कई मामलों में से केवल एक मामला अनिर्णीत है और पंचनिर्णय के लिए वापस भेजा जाता है तो पंच या अधिनिर्णायक के फैसला देने में असफल होने पर सारा पंचनिर्णय व्यर्थ नहीं होगा लेकिन वह फिर से सौंपे जाने तक निलंबित रहेगा।

12.12.3 पंचाट को रद्द करना (Setting aside the Award)

"रद्द करना" शब्द का विस्तृत रूप में प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ है पंचनिर्णय को अविधिमान्य मान कर खारिज करना। पंचनिर्णय को धारा 30 में दिये गये किसी भी आधार पर रद्द किया जा सकता है जब उसे न्यायालय में फाइल किया गया हो। धारा 30 में पंचनिर्णय को रद्द करने के निम्नलिखित आधार दिये गये हैं:

i) **पंचों या अधिनिर्णायक के द्वारा दुराचार:** जब पंच या अम्पायर ने स्वयं कोई दुराचार का काम किया है या उसकी कार्यवाही ऐसी रही है तो पंचनिर्णय रद्द किया जा सकता है। "दुराचार" शब्द का अर्थ है गलत या अनुचित आचरण। पंचों द्वारा कुछ भी ऐसा किया जाना जिसके कारण न्याय की हत्या हो सकती है, साधारणतया दुराचार माना जाता है। अत: जब पंच नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन नहीं करते या एक पक्ष की अनुपस्थिति में दूसरे पक्ष के बयान को रिकार्ड करते हैं, या किसी पक्षकार को सुनवाई का

समय और स्थान की सूचना नहीं देते या किसी पक्षकार या गवाह की बात सुनने से गलत रूप से इन्कार करते हैं, तो यह उनके द्वारा दुराचार माना जाता है।

ii) पंचनिर्णय को रद्द करने का दूसरा आधार यह है कि जब न्यायालय ने पंचनिर्णय कार्यवाही को अतिष्ठित (supersede) करने का आदेश दे दिया है या पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द विषय-वस्तु के बारे में न्यायालय में कानूनी कार्यवाही आरम्भ किए जाने के कारण पंचनिर्णय कार्यवाही अविधिमान्य हो गई है और इसकी सूचना पंचों को दे दी गई है और वे उसके बाद भी पंचनिर्णय देते हैं। पंचनिर्णय कार्यवाही के अविधिमान्य हो जाने के बाद दिए गये निर्णय को न्यायालय रद्द कर सकता है। अत: पंचनिर्णय की कार्यवाही को रोक देने का न्यायालय से आदेश मिलने पर या अतिष्ठित होने पर पंचों को आगे कार्यवाही नहीं करनी चाहिए।

iii) **अनुचित रूप से प्राप्त किया गया या अन्यथा अविधिमान्य पंचनिर्णय**: पंचनिर्णय को रद्द करने का तीसरा और अन्तिम आधार यह है कि यदि पंचनिर्णय अनुचित रूप से प्राप्त किया गया है या अन्यथा अविधिमान्य है। पंचनिर्णय के अनुचित रूप से प्राप्त किये जाने के कुछ उदाहरण हैं जैसे, जब पंचों को रिश्वत दी गयी हो या जब से सौंपे गये मामले में व्यक्तिगत दिलचस्पी पैदा हो गयी हो या जब एक पक्षकार द्वारा किसी मामले को कपटपूर्वक छिपाया गया हो। जब पंचनिर्णय के एक भाग में ऐसें मामलों का समावेश किया गया हो जो न्यायालय के विचाराधीन दावे की विषय-वस्तु थे या जब कोई पंचनिर्णय करार था ही नहीं, तब पंचनिर्णय अविधिमान्य होता है।

पंचनिर्णय को रद्द करने की प्रक्रिया

पंचनिर्णय को रद्द करने के आधारों पर विचार करने के बाद अब हम इसकी प्रक्रिया पर विचार करते हैं। जो पक्ष पंचनिर्णय को रद्द कराना चाहता है, उसे उस न्यायालय में, जहाँ पंचनिर्णय फाइल किया गया है, एक लिखित आवेदन-पत्र देना चाहिये। पंचनिर्णय के न्यायालय में फाइल करने की सूचना की तामील के 30 दिन के भीतर आवेदन-पत्र देना चाहिए। पंचनिर्णय के न्यायालय में फाइल होने के बाद ही आवेदन पत्र दिया जा सकता है। यदि पक्षकार निर्धारित अवधि के भीतर पंचनिर्णय को रद्द करने के लिये आवेदन करने में असफल रहता है तो पंचनिर्णय को बाद में रद्द नहीं किया जा सकता।

पंचनिर्णय कब रद्द नहीं किया जा सकता ?

आपने यह पढ़ लिया है कि किन आधारों पर न्यायालय पंचनिर्णय को रद्द कर सकता है, लेकिन कुछ खास परिस्थितियाँ हैं जिनमें पंचनिर्णय को रद्द किया भी जा सकता है और नहीं भी। ये निम्नलिखित हैं:

i) जब एक पक्ष को किसी अनियमितता की जानकारी थी लेकिन उसने पर्याप्त अवसर होने पर भी एतराज़ नहीं किया तो यह मान लिया जाता है कि उसने अपने अधिकार का परित्याग कर दिया और वह बाद में रद्द करने की माँग नहीं कर सकता।

ii) जब एतराज़ करने के हकदार पक्ष ने अनियमितता की जानकारी के बावजूद पंचनिर्णय के अन्तर्गत कुछ लाभ प्राप्त कर लिये हैं तब वह पंचनिर्णय को रद्द करनें के लिये कहने के अपने अधिकार को खो देता है।

iii) पंचनिर्णय को रद्द कराने के लिये न्यायालय में आवेदन-पत्र केवल पीड़ित पक्ष द्वारा दिया जा सकता है। यदि उसने पंचनिर्णय के अन्तर्गत कुछ लाभ प्राप्त कर लिये हैं तो वह पंचनिर्णय को रद्द करने के लिये न्यायालय को आवेदन नहीं कर सकता।

iv) जब पंचनिर्णय को न्यायालय में फाइल करने के नोटिस की तामील की तारीख से 30 दिन के भीतर पंचनिर्णय को रद्द करने के लिये आवेदन-पत्र नहीं दिया गया है तो बाद में रद्द करने के लिए आवेदन-पत्र नहीं दिया जा सकता।

12.13 न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय, जब कोई वाद विचाराधीन न हो

आपने अब तक यह पढ़ लिया है कि जब विवाद उत्पन्न होता है तो पंचनिर्णय करार के पक्षकार प्रत्यक्ष रूप से पंचनिर्णय के लिये कार्यवाही करते हैं, यानि वे शुरू में ही न्यायालय

में नहीं जाते। लेकिन कभी-कभी दोनों पक्ष या एक पक्ष यह चाह सकते हैं कि न्यायालय के पर्यवेक्षण में पंचनिर्णय कार्यवाही चलाई जाए। कभी-कभी यह वांछनीय है कि विवाद को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द करने से पहले सभी आपत्तियाँ दूर कर दी जाएँ। अब हम उस स्थिति की चर्चा करते हैं जब कोई वाद विचाराधीन न हो और न्यायालय के हस्तक्षेप से पंचनिर्णय की माँग की जाती है।

जब पक्षकारों ने पहले से अपने विवादों को प्रत्यक्ष रूप से पंचनिर्णय कार्यवाही के लिये सौंपने का करार रखा हो तो पंचनिर्णय कार्यवाही को आरम्भ करने से पहले कोई भी पक्ष, उस न्यायालय में, जिसकी अधिकारिता में करार से संबंधित मामला आता है, आवेदन कर सकता है कि पंचनिर्णय करार न्यायालय में फाइल किया जाए। ऐसा आवेदन-पत्र देने के लिये यह आवश्यक है कि जब न्यायालय को आवेदन-पत्र दिया जाता है तो उस समय न्यायालय में कोई वाद विचाराधीन न हो तथा उस समय पंचनिर्णय करार का वैध अस्तित्व हो।

ऐसा आवेदन-पत्र लिखित होना चाहिए और इसे वाद की भाँति रजिस्टर किया जाना चाहिए। तब न्यायालय अन्य पक्षकारों को इस आशय की सूचना देगा कि वे निर्धारित अवधि के भीतर इस बात का कारण बताएँ कि करार को क्यों नहीं फाइल किया जाए। जब इसके विरुद्ध कोई पर्याप्त कारण नहीं बताया जाता तो न्यायालय करार को फाइल करने का आदेश देगा। तब न्यायालय करार के अनुसार नियुक्त किये गये पंचों को मामला सुपुर्द कर देगा या यदि पक्षकार पंचों के बारे में सहमत नहीं होते, तो न्यायालय पंचों की नियुक्ति करेगा। इसके बाद पंच निर्णय कार्यवाही इस तरह की जाएगी जैसे कि यह न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना पंचनिर्णय हो।

12.14 पंचनिर्णय, जब कोई वाद विचाराधीन हो

यदि विवाद के पक्षकारों ने न्यायालय में वाद फाइल कर दिया है और बाद में उनकी इच्छा अपने विवाद को पंचनिर्णय को सुपुर्द करने की है, तो ऐसा किया जा सकता है। वाद के पक्षकार पारस्परिक सहमति से न्यायालय को इसके लिए लिखित आवेदन कर सकते हैं। लेकिन ऐसा आवेदन पत्र न्यायालय द्वारा वाद पर निर्णय सुनाये जाने से पहले दिया जाना चाहिये। इसके बाद पक्षकारों की सहमति से पंचों की नियुक्ति की जाएगी। न्यायालय मामले को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द कर देगा और पंचनिर्णय देने की अवधि भी निर्धारित करेगा। मामले को पंचनिर्णय को सुपुर्द करने के बाद, न्यायालय ऐसे मामले पर आगे और कार्यवाही नहीं करेगा। जब सभी पक्ष विवाद को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द करने के लिए सहमत न हो तो समस्या उत्पन्न हो सकती है। यदि पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द किया जाने वाला मतभेद का मामला, वाद की विषय-वस्तु से पृथक् किया जा सकता है तो केवल वाद के कुछ पक्षकारों की प्रार्थना पर मामला पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द किया जा सकता है। लेकिन ऐसे पक्षकार जो इस प्रकार से दिए गए प्रार्थना पत्र में शामिल नहीं हैं, उनके प्रति यह वाद न्यायालय में चलता रहेगा। पंचों को पंचनिर्णय केवल उन पक्षों पर ही आबद्धकर होगा जिन्होंने पंचनिर्णय के लिये आवेदन किया था।

बोध प्रश्न ग

1) पंचाट किसे कहते हैं ?

....

....

....

2) पंचाट के अनुसार निर्णय क्या होता है ?

....

....

....

3 वह स्थितियाँ बताइये जब पंचनिर्णय का सुधार किया जा सकता है।

....

....

....

4 पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिए कब भेजा जा सकता है ?

....

....

....

5 पंचाट अन्तिम कब होता है ?

....

....

....

6 वादों में पंचनिर्णय का क्या अर्थ है ?

....

....

....

7 बताइये निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत:

i) पंच पक्षकारों और गवाहों को शपथ दिलाने की शक्ति रखता है। ....

ii) पंच, उस पक्ष का एजेन्ट होता है जिसने उसे नियुक्त किया है। ....

iii) पंचनिर्णय मौखिक या लिखित हो सकता है। ....

iv) यदि पंचनिर्णय अनिश्चित है अथवा निष्पादन के अयोग्य है, तो न्यायालय इसे रद्द कर सकता है। ....

v) यदि पंच एक पक्ष को दूसरे पक्ष की गैरहाज़िरी में सुनता है तो यह न्यायिक दुराचार के समान है। ....

vi) जब पंचों या अधिनिर्णायक की नियुक्ति अविधिमान्य है तो, पंचनिर्णय भी अविधिमान्य होगा। ....

vii) न्यायालय में विचाराधीन वाद में निर्णय सुनाये जाने से पहले सभी पक्षों की सहमति से मामला पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द किया जा सकता है। ....

viii) पंचनिर्णय को न्यायालय में फाइल करना आवश्यक नहीं है। ....

12.15 सारांश

विवादों को नियमित न्यायालयों की बजाय पंचों द्वारा निपटाने की प्रक्रिया को पंचनिर्णय कहते हैं। पंचनिर्णय करार वर्तमान या भावी मतभेदों को पंचों को सौंपने का लिखित करार है चाहे पंचों के नाम इस करार में दिए हों या नहीं।

पंचनिर्णय करार लिखित होना चाहिये, इसमें वैध अनुबंध के सभी आवश्यक तत्त्व मौजूद होने चाहिये और वर्तमान या भावी विवाद होना चाहिये। जब पंचनिर्णय करार विद्यमान है तो पक्षकार उसी मामले को न्यायालय में नहीं ले जा सकते।

कोई भी व्यक्ति जो अनुबंध करने के योग्य है, स्वयं या अपने एजेन्ट द्वारा, विवादों को पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द कर सकता है। केवल सिविल प्रकृति के विवाद सुपुर्द किये जा सकते हैं। विवाह संबंधी मामले, आपराधिक (criminal) मामले, और दिवालियापन के मामले पंचनिर्णय के लिए सुपुर्द नहीं किये जा सकते। पंचनिर्णय न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना हो सकता है अथवा जब कोई वाद विचाराधीन न हो तो न्यायालय के हस्तक्षेप से हो सकता है या वादों में पंचनिर्णय हो सकता है। पंचनिर्णय करार में निम्नलिखित प्रावधान निहित होते हैं: (i) एक एकमात्र को सुपुर्दगी, (ii) यदि मामला पंचों की समसंख्या को सौंपा गया है तो वे एक महीने के भीतर अधिनिर्णायक नियुक्त करेंगे, (iii) पंचनिर्णय 4 महीने में देना चाहिए (iv) जब पंच, पंचनिर्णय देने में असफल होते हैं तो अधिनिर्णायक मामले में कार्यारम्भ करेगा, (v) अधिनिर्णायक को दो महीने में पंचनिर्णय देना होता है, (vi) पक्षकार जांच-पड़ताल के लिये स्वयं को प्रस्तुत करेंगे और दस्तावेज़ प्रस्तुत करेंगे, (vii) पंचनिर्णय अन्तिम होगा।

साधारणतया, पक्षों द्वारा पंच नियुक्त किये जाते हैं लेकिन कभी-कभी वे इस बात के लिये भी सहमत हो सकते हैं कि पंच तीसरे पक्ष द्वारा नियुक्त किया जाए। कुछ स्थितियों में न्यायालय भी पंच नियुक्त कर सकता है। जहाँ प्रत्येक पक्ष को एक पंच नियुक्त करना है और पक्ष का मनोनीत पंच कार्य करने से मना कर देता है या उसकी मृत्यु हो जाती है और 15 दिन में रिक्त स्थान को भरा नहीं जाता तो दूसरे पक्ष द्वारा नोटिस दिये जाने के बाद दूसरे पक्ष का मनोनीत पंच एकमात्र पंच होगा। यदि पक्षकार पंचों से सहमत होने में असफल होते हैं या पंच या अधिनिर्णायक कार्य करने से मना करता है या उसकी मृत्यु हो जाती है और रिक्त स्थान भरा नहीं जाता तब न्यायालय पंच या अधिनिर्णायक नियुक्त कर सकता है।

साधारणतया पंच या अधिनिर्णायक के प्राधिकार का खंडन नहीं किया जा सकता। लेकिन यदि वह मामले में कार्यवाही आगे बढ़ाने में असफल होता है और समय पर पंचनिर्णय नहीं देता या जहाँ उसने स्वयं दुराचार का कार्य किया हो या कार्यवाही का कुसंचालन किया हो, तो न्यायालय की अनुमति से उसे हटाया जा सकता है। जब उसे इस प्रकार से हटाया जाता है तो कोई पारिश्रमिक देय नहीं होता।

पंचों के पास यह शक्ति है कि — वे (i) पक्षों को शपथ दिलाये, (ii) न्यायालय की राय के लिये विशेष मामले को भेजें, (iii) पंचनिर्णय को सशर्त या अनुकल्पी (alternative) बनाए (iv) अन्तरिम पंचनिर्णय दे, (v) खर्च दिलवाए, (vi) पक्षों से परिप्रश्नों के उत्तर माँगे, (vii) विशेष मामलों में करार के विनिर्दिष्ट पालन का आदेश दे।

पंचों के निम्नलिखित कर्तव्य हैं: (i) न्यायिक रूप से कार्य करना, (ii) नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन करना, (iii) निष्पक्ष तरीके से कार्य करना, (iv) सुपुर्द किये गये सभी मामलों पर निर्णय देना, (v) कार्यों का व्यक्तिगत रूप से निर्वहन करना, (vi) अपने प्राधिकार से आगे नहीं जाना और (vii) व्यक्तिगत स्वार्थ प्रकट कर देना।

पंच द्वारा दिया गया निर्णय पंचनिर्णय कहलाता है। यह लिखित होना चाहिये और इस पर पंचों के हस्ताक्षर होने चाहिये। पंचनिर्णय निश्चित व अन्तिम होना चाहिये और इसमें सौंपे गये सभी मामलों का निर्णय होना चाहिये।

न्यायालय पंचनिर्णय में सुधार उस स्थिति में कर सकता है:(i) जब यह किसी ऐसे मामले से सम्बन्धित है जिसे उसे सौंपा नहीं गया था और (ii) यह प्रारूप की दृष्टि से अपूर्ण है तथा (iii) जहाँ इसमें लिपिकीय अशुद्धियाँ हैं। न्यायालय, पंचनिर्णय को पंचों या अधिनिर्णायक को पुनर्विचार के लिये वापस भेज सकता है: (i) जब कोई मामला अनिर्णित रह गया है या ऐसे मामले का निर्णय दिया गया है जिसे उसे सौंपा ही नहीं गया था तथा जिसे पृथक् नहीं किया जा सकता, (ii) जब यह अनिश्चित है, (iii) जब वैधता के सम्बन्ध में की गई आपत्ति स्पष्ट दिखाई देती हो।

न्यायालय पचनिर्णय को रद्द कर सकता है: (i) जब पंच या अधिनिर्णायक ने स्वयं दुराचार का कार्य किया है या कार्यवाही का कुसंचालन किया है. (ii) जहाँ न्यायालय द्वारा पंचनिर्णय को अधिष्ठित करने के बाद पंचनिर्णय दिया गया हो, (iii) जहाँ पंचनिर्णय अनुचित रूप से प्राप्त किया गया हो या अन्यथा अविधिमान्य हो।

जब न्यायालय पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिए वापस करने या रद्द करने का कोई कारण नहीं पाता और आवेदन-पत्र देने की 30 दिन की अवधि समाप्त हो जाती है, तो वह पंचनिर्णय के अनुसार निर्णय सुना सकता है और डिक्री जारी कर देता है।

न्यायालय में वाद फाइल करने से पहले पक्षकार पंचनिर्णय के लिए सहमत हो सकते हैं। कोई भी पक्ष, पंचनिर्णय करार को न्यायालय में फाइल करने के लिये आवेदन कर सकता है। तब न्यायालय दूसरे पक्ष से पूछेगा और यदि पंचनिर्णय करार को फ़ाइल करने के खिलाफ कोई पर्याप्त कारण नहीं बताया जाता, तो न्यायालय पंचनिर्णय कार्यवाही करने का आदेश देगा। कभी-कभी, जब न्यायालय में वाद विचाराधीन है, लेकिन अभी निर्णय नहीं दिया गया है, तो पक्षकार मामले को पंचों को सुपुर्द करने के लिये सहमत हो सकते हैं।

12.16 शब्दावली

पंचनिर्णय (Arbitration): विवादों को निपटाने की ऐसी प्रक्रिया जो न्यायालयों के द्वारा नहीं बल्कि पंच को सुपुर्द करके की जाती है।

विवाद (Dispute): इसका अर्थ है एक पक्ष द्वारा अधिकार का प्राख्यान और उसका दूसरे पक्ष द्वारा निराकरण।

पंच (Arbitrator): वह व्यक्ति पंच कहलाता है जिसे पंचनिर्णय के लिये विवाद सौंपा गया है।

सौंपना (Reference): विवाद को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के करार को सौंपना कहते हैं।

एकमात्र पंच (Sole Arbitrator): जब केवल एक व्यक्ति को मामला सौंपा जाता है तो उसे एकमात्र पंच कहते हैं।

अधिनिर्णायक (Umpire): जब विवाद पंचों की समसंख्या को सौंपा जाता है तो पंच एक अन्य व्यक्ति नियुक्त करते हैं इसे अधिनिर्णायक कहते हैं।

पंचाट (Award): पंचों द्वारा दिया गया निर्णय पंचाट या पंचनिर्णय कहलाता है।

अन्तरिम पंचाट (Interim Award): पंचों द्वारा अन्तिम निर्णय देने से पहले दिये गये पंचनिर्णय को अन्तरिम पंचनिर्णय कहते हैं।

संशोधन (Modification): पंचनिर्णय में आवश्यक संशोधन करना।

विप्रेषण (Remission): जब पंचनिर्णय पंचों या अधिनिर्णायक को पुनर्विचार के लिये वापस भेजा जाता है तो उसे विप्रेषण कहते हैं।

रद्द करना (Setting aside): पंचनिर्णय को समाप्त करने या अस्वीकार करने को रद्द करना कहते हैं।

12.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 6 i) गलत, ii) सही, iii) सही, iv) गलत, v) सही, vi) सही,

ख 6 i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) सही, v) सही, vi) सही, vii) गलत

ग 7 i) सही, ii) गलत, iii) गलत, iv) गलत, v) सही, vi) सही, vii) सही, viii) गलत वे संबंधी

12.18 स्वपरख प्रश्न

1 पंचनिर्णय करार की परिभाषा दीजिये। पंचनिर्णय करार का प्रभाव संक्षेप में बताइये।

कौन से मामले पंचनिर्णय के लिये सौंपे जा सकते हैं ? वह मामले भी बताइये जिन्हें सौंपा नहीं जा सकता।

पंचों की नियुक्ति संबंधि नियम बताइये।

पंचों के प्राधिकार का खंडन कब किया जा सकता है ?

पंचों के अधिकार औश्र कर्तव्य क्या हैं ?

पंचनिर्णय को कब रद्द किया जा सकता है ?

किन परिस्थितियों में न्यायालय:
क) पंचनिर्णय का सुधार कर सकता है,
ख) पंचनिर्णय को पुनर्विचार के लिये वापस भेज सकता है।

i) A, B के बेटे की हत्या कर देता है। A और B इस मामले को पंचनिर्णय के लिए सौंपने के लिए लिखित सहमति देते हैं। क्या यह वैध है ?

ii) A और B ने अपने विवादों को पंचनिर्णय के लिए सौंपने का करार किया। एक विवाद उत्पन्न हुआ और यह करार के अन्तर्गत आता है, लेकिन A न्यायालय चला गया, B को सलाह दीजिये।

iii) B और C ने अपने विवादों को निपटाने के लिये A को एक मात्र पंच नियुक्त किया। A, B से कुछ रिश्वत ले लेता है और विवाद का निर्णय उसके पक्ष में देता है। दो महीने बाद C को इसका पता चलता है। क्या यह पंचनिर्णय को रद्द करने की माँग कर सकता है ?

iv) A और B ने यह जानते हुए कि P, A का संबंधी है, P को ही एकमात्र पंच नियुक्त किया। क्या P की नियुक्ति वैध है ?

v) एक पंच, पक्षकारों को रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा एक निश्चित तारीख पर अपने सामने हाजिर होने का नोटिस भेजता है। एक पक्ष नहीं आता। पंच उस पक्ष की अनुपस्थिति में दूसरे पक्ष की गवाही का अभिलेखन कर लेता है तथा पंचनिर्णय दे देता है। क्या पंचनिर्णय रद्द किया जा सकता है ?

संकेत

i) नहीं, यह अपराधिक मामला है, इसे पंचनिर्णय के लिए नहीं सौंपा जा सकता।

ii) B कार्यवाही को रोकने के लिये न्यायालय में आवेदन पत्र दे सकता है।

iii) हाँ, C पंचनिर्णय को रद्द करने की माँग कर सकता है। B से घूस लेना न्यायिक दुराचार है।

iv) हाँ, पक्षकार आपसी सहमति से किसी भी व्यक्ति को पंच नियुक्त कर सकते हैं।

v) नहीं, पंचनिर्णय रद्द नहीं किया जा सकता क्योंकि उसने दोनों पक्षों को रजिस्ट्रीकृत डाक से नोटिस भेजा, इसलिये उसने दुराचार का कार्य नहीं किया।

नोट: इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए है।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन. डी. कपूर एवं दिनकर पगारे: **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली: सुल्तान चंद एण्ड संस, 1988) अध्याय 1 से खंड 2

आर. के. ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश: **व्यापारिक सन्नियम** (दिल्ली: श्री.महावीर बुक डिपो, 1986) अध्याय 15–17

आर. पी. माहेश्वरी एवं एस. एन. माहेश्वरी: **व्यापारिक सन्नियम** (नई दिल्ली: नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1988) अध्याय 13–15

खंड

4

साझेदारी

इकाई 13
साझेदारी की परिभाषा एवं पंजीकरण 5

इकाई 14
साझेदारों के अधिकार, कर्तव्य तथा दायित्व 21

इकाई 15
साझेदारी फ़र्म का विघटन 34

खंड 4 साझेदारी

साझेदारी भी विशिष्ट अनुबन्धों में से एक है जो कि पहले भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 का एक भाग था। परन्तु 1930 में साझेदारी अनुबन्धों से सम्बन्धित प्रावधानों को निरसित किया गया तथा साझेदारी अधिनियम, 1932 पृथक से बनाया गया। यह अधिनियम आज तक लागू है।

इस अधिनियम में मुख्यतः साझेदारी के गठन, साझेदारों के अधिकार एवं कर्तव्य तथा साझेदारी के विघटन से सम्बन्धित प्रावधान दिए गए हैं। इस खंड में तीन इकाईयां हैं, जिनमें इन बातों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

इकाई 13 में साझेदारी की परिभाषा एवं इसके पंजीकरण की विधि का वर्णन किया गया है।

इकाई 14 में साझेदारों के अधिकार एवं कर्तव्यों तथा तीसरे पक्षकारों के प्रति दायित्व की चर्चा की गई है।

इकाई 15 में साझेदारी के विघटन के विभिन्न तरीकों तथा हिसाब-किताब के निपटान की विधि का वर्णन किया गया है।

इकाई 13 साझेदारी की परिभाषा एवं पंजीकरण

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 परिभाषा एवं विशेषताएँ
13.3 साझेदारी की कसौटी
13.4 साझेदारी और सहस्वामित्व
13.5 साझेदारी और संयुक्त हिन्दू परिवार
13.6 साझेदारी विलेख
13.7 पंजीकरण
 13.7.1 पंजीकरण की प्रक्रिया
 13.7.2 पंजीकरण न कराने के परिणाम
13.8 साझेदारी की अवधि
13.9 साझेदार, फ़र्म और फ़र्म का नाम
13.10 साझेदारों के प्रकार
13.11 अवयस्क साझेदार की स्थिति
 13.11.1 अधिकार
 13.11.2 दायित्व
 13.11.3 वयस्क होने पर स्थिति
13.12 सारांश
13.13 शब्दावली
13.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.15 स्वपरख प्रश्न

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- साझेदारी की परिभाषा और विशेषताएँ बता सकें
- यह बता सकें कि कुछ व्यक्तियों का समूह साझेदारी है अथवा नहीं
- साझेदारी और सहस्वामित्व में अन्तर बता सकें
- साझेदारी और संयुक्त हिन्दू परिवार में अन्तर बता सकें
- यह वर्णन कर सकें कि साझेदारी का पजाकरण कैसे कराया जाता है तथा पंजीकरण न कराने के क्या परिणाम होते हैं
- साझेदारों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें
- यह वर्णन कर सकें कि जब किसी अवयस्क को साझेदारी में शामिल किया जाता है तो उसकी क्या स्थिति होती है।

13.1 प्रस्तावना

भारत में साझेदारी अधिनियम, 1932 के द्वारा साझेदारी अधिशासित होती है। साझेदारी का गठन ऐसे समझौते का परिणाम है जो दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच किसी ऐसे व्यापार के लाभ को परस्पर बांटने के लिए किया गया है जो उन सभी के द्वारा या उनमें से किसी के द्वारा सभी की ओर से संचालित हो। अतः अनुबन्ध अधिनियम तथा एजेन्सी से सम्बन्धित नियम (जो भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 में

दिए गये हैं) साझेदारी में उस सीमा तक लागू होते हैं जब तक कि अधिनियम में कोई विपरीत प्रावधान न हो। साझेदारी अधिनियम में मुख्यतः साझेदारी के गठन, साझेदारों के अधिकार, कर्तव्य एवं दायित्वों तथा इसके समापन की प्रकिया आदि के सम्बन्ध में नियम दिए गये हैं। इस इकाई में आप साझेदारी की परिभाषा और साझेदारी की कसौटी के बारे में तथा सहस्वामित्व और सयुंक्त हिन्दू परिवार से इसके अन्तर, पंजीकरण की विधि, साझेदारों के विभिन्न प्रकार एवं अवयस्क साझेदार की स्थिति का अध्ययन करेंगे।

13.2 परिभाषा एवं विशेषताएँ

सरल शब्दों में, साझेदारी कुछ ऐसे व्यक्तियों का समूह है जो किसी व्यवसाय के लाभ को परस्पर बांटने के लिए सहमत हुए हैं। ऐसे व्यक्तियों को, जो परस्पर एक-दूसरे के साथ साझेदारी में शामिल हुए हैं, व्यक्तिगत रूप से 'साझेदार' एवं सामुहिक रूप से 'फ़र्म' तथा जिस नाम से व्यवसाय किया जाता है, उसे 'फ़र्म का नाम' कहते हैं।

भारतीय साझेदारी अधिनियम की धारा 4 में साझेदारी की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, **साझेदारी उन व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध है जिन्होंने किसी ऐसे कारोबार के लाभ को परस्पर बाँटने का अनुबन्ध किया है जो उन सभी के द्वारा अथवा उन सबकी ओर से उनमें से किसी के द्वारा संचालित किया जाता है।**

साझेदारी की इस परिभाषा से साझेदारी की निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकट होती हैं:

1) यह दो या अधिक व्यक्तियों का समूह है।
2) इसका जन्म किसी समझौते से होता है।
3) यह समझौता किसी कारोबार को चलाने के लिए किया जाना चाहिए।
4) कारोबार के लाभ को बांटने का करार (समझौता) होना चाहिए।
5) कारोबार उन सभी के द्वारा या उन सबकी ओर से उनमें से किसी के द्वारा संचालित होना चाहिए।

व्यक्तियों के समूह में उपर्युक्त सभी तत्त्व विद्यमान होने चाहिए तभी उसे साझेदारी कहा जा सकेगा। आइए अब इन तत्त्वों का बारी-बारी से वर्णन करते हैं।

दो या अधिक व्यक्तिः साझेदारी की स्थापना के लिए कम से कम दो व्यक्ति अवश्य होने चाहिए। यदि किसी कारण, जैसे कि साझेदार की मृत्यु या दिवालिया हो जाने से, साझेदारों की संख्या घट कर एक हो जाती है, तो यह साझेदारी नहीं रहती। जहां तक फ़र्म में साझेदारों की अधिकतम संख्या का प्रश्न है, इसके बारे में साझेदारी अधिनियम में कोई प्रावधान नहीं है। परन्तु कम्पनी अधिनियम की धारा 11 ने बैंकिंग व्यवसाय करने वाली फ़र्म में साझेदारों की संख्या 10, तथा अन्य व्यवसाय करने वाली फ़र्म में यह संख्या 20 तक सीमित की है। यदि साझेदारों की संख्या इस सीमा से बढ़ जाती है तो साझेदारी, व्यक्तियों का एक अवैध समूह बन जाती है। अतः किसी भी साझेदारी फ़र्म में साझेदारों की संख्या 20 से अधिक नहीं होनी चाहिए और यदि फ़र्म बैंकिंग व्यवसाय करती है तो यह संख्या 10 से अधिक नहीं होनी चाहिए।

व्यक्तियों में करारः साझेदारी व्यक्तियों के बीच हुए करार से ही उत्पन्न होती है। यह समझौता स्पष्ट (लिखित या मौखिक) अथवा निहित हो सकता है। इस सम्बन्ध में यह भी स्मरण रखना चाहिए कि जैसे संयुक्त हिन्दू परिवार में स्थिति (status) से या सहस्वामित्व में कानून की प्रक्रिया से सदस्य होते हैं, साझेदारी में ऐसा नहीं होता। साझेदारी की दशा में दो या अधिक व्यक्तियों के बीच अनुबन्ध अवश्य किया जाना चाहिए तथा वैध अनुबन्ध के समस्त आवश्यक तत्त्व भी विद्यमान होने चाहिए। उदाहरण के लिए, व्यक्तियों में अनुबन्ध करने की क्षमता होनी चाहिए, साझेदारी का उद्देश्य वैध होना चाहिए, आदि।

व्यवसायः साझेदारी का गठन किसी व्यवसाय या कारोबार को चलाने के लिए किया जाना चाहिए। खैरात, धार्मिक तथा सामाजिक कार्यों के लिए स्थापित की गई संस्था को साझेदारी नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार, जब दो या अधिक व्यक्ति किसी संयुक्त सम्पत्ति की आय को परस्पर बांटने के लिए सहमत होते हैं, तो इसे साझेदारी नहीं कहा जाता बल्कि ऐसे सम्बन्धों को 'सहस्वामित्व' कहा जाता है। अधिनियम की धारा 2(b) के अनुसार व्यवसाय शब्द में प्रत्येक व्यापार, धंधा तथा पेशा शामिल है। इस प्रकार व्यवसाय से तात्पर्य केवल व्यापार अथवा उद्योग से ही नहीं है बल्कि इसमें आर्कीटेक्चर, कानूनी प्रैक्टिस, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट आदि जैसे पेशे भी शामिल हैं।

लाभ का बंटवाराः व्यापार के लाभ को परस्पर बांटना साझेदारी का सार है। किसी विपरीत समझौते के अभाव में व्यापार के लाभ को बांटने से आशय हानि को भी परस्पर बांटना है। यद्यपि कोई व्यक्ति इस शर्त पर साझेदार बन सकता है कि वह हानि में हिस्सा नहीं बंटाएगा, परन्तु ऐसी स्थिति में भी उस साझेदार का बाहरी व्यक्तियों के प्रति दायित्व असीमित होता है। लाभ-हानि परस्पर किस अनुपात में बांटा जाएगा, यह साझेदारों की बीच हुए समझौते पर निर्भर करता है। यहां यह बात ध्यान रखने योग्य है यद्यपि व्यापार के लाभ में हिस्सा बंटाना आवश्यक है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो लाभ में हिस्सा बंटाता है वह साझेदार हो जाता है अर्थात् व्यापार के लाभों में हिस्सा बांटने मात्र से ही कोई व्यक्ति साझेदार नहीं बन जाता। उदाहरण के लिए, फ़र्म का मैनेजर जो अपने पारिश्रमिक के लिए कारोबार के लाभ में से हिस्सा प्राप्त करता है, उसे फर्म का कर्मचारी ही माना जायेगा, साझेदार नहीं।

व्यापार सभी के द्वारा अथवा उन सबके लिए किसी के द्वारा चलाया जाना चाहिएः साझेदारी को नियमित करने का आधारभूत सिद्धांत साझेदारों में परस्पर एजेंसी का सम्बन्ध है। फ़र्म का व्यापार सभी साझेदारों द्वारा चलाया जाय अथवा उन सबके लिए किसी के द्वारा चलाया जाय। इसका यह अर्थ हुआ कि प्रत्येक साझेदार एजेंट भी है तथा प्रधान भी। वह अन्य साझेदारों के कार्यों से स्वयं बाध्य होता है तथा अपने कार्यों से अन्य साझेदारों को बाध्य करता है। अतः साझेदारी में साझेदारों के बीच परस्पर एजेंसी का सम्बन्ध होता है। तथा इसी कारण से **साझेदारी कानून को, एजेंसी के सामान्य कानून का एक विस्तार माना जाता है।**

यहां यह स्मरण रहे कि यह आवश्यक नहीं है कि सभी साझेदार फ़र्म के व्यापार में सक्रिय भाग लें। व्यापार का कार्यभार किन्हीं एक या दो साझेदारों के द्वारा किया जा सकता है, परन्तु अन्य सभी साझेदार ऐसे साझेदारों के उन कार्यों से बाध्य होंगे जो उन्होंने फ़र्म के व्यापार को चलाने के लिए फ़र्म के नाम से किये हों।

13.3 साझेदारी की कसौटी (Test of Partnership)

साझेदारी अधिनियम के अनुसार साझेदारों का दायित्व संयुक्त एवं पृथक् (joint and several) होता है। इसका तात्पर्य है कि फ़र्म के लेनदार किसी भी साझेदार से अपनी रकम वसूल कर सकते हैं। यह भी संभव है कि कोई व्यक्ति अपने दायित्व से बचने के लिए यह तर्क प्रस्तुत करे कि वह फ़र्म में साझेदार है ही नहीं। ऐसी स्थिति में, लेनदार को यह सिद्ध करना होगा कि सम्बन्धित व्यक्ति फ़र्म में साझेदार है।

यह निर्णय करने के लिए कि कुछ व्यक्तियों का समूह साझेदारी है या नहीं और कि कोई व्यक्ति फ़र्म में साझेदार है या नहीं, हमें पक्षकारों के पारस्परिक वास्तविक सम्बन्धों को देखना चाहिए। यदि पक्षकारों के बीच कोई स्पष्ट अनुबंध है तब साझेदारी अनुबंध की शर्तों से उनके वास्तविक सम्बधों को जाना जा सकता है। परन्तु उनमें कोई स्पष्ट अनुबंध नहीं है तो उनके वास्तविक सम्बन्धों को जानने के लिए अन्य सम्बन्धित तथ्य देखने चाहिए, जैसे कि पक्षकारों का आचरण, अनुबन्ध करते समय विद्यमान परिस्थितियां, लेखा पुस्तकें, कर्मचारियों द्वारा दिये गये बयान, आदि। अधिनियम की धारा 6 में स्पष्ट तौर से बताया गया है कि यह निर्णय करने के लिए कुछ व्यक्तियों का समूह फ़र्म है अथवा नहीं, सभी सम्बन्धित तथ्यों को एक साथ ध्यान में रखते हुए पक्षकारों के परस्पर वास्तविक सम्बन्धों को देखना चाहिए।

जब सभी तथ्यों को एक साथ देखने से यह प्रकट होता हो कि उपर्युक्त बताए गये साझेदारी की आवश्यक तत्त्व विद्यमान हैं तो उस समूह को साझेदारी कहा जायेगा। **यहां इस तथ्य पर बल देना जरूरी है कि लाभ में हिस्सा बांटना साझेदारी का महत्वपूर्ण साक्ष्य है।** हम यह कह सकते हैं कि जब कोई व्यक्ति किसी व्यापार के लाभ में हिस्सा बांटता है तो सामान्यतः उसे साझेदार माना जाता है। परन्तु प्रत्येक स्थिति में यह सत्य नहीं है। ऐसे अनेक व्यक्ति हो सकते हैं जो व्यापार के लाभ में से हिस्सा प्राप्त करते हैं या जिनका हिस्सा अर्जित लाभ की मात्रा पर निर्भर करता है या उन्हें प्राप्त होने वाली रकम व्यापार के लाभ की राशि के साथ घटती-बढ़ती है, परन्तु उन्हें साझेदार नहीं कहते। ऐसे व्यक्ति निम्नलिखित हैं:

i) फ़र्म के लेनदार, जिन्होंने फ़र्म को धन उधार देते समय लाभ में से हिस्सा प्राप्त करना स्वीकार किया है;

ii) मृत साझेदार की विधवा अथवा सन्तान जिन्हें वार्षिकी के रूप में फ़र्म के लाभ में से हिस्सा मिलता है;

iii) व्यापार के भूतपूर्व स्वामी के द्वारा व्यापार बेचने या ख्याति बेचने के प्रतिफल के रूप में लाभ में से हिस्सा प्राप्त करना; तथा

iv) नौकर या एजेंट जिसे फ़र्म के साथ उसके सम्बन्धों के प्रतिफल स्वरूप लाभ में हिस्सा मिलता है।

उदाहरण

1) एक साझेदारी फ़र्म में A और B साझेदार हैं, वे C से इस शर्त पर धन उधार लेते हैं कि उसे (C) लाभ में से 10 प्रतिशत हिस्सा दिया जाएगा तथा उसे लेखा पुस्तकें जांचने का अधिकार भी होगा। इन तथ्यों के होने पर भी C को साझेदार नहीं माना जा सकता क्योंकि उनका (A तथा B) इरादा कभी भी C को साझेदार बनाने का नहीं था।

2) एक ठेकेदार B ने रेलवे वैगनों से माल लादने-उतारने के काम के लिए अपने एक नौकर को नियुक्त किया। नौकर को व्यापार के लाभ में 50 प्रतिशत मिलना है तथा हानि होने की स्थिति में हानि भी सहनी है। नौकर को हम B का एजेंट ही मानेंगे, साझेदार नहीं।

इसी प्रकार, दो व्यक्ति किसी मकान के सहस्वामी हैं, उन्होंने यह मकान 6,000 रुपये वार्षिक किराए पर दे दिया तथा किराए की राशि को बराबर-बराबर बांट लिया। उन्हें हम साझेदार नहीं कह सकते, वे तो केवल उस मकान के सहस्वामी हैं। **धारा 6 के प्रथम स्पष्टीकरण के अनुसार किसी सम्पत्ति के संयुक्त स्वामी जो उस सम्पत्ति से प्राप्त लाभ अथवा आय को परस्पर बांटते हैं, साझेदार नहीं बन जाते।**

यह सत्य है कि व्यापार के लाभ में हिस्सा बंटाये बिना साझेदारी हो ही नहीं सकती, परन्तु लाभ में हिस्सा बांटने मात्र से ही साझेदारी नहीं बन सकती। **साझेदारी की सही कसौटी उनमें परस्पर एजेंसी सम्बन्धों का विद्यमान होना है** अर्थात् एक साझेदार द्वारा फर्म के नाम से किए गये कार्यों के लिए अन्य साझेदारों को बाध्य करने की क्षमता तथा अन्य साझेदारों के कार्यों से स्वयं आबद्ध होना। साझेदारी में प्रधान और एजेंट का यह सम्बन्ध ही इसे सहस्वामित्व तथा लाभ में हिस्सा प्राप्त करने के सरल समझौतों से भिन्न करता है। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि निम्नलिखित व्यक्तियों को साझेदार नहीं माना जाता :

i) संयुक्त हिन्दू परिवार के सदस्य जो पारिवारिक व्यापार को चलाते हैं।

ii) बर्मा के बौद्ध पति-पत्नी द्वारा किया जाने वाला व्यापार।

13.4 साझेदारी और सहस्वामित्व (Partnership and Co-ownership)

जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि किसी सम्पत्ति में समान अथवा संयुक्त हित रखने वाले व्यक्ति जब उस सम्पत्ति से प्राप्त लाभ या सकल आय में हिस्सा बांटते हैं तो इसी कारण उन्हें साझेदार नहीं माना जा सकता। अतः जब दो या अधिक व्यक्ति किसी सम्पत्ति के संयुक्त रूप से स्वामी हैं और वे उससे प्राप्त होने वाली आय को परस्पर बांटते हैं, तो इसका यह अर्थ नहीं है कि वे साझेदार हैं। उन्हें सहस्वामी कहा जाता है। उदाहरण के लिए, पुत्रों को उत्तराधिकार में प्राप्त हुई सम्पत्ति के कारण वे साझेदार नहीं होते हैं, यद्यपि वे संयुक्त रूप से उस सम्पत्ति की देखभाल करते हैं तथा सम्पत्ति से प्राप्त आय को परस्पर बांटते हैं। ऐसे सम्बन्धों को सहस्वामित्व समझा जाता है। परन्तु यदि वे पुत्र उस भवन में काफी हाऊस चलाने का तथा उसकी आय को परस्पर बांटने का अनुबंध करते हैं, तब उन्हें साझेदार माना जायेगा।

लार्ड लिंडले के अनुसार साझेदारी और सहस्वामित्व में निम्नलिखित अन्तर हैं:

1) सहस्वामित्व के लिए समझौता होना आवश्यक नहीं है, परन्तु साझेदारी के लिए समझौता आवश्यक है।

2) सहस्वामित्व में लाभ-हानि का होना आवश्यक नहीं है, परन्तु साझेदारी में यह आवश्यक है।

3) एक सहस्वामी अन्य सहस्वामियों की सहमति के बिना अपना हित किसी अजनबी व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है, परन्तु कोई भी साझेदार ऐसा नहीं कर सकता।

4) एक सहस्वामी अन्य सहस्वामियों का एजेंट नहीं होता, परन्तु प्रत्येक साझेदार अन्य साझेदारों का एजेंट होता है।

5) एक सहस्वामी को सम्पत्ति से सम्बन्धित लागत या खर्च की रकम, अथवा संयुक्त रूप से लिए गये किसी ऋण का भुगतान करने के परिणामस्वरूप अन्य सहस्वामियों से उनके हिस्से के रूप में प्राप्य राशि की वसूली के लिए संयुक्त सम्पत्ति पर कोई पूर्वाधिकार नहीं होता, परन्तु साझेदार को ऐसा अधिकार होता है।

6) सहस्वामित्व लाभोपार्जन के लिए हो यह आवश्यक नहीं है, जबकि साझेदारी का कोई अन्य उद्देश्य नहीं होता।

सहस्वामित्व और साझेदारी में उपर्युक्त अन्तरों के अतिरिक्त कुछ और **अन्य अन्तर** भी हैं, जो निम्नलिखित हैं:

7) सहस्वामित्व में सहस्वामियों की अधिकतम संख्या की कोई सीमा नहीं है, परन्तु साझेदारी में बैंकिंग व्यापार करने की दशा में 10 तथा अन्य कारोबार की दशा में 20 से अधिक साझेदार नहीं हो सकते।

8) सहस्वामित्व के लिए किसी व्यापार को करना आवश्यक नहीं है परन्तु साझेदारी के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है।

9) एक सहस्वामी संयुक्त सम्पत्ति के बंटवारे की मांग कर सकता है, जबकि किसी भी साझेदार को यह अधिकार नहीं होता। साझेदार फर्म के समापन के लिए तथा लेखों के लिए अन्य साझेदारों पर मुकदमा चला सकता है।

13.5 साझेदारी और संयुक्त हिन्दू परिवार (Partnership and Joint Hindu Family)

संयुक्त हिन्दू परिवार अपने ढंग का विशिष्ट व्यावसायिक रूप है जो केवल भारत में ही पाया जाता है। इस प्रकार का व्यवसाय हिन्दू अविभाजित परिवार का होता है और उस पर हिन्दू कानून के प्रावधान लागू होते हैं।

हिन्दू कानून में दो शाखाएँ हैं:

क) **मिताक्षर :** बंगाल तथा असम के अलावा यह सम्पूर्ण भारत में लागू होता है। इस शाखा के अनुसार एक हिन्दू अपने पिता, पितामह तथा प्रपितामह से उत्तराधिकार में सम्पत्ति प्राप्त करता है। इस प्रकार पुरुष वंश में लगातार तीन पीढ़ियाँ (पुत्र, पौत्र तथा प्रपौत्र) पैतृक सम्पत्ति उत्तराधिकार में प्राप्त करती हैं। ये सभी सहदायिक (Co-parcener) कहलाते हैं तथा परिवार का ज्येष्ठतम व्यक्ति 'कर्ता' कहलाता है। हिन्दू सक्सैशन ऐक्ट, 1956 ने सहदायिकी हित के उत्तराधिकार क्षेत्र को मृतक सहदायिक के स्त्री वंशज अथवा स्त्री वंशज के माध्यम से पुरुष सम्बंधी तक विस्तृत कर दिया है।

ख) **दाय भाग :** यह बंगाल तथा असम में लागू होता है। इसके अनुसार, पिता की मृत्यु के पश्चात् ही पुरुष उत्तराधिकारियों को सदस्यता प्राप्त होती है।

हिन्दू कानून के अनुसार, 'व्यापार' उत्तराधिकार में प्राप्त होने वाली परिसम्पत्ति है। हिन्दू की मृत्यु के पश्चात्, व्यापार पर सभी सहदायिकों का संयुक्त स्वामित्व हो जाता है। सहदायिकों में ज्येष्ठतम व्यक्ति नया "कर्ता" बन जाता है और व्यापार का प्रबन्ध करता है। यदि कोई सम्पत्ति किसी अन्य रिश्तेदार से उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त होती है अथवा निजी साधनों से प्राप्त की जाती है तो उसे निजी सम्पत्ति माना जाता है और यह पैतृक सम्पत्ति से भिन्न होती है।

संयुक्त हिन्दू परिवार की **महत्वपूर्ण विशेषताएं** निम्नलिखित हैं:

1) व्यापार परिवार के ज्येष्ठतम सदस्य द्वारा चलाया जाता है जिसे कर्ता कहते हैं। अन्य सदस्यों को फर्म के प्रबन्ध में भाग लेने का कोई अधिकार नहीं होता।

2) अन्य सदस्य कर्ता के अधिकार पर आपत्ति नहीं कर सकते हैं। उनके पास एक ही उपचार है कि वे परस्पर सहमति से परिवार का विघटन कराएँ।

3) कर्ता को व्यापार के लिए ऋण लेने का अधिकार प्राप्त है। कर्ता का असीमित दायित्व होता है, जबकि अन्य सदस्यों का दायित्व व्यापार में उनके हित तक ही सीमित होता है।

4) यदि कर्ता ने व्यापार के धन का गबन किया है तो उसे अन्य सहदायिकों की क्षतिपूर्ति करनी होगी जो संयुक्त सम्पत्ति में उनके हितों के अनुरूप होगी।

5) परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने से परिवार का व्यापार बन्द नहीं हो जाता है।

6) पारस्परिक सहमति के द्वारा संयुक्त हिन्दू पारिवारिक फर्म का विघटन किया जा सकता है।

संयुक्त हिन्दू परिवार की उपर्युक्त विशेषताओं की तुलना साझेदारी फर्म की विशेषताओं से करने पर, हम इन दोनों में मुख्य अन्तर सरलता से जान सकते हैं। इन दोनों में मुख्य अन्तर संक्षेप में यों हैं:

1) **निर्माणः** साझेदारी की स्थापना समझौते से होती है, जबकि संयुक्त हिन्दू परिवार स्थिति से या कानून के कार्यान्वयन से उत्पन्न होता है, उसके लिए समझौता होना आवश्यक नहीं है।

2) **नियंत्रक कानूनः** साझेदार फ़र्म भारतीय साझेदारी अधिनियम, 1932 के प्रावधानों से नियंत्रित होती है, जबकि संयुक्त हिन्दू पारिवारिक व्यापार पर हिन्दू क़ानून लागू होता है।

3) **नए सदस्यों का प्रवेशः** साझेदारी में पुराने साझेदारों की सहमति के बिना नए सदस्य को प्रवेश नहीं दिया जा सकता, जबकि संयुक्त हिन्दू परिवार में कोई व्यक्ति जन्म लेते ही सदस्य हो जाता है।

4) **अवयस्क सदस्यः** अवयस्क फ़र्म में साझेदार नहीं हो सकता, उसे सब साझेदारों की सहमति से लाभों में शामिल किया जा सकता है। संयुक्त हिन्दू परिवार में जन्म से ही व्यक्ति सहदायिक (सदस्य) हो जाता है।

5) **सदस्यों की संख्याः** फ़र्म में साझेदारों की संख्या पर सीमा तय की गई है, जबकि संयुक्त हिन्दू परिवार के सहदायिकों की अधिकतम सीमा पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

6) **सक्रिय भाग लेने का अधिकारः** प्रत्येक साझेदार फर्म के व्यापार में सक्रिय भाग ले सकता है तथा अपने कार्यों से अन्य साझेदारों को बाध्य कर सकता है। संयुक्त हिन्दू परिवार में यह अधिकार केवल 'कर्ता' को ही होता है। हां, 'कर्ता' अन्य सदस्यों को पारिवारिक व्यापार में भाग लेने की अनुमति दे सकता है।

7) **सदस्यों का दायित्वः** साझेदारी में, साझेदारों का दायित्व असीमित होता है, वे फ़र्म की देयताओं के लिए अन्य पक्षकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं। संयुक्त हिन्दू परिवार में केवल 'कर्ता' का दायित्व ही असीमित होता है, अन्य सदस्यों का दायित्व पारिवारिक सम्पत्ति में उनके हित तक ही सीमित होता है।

8) **हिसाब मांगने का अधिकारः** साझेदारी में प्रत्येक साझेदार फर्म की लेखा पुस्तकों को देख सकता है और उनकी नकल भी ले सकता है तथा फर्म से सम्बन्ध विच्छेद करने पर वह पिछले व्यवहारों का हिसाब भी मांग सकता है। परन्तु सहदायिक पिछले व्यवहारों का हिसाब नहीं मांग सकते, वे केवल परिसम्पत्तियों की वर्तमान स्थिति ज्ञात कर सकते हैं।

9) **सदस्य की मृत्युः** किसी विपरीत समझौते के अभाव में, किसी साझेदार की मृत्यु हो जाने पर साझेदारी समाप्त हो जाती है। परन्तु किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर भी संयुक्त हिन्दू परिवार व्यापार करते रह सकता है।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित परिस्थितियों की जांच कीजिए। क्या निम्नलिखित सम्बन्ध साझेदारी कहला सकते हैं? 'हां' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए।

   i) दो कम्प्यूटर संस्थाएं, जिसमें प्रत्येक में 12 सदस्य हैं, समझौता करके एक फर्म में शामिल हो जाती हैं।

   ii) A और B एक कार के संयुक्त स्वामी हैं। रविवार तथा अन्य अवकाश के दिनों वे इसका उपयोग निजी कार्यों के लिए करते हैं, तथा कभी-कभी वह कार को किराए पर भी दे देते हैं तथा प्राप्य आय को वे बराबर-बराबर बांट लेते हैं।

   iii) अनेक व्यक्ति मिलकर एक संस्था बनाते हैं जिसमें प्रत्येक सदस्य 1,000 रुपये वार्षिक देगा। इसका उद्देश्य साड़ियां बनाना तथा उन्हें शरणार्थियों में मुफ्त वितरित करना है।

   iv) दो भाई A और B अपने अपने परिवार के मकान को होटल में परिवर्तित कर लेते हैं तथा इस कारोबार से प्राप्त होने वाली आय को आपस में बराबर-बराबर बांट लेने का समझौता कर लेते हैं। इसमें से प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के लिए तथा कारोबार के एजेंट के रूप में कार्य कर सकता है।

   v) B का एक कारोबार B & Co. के नाम से है। उसने कारोबार की देखभाल के लिए x को मैनेजर नियुक्त किया तथा उसे लाभ में से 50 प्रतिशत भाग देना तय किया गया।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

   i) साझेदारी फर्म में साझेदारों की अधिकतम संख्या अन्य किसी व्यापार करने के लिए ………… तथा बैंकिंग व्यापार करने के लिए ……… हो सकती है।

ii) साझेदारी की उत्पत्ति न तो........से होती है और न ही कानून के कार्यान्वयन द्वारा।

3) सही उत्तर के सामने (√) चिन्ह लगाइये।

क) लाभ में हिस्सा बंटाना:

i) साझेदारी की अन्तिम कसौटी है।

ii) साझेदारी होने का मजबूत प्रमाण मात्र है।

ख) सहस्वामित्व में:

i) सहदायिकों या सहस्वामियों की अधिकतम संख्या 10 हो सकती है।

ii) सहस्वामियों की अधिकतम संख्या पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

ग) कारोबार करना एक आवश्यक लक्षण है

i) साझेदारी का।

ii) सहस्वामित्व का।

3.6 साझेदारी विलेख (Partnership Deed)

ाप यह जानते हैं कि साझेदारी की स्थापना एक समझौते द्वारा की जाती है। यह समझौता मौखिक अथवा खित हो सकता है। परन्तु साझेदारी की शर्तों के बारे में झगड़े से बचने के लिए इस समझौते का लिखित ना ही वांछनीय है। **ऐसा विलेख या दस्तावेज़ जिसमें साझेदारों द्वारा तय की गई साझेदारी की शर्तें लिखी ती हैं, 'साझेदारी विलेख' कहलाता है।** इसे बहुत सावधानी से तैयार किया जाना चाहिए तथा इस पर ी साझेदारों के हस्ताक्षर भी होने चाहिए। साझेदारी विलेख में प्रायः निम्न बातें शामिल की जाती हैं:

फ़र्म का नाम

सब साझेदारों के नाम और पते

कारोबार की प्रकृति तथा स्थान जहां कारोबार किया जाना है

साझेदारी के प्रारम्भ होने की तिथि

साझेदारी की अवधि

प्रत्येक साझेदार द्वारा लगायी गई या लगायी जाने वाली पूंजी की रकम

फ़र्म के कारोबार का प्रबन्ध

लाभ-हानि बांटने का अनुपात

साझेदारों की पूंजी और आहरण पर ब्याज की दर

) साझेदार द्वारा फर्म को दिए गये ऋण या अग्रिम पर देय ब्याज की दर

) यदि किसी साझेदार को वेतन, कमीशन आदि दिया जाना है

) पुस्तकों तथा अन्य दस्तावेजों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था

) अंकेक्षक की नियुक्ति की विधि

) साझेदार के प्रवेश के सम्बन्ध में नियम

) साझेदार की मृत्यु या अवकाश ग्रहण करने के सम्बन्ध में नियम

) साझेदारों के बीच विवाद को निपटाने की विधि

) फ़र्म के विघठन की स्थिति में लेखे निपटाने की विधि

ध्यान रखना चाहिए कि साझेदारी विलेख में वर्णित शर्तों में सभी साझेदारों की सहमति से परिवर्तन ा जा सकता है। परन्तु इसमें ऐसी काई शर्त नहीं होनी चाहिए जो साझेदारी अधिनियम में दिए गये ामों का उल्लंघन करती हो।

13.7 पंजीकरण (Registration)

पंजीकरण से तात्पर्य है उस क्षेत्र, जिसमें फ़र्म के कारोबार का स्थान स्थित हो अथवा स्थित करने का प्रस्ताव हो, के फर्मों के रजिस्ट्रार के पास साझेदारी को पंजीकृत कराना। साझेदारी अधिनियम के अनुसार फ़र्म का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है। अतः यह साझेदारों की इच्छा पर है कि वे फर्म का पंजीकरण करायें अथवा नहीं। परन्तु अपंजीकृत फर्म को कुछ अयोग्यताओं (disabilities) का सामना करना पड़ता है। **इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से कानून ने फ़र्म का पंजीकरण वांछनीय बना दिया है।** ये अयोग्यताएँ कुछ इस प्रकार की हैं कि देर-सवेर प्रत्येक फ़र्म को अपना पंजीकरण कराना ही पड़ता है। यह याद रखने योग्य है कि पंजीकरण से साझेदारी की उत्पत्ति नहीं होती है। यह तो केवल साझेदारी के अस्तित्व का प्रमाण मात्र है तथा फ़र्मों के रजिस्ट्रार के रजिस्टर में लिखी गयी बातें न्यायालय द्वारा निश्चयात्मक प्रमाण मानी जाती हैं।

13.7.1 पंजीकरण की प्रक्रिया

फर्म का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है अतः यह किसी भी समय कराया जा सकता है। जब भी साझेदार फर्म को पंजीकरण कराने का निर्णय लेते हैं तब उन्हें निर्धारित शुल्क के साथ निर्धारित फार्म में एक विवरण उस क्षेत्र के फ़र्मों के रजिस्ट्रार के कार्यालय में, डाक से या स्वयं जाकर, प्रस्तुत करना होता है जिसमें फ़र्म के कारोबार का स्थान स्थित हो अथवा स्थित करने का प्रस्ताव हो। इस विवरण पर सभी साझेदारों के या उनके अधिकृत एजेंटों के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिए। इसमें निम्न बातें लिखी जाती हैं:

i) फर्म का नाम;

ii) फर्म के कारोबार का मुख्य स्थान;

iii) फर्म के कारोबार करने के अन्य स्थानों के नाम;

iv) प्रत्येक साझेदार के फर्म में शामिल होने की तिथि;

v) साझेदारों के पूरे नाम और स्थायी पते; तथा

vi) फर्म की अवधि।

जैसा कि धारा 58(1) में कहा गया है, इस विवरण में दिए गये ब्योरे का सत्यापन उन व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षर करके किया जाना चाहिए। फ़र्म को अपने नाम में किसी ऐसे शब्द जैसे 'क्राउन', 'महाराजा', 'शाही' आदि का प्रयोग नहीं करना चाहिए जिससे ऐसा आभास हो कि फ़र्म को सरकार की अनुमति या संरक्षण प्राप्त है। जब रजिस्ट्रार इस बारे में सन्तुष्ट हो जाता है कि धारा 58 के प्रावधानों का पूर्ण पालन कर दिया गया है तो वह इस विवरण को ''फ़र्मों के रजिस्टर'' में लिख लेता है और विवरण को फाइल में लगा देता है। इसके बाद वह पंजीकरण का प्रमाण-पत्र जारी करता है। यदि, इसके बाद i) फ़र्म के नाम, ii) फ़र्म के कारोबार करने के मुख्य स्थान की स्थिति, iii) साझेदारों के नाम और पते, या iv) फ़र्म के संविधान में कोई परिवर्तन किया जाता है, तो उसकी सूचना रजिस्ट्रार को अवश्य दी जानी चाहिए ताकि वह फ़र्मों के रजिस्टर में तदनुसार परिवर्तन कर सके।

13.7.2 फ़र्म का पंजीकरण न कराने के परिणाम

आप यह पहले जान चुके हैं कि यद्यपि भारत में फर्मों का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है, परन्तु फिर भी इसे वांछनीय समझा जाता है, क्यों कि यदि फर्म पंजीकृत नहीं है तो इसे अनेक अयोग्यताओं का सामना करना पड़ता है। इन अयोग्यताओं या कठिनाइयों को धारा 69 में स्पष्ट तौर से बताया गया है और इसे 'फ़र्म का पंजीकरण न कराने के परिणाम' (effects of non-registration) कहा जाता है। ये अयोग्यताएँ निम्नलिखित हैं:

1) **कोई भी साझेदार फ़र्म या अन्य सह-साझेदारों के विरुद्ध दीवानी न्यायालय में कोई मुकदमा दायर नहीं कर सकता।** यदि साझेदारों में आपस में या किसी साझेदार और फ़र्म के बीच, या किसी साझेदार तथा भूतपूर्व साझेदार के बीच कोई विवाद उत्पन्न होता है और यह विवाद साझेदारों के बीच हुए अनुबन्ध से उत्पन्न या साझेदारी अधिनियम द्वारा प्रदान किए गये अधिकारों से सम्बन्धित है, तो अपंजीकृत फ़र्म का साझेदार, फ़र्म या साझेदार/साझेदारों के विरुद्ध मुकदमा दायर नहीं कर सकता। यह तभी सम्भव है जब फ़र्म पंजीकृत है और उस व्यक्ति का नाम 'फ़र्मों के रजिस्टर' में साझेदार के रूप में लिखा हुआ है। अतः यदि अपंजीकृत फ़र्म के किसी साझेदार को उसके लाभ की राशि का भुगतान नहीं हुआ है, तो

वह न्यायालय के द्वारा इसे वसूल नहीं कर सकता। हां, एक साझेदार दूसरे साझेदारों के विरुद्ध फौजदारी कार्यवाही अवश्य कर सकता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई साझेदार फ़र्म की सम्पत्ति चुरा लेता है या फ़र्म के भवनों में आग लगा देता है, तो कोई भी साझेदार उस पर कानूनी कार्यवाही कर सकता है।

2) **फ़र्म तीसरे पक्षकारों के विरुद्ध दीवानी न्यायालय में कोई मुकदमा दायर नहीं कर सकती:** एक अपंजीकृत फर्म अनुबन्ध से उत्पन्न होने वाले अधिकारों के प्रवर्तन के लिए तीसरे पक्षकार के विरुद्ध कोई मुकदमा दायर नहीं कर सकती। उदाहरण के लिए, ऐसी फ़र्म सप्लाई किए गये माल के मूल्य की वसूली के लिए न्यायालय नहीं जा सकती। हां, वह अपने प्रति गलत कार्य करने वालों के विरुद्ध फौज़दारी कार्यवाही कर सकती है। यहां यह बात ध्यान रखने योग्य है कि यदि किसी तीसरे पक्ष का किसी साझेदार या फर्म के विरुद्ध कोई दावा है तो वह अवश्य ही फ़र्म के विरुद्ध मुकदमा कर सकता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि फ़र्म या उसके साझेदार किसी तीसरे पक्षकार पर मुकदमा नहीं कर सकते हैं परन्तु तीसरे पक्षकारों पर फ़र्म या उसके साझेदारों के विरुद्ध मुकदमा दायर करने के लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

3) **फर्म या उसके साझेदार कोई निपटारा या अनुबन्ध पर आधारित किसी अधिकार को लागू करने के लिए कोई कानूनी कार्यवाही नहीं कर सकते:** उपर्युक्त दोनों अयोग्यताएँ निपटारे के दावे या अनुबन्ध से उत्पन्न किसी अधिकार को लागू कराने के लिए कोई कानूनी कार्यवाही करने पर भी लागू होती हैं। अतः यदि कोई तीसरा पक्षकार किसी रकम की वसूली के लिए फर्म पर दावा करता है, तो फर्म निपटारे का दावा नहीं कर सकती अर्थात् फर्म इस बात की मांग नहीं कर सकती कि तीसरा पक्षकार भी उसकी कुछ रकम का देनदार है, अतः तीसरे पक्ष द्वारा देय राशि को उस दावे की रकम में से घटाया या कम किया जाना चाहिए।

अपवाद

फ़र्म का पंजीकरण न कराने से निम्नलिखित अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता:

1) तीसरे पक्षकार का फ़र्म या किसी साझेदार के विरुद्ध मुकदमा दायर करने का अधिकार।

2) ऐसे दावे जिनकी रकम 100 रुपये से अधिक न हो, उनके सम्बन्ध में मुकदमा करने या निपटारे की मांग करने का अधिकार।

3) साझेदारों का फ़र्म के विघटन, या विघटित फ़र्म के हिसाब, या विघटित फ़र्म की सम्पत्ति की वसूली के लिए मुकदमा दायर करने का अधिकार अर्थात् विघटित फ़र्म की परिसम्पत्ति में अपने हिस्से की मांग या फ़र्म के देनदारों से रकम वसूल करने के लिए दावा किया जा सकता है।

4) किसी दिवालिया साझेदार की सम्पति को वसूल करने तथा दिवालिया साझेदार की ओर से कार्यवाही करने के सरकारी अधिकारी, रिसीवर या कोर्ट का अधिकार।

5) किसी ऐसी फ़र्म या उसके साझेदारों के अधिकार जिनका कारोबार भारत में किसी भी स्थान पर नहीं है।

6) अपंजीकृत फ़र्म का अनुबन्ध के अलावा किसी अन्य प्रकार से उत्पन्न अधिकारों को लागू करने का अधिकार।

अब तक आपको यह अच्छी तरह से स्पष्ट हो गया होगा कि यद्यपि कानून के अन्तर्गत फ़र्म का पंजीकरण कराना अनिवार्य नहीं है, परन्तु अपंजीकृत फर्म की अयोग्यताओं को देखते हुए फ़र्म का पंजीकरण करा लेना वांछनीय है।

बोध प्रश्न ख

1) निम्नलिखित का 'हां' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए :

   i) एक प्रकाशक **A** अपने खर्च पर **B** द्वारा लिखित पुस्तक छापने तथा शुद्ध लाभ का आधा हिस्सा **B** को देने का समझौता करता है। क्या **B** आधे हिस्से के लिएं दावा कर सकता है ? क्या **A** को **B** की पुस्तक के लिए बेचे गये कागज के मूल्य की रकम के लिए **B**, कागज के व्यापारी **C** के प्रति उत्तरदायी है? ....

   ii) एक व्यापार के एकल स्वामी की मृत्यु हो गई और उसके उत्तराधिकारियों ने व्यापार विरासत में प्राप्त किया। क्या उत्तराधिकारी साझेदार कहलाएंगें? ....

iii) A, फर्म का एकल स्वामी, B को साझेदार के रूप में शामिल करता है। B कुछ भी पूंजी नहीं लगाता। वह हानि के लिए भी उत्तरदायी नहीं है तथा लाभ के बदले उसे हर माह वेतन दिया जाएगा तथा उसे साझेदार के सभी अधिकार प्राप्त हैं। B तीसरे पक्षकारों से व्यवहार करता है। क्या वह फर्म को बाध्य कर सकता है? ....

बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत

i) भारतीय साझेदारी अधिनियम के अन्तर्गत फ़र्म का पंजीकरण कराना अनिवार्य है। ....

ii) फ़र्म का पंजीकरण कराने से फ़र्म के साथ व्यवहार करने वाले बाह्य पक्षकारों को सुरक्षा प्रदान होती है। ....

iii) एक अपंजीकृत फ़र्म अनुबन्ध से उत्पन्न होने वाले अधिकारों को लागू कराने के लिए तीसरे पक्ष पर मुकदमा कर सकती है। ....

iv) एक फ़र्म, चाहे पंजीकृत हो या नहीं, किसी तीसरे पक्षकार द्वारा फ़र्म के विरुद्ध दायर किए गये मुकदमें में, सदैव ही निपटारे की मांग कर सकती है। ....

v) एक अपंजीकृत फ़र्म की स्थिति में, सरकारी अधिकारी या रिसीवर दिवालिया साझेदार की सम्पत्ति को वसूल कर सकता है। ....

13.8 साझेदारी की अवधि

साझेदारी का गठन करते समय, साझेदार इसकी कोई निश्चित अवधि निर्धारित कर सकते हैं अथवा यह तय कर सकते हैं कि साझेदारों की इच्छा पर इसे समाप्त किया जाएगा। अतः अवधि की दृष्टि से साझेदारी फ़र्म i) ऐच्छिक साझेदारी (**partnership at will**), अथवा ii) विशिष्ट साझेदारी (**particular partnership**) हो सकती है।

ऐच्छिक साझेदारी : जब साझेदारी के समझौते में इसकी अवधि के लिए कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है तो साझेदारी को 'एच्छिक साझेदारी' कहते हैं (धारा 7)। ऐसी स्थिति में, साझेदारी का सम्बन्ध समाप्त करने के लिए साझेदार स्वतन्त्र हैं अर्थात् वे जब भी चाहें साझेदारी फर्म को समाप्त कर सकते हैं, ऐसा करने के लिए उन्हें केवल अपने निश्चय की सूचना अन्य साझेदारों को देनी होती है। अतः इस प्रकार की साझेदारी एक अनिश्चित अवधि के लिए होती है।

विशिष्ट साझेदारी : जब किसी साझेदारी का गठन किसी विशेष कार्य या नियत अवधि के लिए किया जाता है, तो वह 'विशिष्ट साझेदारी' कहलाती है (धारा 8)। ऐसी साझेदारी नियत अवधि या विशिष्ट कार्य के पूर्ण होने पर स्वतः ही समाप्त हो जाती है। परन्तु यदि साझेदार नियत अवधि से पहले ही साझेदारी फ़र्म को समाप्त करना चाहें, तो सब साझेदारों की पारस्परिक सहमति से ऐसा किया जा सकता है। इसी प्रकार, यदि ऐसी साझेदारी को नियत समय या विशिष्ट कार्य के पूर्ण हो जाने के बाद भी चलाया जाता है, तो उसे 'ऐच्छिक साझेदारी' मान लिया जाता है।

13.9 साझेदार, फ़र्म और फ़र्म का नाम

आप पहले पढ़ चुके हैं (13.2) कि जो व्यक्ति साझेदारी का करार करते हैं, उन्हें व्यक्तिगत रूप से 'साझेदार' और सामुहिक रूप से 'फ़र्म' कहते हैं तथा जिस नाम से वे व्यापार करते हैं वह 'फ़र्म का नाम' कहलाता है (धारा 4)। साझेदारों के समूह को पुकारने के लिए, कानून की नज़र में 'फ़र्म का नाम' एक सुविधाजनक तरीका है। परन्तु, फ़र्म का साझेदारों से कोई पृथक् अस्तित्व नहीं होता है। कम्पनी की तरह फ़र्म का पृथक अस्तित्व नहीं होता है। साझेदारी फर्म के साझेदारों को सामूहिक नाम से जानने के लिए यह अपनाया जाता है। बाह्य पक्षकारों के साथ जो भी अनुबन्ध किए जाते हैं, वे फर्म के नाम से किए जाते हैं, सब साझेदारों के नाम से नहीं। जहां तक 'फ़र्म के नाम' का प्रश्न है साझेदार कोई भी नाम रखने के लिए स्वतन्त्र हैं, परन्तु यह ध्यान रहे कि वह किसी किए जा रहे व्यापार या ख्याति से सम्बन्धित नियमों का उल्लंघन न करें। उन्हें ऐसा नाम नहीं रखना चाहिए जो पहले से ही विद्यमान उसी प्रकार का व्यापार करने वाली फ़र्म के नाम से मिलता-जुलता है जिससे आम जानता को किसी प्रकार का भ्रम होता हो। उन्हें कोई ऐसा नाम भी नहीं रखना चाहिए जिससे यह आभास होता हो कि उन्हें सरकार से अनुमति या संरक्षण प्राप्त है।

13.10 साझेदारों के प्रकार

फ़र्म से व्यवहार करने वाले अन्य पक्षकारों को यह अवश्य जानना चाहिए कि फ़र्म के साझेदार कौन व्यक्ति हैं तथा किस सीमा तक प्रत्येक साझेदार उत्तरदायी है। यह जानकारी उस समय और भी महत्त्वपूर्ण होती है जब फ़र्म के द्वारा कोई त्रुटि की जाती है। साझेदार किस सीमा तक उत्तरदायी हैं, यह काफी सीमा तक, साझेदारों के प्रकार को देखकर ज्ञात किया जा सकता है। अतः साझेदारों के विभिन्न प्रकार जानना आवश्यक है, ये निम्नलिखित हैं :

1) **सक्रिय अथवा प्रत्यक्ष साझेदार (Active or Ostensible Partner)** : एक अनुबन्ध के द्वारा साझेदार बनने वाले व्यक्ति तथा फ़र्म के कारोबार में सक्रिय रूप से भाग लेने वाले व्यक्ति को 'सक्रिय' अथवा 'प्रत्यक्ष' साझेदार कहते हैं। व्यापार के सामान्य अनुक्रम में किए गये समस्त कार्यों के लिए वे अन्य साझदारों के एजेन्ट के रूप में कार्य करते हैं। इस प्रकार ऐसा साझेदार जब फ़र्म के नाम पर एवं उसके व्यापार के सामान्य अनुक्रम में कोई कार्य करता है, तो वह अपने आपको तथा अन्य साझेदारों को बाहरी व्यक्तियों के प्रति उत्तरदायी बनाने की शक्ति रखता है। फ़र्म से अवकाश ग्रहण करने की स्थिति में ऐसे साझेदार को इस विषय की सार्वजनिक सूचना देनी आवश्यक होती है, तभी वह रिटायर होने के बाद फ़र्म के द्वारा किए जाने वाले कार्यों के लिए दायित्व से बच सकेगा।

2) **सुप्त अथवा निष्क्रिय साझेदार (Sleeping or Dormant Partner)** : ऐसा साझेदार जो फ़र्म में पूंजी लगाता है तथा लाभ में हिस्सा भी प्राप्त करता है, सुप्त साझेदार कहलाता है। परन्तु ऐसा साझेदार फ़र्म के कारोबार के संचालन में सक्रिय भाग नहीं लेता है। यद्यपि तीसरे पक्षकारों को ऐसे साझेदार के अस्तित्व की जानकारी नहीं भी है, तब भी वह अप्रकट प्रधान (undisclosed) की तरह फ़र्म के सभी ऋणों के लिए उत्तरदायी होता है। ऐसे साझेदार के फ़र्म से रिटायर होने पर सार्वजनिक सूचना देने की कोई आवश्यकता नहीं होती।

3) **नाम मात्र का साझेदार (Nominal Partner)** : ऐसा साझेदार जो न तो फर्म में पूंजी लगाता है और न ही लाभ में हिस्सा बंटाता है या प्रबन्ध में भी भाग नहीं लेता, 'नाम मात्र का साझेदार' कहलाता है। ऐसा साझेदार केवल अपना नाम फर्म के साथ जोड़ने का अधिकार देता है तथा उसका फ़र्म के कारोबार में और कोई अन्य स्वार्थ नहीं होता। परन्तु ऐसा साझेदार, अन्य साझेदारों के साथ फ़र्म के ऋणों के लिए तीसरे पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होता है।

4) **केवल लाभ के लिए साझेदार (Partner in Profits only)** : यदि साझेदारों में परस्पर ऐसा कोई समझौता हुआ है कि कोई एक विशिष्ट साझेदार केवल फ़र्म के लाभ में से हिस्सा प्राप्त करेगा व हानि के लिये वह उत्तरदायी नहीं होगा, ऐसा साझेदार 'केवल लाभ के लिए साझेदार' कहलाता है। परन्तु ऐसा साझेदार फ़र्म के सभी कार्यों के लिए अन्य पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होता है। क्योंकि साझेदारी में साझेदारों का दायित्व संयुक्त एवं पृथक होता है, अतः यदि फ़र्म को भारी हानि होती है, और अन्य साझेदार फ़र्म के ऋणों को चुकाने में असमर्थ हैं, तो ऐसे साझेदार को अधिकांश भाग देना पड़ता है।

5) **उप-साझेदार (Sub-partner)** : जब कोई साझेदार फ़र्म से प्राप्त लाभ को किसी तीसरे व्यक्ति के साथ बांटने के लिए सहमत होता है, तो ऐसे तीसरे व्यक्ति को 'उप-साझेदार' कहते हैं। उप-साझेदार का फ़र्म से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं होता है। उसे न तो फ़र्म के विरुद्ध कोई अधिकार प्राप्त होता है और न ही वह फ़र्म के ऋणों के लिए उत्तरदायी होता है।

6) **विबन्ध अथवा प्रदर्शन द्वारा साझेदार (Partner by Estoppel or Holding Out)** : (धारा 28): सामान्यतः कोई व्यक्ति एक समझौते के द्वारा साझेदार बनता है। परन्तु कभी-कभी किसी व्यक्ति को उसके आचरण के कारण बाहरी व्यक्तियों के प्रति साझेदार माना जा सकता है। ऐसा विबन्धन (estoppel) अथवा प्रदर्शन (holding out) के द्वारा होता है। धारा 28(1) के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति अपने मौखिक या लिखित शब्दों से, या अपने आचरण से, या स्वयं को साझेदार बतलाता है, या अपने नाम के प्रयोग की अनुमति दे कर, अन्य पक्षकारों के समक्ष यह प्रकट करता है कि वह फ़र्म में साझेदार है, तो वह किसी ऐसे व्यक्ति के प्रति साझेदार के रूप में उत्तरदायी होता है जिसने उसके प्रदर्शन पर विश्वास करके फ़र्म को उधार दिया हो। जो व्यक्ति स्वयं को इस प्रकार प्रदर्शित करता है या प्रदर्शित करने की अनुमति देता है, वह विबन्ध या प्रदर्शन द्वारा साझेदार कहलाता है। उदाहरण के लिए, एक विख्यात खिलाड़ी ने एक खेल पत्रिका छापने वाली संस्था के अवैतनिक प्रधान के पद को, संस्था के अन्य साझेदारों की प्रार्थना पर सम्भाल लिया। ऐसा व्यक्ति फ़र्म के उन सभी ऋणों के लिए, तीसरे पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होगा, जो उन्होंने उस खिलाड़ी को फ़र्म का साझेदार समझकर फ़र्म

को दिए हैं। इसी तरह, श्याम, राम श्याम एण्ड क० के नाम से कारोबार कर रहा है। वह फ़र्म के कारोबार के प्रबन्ध संचालन के लिए राम नाम के एक व्यक्ति को मैनेजर के रूप में नौकर रखता है। फ़र्म के साथ व्यवहार करने वाले तीसरे पक्षकारों ने राम को साझेदार समझा। राम ने न तो कभी कोई आपत्ति की और न ही अपनी वास्तविक स्थिति प्रकट की। ऐसी स्थिति में राम को विबन्ध के द्वारा साझेदार माना गया।

किसी व्यक्ति को विबन्धन या प्रदर्शन के द्वारा साझेदार मानने के लिए, निम्नलिखित दो शर्तों का पालन होना आवश्यक है:

i) ऐसे व्यक्ति ने मौखिक या लिखित शब्दों या अपने आचरण (सक्रिय प्रदर्शन) द्वारा स्वयं को साझेदार बतलाया है या जानबूझकर स्वयं को साझेदार बतलाने की अनुमति दी है (मौन प्रदर्शन); तथा

ii) तीसरे पक्षकार ने साझेदार के इस प्रतिनिधित्व पर विश्वास करके फ़र्म को उधार दिया है। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि जिस व्यक्ति ने स्वयं को इस प्रकार से साझेदार प्रदर्शित किया है उसे इस बात की जानकारी है अथवा नहीं कि यह प्रदर्शन तीसरे पक्ष तक पहुंचा या नहीं।

फ़र्म से रिटायर होने वाले एक साझेदार ने अपने रिटायर होने की सार्वजनिक सूचना नहीं दी। यदि फ़र्म के अन्य साझेदार अब भी उसके नाम का प्रयोग करते हैं, तो वह प्रदर्शन के आधार पर साझेदार समझा जाएगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि तीसरे पक्षकारों को अभी भी यही विश्वास है वह व्यक्ति फ़र्म में साझेदार है। परन्तु किसी साझेदार की मृत्यु हो जाने पर, फ़र्म कारोबार करती रहती है और मृत साझेदार का नाम फ़र्म के नाम में इस्तेमाल किया जा रहा हो, तो मृत साझेदार की सम्पत्ति या उसके कानूनी उत्तराधिकारियों को उसकी मृत्यु के बाद फ़र्म द्वारा किए गये कार्यों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि साझेदार की मृत्यु की कोई सार्वजनिक सूचना दी गई है या नहीं।

बोध प्रश्न ग

1) बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

   i) फ़र्म का साझेदारों से पृथक कोई अस्तित्व नहीं होता। ....

   ii) यदि कोई फ़र्म पहले से ही किसी नाम में कारोबार कर रही है तो नई फ़र्म उसी नाम को नहीं रख सकती। ....

   iii) नियत अवधि के लिए साझेदारी, अवधि की समाप्ति पर स्वतः समाप्त हो जाती है जब तक कि साझेदार इसके विपरीत कोई समझौता न करें। ....

   iv) विशिष्ट साझेदारी, जिस विशिष्ट कार्य के लिए बनाई गयी थी, उस कार्य के पूर्ण हो जाने के बाद जारी नहीं रह सकती। ....

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   i) ऐसा साझेदार जो साझेदारी के कारोबार में सक्रिय रूप से लगा हुआ है, ... साझेदार कहलाता है।

   ii) एक नाम-मात्र का साझेदार फ़र्म को केवल अपना .... देता है।

   iii) एक रिटायर होने वाला साझेदार जो रिटायर होने की सार्वजनिक सूचना नहीं देता, वह .... आधार पर फ़र्म के कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

   iv) उप-साझेदार बाहरी व्यक्तियों के सामने स्वयं को साझेदार प्रदर्शित .... कर सकता है।

   v) एक व्यक्ति जो फ़र्म में साझेदार नहीं है, स्वयं को साझेदार प्रदर्शित करता है या जानबूझकर प्रदर्शित करने की अनुमति देता है, ऐसे साझेदार को .... या प्रदर्शन द्वारा साझेदार कहते हैं।

13.11 अवयस्क साझेदार की स्थिति (Position of a Minor as Partner)

यह तो आप पहले पढ़ चुके हैं कि अवयस्क के द्वारा या उसके साथ किये गये समझौते प्रारम्भ से ही व्यर्थ होते हैं। क्योंकि साझेदारी की उत्पत्ति अनुबन्ध से होती है अतः **अवयस्क साझेदारी में शामिल नहीं हो**

कता। परन्तु अन्य सब साझेदारों की सहमति से अवयस्क को साझेदारी के लाभों में हिस्सेदार बनाया जा कता है, इसके लिए साझेदारों और उसके अभिभावक में एक समझौता किया जाना चाहिए। साझेदारी के भों में शामिल किए गये अवयस्क साझेदार के अधिकार एवं दायित्व निम्नलिखित हैं :

3.11.1 अधिकार

अवयस्क को, समझौते की शर्तों के अनुसार, फ़र्म के लाभों एवं सम्पत्ति में हिस्सा बांटने का अधिकार है, परन्तु वह फर्म के कारोबार के संचालन में भाग नहीं ले सकता।

) उसे फ़र्म की किसी भी लेखा पुस्तक का निरीक्षण करने या उनकी नकल लेने का अधिकार है। परन्तु उसका यह अधिकार लेखा पुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकों को देखने का नहीं है, क्योंकि अन्य पुस्तकों में ऐसी गोपनीय जानकारी हो सकती है, जिसे जानने का अधिकार केवल बालिग साझेदारों को ही है।

i) जब उसे फ़र्म के लाभों में या सम्पत्ति में उसका हिस्सा नहीं दिया जाता तो वह इसके लिए मुकदमा कर सकता है। परन्तु इस अधिकार का प्रयोग वह केवल तभी कर सकता है जब वह फ़र्म से पृथक होने का निर्णय लेता है।

) वयस्क हो जाने पर यदि वह साझेदार बना रहता है तो उसे वही हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार है जिसे वह अवयस्क व्यक्ति के रूप में प्राप्त कर रहा था।

वयस्क हो जाने पर उसे फ़र्म से सम्बन्ध तोड़ लेने का भी विकल्प प्राप्त है तथा यदि आवश्यक हो तो वह फ़र्म के लाभों व सम्पत्ति में अपने हिस्से के लिए मुकदमा भी दायर कर सकता है।

3.11.2 दायित्व

वयस्क साझेदार फ़र्म के लाभों और सम्पत्ति में अपने हिस्से की सीमा तक ही उत्तरदायी होता है। वह तीसरे क्षकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं होता, अतः उसकी अवयस्कता की अवधि के दौरान फ़र्म द्वारा लिए गये ऋणों के लिए उसकी निजी सम्पत्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता। यदि फ़र्म की सम्पत्ति फर्म की देयताओं का पूर्ण भुगतान न किया जा सके, तो अवयस्क को दिवालिया घोषित नहीं किया जा कता।

यस्क होने पर, यदि वह फ़र्म में साझेदार बने रहना स्वीकार करता है तो वह फ़र्म द्वारा किए गये उन मस्त कार्यों के लिए, अन्य पक्षकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है जो उसके फ़र्म में वेश करने के समय से अब तक किए गये हैं।

3.11.3 वयस्क होने पर स्थिति

यस्क होने की तिथि या उसे इस बात की जानकारी कि वह साझेदारी के लाभों में शामिल किया गया था लने की तिथि, इन दोनों तिथियों में जो भी बाद में हो, के छः माह के भीतर अवयस्क साझेदार को यह र्णय करना होगा कि वह फ़र्म में साझेदार के रूप में बने रहना चाहता है अथवा नहीं। यदि वह फ़र्म से लग होने का निर्णय करता है तो उसे अपने निर्णय की सार्वजनिक सूचना देनी चाहिए तथा यदि वह उक्त र्वजनिक सूचना नहीं देता तो यह मान लिया जाएगा कि उसने फ़र्म में साझेदार बना रहना स्वीकार कर या है।

ब वह साझेदार बन जाता है : यदि कोई अवयस्क व्यक्ति स्वयं अपनी इच्छा से या विनिर्दिष्ट समय के तर सूचना देने में विफल होने के कारण, साझेदार बनता है तो उसके अधिकार एवं कर्तव्य धारा 30 (7) बताए गये प्रावधान के अन्तर्गत निम्नलिखित होते हैं :

वह फ़र्म के लाभों में शामिल किए जाने की तिथि से, फ़र्म के समस्त कार्यों के लिए, तीसरे पक्षकारों के प्रति व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है।

फ़र्म की सम्पत्ति तथा लाभों में उसका हिस्सा वही रहेगा जिसे वह अवयस्क के रूप में पाने का अधिकारी था।

ब वह साझेदार बना रहना स्वीकार नहीं करता : अवयस्क व्यक्ति वयस्क होने पर यदि फ़र्म से अपना बन्ध तोड़ना चाहता है, तो धारा 30(8) के अनुसार उसके अधिकार एवं दायित्व निम्नलिखित होंगे :

सार्वजनिक सूचना दिए जाने की तिथि तक उसके अधिकार एवं दायित्व अवयस्क जैसे ही रहते हैं।

ii) सार्वजनिक सूचना देने की तिथि के बाद फ़र्म द्वारा किए गये कार्यों के लिए उसका हिस्सा उत्तरदायी नहीं होगा।

iii) वह फ़र्म की सम्पत्ति और लाभों में अपने हिस्से के लिए अन्य साझेदारों पर मुकदमा चलाने का अधिकारी होता है।

बोध प्रश्न घ

बताइए निम्नलिखित प्रश्न सही हैं या गलत :

i) अवयस्क के साथ नई साझेदारी का गठन नहीं किया जा सकता। ....

ii) फ़र्म के द्वारा अपने ऋणों को भुगतान न करने पर, अवयस्क साझेदार को दिवालिया घोषित किया जा सकता है। ....

iii) तीसरे पक्षकारों के प्रति, अवयस्क साझेदार का दायित्व साझेदारी सम्पत्ति में उसके हिस्से तक ही सीमित होता है। ....

iv) वयस्कता की आयु का हो जाने पर, यदि वह साझेदार बना रहना स्वीकार करता है, तो उसके साझेदार बनने की तिथि से पहले फ़र्म द्वारा किए गये कार्यों के लिए वह उत्तरदायी नहीं होता। ....

v) फर्म के लाभों में शामिल किया गया अवयस्क साझेदार, फ़र्म से अपने सम्बन्ध तोड़े बिना, अन्य साझेदारों के विरुद्ध फ़र्म की सम्पत्ति एवं लाभों में अपने हिस्से के लिए मुकदमा चला सकता है। ....

vi) अवयस्क साझेदार फ़र्म की लेखा पुस्तकों का निरीक्षण कर सकता है। ....

13.12 सारांश

साझेदारी ऐसे व्यक्तियों का परस्पर सम्बन्ध है, जिन्होंने किसी ऐसे कारोबार के लाभ को आपस में बांटने का करार किया है, जो उन सबके द्वारा अथवा उनमें से किसी के द्वारा सबकी ओर से किया जाएगा। साझेदारी की कुछ मुख्य विशेषताएँ निम्न हैं : i) यह दो या अधिक व्यक्तियों का संगठन है, ii) यह समझौते से उत्पन्न होती है, iii) कोई कारोबार किया जाता है, iv) यह कारोबार के लाभ को बांटने के लिए होती है, v) साझेदारों में पारस्परिक एजेंसी का तत्त्व विद्यमान होता है।

साझेदारी में शामिल होने वाले व्यक्तियों को व्यक्तिगत रूप से साझेदार तथा सामूहिक रूप से फ़र्म कहा जाता है। जिस नाम से फ़र्म कारोबार करती है, उसे 'फ़र्म का नाम' कहते हैं। फ़र्म का नाम चुनते समय, साझेदारों को यह ध्यान रखना चाहिए यह ट्रेड नाम सम्बन्धित नियमों का उल्लंघन न करे तथा इससे सरकार का संरक्षण का आभास नहीं होना चाहिए।

यह निर्णय करने के लिए कि कुछ व्यक्तियों का समूह फ़र्म है अथवा नहीं, हमें साझेदारों के वास्तविक सम्बन्धों को देखना चाहिए। इसके लिए उनके बीच हुए समझौते तथा अन्य सम्बन्धित तथ्यों को देखा जाता है, जिससे लाभ में से हिस्सा बांटना प्रबल साक्ष्य है। परन्तु उनमें पारस्परिक एजेंसी का सम्बन्ध वास्तव में साझेदारी की सही कसौटी है। साझेदारी, सहस्वामित्व तथा संयुक्त हिन्दू परिवार से भिन्न होती है।

साझेदारी कानून के अन्तर्गत फ़र्म का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है। परन्तु अपंजीकृत फ़र्म की अयोग्यताओं को ध्यान में रखते हुए, फ़र्म का पंजीकरण वांछनीय है। ये अयोग्यताएँ निम्नलिखित हैं : i) साझेदार अनुबन्ध से उत्पन्न अपने अधिकारों या साझेदारी कानून के द्वारा प्रदान अधिकारों को लागू कराने के लिए फ़र्म या अन्य साझेदारों के विरुद्ध मुकदमा नहीं कर सकता, ii) अनुबन्ध से उत्पन्न अधिकारों को लागू कराने के लिए फ़र्म अन्य पक्षकारों के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं कर सकती, तथा iii) यह दावों का निपटारा नहीं कर सकती। फ़र्मों के रजिस्ट्रार को निर्धारित शुल्क के साथ आवश्यक सूचनाएँ भेजकर, फ़र्म को किसी भी समय पंजीकृत कराया जा सकता है। लाभ के बंटवारे या उनके आचरण के आधार पर, साझेदार अनेक प्रकार के हो सकते हैं, जैसे वास्तविक साझेदार, सुप्त साझेदार, नाम-मात्र के साझेदार, केवल लाभ में साझेदार, उप-साझेदार, विबन्धन या प्रदर्शन द्वारा साझेदार। किसी साझेदार का अन्य पक्षकारों के प्रति दायित्व, काफी सीमा तक इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार का साझेदार है।

अवयस्क, अनुबन्ध करने के अयोग्य होने के कारण किसी फ़र्म में साझेदार नहीं बन सकता। परन्तु सभी साझेदारों की सहमति से उसे साझेदारी के लाभों में शामिल किया जा सकता है। उस स्थिति में भी उसका दायित्व, फ़र्म में उसके हिस्से तक ही सीमित होता है। उसे लाभ में से हिस्सा प्राप्त करने तथा लेखा पुस्तकों को देखने का अधिकार होता है। वयस्क होने पर वह साझेदार बनने का निर्णय कर सकता है। परन्तु यदि वह फ़र्म से अपना सम्बन्ध तोड़ना चाहता है तो ऐसा करने के लिए उसे सार्वजनिक सूचना देनी पड़ती है।

13.13 शब्दावली

व्यक्तियों का समूह : कुछ व्यक्तियों का संगठन जो किसी उद्देश्य के लिए बनाया जाता है।

सहस्वामी : ऐसा व्यक्ति जो अन्य व्यक्तियों के साथ किसी सम्पत्ति का स्वामी होता है।

सहस्वामित्व : किसी सम्पत्ति का संयुक्त स्वामित्व।

फ़र्म : साझेदारी का सामूहिक नाम।

अवैधानिक संस्था : ऐसी फ़र्म जिसमें साझेदारों की संख्या निर्धारित सीमा से अधिक हो जाती है।

संयुक्त हिन्दू परिवार : पूर्वजों से उत्तराधिकार में प्राप्त जो व्यापार हिन्दू अविभाजित परिवार द्वारा किया जाता है।

अवयस्क साझेदार : ऐसा अवयस्क जिसे साझेदारी के लाभों में शामिल किया गया है।

पारस्परिक एजेंसी का सम्बन्ध : व्यक्तियों के बीच ऐसा सम्बन्ध जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को अन्य सदस्यों के लिए कार्य करने का अधिकार होता है।

नाम-मात्र का साझेदार : ऐसा साझेदार जिसने केवल अपना नाम ही फ़र्म को प्रयोग करने के लिए दिया है, वह न तो पूंजी ही लगाता है और न ही प्रबन्ध में भाग लेता है।

प्रत्यक्ष साझेदार : ऐसा साझेदार जो फ़र्म के कारोबार में सक्रिय भाग लेता है (सक्रिय साझेदार)।

साझेदार : ऐसा व्यक्ति जो अन्य व्यक्तियों के साथ साझेदारी में शामिल होता है।

विबन्ध द्वारा साझेदार : ऐसा व्यक्ति जिसके आचरण ऐसा प्रतीत होता है कि वह किसी साझेदारी फ़र्म में साझेदार है।

प्रदर्शन द्वारा साझेदार : ऐसा व्यक्ति जो स्वयं को साझेदार बतलाए जाने की अनुमति देता है तथा जो इस बात की जानकारी हो जाने पर भी इसका खंडन नहीं करता।

लाभ में साझेदार : ऐसा साझेदार जो केवल लाभ में हिस्सा बंटाता है, हानि में नहीं।

सुप्त साझेदार : ऐसा साझेदार जो व्यापार के कारोबार में सक्रिय भाग नहीं लेता (निष्क्रिय साझेदार)।

13.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) नहीं ii) नहीं iii) नहीं iv) हां v) नहीं

2) i) 10, 20 ii) स्थिति

3) क) ii ख) ii ग) i

ख 1) i) यद्यपि यह साझेदारी नहीं है, B लाभ में से अपने हिस्से की मांग कर सकता है। परन्तु C के द्वारा सप्लाई किए गये कागज के लिए उसे (B) उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

ii) नहीं, उत्तराधिकारियों में कोई समझौता नहीं है। यह एक संयुक्त हिन्दू परिवार की स्थिति है।

iii) हां, साझेदारी के सभी आवश्यक तत्त्व पूर्ण हैं, अतः B साझेदार है। पूंजी लगाना या लाभ में हिस्सा बंटाना महत्त्वपूर्ण नहीं है।

2) i) गलत ii) गलत iii) गलत iv) गलत v) सही

ग 1) i) सही ii) सही iii) सही iv) गलत

2) i) वास्तविक ii) नाम iii) प्रदर्शन द्वारा iv) नहीं v) विबन्ध

घ i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) गलत vi) सही

13.15 स्वपरख प्रश्न

1) साझेदारी की परिभाषा कीजिए और साझेदारी की महत्वपूर्ण विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

2) बताइए यह आप कैसे निश्चित करेंगे कि व्यक्तियों का समूह साझेदारी है अथवा नहीं।

3) फर्म के पंजीकरण की विधि संक्षेप में बताइए। पंजीकरण न कराने के क्या परिणाम होते हैं?

4) साझेदारों के विभिन्न प्रकारों की गणना कीजिए और उनके दायित्व की सीमा संक्षेप में बताइए।

5) क्या अवयस्क को साझेदारी में शामिल किया जा सकता है? यदि हां तो उसकी अवयस्कता की अवधि के दौरान तथा उसके वयस्क हो जाने के बाद उसके अधिकार और दायित्व क्या हैं?

6) उन परिस्थितियों की चर्चा कीजिए जब किसी साझेदार के न होते हुए भी उसे साझेदार के रूप में उत्तरदायित्व माना जाता है।

7) निम्नलिखित कथनों पर टिप्पणी कीजिए :

   क) साझेदारी का सम्बन्ध समझौते से उत्पन्न होता है स्थिति से नहीं।

   ख) कारोबार के लाभ में हिस्सा बंटाना ही साझेदारी के अस्तित्व की अन्तिम कसौटी नहीं है।

   ग) भारतीय साझेदारी अधिनियम ने फर्मों का पंजीकरण अनिवार्य बनाए बिना ही आवश्यक बना दिया है।

8) अन्तर बताइए :

   क) साझेदारी और सहस्वामित्व

   ख) साझेदारी और संयुक्त हिन्दू परिवार।

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजे । ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 14 साझेदारों के अधिकार, कर्तव्य तथा दायित्व

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 साझेदारों के परस्पर सम्बन्ध
14.2.1 साझेदारों के अधिकार
14.2.2 साझेदारों के कर्तव्य
14.3 फ़र्म की सम्पत्ति
14.4 साझेदारों के तीसरे पक्षकारों से सम्बन्ध
14.4.1 साझेदार का निहित अधिकार
14.4.2 निहित अधिकार और तीसरे पक्षकार
14.5 अन्तर्गामी और निर्गामी साझेदारों की स्थिति
14.5.1 साझेदार का प्रवेश
14.5.2 साझेदार की निवृत्ति
14.5.3 साझेदार का निष्कासन
14.5.4 साझेदार का दिवालिया होना
14.5.5 साझेदार की मृत्यु
14.5.6 साझेदार के हित का हस्तांतरण
14.6 सारांश
14.7 शब्दावली
14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.9 स्वपरख प्रश्न

14.0 उद्देश्य

स इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- साझेदारों के परस्पर अधिकारों तथा कर्तव्यों का वर्णन कर सकें
- फर्म की सम्पत्ति की संकल्पना की व्याख्या कर सकें
- निहित अधिकारों के क्षेत्र की चर्चा कर सकें
- अन्तर्गामी तथा निर्गामी साझेदारों के अधिकार तथा कर्तव्यों का वर्णन कर सकें।

14.1 प्रस्तावना

काई 13 में आप पढ़ चुके हैं कि दो या अधिक व्यक्तियों के बीच हुए समझौते से साझेदारी का निर्माण ोता है तथा उन व्यक्तियों को साझेदार कहा जाता है। साझेदारों के अधिकार, कर्तव्य तथा दायित्व ाधारणतः उनके बीच हुए समझौते द्वारा निर्धारित किए जाते हैं। परन्तु समझौते में सभी अधिकारों तथा र्तव्यों के बारे में व्यवस्था नहीं की जा सकती। ऐसी स्थिति में साझेदारी अधिनियम के प्रावधान स्वतः ही ागू हो जाते हैं। आप यह भी पढ़ चुके हैं कि साझेदारी, एजेंसी के नियमों का ही विस्तार है। एक साझेदार धान तथा एजेंट, दोनों ही होता है। इसलिए वह अन्य साझेदारों के कार्यों से बाध्य है तथा फ़र्म के लिए हुए गये अपने कार्यों से अन्य साझेदारों को बाध्य करता है। इस इकाई में आप साझेदारी अधिनियम के उन ावधानों का अध्ययन करेंगे जो साझेदारों के परस्पर अधिकारों व कर्तव्यों को नियमित करते हैं तथा ाझेदार के उन अधिकारों की सीमा निर्धारित करते हैं जिनसे वे फ़र्म को बाध्य कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में म अन्तर्गामी तथा निर्गामी साझेदारों की स्थिति की भी चर्चा करेंगे।

14.2 साझेदारों के परस्पर सम्बन्ध

क्योंकि साझेदारी का निर्माण परस्पर समझौते से होता है अतः सामान्यतः यह धारणा है कि साझेदारों के अधिकार व कर्तव्य समझौते के प्रावधानों से निर्धारित होते हैं। परन्तु वास्तव में यह स्थिति है नहीं। साझेदारी समझौते में सभी अधिकारों व कर्तव्यों के लिए स्पष्ट तौर से प्रावधान नहीं भी हो सकता है। ऐसी स्थिति में साझेदारी अधिनियम के प्रावधान लागू होते हैं। इसके अलावा अधिनियम की धारा 9 व 10 में कुछ अधिकारों व कर्तव्यों का वर्णन किया गया है, जिन्हें समझौते के द्वारा बदला नहीं जा सकता। वे आदेशात्मक **(mandatory)** हैं तथा सब साझेदारों पर लागू होते हैं। इस प्रकार, साझेदारी समझौते तथा साझेदारी अधिनियम, दोनों के ही द्वारा साझेदारों के परस्पर अधिकार और कर्तव्य निर्धारित किए जाते हैं।

साझेदारी अधिनियम की धारा 9 से 13 तथा धारा 16 से 25 तक में साझेदारों के परस्पर अधिकारों तथा कर्तव्यों के सम्बन्ध में अधिकांश नियम दिए हुए हैं। जैसे कि पहले बताया जा चुका है, धारा 9 तथा 10, जिसमें साझेदारों के निश्चित कर्तव्य बताए गये हैं, के अलावा अधिनियम के अन्य प्रावधानों में परस्पर समझौता करके परिवर्तन किया जा सकता है। आइए अब हम अधिनियम के उन मुख्य प्रावधानों का अध्ययन करते हैं जिनके द्वारा साझेदारों के परस्पर अधिकार व कर्तव्य निर्धारित होते हैं।

14.2.1 साझेदारों के अधिकार

जब तक साझेदारों ने विपरीत समझौता न किया हो, प्रत्येक साझेदार को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं।

1) **व्यवसाय के संचालन में भाग लेने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार फर्म के व्यवसाय के संचालन तथा प्रबन्ध में भाग ले सकता है।

2) **परामर्श लिए जाने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार को फर्म के व्यवसाय से सम्बन्धित मामलों पर विचार प्रकट करने एवं परामर्श देने का अधिकार है। सामान्यतः सभी निर्णय बहुमत से किए जाएंगे, केवल ऐसे कुछ मामले जैसे व्यवसाय की प्रकृति में परिवर्तन या फ़र्म के पुनर्गठन की स्थिति में, बहुमत से नहीं बल्कि सभी साझेदारों की सहमति से निर्णय किया जाता है।

3) **पुस्तकें देखने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार को फ़र्म की किसी भी पुस्तक को देखने, जांच करने तथा उसकी नकल लेने का अधिकार होता है। परंतु एक अवयस्क साझेदार जिसे फ़र्म के लाभों में शामिल किया गया है, केवल लेखापुस्तकों की जांच व नकल कर सकता है। उसे फ़र्म की अन्य पुस्तकों को देखने का अधिकार नहीं होता है।

4) **लाभ में हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार को फ़र्म के लाभों में बराबर हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार होता है।

5) **पूंजी पर ब्याज पाने का अधिकार :** साझेदारों द्वारा लगाई गई पूंजी पर सामान्यतः कोई ब्याज नहीं दिया जाता। परन्तु यदि साझेदारी समझौते में पूंजी पर ब्याज देने का उल्लेख है, तो वह केवल लाभ में से ही यह दिया जाएगा। दूसरे शब्दों में, हानि होने की दशा में पूंजी पर ब्याज नहीं दिया जाएगा।

6) **उधार दी गई रकम पर ब्याज पाने का अधिकार :** यदि किसी साझेदार ने फ़र्म को कुछ रकम उधार के रूप में दी है, तो वह निर्धारित दर पर ब्याज पाने का अधिकारी है तथा ब्याज दर तय न किये जाने पर, 6 प्रतिशत वार्षिक दर से ब्याज पाने का अधिकार है। उधार ली गई रकम पर ब्याज सदैव दिया जाएगा चाहे फ़र्म को हानि ही हुई हो।

7) **क्षतिपूर्ति कराने का अधिकार :** व्यवसाय के सामान्य तथा उचित संचालन के दौरान, प्रत्येक साझेदार द्वारा किए गये खर्चों तथा स्वीकार की गई देयताओं के लिए फ़र्म से क्षतिपूर्ति की मांग करने का अधिकार है। वह ऐसे खर्चों की प्रतिपूर्ति का भी अधिकारी है जो उसने संकटकाल में फ़र्म को हानि से बचाने के लिए किए हैं। परन्तु इसके लिए यह आवश्यक है उसने इस प्रकार कार्य किया हो जैसा कि एक साधारण सूझबूझ वाला व्यक्ति समान परिस्थितियों में स्वयं अपने मामलों में करता।

8) **साझेदारी सम्पत्ति के उपयोग करने का अधिकार :** नियमानुसार, प्रत्येक साझेदार, साझेदारी सम्पत्ति का संयुक्त स्वामी होता है तथा उसे यह देखने का अधिकार है कि इसका उपयोग केवल फ़र्म के व्यवसाय के कार्यों के लिए ही किया जाए।

9) **संकटकाल में अधिकार :** संकटकालीन परिस्थितियों में फ़र्म को हानि से बचाने के लिए साझेदार को सभी आवश्यक कार्य करने का अधिकार है।

10) **नये साझेदार के प्रवेश को रोकने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार को किसी नये साझेदार को फ़र्म में प्रवेश दिलाने के प्रयत्नों को रोकने का अधिकार है। यह नियम है कि जब तक कोई विपरीत समझौता न हो, सब साझेदारों की सहमति के बिना किसी नये साझेदार को फ़र्म में शामिल नहीं किया जा सकता।

11) **अवकाश ग्रहण करने का अधिकार :** साझेदारी समझौते की शर्तों के अनुसार या अन्य सभी साझेदारों की सहमति से, प्रत्येक साझेदार को साझेदारी से अवकाश ग्रहण करने का अधिकार है। ऐच्छिक साझेदारी की दशा में, अपने अवकाश ग्रहण करने के इरादे की अन्य साझेदारों को सूचना दे कर वह अवकाश ग्रहण कर सकता है।

12) **निष्कासित न किए जाने का अधिकार :** प्रत्येक साझेदार को साझेदारी में बने रहने का अधिकार है। उसे साझेदारों के बहुमत से साझेदारी से तब तक निष्कासित नहीं किया जा सकता जब तक कि यह अधिकार साझेदारी समझौते में न हो तथा इस अधिकार का उपयोग सत्यनिष्ठा से फ़र्म के हितों के लिए न किया जाए।

13) **प्रतिस्पर्धात्मक व्यापार करने का अधिकार :** प्रत्येक निर्गामी साझेदार को प्रतिस्पर्धात्मक व्यापार करने का अधिकार है। परन्तु वह (i) फ़र्म का नाम उपयोग नहीं कर सकता (ii) फ़र्म के ग्राहकों से अपना ग्राहक बनने का आग्रह नहीं कर सकता तथा (iii) वह फ़र्म का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकता।

14) **अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् लाभ में हिस्सा पाने का अधिकार :** किसी विपरीत समझौते के अभाव में, जब तक अवकाश ग्रहण करने वाले साझेदार के हिसाब का निपटारा नहीं हो जाता तब तक उसे फ़र्म के लाभों में से हिस्सा प्राप्त करने अथवा फ़र्म की सम्पत्ति में उसके भाग पर 6% वार्षिक दर से ब्याज दर से पाने का अधिकार है। साझेदार की मृत्यु होने की स्थिति में भी यही नियम लागू होता है।

14.2.2 साझेदारों के कर्तव्य

जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है कि साझेदारों के कुछ कर्तव्य आदेशात्मक हैं तथा कुछ अन्य परस्पर हुए समझौते पर निर्भर करते हैं। इनका संक्षेप में आगे वर्णन किया गया है।

आदेशात्मक कर्तव्य

साझेदारी परस्पर भरोसे और विश्वास पर आधारित होती है। अतः प्रत्येक साझेदार का कर्तव्य है कि वह पूर्ण निष्ठा से कार्य करे तथा फ़र्म के व्यापार को परस्पर हित के लिए चलाए न कि अपने निजी लाभ के लिए। धारा 9 में स्पष्ट तौर से कहा गया है कि प्रत्येक साझेदार (i) फ़र्म के व्यापार को सर्वाधिक परस्पर हित के लिए चलाने के लिए, (ii) एक दूसरे के प्रति न्याय एवं निष्ठावान होने के लिए, तथा (iii) अन्य साझेदारों को या उसके कानूनी प्रतिनिधियों को सही हिसाब देने तथा फ़र्म को प्रभावित करने वाली सभी बातों की पूर्ण सूचना देने के लिए बाध्य होता है। इसी प्रकार धारा 10 के अनुसार बताया गया है कि व्यापार के सामान्य अनुक्रम में कार्य करते हुए यदि किसी साझेदार के कपट करने से फ़र्म को हानि होती है तो उसे इस हानि की पूर्ति करनी होगी। अधिनियम की धारा 9 तथा 10 में दिए गये ये निरपेक्ष कर्तव्य हैं तथा आदेशात्मक हैं। साझेदार आपस में समझौता करके इनमें कोई परिवर्तन नहीं कर सकते।

साझेदारों के मध्य हुए समझौते के अधीन कर्तव्य

धारा 9 तथा 10 में बताए गये प्रावधानों के अलावा अधिनियम में साझेदारों के अन्य कर्तव्यों का भी प्रावधान किया गया है परन्तु ये कर्तव्य तभी लागू होते हैं जब साझेदारों ने परस्पर इसके विपरीत कोई समझौता न किया हो। **ये कर्तव्य ऐसे हैं कि साझेदार परस्पर समझौता करके इनमें परिवर्तन कर सकते हैं।** इस प्रकार के कर्तव्य ये हैं :

i) व्यापार के संचालन में अपने कार्यों को परिश्रमपूर्वक करने के लिए बाध्य है।

ii) व्यापार के संचालन में भाग लेने के लिए बिना किसी पारिश्रमिक पाए कार्य करने के लिए बाध्य है।

iii) फ़र्म की हानियों को बराबर-बराबर बांटने के लिए बाध्य है।

iv) व्यापार के संचालन के दौरान किसी साझेदार द्वारा की गई जानबूझ कर लापरवाही से यदि फ़र्म को हानि होती है तो वह फ़र्म की क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य है।

v) प्रत्येक साझेदार का कर्तव्य है कि वह फ़र्म की सम्पत्ति का उपयोग केवल फ़र्म के व्यापार के लिए ही करे।

vi) यदि कोई साझेदार फ़र्म के किसी व्यवहार से या सम्पत्ति के उपयोग से या फ़र्म के सम्बन्धों के उपयोग से कोई निजी लाभ प्राप्त करता है, तो उसका कर्तव्य है कि वह इसका हिसाब और भुगतान फ़र्म को दे।

vii) प्रत्येक साझेदार का यह कर्तव्य है कि निजी व्यापार करने से उसे जो लाभ हुआ है उसे ऐसे लाभों का हिसाब तथा भुगतान फ़र्म को करना चाहिए। साझेदारों पर सामान्यतः फ़र्म के व्यापार के अलावा अन्य व्यापार करने के लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं होता। परन्तु यदि साझेदारों ने आपस में यह समझौता किया है कि कोई भी साझेदार फ़र्म के व्यापार के अलावा अन्य कोई व्यापार नहीं करेगा, तो उसे अन्य साझेदारों की सहमति के बिना, अन्य कोई भी व्यापार, प्रतिस्पर्धात्मक या अप्रतिस्पर्धात्मक, नहीं करना चाहिए।

viii) फ़र्म के व्यापार के लिए फ़र्म के एजेंट के रूप में काम करने का अधिकार है।

ix) उसे वास्तविक या स्पष्ट (**apparent**) अधिकारों के अन्तर्गत ही कार्य करना चाहिए। यदि कोई साझेदार अपने अधिकारों से परे कोई कार्य करता है तथा अन्य साझेदार ऐसे कार्य का अनुमोदन नहीं करते, तो ऐसे कार्यों से फ़र्म को हुई हानि के लिए वह अन्य साझेदारों के प्रति उत्तरदायी होगा।

x) अन्य साझेदारों की सहमति के बिना, कोई भी साझेदार फ़र्म में अपने हित तथा अधिकारों को किसी बाहरी व्यक्ति को हस्तांतरित नहीं कर सकता।

xi) फ़र्म में साझेदार बने रहने तक, प्रत्येक साझेदार फ़र्म के कार्यों के लिए अन्य साझेदारों के साथ संयुक्त रूप से तथा व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। इसका आशय है कि फ़र्म के लेनदार अपनी रकम किसी भी साझेदार से वसूल कर सकते हैं।

14.3 फ़र्म की सम्पत्ति

यह तो आप जानते ही हैं कि सब साझेदार फ़र्म की सम्पत्ति के संयुक्त स्वामी होते हैं(जब तक इसके विपरीत कोई समझौता हुआ हो) तथा साझेदारों को इसका उपयोग केवल फ़र्म के कार्यों के लिए ही करना चाहिए। अतः हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि फ़र्म की सम्पत्ति क्या होती है? साझेदार सामान्यतः यह समझौता करने के लिए स्वतन्त्र होते हैं कि वे यह निर्धारित करें कि कौन सी सम्पत्ति साझेदारी फ़र्म की है तथा कौन सी उनकी निजी या व्यक्तिगत सम्पत्ति है। परन्तु यदि उनमें इस प्रकार का कोई समझौता नहीं हुआ है और आप यह जानना चाहते हैं कि अमुक सम्पत्ति फ़र्म की है या नहीं, तो आपको यह ज्ञात करना होगा कि यह किस स्रोत से सम्पत्ति प्राप्त की गयी है, यह **किस उद्देश्य** के लिए प्राप्त की गयी है तथा **इसका** किस प्रकार उपयोग हो रहा है। धारा 14 के अनुसार, जब कोई विपरीत समझौता नहीं हो, तब फ़र्म की सम्पत्ति में निम्नलिखित शामिल हैं।

i) वह समस्त सम्पत्ति, अधिकार तथा हित जिन्हें व्यापार आरम्भ करने के समय फ़र्म के स्टॉक में लाया गया है,

ii) फ़र्म के द्वारा क्रय की गयी या अन्य किसी प्रकार से प्राप्त की गयी सम्पत्ति,

iii) फ़र्म के रुपयों से क्रय की गयी सम्पत्ति, तथा

iv) फ़र्म-व्यापार की ख्याति (**goodwill**)

इस प्रकार, जब तक कोई विपरीत इरादा प्रकट नहीं हो, तब तक व्यापार के दौरान फ़र्म के स्टाक में लायी गयी कोई भी सम्पत्ति या व्यापार के दौरान फ़र्म के धन से जोड़ी गयी सम्पत्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, फ़र्म की सम्पत्ति मानी जाती है। लेकिन यदि किसी साझेदार की सम्पत्ति का उपयोग फ़र्म के व्यापार के लिए किया जाता है, तो वह स्वतः फर्म की सम्पत्ति नहीं बन जाती। वह सम्पत्ति फ़र्म की सम्पत्ति केवल तभी बनेगी जब साझेदारों का ऐसा करने का इरादा हो। उदाहरण के लिए, भूमि का एक टुकड़ा एक साझेदार के नाम खरीदा जाता है, परन्तु इसका मूल्य फ़र्म के रुपयों में से (या फर्म के लाभ में से) चुकाया जाता है, तो जब तक कोई विपरीत इरादा प्रकट नहीं हो यह सम्पत्ति, फ़र्म की सम्पत्ति मानी जाएगी। इसी प्रकार, यदि दो व्यक्ति साझेदारी में कार्य करने के उद्देश्य से कोयला खदान का पट्टा लेते हैं, तो इस पट्टे को फ़र्म की सम्पत्ति माना जाएगा।

बोध प्रश्न क

1) निम्नलिखित का 'हां' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए :

i) क्या किसी साझेदार को साझेदारी व्यापार में भाग लेने से रोका जा सकता है? ......

ii) क्या कोई साझेदार फ़र्म में शामिल होने से पहले किए गये कार्यों के लिए उत्तरदायी है? ....

iii) क्या साझेदार समझौता करके बहुमत से किसी साझेदार को निष्कासित कर सकते हैं? ....

iv) जिस व्यक्ति को लाभ का हिस्सा हस्तांतरित किया गया है क्या वह हानि में भी हिस्सा बंटाएगा? ....

v) एक अवयस्क, जिसे फ़र्म के लाभ में शामिल किया गया है क्या वह फ़र्म की किसी भी किताब की जांच या नकल कर सकता है? ....

2) यदि साझेदारी समझौते में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं हो तो साझेदार किस प्रकारः

अ) पूंजी पर ब्याज लगाएंगे

ब) परस्पर लाभ बांटेंगे

3) A तथा B एक फ़र्म में साझेदार है। B को फ़र्म के लिए चीनी खरीदने के लिए नियुक्त किया गया। A को बताए बिना उसने अपनी चीनी फ़र्म को बाजार मूल्य पर बेच दी तथा भारी लाभ कमाया। क्या वह फ़र्म के प्रति जवाबदेह है?

....

....

....

4) 'हां' या 'नहीं' में लिखिए कि निम्नलिखित फ़र्म की सम्पत्ति हैं या नहीं :

i) ऐसे साझेदार की सम्पत्ति जो किसी विद्यमान साझेदारी में प्रवेश करता है। ....

ii) एक साझेदार, अन्य साझेदारों की सहमति के बिना, फ़र्म के धन से अपने नाम में शेयर खरीदता है। अन्य साझेदार बाद में इस व्यवहार का अनुमोदन कर देते हैं। ....

iii) साझेदारी के धन से किसी एक साझेदार के लिए तथा केवल उसके ही लाभ के लिए भूमि खरीदी गयी और यह साझेदार क्रय मूल्य के लिए फ़र्म का देनदार बन गया। ....

iv) फ़र्म की विक्रय योग्य ख्याति। ....

14.4 साझेदारों के तीसरे पक्षकारों से सम्बन्ध

इकाई 13 में आप पढ़ चुके हैं कि पारस्परिक एजेंसी, साझेदारी का एक आवश्यक तत्त्व है। प्रत्येक साझेदार, प्रधान एवं एजेंट, दोनों ही तरह से कार्य करता है। साझेदारों की यही स्थिति उनके अन्य पक्षकारों के साथ सम्बन्ध नियमित करती है। धारा 18 में स्पष्ट तौर से बताया गया है कि तीसरे पक्षकारों की नजर में, प्रत्येक साझेदार फ़र्म के व्यापार के लिए, फ़र्म का एजेंट होता है इस प्रकार, फ़र्म के लिए किए गये कार्यों से वह अन्य साझेदारों को बाध्य करता है, बशर्ते वे कार्य व्यापार के सामान्य अनुक्रम में तथा फ़र्म के नाम में किए गये हों। अतः ऐसे कार्यों के लिए अन्य पक्षकारों के प्रति सब साझेदार उत्तरदायी होते हैं।

14.4.1 साझेदार का निहित अधिकार (Implied Authority of a Partner)

साझेदारी फ़र्म के संदर्भ में, **साझेदार के अधिकार से आशय उसे अपने कार्यों से फ़र्म को बाध्य करने के अधिकार से है।** यह अधिकार स्पष्ट या निहित हो सकता है। साझेदारों में परस्पर समझौता करके जो अधिकार किसी साझेदार को प्रदान किया जाता है, उसे स्पष्ट अधिकार कहते है। परन्तु जब कोई समझौता न हो अथवा साझेदारी समझौते में इस का प्रावधान न हो, तो साझेदार द्वारा फर्म के व्यापार को चलाने के लिए जो कार्य सामान्य रीति से किए जाते हैं, फ़र्म को बाध्य करते हैं (धारा 19)। साझेदार को अपने कार्यों से फ़र्म को बाध्य करने की क्षमता को 'साझेदार का निहित अधिकार' कहते हैं। उसके कार्यों को निहित अधिकार की सीमा के अन्तर्गत लाने के लिए, निम्नलिखित शर्तें पूर्ण की जानी चाहिए।

1) **साझेदार का कार्य फ़र्म के सामान्य व्यापार से सम्बन्धित होना चाहिए।** यदि कार्य इस प्रकार का है जो फ़र्म के व्यापार में साधारणतः नहीं किया जाता है तब चाहे वह कार्य फ़र्म के नाम से ही क्यों न किया गया हो, उस कार्य से फ़र्म बाध्य नहीं होगी। उदाहरण के लिए, एक बने-बनाए वस्त्रों का निर्यातक फ़र्म के नाम से भारी मात्रा में शराब खरीदने का आदेश देता है। क्योंकि यह कार्य फ़र्म के सामान्य

कार्य से सम्बन्धित नहीं है, यह साझेदार के निहित अधिकार के क्षेत्र में नहीं आता, इस कार्य के लिए फ़र्म बाध्य नहीं होगी।

2) **कार्य फ़र्म के व्यापार को सामान्य रीति से चलाने के लिए किया जाना चाहिए।** अन्य शब्दों में कार्य ऐसा होना चाहिए जो फ़र्म के व्यापार में आम तौर से किया जाता हो। उदाहरण के लिए, X और Y एक फुटकर व्यापार में साझेदार हैं। Z को उधार माल बेचा गया। बाद में X ने फ़र्म के लिए Z से देय राशि प्राप्त कर ली। Y को इस प्राप्ति का ज्ञान नहीं है और X इस रकम का उपयोग निजी कार्यों के लिए कर लेता है। देनदारों से रकम प्राप्त करने का कार्य व्यापार में सामान्यतः किया जाता है, अतः अब फर्म Z पर राशि का दावा नहीं कर सकती क्योंकि X को राशि प्राप्त करने का अधिकार नहीं था। किसी व्यापार के लिए यह निर्धारित करना कि सामान्य रीति क्या है व असामान्य कार्य क्या हैं, अत्यन्त कठिन कार्य है। यह व्यापार की प्रकृति और रीति-रिवाज पर निर्भर करेगा कि सामान्य कार्य कौन से हैं? उदाहरण के लिए, एक व्यापारिक फ़र्म के लिए माल खरीदना और बेचना, विनिमय बिलों को लिखना और स्वीकार करना, ऋण लेना आदि कार्यों को सामान्य कार्य समझा जाता है। परन्तु एक नीलामकर्ता फ़र्म या वकीलों की फ़र्म के लिए ऋण लेने के कार्य को सामान्य कार्य नहीं माना जा सकता।

3) **कार्य फ़र्म के नाम से या किसी ऐसे ढंग से किया जाए जिससे फ़र्म को बाध्य करने का निहित इरादा प्रकट हो।** उदाहरण के लिए, A तथा B स्टेशनरी के व्यापार में साझेदार हैं। A एक थोक विक्रेता के पास जाता है और फ़र्म के नाम से पैन्सिलें की कुछ मात्रा उधार खरीद लेता है। वह इन पैन्सिलों का उपयोग अपने परिवार में करता है। साझेदार का यह कार्य स्टेशनरी के कारोबार में क्योंकि सामान्यतः किया जाता है तथा यह कार्य फ़र्म के नाम से किया गया है, अतः इस कार्य के लिए फ़र्म बाध्य होगी।

साझेदार के निहित अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्यः साझेदार के निहित अधिकार में साधारणतः निम्नलिखित शामिल हैं—

i) जिस माल का फ़र्म व्यापार करती है या जो माल फ़र्म के कारोबार में इस्तेमाल होता है, उसे फ़र्म के लिए खरीदना;

ii) फ़र्म के माल को बेचना,

iii) फ़र्म को देय ऋणों का भुगतान प्राप्त करना और उनकी प्राप्ति की रसीद देना;

iv) फ़र्म के साथ लेन-देन करने वाले व्यक्तियों के साथ हिसाब का निपटारा करना;

v) फ़र्म के कारोबार को चलाने के लिए आवश्यक कर्मचारियों की नियुक्ति करना;

vi) फ़र्म की साख पर धन उधार लेना

vii) ऋण लेने के लिए जमानत के तौर पर फ़र्म के माल को गिरवी रखना;

viii) फ़र्म के नाम पर विनिमय साध्य विपत्र लिखना, स्वीकार करना या पृष्ठांकित करना; तथा

ix) फ़र्म के विरुद्ध दावों से बचाव करने के लिए वकील नियुक्त करना।

साझेदार के निहित अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्यः धारा 19 (2) ने साझेदार के निहित अधिकार क्षेत्र की सीमा को सीमित कर दिया है। इस धारा के अनुसार जब तक व्यापार में कोई विपरीत प्रथा या रिवाज न हो, तब तक कोई भी साझेदार निहित अधिकार के अन्तर्गत निम्नलिखित कार्य नहीं कर सकताः

i) फ़र्म के व्यापार से सम्बन्धित किसी विवाद को पंच-निर्णय के लिए सुपुर्द करना;

ii) फ़र्म की ओर से किसी बैंक में अपने नाम से खाता खोलना;

iii) फ़र्म की ओर से किसी दावे या उसके किसी भाग के सम्बन्ध में समझौता करना या कोई त्याग करना;

iv) फ़र्म की ओर से दायर किए गये किसी मुकदमें या कार्यवाही को वापस लेना;

v) फ़र्म के विरुद्ध दायर किए गये किसी मुकदमें या कार्यवाही में कोई दायित्व स्वीकार करना;

vi) फ़र्म की ओर से किसी अचल सम्पत्ति को खरीदना;

vii) फ़र्म की किसी अचल सम्पत्ति को हस्तांतरित करना; तथा

viii) फ़र्म की ओर से किसी अन्य साझेदारी में शामिल होना।

न्तु फ़र्म के साझेदार परस्पर समझौता करके निहित अधिकारों को बढ़ा या घटा सकते हैं।

कट काल में साझेदार के अधिकारः धारा 21 के अनुसार, संकट काल में साझेदार फ़र्म को हानि से बचाने लिए वे समस्त कार्य कर सकता है, जो एक सामान्य बुद्धि वाले व्यक्ति के द्वारा समान परिस्थितियों में पने लिए किए जाते हैं। ऐसे कार्य साझेदार के निहित अधिकारों के अन्तर्गत नहीं आते हैं परन्तु फिर भी र्म उन कार्यों से बाध्य होती है। उदाहरण के लिए, एक व्यापारिक फ़र्म के साझेदार परस्पर अनुबन्ध करके । करते हैं कि कोई भी साझेदार अन्य साझेदारों से परामर्श किए बिना 10,000 रुपये मूल्य से अधिक का ल नहीं बेचेगा। बाजार में अचानक मंदी आ जाने के कारण मूल्यों में भारी गिरावट हुई। फ़र्म को हानि से ाने के लिए एक साझेदार ने अन्य साझेदारों से सलाह किए बिना 1,00,000 रुपये का माल बेच दिया। झेदार के ऐसे कार्य से फ़र्म बाध्य होगी।

.4.2 निहित अधिकार और तीसरे पक्षकार

। साझेदार तीसरे पक्षकारों के प्रति उन सभी कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं जो उनके स्पष्ट या निहित धिकारों के अन्तर्गत आते हैं। उनकी तीसरी पक्षकारों के प्रति दायित्वों को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत ययन किया जा सकता है।

साझेदार के निहित अधिकार का विस्तार या उन पर प्रतिबन्धः जैसा कि पहले बताया जा चुका है साझेदार आपस में समझौता करके किसी भी साझेदार के निहित अधिकारों में विस्तार कर सकते हैं: या उन पर प्रतिबन्ध लगा सकते हैं। परन्तु किसी साझेदार के निहित अधिकारों पर प्रतिबन्ध लगाने पर तीसरे पक्षकार उससे तब तक बाध्य नहीं होंगे जब तक कि उन्हें इस प्रकार के प्रतिबन्ध की जानकारी न हो। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं किसी साझेदार के निहित अधिकारों पर लगाए गये गुप्त प्रतिबन्धों से तीसरे पक्षकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उदाहरण के लिए, एक व्यापारिक फ़र्म ने साझेदार के उधार माल खरीदने के निहित अधिकार को 1,000 रुपये तक सीमित कर दिया। एक तीसरे पक्ष ने, जिसे इस प्रतिबन्ध का ज्ञान नहीं था, 1,500 रुपये का माल साझेदार को उधार बेच दिया। फ़र्म, तीसरे पक्षकार को पूर्ण राशि देने के लिए बाध्य होगी।

साझेदार द्वारा कोई बात स्वीकार करने का परिणामः क्योंकि फ़र्म के कारोबार के लिए साझेदार फ़र्म का एजेंट होता है, इसलिए यदि व्यापार के सामान्य संचालन के दौरान फ़र्म के कार्यों के सम्बन्ध में कोई साझेदार कोई बात स्वीकार करता है या प्रतिनिधित्व करता है, तो यह फ़र्म के विरुद्ध साक्ष्य होता है।

सक्रिय साझेदार को दी गई सूचना का परिणामः यह तो आप जानते ही हैं कि एजेंसी के मामलों से सम्बन्धित एजेंट को दी गई सूचना प्रधान को दी गई मानी जाती है। साझेदारी में भी यही नियम लागू होता है। अतः फ़र्म से सम्बन्धित विषयों की सूचना जब किसी ऐसे साझेदार को दी जाती है जो व्यापार के सामान्य संचालन में उन्हें प्राप्त करता है, तो यह सूचना फ़र्म को दी गई सूचना मानी जाती है। परन्तु यह नियम उस दशा में लागू नहीं होगा जब कोई साझेदार या अन्य पक्ष फ़र्म के प्रति कपट करते हैं।

फ़र्म के कार्यों के लिए साझेदारों का दायित्वः प्रत्येक साझेदार, फ़र्म में साझेदार बने रहने के समय तक किए गये कार्यों के लिए, तीसरे पक्षकारों के प्रति अन्य साझेदारों के साथ संयुक्त रूप से तथा पृथक्-पृथक् व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है। इसका यह अर्थ हुआ कि फ़र्म के प्रत्येक कार्य के लिए तीसरा पक्षकार किसी भी साझेदार पर अलग से या सब साझेदारों पर संयुक्त रूप से मुकदमा कर सकता है।

साझेदार के गलत कार्यों के लिए दायित्वः कारोबार के सामान्य संचालन में जब कोई साझेदार गलत कार्य करता है, तो ऐसे कार्यों के लिए फ़र्म बाध्य होती है। धारा 26 में विशेष रूप से प्रावधान किया गया है कि यदि फ़र्म के व्यापार के सामान्य संचालन के दौरान, या अन्य साझेदारों द्वारा दिए गये अधिकारों के अन्तर्गत, किसी साझेदार के गलत कार्य अथवा चूक से किसी तीसरी पक्षकार को हानि होती है या दण्ड मिलता है, तो उसके लिए फ़र्म उस सीमा तक उत्तरदायी होती है जिस सीमा तक साझेदार उत्तरदायी होता है। उदाहरण के लिए, A, B तथा C एक समाचार पत्र के कारोबार में साझेदार हैं। A समाचार पत्र का सम्पादक भी है। P के विरुद्ध एक अपमानजनक लेख की सत्यता की जांच किस बिना A उसके छपने की अनुमति दे देता है। P फ़र्म पर मान हानि का दावा करता है। सम्पादक साझेदार की इस गलती के लिए फ़र्म उत्तरदायी होगी क्योंकि P की प्रतिष्ठा को जो हानि पहुंची है वह कारोबार के दौरान हुई चूक या त्रुटि से हुई है।

6) **दुरुपयोग के लिए फर्म का उत्तरदायित्वः** धारा 27 में प्रावधान किया गया है कि यदि (i) कोई साझेदार अपने प्रकट अधिकारों के अन्तर्गत कार्य करते हुए किसी तीसरे पक्ष से धन या सम्पत्ति प्राप्त करता है तथा उसका दुरुपयोग करता है, अथवा (ii) फ़र्म अपने व्यापार के सामान्य संचालन में किसी तीसरे पक्ष से धन या सम्पत्ति प्राप्त करती है तथा जब वह धन या सम्पत्ति फ़र्म की अभिरक्षा में है कोई साझेदार उसका दुरुपयोग करता है, तो फ़र्म तीसरे पक्षकार के प्रति उत्तरदायी होती है। उदाहरण के लिए, X, Y तथा Z किसी व्यापार में साझेदार हैं। फ़र्म का एक देनदार K अपना 10,000 रु. का ऋण Z को चुका देता है। Z इस प्राप्ति की सूचना X या Y को नहीं देता तथा धन का दुरुपयोग कर लेता है। K ने जो भुगतान Z को किया है, इससे K ऋण चुकाने के दायित्व से मुक्त हो गया।

बोध प्रश्न ख

1) फ़र्म को बाध्य करने के लिए साझेदार के निहित अधिकार से क्या आशय है?

....

....

....

....

2) रिक्त स्थान भरिए :

i) फ़र्म को बाध्य करने का साझेदार का अधिकार.........या निहित हो सकता है।

ii) साझेदार के निहित अधिकारों के अन्तर्गत किए गये कार्यों से फ़र्म को बाध्य करने के लिए यह आवश्यक है कि वह कार्य.... कारोबार से सम्बन्धित हो।

iii) ....में फ़र्म को हानि से बचाने के लिए, साझेदार अपने स्पष्ट या..........अधिकारों से परे कार्य कर सकता है।

iv) किसी विपरीत व्यापारिक प्रथा या रिवाज के अभाव में, कोई भी साझेदार निहित अधिकारों के अन्तर्गत फ़र्म से सम्बन्धित किसी विवाद को पंच-निर्णय को सुपुर्द .... कर सकता है।

3) निम्नलिखित में से किस परिस्थिति में, साझेदारों के कार्यों से तीसरे पक्षकारों के प्रति फ़र्म बाध्य होगी। 'हां' या 'नहीं' में उत्तर दीजिए :

i) सिवरेज की नालियों को बनाने का काम करने वाली साझेदारी फ़र्म के प्रबन्धकीय साझेदार ने प्रवेश छिद्रों को कानून के अनुसार नहीं ढंकवाया। एक मजदूर मैनहोल (manhole) में गिर गया और जख्मी हो गया।

ii) A, B तथा C भवन निर्माण के ठेकेदारों की फ़र्म में साझेदार हैं। A ने फ़र्म के लिए 5,00,000 रुपये का एक ठेका प्राप्त किया। परन्तु उसने ग्राहक के एक अधिकारी को 5,000 रुपये की रिश्वत देकर यह ठेका प्राप्त किया। वह इस राशि को फ़र्म से वसूल करना चाहता है परन्तु अन्य साझेदार इस पर आपत्ति उठाते हैं।

iii) X, Y तथा Z भवन निर्माण कार्य में काम आने वाले माल को सप्लाई करने वाली फ़र्म में साझेदार हैं। फ़र्म के एक नियमित ग्राहक K ने मौखिक तौर पर X को कुछ माल सप्लाई करने का आदेश दिया। X अन्य साझेदारों को यह बताना भूल गया और माल सप्लाई नहीं किया गया। K ने फर्म पर माल न भेजने के लिए दावा कर दिया।

iv) A, B और C एक व्यापारिक फ़र्म में साझेदार हैं। आपस में समझौता करके उन्होंने यह निर्णय किया कि किसी भी साझेदार को, अन्य साझेदारों की सहमति के बिना, 10,000 रुपये से अधिक मूल्य का माल खरीदने या बेचने का अधिकार नहीं है। एक अन्य पक्ष T, जिसे इस प्रतिबन्ध की जानकारी नहीं थी, ने C को 17,000 रुपये का माल बेच दिया और इसके लिए C ने अन्य साझेदारों से परामर्श भी नहीं किया। T ने माल के मूल्य के लिए फ़र्म पर दावा कर दिया।

14.5 अन्तर्गामी और निर्गामी साझेदारों की स्थिति

जब साझेदारी के संघटन में कोई परिवर्तन होता है तो इसे 'साझेदारी फ़र्म का पुनर्गठन' कहते हैं। पुनर्गठन तब होता है जब

1) नये साझेदार को शामिल किया जाता है, अथवा

2) कोई साझेदार अवकाश ग्रहण करता है, अथवा

3) किसी साझेदार को निष्कासित किया जाता है, अथवा

4) कोई साझेदार दिवालिया घोषित हो जाता है, अथवा

5) किसी साझेदार की मृत्यु हो जाती है, अथवा

6) कोई साझेदार अपना हित किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित करता है।

उपर्युक्त घटनाओं के घटित होने पर साझेदारों के अधिकारों व देयताओं में कुछ परिवर्तन होता है। आइये अब हम उपर्युक्त परिस्थितियों को नियमित करने वाले अधिनियम के प्रावधानों का अध्ययन करें तथा साझेदारों के अधिकार तथा दायित्व पर पड़ने वाले प्रभाव को समझें।

14.5.1 साझेदार का प्रवेश

सब साझेदारों की सहमति के बिना किसी भी व्यक्ति को फ़र्म में साझेदार के रूप में शामिल नहीं किया जा सकता। हां, यह नियम तभी लागू होता है जब साझेदारी समझौते में इसके विपरीत कोई प्रावधान नहीं हो। उदाहरण के लिए, **A**, **B** तथा **C** में हुए साझेदारी समझौते में यह उल्लेख है कि बालिग होने पर **A** अपने किसी भी पुत्र को साझेदारी में शामिल कर सकता है। ऐसी स्थिति में, यदि **A** अपने पुत्र (जो बालिग हो गया है) को साझेदार के रूप में फ़र्म में शामिल करना चाहता है, तो इसके लिए **B** तथा **C** की सहमति लेना आवश्यक नहीं है।

प्रवेश करने वाला साझेदार फ़र्म के उन ऋणों के लिए उत्तरदायी नहीं होता जो फ़र्म ने उसके प्रवेश से पहले किए थे। वह फ़र्म के केवल उन्हीं कार्यों के लिए उत्तरदायी होता है जो इसके प्रवेश के बाद किए गये हैं। इस सामान्य नियम के निम्नलिखित दो अपवाद हैं।

i) वह पुराने साझेदारों के साथ समझौता करके फ़र्म के पुरानी देयताओं में भागीदार होने के लिए सहमत हो सकता है। परन्तु ऐसा होने पर फ़र्म के लेनदारों को नये साझेदार के विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार तब तक प्राप्त नहीं हो जाता जब तक, i) नयी फर्म पुरानी फ़र्म की देयताओं को अपना ले, तथा ii) लेनदार नयी फ़र्म को अपने देनदार के रूप में स्वीकार कर ले तथा पुरानी फ़र्म को दायित्वों से मुक्त कर दे।

ii) एक अवयस्क, जिसे साझेदारी फ़र्म में लाभ में शामिल किया गया था, वयस्क होने पर फर्म में साझेदार बनने का निर्णय करता है तो ऐसा साझेदार, अन्य पक्षकारों के प्रति फ़र्म के उन समस्त कार्यों के लिए उत्तरदायी हो जाता है जो उसके फ़र्म के लाभों में शमिल होने के बाद किए गये हैं।

14.5.2 साझेदार की निवृत्ति

कोई भी साझेदार निम्नलिखित किसी भी तरीके से निवृत्त (retire) हो सकता है

i) अन्य सब साझेदारों की सहमति से; अथवा

ii) साझेदारों के बीच हुए एक स्पष्ट समझौते के अनुसार, अथवा

iii) ऐच्छिक साझेदारी की दशा में, सभी साझेदारों को अपने रिटायर होने के इरादे की लिखित सूचना दे कर।

दायित्व : निवृत्त (रिटायर) होने वाला साझेदार अपने रिटायर होने से पहले फ़र्म द्वारा किए गये सभी कार्यों तथा रिटायर होने के समय अधूरे कार्यों के लिए उत्तरदायी रहता है। हां, आपस में समझौता करके उसे दूसरे पक्षकारों के प्रति दायित्वों से मुक्त किया जा सकता है। ऐसा समझौता तीन पक्षकारों में होना चाहिए, ये पक्ष हैं: पुनर्गठित फर्म के सब साझेदार, रिटायर होने वाला साझेदार तथा सम्बन्धित तीसरा पक्षकार। यह

समझौता स्पष्ट या निहित हो सकती है।

रिटायर होने वाला साझेदार रिटायर होने के बाद भी तब तक फ़र्म के सामान्य कार्यों के लिए तीसरे पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी बना रहता है जब तक उसके रिटायर होने के तथ्य की सार्वजनिक सूचना नहीं दे दी जाती। लेकिन रिटायर होने वाला साझेदार किसी ऐसे तीसरे पक्ष के प्रति उत्तरदायी नहीं होगा जिसे उसके साझेदारी फ़र्म में साझेदार होने की जानकारी नहीं थी। यह नियम सामान्यतः सुप्त साझेदार के रिटायर होने पर लागू होता है। (रिटायर होने की सार्वजनिक सूचना (public notice) रिटायर होने वाले सांझेदार द्वारा अथवा अन्य साझेदारों द्वारा दी जा सकती है)।

अधिकार : रिटायर होने वाले साझेदार को निम्नलिखित दो अधिकार प्राप्त हैं :

1) वह फ़र्म से प्रतिस्पर्धा करने वाला व्यापार कर सकता है तथा उस व्यापार का विज्ञापन भी दे सकता है। परन्तु, किसी विपरीत समझौते के अभाव में, वह i) फ़र्म के नाम का उपयोग नहीं कर सकता; ii) स्वयं को फ़र्म के व्यापार के लिए प्रतिनिधि नहीं बतला सकता; या iii) फ़र्म के पुराने ग्राहकों को अपना ग्राहक बनाने के लिए आग्रह नहीं कर सकता। आपस में समझौता करके रिटायर होने वाले साझेदार पर और प्रतिबन्ध लगाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए उसे निर्दिष्ट क्षेत्र में निर्दिष्ट अवधि तक फ़र्म से प्रतिस्पर्धात्मक व्यापार करने से रोका जा सकता है। इस प्रतिबन्ध को 'व्यापार में रुकावट डालने वाला' नहीं माना जाएगा।

2) यदि रिटायर होने वाले साझेदार तथा फ़र्म के शेष साझेदारों में हिसाब-किताब का अन्तिम निपटारा नहीं हुआ तथा वे फ़र्म की सम्पत्ति से व्यापार करते रहते हैं तो रिटायर होने वाले साझेदार को अधिकार है कि वह i) रिटायर होने के बाद फ़र्म द्वारा अर्जित लाभ में से वह हिस्सा प्राप्त करे जो उसके भाग की सम्पत्ति के प्रयोग के कारण हुआ है; या ii) फ़र्म की सम्पत्ति में अपने हिस्से की राशि पर 6% वार्षिक दर पर ब्याज प्राप्त करें। वह इन दोनों विकल्पों में से किसी भी एक को चुन सकता है।

14.5.3 साझेदार का निष्कासन

साधारणतः किसी भी साझेदार को साझेदारी से निष्कासित नहीं किया जा सकता। परन्तु यदि निम्नलिखित तीन शर्तें पूर्ण कर दी जाती हैं तब साझेदार का निष्कासन (expulsion) सम्भव है।

i) साझेदारों के मध्य हुए स्पष्ट समझौते द्वारा साझेदार को निष्कासित करने का अधिकार दिया गया हो;

ii) इस अधिकार का उपयोग साझेदारों के बहुमत से होना चाहिए, तथा

iii) इस अधिकार का उपयोग सत्यनिष्ठा से तथा फ़र्म के हित में किया जाना चाहिए।

फर्म से निष्कासित साझेदार के अधिकार तथा उत्तरदायित्व रिटायर होने वाले साझेदार के समान ही होते हैं।

14.5.4 साझेदार का दिवालिया होना

फ़र्म के किसी साझेदार को जब किसी सक्षम अधिकारिता न्यायालय (a court of competent jurisdiction) द्वारा दिवालिया घोषित किया जाता है तो वह दिवाला आदेश की तारीख से फ़र्म का साझेदार नहीं रहता। किसी एक साझेदार के दिवालिया (insolvent) हो जाने पर फ़र्म का समापन हो, यह आवश्यक नहीं है। यदि साझेदारी अनुबन्ध के अनुसार किसी साझेदार के दिवालिया होने पर फ़र्म का विघटन नहीं किया जाता तो दिवाला आदेश की तारीख के बाद फ़र्म द्वारा किए गये किसी कार्य के लिए दिवालिया साझेदार की सम्पत्ति उत्तरदायी नहीं होगी और दिवालिया साझेदार के किसी कार्य के लिए फ़र्म भी उत्तरदायी नहीं होगी।

14.5.5 साझेदार की मृत्यु

किसी भी साझेदार की मृत्यु हो जाने पर फर्म साधारणतः विघटित (dissolved) हो जाती है। परन्तु यदि साझेदारी अनुबन्ध में यह उल्लेख है कि साझेदार की मृत्यु हो जाने पर फ़र्म का विघटन नहीं होगा, तो शेष साझेदार फ़र्म का कारोबार करते रह सकते हैं। उस स्थिति में, मृतक साझेदार की सम्पत्ति को फ़र्म के केवल उन्हीं कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है जो मृतक साझेदार के जीवन काल में किए गये थे। उसकी मृत्यु के बाद, फ़र्म के कार्यों के लिए, मृतक साझेदार की सम्पत्ति उत्तरदायी नहीं होती है। साझेदार की मृत्यु के सम्बन्ध में किसी सार्वजनिक सूचना की भी आवश्यकता नहीं होती।

14.5.6 साझेदार के हित का हस्तांतरण

किसी भी साझदार को यह अधिकार है कि वह फ़र्म में अपने हित (interest) को पूर्णतः या अंशतः किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित कर दे। परन्तु ऐसा व्यक्ति (हस्तांतरिती) फर्म का साझेदार नहीं बन जाता। वह न तो व्यापार के संचालन में भाग ले सकता है और न ही लेखा पुस्तकों की जांच कर सकता है। वह केवल फ़र्म के लाभ में से अपने हिस्से की मांग कर सकता है।

यदि कोई साझेदार, फ़र्म के विघटन होने पर या स्वयं के साझेदार न रहने पर, फ़र्म में अपने हितों को हस्तांतरित करता है तो हस्तांतरिती को अन्य साझेदारों से हस्तांतरक साझेदार के फर्म की सम्पत्ति के हिस्से को मांगने का अधिकार है तथा इस हिस्से को निश्चित करने के लिए वह विघटन की तारीख से हिसाब की मांग भी कर सकता है। तथ्य की दृष्टि से, कोई भी साझेदार, अन्य साझेदारों की सहमति के बिना, फर्म में अपने हित को, किसी अन्य व्यक्ति को फ़र्म में साझेदार बनाने के इरादे से, हस्तांतरित नहीं कर सकता।

आपको यह बात याद रखनी चाहिए कि फ़र्म के संघटन में जब कभी भी कोई परिवर्तन होता है, तो पुनर्गठित फ़र्म में पुराने साझेदारों के अधिकार व दायित्व वही रहते हैं जो कि पुनर्गठन से पहले थे। उदाहरण के लिए, **A, B, C** तथा **D** साझेदार हैं जो लाभ को 4 : 3 : 2 : 1 के अनुपात में परस्पर बांटते हैं। वे नये साझेदार **E** को शामिल करते हैं और उसे फ़र्म के लाभ में एक-तिहाई हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार देते हैं। इस स्थिति में, जब तक साझेदार कोई विपरीत निर्णय न करें, शेष दो-तिहाई भाग **A, B, C** और **D** में 4 : 3 : 2 : 1 के अनुपात में बांटा जाएगा। उनके लाभ बांटने का नया अनुपात 5 : 4 : 3 : 2 : 1 होगा।

बोध प्रश्न ग

1) फ़र्म के गठन में परिवर्तन करने के विभिन्न तरीके गिनाईए।

....

....

....

2) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

   i) विशिष्ट साझेदारी की दशा में, साझेदार अपने रिटायर होने की लिखित सूचना अन्य साझेदारों को दे कर, रिटायर नहीं हो सकता। ....

   ii) सब साझेदारों की सहमति से किसी साझेदार को फ़र्म से निष्कासित किया जा सकता है। ....

   iii) फ़र्म के किसी साझेदार के दिवालिया घोषित होने पर फ़र्म का विघटन हो जाता है। ....

   iv) फ़र्म के गठन में जब कोई परिवर्तन होता है तो, किसी विपरीत समझौते के अभाव में, पुनर्गठित फ़र्म के साझेदारों के अधिकार एवं दायित्व वही होते हैं जो फ़र्म के पुनर्गठन से पहले थे। ....

14.6 सारांश

साझेदारों के आपसी अधिकार एवं दायित्व उनके मध्य हुए समझौते से नियमित होते हैं। परन्तु जब किन्हीं विशिष्ट अधिकारों या कर्तव्यों के बारे में समझौते में कोई स्पष्ट व्यवस्था नहीं है तो अधिनियम में दिए गये प्रावधान लागू होते हैं। अधिनियम में कुछ ऐसे अधिकारों एवं कर्तव्यों का वर्णन किया गया है जो बाध्य प्रकृति के हैं तथा समझौता करके उनमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

किसी विपरीत समझौते के अभाव में, अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार साझेदारों के मुख्य अधिकार ये हैं: i) व्यापार के संचालन में भाग लेने; ii) परामर्श देने; iii) पुस्तकों को देखने; iv) लाभ में बराबर हिस्सा बांटने; v) फर्म को अग्रिम के तौर पर दी गई राशि पर 6% वार्षिक दर से ब्याज प्राप्त करने;

vi) व्यापार के संचालन के दौरान किए गये समस्त खर्चों की पूर्ति प्राप्त करने; vii) अप्रतिस्पर्धात्मक व्यापार करने का अधिकार।

साझेदार के कर्तव्यों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है: अ) आदेशात्मक कर्तव्य, तथा ब) साझेदारों में हुए समझौते के अन्तर्गत कर्तव्य। आदेशात्मक कर्तव्य हैं : i) निष्ठापूर्वक कार्य करना तथा व्यापार को सर्वाधिक परस्पर लाभ के लिए चलाना, ii) कपट से होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति करना। समझौते के अन्तर्गत मुख्य कर्तव्य हैं : i) पारिश्रमिक के बिना साझेदार के कर्तव्यों का पालन करना; ii) हानि में बराबर हिस्सा बांटना, iii) फ़र्म के किसी लेन-देन से यदि कोई गुप्त लाभ हुआ है तो उसका हिसाब व भुगतान करना; iv) फ़र्म के एजेंट के रूप में कार्य करना; v) अधिकार क्षेत्र के अन्तर्गत कार्य करना; तथा vi) जब तक वह फ़र्म में साझेदार है वह संयुक्त रूप से तथा पृथक् फर्म के कार्यों के लिए उत्तरदायी होता है।

जब तक कोई विपरींत समझौता नहीं हुआ हो, सब साझेदार फ़र्म की सम्पत्ति के संयुक्त स्वामी होते हैं तथा इस सम्पत्ति का उपयोग केवल फ़र्म के कार्यों के लिए ही किया जाना चाहिए। फ़र्म की सम्पत्ति में वह समस्त सम्पत्ति शामिल है जो व्यापार आरम्भ करने के समय लायी गई थी या जो बाद में फ़र्म के द्वारा खरीदी गयी है।

साझेदारों का तीसरे पक्षकारों के साथ सम्बन्ध साझेदारों का फ़र्म के लिए एजेंट के रूप में कार्य करने से नियमित होता है। तीसरे पक्षकार, फ़र्म को साझेदारों के ऐसे सभी कार्यों से बाध्य कर सकते हैं, जो उन्होंने स्पष्ट या निहित अधिकारों के अन्तर्गत किए हैं। निहित अधिकारों के अन्तर्गत साझेदार के ऐसे कार्य आते हैं जो फ़र्म के व्यापार के संचालन में साधारणतः किए जाते हैं। परन्तु साझेदार के निहित अधिकारों पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गये हैं।

साझेदारी फ़र्म के पुनर्गठन के अनेक तरीके हैं। यह नये साझेदार के प्रवेश, साझेदार के रिटायर होने, साझेदार के निष्कासन, साझेदार के दिवालिया होने, साझेदार की मृत्यु, साझेदार द्वारा फर्म में अपने हित को किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित करने से होता है। किसी विपरीत समझौते के अभाव में, साझेदार फ़र्म के सभी कार्यों के लिए तब तक उत्तरदायी होता है जब तक वह साझेदार नहीं रहता। इसी प्रकार, विपरीत समझौता न होने पर, पुरानी फ़र्म के शेष साझेदारों के अधिकार एवं कर्तव्य वही रहते हैं जो पहले थे।

14.7 शब्दावली

पंचनिर्णय : विवाद सम्बन्धी विषय पर निर्णय प्राप्त करने के लिए उसे एक या अधिक व्यक्तियों को सुपुर्द करना, जिन्हें पंच कहते हैं।

संयुक्त सम्पत्ति : संयुक्त स्वामित्व वाली सम्पत्ति।

निहित अधिकार : कानून के द्वारा साझेदार को प्रदान किया गया ऐसा अधिकार जब वह फ़र्म के लिए तथा फ़र्म के नाम से कार्य करता है तो ऐसे कार्य से फ़र्म बाध्य होती है।

अन्तर्गामी साझेदार : साझेदारी फ़र्म में प्रवेश पाने वाला नया साझेदार।

दिवालिया साझेदार : ऐसा साझेदार जिसकी सम्पत्ति (फ़र्म में उसके हित के सहित) उचित मूल्यांकन करने पर भी उसके ऋणों का भुगतान करने के लिए अपर्याप्त है।

आदेशात्मक : विधि के ऐसे निरपेक्ष प्रावधान जो अनिवार्य हैं तथा जिनमें समझौते के द्वारा परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

दिवाला आदेश : किसी व्यक्ति को दिवालिया घोषित करने वाला न्यायिक आदेश।

निर्गामी साझेदार : ऐसा साझेदार जो रिटायर होने, मृत्यु होने, निष्कासित किए जाने, दिवालिया हो जाने पर साझेदार फ़र्म को छोड़ता है।

साझेदारी सम्पत्ति : व्यापार के आरम्भ में संयुक्त स्टॉक में लायी गई सम्पत्ति अथवा बाद में फ़र्म के द्वारा या फ़र्म के लिए प्राप्त की गई सम्पत्ति।

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1) i) नहीं ii) नहीं iii) नहीं, जब तक साझेदारी समझौते में प्रावधान न हो iv) नहीं,

v) नहीं, यह अधिकार लेखा पुस्तकों तक ही सीमित है।

2) अ) पूंजी पर कोई ब्याज नहीं दिया जाता
ब) बराबर-बराबर

3) हां, B को इस लेन-देन से हुए सम्पूर्ण लाभ को त्यागना पड़ेगा।

4) i) नहीं ii) हां iii) नहीं iv) हां

2) i) स्पष्ट ii) सामान्य iii) संकटकाल, निहित iv) नहीं

3) i) हां ii) नहीं iii) हां iv) हां

2) i) सही ii) गलत iii) गलत iv) सही

14.9 स्वपरख प्रश्न

1) साझेदारों में कोई स्पष्ट समझौता न होने पर उनके आपसी अधिकारों एवं कर्तव्यों का वर्णन कीजिए।

2) क्या साझेदार अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों को निश्चित करने के लिए पूर्णतः स्वतन्त्र हैं? यदि नहीं, तो उन प्रावधानों का वर्णन कीजिए जिन्हें साझेदार समझौता करके परिवर्तित नहीं कर सकते।

3) साझेदारी सम्पंत्ति क्या होता है? साझेदारों के अपने ऋणों के लिए साझेदारी सम्पत्ति किस सीमा तक उत्तरदायी है।

4) साझेदार के निहित अधिकार से आपका क्या अभिप्राय है? साझेदार के निहित अधिकारों पर लगाए गये प्रतिबन्धों का वर्णन कीजिए।

5) साझेदार के निहित अधिकार का क्या क्षेत्र है? साझेदारों के कार्यों से फ़र्म तीसरे पक्षकारों के प्रति किस सीमा तक उत्तरदायी होती है?

6) i) अन्तर्गामी साझेदार, तथा ii) निर्गामी साझेदार के अधिकार तथा कर्तव्यों की व्याख्या कीजिए।

7) उत्तरदायित्व बताइए
अ) फ़र्म के कार्यों के लिए साझेदारों का;
ब) साझेदार के गलत कार्यों के लिए फ़र्म का, तथा
स) फ़र्म के धन या सम्पत्ति के दुरुपयोग किए जाने पर फ़र्म का।

नोटः इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजे । ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 15 साझेदारी फर्म का विघटन

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 साझेदारी का विघटन तथा फ़र्म का विघटन
15.2.1 साझेदारी का विघटन
15.2.2 फ़र्म का विघटन
15.3 फ़र्म के विघटन के तरीके
15.3.1 न्यायालय के आदेश के बिना विघटन
15.3.2 न्यायालय के आदेश द्वारा विघटन
15.4 फ़र्म के विघटन के परिणाम
15.4.1 विघटन पर साझेदार के अधिकार
15.4.2 विघटन पर साझेदार के दायित्व
15.5 हिसाब-किताब का निपटान
15.6 सारांश
15.7 शब्दावली
15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर
15.9 स्वपरख प्रश्न

15.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि:

- साझेदारी के विघटन तथा फर्म के विघटन (समापन) में अन्तर कर सकें
- फ़र्म के विघटन के तरीकों का वर्णन कर सकें
- फ़र्म के विघटन के उपरान्त साझेदारों के अधिकार एवं दायित्वों को समझा सकें
- विघटन होने पर साझेदारों में हिसाब-किताब का निपटान किस प्रकार किया जाता है, यह वर्णन कर सकें

15.1 प्रस्तावना

आप साझेदारी के गठन के बारे में पढ़ चुके हैं तथा साझेदारों के परस्पर सम्बन्धों तथा तीसरे पक्षकारों के प्रति दायित्व के बारे में भारतीय साझेदारी अधिनियम के प्रावधानों का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में आप फ़र्म के विघटन (dissolution) से संबधित नियमों को पढ़ेंगे। इसके अन्तर्गत विघटन के तरीकों, विघटन पर साझेदारों के अधिकार एवं दायित्वों तथा विघटन पर साझेदारों में परस्पर हिसाब-किताब का निपटान करने का ढंग भी शामिल है।

15.2 साझेदारी का विघटन तथा फ़र्म का विघटन

भारतीय साझेदारी अधिनियम के अनुसार साझेदारी के विघटन (dissolution of partnership) तथा फ़र्म के विघटन (dissolution of firm) में अन्तर है।

15.2.1 साझेदारी का विघटन

साझेदारी के विघटन का अर्थ है साझेदारों के सम्बन्ध में परिवर्तन। ऐसा परिवर्तन प्रायः उस समय होता है

जब फ़र्म का पुनर्गठन होता है जैसे कि जब किसी नये साझेदार को प्रवेश दिया जाता है या जब कोई साझेदार रिटायर होता है या उसकी मृत्यु हो जाती है, दिवालिया हो जाता है या उसे निष्कासित किया जाता है। **साझेदारी के विघटन पर फ़र्म का विघटन हो भी सकता है और नहीं भी।** साझेदारों के सम्बन्धों में परिवर्तन होने के बाद, फ़र्म पुनर्गठित फ़र्म के रूप में कारोबार चलाती रह सकती है। परन्तु जब फ़र्म का विघटन होता है तब साझेदारी भी अनिवार्यतः विघटित हो जाती है। उदाहरण के लिए A, B, C तथा D एक व्यापारिक फर्म में साझेदार हैं। न्यायालय के द्वारा A को दिवालिया घोषित किया जाता है। A, B, C तथा D के मध्य साझेदारी का सम्बन्ध समाप्त हो गया तथा B, C तथा D के मध्य एक नई साझेदारी उत्पन्न हो गई। B, C तथा D के मध्य यह नई साझेदारी 'पुनर्गठित फ़र्म' कहलाती है। इस प्रकार, A के दिवालिया घोषित होने पर, साझेदारी का विघटन होता है, परन्तु B, C तथा D शेष साझेदार फ़र्म का कारोबार चलाते रहते हैं।

15.2.2 फ़र्म का विघटन

फ़र्म के विघटन का अर्थ है, फ़र्म के सभी साझेदारों के बीच साझेदारों के सम्बन्धों की समाप्ति (धारा 39)। ऐसा उस समय होता है जब सभी साझेदारों के मध्य सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में, फ़र्म का व्यापार पूर्णतः समाप्त कर दिया जाता है, परिसम्पत्तियों को बेचकर देयताओं का भुगतान कर दिया जाता है तथा जो कुछ शेष बचता है वह साझेदारों में, फ़र्म की सम्पत्ति में उनके भाग के अनुपात में, बांट दिया जाता है। इस प्रकार साझेदारी पूर्ण रूप से समाप्त हो जाती है।

15.3 फ़र्म के विघटन के तरीके

फ़र्म का विघटन न्यायालय के आदेश पर अथवा न्यायालय के आदेश के बिना किया जा सकता है। जिन परिस्थितियों में फ़र्म का विघटन होता है, उन्हें चित्र 15.1 में दर्शाया गया है।

चित्र-15.1

फ़र्म के विघटन के तरीके

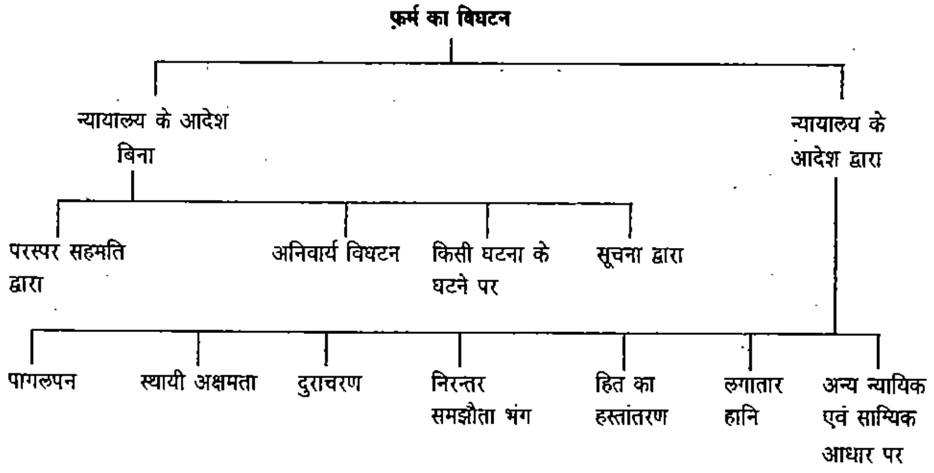

15.3.1 न्यायालय के आदेश के बिना विघटन

न्यायालय के आदेश के बिना, निम्नलिखित तरीकों से फ़र्म का विघटन हो सकता है :

1) **परस्पर समझौते के द्वारा (By mutual agreement) विघटन** : यह तो आप पढ़ चुके हैं कि परस्पर समझौता करके फ़र्म का निर्माण होता है। उसी तरह वर्तमान साझेदारों की परस्पर सहमति से इसे समाप्त भी किया जा सकता है।

2) **अनिवार्य विघटन (Compulsory dissolution)** : फ़र्म अनिवार्य रूप से विघटित हो जाती है

   i) जब सब साझेदार या एक को छोड़कर सभी साझेदार दिवालिया घोषित कर जाएं; अथवा

   ii) जब कोई ऐसी घटना घटित हो जाती है जिसके कारण फ़र्म के व्यापार का संचालन अवैध हो जाता है। उदाहरण के लिए, युद्ध छिड़ जाता है तथा फ़र्म के कुछ साझेदार विदेशी शत्रु घोषित हो

जाते हैं। ऐसी स्थिति में फ़र्म के व्यापार को चलाना अवैधानिक हो जाता है। एक अन्य उदाहरण लेते हैं जहां कि साझेदारी फ़र्म चीनी का कारोबार कर रही है और अब एक नया कानून बना कर चीनी के कारोबार पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। इस स्थिति में भी फ़र्म का व्यापार अवैधानिक हो गया और फ़र्म का अनिवार्य रूप से विघटन हो गया। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि यदि कोई फ़र्म एक से अधिक प्रकार के व्यापार कर रही है तो उनमें से किसी एक के अवैध हो जाने पर फ़र्म का अनिवार्य विघटन नहीं होता। फ़र्म उन व्यापारों को करती रह सकती है जो वैध हैं।

3) **किसी आकस्मिक घटना के घटित होने पर (On the happening of certain contingency) :** धारा 42 के अनुसार, किसी विपरीत समझौते के अभाव में, निम्नलिखित किसी भी घटना के घटित होने पर फ़र्म विघटित हो जाती है :

   i) यदि फ़र्म का गठन किसी नियत अवधि के लिए किया गया है, तो उस अवधि के समाप्त होने पर फ़र्म विघटित हो जाती है।

   ii) यदि फ़र्म का गठन किसी एक या अधिक उपक्रमों के लिये किया गया है, तो उस उपक्रम या उपक्रमों के पूर्ण हो जाने पर फ़र्म विघटित हो जाती है।

   iii) किसी साझेदार की मृत्यु हो जाने पर, तथा

   iv) किसी साझेदार के दिवालिया घोषित कर दिए जाने पर।

4) **सूचना द्वारा (By notice) विघटन** : ऐच्छिक साझेदारों की स्थिति में, कोई भी साझेदार फर्म को विघटित करने के अपने इरादे को लिखित सूचना अन्य सब साझेदारों को देकर, फ़र्म का विघटन कर सकता है।

यदि साझेदार ने इस सूचना में, फ़र्म के विघटन की कोई विशेष तिथि लिखी है, तो उस तिथि पर फ़र्म विघटित हो जाती है। यदि सूचना में ऐसी किसी तिथि का उल्लेख नहीं है तो नोटिस की सूचना मिलने पर फ़र्म विघटित हो जाती है। यह ध्यान रहे कि जब विघटन के लिए सूचना दे दी गई तो अन्य सब साझेदारों की सहमति के बिना सूचना वापस नहीं ली जा सकती।

15.3.2 न्यायालय के आदेश द्वारा विघटन

साझेदारी अधिनियम की धारा 44 में उन परिस्थितियों का वर्णन किया गया है जब किसी साझेदार की याचिका (petition) पर, यदि न्यायालय सन्तुष्ट हो जाता है कि न्याय की दृष्टि से फ़र्म के विघटन का आदेश दिया जाना चाहिए, तो न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे देता है। इस धारा के अन्तर्गत, यदि फ़र्म का गठन किसी नियत अवधि के लिए भी हुआ है, तो उस अवधि की समाप्ति से पहले भी न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है। जब न्यायालय के समक्ष विघटन की कोई याचिका प्रस्तुत की जाती है, तब न्यायालय अन्य साझेदारों को विघटन के आदेश के विरुद्ध अपना बचाव पक्ष प्रस्तुत करने के लिए अवसर अवश्य प्रदान करता है। न्यायालय के समक्ष जब सारे तथ्य प्रस्तुत कर दिए जाते हैं तो उनका मूल्यांकन करके, फ़र्म के विघटन का आदेश दिया जाता है। आईए, अब उन परिस्थितियों का अध्ययन करते हैं जिनके आधार पर फ़र्म के विघटन के लिए, न्यायालय में याचिका प्रस्तुत की जा सकती है। ये आधार निम्नलिखित हैं :

1) **पागलपन (Insanity)** : जब कोई साझेदार पागल हो जाता है तो वह विवेकपूर्ण निर्णय लेने में अक्षम हो जाता है। अतः, फ़र्म के विघटन के लिए यह एक वैध आधार है। इस आधार पर, फ़र्म के किसी अन्य साझेदार द्वारा अथवा पागल हुए साझेदार के निकट सम्बन्धी या मित्र द्वारा मुकदमा दायर किया जा सकता है। दोनों ही परिस्थितियों में न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है। सुप्त या निष्क्रिय साझेदार की स्थिति में न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश नहीं देता, क्योंकि ऐसा साझेदार फ़र्म के कारोबार में सक्रिय रूप से भाग नहीं लेता है।

2) **स्थायी अक्षमता (Permanent incapacity)** : जब कोई साझेदार अपने, साझेदार के रूप में, कर्तव्यों को पूरा करने में स्थायी रूप से अक्षम हो जाता है, तो कोई भी अन्य साझेदार फ़र्म के विघटन के लिए याचिका प्रस्तुत कर सकता है। परन्तु यदि साझेदार की अक्षमता केवल अस्थायी है, तो न्यायालय विघटन का आदेश नहीं देगा। उदाहरण के लिए, फ़र्म का एक साझेदार लकवा (फालिज) से ग्रस्त है और एक अन्य साझेदार फ़र्म के विघटन के लिए याचिका दाखिल करता है। यदि डाक्टरों की राय में लकवा अस्थायी प्रकृति का है तथा मरीज़ की हालत में सुधार हो रहा है, तो न्यायालय विघटन का आदेश नहीं देगा। (व्हाईटवैल बनाम आर्थर)।

3) **दुराचरण (Misconduct)** : जब कोई साझेदार ऐसे दुराचरण का दोषी हो जिससे फ़र्म के कारोबार के संचालन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका है, तो दुराचरण के दोषी साझेदार के अलावा अन्य किसी भी साझेदार के प्रार्थना करने पर, न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है। दुराचरण की गंभीरता का निर्णय करते समय, व्यापार की प्रकृति को अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए, चिकित्सकों की एक फ़र्म में किसी साझेदार के अनैतिक आचरण को फ़र्म के विघटन का उचित कारण समझा जा सकता है परन्तु कोयले का व्यापार करने वाली फ़र्म में यह उचित आधार नहीं हो।

4) **निरंतर समझौता भंग (Persistent breach of agreement)** : जब कोई साझेदार, मुकदमा दायर करने वाले साझेदार को छोड़कर, साझेदारी समझौते को जानबूझकर निरंतर भंग करता है अथवा फ़र्म के कारोबार के संचालन में इस प्रकार से कार्य करता है कि अन्य साझेदारों को ऐसे साझेदार के साथ व्यापार चलाना असम्भव लगने लगता है, तो वह फ़र्म के विघटन के लिए मुकदमा दायर कर सकता है। इस प्रकार गबन, कपटपूर्ण न्यास भंग या गलत हिसाब-किताब रखना, फ़र्म के न्यायालय द्वारा विघटन के लिए पर्याप्त आधार हैं।

5) **हित का हस्तांतरण (Transfer of interest)** : किसी अन्य साझेदार के आवेदन करने पर, न्यायालय फ़र्म का विघटन कर सकता है जब किसी साझेदार ने किसी भी प्रकार:

   i) फ़र्म में अपने सम्पूर्ण हित को किसी तीसरे पक्षकार को हस्तांतरित कर दिया हो, अथवा

   ii) उस साझेदार की देयताओं के लिए, फ़र्म में अपने भाग को, न्यायालय की डिक्री के अन्तर्गत, बेचने की अनुमति दे दी हो, या

   iii) भूमि राजस्व की वसूली के लिए अपने हिस्से को बेचने की अनुमति दे दी हो।

6) **लगातार हानि (Perpetual losses)** : जब फ़र्म में लगातार हानि हो रही हो तथा भविष्य में भी यह लगता है कि हानि उठाकर ही व्यापार चलाया जा सकता है, तो किसी भी साझेदार के प्रार्थना करने पर न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है।

7) **अन्य कोई न्यायोचित आधार पर (Any other just and equitable ground)** : यदि न्यायालय को किसी अन्य न्यायोचित आधार पर फ़र्म के विघटन का विश्वास दिलाया जा सके, तो न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है। परस्पर लगातार झगड़ते रहना, व्यापार के काम के लिए मिलने से इंकार कर देना, इस आधार के कुछ उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न क

1) नीचे कुछ कथनों के जोड़े दिए गये हैं, प्रत्येक जोड़े में से केवल एक कथन ही सही है। सही कथन के सामने कोष्ठक में (√) चिन्ह लगाइए।

क) i) सब साझेदारों की सहमति से फ़र्म का विघटन किया जा सकता है। [ ]

ii) पक्षकारों में फ़र्म के विघटन का समझौता सदैव लिखित में ही होना चाहिए। [ ]

ख) i) एक को छोड़कर सब साझेदारों का दिवालियापन फ़र्म के विघटन का आधार हो सकता है। [ ]

ii) यदि फ़र्म कई कारोबार कर रही है, और उनमें से एक कारोबार अवैधानिक हो जाता है, यह फ़र्म के विघटन का एक आधार हो जाता है। [ ]

ग) i) सब साझेदारों को सूचना देकर ऐच्छिक साझेदारी का विघटन किया जा सकता है। [ ]

ii) नियत अवधि के लिए साझेदारी को अवधि व्यतीत हो जाने के बाद नहीं चला जा सकता। [ ]

घ) i) यदि किसी विशेष उपक्रम के लिए साझेदारी है, तो उस उपक्रम के पूर्ण होने पर इसका अनिवार्यतः विघटन होता है। [ ]

ii) यदि दो साझेदार अलग-अलग देशों के वासी हैं और उन दोनों देशों में युद्ध छिड़ जाता है, तो साझेदारी स्वतः ही समाप्त हो जाती है। [ ]

2) रिक्त स्थान भरिए।

i) जब कोई साझेदार अपने सम्पूर्ण .... को किसी तीसरे पक्षकार को हस्तांतरित कर देता है, तो अन्य साझेदार विघटन के लिए दावा दायर कर सकते हैं।

ii) जब किसी साझेदार के हिस्से को .... की बकाया राशि के भुगतान के लिए बेचा जाता है, तो न्यायालय फ़र्म का विघटन कर सकता है।

iii) न्यायालय किसी उचित तथा .... आधार पर फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है।

iv) जब कोई साझेदार .... रूप से अपने कर्तव्यों का पालन करने में अक्षम हो जाता है, तब न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है।

v) लगातार हानि होने की स्थिति में, न्यायालय .... की साझेदारी के विघटन का भी आदेश दे सकता है।

vi) जब फ़र्म का विघटन होता है तो .... का अनिवार्यतः विघटन हो जाता है।

15.4 फ़र्म के विघटन के परिणाम

साझेदारी फ़र्म का विघटन होने के बाद, साझेदारों के कुछ अधिकार तथा दायित्व हो जाते हैं। इन अधिकारों तथा दायित्वों को नीचे वर्णन किया गया है।

15.4.1 विघटन पर साझेदार के अधिकार

1) **फ़र्म की सम्पत्ति का साम्यिक वितरण का अधिकार :** अधिनियम की धारा 46 के अनुसार, प्रत्येक साझेदार को यह अधिकार है कि फ़र्म की सम्पत्ति में से सबसे पहले तीसरे पक्षकारों के तथा अन्य देयताओं ऋणों का भुगतान किया जाए तथा शेष हिस्से को साझेदारों या उनके प्रतिनिधियों के अधिकारों के अनुपात में बांटा जाए। इस अधिकार को "साझेदार का पूर्वाधिकार" (partner's general lien) भी कहा जाता है।

2) **असामयिक विघटन पर प्रीमियम वापस पाने का अधिकार :** यदि कोई साझेदार नियत अवधि के लिए साझेदारी में शामिल हुआ है तथा शामिल होते समय उसने प्रीमियम (ख्याति) के रूप में कुछ धन दिया है तथा उस नियत अवधि से पहले ही फ़र्म का विघटन हो जाता है, तो उसे प्रीमियम की पूर्ण अथवा आंशिक राशि वापस पाने का अधिकार है। प्रीमियम की राशि इन बातों पर निर्भर करेगी—i) वह किन शर्तों पर साझेदार बना था, तथा (ii) वह कितने समय तक साझेदार रहा। उदाहरण के लिए, राम किसी फर्म में साझेदार के रूप में 10 वर्ष के लिए शामिल होता है तथा वह प्रीमियम के रूप में 1,000 रुपये देता है। दो वर्ष के बाद किसी साझेदार के दिवालिया हो जाने पर फ़र्म का विघटन हो जाता है। राम को 800 रुपये प्रीमियम के वापस पाने का अधिकार है। परन्तु ऐसे साझेदार को प्रीमियम वापस प्राप्त करने का अधिकार नहीं होगा यदि असामयिक विघटन इन कारणों से होता है: i) किसी साझेदार की मृत्यु के कारण, ii) जिस साझेदार ने प्रीमियम दिया है उसके दुराचरण के कारण, तथा iii) जब किसी ऐसे समझौते के अन्तर्गत फ़र्म का विघटन हुआ है जिसमें प्रीमियम वापस करने का कोई प्रावधान नहीं है।

3) **कपट अथवा मिथ्यावर्णन के आधार पर विघटन होने पर अधिकारः** किसी अन्य समझौते की तरह कपट अथवा मिथ्यावर्णन के आधार पर साझेदारी समझौते को भी निरस्त किया जा सकता है, तथा पीड़ित साझेदार को, अन्य अधिकारों के अतिरिक्त, हर्जाने के लिए दावा करने का भी अधिकार है। जब कपट या मिथ्यावर्णन के आधार पर जब साझेदारी निरस्त की जाती है, तो अधिनियम की धारा 52 के अन्तर्गत साझेदार को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त होते है:

i) **बची हुई सम्पत्ति पर पूर्वाधिकारः** फ़र्म के ऋणों का भुगतान करने के बाद, बची हुई सम्पत्ति पर, साझेदारी अनुबन्ध को निरस्त करने वाले साझेदार को अपने हिस्से को प्राप्त करने के लिए दिये गये धन तथा उस के द्वारा लगायी गयी पूंजी पर पूर्वाधिकार होता है।

ii) साझेदारी को निरस्त करने वाले साझेदार ने यदि फ़र्म के ऋणों का भुगतान किया है तो वह फ़र्म के लेनदारों की स्थिति में आ जाता है। अन्य शब्दों में, यदि ऐसा साझेदार अपनी निजी सम्पत्ति से

फ़र्म के लेनदारों का भुगतान करता है, तो वह उस भुगतान की गयी राशि के लिए फ़र्म का लेनदार बन जाता है।

iii) **क्षतिपूर्ति का अधिकारः** साझेदारी अनुबन्ध को निरस्त करने वाले साझेदार को, फर्म के सभी ऋणों के लिए, कपट या मिथ्यावर्णन के दोषी साझेदारों से क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार है।

4) **किसी भी साझेदार को फर्म के नाम या उसकी सम्पत्ति के उपयोग को रोकने का अधिकारः** साझेदारों में विपरीत अनुबन्ध के अभाव में, प्रत्येक साझेदार या उसके प्रतिनिधि को अन्य साझेदारों पर यह प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार होता है कि फ़र्म के समापन के दौरान वे न तो फ़र्म के व्यापार जैसा कोई व्यापार करेंगे या अपने निजी लाभ के लिए फ़र्म की सम्पत्ति का प्रयोग करेंगे जब तक कि फ़र्म का पूर्ण समापन नहीं हो जाता तथा हिसाब-किताब का अन्तिम निपटारा नहीं हो जाता। **हां, यदि किसी साझेदार ने फ़र्म की ख्याति खरीद ली है तो वह फ़र्म के नाम से कारोबार चला सकता है** तथा किसी अन्य साझेदार या उसके प्रतिनिधि को, फ़र्म के समापन के दौरान, ऐसे साझेदार को फ़र्म का नाम प्रयोग करने से नहीं रोक सकता।

15.4.2 विघटन पर साझेदार के दायित्व

1) **विघटन के बाद साझेदारों द्वारा किए गये कार्यों के लिए दायित्वः** तीसरे पक्षकारों के प्रति, साझेदारी उस समय तक बनी रहती है जब तक कि इसके विघटन की सार्वजनिक सूचना नहीं दे दी जाती। इस प्रकार, फ़र्म के विघटन के बाद किसी भी साझेदार द्वारा किए गये कार्यों से, प्रत्येक साझेदार तीसरे पक्षकारों के प्रति उत्तरदायी होता है तथा ऐसी कार्यों को विघटन से पहले किए गये कार्य समझा जाता है। उदाहरण के लिए, A, B तथा C चावल का व्यापार करने वाली फ़र्म में साझेदार हैं। वे 1 अगस्त, 1989 से फर्म को समाप्त करने का निर्णय करते हैं, परन्तु वे फ़र्म के विघटन की सार्वजनिक सूचना देने में चूक कर जाते हैं, तथा उक्त तिथि के बाद भी वे कारोबार करते रहते हैं। 10 अगस्त को, A, D के साथ 5 क्विंटल चावल D को भेजने का अनुबन्ध फ़र्म के नाम से करता है। इस अनुबन्ध के परिणामों के लिए फ़र्म उत्तरदायी है।

यहां यह ध्यान रहे कि सार्वजनिक सूचना न दिए जाने पर विघटन के बाद किए गये कार्यों के लिए, निम्नलिखित व्यक्ति उत्तरदायी नहीं होतेः

i) मृत साझेदार की सम्पत्ति;

ii) दिवालिया साझेदार की सम्पत्ति; तथा

iii) फ़र्म से रिटायर हुआ सुप्त या निष्क्रय साझेदार।

2) **फर्म के कारोबार का समापन करने तथा अधूरे व्यवहारों को पूर्ण करने के सम्बन्ध में दायित्वः** धारा 47 के अनुसार, फर्म के विघटन के पश्चात्, किसी साझेदार का फ़र्म को बाध्य करने का अधिकार तथा साझेदारों के परस्पर अधिकार एवं कर्तव्य, जहां तक आवश्यक हों, विघटन के बाद भी निम्न कार्यों के लिए बने रहते हैं।

i) फ़र्म के व्यापार के समापन कार्य को पूर्ण करने के लिए। जैसे देनदारों से रकम वसूल करना, लेनदारों का भुगतान करना तथा साझेदारी सम्पत्ति का निपटारा करना आदि।

ii) ऐसे कार्य जो विघटन के समय अधूरे थे, उन्हें पूर्ण करने के लिए। जैसे—विघटन से पहले प्राप्त हुए आदेशों के लिए माल सप्लाई करना। अतः, उपर्युक्त मामलों के लिए साझेदार, फ़र्म के विघटन के बाद भी, उत्तरदायी रहता है।

ोध प्रश्न ख

.) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) यदि फ़र्म के विघटन की सार्वजनिक सूचना नहीं दी जाती, तो फ़र्म के विघटन के बाद भी साझेदार उत्तरदायी बने रहते हैं।

ii) नियत अवधि की साझेदारी में किसी साझेदार की मृत्यु होने पर फ़र्म के विघटित हो जाने पर, जिस साझेदार ने प्रवेश के समय प्रीमियम का भुगतान किया था, उसे आनुपातिक प्रीमियम की राशि वापस प्राप्त करने का अधिकार है।

iii) यदि कपट के कारण फ़र्म का विघटन हुआ है तो केवल तीसरे पक्षकारों को क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार है।

iv) विघटन से पहले आरम्भ हुए कार्यों को पूर्ण करने के लिए, विघटन के बाद भी साझेदारों को फ़र्म को बाध्य करने का अधिकार है।

v) फ़र्म के विघटन के बाद अन्य साझेदारों के कार्यों के लिए दिवालिया साझेदार भी उत्तरदायी होता है।

vi) फ़र्म के विघटन के बाद अन्य साझेदारों द्वारा किए गये कार्यों के लिए सुप्त साझेदार उत्तरदायी नहीं होता है।

15.5 हिसाब-किताब का निपटान

विघटन के बाद हिसाब-किताब का निपटान करने की विधि आम तौर से साझेदारी अनुबन्ध में ही दी होती है। यदि साझेदारी अनुबन्ध इस सम्बन्ध में मौन है, तो विघटित फ़र्म के हिसाब-किताब का निपटारा अधिनियम की धारा 48, 49, तथा 55 के अनुसार किया जाता है। ये नियम निम्नलिखित हैं:

1) **कमी (deficiency) को पूरा करना:** धारा 48 (a) के अनुसार, फ़र्म की हानियों, जिसमें पूंजी की कमी भी शामिल है, को पहले लाभों में से, उसके बाद पूंजी से तथा अन्त में, यदि आवश्यक हो, तो साझेदारों द्वारा व्यक्तिगत रूप से उस अनुपात में पूरा किया जाएगा जिसमें वे परस्पर लाभ वांटते थे।

   इसका तात्पर्य है कि यदि फर्म की परिसंपत्तियां, फर्म की देयताओं को पूर्णतः भुगतान करने के लिए अपर्याप्त हैं तो इस कमी को साझेदार अपनी निजी सम्पत्ति में से लाभ-हानि के अनुपात में पूरा करेंगे। उदाहरण के लिये, A, B, C तथा D एक व्यापार में साझेदार हैं और वे लाभ-हानि में बराबर-बराबर के हिस्सेदार हैं। A की मृत्यु होने पर फ़र्म विघटित हो जाती है। विघटन की तिथि पर A तथा B प्रत्येक की पूंजी 20,000 रुपये थी तथा C और D की क्रमशः 10,000 रुपये व 5,000 रुपये थी। वाहरी ऋण 6,000 रुपये तथा फ़र्म की कुल सम्पत्ति का मूल्य 41,000 रुपये था। इस प्रकार कुल कमी 20,000 रुपये है [61,000 रु. – 41,000 रु.]। इस कमी को B, C, D तथा A के उत्तराधिकारी बराबर बांटेंगे, अर्थात् प्रत्येक का हिस्सा 5,000 रुपये होगा।

2) **सम्पत्ति का उपयोग:** फ़र्म की सम्पत्ति, जिसमें पूंजी की कमी को पूरा करने के लिए साझेदारों द्वारा दी गई राशि भी शमिल है, का उपयोग निम्नलिखित क्रय में किया जाएगा:

   i) तीसरे पक्षकारों के ऋणों का भुगतान करने में,

   ii) प्रत्येक साझेदार को, उसके द्वारा पूंजी के अतिरिक्त ऋण के रूप में दी गई राशि का आनुपातिक रूप से भुगतान करने में,

   iii) प्रत्येक साझेदार को देय उसकी पूंजी का आनुपातिक रूप से भुगतान करने में, तथा

   iv) उपर्युक्त के वाद यदि कुछ शेष वचता है तो उसे साझेदारों में लाभ-हानि के अनुपात में बांट दिया जाएगा (धारा 48(b)।

आइए अब एक उदाहरण लेकर इसे समझते हैं। और A, B और C एक फ़र्म में साझेदार हैं तथा वे लाभ-हानि में बराबर के हिस्सेदार हैं। लेखों से यह प्रकट होता है कि विघटन की तिथि पर साझेदारों की पूंजी इस प्रकार थी, A-20,000 रुपये, B-10,000 रुपये तथा C-2,000 रुपये। A ने फर्म को 2,000 रुपये का ऋण दे रखा है तथा वाहरी देनदारियां 13,000 रुपये हैं। सम्पत्ति से केवल 50,000 रुपये वसूल होते हैं, इस राशि का उपयोग सबसे पहले 13,000 रुपये की बाहरी देयताओं को चुकाने के लिए, इसके बाद A के 2,000 रुपये के ऋण तथा बाद में 32,000 रुपये A, B और C की पूंजी के (A को 20,000 रु., B को 10,000 रुपये तथा C को 2,000 रुपये) लिए उपयोग होगा। इसके बाद शेष 3,000 रुपये A, B और C में लाभ-हानि के अनुपात में बांट दिए जायेंगे।

मान लीजिए यदि सम्पत्ति से केवल 42,500 रुपये वसूल होते तो 4,500 रुपये की कमी होती (47,000 रुपये – 42,500 रुपये)। इस हानि को A, B और C बराबर-बराबर बांटते, जिससे उनकी पूंजी की राशि घटकर क्रमशः 18,500 रुपये, 8,500 रुपये तथा 500 रुपये रह जाती। अतः 42,500 रुपये का उपयोग इस प्रकार से किया जाएगा:

i) बाहरी देयताओं के भुगतान के लिए 13,000 रुपये,

ii) 2,000 रुपये का A का ऋण भुगतान करने के लिए, तथा

iii) 27,500 रुपये, A, B तथा C की बकाया पूंजी का भुगतान करने के लिए।

3) **फ़र्म के ऋणों व साझेदारों के पृथक् ऋणों का भुगतानः** यह तो आप पढ़ ही चुके हैं कि फ़र्म के देयताओं के लिए प्रत्येक साझेदार संयुक्त रूप से तथा पृथक्-पृथक् उत्तरदायी होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि आवश्यकता हो तो फ़र्म के ऋणों का भुगतान करने के लिए साझेदारों की निजी सम्पत्ति का उपयोग किया जा सकता है। यहीं नहीं, बल्कि तीसरे पक्षकारों को यह भी अधिकार है कि वह किसी भी साझेदार से पूर्ण राशि वसूल कर सकते हैं। परन्तु यह नियम धारा 49 के प्रावधान द्वारा विनियमित किया गया है। इस धारा के अनुसार साझेदार की निजी सम्पत्ति में से पहले उसके निजी ऋण चुकाए जाएंगे, और उसके बाद यदि कुछ शेष बचता है तो आवश्यकता पड़ने पर उसका उपयोग फ़र्म के ऋणों का भुगतान करने में किया जाएगा। इस प्रकार, साझेदार की निजी सम्पत्ति का उपयोग, व्यक्तिगत ऋणों का भुगतान करने के बाद, फ़र्म के ऋणों को चुकाने के लिए किया जा सकता है, और यह भी तभी किया जाएगा जब फ़र्म की सम्पत्ति ऋणों का भुगतान करने के लिए अपर्याप्त है।

यहां यह भी ध्यान रहे कि फर्म की सम्पत्ति का उपयोग पहले फ़र्म के ऋण चुकाने के लिए किया जाएगा, और उसके बाद यदि कुछ शेष बचता है, तो साझेदारी सम्पत्ति में उसके हिस्से की सीमा तक, उसके व्यक्तिगत ऋणों को चुकाने के लिए उपयोग किया जाएगा।

4) **किसी साझेदार के दिवालिया होने से हानिः** फ़र्म के विघटन होने पर हुई हानि को साझेदारों में बांटने पर यदि किसी साझेदार के पूंजी खाते में कमी प्रकट होती है तो वह पूंजी की कमी की राशि लाएगा जिससे अन्य साझेदारों की पूंजी का भुगतान किया जा सके। परन्तु यदि जिस साझेदार के पूंजी खाते में कमी है, वही साझेदार दिवालिया घोषित हो जाता है, तो वह पूंजी की कमी की राशि को (पूर्णतः या अंशतः) नहीं ला सकेगा, इससे अन्य साझेदारों को और हानि होती है। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि इस हानि को अन्य साझेदार किस अनुपात में बांटे। यह एक प्रसिद्ध इंग्लिश केस **गार्नर बनाम मरे** में प्रतिपादित नियम के अनुसार किया जाता है। इसके अनुसार दिवालिया साझेदार की पूंजी की कमी को सम्पन्न साझेदार (solvent partners) विघटन की तिथि पर उनकी जो पूंजी है उसके अनुपात में बाटेंगे। उपर्युक्त उदाहरण जिसमें A, B और C बराबर के साझेदार हैं, यदि सम्पत्ति बेचकर केवल 35,000 रुपये ही वसूल होते तो इससे 12,000 रुपये की कुल हानि होती (47,000 रुपये –35,000 रुपये। जब इस हानि को A, B और C में बांट दिया जाता है तो उनकी पूंजी घटकर यह रह जाती है: A - 16,000 रुपये, B - 6,000 रुपये तथा C - (–) 2,000 रुपये। बाहरी ऋण 13,000 रुपये तथा A के ऋण के 2,000 रुपये का भुगतान करने के बाद हमारे पास 22,000 के स्थान पर केवल 20,000 रुपये बचते हैं (A को 16,000 रुपये तथा B को 6,000 रुपये का भुगतान करना है)। यदि C अपनी पूंजी की राशि ले आता है तब तो कोई समस्या नहीं होती। परन्तु यदि वह दिवालिया हो जाता है और उससे केवल 500 रुपये ही वसूल हो पाते हैं तो 1,500 रुपये की कमी होगी, जिसे A और B अपनी पूंजी के अनुपात में (लाभ बांटने के बराबर-बराबर अनुपात में नहीं) अर्थात 2:1 में बांटेंगे। इस प्रकार A की पूंजी घटकर 15,000 रुपये (16,000 रुपये –1,000 रुपये) तथा B की 5,500 रुपये (6,000 रुपये –500 रुपये) हो गई, अब बाहरी ऋणों तथा A का ऋण चुकाने और C की सम्पत्ति से वसूल हुए 500 रुपये प्राप्त करने के बाद, उपलब्ध राशि 20,500 रुपये में से A तथा B का भुगतान किया जा सकता है।

5) **ख्याति का विक्रमः** विघटन होने पर हिसाब-किताब का निपटारा करते समय, धारा 55 के अनुसार, साझेदारों में हुए अनुबन्ध के अन्तर्गत, ख्याति को फ़र्म की सम्पत्ति में शामिल किया जाता है, तथा इसे अलग से अथवा अन्य सम्पत्तियों के साथ बेचा जा सकता है।

फ़र्म के विघटन के बाद जब ख्याति को बेचा जाता है तो कोई साझेदार, i) ख्याति के क्रेता के व्यापार से प्रतिस्पर्धा करने वाला कोई व्यापार कर सकता है अर्थात् विघटित फर्म का साझेदार विघटित फर्म के जैसा ही व्यापार कर सकता है, तथा ii) ऐसे व्यापार का विज्ञापन कर सकता है।

परन्तु साझेदारों तथा ख्याति के क्रेता के बीच हुए समझौते की शर्तों के अधीन, कोई भी साझेदार-—

अ) फ़र्म के नाम का उपयोग नहीं कर सकता,

ब) यह प्रदर्शित नहीं कर सकता कि वह पुरानी फ़र्म का व्यापार चला रहे हैं, तथा

स) विघटित हुई फ़र्म के ग्राहकों को अपना ग्राहक बनने के लिए नहीं कह सकते।

परन्तु कोई भी साझेदार, ख्याति के क्रेता के साथ यह समझौता कर सकता है कि वह निर्धारित अवधि या निर्धारित स्थानीय सीमाओं के भीतर फ़र्म के व्यापार जैसा कोई व्यापार नहीं करेगा। यदि इस प्रकार से लगाए गये प्रतिबन्ध उचित हैं तो यह समझौता वैध होगा, क्योंकि अनुबन्ध अधिनियम की धारा 27 के अन्तर्गत इसे व्यापार में रुकावट डालने वाला समझौता नहीं कहा जाएगा।

बोध प्रश्न ग

1) A, B तथा C एक फ़र्म में साझेदार हैं। उनका लाभ-हानि बांटने का अनुपात 4: 3:3 है। पांच वर्ष तक एक साथ काम करने के बाद वे फ़र्म को समाप्त करने का निर्णय करते हैं। तीसरे पक्षकारों के ऋणों तथा साझेदारों की पूंजी को चुकाने के बाद, 50,000 रुपये शेष बच जाते हैं। प्रत्येक साझेदार को क्या मिलेगा?

2) एक फर्म में A, B, C तथा D चार साझेदार हैं जो लाभ में बराबर के हिस्सेदार है। 31, मार्च 1990 को D दिवालिया हो जाता है और साझेदार फ़र्म को समाप्त करने का निर्णय करते हैं। उस तिथि को साझेदारों की पूंजी का शेष क्रमशः 30,000 रुपये, 20,000 रुपये, 20,000 रुपये तथा 5,000 रुपये था। बाहरी देनदारियां 40,000 रुपये थीं। सम्पत्ति बेचकर 81,000 रुपये वसूल हुए। यह मानते हुए कि D की सम्पत्ति से कुछ भी वसूल नहीं हुआ, बताईए कि A, B तथा C को कितनी राशि मिलेगी।

3) बताईए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलतः

   i) साझेदार की निजी सम्पत्ति का उपयोग पहले निजी ऋणों को चुकाने के लिए किया जाना चाहिए। ....

   ii) फ़र्म के ऋणों को चुकाने के बाद यदि कुछ शेष बचता है, तो इसे साझेदारों में बराबर-बराबर बांटा जाता है। ....

   iii) फ़र्म की हानियों को पहले साझेदार की निजी सम्पत्ति में से चुकाया जाता है तथा उसके बाद फ़र्म की सम्पत्ति में से। ....

   iv) किसी साझेदार के दिवालिया होने पर हुई पूंजी की कमी को शेष सम्पन्न साझेदार, **गार्नर बनाम मरे** के केस में प्रतिपादित नियम के अनुसार बांटते हैं। ....

   v) फर्म के विघटन पर जब ख्याति को बेच दिया जाता है, तो कोई साझेदार, क्रेता के व्यापार की प्रतिस्पर्धा में व्यापार कर सकता है। ....

15.6 सारांश

जब साझेदारों के परस्पर सम्बन्धों में परिवर्तन होता है जैसे कि नये साझेदार के प्रवेश पर या किसी साझेदार के रिटायर होने पर, तो इसे साझेदारी का विघटन कहते हैं, फ़र्म का विघटन नहीं। फ़र्म के विघटन के अन्तर्गत सब साझेदारों में साझेदारी समाप्त हो जाती है। यह न्यायालय के हस्तक्षेप से या बिना हस्तक्षेप के हो सकता है। किसी साझेदार द्वारा याचिका प्रस्तुत करने पर निम्न परिस्थितियों में न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता हैः i) किसी साझेदार के पागल होने पर, ii) किसी साझेदार की स्थायी अक्षमता पर, iii) किसी साझेदार के दुराचरण पर, iv) साझेदारी समझौते का निरंतर उल्लंघन करने पर, v) अपने सम्पूर्ण हित को किसी तीसरे पक्ष को हस्तांतरित कर देने पर, या vi) फ़र्म के व्यापार में लगातार हानि होने पर। न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना फ़र्म का विघटन इन दशाओं में होता है, i) परस्पर सहमति के द्वारा, ii) किसी आकस्मिक घटना के घटित होने पर, iii) ऐच्छिक साझेदार की दशा में किसी भी साझेदार द्वारा सूचना देकर, iv) अनिवार्य विघटन, जब सब या एक को छोड़कर अन्य सब साझेदार दिवालिया हो जाते हैं या फर्म का व्यापार अवैध हो जाता है।

फ़र्म के विघटन होने के बाद, साझेदारों को अधिकार है, i) फ़र्म की सम्पत्ति का साम्यिक बंटवारे का, ii) अवधि से पहले विघटन होने पर प्रीमियम वापस प्राप्त करने का, iii) फ़र्म के नाम या सम्पत्ति के उपयोग पर रोक लगाने का, तथा iv) जब कपट, आदि के आधार पर साझेदारी निरस्त की जाती है तब उपलब्ध कुछ अधिकार। यदि फर्म के विघटन की सार्वजनिक सूचना नहीं दी जाती, तो विघटन के बाद किसी

साझेदार द्वारा किये गये कार्यों के लिए साझेदार उत्तरदायी होते हैं। परन्तु प्रत्येक स्थिति में, साझेदारों का फ़र्म को बाध्य क़रने का अधिकार तथा साझेदारों के परस्पर अधिकार एवं दायित्व उस समय तक चलते रहते हैं जब तक फ़र्म के समापन के लिए आवश्यक हैं तथा विघटन के समय आरम्भ किए ग़ये परन्तु अधूरे कार्यों को पूर्ण करने के लिए।

साझेदारों के मध्य हिसाब-किताब का निबटारा करने के लिए नियम अधिनियम की धाराओं 48, 49, तथा 55 में दिए गये हैं। किसी विपरीत समझौते के अभाव में, समस्त हानियां, जिस में पूंजी की कमी भी शामिल है, सबसे पहले लाभों में से, उसके बाद पूंजी में से तथा अन्त में, यदि आवश्यक हो, तो साझेदारों द्वारा लाभ-हानि बांटने के अनुपात में पूरी की जाती है। फ़र्म की सम्पत्ति, जिसमें पूंजी की कमी की पूर्ति के लिए साझेदारों द्वारा लाई गई राशि भी शामिल है, का उपयोग इस क्रम में किया जाएगा, i) फ़र्म के ऋणों का भुगतान करने में, ii) प्रत्येक साझेदार को उसके द्वारा दिए गये ऋण की राशि का आनुपातिक रूप से भुगतान करने में, iii) प्रत्येक साझेदार को उसकी पूंजी की राशि का आनुपातिक रूप से भुगतान करने में, तथा iv) यदि कुछ शेष बचता है तो उसे साझेदारों में उनके लाभ बांटने के अनुपात में बांट दिया जाता है। यदि कोई साझेदार दिवालिया हो जाता है और वह देय राशि चुकाने में असमर्थ है तो ऐसे साझेदार की हानि को शेष सम्पन्न साझेदार आपस में, विघटन के समय अपनी पूंजी के शेष के अनुपात में बांटते हैं जैसा कि **गार्नर बनाम मरे** के केस में बताया गया है।

साझेदारों का दायित्व असीमित होता है, अतः फ़र्म के ऋणों को चुकाने के लिए उनकी निजी सम्पत्ति का उपयोग किया जा सकता है। परन्तु किसी साझेदार की निजी सम्पत्ति का उपयोग पहले निजी देनदारियों। ऋणों को चुकाने के लिए किया जाना चाहिए, इसके बाद यदि कुछ शेष बचता है तो, यदि आवश्यक हो, उसका उपयोग फ़र्म के ऋणों को चुकाने के लिए किया जाएगा। विघटन होने पर हिसाब-किताब का निपटारा करते समय, किसी विपरीत समझौते के अभाव में, ख्याति को फ़र्म की सम्पत्ति में शामिल किया जाना चाहिए तथा इसे अन्य सम्पत्तियों के साथ या अलग से बेचा जा सकता है।

15.7 शब्दावली

विघटन: व्यक्तियों के सामूहिक गठन को समाप्त करना।

साझेदारी का विघटन: किसी घटना जैसे साझेदार के प्रवेश आदि से साझेदारों के परस्पर सम्बन्धों में परिवर्तन।

फ़र्म का विघटन: फ़र्म के सब साझेदारों के मध्य साझेदारी का विघटन।

15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) (क) i (ख) i (ग) i (घ) ii

2) i) हित ii) भू-राजस्व iii) न्यायसंगत
iv) स्थायी v) नियत अवधि vi) साझेदारी

i) सही ii) सही iii) गलत iv) सही
v) गलत vi) सही

1) लाभ बांटने के अनुपात में। इस प्रकार A को 20,000 रुपये; B को 15,000 रुपये; तथा C को 15,000 रुपये मिलेंगे।

2) सम्पत्ति के विक्रय करने पर 34,000 रुपये (1,15,000 रुपये – 71,000 रुपये) की हानि को साझेदारों में बराबर-बराबर बांटा जाएगा। D के पूंजी खाते में 1,000 रुपये की कमी है। इस कमी को A, B तथा C अपनी पूंजी के अनुपात 3:2:2 में बांटेंगे। इस प्रकार A को 20,000 रुपये; B को 18,500 रुपये तथा C को 10,500 रुपये मिलेंगे।

3) i) सही ii) गलत iii) गलत
iv) सही v) सही

15.9 स्वपरख प्रश्न

1) फ़र्म के विघटन से आप क्या समझते हैं? फ़र्म का विघटन किस प्रकार किया जा सकता है?
2) किसी साझेदार द्वारा दावा करने पर किन परिस्थितियों में न्यायालय फ़र्म के विघटन का आदेश दे सकता है?
3) फ़र्म के विघटन पर साझेदारों के अधिकार एवं दायित्वों की व्याख्या कीजिए।
4) फ़र्म के विघटन पर हिसाब-किताब का निपटारा करने के सम्बन्ध में क्या नियम है? पूर्णरूप से समझाईए।
5) फ़र्म के विघटन के बाद जब ख्याति बेच दी जाती है, तो फ़र्म के कारोबार के सम्बन्ध में साझेदार के क्या अधिकार हैं?
6) यदि किसी साझेदार के दिवालिया होने के कारण फ़र्म का विघटन होता है तथा फ़र्म की सम्पत्ति सांझेदारों की पूंजी लौटाने के लिए अप्रर्याप्त है, तो इस कमी का निपटारा कैसे किया जाता है? विवेचना कीजिए।
7) जब कपट अथवा मिथ्यावर्णन के आधार पर फ़र्म का विघटन होता है तो सांझेदारों के अधिकारों की चर्चा कीजिए।

नोटः इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए यह प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजे। यह केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन.डी. कपूर एवं दिनकर पगारे : *व्यापारिक सन्नियम,* (नई दिल्ली : सुल्तान चन्द एण्ड संस, 1988) अध्याय 1-3.

आर. के. ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश : *व्यापारिक सन्नियम,* (दिल्ली : श्री महावीर बुक डिपो, 1986) अध्याय 18-20.

आर.पी. महेश्वरी एवं एस.एन महेश्वरी : *व्यापारिक सन्नियम,* (नई दिल्ली : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1988) अध्याय 1-4.

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-2
व्यापारिक सन्नियम

खंड
5
स्तु विक्रय

काई 16

क्रय अनुबंध की प्रकृति 5

काई 17

र्त तथा आश्वासन 16

काई 18

ामित्व हस्तांतरण तथा सुपुर्दगी 29

काई 19

दत्त विक्रेता के अधिकार 49

खंड 5 माल विक्रय अधिनियम

माल विक्रय में माल का क्रय तथा विक्रय दोनों ही शामिल हैं और यह एक अनुबन्ध के माध्यम से किया जाता है। इस दृष्टिकोण से माल विक्रय से सम्बन्धित लेन-देन वास्तव में अनुबन्ध का ही विशेष स्वरूप है। सन् 1930 तक माल के क्रय-विक्रय से सम्बन्धित लेन-देन भारतीय अनुबन्ध अधिनियम, 1872 द्वारा ही विनियमित होते थे। सन् 1930 में भारतीय अनुबन्ध अधिनियम की धाराएँ 76 से 123 तक निरसित (repeated) कर दी गईं और उनके स्थान पर एक नया अधिनियम भारतीय माल विक्रय अधिनियम, 1930 आया। 22 सितम्बर, 1963 से 'भारतीय' शब्द को भी हटा दिया गया है। इस समय जो अधिनियम है उसका नाम 'माल विक्रय अधिनियम, 1930' है। इस अधिनियम में माल विक्रय अनुबन्ध के विभिन्न प्रकार के अनुबन्धों से संबंधित नियमों व उपनियमों का वर्णन किया गया है। इसमें विभिन्न शब्दों की परिभाषा की गई है तथा माल नष्ट होने के परिणामों, विक्रय अनुबन्ध में निहित शर्तों एवं आश्वासनों, स्वामित्व हस्तांतरण तथा सुपुर्दगी और अदत्त विक्रेता की स्थिति के संबंध में विस्तार से नियम दिए गये हैं। इस खंड में चार इकाइयाँ—इकाई 16 से इकाई 19 तक हैं।

इकाई 16 में विक्रय अनुबन्ध का अर्थ तथा इसके आवश्यक लक्षणों का वर्णन किया गया है तथा विक्रय को विक्रय के करार एवं क्रयावक्रय करार से भिन्न होना स्पष्ट किया गया है। इसमें माल की परिभाषा, माल के प्रकार तथा माल नष्ट होने के परिणामों की भी व्याख्या की गई है।

इकाई 17 में शर्त एवं आश्वासनों से सम्बन्धित नियमों का वर्णन है, इसमें उनका अर्थ, अन्तर तथा प्रकार बताए गये हैं। इसमें उन परिस्थितियों का भी वर्णन किया गया है जब शर्त-भंग को आश्वासन-भंग माना जाता है।

इकाई 18 माल के स्वामित्व हस्तांतरण तथा उसकी सुपुर्दगी के नियमों से सम्बन्धित है।

इकाई 19 में अदत्त विक्रेता के माल के विरुद्ध तथा स्वयं क्रेता के विरुद्ध अधिकारों का विवेचन किया गया है। इसमें नीलामी द्वारा विक्रय से सम्बन्धित नियमों का भी वर्णन किया गया है।

इकाई 16 विक्रय अनुबंध की प्रकृति

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य
16.1 प्रस्तावना
16.2 विक्रय अनुबंध का अर्थ
16.3 वैध विक्रय अनुबंध के आवश्यक लक्षण
16.4 विक्रय और विक्रय का करार
16.5 विक्रय और अवक्रय करार
16.6 माल का अर्थ व प्रकार
 16.6.1 माल का अर्थ
 16.6.2 माल के प्रकार
16.7 माल के नष्ट होने के परिणाम
16.8 सारांश
16.9 शब्दावली
16.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
16.11 स्वपरख प्रश्न

16.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- विक्रय अनुबंध का अर्थ स्पष्ट कर सकें और इसकी आवश्यक विशेषताओं का वर्णन कर सकें,
- यह बता सकें कि विक्रय अनुबंध और क्रयावक्रय अनुबंध से विक्रय किस प्रकार भिन्न होता है,
- माल शब्द का अर्थ स्पष्ट कर सकें और माल के प्रकार बता सकें, और
- माल नष्ट होने के परिणाम का वर्णन कर सकें।

16.1 प्रस्तावना

व्यापार में माल का विक्रय सबसे सामान्य लेन-देन है तथा व्यक्तियों के दिन-प्रतिदिन जीवन में भी इसका बहुत महत्व है। कानून में इसे विशिष्ट अनुबन्ध माना जाता है जिसके लिए अनुबन्ध अधिनियम में विशेष प्रावधान किए गये हैं। परन्तु इस प्रकार के अनुबन्धों के महत्व एवं जटिलताओं को ध्यान में रखते हुए एक पृथक् अधिनियम बनाया गया है जिसे 'माल विक्रय अधिनियम' कहते हैं। इस अधिनियम में माल विक्रय के विभिन्न प्रकार के अनुबन्धों से सम्बन्धित नियम आदि दिए गये हैं। इसमें विभिन्न शब्दों की परिभाषा दी गई है तथा माल के नष्ट होने के परिणामों से सम्बन्धित नियम, ऐसे अनुबन्धों में निहित शर्तों एवं आश्वासनों, माल के स्वामित्व का हस्तांतरण एवं सुपुर्दगी तथा अदत्त विक्रेता की स्थिति का वर्णन किया गया है। इस प्रारम्भिक इकाई में आप विक्रय अनुबन्ध की प्रकृति, वैध विक्रय अनुबन्ध के आवश्यक तत्व, विक्रय तथा विक्रय के करार का अन्तर तथा विक्रय एवं क्रयावक्रय करार में अन्तर के बारे में पढ़ेंगे। इस इकाई में आप 'माल' शब्द का वास्तविक अर्थ भी पढ़ेंगे तथा माल के विभिन्न प्रकार एवं माल के नष्ट हो जाने के परिणामों का भी अध्ययन करेंगे।

16.2 विक्रय अनुबंध का अर्थ

वस्तु-विक्रय अधिनियम की धारा 4 के अनुसार "**वस्तु-विक्रय अनुबंध एक ऐसा अनुबंध है जिससे विक्रेता एक मूल्य के बदले क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित करता है या हस्तांतरित करने का करार करता है**"।

विक्रय अनुबंध करने वाले पक्षकारों की इच्छानुसार अशर्त या सशर्त हो सकता है। विक्रय अनुबंध एक विस्तृत (generic) शब्द है इसलिए यह विक्रय शब्द से ज्यादा विस्तृत है। इसमें वास्तविक विक्रय (actual sale) और विक्रय करने का करार (agreement to sell) दोनों शामिल होते

हैं। जब विक्रय अनुबंध के अंतर्गत, माल का स्वामित्व विक्रेता से क्रेता के पास चला जाता है तो इसे "विक्रय" कहते हैं, लेकिन जहाँ माल के स्वामित्व का हस्तांतरण किसी भावी तिथि पर होना है या कुछ शर्तों को पूरा किये जाने पर होना है तो यह "विक्रय करार" है। यह याद रखिए कि विक्रय करार समय बीत जाने पर या उन शर्तों के पूरा कर दिये जाने पर जिनके अधीन माल का स्वामित्व हस्तांतरित होना है, विक्रय बन जाता है धारा 4(4)।

उदाहरण

i) A 100 क्विंटल आलू 2,000 रु. में B के शीतसंग्रहागार (cold storage) से खरीदने का एक अनुबंध B के साथ करता है। यदि विक्रेता A को अधिकार देता है कि वह जब भी चाहे शीतसंग्रहागार में आकर आलू ले जाए तो यह विक्रय कहा जाएगा।

ii) A अपना स्कूटर B को दस दिन बाद 5,000 रु. में बेचने को सहमत है। B इसे 10 दिन बाद 5,000 रु. में खरीदने को सहमत है। यह एक 'विक्रय का करार' है जो 10 दिन बाद विक्रय बन जाएगा।

विक्रय और विक्रय का करार में विशेष अंतर पर इस इकाई में आगे चलकर विचार किया जाएगा।

विक्रय अनुबंध की औपचारिकताएँ (धारा 5)

विक्रय अनुबंध सामान्य अनुबंध विधि द्वारा विनियमित होता है। अतः माल खरीदने या बेचने का प्रस्ताव होना चाहिए, उस प्रस्ताव की स्वीकृति होनी चाहिए, पक्ष अनुबंध करने योग्य होने चाहिए तथा स्वीकृति स्वतंत्र होनी चाहिए। अनुबंध की विषय-वस्तु माल होना चाहिए जिनके स्वामित्व का अंतरण मुद्रा के बदले (इसे कीमत कहते हैं) में किया गया हो या किया जाना हो।

वस्तु-विक्रय अधिनियम की धारा 5 के अनुसार विक्रय अनुबंध निम्नलिखित तरीकों में से किसी भी तरीके से किया जा सकता है :

i) माल की सुपुर्दगी तुरंत हो सकती है,
ii) मूल्य का भुगतान तुरंत हो लेकिन माल की सुपुर्दगी किसी भावी तिथि पर हो सकती है,
iii) माल की सुपुर्दगी और कीमत का भुगतान दोनों तुरंत हो सकते हैं,
iv) सुपुर्दगी या कीमत का भुगतान या दोनों ही किश्तों में हो सकते हैं, तथा
v) सुपुर्दगी या कीमत का भुगतान या दोनों ही किसी भावी तिथि पर हो सकते हैं।

यदि किसी प्रचलित विधि में विशेष प्रावधान न हो तो एक वैध वस्तु-विक्रय अनुबंध के लिए किन्हीं विशेष औपचारिकताओं की आवश्यकता नहीं होती। तथापि, क्रेता और विक्रेता माल के स्वामित्व के हस्तांतरण के लिए आपस में सहमत होने चाहिए। एक विक्रय अनुबंध अभिव्यक्त या पक्षकारों के आचरण में निहित हो सकता है और अभिव्यक्त अनुबंध मौखिक या लिखित या अंशतः लिखित और अंशतः मौखिक हो सकता है। माल विक्रय करने का लिखित प्रस्ताव मौखिक रूप में या लिखित रूप में स्वीकार किया जा सकता है, इसी प्रकार मौखिक प्रस्ताव लिखित रूप में स्वीकार किया जा सकता है। किसी कंपनी के साथ अनुबंध के संबंध में, अनुबंध लिखित रूप में होना जरूरी हो सकता है।

16.3 वैध विक्रय अनुबंध के आवश्यक लक्षण

विक्रय अनुबंध एक विशेष प्रकार का अनुबंध है, इसलिए इसमें एक वैध अनुबंध के सभी आवश्यक लक्षण होने चाहिए। यदि एक वैध अनुबंध का कोई भी आवश्यक तत्व लुप्त है, तो विक्रय अनुबंध वैध नहीं होगा। उदाहरण के लिए A अपना स्कूटर B को बिना प्रतिफल के बेचने को सहमत हो गया। यह विक्रय अनुबंध वैध नहीं है क्योंकि इसमें कोई प्रतिफल नहीं है।

वस्तु-विक्रय अधिनियम की धारा 4 में दी गयी विक्रय अनुबंध की परिभाषा के आधार पर इसके निम्नलिखित आवश्यक लक्षणों पर ध्यान देना आवश्यक है :

1) **दो पक्ष होने चाहिएं** : दो पक्ष होने चाहिए, एक विक्रेता और दूसरा क्रेता। विक्रेता और क्रेता एक ही व्यक्ति नहीं हो सकता। कोई व्यक्ति अपना माल स्वयं नहीं खरीद सकता। उदाहरण के लिए X किसी माल का स्वामी है लेकिन उसे इस तथ्य का पता नहीं है। A उस माल का स्वामी होने का बहाना करता है और उसे X को बेच देता है। इस स्थिति में कोई विक्रय नहीं हुआ क्योंकि X उस माल को नहीं खरीद सकता जो पहले से ही उसका अपना है (बेल बनाम लिभर ब्रदर्स लिमिटेड) तथापि एक भागिक स्वामी (part-owner) दूसरे किसी भागिक स्वामी

को विक्रय कर सकता है (धारा-4)। साझेदारी की संपत्ति के विक्रय के संबंध में साझेदार अलग व्यक्ति नहीं माने जाते। वे माल के संयुक्त स्वामी होते हैं और इसलिए वे विक्रेता और क्रेता दोनों नहीं हो सकते। लेकिन एक साझेदार फर्म से माल क्रय कर सकता है या फर्म को माल विक्रय कर सकता है।

2) **विक्रय की विषय-वस्तु माल होनी चाहिए :** विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु माल होनी चाहिए और माल भी चल माल होना चाहिए। अचल संपत्ति का विक्रय और क्रय इस अधिनियम के अंतर्गत नहीं आता बल्कि वह संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम द्वारा विनियमित होता है। इसी प्रकार, सेवाओं संबंधी अनुबंध विक्रय अनुबंध नहीं माने जाते। माल शब्द का अर्थ 16.6 में विस्तार से स्पष्ट किया गया है।

3) **माल के स्वामित्व का अंतरण :** प्रत्येक विक्रय अनुबंध में स्वामित्व का अंतरण किया जाता है और विक्रय करार में स्वामित्व के अंतरण करने का करार किया जाता है, जैसा कि गिरवी के अनुबंध में होता है। अधिनियम की धारा 2(11) के अनुसार स्वामित्व का अर्थ है माल का सामान्य स्वामित्व, केवल विशेष स्वामित्व नहीं। विक्रय अनुबंध में सामान्य स्वामित्व विक्रेता से क्रेता को हस्तांतरित किया जाता है। दूसरी ओर, जब माल गिरवी रखा जाता है तो केवल विशेष स्वामित्व हस्तांतरित किया जाता है यानि माल का कब्जा गिरवीग्राही (pledgee) को हस्तांतरित कर दिया जाता है जबकि माल का स्वामित्व गिरवीकर्त्ता (pledger) के पास रहता है। यह ध्यान रहे कि माल के स्वामित्व के हस्तांतरण के लिए, माल की भौतिक सुपुर्दगी आवश्यक नहीं है।

4) **प्रतिफल कीमत के रूप में :** विक्रय अनुबंध में प्रतिफल अनिवार्य रूप से मुद्रा ही होगा। इस प्रकार यदि माल के लिए प्रतिफल के रूप में माल प्रस्तुत किया जाता है तो यह विक्रय नहीं है बल्कि इसे वस्तु-विनिमय (barter) कहेंगे। इसी प्रकार प्रतिफल न होने की स्थिति में इसे उपहार कहेंगे, विक्रय नहीं। तथापि, प्रतिफल अंशतः मुद्रा के रूप में हो सकता है और अंशतः माल के रूप में।

विक्रय एवं सेवा व श्रम के लिए अनुबंध

वस्तु-विक्रय के अनुबंध और सेवा व श्रम के अनुबंध में भेद करना आवश्यक है। सेवा व श्रम के अनुबंध में किसी पदार्थ पर श्रम या दक्षता के प्रयोग की अपेक्षा की जाती है। इन दोनों में अंतर अत्यंत सूक्ष्म है। यह अंतर मूलतः इस बात पर निर्भर करता है कि क्या अनुबंध का सार सेवा प्रदान करना और दक्षता का प्रयोग करना है या माल की सुपुर्दगी है, यद्यपि यह संभव है कि विक्रेता द्वारा भी कुछ श्रम किया गया हो। पहली स्थिति में यह कार्य का अनुबंध है जबकि दूसरी स्थिति में वस्तु के विक्रय का अनुबंध है। **रोबिंसन बनाम ग्रेवज** के मुकद्दमें से यह अंतर समझा जा सकता है। इस मुकद्दमें में A ने एक कलाकार को चित्र बनाने के लिए रखा। चित्र के लिए आवश्यक सभी समान जैसे कैन्वस, रंग आदि A द्वारा प्रदान किये जाने थे। ऊपर बताए गए मापदंड को लागू करते हुए कि क्या अनुबंध का सार चित्र बनाने में श्रम और दक्षता का प्रयोग है, यह निर्णय दिया गया कि यह सेवा व श्रम का अनुबंध है, विक्रय अनुबंध नहीं। दूसरी ओर चार अलग-अलग माप, डिजाइन व ड्राइंग के अनुसार जो अनुबंध में दी गयी है कि खिड़कियाँ बनाने तथा लगाने का अनुबंध और रेलवे द्वारा दिए गए ढाँचे पर वैगन या डिब्बा बनाने के अनुबंध को सुप्रीम कोर्ट ने सेवा, श्रम पर अनुबंध माना, विक्रय का अनुबंध नहीं।

अब आपको यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि विक्रय अनुबंध में माल के स्वामित्व व कब्जे का हस्तांतरण किया जाता है, जबकि सेवा व श्रम के अनुबंध में, माल की सुपुर्दगी हो सकती है, फिर भी, माल पर श्रम और दक्षता के प्रयोग को ही महत्व दिया जाता है।

क्या एक रेस्तरां में भोजन प्रदान करना माल का विक्रय माना जाएगा? पंजाब उच्च न्यायालय ने Northern India Caterers (India) Ltd. *vs* Lt. Governor of Delhi के मुकदमें में निर्णय देते हुए कहा कि भोजन की सप्लाई चाहे वहाँ रहने वालों को दी जाए या बाहर से आए हुए ग्राहकों को, यह आवश्यक रूप से सेवा है, विक्रय का सौदा नहीं। ग्राहक वहाँ केवल भोजन और पेय पदार्थ खरीदने ही नहीं जाता बल्कि शारीरिक संतुष्टि पाने के लिए भी जाता है, जो रेस्तराँ के वातावरण में भोजन करने से मिलती है।

बोध प्रश्न क

1) **विक्रय अनुबंध से क्या अभिप्राय है?**

....

....

....

2) "स्वामित्व" शब्द जिस रूप में वस्तु-विक्रय अधिनियम में प्रयोग किया जाता है, उसका क्या अर्थ है?

....

....

....

3) सेवा और श्रम के अनुबंध की मुख्य विशेषता क्या है?

....

....

....

4) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत :
   i) विक्रय में माल के स्वामित्व का अंतरण तब होता है जब क्रेता मूल्य का भुगतान कर देता है।
   ii) विक्रय अनुबंध के लिए प्रतिफल अंशतः मुद्रा में और अंशतः माल में हो सकता है।
   iii) विक्रय अनुबंध एक विशेष रूप में किया जाना चाहिए।
   iv) विक्रय करार में अनुबंध शर्त के पूरा हो जाने पर क्रेता को माल का स्वामित्व दे दिया जाता है।
   v) विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु चल माल होनी चाहिए।
   vi) एक फर्म के साझेदार द्वारा अपनी फर्म को माल विक्रय करना वैध है।

16.4 विक्रय और विक्रय का करार

जैसा कि इसी इकाई में पहले बताया जा चुका है, विक्रय अनुबंध एक विस्तृत शब्द है और इसमें विक्रय और विक्रय के करार दोनों शामिल होते हैं। तथापि इन दोनों की अलग-अलग विधिक शाखाएँ हैं। कोई सौदा विक्रय है या विक्रय का करार, इस तथ्य से पक्षकारों के अधिकार और दायित्व बदल जाते हैं। इसलिए इन दोनों में भेद अत्यंत महत्वपूर्ण है।

इन दोनों में भेद की महत्वपूर्ण बात यह है कि विक्रय में जैसे ही विक्रय अनुबंध होता है क्रेता माल का स्वामी बन जाता है, जबकि विक्रय के करार में विक्रेता उस माल का, जिसके विक्रय का करार है, स्वामी तब तक बना रहता है जब तक वह विक्रय न बन जाए और जैसा कि आप पहले ही पढ़ चुके हैं, विक्रय का करार अनुबद्ध समय के पूरा होने पर या उन शर्तों के पूरा होने पर विक्रय बनता है जिनके पूरा होने पर माल का स्वामित्व हस्तांतरित किया जाना है। इन दोनों में अन्य भेद निम्नलिखित हैं :

1) विक्रय एक निष्पादित (executed) अनुबंध है जबकि विक्रय का करार सदा ही एक निष्पाद्य (executory) अनुबंध होता है। "निष्पादित" का अर्थ है कि माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित कर दिया गया जबकि "निष्पाद्य" का अर्थ है कि कुछ करना बाकी है यानि स्वामित्व किसी भावी तिथि को दिया जाएगा।

2) विक्रय का करार सिर्फ एक अनुबंध है जिससे केवल पारस्परिक अधिकारी दृष्टि *(jus in personam)* की ही उत्पत्ति होती है यानि यह या तो क्रेता को या विक्रेता को करार के अपने भाग को पूरा करने में कोई चूक के लिए दूसरे के विरुद्ध अधिकार देता है। विक्रय एक अनुबंध और हस्तांतरण है और सार्वभौमिक अधिकार *(jus in rem)* की उत्पत्ति करता है यानि क्रेता को माल को सारे विश्व के विरुद्ध, विक्रेता को शामिल करके, रखने का अधिकार देता है।

3) विक्रय में यदि क्रेता माल स्वीकार करने और कीमत का भुगतान करने से दोषपूर्वक मना करता है तो विक्रेता कीमत के लिए वाद चला सकता है चाहे माल उसके कब्जे में ही हो और वह पूर्वाधिकार माल को रास्ते में रोकने व पुनः विक्रय के अपने पूर्वाधिकार (lien) का अधिकार का प्रयोग कर सकता है, लेकिन विक्रय के करार में यदि क्रेता माल स्वीकार नहीं करता और माल के मूल्य का भुगतान नहीं करता तो विक्रेता के पास एकमात्र उपचार हरजाने के लिए वाद चलाना है। उदाहरण के लिए A 10 बोरे चावल B को 3,000 रु. में बेचता है। यदि B माल स्वीकार करने से मना करता है तो A कीमत के लिए B के विरुद्ध वाद फाइल कर सकता है, यद्यपि माल A के कब्जे में ही है। लेकिन विक्रय की बजाय यदि यह

विक्रय का करार होता तो A का एकमात्र उपचार B से हरजाना माँगना है क्योंकि माल का स्वामित्व अभी B के पास नहीं गया है।

4) विक्रय के करार में, स्वामित्व विक्रेता के पास ही होने से वह माल को जैसे चाहे बेच सकता है और क्रेता का विक्रेता के अनुबंध भंग के विरुद्ध एक मात्र उपचार हरजाने के लिए वाद करना है। उदाहरण के लिए, A ने एक विशेष घोड़ा B को 5,000 रु. में बेचने का करार किया। बाद में A ने वही घोड़ा C को 6,000 रु. में बेच दिया। B का उपचार A से हरजाना माँगना है। B, C से घोड़ा नहीं ले सकता। विक्रय में विक्रेता द्वारा अनुबंध-भंग क्रेता को दोहरा उपचार देता है; विक्रेता के विरुद्ध हरजाने के लिए वाद और वाद के क्रेता से माल वापस लेने का अधिकार। इस प्रकार विक्रय में यदि माल पुन: विक्रय कर दिया जाता है तो क्रेता इस माल के स्वामी के रूप में इसे वाद के क्रेता से वसूल कर सकता है। यदि ऊपर दिये गये उदाहरण को लें, जिसमें A ने एक विशेष घोड़ा B को 5,000 रु. में बेचा है और बाद में इसे C को 6,000 रु. में बेच दिया तो B को C से घोड़ा वापस लेने का अधिकार है क्योंकि जब घोड़ा उसे बेचा गया तो A उस घोड़े का स्वामी ही नहीं था। B दोषपूर्ण संपरिवर्तन (conversion) के लिए A से हरजाना भी माँग सकता है।

5) जोखिम स्वामित्व की अनुगामी होती है (risk follows ownership) यह एक सर्वमान्य नियम है, यानि हानि के समय जो भी माल का स्वामी है वही हानि उठाएगा। विक्रय की दशा में, यदि माल की कोई हानि होती है तो यह हानि क्रेता को उठानी पड़ेगी, भले ही माल विक्रेता के कब्जे में हो। दूसरी ओर, विक्रय के करार की दशा में, यह हानि विक्रेता को उठानी पड़ेगी, चाहे माल क्रेता के कब्जे में हो। इसका कारण यह है कि विक्रय के करार की दशा में स्वामित्व विक्रेता के पास ही बना रहता है।

6) **विक्रेता का दिवालिया होना** : विक्रय में यदि विक्रेता दिवालिया हो जाता है, जबकि माल उसी के कब्जे में है तो क्रेता को सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती (assignee) से माल माँगने का अधिकार है क्योंकि माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो चुका है। लेकिन विक्रय के करार की दशा में क्रेता माल नहीं माँग सकता, भले ही उसने कीमत का भुगतान कर दिया हो। क्रेता के लिए एकमात्र उपचार यह है कि वह दिवालिये विक्रेता की संपत्ति से भुगतान की गयी राशि के लिए आनुपातिक अंश माँग सकता है।

7) **क्रेता का दिवालिया होना** : विक्रय की स्थिति में, यदि क्रेता कीमत का भुगतान करने से पहले दिवालिया हो जाता है तब क्योंकि माल का स्वामित्व क्रेता के पास चला जाता है, इसलिए विक्रेता को माल सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती को देना होगा। अदत्त मूल्य के लिए विक्रेता अरक्षित लेनदार (unsecured creditor) माना जाएगा और वह दिवालिये क्रेता की संपत्ति में से आनुपातिक अंश प्राप्त करने का अधिकारी होगा। विक्रय के करार की दशा में, जबकि माल का स्वामित्व विक्रेता के पास ही रहता है वह माल सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती को सुपुर्द करने से मना कर सकता है जब तक कि उसे माल की पूरी कीमत न दे दी जाए।

16.5 विक्रय और अवक्रय करार

एक विक्रय के सौदे और ऐसे ही प्रतीत होने वाले लेकिन भिन्न सौदे, जिसे अवक्रय या क्रयावक्रय (hire purchase) करार कहते हैं, में भेद करना आवश्यक है। क्रयावक्रय करार एक ऐसा करार है जिसके अंतर्गत माल का स्वामी भाड़े के आधार पर किसी व्यक्ति को, जिसे अवक्रेता (hirer) कहते हैं, माल सुपुर्द करता है और अवक्रेता के पास यह विकल्प है कि वह विनिर्दिष्ट किश्तों में सहमत राशि का भुगतान करके माल खरीद ले।

इस करार के अंतर्गत अवक्रेता को एक निश्चित राशि प्रति माह देनी होती है और यदि वह यह भुगतान उतने महीने तक करता है जितने के लिए सहमति हुई है तो वह अंतिम किश्त का भुगतान करने पर माल का स्वामी बन जाएगा। लेकिन यदि अवक्रेता कोई भी किश्त देने में असफल होता है तो माल का स्वामी अनुबंध को रद्द कर सकता है और माल छीन सकता है क्योंकि माल का स्वामित्व उसी के पास है। अवक्रेता के पास दो विकल्प हैं : (i) सभी सहमत किश्तों का भुगतान करने के बाद वह माल खरीद सकता है या (ii) किसी भी समय माल वापस कर सकता है। माल वापस करने के निर्णय की दशा में वह और किश्त का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं होगा और जिस राशि का भुगतान पहले ही कर दिया गया है उसे माल के प्रयोग के लिए लिया गया किराया मान लिया जाता है।

इसलिए एक क्रयावक्रय करार अवक्रेता को केवल माल के कब्जे का अधिकार देता है। तदनुसार वह किसी क्रेता को माल का वैध स्वामित्व हस्तांतरित नहीं कर सकता। क्रयावक्रय करार विक्रय से भिन्न है जिसमें कीमतें किश्तों में देय हो सकती हैं। विक्रय की दशा में जैसे ही अनुबंध किया जाता है, माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है, चाहे कीमत का भुगतान अभी न किया गया हो। दूसरी ओर, एक क्रयावक्रय करार से स्वामित्व का हस्तांतरण तब तक नहीं होता जब तक कि सभी किश्तों का भुगतान करके माल का क्रय करने का विकल्प न अपनाया जाए। ऐसे समय तक यह निक्षेप बना रहता है। इस प्रकार मूलतः अवक्रेता के पास यह विकल्प कि वह क्रय करे या क्रयाविक्रय को रद्द कर दे, ही इस अंतर को स्पष्ट करता है। **"के.एल. जौहर एंड कं. बनाम उप वाणिज्य कर अधिकारी"**, मुकद्दमे में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि "विक्रय का सार यह है कि इसमें स्वामित्व विक्रेता से क्रेता को एक कीमत के लिए हस्तांतरित कर दिया जाता है, चाहे कीमत तत्काल दी जाए या बाद में किश्तों में। दूसरी ओर, एक क्रयावक्रय करार के दो पहलू हैं। पहला, क्रयावक्रय करार के अधीन माल के निक्षेप का पहलू है और अगला, विक्रय का तत्व जो तब फलीभूत होता है जब आशयित क्रेता द्वारा क्रय करने के विकल्प का प्रयोग किया जाता है"।

ध्यान दीजिए कि वह अनुबंध जिसमें माल लेने वाले के पास माल वापस करने का विकल्प नहीं है, क्रय अनुबंध है, क्रयावक्रय अनबंध नहीं, चाहे कीमत किश्तों में देय हो और चूक की दशा में विक्रेता के पास माल वापस लेने का अधिकार है। **लेस बनाम बटलर** मुकद्दमे में एक स्त्री ने वादी से कुछ फर्नीचर भाड़े पर लिया। अनुबंध के अनुसार अवक्रेता के पास माल वापस करने का विकल्प नहीं है और यदि कोई किस्त नहीं दी गयी तो मालिक फर्नीचर वापस ले सकता है। अंतिम किश्त दिये जाने से पहले स्त्री ने फर्नीचर प्रतिवादी को बेच दिया। यह निर्णय दिया गया कि प्रतिवादी ने वैध स्वामित्व प्राप्त किया है, स्त्री के पास फर्नीचर का कब्जा "क्रय करार" के अंतर्गत था, "क्रयावक्रय करार" के अंतर्गत नहीं, क्योंकि स्त्री के पास माल को वापस करने का विकल्प नहीं था बल्कि माल खरीदने की अनिवार्यता थी।

इस प्रकार किश्तों द्वारा विक्रय की दशा में, क्रेता अनुबंध को समाप्त नहीं कर सकता, इसलिए वह माल की कीमत चुकाने के लिए आबद्ध है। दूसरी ओर अवक्रेता के पास अनुबंध को किसी भी चरण में समाप्त करने का विकल्प है और उसे और किश्त देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यदि करार एक विक्रय करार है और इसके अंतर्गत क्रेता-विक्रेता की सहमति से माल का कब्जा लेता है, तो वह माल का विधिवत (validly) विक्रय कर सकता है या गिरवी रख सकता है और इसके द्वारा अंतरिती (transferee) या गिरवीग्राही (pledgee) को माल का वैध स्वामित्व दे सकता है बशर्ते उन्होंने सद्भावपूर्वक कार्य किया है। एक क्रयावक्रय अनुबंध में, अवक्रेता ऐसे क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं कर सकता चाहे वह क्रेता सद्भाव पूर्वक कार्य करता है, क्योंकि अवक्रेता की स्थिति केवल एक निक्षेपिती की है। वह स्वामी तब बनता है जब सभी किश्तों का भुगतान कर दिया जाता है।

इस संबंध में निम्नलिखित बातें ध्यान रखनी चाहिए :

1) एक अवक्रेता अंतर्निहित शर्तों व आश्वासन का लाभ नहीं माँग सकता जब तक कि वह विक्रय न बन जाए। (वारंटी आदि के बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे)। तथापि क्रयावक्रय अधिनियम, 1972 के अंतर्गत निहित शर्तें अवश्य लागू होती हैं।

2) क्रयावक्रय पर बिक्री कर आरोप्य (leviable) नहीं है जब तक कि यह विक्रय न बन जाए।

3) विक्रय करार मौखिक या लिखित किया जा सकता है, लेकिन क्रयावक्रय करार लिखित ही होना चाहिए।

16.6 माल का अर्थ और प्रकार

आपने यह तो जान ही लिया है कि वस्तु-विक्रय अधिनियम अचल संपत्ति के क्रय-विक्रय पर लागू नहीं होता। विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु माल (goods) हैं। इसलिए, आइये पहले माल शब्द का अर्थ समझें और इसके विभिन्न प्रकार भी स्पष्ट करें जो विक्रय अनुबंध के लिए प्रासंगिक हैं।

16.6.1 माल का अर्थ

"माल" का अर्थ है वाद-योग्य दावे और मुद्रा को छोड़कर हर प्रकार की चल संपत्ति। इसमें, स्टॉक व शेयर, खड़ी फसलें, घास तथा भूमि पर लगी हुई या उससे संबद्ध ऐसी सभी वस्तुएँ जिन्हें विक्रय से पहले या विक्रय करार के अंतर्गत भूमि से अलग करने का वचन दिया जाता है, शामिल

हैं (धारा 2(7))। स्टॉक और शेयर को माल की परिभाषा में स्पष्ट रूप से इसलिए शामिल किया गया है कि कोई गलतफहमी न हो क्योंकि इंग्लिश विधि के अंतर्गत इन्हें "माल" से अलग किया गया है।

आपने यह ध्यान दिया होगा कि माल शब्द से वाद-योग्य दावे और मुद्रा को स्पष्ट रूप से अलग कर दिया गया है। मुद्रा का अर्थ है वैध मुद्रा, इसमें पुराने सिक्के और विदेशी मुद्रा शामिल नहीं की जाती क्योंकि ये माल के तरह खरीदे व बेचे जा सकते हैं। विदेशी मुद्रा का विक्रय और क्रय विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम द्वारा विनियमित होता है। वाद-योग्य दावे ऐसी वस्तुएँ हैं जिसका कोई व्यक्ति उपयोग नहीं कर सकता, लेकिन जिसे वह विधिक कार्यवाही द्वारा माँग सकता है जैसे ऋण। वाद-योग्य दावों का माल की तरह क्रय-विक्रय नहीं किया जा सकता। उनका केवल समनुदेशन (assignment) किया जा सकता है।

इस प्रकार ध्यान रखिए कि माल में सभी प्रकार की चल संपत्ति शामिल होती है यानि जो वस्तुएँ एक स्थान से दूसरे पर ले जायी जा सकती हैं, वे माल हैं। ऐसी सभी चीजें जो स्वयं भूमि का भाग हैं लेकिन जिन्हें विक्रय अनुबंध के अंतर्गत भूमि से अलग करने का वचन दिया जाता है, माल ही मानी जाती हैं। इस प्रकार, घास, खड़ी फसलें, काटे जाने वाले पेड़ और सुपर्द की जाने वाली उनकी लकड़ी ऊपर दी गई परिभाषा के अनुसार माल हैं। इसी प्रकार ख्याति, कॉपीराइट, ट्रेड मार्क, पेटेंट, पानी, गैस, बिजली ये सभी माल हैं और वे विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु हो सकते हैं।

16.6.2 माल के प्रकार

विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु बनने वाले माल का वर्गीकरण निम्नलिखित वर्गों में किया जा सकता है, जैसा कि चित्र 16.1 में दिखाया गया है।

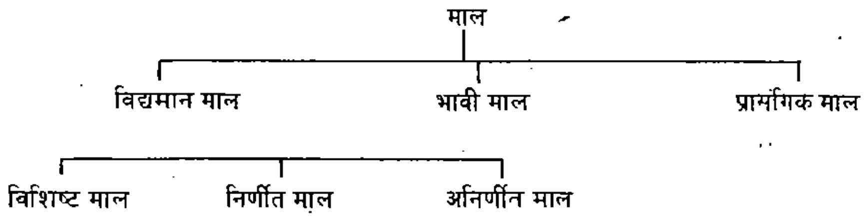

चित्र 16.1 : माल के प्रकार

विद्यमान माल (Existing goods)

अधिनियम की धारा 6 के अनुसार **विद्यमान माल वह माल है जो विक्रय अनुबंध के समय विक्रेता के अधिकार एवं स्वामित्व में हो।** विक्रेता या तो माल का स्वामी है या माल उसके अधिकार में है। उदाहरण के लिए, A पंखे बनाता है। उसने एक पंखा B को बेचा। यह विद्यमान माल के विक्रय का अनुबंध है क्योंकि A पंखे का स्वामी है। इसी प्रकार जब एक व्यक्ति उस माल को बेचता है जिसका वह स्वामी नहीं है लेकिन जो उसके अधिकार में है, जैसे कि एक एजेंट द्वारा विक्रय करना, तो यह विद्यमान माल का विक्रय है। उदाहरण के लिए, ऊपर दिये गये उदाहरण में, यदि निर्माता पंखों को दिल्ली में अपने एजेंट को भेजता है और उन्हें उसके जरिये बेचता है, तो यह विद्यमान माल का विक्रय है क्योंकि विक्रय अनुबंध के समय माल व्यापारी के अधिकार में है, यद्यपि वह उनका स्वामी नहीं है। विद्यमान माल निम्नलिखित प्रकार का हो सकता है :

i) **विशिष्ट माल (Specific goods) :** वह माल जिसे, विक्रय अनुबंध करते समय, पक्षकारों द्वारा पहचान लिया गया है और जिस पर सहमति हो गयी है (धारा 2(14)), उदाहरण के लिए एक विशिष्ट घड़ी, अंगूठी या कार।

ii) **निर्णीत माल (Ascertained goods) :** यद्यपि निर्णीत माल को "विशिष्ट माल" के पर्यायवाची की तरह प्रयोग किया जाता है, निश्चित माल से तात्पर्य उस माल से है जिसकी पहचान अनुबंध होने के बाद हुई है। एक मुकद्मे में लार्ड एटकिन ने कहा कि निश्चित शब्द का शायद अर्थ है "विक्रय अनुबंध के बाद करार के अनुसार पहचाना गया"। जब पक्षकारों द्वारा अनिश्चित माल पहचान लिया जाता है और जिस पर सहमति हो जाती है, तब माल "निश्चित माल" कहलाता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि अभिनिश्चय (ascertainment) में माल का बिना शर्त विनियोग (appropriation) एक विशेष अनुबंध की विषय-वस्तु की तरह है। इस प्रकार जब अनिश्चित माल के ढेर में से अनुबंधित मात्रा पहचान ली जाती है और एक प्रदत्त (given) अनुबंध के लिए अलग रख दी जाती है, यह माल निश्चित किया गया कहा जाता है।

iii) **अनिर्णीत माल (Unascertained goods) :** यह वह माल है जिसका अनुबंध करते समय पहचान नहीं की गयी और जिस पर सहमति नहीं हुई। ये केवल वर्णन द्वारा पहचाने जाते हैं। उदाहरण के लिए A का एक कारों का शो रूम है जहाँ 50 अम्बेसडर कारें हैं। वह उनमें से, किसी एक कार का B को बेचने का करार करता है। यह अनुबंध अनिर्णीत माल के लिए है क्योंकि विक्रय अनुबंध के समय उस विशेष कार की पहचान नहीं की गयी है जो B को बेची जाएगी।

भावी माल (Future goods)

अधिनियम की धारा 2(6) के अनुसार **भावी माल से अभिप्राय ऐसे माल से है जो विक्रेता द्वारा विक्रय अनुबंध के बाद निर्मित या उत्पादित या प्राप्त किया जाना है।** इस प्रकार भावी माल वह माल है जो विक्रय अनुबंध के समय या तो विद्यमान नहीं है या विद्यमान तो है लेकिन विक्रेता द्वारा प्राप्त नहीं किया गया है। उदाहरण के लिए S, B के खेत में होने वाली सारी फसल को 200 रु. प्रति क्वीं की दर से खरीदने का करार करता है। यह भावी माल के विक्रय का करार है। क्योंकि भावी माल अनुबंध के समय विक्रेता के अधिकार में नहीं होते, ये केवल विक्रय करार की विषय-वस्तु बन सकते हैं, विक्रय अनुबंध का नहीं।

प्रासंगिक माल (Contingent goods)

प्रासंगिक माल वह माल है जिसकी विक्रेता द्वारा प्राप्ति एक संयोगिक घटना पर निर्भर करती है जो घट भी सकती है और नहीं भी घट सकती है (धारा 6(2))। उदाहरण के लिए A एक चित्र, जिसका वर्तमान स्वामी C है, B को बेचने का करार करता है यदि C उसे वह चित्र बेच दे। यहाँ अनुबंध प्रासंगिक माल के विक्रय के लिए है क्योंकि चित्र की उपलब्धता C द्वारा विक्रय करने पर निर्भर करती है।

16.7 माल के नष्ट होने के परिणाम

आपने खंड-1 में पढ़ा है कि अनुबंध की विषय-वस्तु के नष्ट होने पर अनुबंध व्यर्थ हो जाता है, इसी तरह एक विक्रय अनुबंध भी विषय-वस्तु के नष्ट होने पर व्यर्थ हो जाता है। माल के नष्ट होने के प्रभाव का अध्ययन हम निम्नलिखित दो शीर्षकों के अंतर्गत कर सकते हैं :

1) **विक्रय अनुबंध से पहले माल नष्ट होना :** कभी-कभी यह हो सकता है कि माल विक्रय अनुबंध करने से पहले ही नष्ट हो गया हो। ऐसी स्थिति में विक्रय अनुबंध व्यर्थ है। अधिनियम की धारा 7 में यह प्रावधान है कि विशिष्ट माल के विक्रय का अनुबंध व्यर्थ है यदि अनुबंध किये जाने के समय विक्रेता की जानकारी के बिना माल नष्ट हो चुका है या इतना क्षतिग्रस्त हो गया है कि अनुबंध में दिये गये वर्णन से मेल नहीं खाता।

   यह अनुबंध के निष्पादन की असंभवता के नियम पर आधारित है। इस तरह, विक्रय अनुबंध माल के नष्ट होने पर व्यर्थ होगा यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएँ :

   क) यह विशिष्ट माल के विक्रय का अनुबंध हो,
   ख) अनुबंध होने से पहले माल नष्ट हो गया हो,
   ग) विक्रेता को माल के नष्ट होने का पता न हो।

उदाहरण

i) A, B को एक घोड़ा बेचने का करार करता है। अनुबंध करने के समय घोड़ा मर चुका था और यह बात दोनों पक्षों को पता नहीं थी। यह विक्रय अनुबंध व्यर्थ है।

ii) A एक विशेष जहाज पर आ रही चीनी के 1,000 बोरे बेचने का करार करता है। जहाज के आने पर यह पता चलता है कि केबिन में समुद्र का पानी घुस जाने से चीनी शर्बत बन गयी। अनुबंध व्यर्थ है क्योंकि अब माल अनुबंध में दिये गये वर्णन से मेल नहीं खाता।

कभी-कभी यह हो सकता है कि माल का एक भाग ही नष्ट हुआ हो। ऐसी स्थिति में, निर्धारक कारक यह होगा कि क्या अनुबंध विभाज्य है या अविभाज्य। यदि अनुबंध विभाज्य है और माल का केवल एक भाग ही नष्ट हुआ है तब अनुबंध माल के उस भाग के लिए वैध रहता है जो अच्छी दशा में है। **वैरो लेन एंड बल्लार्ड बनाम फिलिप्स** मुकद्में में A ने B को अपने गोदाम में पड़ी हुई 700 बोरी मूँगफली बेचने का करार किया। अनुबंध के समय 109 बोरी चोरी हो चुकी थी और इसका A को पता नहीं था। इसलिए A ने बाकी की 591 बोरी की सुपुर्दगी का प्रस्ताव किया। यह निर्णय दिया गया कि अनुबंध व्यर्थ बन गया और B को 591 बोरी स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता क्योंकि अनुबंध 700 बोरी के विक्रय के लिए था।

2) **विक्रय से पहले लेकिन विक्रय करार के बाद माल नष्ट होना** : यह भी संभव है कि माल विक्रय करार होने के बाद लेकिन इसके विक्रय बनने से पहले नष्ट हो जाए। इस संबंध में अधिनियम की धारा 8 प्रावधान करती है कि विशिष्ट माल के विक्रय के करार में यदि माल विक्रेता या क्रेता की किसी गलती के बिना नष्ट हो जाता है तो करार व्यर्थ बन जाता है। यह नियम इस तथ्य पर आधारित है कि यह केवल विक्रय करार था और जोखिम के हस्तांतरण से पहले ही माल नष्ट हो गया।

इलीफिक बनाम बार्नस के मुकद्दमें में एक घोड़ा 8 दिन के लिए परीक्षण पर दिया गया। घोड़ा बिना क्रेता या विक्रेता की किसी गलती से तीसरे दिन मर गया। यह निर्णय दिया गया कि यह करार व्यर्थ है और विक्रेता क्रेता से मूल्य वसूल नहीं कर सकता।

यह ध्यान रखना चाहिए कि धाराएँ 7 और 8 विशिष्ट माल की दशा में ही लागू होती हैं। इसलिए यदि अनिर्णीत माल करार करने से पहले या बाद में नष्ट हो जाता है तो अनुबंध व्यर्थ नहीं होगा। इस प्रकार अनिर्णीत माल के विक्रय के करार में चाहे सारा माल ही नष्ट हो जाए, अनुबंध व्यर्थ नहीं बनेगा और विक्रेता को अपना वचन पूरा करना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, A के पास अपने गोदाम में 1000 बोरी गेहूँ है। उसने उसमें से B को 100 बोरी बेचने का करार किया। सारा स्टॉक आग से नष्ट हो गया। A गेहूँ की 100 बोरी की सुपुर्दगी के लिए आबद्ध है अन्यथा वह क्षति के लिए दायी होगी।

बोध प्रश्न ख

1) माल शब्द की परिभाषा दीजिए।

....

....

....

2) विशिष्ट माल से क्या अभिप्राय है?

....

....

....

3) क्रयावक्रय करार की मुख्य विशेषता क्या है?

....

....

....

4) विशिष्ट माल के नष्ट होने का विक्रय अनुबंध पर क्या प्रभाव होता है?

....

....

....

5) बताइये निम्नलिखित कथन ठीक हैं या गलत :

i) वस्तु-विक्रय अनुबंध एक ऐसा अनुबंध है जिसके द्वारा विक्रेता क्रेता को एक मूल्य के लिए माल का स्वामित्व हस्तांतरित करता है या हस्तांतरित करने का वचन देता है।

ii) किश्तों पर विक्रय की दशा में, यदि क्रेता किसी किश्त को नहीं दे पाता तो विक्रेता को माल का कब्जा लेने का अधिकार है।

iii) जब A कुछ माल B से खरीदता है और जो भुगतान किया जाना है वह अंशतः माल के लिए है और अंशतः सेवा के लिए तो यह एक विक्रय अनुबंध होता है।

iv) विक्रय की स्थिति में यदि कीमत अदत्त है तो क्रेता का दिवालियापन विक्रेता को माल के कब्जे को रोकने का अधिकार देता है।

v) माल के बदले माल, माल के विक्रय की एक स्वीकार्य विधि है।

vi) क्रयावक्रय करार की दशा में अवक्रेता के पास क्रय करने या न करने का विकल्प होता है।

vii) विक्रय में, यदि माल नष्ट हो जाता है तो हानि विक्रेता पर पड़ती है।

viii)एक दुर्लभ सिक्का विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु हो सकता है।

ix) भावी माल विक्रय अनुबंध की विषय-वस्तु नहीं हो सकता।

16.8 सारांश

माल विक्रय अनुबन्ध वास्तव में अनुबन्ध का ही एक प्रकार है, परन्तु क्योंकि इसे नियमित करने के लिए पृथक् अधिनियम माल विक्रय अधिनियम है, अतः माल के क्रय-विक्रय से सम्बन्धित लेन-देन माल विक्रय अधिनियम के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। परन्तु जहाँ इस अधिनियम में स्पष्ट तौर से प्रावधान नहीं है, उस दशा में भारतीय अनुबन्ध अधिनियम के प्रावधान लागू होते हैं।

माल विक्रय अनुबन्ध, विक्रय या विक्रय के करार का स्वरूप ले सकता है। इन दोनों के अलग-अलग कानूनी परिणाम होते हैं। विक्रय को कार्य एवं श्रम तथा क्रयावक्रय अनुबन्धों से अन्तर जानना चाहिए।

विक्रय अनुबन्ध की विषय-वस्तु 'माल' होता है। सामान्यतः 'माल' का अर्थ समस्त चल सम्पत्ति से है, इसमें दावा योग्य अधिकार तथा धन को शामिल नहीं किया गया है। कुछ मदों को विशेष तौर से इसमें शामिल किया गया है, ये हैं—स्टॉक एवं शेयर, खड़ी फसल, घास तथा भूमि से संलग्न या भूमि का अंग बनने वाली ऐसी वस्तुएँ जिन्हें विक्रय से पहले या विक्रय करार के अन्तर्गत भूमि से पृथक् करने का करार कर लिया गया है। माल विद्यमान माल, भावी माल अथवा सांयोगिक माल हो सकता है। माल के नष्ट हो जाने पर तथा कुछ शर्तों को पूरा कर दिए जाने पर विक्रय अनुबन्ध व्यर्थ हो जाता है।

16.9 शब्दावली

विक्रय : एक विक्रय अनुबंध जिसमें जब अनुबंध किया जाता है तो माल का स्वामित्व विक्रेता से क्रेता के पास चला जाता है।

कीमत : माल के विक्रय के लिए मौद्रिक प्रतिफल।

विक्रय करार : जब माल का स्वामित्व एक भावी तिथि पर या कुछ शर्तों के पूरा हो जाने पर हस्तांतरित किया जाना हो।

Jus in Personam : एक विशेष व्यक्ति के विरुद्ध अधिकार।

Jus in Rem : पूरे विश्व के विरुद्ध अधिकार।

स्वामित्व : इसका अर्थ है माल का सामान्य स्वामित्व, केवल विशेष स्वामित्व नहीं।

16.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 4 i) गलत; ii) सही; iii) गलत; iv) सही; v) सही; vi) सही।

ख) 5 i) सही; ii) गलत; iii) सही; iv) सही; v) गलत; vi) सही; vii) गलत; viii) सही; ix) सही।

16.11 स्वपरख प्रश्न

1) विक्रय अनुबंध की परिभाषा दीजिए। विक्रय अनुबंध विक्रय करार से किस प्रकार भिन्न होता है।

2) एक वैध विक्रय अनुबंध की आवश्यक विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।

3) विक्रय अनुबंध कैसे किया जाता है? ऐसे अनुबंध की अनिवार्य औपचारिकताओं को उदाहरण सहित संक्षेप में बताइये।

4) 'माल' शब्द का क्या अर्थ है? माल के विभिन्न प्रकार कौन-से हैं?

5) विशिष्ट माल के नष्ट होने का विक्रय अनुबंध पर क्या प्रभाव होता है?

6) श्रम व सेवा का अनुबंध क्या होता है? इसमें और विक्रय में भेद कीजिए।

7) निम्नलिखित के उत्तर कारण सहित दीजिए :

i) A ने अपना रेडियो B को 20 किलो चावल के लिए बेचने का करार किया। क्या यह विक्रय अनुबंध है?

ii) A ने B को एक हस्तलिपि छापने के लिए सुपुर्द की। B ने पुस्तक छापने के लिए अपनी स्याही और कागज का प्रयोग करने की सहमति दी। क्या यह विक्रय अनुबंध है?

iii) A ने एक दर्जी को सूट सीने के लिए कपड़ा दिया। दर्जी ने अस्तर व बटन अपने आप से लगाने की सहमति दी। क्या यह एक विक्रय अनुबंध है?

iv) A ने एक पुस्तक विक्रेता से कुछ पुस्तकें खरीदी और उसे कहा कि घर जाते समय उससे पुस्तक ले जाएगा। दुकान में आग लग जाने से किताबें नष्ट हो गयीं। हानि कौन उठायेगा और क्यों?

v) A ने एक प्यानों B को क्रयावक्रय (hire purchase) आधार पर बेचा। B ने 5 किश्तें चुकाने के बाद और किश्त देने से मना कर दिया और प्यानों C को बेच दिया। क्या A, C से प्यानों वसूल कर सकता है?

vi) X ने अपने गोदाम में पड़ी हुई सीमेंट की 100 बोरियाँ Y को बेची। अनुबंध किये जाने वाली तिथि को तेज वर्षा के कारण सीमेंट पत्थर बन गया, लेकिन इस तथ्य का किसी भी पक्षकार को पता नहीं था। Y को सलाह दीजिए।

vii) A ने अपने खेत में उगने वाले सारे गेहूँ को B को बेचने का करार किया। फसल के कटाई के लिए तैयार होने से पहले बाढ़ के कारण पूरी फसल नष्ट हो गयी। क्या A माल की सुपुर्दगी देने के लिए आबद्ध है?

हायक संकेत

नहीं, यह वस्तु-विनिमय है विक्रय नहीं।

) नहीं, यह श्रम व सेवा के लिए अनुबंध है।

) यह श्रम व सेवा के लिए अनुबंध है, विक्रय अनुबंध नहीं है।

) A हानि उठायेगा क्योंकि यह एक विक्रय अनुबंध है और हानि के समय A पुस्तकों का स्वामी था।

हाँ, A, C से प्यानों वसूल कर सकता है क्योंकि यह एक क्रयावक्रय करार है और अवक्रेता के पास इसका स्वामित्व नहीं है।

) अनुबंध व्यर्थ है (धारा 7)।

i) अनुबंध व्यर्थ है (धारा 8)।

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भली-भाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

इकाई 17 शर्त तथा आश्वासन

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 'शर्त' एवं 'आश्वासन' का अर्थ तथा परिभाषा
17.2.1 शर्त की परिभाषा
17.2.2 आश्वासन की परिभाषा
17.3 'शर्त' एवं 'आश्वासन' में अन्तर
17.4 शर्त एवं आश्वासन के प्रकार
17.4.1 स्पष्ट शर्तें एवं आश्वासन
17.4.2 निहित शर्तें
17.4.3 निहित आश्वासन
17.5 शर्त भंग को आश्वासन भंग कब समझा जाता है?
17.6 'क्रेता सावधान रहें' सिद्धान्त
17.7 सारांश
17.8 शब्दावली
17.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
17.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

17.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- माल के क्रय-विक्रय के सम्बन्ध में 'शर्त' एवं 'आश्वासन' शब्दों का अर्थ स्पष्ट कर सकें,
- 'शर्त' एवं 'आश्वासन' में अन्तर बता सकें,
- माल विक्रय अधिनियम में निहित शर्तों एवं आश्वासनों के बारे में बता सकें,
- इस बात की चर्चा कर सकें कि शर्त को आश्वासन कब माना जाता है, और
- माल विक्रय के आधारभूत सिद्धान्त 'क्रेता सावधान रहे' की व्याख्या कर सकें।

17.1 प्रस्तावना

हम सब किसी न किसी रूप में उपभोक्ता हैं। हम स्वयं अपने उपभोग के लिए माल खरीद सकते हैं या कोई अन्य माल का उत्पादन करने के लिए। कई बार विक्रेता द्वारा माल के सम्बन्ध में किए गये दावों से हम आकर्षित होते हैं। कभी-कभी माल के सम्बन्ध में उसके गुण, उपयोगिता या उपयुक्तता के दावों की वजह से ही हम किसी अन्य माल की बजाय विशेष ब्रांड नाम का माल ही खरीदते हैं।

कई बार हम किसी विशेष ब्रांड का माल ही खरीदने का निर्णय करते हैं और हम यह निर्णय इसलिए करते हैं क्योंकि माल की उपयुक्तता एवं गुणवत्ता के बारे में कुछ भरोसा दिलाया गया है। ऐसे दावों को 'शर्त' (condition) तथा 'आश्वासन' (warranty) कहा जाता है। इस प्रकार से भरोसा दिलाने वाली बातें या कथन 'शर्त' या 'आश्वासन' हो सकती हैं। इस इकाई में हम 'शर्त' एवं 'आश्वासन' शब्दों का अर्थ, उनमें अन्तर तथा विक्रय अनुबन्ध पर उनके प्रभाव के बारे में अध्ययन करेंगे।

इसके अलावा, उपभोक्ता संरक्षण के लिए, माल विक्रय अधिनियम, 1930 के अनुसार प्रत्येक विक्रय अनुबन्ध में (जब तक पक्षकारों ने करार न किया हो) कुछ नियत बन्धन (stipulation) होते हैं। इन बन्धनों को निहित शर्तें तथा आश्वासन कहते हैं। प्रस्तुत इकाई में हम इन निहित शर्तों एवं आश्वासनों के बारे में अध्ययन करेंगे।

17.2 'शर्त' एवं 'आश्वासन' का अर्थ तथा परिभाषा

अनेक बार माल का विक्रेता अपने माल के बारे में कुछ दावे करता है। इस प्रकार के दावे माल के गुण, उपयोग, उपयुक्तता या उपयोगिता आदि के बारे में होते हैं। विक्रेता और क्रेता अनुबन्ध की विषय-वस्तु के बारे में विभिन्न शर्तों के बारे में करार भी कर सकते हैं। कई बार विक्रेता द्वारा माल के सम्बन्ध में किए गये दावे केवल विचारों की अभिव्यक्ति मात्र ही होते हैं तथा वे अनुबन्ध का भाग नहीं बनते। परन्तु कई बार वे अनुबन्ध का भाग हो जाते हैं तथा उन शर्तों पर विश्वास करके ही क्रेता उन्हें खरीदता है। ऐसी स्थिति में उनका अनुबन्ध पर कानूनी प्रभाव होता है। ऐसे कथन या आश्वासन जो विक्रय अनुबन्ध का अंग बन जाते हैं उन्हें 'बन्धन' कहते हैं। इन बन्धनों का एक समान प्रभाव नहीं होता। कुछ बन्धन या कथन ऐसे होते हैं जो अनुबन्ध के लिए मूलभूत प्रकृति के होते हैं जबकि कुछ सहायक या गौण या राय की अभिव्यक्ति मात्र होते हैं। कोई कथन अनुबन्ध के लिए आधारभूत है अथवा सहायक, इस बात पर यह निर्भर करता है कि वह 'शर्त' है अथवा 'आश्वासन'। यदि कोई कथन या बन्धन अनुबन्ध का आधार है, तो उसे 'शर्त' कहते हैं। इसके विपरीत, यदि कोई बन्धन या कथन अनुबन्ध के लिए गौण या समपार्श्विक (collateral) है अर्थात् कम महत्व का है, तो इसे 'आश्वासन' कहते हैं।

17.2.1 शर्त की परिभाषा

माल विक्रय अधिनियम; 1930 की धारा 12(2) में 'शर्त' शब्द की परिभाषा दी गई है। इस धारा के अनुसार, **शर्त अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए आधारभूत वह शर्त है जिसके भंग किए जाने पर पक्षकार को अनुबन्ध समाप्त करने का अधिकार मिल जाता है।**

इस प्रकार, शर्त एक ऐसा कथन है जो अनुबन्ध की जड़ तक जाता है और अनुबन्ध का मूलाधार होता है। यह अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए अति आवश्यक है। यह ऐसा दायित्व है जिसके पूर्ण न किए जाने पर यह माना जाता है कि अनुबन्ध का निष्पादन नहीं किया गया है। अतः यदि कोई शर्त पूर्ण नहीं की जाती तो क्रेता को अधिकार है कि वह अनुबन्ध को समाप्त कर दे तथा अनुबन्ध भंग के लिए हर्जाने के लिए दावा करे।

'शर्त' के उपर्युक्त वर्णन को एक केस **बैलड्रायी बनाम मार्शल** के द्वारा और अधिक स्पष्ट किया जा सकता है। इस केस में B ने एक कार विक्रेता M से पर्यटन यात्रा के लिए उपयुक्त कार के बारे में सलाह ली। M ने "बगैटी" (Bugatti) नामक कार का सुझाव दिया और तद्नुसार B ने वह कार खरीद ली। परन्तु वह कार पर्यटन कार्य के लिए योग्य सिद्ध न हुई। निर्णय दिया गया कि यह वाक्य 'कार पर्यटन यात्रा के लिए उपयुक्त होनी चाहिए' इस अनुबन्ध के लिए 'शर्त' है। यह बात इतनी अधिक महत्वपूर्ण है कि इसके पूर्ण न किए जाने पर, कार खरीदने का B का मुख्य प्रयोजन ही विफल हो जाता है। अतः वह कार वापस करने तथा कीमत वापस प्राप्त करने का हकदार माना गया।

17.2.2 आश्वासन की परिभाषा

माल विक्रय अधिनियम की धारा 12(3) के अनुसार, **"आश्वासन ऐसा बन्धन या कथन है जो अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए समपार्श्विक होता है और जिसके भंग किए जाने पर केवल हर्जाने के लिए दावा करने का अधिकार मिलता है, परन्तु माल को अस्वीकार करने तथा अनुबन्ध को समाप्त करने का अधिकार उत्पन्न नहीं होता"**। अन्य शब्दों में आश्वासन ऐसा कथन या बन्धन है जो अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए आवश्यक नहीं हैं अर्थात् यह सहायक या समपार्श्विक प्रकृति का होता है। यदि आश्वासन भंग किया जाता है तो क्रेता अनुबन्ध को समाप्त नहीं कर सकता, बल्कि वह विक्रेता से केवल हर्जाने की मांग कर सकता है। उपर्युक्त केस में यदि क्रेता एक अच्छी कार मांगता है और कार विक्रेता कार बेचते समय कहता है कि यह एक लिटर पैट्रोल में 15 किलोमीटर चल सकती है। परन्तु बाद में पता चलता है कि कार 1 लिटर पैट्रोल में केवल 12 किलोमीटर ही चलती है। इस स्थिति में विक्रेता द्वारा कही गई बात को आश्वासन माना जाएगा और क्रेता अनुबन्ध को समाप्त नहीं कर सकेगा बल्कि वह केवल हर्जाना वसूल करने का हकदार होगा।

17.3 'शर्त' एवं 'आश्वासन' में अन्तर

उपर्युक्त चर्चा में आपने गौर किया होगा कि इन दोनों शब्दों शर्त तथा आश्वासन— में प्रकार का नहीं बल्कि केवल महत्व की डिग्री का अन्तर मात्र है। हमारा निर्णय कि कोई कथन शर्त है या

आश्वासन, इस बात पर निर्भर करेगा कि वह कथन अनुबन्ध के लिए मूलभूत आधार है या केवल समपार्श्विक वचन मात्र है। अतः यदि उन शर्तों के न होने पर क्रेता ने माल नहीं खरीदा होता, तो उन्हें शर्त ही माना जाएगा। इसके विपरीत यदि क्रेता ने वह माल खरीद लिया होता और वे कथन माल के गुण या उपयुक्तता के बारे में विश्वास मात्र हैं, तो उन्हें 'आश्वासन' कहा जाएगा। इन दोनों के अन्तर को इस दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए कि यदि उसके भंग किए जाने पर पीड़ित पक्षकार का अधिकार निरर्थक या व्यर्थ हो जाता है तो यह 'शर्त' है और यदि वह कथन केवल सहायक है तो वह 'आश्वासन' है। अतः हम कह सकते हैं कि किसी विक्रय अनुबन्ध में कोई कथन शर्त है या आश्वासन, यह प्रत्येक स्थिति में अनुबन्ध की रचना पर निर्भर करता है। न्यायालय पक्षकारों द्वारा अनुबन्ध में प्रयुक्त शब्दों को मान्यता न दे कर पक्षकारों के वास्तविक इरादे को देखता है और यह इरादा अनुबन्ध की रचना तथा परिस्थितियों से जाना जा सकता है। धारा 12(4) में इस दृष्टिकोण की पुष्टि की गई है, इसके अनुसार **कोई कथन शर्त हो सकता है यद्यपि अनुबन्ध में उसे आश्वासन कहा गया हो।**

उपर्युक्त तथ्य को हम निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट कर सकते हैं:

A, जो एक घोड़ा खरीदना चाहता है, वह घोड़ा विक्रेता से कहता है कि उसे ऐसा एक घोड़ा दे जो शान्त हो और बदज़ात (vicious) न हो। विक्रेता द्वारा जो घोड़ा उसे दिया जाता है वह बिगड़ैल निकलता है और उस पर पहली ही बार सवारी करने पर से फेंक देता है जिससे A के अंग-भंग हो जाते हैं। इस स्थिति में क्रेता का यह कथन कि उसे एक शान्त घोड़ा चाहिए, यह अनुबन्ध के प्रयोजन के लिए आवश्यक शर्त थी। इसलिए A घोड़े को अस्वीकार करके कीमत वापस प्राप्त कर सकता है। क्रेता को जो चोटें पहुंची हैं, वह उनके लिए हर्जाने का भी दावा कर सकता है।

परन्तु यदि A स्वयं ही किसी विशेष घोड़े को चुनता है और तब विक्रेता से घोड़े के शान्त होने व बदज़ात न होने का आश्वासन चाहता है, तो यह कथन केवल 'आश्वासन' ही माना जाएगा तथा क्रेता को केवल हर्जाना प्राप्त करने का उपचार उपलब्ध है, वह घोड़े को वापस करके कीमत नहीं मांग सकता।

उपर्युक्त चर्चा के आधार पर, शर्त एवं आश्वासन के अन्तर को संक्षेप में निम्न प्रकार से बताया जा सकता है:

	शर्त	आश्वासन
1	शर्त ऐसा बन्धन है जो अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए अति आवश्यक है।	आश्वासन ऐसा बन्धन है जो अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए समपार्श्विक है।
2	शर्त भंग किए जाने पर पीड़ित पक्ष को अनुबन्ध समाप्त करने के अधिकार के साथ-साथ हर्जाना प्राप्त करने का भी अधिकार होता है।	आश्वासन भंग किए जाने पर केवल हर्जाने के लिए दावा किया जा सकता है। अनुबन्ध को समाप्त नहीं किया जा सकता।
3	शर्त भंग की स्थिति में, पीड़ित पक्ष शर्त भंग को आश्वासन भंग मान सकता है। उदाहरण के लिए क्रेता माल को रख ले और हर्जाने का दावा करे।	आश्वासन भंग को शर्त भंग नहीं माना जा सकता।

17.4 शर्त एवं आश्वासन के प्रकार

शर्त एवं आश्वासन स्पष्ट (express) या निहित (implied) हो सकते हैं।

17.4.1 स्पष्ट शर्तें एवं आश्वासन

इन्हें तब स्पष्ट कहा जाता है जब अनुबन्ध की शर्तों में इनके लिए स्पष्ट रूप से व्यवस्था की गई हो। जब कोई क्रेता 'सफ़ेद मारुति कार' खरीदना चाहता है, तो कार का रंग एक स्पष्ट शर्त मानी जाती है। यदि अनुबन्ध करने वाले पक्षकार चाहें तो वे अनुबन्ध की विषय-वस्तु के वर्णन के बारे में, जैसा चाहते हैं उस विशिष्ट कथन या वचन को साफ़ तौर पर लिख सकते हैं। तब इसे स्पष्ट शर्त कहा जाएगा। विक्रय अनुबन्ध में स्पष्ट करार के द्वारा पक्षकार जो चाहें वे स्पष्ट शर्तें एवं

आश्वासन रखने के लिए पूर्णतः स्वतन्त्र हैं। आपने ध्यान किया होगा कि जब कम्पनी अपने माल का विज्ञापन करती हैं तो वह एक निश्चित अवधि के लिए गारंटी देती हैं, जैसे ऑरिएंट पंखे–दो वर्ष की गारंटी', 'बीनाटोन टी वी–पिक्चर टयूब की तीन वर्ष की गारंटी'। ये स्पष्ट आश्वासन के उदाहरण हैं।

17.4.2 निहित शर्तें (Implied Conditions)

शर्तों एवं आश्वासनों को निहित तब माना जाता है जब कानून विक्रय अनुबन्ध में स्वतः ही उन्हें शामिल मान लेता है, यद्यपि अनुबन्ध में उन्हें स्पष्टतः शामिल नहीं किया गया हो। अतः, जब तक पक्षकारों में कोई विपरीत करार न हो, प्रत्येक विक्रय अनुबन्ध में कुछ निहित शर्तें एवं आश्वासन शामिल मान लिए जाते हैं। परन्तु पक्षकारों को यह अधिकार है कि वे स्पष्ट रूप से करार करके किसी निहित शर्त या आश्वासन को हटा सकते हैं। निहित शर्तों एवं आश्वासनों को इसलिए प्रवर्तित किया जाता है कि कानून यह मानता है कि पक्षकारों का इरादा इन्हें अनुबन्ध में शामिल करने का तो था परन्तु उन्होंने स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं किया। ये निहित शर्तें एवं आश्वासन अधिनियम की धारा 14 से 17 तक में दिए गये हैं, जो निम्न प्रकार हैं :

1) **स्वामित्व सम्बन्धी शर्त (Condition as to title) :** विक्रय में स्वामित्व एवं कब्जे का अंतरण शामिल होता है। अतः धारा 14(a) में प्रावधान है कि जब तक अनुबन्ध की परिस्थितियों से कोई विपरीत अभिप्राय प्रकट न होता हो, तो विक्रय अनुबन्ध में यह निहित शर्त होती है कि विक्रेता को माल बेचने का अधिकार है तथा विक्रय के करार में यह शर्त निहित है कि माल के स्वामित्व के अंतरण के समय उसे माल बेचने का अधिकार होगा।

   आप ध्यान दें कि उपर्युक्त प्रावधान इस तर्क पर आधारित है कि केवल माल का स्वामी ही उसका वैध विक्रय कर सकता है, क्योंकि वही ऐसा व्यक्ति है (कुछ अपवादों को छोड़कर जिन्हें आप बाद में 'अस्वामी द्वारा विक्रय' शीर्षक के अन्तर्गत पढ़ेंगे) जो स्वामित्व का अधिकार प्रदान कर सकता है। कानून का नियम है कि **'कोई भी व्यक्ति वह अधिकार नहीं दे सकता जो उसके पास नहीं हैं'** अर्थात् कोई भी व्यक्ति वह नहीं दे सकता जो स्वयं उसके पास नहीं है (Nemo dot quod non-habat)। प्रत्येक विक्रय अनुबन्ध में यह निहित शर्त होती है कि विक्रेता का माल पर वैध स्वत्वाधिकार है। निर्दोष क्रेताओं के हितों की रक्षा करने के लिए यह शर्त अत्यन्त आवश्यक है। निम्नलिखित उदाहरण से यह बात और स्पष्ट हो जाती है।

   A ने B से एक कार खरीदी, लेकिन B का कार पर कोई स्वत्वाधिकार नहीं था। A ने कई महीने तक कार को इस्तेमाल किया। इसके पश्चात् कार के असली स्वामी C ने कार देख ली और A से कार वापस माँगी। निर्णय दिया गया कि A वास्तविक स्वामी को कार लौटाने के लिए बाध्य है। A को बिना स्वत्वाधिकार के विक्रेता B के विरुद्ध कीमत को वापस प्राप्त करने और हर्जाना प्राप्त करने के लिए दावा करने का अधिकार है। इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि A ने कई महीने तक कार इस्तेमाल कर लिया है **(रौलैंड बनाम डिवाल)।**

   परन्तु अन्य निहित शर्तों की तरह इस शर्त को भी स्पष्ट प्रावधान करके नकारा जा सकता है। अतः यदि कोई चोर चोरी का माल बेचने के लिए 'चोर बाज़ार' जाता है और क्रेता इस जानकारी के बावजूद माल को खरीद लेता है, तो यदि क्रेता को माल के असली स्वामी को माल लौटाना भी पड़े तो भी क्रेता स्वयं द्वारा अदा की गई कीमत को वापस प्राप्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार जब कस्टम अधिकारी ज़ब्त किए माल को बेचते हैं तो स्वत्वाधिकार के सम्बन्ध में उनका कोई दायित्व नहीं होता। यह ध्यान रखें कि विक्रेता को माल बेचने का अधिकार होना चाहिए। 'विक्रय करने का अधिकार' वाक्यांश 'स्वामित्व आंतरित करने के अधिकार' से कहीं अधिक विस्तृत है। अतः यदि कोई विक्रेता किसी अन्य व्यक्ति के 'ट्रेड मार्क' का अतिक्रमण करता है तो उसे 'विक्रय करने का अधिकार' नहीं होता।

   इसलिए यदि विक्रेता ट्रेड मार्क कानून का उल्लंघन करके कोई माल बेचता है, तो इसे स्वत्वाधिकार सम्बन्धी निहित शर्त का खंडन माना जाता है। ऐसी स्थिति में क्रेता को यह अधिकार होगा कि वह विक्रय अनुबन्ध को रद्द कर दे। **निबलेट बनाम कन्फेक्शनर्स मैटीरियल्स क.** के केस में A ने B को कुछ डिब्बे संघनित (condensed) दूध के बेचे, उन डिब्बों पर 'निसली ब्रांड' के लेबल लगे हुए थे। स्वयं को ट्रेड मार्क कानून के अन्तर्गत दायित्व से बचाने के लिए, B को वह लेबल हटाने पड़े और उनको घाटे पर बेचना पड़ा। A को इस निहित शर्त को भंग करने का दोषी माना गया कि उन्हें विक्रय करने का अधिकार था अर्थात् A को उस लेबल सहित माल बेचने का कोई अधिकार नहीं था।

2) **वर्णन द्वारा विक्रय (Sale by description) :** कभी-कभी माल वर्णन द्वारा विक्रय किया जाता है। ऐसी स्थिति में धारा 15 में बताया गया है कि **जब वर्णन द्वारा माल के विक्रय का अनुबन्ध किया जाता है, तो यह निहित शर्त होती है कि माल वर्णन के अनुसार ही होगा।** 'वर्णन के अनुसार' से तात्पर्य है कि माल के सम्बन्ध में विक्रेता ने जो वर्णन किया है, उसी वर्णन के अनुरूप दिया जाने वाला माल होना चाहिए। यदि दिया गया माल वर्णन के अनुरूप नहीं है, तो क्रेता को माल अस्वीकार करने तथा हर्जाने के लिए दावा करने का अधिकार होता है। 'वर्णन द्वारा विक्रय' एक विस्तृत शब्द है और इसमें अनेक परिस्थितियाँ शामिल हैं।

i) इसमें ऐसी स्थिति शामिल है जबकि क्रेता ने माल को कभी भी देखा नहीं है बल्कि वह विक्रेता द्वारा किए गये वर्णन के आधार पर माल खरीदता है। उदाहरण के लिए, फसल काटने की मशीन के विक्रय में, विक्रेता ने मशीन को केवल एक वर्ष पुराना बताया तथा कहा कि उससे केवल 50-60 एकड़ की फसल ही काटी गई है। मशीन प्राप्त करने पर क्रेता ने उस मशीन को अत्याधिक पुराना पाया। क्रेता को अधिकार है कि वह मशीन को अस्वीकार कर दे क्योंकि वह विक्रेता द्वारा किए गये वर्णन के अनुसार नहीं है **(वार्ले बनाम व्हिप)**

इसी प्रकार यदि क्रेता ने 'जापान में निर्मित फिलिप्स जूसर' के लिए आर्डर दिया है और उसे 'हांगकांग में निर्मित फिलिप्स जूसर' दिया जाए तो इसे आर्डर का पालन नहीं माना जा सकता।

ii) यदि क्रेता ने माल को देख भी लिया है, परन्तु यदि वह अपनी आंख पर भरोसा न करके विक्रेता द्वारा किए गए वर्णन के आधार पर माल खरीदता है, तो इसे वर्णन द्वारा विक्रय ही कहा जाता है। अत: जब एक व्यक्ति ने एक विशेष किस्म के 'पंजाब के गेहूँ' के 100 बोरों का आर्डर दिया और जो माल वास्तव में उसे सुपुर्द किया गया वह 'गुजरात का गेहूँ' था, तो इस स्थिति में यद्यपि सुपुर्दगी के समय क्रेता ने माल देख भी लिया है तब भी वर्णन सम्बन्धी निहित शर्त भंग हुई मानी जाती है। इसी प्रकार, नीलामी द्वारा विक्रय में "लिनन नैपकिन तथा टेबल क्लाथ" का एक सेट यह कह कर बेचा गया कि "वह 17वीं शताब्दी के थे।" क्रेता जो पुरावस्तुओं (antiques) का व्यापारी था, उसने माल देख लिया और खरीद लिया। बाद में उसे पता चला कि वास्तव में वे "18वीं शताब्दी" की वस्तुएँ थीं। निर्णय दिया गया कि क्रेता ने जो देखा हैं उस पर नहीं बल्कि जो वर्णन उसे दिया गया है उस पर विश्वास करके उसने माल खरीदा है और क्योंकि माल वर्णन के अनुसार नहीं था, अत: क्रेता माल को लौटा सकता है **(निकलसन एण्ड वेन बनाम स्मिथ मौरियट)।**

iii) पैकिंग करने का ढंग भी वर्णन का एक अंग हो सकता है। उदाहरण के लिए, किसी विक्रेता ने डिब्बा बन्द फलों के 5,000 डिब्बे देने का करार किया और प्रत्येक पेटी में 50 डिब्बे बन्द किए जाने थे। यदि पेटियों में 50 डिब्बों से 'अधिक' या 'कम' डिब्बे हैं तो क्रेता माल को अस्वीकार कर सकता है।

3) **नमूने द्वारा विक्रय (Sale by sample) :** नमूने द्वारा विक्रय से आशय ऐसे विक्रय से है जहाँ विक्रेता ने क्रेता को माल का नमूना दिखाया है तथा उस नमूने के अनुसार माल सप्लाई करने का वचन दिया है। ऐसी सब परिस्थितियों में जब माल का नमूना दिखाया जाता है, हम 'नमूने द्वारा विक्रय' नहीं कह सकते क्योंकि जब नमूने के सम्बन्धी कोई विश्वास नहीं दिलाया जाता तो यह मान लिया जाता है कि विक्रेता नमूने के अनुसार माल देने का कोई विश्वास नहीं दे रहा, बल्कि माल के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के लिए नमूना दिखाया जा रहा है। ऐसी स्थिति में सुपुर्द किए जाने वाले माल में थोड़ा बहुत अन्तर हो सकता है। सुपुर्द किए जाने वाला माल दिखाए गये नमूने से थोड़ा घटिया या बढ़िया हो सकता है।

नमूने द्वारा विक्रय के अनुबन्ध में कानून की यह मान्यता है कि ऐसा अनुबन्ध निम्नलिखित तीन निहित शर्तों के अधीन होता है :

i) सम्पूर्ण (सारा) माल क्वालिटी में नमूने के अनुसार होना चाहिए, अर्थात्, यदि सप्लाई किए जाने वाला माल क्वालिटी में नमूने से घटिया या बढ़िया है, तो क्रेता माल को अस्वीकार कर सकता है।

ii) क्रेता को सम्पूर्ण माल को नमूने के साथ मिलाकर देखने का उचित अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। यदि माल नमूने के अनुसार नहीं पाया जाता तो विक्रेता को वह माल वापस लेना पड़ेगा। माल की प्रकृति और आकार को ध्यान में रखते हुए, क्रेता को माल

को नमूने से मिलान का उचित अवसर देना चाहिए। उदाहरण के लिए, 100 बोरी गेहूं के विक्रय की स्थिति में क्रेता को केवल तीन बोरों का माल देखने का अवसर दिया गया। ऐसी स्थिति में क्रेता अनुबन्ध को रद्द कर सकता है।

iii) माल में ऐसा कोई दोष नहीं होना चाहिए जिसके कारण वह विक्रय-योग्य (merchantable) न रहे। ऐसे दोष हो सकते हैं जो नमूने की साधारण जाँच करने से ज्ञात नहीं होते अर्थात् अदृश्य (latent) दोष। ऐसे दोषों का पता तभी चलता है जब उनका उपयोग किया जाए। परन्तु विक्रेता को ऐसे दोषों के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता जो प्रकट या प्रत्यक्ष हैं तथा जिन्हें मामूली समझ वाला व्यक्ति सरलता से पता लगा सकता हो। उदाहरण के लिए, A ने B को ऊनी कपड़ा नमूने के अनुसार बेचा। कोट का कपड़ा नमूने के अनुसार था परन्तु कुछ ऐसा अदृश्य दोष था जिस कारण वह कोट बनाने के योग्य नहीं था। निर्णय दिया गया क्रेता माल को अस्वीकार कर सकता था। कारण यह दिया गया कि यद्यपि वह दोष नमूने में भी था, परन्तु साधारण जाँच करने पर उस दोष का पता नहीं चलता था **(ड्रमंड ऐण्ड सन्स बनाम वैन इन्गेन)।**

) **नमूने और वर्णन द्वारा विक्रय** (Sale by sample and description) : यदि नमूने और वर्णन द्वारा विक्रय किया जाता है, तो धारा 15 में बताया गया है कि माल केवल नमूने के अनुरूप ही नहीं होना चाहिए बल्कि वह वर्णन के अनुसार भी होना चाहिए। इसे निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट कर सकते हैं :

i) **वालिस बनाम प्रैट** के केस में 'इंगलिस सैन फोइन' नामक किस्म के बीजों को नमूना दिखाकर तथा जिसे 'कॉमन इंगलिश सैन फोइन' से वर्णित किया गया, विक्रय किया गया। परन्तु विक्रेता ने उनकी वृद्धि, वर्णन या किसी अन्य के बारे में कोई आश्वासन नहीं दिया। जो बीज दिए गये यद्यपि वे नमूने के अनुसार तो थे परन्तु नमूने में दिखाए गये बीज और सप्लाई किए गये बीज एक दूसरी किस्म—"जियांट सैन फोइन" के बीज थे। निर्णय दिया गया कि वर्णन सम्बन्धी शर्त भंग हुई अतः क्रेता, विक्रेता से हर्जाना वसूल करता है।

ii) 'अरण्डी का विदेशी रिफाइंड तेल' नमूने के अनुसार होने की शर्त के साथ बेचा गया। विक्रेता द्वारा सप्लाई किया गया तेल नमूने के अनुसार था। क्रेता को जो नमूना दिखाया गया था वह वास्तव में 'अरण्डी के विदेशी रिफाइंड तेल' का नहीं था बल्कि उसमें सन के तेल की मिलावट थी। निर्णय दिया गया कि क्रेता माल अस्वीकार कर सकता है **(निकोल बनाम गोट्स)।**

) **गुण एवं उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त** (Condition as to quality and fitness) : माल विक्रय के अनुबन्ध में यह सामान्य नियम है माल खरीदने से पहले क्रेता को माल के गुण तथा उपयुक्तता के बारे में अच्छी तरह से जाँच कर लेनी चाहिए। माल खरीदने के बाद में यदि पता चलता है कि जिस प्रयोजन या उद्देश्य के लिए उसने माल खरीदा है, वह उसके लिए उपयुक्त नहीं है, तो क्रेता माल को वापस नहीं कर सकता और न ही उसे बदलवा सकता है तथा हर्जाना भी प्राप्त नहीं कर सकता। तथापि, इस नियम के कुछ अपवाद हैं। इन अपवादात्मक परिस्थितियों में उपयुक्तता सम्बन्धी निहित शर्त लागू होती है।

जब क्रेता स्पष्ट या निहित रूप से विक्रेता को माल खरीदने का अपना प्रयोजन बता देता है जिससे यह प्रतीत होता हो कि क्रेता ने माल के चयन के सम्बन्ध में विक्रेता की योग्यता व कुशलता पर विश्वास किया है, और विक्रय किया गया माल भी इस प्रकार का है जो विक्रेता प्रायः बेचता है (चाहे वह उस माल का विनिर्माता हो या नहीं), तब यह निहित शर्त होती है कि माल विशिष्ट प्रयोजन के लिए उपयुक्त होगा (धारा 16(1))।

अतः उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त का लाभ उठाने के लिए निम्नलिखित तीनों शर्तें पूर्ण की जानी चाहिए :

i) जिस विशिष्ट प्रयोजन के लिए क्रेता माल खरीद रहा है, क्रेता ने (स्पष्टतः या निहित रूप से) विक्रेता को वह प्रयोजन प्रकट कर दिया हो;

ii) किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए माल के उपयुक्त होने के सम्बन्ध में क्रेता ने विक्रेता की योग्यता व कौशल पर पूरा भरोसा किया हो; तथा

iii) विक्रेता का व्यापार उसी प्रकार के माल से सम्बन्धित है (अनियमित विक्रेता के प्रति इस शर्त को लागू नहीं किया जा सकता)।

प्रीस्ट बनाम लास्ट के केस में एक बज़ाज़ किसी कैमिस्ट की दुकान पर गया और उसने गर्म पानी की एक बोतल माँगी। क्रेता ने वस्तु खरीदने का अपना उद्देश्य भी विक्रेता को बता दिया। कैमिस्ट ने उसे गर्म पानी की एक बोतल दे दी और कहा कि उसमें केवल गर्म पानी ही भरा जाए क्योंकि वह खौलते पानी को सहन नहीं कर पाएगी। जब उसका इस्तेमाल किया जा रहा था तो वह फट गई और उसकी पत्नी जल गई। निर्णय दिया गया कि उपयुक्तता सम्बन्धी निहित शर्त भंग हुई और कैमिस्ट बोतल का मूल्य वापस करने तथा हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी माना गया क्योंकि वह गर्म पानी भरने के लिए अनुपयुक्त थी।

जब माल केवल एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए ही इस्तेमाल किया जा सकता हो तो क्रेता द्वारा विक्रेता को माल खरीदने का अपना उद्देश्य बतलाना आवश्यक नहीं होता।

इसी प्रकार यदि रेफ्रीजरेटर, जिसमें बर्फ नहीं जमती, उसे इस उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त भंग करने के आधार पर अस्वीकार किया जा सकता है **(ईवेंस बनाम स्टैले बैनजामिन)**। इसी तरह जब नकली दाँत का जोड़ा दंत-साज़ से खरीदा जाए और यदि वह क्रेता के मुँह में फिट न हो तो इसे वापस किया जा सकता है क्योंकि इसके अलावा ऐसे दाँतों का और कोई प्रयोग नहीं है (डा. बारेटो बनाम टी.आर. प्राइस)।

वास्तव में समस्या तब उत्पन्न होती है जब वस्तु को अनेक कार्यों के लिए इस्तेमाल किया जा सकता हो। उपयुक्त निहित शर्त का लाभ प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि क्रेता ने माल खरीदते समय विक्रेता को अपना उद्देश्य स्पष्ट रूप से बता दिया हो। उदाहरण के लिए, **एन्ड्रयू यूल एण्ड क.** के केस में जूट का कपड़ा, जो साधारणतः माल को पैक करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है, क्रेता को उसके आर्डर करने पर भेजा गया। क्रेता ने उस कपड़े को खाद्य-पदार्थों को पैक करने के लिए उपयुक्त नहीं पाया क्योंकि उस कपड़े में से एक अजीब तरह की गंध आती थी। यद्यपि वह कपड़ा माल पैक करने के लिए उपयुक्त है, परन्तु क्योंकि क्रेता ने कपड़ा खरीदने का अपना विशिष्ट प्रयोजन नहीं बताया अतः निर्णय दिया गया कि क्रेता माल अस्वीकार नहीं कर सकता। जब माल किसी एक विशिष्ट प्रयोजन के लिए ही उपयुक्त हो या माल की प्रकृति से ही निहितार्थ रूप से उसका प्रयोजन स्पष्ट हो जाता हो तब क्रेता को विक्रेता को माल खरीदने का अपना प्रयोजन बतलाना आवश्यक नहीं होता। ऐसी स्थिति में यह मान लिया जाता है कि प्रयोजन बतला दिया गया है। उदाहरणार्थ, यदि क्रेता किसी विक्रेता से शीतल पेय माँगता है तो यह मान लिया जाता है कि क्रेता को वह उपभोग के लिए चाहिए और यदि बाद में यह पता चलता है कि उसमें BVO या अन्य कोई हानिकारक पदार्थ मिला हुआ था, तो इसे उपयुक्तता सम्बन्धी निहित शर्त का खंडन माना जाएगा तथा विक्रेता हर्जाना चुकाने के लिए उत्तरदायी होगा

उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त निम्नलिखित परिस्थितियों में लागू नहीं होती :

i) **जब क्रेता, विक्रेता को असामान्य परिस्थितियों की सूचना नहीं देता : ग्रिफिथ बनाम पीटर कानवे लि.** के केस में एक महिला ने ट्वीड का गर्म कोट खरीदा और उसे हैरिस ट्वीड का कोट दिया गया। उस महिला की त्वचा अत्याधिक कोमल एवं संवेदनशील थी और वह उस कपड़े के लिए असहिष्णु थी। कोट पहनने पर उसकी त्वचा पर छाले पड़ गये। महिला ने कीमत वापस माँगी तथा हर्जाने की माँग की, परन्तु न्यायालय ने उसकी माँग को इस आधार पर नामंजूर कर दिया कि उस कपड़े में ऐसा कोई दोष नहीं था जिससे कि किसी सामान्य व्यक्ति की त्वचा पर कोई कुप्रभाव पड़े और उस महिला ने अपनी त्वचा के असहिष्णु होने के बारे में विक्रेता को कोई सूचना नहीं दी थी।

ii) **जब क्रेता पेटेंट (patent) अथवा व्यापार नाम (trade name) के अधीन माल खरीदता है।** जैसे कि यदि कोई व्यक्ति केमिस्ट के पास जाता है और उससे स्वस्थ पेय "बोर्नवीटा" खरीदता है। यदि वह इस पेय के लम्बे समय तक प्रयोग करने के बाद भी स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं देखता, तो वह विक्रेता से मुआवज़े की माँग नहीं कर सकता।

6) **विक्रय-योग्यता सम्बन्धी शर्त (Condition as to merchantability) :** अधिनियम की धारा 16(2) में प्रावधान है कि जब वर्णन के द्वारा माल किसी ऐसे विक्रेता से खरीदा जाता है जो उस प्रकार के माल का व्यापारी है (चाहे वह उसका विनिर्माता या उत्पादक हो या नहीं) तो यह एक निहित शर्त होती है कि माल विक्रय-योग्य क्वालिटी का होगा। 'विक्रय-योग्य' वाक्यांश का सरल भाषा में अर्थ है कि माल उस किस्म का होना चाहिए कि उसे उस प्रकार के वर्णन के माल के अनुसार प्रयोग किया जा सके तथा उस माल में कोई अदृश्य या गुप्त दोष नहीं होने चाहिए। यदि माल को पुनर्विक्रय के लिए खरीदा है, तो उस माल को बाज़ार में उसी वर्णन के आधार पर बेचे जाने के योग्य होना चाहिए। माल में कोई ऐसा दोष नहीं होना

चाहिए कि वह बाज़ार में बेचे जाने के योग्य न हो। उदाहरण के लिए, यदि चीनी शर्बत बन गई है तो वह विक्रय-योग्य नहीं रहती। विक्रय-योग्य का यह अर्थ भी है कि माल उचित तरीके से पैक होना चाहिए। उदाहरणार्थ, A ने B से शराब की बोतल खरीदी। सामान्य ढंग से बोतल की डॉट (cork) खोलते समय बोतल टूट जाती है जिससे A का हाथ ज़ख्मी हो जाता है। निर्णय दिया गया कि बोतल विक्रय-योग्य क्वालिटी की नहीं थी, अतः A, B से हर्जाना वसूल कर सकता है।

उदाहरण

i) एक व्यक्ति ने थ्री पीस सूट सिलवाने के लिए 3 मीटर सूट का कपड़ा खरीद कर उसे दरजी को सिलने के लिए दे दिया। उस कपड़े का कोट और वेस्ट-कोट बनाने के बाद दर्जी ने देखा कि क्योंकि कपड़े की बुनाई में दोष है, अतः शेष कपड़े में से पैंट की जगह केवल हाफ-पैंट ही बन सकती है (कपड़े की चौड़ाई एक समान नहीं थी)। क्रेता को मुआवज़ा प्राप्त करने का अधिकार है।

ii) A ने B से काला धागा खरीदा और उसने माल दीमक द्वारा खाया हुआ पाया। यहाँ विक्रय-योग्यता सम्बन्धी निहित शर्त भंग पायी गई।

iii) A ने प्लास्टिक की एक गुलेल B से खरीदी। जब A का लड़का उस गुलेल से सामान्य ढंग से खेल रहा था तो वह टूट गई। गुलेल जिस पदार्थ की बनी थी वह घटिया किस्म का था। परिणामस्वरूप लड़का एक आँख से अंधा हो गया। निर्णय दिया गया कि B विक्रेता उत्तरदायी है क्योंकि गुलेल व्यापार-योग्य नहीं थी **(गॉडले बनाम पैरी)**।

यहाँ यह ध्यान रहे कि जब क्रेता माल की जाँच-पड़ताल करके खरीदता है, तो माल की विक्रय-योग्यता की शर्त ऐसे दोषों के लिए लागू नहीं होगी जो कि क्रेता द्वारा साधारण जाँच से पता लग सकते थे। उदाहरण के लिए, A ने B से कुछ सरेस (glue) खरीदा जो कि बैरलों में भरा हुआ था। A को सरेस का निरीक्षण करने की हर सुविधा प्रदान की गई थी, परन्तु क्रेता A ने बैरलों में भरे माल की जाँच करने की कोई कोशिश ही नहीं की। ऐसी स्थिति में A यह कह कर कि माल विक्रय-योग्य नहीं है, माल को अस्वीकार नहीं कर सकता। यदि क्रेता ने माल को देखने का प्रयत्न किया होता, तो उसे आसानी से वे दोष पता लग सकता था **(थार्नेट बनाम बीयर्स)**।

7) **स्वास्थ्यप्रद होने सम्बन्धी शर्त (Condition as to wholesomeness) :** ऐसी वस्तुओं के सम्बन्ध में जिनका खाने-पीने में उपभोग किया जाना है, जैसे किराने के सामान या खाद्य पदार्थ की विक्रय-योग्यता का एक और ही स्वरूप है कि वे स्वास्थ्यप्रद होने चाहिए। स्वास्थ्यप्रद होने की निहित शर्त का अर्थ है कि वह वस्तु मनुष्य के उपभोग करने योग्य होनी चाहिए अर्थात् वह माल बासी अथवा संदूषित (contaminated) नहीं होना चाहिए। **फ्रॉस्ट बनाम अलेसबरी डेरी क. लिमिटेड** के केस में F ने A की डेरी से दूध खरीदा, उस दूध में टाइफाइड बुखार के रोगाणु थे। F की पत्नी ने वह दूध पीया और वह टाइफाइड से पीड़ित हो गई और अन्ततः मर गई। A को हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी ठहराया गया क्योंकि दूध मनुष्य के उपभोग के लिए उपयुक्त नहीं था। अतः यदि किसी शीतल पेय की बोतल में मक्खी है या दूध की थैली में छिपकली है, जिससे उपभोक्ता को हानि होती है तो वह विक्रेता के विरुद्ध दावा कर सकता है।

17.4.3 निहित आश्वासन (Implied Warranties)

अधिनियम में केवल दो आश्वासन बताए गये हैं और देखा जाए तो ये दोनों ही 'स्वामित्व सम्बन्धी शर्त' के परिणाम ही हैं। ये निम्नलिखित हैं :

1) **शान्तिपूर्ण कब्ज़े का आश्वासन (Warranty of quite enjoyment)** : जब तक अनुबन्ध की परिस्थितियों से विपरीत आशय प्रकट न होता हो, प्रत्येक विक्रय अनुबन्ध में यह निहित आश्वासन होता है कि क्रेता को माल पर शान्तिपूर्ण कब्ज़ा मिलेगा और वह ऐसे कब्ज़े का उपभोग करेगा। यदि विक्रेता या अन्य किसी व्यक्ति द्वारा क्रेता के शान्तिपूर्ण कब्ज़े तथा उपभोग करने के अधिकार में विघ्न डाला जाता है, तो क्रेता-विक्रेता के विरुद्ध हर्जाने का दावा कर सकता है। यह आश्वासन तब भंग होता है जब विक्रेता का स्वत्वाधिकार दोषपूर्ण रहा हो। जब विक्रेता का स्वामित्व दोषपूर्ण होगा तब क्रेता के शान्तिपूर्ण अधिकार में विघ्न पड़ेगा।

इस निहित आश्वासन को ठीक से समझने के लिए हम **निबलेट लि. बनाम कन्फेक्शनर्स मैटीरियल क. लिमिटेड** के केस का हवाला दे सकते हैं, यह केस इसी इकाई में पहले वर्णित

किया जा चुका है। इस केस में विक्रेता को दो बातों के लिए उत्तरदायी ठहराया गया। **प्रथम**, उन्होंने स्वामित्व सम्बन्धी निहित शर्त को भंग किया तथा द्वितीय, उन्होंने क्रेता के शान्तिपूर्ण कब्ज़े व उपभोग सम्बन्धी निहित आश्वासन को भी भंग किया।

2) **प्रभार मुक्ति का आश्वासन (Warranty of freedom from encumbrance)** : इस आश्वासन के अन्तर्गत क्रेता यह मानने का हकदार है कि माल किसी तीसरे पक्ष में किए गये किसी ऐसे प्रभार (charge) से मुक्त होगा जो क्रेता को अनुबन्ध किए जाने से पहले या किए जाने के समय नहीं बताया गया था, या ज्ञात नहीं था। अतः यह आश्वासन उस स्थिति में लागू नहीं होता जबकि क्रेता को प्रभार की सूचना दे दी गई है या उसे इसकी जानकारी है। **कौलिंग बनाम हेवुड** के केस में निर्णय दिया गया कि इस आश्वासन के अधीन दावा केवल तभी किया जा सकेगा जब क्रेता ने प्रभार की रकम का भुगतान कर दिया हो। यदि किसी तीसरे व्यक्ति के पक्ष में प्रभार होने के परिणामस्वरूप क्रेता के कब्ज़े में विघ्न पड़ता है तो वह विक्रेता से हर्जाना वसूल कर सकता है। उदाहरण के लिए, A ने कुछ माल B को बेचा। A ने उसी माल की जमानत पर X से 500 रुपये उधार ले रखे थे। B को माल पर इस प्रभार के होने की जानकारी नहीं थी। माल का उपभोग करने के लिए B को 500 रुपये X को देने पड़े। अब B यह रकम A से वसूल कर सकता है।

17.5 शर्त भंग को आश्वासन भंग कब समझा जाता है?

धारा 13 में कुछ परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है जिनमें शर्त को आश्वासन माना जाता है। परिणामस्वरूप, क्रेता का माल को अस्वीकार करने का अधिकार समाप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति उसे केवल हर्जाना प्राप्त करने का ही अधिकार मिलता है। ऐसा निम्नलिखित परिस्थितियों में होता है :

1) **क्रेता द्वारा परित्याग** : जब कोई विक्रय अनुबन्ध, विक्रेता द्वारा पूर्ण की जाने वाली शर्तों के अधीन है, तो क्रेता या तो (क) शर्त का परित्याग कर सकता है, या (ख) शर्त भंग को आश्वासन भंग मानने का निर्णय कर सकता है। यह तो आप जानते ही हैं कि स्पष्ट तथा निहित शर्तें क्रेता के लाभ के लिए होती हैं। इसलिए क्रेता को यह विकल्प प्राप्त है कि वह किसी शर्त भंग का परित्याग कर दे और इसके पूर्ण न किए जाने पर निष्पादन को स्वीकार कर ले। ऐसी स्थिति में क्रेता खरीदे गये माल का मूल्य चुकाने के लिए तो उत्तरदायी होता है परन्तु वह शर्त भंग के कारण हुई हानि के लिए हर्जाना वसूल कर सकता है। क्रेता जब एक बार अपने इस अधिकार का प्रयोग कर लेता है, तो फिर बाद में वह विक्रेता को शर्त पूर्ण करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

2) **जब शर्त-भंग को आश्वासन-भंग मानना अनिवार्य है** : जब विक्रय का अनुबन्ध अविभाज्य है और क्रेता ने सम्पूर्ण माल को या उसके कुछ भाग को स्वीकार कर लिया है, तो विक्रेता द्वारा की गई शर्त-भंग को आश्वासन-भंग ही माना जाता है। धारा 42 के अनुसार, क्रेता के द्वारा माल उस समय स्वीकार किया गया माना जाता है :
   i) जब वह विक्रेता को माल स्वीकार करने की सूचना दे देता है, अथवा
   ii) जब माल उसे सुपुर्द कर दिया गया है, और
      अ) वह माल के साथ कोई ऐसा कार्य करता है जो विक्रेता के स्वामित्व सम्बन्धी अधिकारों के अनुरूप नहीं है (जैसे माल को गिरवी रख देता है), अथवा
      ब) वह उचित समय व्यतीत हो जाने के बाद भी माल को अपने पास रखे रहता है और विक्रेता को इस बात की सूचना नहीं देता कि उसे माल को अस्वीकार कर दिया है।

   परन्तु यदि विक्रय-अनुबन्ध विभाज्य है और क्रेता ने माल के कुछ भाग को स्वीकार कर लिया है, तो वह शेष माल को अस्वीकार कर सकता है।

17.6 'क्रेता सावधान रहे' सिद्धान्त (Doctrine of Caveat Emptor)

माल विक्रय के सम्बन्ध में 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त कानून का आधारभूत नियम है। इसका अर्थ है कि क्रेता माल खरीदते समय सावधान या होशियार रहे। दूसरे शब्दों में, विक्रेता स्वयं द्वारा बेचे जाने वाले माल के दोषों को प्रकट करने के लिए बाध्य नहीं है। माल खरीदते

समय क्रेता का कर्त्तव्य है कि वह माल की अच्छी तरह से जाँच-पड़ताल कर ले तथा सन्तुष्ट हो जाए कि वह जिस प्रयोजन के लिए माल खरीद रहा है, वह प्रयोजन उस माल से पूर्ण हो जाएगा।

उदाहरण

अ) एक व्यक्ति अपने पुत्र के लिए एक सिली-सिलाई कमीज़ ख़रीदता है। यह वह कमीज़ उसके पुत्र के लिए बहुत बड़ी है या छोटी है तो क्रेता कमीज़ को वापस या बदलवा नहीं सकता।

ब) 'सब दोषों सहित' सूअर बेचे गये। ये सूअर टाईफाईड से ग्रस्त थे, इससे क्रेता के अन्य स्वस्थ सूअर भी टाईफाईड ज्वर से पीड़ित हो गये। निर्णय दिया गया कि विक्रेता यह बतलाने के लिए बाध्य नहीं है कि सूअर अस्वस्थ हैं **(गोडार्ड बनाम होब्स)**।

अपवाद

'क्रेता सावधान रहे' सिद्धान्त के निम्नलिखित अपवाद हैं :

1) जब विक्रेता माल के सम्बन्ध में 'मिथ्यावर्णन' करता है और क्रेता उस पर विश्वास करके माल खरीदता है तो 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त लागू नहीं होता, और ऐसा विक्रय अनुबन्ध क्रेता के विकल्प पर व्यर्थनीय होता है।

2) जब विक्रेता माल के दोषों को इस प्रकार छिपाता है कि साधारण जाँच से उनका पता नहीं चल सकता, अथवा जब विक्रेता 'कपट' की कोटि में आने वाला मिथ्यावर्णन करता है और क्रेता उस असत्य कथन पर विश्वास करके अनुबन्ध कर लेता है, तो इन दोनों ही परिस्थितियों में अनुबन्ध व्यर्थनीय होता है। ऐसी स्थिति में क्रेता के पास यह उपचार उपलब्ध है कि वह अनुबन्ध को रद्द कर दे तथा विक्रेता से कपट के लिए हर्जाने की माँग करे।

3) जब क्रेता माल खरीदने का प्रयोजन विक्रेता को बतला देता है जिससे यह प्रतीत होता हो कि क्रेता-विक्रेता के कौशल व निर्णय पर भरोसा करता है तथा विक्रेता ऐसा व्यक्ति है जो उसी वर्णन का माल बेचता है, तो यह एक निहित शर्त होती है कि उस प्रयोजन के लिए माल उचित ढंग से उपयुक्त होगा। ऐसी स्थिति में 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त लागू नहीं होता।

4) वर्णन द्वारा विक्रय की स्थिति में जब माल किसी ऐसे विक्रेता से खरीदा जाता है जो प्रायः उसी प्रकार का माल बेचता है, तो निहित शर्त है कि माल विक्रय-योग्य होना चाहिए अर्थात् माल को उसी माल के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता हो। उदाहरणार्थ, क्रिकेट खेलने का बल्ला इस योग्य होना चाहिए कि क्रिकेट की गेंद से खेला जा सके। यदि माल विक्रय-योग्य नहीं है तो विक्रेता 'क्रेता सावधान रहे' के सिद्धान्त का सहारा नहीं ले सकता। परन्तु यदि क्रेता ने माल की जाँच-पड़ताल कर ली है तो ऐसे दोषों के बारे में कोई निहित शर्त नहीं होती जिन्हें साधारण जाँच से पता किया जा सकता था अर्थात् ऐसी स्थिति में 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त लागू होता है।

5) व्यापार की प्रथा या रीति किसी विशेष उद्देश्य के लिए माल के गुण या उपयुक्तता के सम्बन्ध में निहित शर्त या आश्वासन की व्यवस्था कर सकती है (धारा 16(3))। इस अपवाद को **जोन्स बनाम बोडैन** के केस के तथ्यों से स्पष्ट किया जा सकता है, जो निम्न प्रकार है :

दवाइयों की नीलामी द्वारा विक्रय में यह आम बात थी कि यदि माल समुद्र के पानी से खराब हो गया है तो इसकी सूचना दी जाती है। इस प्रथा का यह प्रभाव हुआ जब इस प्रकार की घोषणा के बिना माल बेचा गया तो यह निहित शर्त हुई कि माल समुद्र के पानी से खराब नहीं हुआ। इस केस में विक्रेता ने यह प्रकट किए बिना कि माल समुद्री पानी से खराब हो गया है क्रेता को माल का नमूना दिखाया। इस स्थिति में 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त लाग नहीं होगा।

6) जब वर्णन के द्वारा माल बेचा गया है और विक्रेता द्वारा दिया गया माल वर्णन के अनुरूप नहीं है, तब यह सिद्धान्त लागू नहीं होता।

7) यदि माल नमूने के द्वारा बेचा गया है और माल की सम्पूर्ण मात्रा उस नमूने के अनुरूप नहीं होती, तब यह सिद्धान्त लागू नहीं होता। इसके साथ ही यदि माल की सुपुर्दगी देते समय क्रेता को माल की पूरी मात्रा को नमूने के साथ मिलाने का अवसर नहीं दिया जाता, अथवा माल में कोई अदृश्य दोष है, तब यह सिद्धान्त लागू नहीं होता है।

8) नमूने तथा वर्णन के द्वारा विक्रय की स्थिति में यदि माल की सम्पूर्ण मात्रा नमूने तथा वर्णन के अनुरूप नहीं होती, तब यह सिद्धान्त लागू नहीं होता।

बोध प्रश्न क

1) विक्रय अनुबंध में 'शर्त' की परिभाषा दीजिए।

....

....

2) विक्रय अनुबन्ध में 'आश्वासन' क्या होता है?

....

....

....

3) नमूने द्वारा विक्रय क्या है?

....

....

....

4) शर्त-भंग को आश्वासन-भंग कब माना जा सकता है?

....

....

....

5) रिक्त स्थान भरिए–

i) माल विक्रय अनुबन्ध में शर्त अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए .... बन्धन होता है।

ii) माल विक्रय अनुबन्ध में आश्वासन अनुबन्ध के मुख्य प्रयोजन के लिए .... बन्धन होता है।

iii) विक्रय के अनुबन्ध में .... हस्तांतरित होता है।

iv) किसी विशेष प्रयोजन के लिए माल के गुण या उपयुक्तता सम्बन्धी निहित शर्त-व्यापार की .... के द्वारा हो सकती है।

v) खाद्य वस्तुओं के विक्रय अनुबन्ध में यह निहित शर्त होती है कि माल .... तथा मनुष्य द्वारा उपभोग करने के लिए .... होगा।

6) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत।

i) शर्त भंग किए जाने पर मूल्य की वापसी तथा हर्जाने के लिए दावा किया जा सकता है।

ii) आश्वासन भंग होने की स्थिति में क्रेता कीमत को वापस प्राप्त करने का हकदार होता है।

iii) शर्त-भंग को आश्वासन-भंग माना जा सकता है।

iv) 'विक्रय' तथा 'विक्रय का करार' समानार्थी वाक्यांश हैं।

v) नमूने द्वारा विक्रय की स्थिति में माल की सम्पूर्ण मात्रा न केवल नमूने के अनुरूप होनी चाहिए बल्कि विक्रय-योग्य भी होनी चाहिए।

vi) जब माल व्यापार चिह्न द्वारा बेचा जाता है तो उसकी उपयुक्तता सम्बन्धी कोई निहित शर्त नहीं होती।

7) i) व्यापारिक योग्यता सम्बन्धी शर्त का अर्थ है ....

....

ii) उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त के अधीन सहायता प्राप्त करने के लिए पूरी की जाने वाली शर्तें हैं :

1 ....

2 ....

3 ....

8) दीपक ने 12,000 रुपये में M/s पाल ब्रदर्स से एक रंगीन टैलीविज़न खरीदा। टी.वी. सेट आरम्भ से ही खराब था, और कुशल मैकेनिकों द्वारा मरम्मत किए जाने पर भी ठीक नहीं हुई। दीपक, पाल ब्रदर्स को टी.वी. सेट लौटाना तथा कीमत वापस पाना चाहता है, परामर्श दीजिए।

17.7 सारांश

माल बेचते समय विक्रेता माल के सम्बन्ध में कुछ दावे, कथन या वर्णन करता है। इस प्रकार के कथनों को 'बन्धन' कहते हैं। माल विक्रय अनुबन्ध की विषय-वस्तु के सम्बन्ध में जो कथन किए जाते हैं, वे शर्त या आश्वासन हो सकते हैं।

शर्त, ऐसा कथन है जो अनुबन्ध के मुख्य उद्देश्य के लिए अति आवश्यक है। शर्त भंग किए जाने पर क्रेता को अनुबन्ध रद्द करने का तथा हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार होता है।

आश्वासन, ऐसा कथन है जो अनुबन्ध के मुख्य उद्देश्य के लिए सहायक या समपार्श्विक है। आश्वासन भंग होने पर क्रेता केवल हर्जाने की ही माँग कर सकता है। वह अनुबन्ध को समाप्त नहीं कर सकता। पीड़ित पक्ष शर्त-भंग को आश्वासन-भंग मान सकता है जबकि आश्वासन-भंग को कभी भी शर्त-भंग नहीं माना जा सकता।

विक्रय अनुबंध में, शर्तें एवं आश्वासन, स्पष्ट या निहित हो सकते हैं। स्पष्ट शर्तें तथा आश्वासन वे होते हैं जिनके बारे में अनुबन्ध करते समय पक्षकार सहमत होते हैं। निहित शर्तें एवं आश्वासन वे होते हैं जो पक्षकारों द्वारा अन्यथा करार न किए जाने पर, कानून द्वारा मान लिए जाते हैं। निहित शर्तें ये हैं : (1) स्वामित्व सम्बन्धी शर्त, (2) वर्णन द्वारा विक्रय, (3) नमूने द्वारा विक्रय—इसमें यह शामिल हैं कि माल की बहुत बड़ी मात्रा नमूने के अनुरूप होनी चाहिए, माल में ऐसा कोई दोष नहीं होना चाहिए जिससे वह व्यापार-योग्य न रहे, क्रेता को सारा माल नमूने से मिलाने का पूर्ण अवसर दिया जाना चाहिए, (4) नमूने एवं वर्णन द्वारा विक्रय, (5) गुण एवं उपयुक्तता सम्बन्धी शर्त, (6) व्यापार-योग्यता सम्बन्धी शर्त, (7) स्वास्थ्यप्रद होने की शर्त। निहित आश्वासन इस प्रकार हैं : (1) शान्तिपूर्ण कब्ज़े का अधिकार तथा (2) प्रभार-मुक्त होने का आश्वासन।

'क्रेता सावधान रहे' का अर्थ है कि माल खरीदते समय क्रेता को होशियार रहना चाहिए। परन्तु यह सिद्धान्त निम्न परिस्थितियों में लागू नहीं होता : (1) जब विक्रेता मिथ्यावर्णन या कपट करता है, (2) जब विक्रेता माल के दोषों को इस प्रकार छिपाता है कि साधारण जाँच से उनका पता नहीं चलता, (3) वर्णन द्वारा विक्रय की स्थिति में, (4) जब व्यापार की प्रथा हो और (5) निहित शर्त या आश्वासन की स्थिति में।

17.8 शब्दावली

क्रेता सावधान रहे : माल खरीदते समय क्रेता होशियार रहे।

प्रभार : माल के ऊपर कोई भार।

स्वास्थ्यप्रद : मनुष्य द्वारा उपभोग करने के योग्य।

स्वत्वाधिकार : स्वामित्व।

बन्धन : माल के सम्बन्ध में किया गया कोई दावा या कथन।

17.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 5) i) आवश्यक, ii) समपार्श्विक, iii) स्वामित्व, iv) प्रथा, v) स्वास्थ्यप्रद, फिट

6) i) सही, ii) गलत, iii) सही, iv) गलत, v) सही, vi) सही

7) i) कि माल को उसी तरह से इस्तेमाल किया जा सकता है जैसा कि उसी वर्णन के माल का होता है।

ii) 1 ठीक-ठाक प्रयोजन बता देना चाहिए,
2 विक्रेता उस प्रकार के माल का व्यापारी होना चाहिए,
3 क्रेता ने विक्रेता के कौशल व निर्णय पर भरोसा किया हो।

8) व्यापारिक योग्यता सम्बन्धी निहित शर्त भंग हुई है। जिस वर्णन से माल बेचा जा रहा है उसके लिए वह उपयुक्त होना चाहिए। अतः टी.वी. सैट को टी.वी. सैट की तरह से कार्य करना चाहिए। विक्रेता को या तो सैट बदलना होगा या मूल्य वापस करना पड़ेगा।

17.10 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1) 'शर्त' तथा 'आश्वासन' की परिभाषा दीजिए तथा उनमें अन्तर स्पष्ट कीजिए।

2) 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त क्या है? इस सिद्धान्त के क्या अपवाद हैं?

3) 'नमूने द्वारा विक्रय' के अनुबन्ध में कौन-सी निहित शर्तें होती हैं? माल-विक्रय अधिनियम के अधीन इस सम्बन्ध में प्रावधानों की व्याख्या कीजिए।

4) "नमूने तथा वर्णन द्वारा विक्रय" की स्थिति में, माल न केवल नमूने के अनुरूप होना चाहिए बल्कि वर्णन के अनुरूप भी होना चाहिए। टिप्पणी कीजिए।

5) किन-किन परिस्थितियों में 'शर्त' को 'आश्वासन' के स्तर का माना जाता है?

6) माल विक्रय अनुबन्ध के दो निहित आश्वासनों को बताइए।

7) "जब क्रेता ने माल की जाँच कर ली है, तब व्यापार-योग्यता की शर्त केवल अदृश्य दोषों तक ही होती है।" व्याख्या कीजिए।

8) निम्नलिखित का उचित तर्क दे कर उत्तर दीजिए :
   i) एक रेलवे कम्पनी ने रेल की पटरी बिछाने के लिए स्लीपर खरीदे, लकड़ी इस कार्य के लिए उपयुक्त नहीं थी। रेलवे कम्पनी को सलाह दीजिए।
   ii) A, B को एक साड़ी बेचता है जिसके बारे में B को स्वयं यह विश्वास है यह शुद्ध सिल्क की साड़ी है। A, B को कुछ भी नहीं कहता। क्या B अनुबन्ध रद्द कर सकता है?
   iii) X ने एक कैम्पा-कोला की बोतल Y को बेची। बोतल खोलते समय फट गई तथा Y को चोट लगी। क्या Y, X से हर्जाना वसूल कर सकता है?
   iv) A ने नमूने के अनुसार कुछ माल B को बेचा। B ने नमूने के अनुसार उसी माल को C को बेच दिया। माल नमूने के अनुसार नहीं था। अतः C ने माल अस्वीकार कर दिया और B को इसकी सूचना दे दी। B ने A पर दावा कर दिया। B को सलाह दीजिए।
   v) A ने आध इंच मोटाई की लकड़ी B को बेचने का अनुबन्ध किया। जो लकड़ी वास्तव में सप्लाई की गई वह 1/2" से लेकर 5/8" तक मोटी है तथा प्रयोजन के लिए उपयुक्त है। क्या B लकड़ी को अस्वीकार कर सकता है?
   vi) एक देशी घी का व्यापारी, माल बेचते समय अपने घी को शुद्ध घी बतलाता है। परन्तु घी में मिलावट थी। क्रेता के पास क्या उपाय है?

संकेत

i) रेलवे कम्पनी लकड़ी अस्वीकार कर सकती है, क्योंकि गुण एवं उपयुक्तता सम्बन्धी निहित शर्त भंग हुई है।
ii) नहीं। 'क्रेता सावधान रहे' का सिद्धान्त लागू होता है।
iii) हाँ। बोतल व्यापारिक-योग्य नहीं थी।
iv) B, C के प्रति उत्तरदायी है, परन्तु B, A के प्रति कार्यवाही नहीं कर सकता क्योंकि B ने माल को स्वीकार कर लिया है। B, A से केवल हर्जाना माँग सकता है।
v) हाँ। माल वर्णन के एकदम अनुरूप होना चाहिए।
vi) निहित शर्त भंग हुई है। क्रेता माल अस्वीकार कर सकता है।

> **नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भली-भाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।**

इकाई 18 स्वामित्व हस्तांतरण तथा सुपुर्दगी

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रस्तावना
18.2 स्वामित्व हस्तांतरण का अर्थ
18.3 स्वामित्व हस्तांतरण का महत्व
18.4 स्वामित्व हस्तांतरण सम्बन्धी नियम
 18.4.1 विशिष्ट या निर्णीत माल की स्थिति में
 18.4.2 अनिर्णीत माल और भावी माल की स्थिति में
 18.4.3 पसन्द करने या विक्रय अथवा वापसी पर भेजे गये माल की स्थिति में
18.5 वाहक को सुपुर्दगी
18.6 निपटारे के अधिकार का आरक्षण
18.7 अस्वामियों द्वारा विक्रय
18.8 सुपुर्दगी किसे कहते हैं?
 18.8.1 सुपुर्दगी के प्रकार
 18.8.2 माल की सुपुर्दगी सम्बन्धी नियम
 18.8.3 सुपुर्दगी की स्वीकृति
 18.8.4 क्रेता का दायित्व
18.9 सारांश
18.10 शब्दावली
18.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
18.12 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

18.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- स्वामित्व हस्तांतरण का अर्थ बता सकें,
- स्वामित्व हस्तांतरण का महत्व वर्णन कर सकें,
- स्वामित्व हस्तांतरण सम्बन्धी नियमों का वर्णन कर सकें,
- उन परिस्थितियों की व्याख्या कर सकें, जिनमें अस्वामी श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार सौंप सकता है, और
- माल की सुपुर्दगी का अर्थ एवं प्रकार की रूपरेखा दे सकें।

18.1 प्रस्तावना

इकाई 16 में आपने विक्रय अनुबन्ध का अर्थ पढ़ा। इस अर्थ से आपको यह भली-भाँति स्पष्ट हो गया होगा कि विक्रय अनुबन्ध का मुख्य उद्देश्य स्वामित्व हस्तांतरण करना है, विक्रय करने पर विक्रेता उस माल का स्वामी नहीं रहता। पक्षकारों के विभिन्न अधिकार एवं दायित्व होते हैं जो स्वामित्व हस्तांतरण से जुड़े होते हैं। इसलिए हमारे लिए यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व किस समय हस्तांतरित होता है।

इस इकाई में विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरण होने से सम्बन्धित विभिन्न नियमों का आप विस्तार से अध्ययन करेंगे। आप उन परिस्थितियों का भी अध्ययन करेंगे जब अस्वामी स्वयं से श्रेष्ठ अधिकार क्रेता को सौंप सकता है। इसके अतिरिक्त आप माल की सुपुर्दगी से सम्बन्धित नियमों के बारे में भी पढ़ेंगे।

18.2 स्वामित्व हस्तांतरण का अर्थ

माल विक्रय अधिनियम में, 'सम्पत्ति' (property) शब्द को 'स्वामित्व' (ownership) के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। जब माल बेचा जाता है तब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित होता

है। 'माल का स्वामित्व' वाक्यांश को माल के 'वास्तविक कब्ज़े' से उलझाना नहीं चाहिए, ये दो अलग-अलग बातें हैं। किसी व्यक्ति के कब्ज़े में माल तो हो सकता है परन्तु यह हो सकता है कि वह उस माल का स्वामी न हो। उदाहरण के लिए, एजेंट, नौकर या निक्षेपिती (bailee) के कब्ज़े में माल तो हो सकता है किन्तु वे उसके स्वामी नहीं होते क्योंकि माल के स्वामित्व सम्बन्धी अधिकार उसके पास नहीं होते, वह तो केवल अपने प्रधान, मालिक या निक्षेपी (bailor) की ओर से माल को रखे हुए है। इसी प्रकार यह भी सम्भव है कि कोई व्यक्ति माल का स्वामी तो है परन्तु माल उसके वास्तविक कब्ज़े में नहीं है। उदाहरण के लिए, प्रधान, मालिक या निक्षेपी ऐसे माल के स्वामी हो सकते हैं जो वास्तव में उनके कब्ज़े में नहीं है। अतः माल के कब्ज़े का हस्तांतरण का अर्थ वही नहीं है जो स्वामित्व के हस्तांतरण का होता है। आप देखेंगे कि कई परिस्थितियों में माल का कब्ज़ा सहित या कब्ज़ा दिए बिना स्वामित्व हस्तांतरित हो सकता है।

माल विक्रय अनुबन्ध में जब क्रेता को माल बेचा जाता है तो क्रेता उस माल का स्वामी बन जाता है, इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि क्रेता ने माल की सुपुर्दगी ली है या नहीं। अतः, आपको यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए कि स्वामित्व हस्तांतरण का अर्थ कानूनी स्वामित्व से है, माल के वास्तविक कब्ज़े से नहीं।

18.3 स्वामित्व हस्तांतरण का महत्व

माल के विक्रय अनुबन्ध में यह प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण होता है कि विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व कब हस्तांतरित होता है। माल के स्वामित्व का हस्तांतरण का समय विक्रेता एवं क्रेता के विभिन्न अधिकारों व दायित्वों का निर्णय करता है। व्यापार में माल सामान्यतः पुनर्विक्रय के लिए खरीदा जाता है, और केवल माल का स्वामी ही उसे बेच सकता है। अतः ऐसा क्रेता जो माल का स्वामी बन गया है, उस माल को बेच सकता है। इसलिए हमारे लिए उस क्षण को जानना बहुत महत्वपूर्ण है जब विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित होता है। इस क्षण को जानने के कारण निम्नलिखित हैं :

1) **जोखिम स्वामित्व के साथ हस्तांतरित होता है :** कानून का यह नियम है कि जोखिम प्रथमदृष्ट्या (prima facie) स्वामित्व के साथ हस्तांतरित होता है (धारा 26)। इसका यह अर्थ हुआ कि यदि माल गुम हो जाता है या उसे कुछ क्षति पहुँचती है, तो जो कोई भी व्यक्ति माल के खोने या क्षति पहुँचने के समय उसका स्वामी होगा, वही यह हानि भी सहन करेगा। इसलिए यदि क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो गया है तो क्रेता उस माल का स्वामी बन जाता है और यदि माल नष्ट हो जाता है या उसे कुछ क्षति होती है, तो क्रेता को यह हानि सहन करनी पड़ेगी। अतः यह जानने के लिए कि हानि कौन सहन करेगा, यह जानना महत्वपूर्ण है कि क्या माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो गया है या अभी विक्रेता ही उस माल का स्वामी है। जो व्यक्ति माल का स्वामी होता है वही उससे सम्बन्धित जोखिम भी उठाता है, जिस व्यक्ति के कब्ज़े में माल है वह जोखिम उठाए यह आवश्यक नहीं।

उदाहरण

i) A ने कुछ पुस्तकें B को बेची। B वे पुस्तकें A की दुकान में ही छोड़ गया। दुकान में आग लग जाने से पुस्तकें जल गईं। यह हानि B को सहन करनी होगी क्योंकि पुस्तकों के नष्ट होने के समय वह पुस्तकों का स्वामी बन चुका था।
ii) A अपनी पुस्तक B को उधार देता है। अचानक आग लग जाने से पुस्तक पूर्णतः नष्ट हो गई। यह हानि A को सहन करनी पड़ेगी क्योंकि हानि के समय वह पुस्तक का स्वामी था।

2) **तीसरे पक्षकार के विरुद्ध कार्यवाही :** तीसरे पक्षकार के द्वारा यदि माल को कोई हानि या नुकसान पहुँचाया जाता है, तो केवल माल का स्वामी ही उसके विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है, वह व्यक्ति नहीं जिसके कब्ज़े में माल है। क्रेता को माल पर स्वामित्व अधिकार प्राप्त होता है अर्थात् उसे माल पर स्वामी के समस्त अधिकार प्राप्त हो जाते हैं।

3) **मूल्य के लिए दावा :** विक्रेता माल की कीमत क्रेता से तभी वसूल करने का हकदार होता है जब क्रेता को उस माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो गया हो।

4) **विक्रेता या क्रेता के दिवालिए होने पर :** यदि विक्रेता या क्रेता दिवालिया हो जाता है तो यह प्रश्न उठता है कि सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती (assignee) माल अपने कब्ज़े में ले सकता है या नहीं? इस प्रश्न का उत्तर इस बात पर निर्भर करता है कि माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो चुका है या नहीं। यदि माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो चुका है और

क्रेता दिवालिया घोषित हो जाता है, तो क्रेता के सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती को माल अपने कब्ज़े में लेने का अधिकार होगा, चाहे माल की सुपुर्दगी अभी क्रेता को नहीं दी गई है।

18.4 स्वामित्व हस्तांतरण सम्बन्धी नियम

आपने विक्रेता से क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित होने के समय को जानने का महत्व पढ़ा। अब अगला महत्वपूर्ण कार्य स्वामित्व हस्तांतरण के समय को ज्ञात करना है। स्वामित्व हस्तांतरण सम्बन्धी विभिन्न नियम, माल विक्रय अधिनियम की धारा 18 से 24 तक में दिए गये हैं। इस बारे में सामान्य नियम यह है कि क्रेता को माल का स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब ऐसा करने का पक्षकारों का इरादा हो (धारा 19(i))। इस प्रकार, स्वामित्व हस्तांतरित होने के समय का सारा मामला, पक्षकारों के इरादे पर छोड़ दिया गया है। विक्रेता से क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित करने के समय के बारे में पक्षकार स्वतन्त्र हैं कि वे जो चाहें तय कर सकते हैं। परन्तु कई बार अनुबन्ध से पक्षकारों के इरादे का स्पष्ट पता नहीं चलता। ऐसी स्थिति में, माल विक्रय अधिनियम की धारा 20 से 24 तक में निर्धारित नियमों के अनुसार इरादे का पता किया जाता है।

विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित होने के समय को जानने के लिए, माल को निम्नलिखित तीन वर्गों में बाँटा गया है :

i) विशिष्ट या निर्णीत माल;
ii) सामान्य अनिर्णीत माल; तथा
iii) पसन्द करने के लिए भेजा गया माल या 'खरीदो या वापस करो' के आधार पर भेजा गया माल।

अब हम प्रत्येक वर्ग से सम्बन्धित नियमों की चर्चा करते हैं।

18.4.1 विशिष्ट या निर्णीत माल की स्थिति में

विशिष्ट माल से आशय उस माल से है जिसे विक्रय अनुबन्ध करते समय निश्चित या पहचान लिया गया हो। अधिनियम की धारा 19(1) के अनुसार जब विशिष्ट या निर्णीत माल के विक्रय के लिए कोई अनुबन्ध किया जाता है तो क्रेता को माल का स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब पक्षकारों का हस्तांतरित करने का इरादा या इच्छा हो। इसमें आगे बताया गया है कि पक्षकारों के इरादे या इच्छा को जानने के लिए अनुबन्ध की शर्तों, पक्षकारों के आचरण तथा मामले की परिस्थितियों पर विचार करना होता है।

माल का स्वामित्व हस्तांतरित होने के विषय में पक्षकारों के इरादे को जानने के लिए, निम्नलिखित नियम लागू होते हैं :

सुपुर्दगी-योग्य विशिष्ट माल : जब सुपुर्दगी-योग्य स्थिति (deliverable state) वाले विशिष्ट माल का शर्त रहित विक्रय अनुबन्ध हो, तो अनुबन्ध करते ही क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। इस बारे में यह ध्यान रहे कि इस बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि माल की कीमत का भुगतान या सुपुर्दगी या दोनों ही बाद में किए जाने हैं (धारा 20)। इस धारा का विश्लेषण करने पर आप देखेंगे कि यदि माल विशिष्ट है, अनुबन्ध शर्तरहित है और माल सुपुर्दगी-योग्य स्थिति में है, तब अनुबन्ध करते ही माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। शर्तरहित अनुबन्ध से तात्पर्य ऐसे अनुबन्ध से है जिसमें माल के स्वामित्व के हस्तांतरण के विषय में कोई शर्त नहीं है। उदाहरण के लिए, A सुपुर्दगी योग्य विशिष्ट माल B को इस शर्त पर बेचता है कि माल का स्वामित्व B को केवल तभी हस्तांतरित होगा जब वह विनिमय पत्र स्वीकार कर ले। यह एक शर्तसहित अनुबन्ध है और यहाँ माल का स्वामित्व केवल तभी हस्तांतरित होगा जब इस शर्त को पूरा कर दिया जाए।

इस धारा में एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि माल सुपुर्दगी-योग्य दशा में होना चाहिए। अब प्रश्न यह उठता है कि माल को सुपुर्दगी-योग्य दशा में कब समझा जाता है? अधिनियम की धारा 2(3) के अनुसार माल सुपुर्दगी-योग्य स्थिति में तब माना जाता है जब वह ऐसी स्थिति में हो जिसमें अनुबन्ध के अधीन क्रेता उसकी सुपुर्दगी लेने के लिए बाध्य किया जा सके। सरल शब्दों में इसका यह अर्थ हुआ कि माल ऐसी स्थिति में है कि क्रेता माल को तभी, उसी समय, उसी हालत में ले जा सके। यह तभी सम्भव है जब माल एकदम तैयार है और विक्रेता को माल पर कोई कार्य करना शेष नहीं है।

उदाहरण

i) A ने B को अपनी कार 60,000 रुपये में बेचने का प्रस्ताव किया, इसकी कीमत 20 दिन बाद चुकाना तय हुआ। B ने प्रस्ताव को स्वीकार करके एक अनुबन्ध किया। अनुबन्ध करते ही कार का स्वामित्व B को हस्तांतरित हो गया, कीमत का भुगतान महत्वहीन है।

ii) A कुछ पुस्तकें एक पुस्तक विक्रेता B की दुकान में छाँटता है और इन पुस्तकों की कीमत अगले माह की पहली तारीख को अदा करने का वचन दिया, तथा अगले दिन A के घर पुस्तकों की सुपुर्दगी देने का वचन B ने दिया। दुकान में अचानक आग लग जाने से, A द्वारा छाँटी गई पुस्तकें जल कर नष्ट हो गईं। इस स्थिति में A कीमत अदा करने के लिए दायी है, क्योंकि अनुबंध करते ही उन पुस्तकों का स्वामित्व A को हस्तांतरित हो गया था। इस स्थिति में आप यह गौर करें कि यहाँ पर न तो कीमत का भुगतान किया गया है और न ही माल की सुपुर्दगी दी गई है, तब भी विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो गया।

आप यह भी नोट करें कि यदि धारा 20 में बताई गई किसी भी एक शर्त को पूरा नहीं किया जाता, तो अनुबन्ध करते ही क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं होता।

2) **विशिष्ट माल जो सुपुर्दगी-योग्य दशा में नहीं है :** एक अन्य स्थिति वह हो सकती है जब अनुबन्ध करते समय माल सुपुर्दगी-योग्य दशा में नहीं हो। सरल शब्दों, माल ऐसी दशा में है कि उसे सुपुर्दगी-योग्य दशा में लाने के लिए विक्रेता को अभी "कुछ" करना शेष है। उदाहरण के लिए जैसे माल को काटना, पैकिंग करना या सील करना, या उन्हें लादना या उसे पात्रों में भरना इत्यादि। ऐसी स्थिति में माल-विक्रय अधिनियम की धारा 21 के अनुसार, **जब विशिष्ट माल का विक्रय अनुबन्ध किया जाता है और विक्रेता माल को सुपुर्दगी-योग्य दशा में लाने के प्रयोजन से माल के प्रति कुछ करने के लिए आबद्ध है, तो माल का स्वामित्व तब तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक कि अपेक्षित कार्य नहीं हो जाता तथा क्रेता को उसकी सूचना नहीं मिल जाती।** इस नियम के अनुसार क्रेता को माल का स्वामित्व तब तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक कि माल को सुपुर्दगी-योग्य दशा में लाने के लिए आवश्यक कार्य न कर दिया जाए।

रग बनाम मिनेट के केस में, टंकी में भरे सारे तेल को बेचा गया तथा विक्रेता को वह तेल पीपों में भरवा कर क्रेता को सुपुर्दगी देनी थी। क्रेता की उपस्थिति में कुछ पीपे तो भर दिए जाते हैं परन्तु शेष भरने से पहले आग लग जाती है और सारा तेल नष्ट हो जाता है। निर्णय दिया गया कि पीपों में भरे जा चुके तेल की हानि क्रेता को सहन करनी होगी तथा शेष हानि विक्रेता सहन करेगा। इसका कारण यह था कि जो तेल पीपों में भर कर सुपुर्दगी-योग्य दशा में कर दिया गया था, उसका स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो चुका था। यहाँ पर यह गौर करें कि अनुबन्ध करने के समय क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ, बल्कि स्वामित्व तभी हस्तांतरित हुआ जब माल को सुपुर्दगी-योग्य दशा में कर दिया और क्रेता को सूचमा दे दी गई।

3) **सुपुर्दगी-योग्य स्थिति में विशिष्ट माल, जब कीमत निश्चित करने के लिए विक्रेता को कुछ करना है :** कभी-कभी माल सुपुर्दगी-योग्य स्थिति में तो है, परन्तु माल की कीमत निश्चित करने के लिए अभी विक्रेता को कुछ करना बाकी है। ऐसी स्थिति में क्रेता को माल का स्वामित्व तक हस्तांतरित नहीं होगा जब तक कि कीमत निश्चित करने के लिए विक्रेता ने वह कार्य न कर दिया हो। इस सम्बन्ध में अधिनियम की धारा 22 में प्रावधान है कि **जब सुपुर्दगी-योग्य विशिष्ट माल के विक्रय का अनुबन्ध किया जाता है, परन्तु माल की कीमत निश्चित करने के लिए विक्रेता को उसकी माप-तौल करना या परीक्षण करना आदि हो, तो माल का स्वामित्व क्रेता को तब तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक ऐसा कार्य नहीं कर लिया जाता और क्रेता को उसकी सूचना नहीं मिल जाती।** उदाहरण के लिए, A, B को एक गेहूँ का ढेर (heap) 250 रुपये प्रति क्विंटल की दर से बेचता है। B को बेचे गये गेहूँ की कीमत निश्चित करने के लिए A को गेहूँ को तौलना है। माल का स्वामित्व तभी हस्तांतरित होगा जब A ने गेहूँ को तौल लिया है और इसकी सूचना क्रेता को दे दी गई।

जागुरी बनाम फर्नेल के केस में, 289 गांठे बकरे की खालें बेची गईं, प्रत्येक गांठ में 60 नग होने थे। विक्रय से पहले माल की गिनती करना विक्रेता का कर्तव्य था। गिनती पूरी किए जाने से पहले, गांठे आग से जलकर नष्ट हो गईं। निर्णय दिया गया कि क्योंकि कीमत निश्चित करने के लिए जो कार्य (खालों की गिनती करना) विक्रेता को करना था, वह कार्य पूरा नहीं किया गया, अतः माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित नहीं हुआ, इसलिए यह हानि विक्रेता को सहन करनी पड़ेगी।

ापने ध्यान किया होगा कि यह नियम, धारा 21 में दिए गये नियम का विस्तार है। तथापि, यह मरण रखना चाहिए कि यदि क्रेता अपनी तसल्ली के लिए कुछ करता है (मापना-तोलना, गिनना ादि) तो यह धारा लागू नहीं होती है।

8.4.2 अनिर्णीत माल और भावी माल की स्थिति में

ामान्य नियम है कि जब तक माल को निर्णित नहीं कर लिया जाता तब तक क्रेता को माल का ामित्व हस्तांतरित नहीं होता (धारा 18)। उदाहरण के लिए, A अपने गोदाम में रखे हुए ,000 गेहूँ के बोरों में से 100 बोरी गेहूं B को बेचने का करार करता है। माल का स्वामित्व B े तब तक हस्तांतरित नहीं होगा जब तक 100 बोरियों को शेष माल से छांटकर अलग नहीं कर ाया जाता। अतः अनिर्णीत माल का स्वामित्व हस्तांतरित करने के लिए पहला चरण माल की र्णीत या निश्चित या पहचान करनी है। क्रेता को बेचे गये माल की पहचान करना ही माल को र्णीत करने की प्रक्रिया है। माल को निर्णीत किए जाने के बाद, अगला कदम क्रेता को उस माल ा शर्तरहित विनियोजन (appropriation) करना है।

ारा 23(1) में बताया गया है कि वर्णन द्वारा अनिर्णीत या भावी माल के विक्रय अनुबन्ध की शा में, क्रेता को माल का स्वामित्व तब हस्तांतरित होता है जब माल को अनुबन्ध के प्रति ार्तरहित विनियोजित कर लिया जाता है। 'विनियोजन' शब्द को अधिनियम में परिभाषित नहीं िया गया है। इसका अर्थ है कि कोई ऐसा कार्य प्रकट रूप से किया जाए जिससे अनुबन्ध के प्रति ाल को पहचानने व निश्चित करने का पक्षकारों का इरादा पता चले। विक्रेता और क्रेता की रस्पर सहमति से माल का विनियोजन किया जाता हैं। विनियोजन या तो क्रेता की सहमति से क्रेता द्वारा या विक्रेता की सहमति से क्रेता द्वारा किया जा सकता है। विक्रेता या क्रेता की हमति स्पष्ट या निहित हो सकती है तथा यह विनियोजन से पहले या बाद में दी जा सकती है। ब पक्षकारों की परस्पर सहमति से माल को एक बार विनियोजित कर लिया जाता है, तब उसे ता की सम्पति माना जाता है।

हां पर 'निर्णीत करने' तथा 'विनियोजित करने' में अन्तर जान लेना चाहिए। 'निर्णीत करने' का ार्य एक-पक्षीय कार्य है और सामान्यतः यह विक्रेता द्वारा अकेले ही किया जाता है, जबकि िनियोजन' के लिए पक्षकारों की परस्पर सहमति की आवश्यकता होती है। माल का उपयुक्त ात्रों में भरकर विनियोजित किया जाता है जैसे माल को बोरी में भरके या डब्बे में भरकर या तेल ा पीपों में भरकर। कभी-कभी विक्रेता माल को क्रेता तक पहुंचाने के लिए माल की सुपुर्दगी िसी वाहक या निक्षेपिती को कर देता है और माल के निपटारे के अधिकार को अपने पास ारक्षित नहीं करता, तो यह समझा जाता है कि विक्रेता ने अनुबन्ध के लिए माल को बिना किसी ार्त विनियोजित कर दिया है तथा माल का स्वामित्व तभी हस्तांतरित हो जाता है जब वाहक या क्षेपिती को माल दिया जाता है।

ल का विनियोजन, विक्रेता या क्रेता द्वारा, दूसरे पक्ष की सहमति से किया जा सकता है।

क्रेता द्वारा क्रेता की सहमति से विनियोजन : आमतौर से माल विक्रेता के कब्ज़े में होता है, तः वह क्रेता की सहमति से माल का विनियोजन करता है। ऐसी स्थिति में क्रेता को स्वामित्व वल तभी हस्तांतरित होगा जब वह इस प्रकार के विनियोजन के लिए अपनी सहमति दे देता है। ाहरण के लिए, A अपने 500 बोरियों के स्टॉक में से 10 बोरी चावल B को बेचने का करार रता है। A, B की सहमति से 10 बोरी अलग रख देता है, जैसे ही यह छांटने का कार्य किया ता है माल का स्वामित्व B को हस्तांतरित हो जाता है।

ाधिनियम की धारा 23(2) में प्रावधान है कि **जब अनुबन्ध के अनुसार विक्रेता माल को क्रेता क पहुंचाने के लिए माल की सुपुर्दगी किसी वाहक या निक्षेपिती (चाहे क्रेता ने उसका नाम ताया हो या नहीं) को कर देता है तथा माल के निपटारे के अधिकार को अपने लिए रक्षित नहीं करता, तो यह माना जाता है कि उसने अनुबन्ध के लिए माल का बिना शर्त नियोजन कर दिया है।** वाहक को माल की सुपुर्दगी करने के बाद, विक्रेता ने माल के निपटारे अपना अधिकार आरक्षित किया है या नहीं, यह तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है जो मामले की रिस्थितियों पर निर्भर करता है।

ब विक्रेता, रेलवे रसीद या लदान पत्र (bill of lading) स्वयं अपने नाम में लेता है तो यही ान्यता है कि विक्रेता ने माल के निपटारे का अधिकार अपने पास आरक्षित रखा है और ऐसी ाति में माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं होता। इसी प्रकार, यदि रेलवे रसीद या लदान पत्र ाा के नाम में ली जाती है परन्तु बैंक को इस हिदायत के साथ भेज दी जाती है कि वह मूल्य का

भुगतान प्राप्त करने या विनियम पत्र को स्वीकार करने के बाद ही उस क्रेता को सुपुर्द करे, तो माल का स्वामित्व क्रेता को तब तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक कि वह भुगतान न कर दे या विनिमय पत्र को स्वीकार न कर ले।

क्रेता द्वारा विक्रेता की सहमति से विनियोजन : जब माल पहले से ही क्रेता के कब्ज़े में है, जैसा कि उस स्थिति में होता है जब वह विक्रेता का गोदाम मालिक है, तब क्रेता द्वारा विक्रेता की सहमति से माल का विनियोजन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, A की 500 बोरी गेहूँ B के गोदाम में रखी हुई हैं। A 100 बोरी गेहूं B को बेचता है। क्योंकि माल B के कब्ज़े में ही है, वह A की सहमति से 100 बोरी गेहूं विनियोजित कर सकता है। इस स्थिति में, माल का विनियोजन करते ही स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।

उपर्युक्त से आपको यह भली-भाँति स्पष्ट हो गया होगा कि अनिर्णीत माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हो सकता। वह केवल विक्रय का करार मात्र होता है। जब माल को शर्तरहित निर्णीत कर लिया जाता है, केवल तभी वह विक्रय बनता है।

18.4.3 'पसन्द करने' (Approval) या 'विक्रय अथवा वापसी' (Sale or Return) पर भेजे गये माल की स्थिति में

जब माल पसन्द करने के लिए अथवा 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर भेजा जाता है, तो इसका अर्थ है कि यदि क्रेता माल से सन्तुष्ट नहीं है तो वह उस माल को वापस लौटा सकता है। अधिनियम की धारा 24 के अनुसार जब माल पसन्द आ जाने की शर्त पर या 'विक्रय अथवा वापसी' (sale or return) के आधार पर या ऐसी ही किन्हीं अन्य शर्तों पर क्रेता को सुपुर्द किया जाता है, तो उस माल का स्वामित्व क्रेता को निम्न परिस्थितियों में हस्तांतरित होता है : (क) जब वह माल पसन्द करने या स्वीकृति विक्रेता को बता देता है, या (ख) जब वह कोई ऐसा कार्य करता है जिससे यह प्रकट होता है कि उसने माल स्वीकार कर लिया है, या (ग) जब वह विक्रेता को अपनी सहमति या स्वीकृति या अस्वीकृति के बारे में बताए बिना माल को अपने पास रखे रहता है। आइए अब हम इनका विस्तार से वर्णन करते हैं।

क) **जब वह अपनी सहमति या स्वीकृति प्रकट करता है :** जब क्रेता माल को स्वीकार करके इसकी सूचना विक्रेता को दे देता है, तब माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो जाता है। उदाहरण के लिए, A, B को एक स्कूटर पसन्द करने के लिए सात दिन के लिए दिया। B, A को सूचित करता है कि उसे स्कूटर खरीदना मंज़ूर है, B द्वारा स्वीकृति दिए जाने पर B को स्वामित्व हस्तांतरित हो गया। यह स्पष्ट स्वीकृति का उदाहरण है।

ख) **जब वह सौदे को स्वीकार लेता है :** कई बार क्रेता स्पष्ट रूप से अपनी स्वीकृति नहीं देता परन्तु वह माल के सम्बन्ध में ऐसा कोई कार्य करता है जिससे यह प्रकट होता है कि उसने माल स्वीकार कर लिया है, तब इस स्वीकृति का कार्य करने पर क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। उदाहरण के लिए, A ने कुछ जेवर B को 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर दिया। B ने वह जेवर P के पास गिरवी रख दिया। निर्णय दिया गया कि P के पास जेवर गिरवी रखने से यह प्रकट हो गया कि B ने उन्हें स्वीकार कर लिया है और स्वामित्व B को हस्तांतरित हो गया। A, B से मूल्य वसूल कर सकता है, परन्तु उसे P के विरुद्ध कोई अधिकार, प्राप्त नहीं होगा।

ग) **जब वह माल वापस करने में भूल करता है :** जब क्रेता माल को स्वीकार या अस्वीकार करने की सूचना नहीं देता परन्तु माल को अस्वीकार किए बिना अपने कब्ज़े में रखे रहता है, तो क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। इस बात को हम निम्न दो शीर्षकों के अन्तर्गत स्पष्ट कर सकते हैं :

i) **यदि माल वापस करने के लिए समय नियत किया गया है :** यदि माल पसन्द करने अथवा 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर भेजा गया है तथा माल वापस करने का समय निर्धारित किया गया है, तब इस निर्धारित समय के व्यतीत होने पर स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। उदाहरण के लिए, A ने एक घोड़ा B को 'सात दिन के भीतर खरीदने या वापस करने' के आधार पर दिया। B ने सात दिन बीत जाने के बाद भी घोड़े को अपने ही पास रखे रखा, B को घोड़े का स्वामी हो गया माना जाएगा। परन्तु यदि B की किसी लापरवाही के बिना घोड़ा तीसरे ही दिन मर जाता है, तो B कीमत चुकाने के लिए दायी नहीं होगा क्योंकि अभी क्रेता को स्वामित्व ही हस्तांतरित नहीं हुआ है।

ii) **यदि माल वापस करने के लिए समय निर्धारित नहीं किया गया है :** जब माल पसन्द करने या 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर भेजा गया है और माल वापस करने के लिए कोई समय निर्धारित नहीं किया गया है, तब यदि क्रेता उचित समय के भीतर माल वापस नहीं करता तो उचित समय व्यतीत होने पर स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है। उचित समय क्या है, यह तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है जो प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए, A ने अपना स्कूटर B को पसन्द करने के लिए दिया। B तीन माह तक स्कूटर को अपने पास रखे रहा। B, A को कीमत चुकाने के लिए उत्तरदायी हो गया क्योंकि उचित समय व्यतीत होने पर B स्कूटर का स्वामी बन गया।

रन्तु आपको यह भी याद रखना चाहिए कि जब माल 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर इस र्त के साथ दिया जाता है कि कीमत का भुगतान करने पर ही स्वामित्व हस्तांतरित होगा, तब वामित्व उस समय तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक कि कीमत अदा न कर दिया जाए। दाहरण के लिए, A ने एक स्कूटर B को पसन्द करने के लिए इस शर्त पर दिया कि स्कूटर का वामित्व उस समय तक हस्तांतरित नहीं होगा जब तक कि विक्रेता को उसकी कीमत न प्राप्त हो ाए। कीमत का भुगतान किए बिना, B उस स्कूटर को P के पास गिरवी रख देता है, इस स्थिति क्योंकि B अभी स्कूटर का स्वामी नहीं हुआ है, A, P से स्कूटर वापस ले सकता है।

बोध प्रश्न क

1) माल-विक्रय अधिनियम में प्रयुक्त शब्द 'सम्पति' की परिभाषा कीजिए।

....

....

....

2) क्रेता को स्वामित्व कब हस्तांतरित होता है, यह जानने के कारणों को बताइए।

....

....

....

....

3) विक्रेता से क्रेता को विशिष्ट माल का स्वामित्व हस्तांतरित करने से सम्बन्धित क्या नियम हैं?

....

....

....

....

4) जब माल पसन्द करने या 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर दिया गया हो, तब क्रेता को स्वामित्व कब हस्तांतरित होता है?

....

....

....

....

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।

i) 'माल का स्वामित्व' तथा 'माल पर कब्ज़ा' शब्दों का अर्थ एक समान है।

ii) जोखिम स्वामित्व के साथ तभी जाती है जब माल की सुपुर्दगी की जा चुकी हो।

iii) केवल निर्णीत माल की दशा में ही स्वामित्व हस्तांतरित हो सकता है।

iv) विक्रेता माल की कीमत के लिए क्रेता के विरुद्ध दावा केवल तभी कर सकता है जब उसे माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो चुका हो।

v) सुपुर्दगी योग्य विशिष्ट माल के शर्तरहित विक्रय अनुबन्ध में, माल का स्वामित्व क्रेता को उस समय हस्तांतरित होता है जब क्रेता माल को स्वीकार कर लेता है।

vi) अनिर्णीत माल के विक्रय की स्थिति में, माल का स्वामित्व तभी हस्तांतरित हो जाता है जब अनुबन्ध किया जाता है।

vii) जब माल 'विक्रय अथवा वापसी' के आधार पर भेजा जाता है, तब स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब क्रेता उचित समय के बाद भी माल को अपने पास रखे रहता है।

viii) अनिर्णीत माल की स्थिति में, विक्रेता या क्रेता द्वारा माल का विनियोजन किया जा सकता है।

18.5 वाहक को सुपुर्दगी

'वाहक' शब्द से हमारा आशय ऐसी एजेंसी से है जिसे क्रेता तक माल पहुंचाने के लिए माल की सुपुर्दगी दी जाती है। रेलवे, जहाज़ी कम्पनी, सड़क परिवहन एजेंसी या हवाई जहाज, वाहक हो सकते हैं। वाहक को सुपुर्दगी (चाहे क्रेता ने उसका नाम बताया हो या नहीं) माल पर निपटारे के अधिकार को आरक्षित किए बिना, प्रथमदृष्ट्या क्रेता को सुपुर्दगी मानी जाती है। धारा 23(2) में आप पढ़ चुके हैं कि अनिर्णीत माल के विक्रय की स्थिति में जब माल किसी वाहक को सुपुर्द किया जाता है, तो इसे माल का विनियोजन समझा जाता है। जब बिना किसी शर्त के वाहक को माल सुपुर्द किया जाता है, तो इसे क्रेता को दी गई सुपुर्दगी माना जाता है।

माल-विक्रय अधिनियम की धारा 39(1) में बताया गया है कि जब विक्रय अनुबन्ध के अनुसरण में विक्रेता को यह प्राधिकार है या उससे यह अपेक्षित है कि वह क्रेता को माल भेजे, तब उस माल को क्रेता तक भेजने के प्रयोजन से जब वाहक को सुपुर्दगी दी जाती है, अथवा घाटपाल (wharfinger) को माल सुरक्षित रखने के लिए दिया जाता है, तो प्रथमदृष्ट्या उस माल की सुपुर्दगी क्रेता को दी गई समझी जाती है। यदि इस धारा को धारा 25(i) के साथ पढ़ा जाए तो हम यह कह सकते हैं कि जब विक्रेता माल पर निपटारे का अधिकार आरक्षित किए बिना वाहक को सुपुर्द करता है, तो माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो जाता है। इस स्थिति में वाहक को क्रेता का एजेंट माना जाता है। उदाहरण के लिए, दिल्ली निवासी A कुछ माल कलकत्ता निवासी B को बेचता है। A रेलवे द्वारा माल भेज देता है और रेलवे रसीद B के नाम में ली जाती है। इस स्थिति में जब रेलवे को माल सुपुर्द किया गया, तभी क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित हो गया।

परन्तु यह ध्यान रहे कि जब किसी विशिष्ट स्थान, जैसे क्रेता के गोदाम, पर माल की सुपुर्दगी देने का करार हुआ है, तब वाहक को दी गई सुपुर्दगी को क्रेता को की गई सुपुर्दगी नहीं माना जाता है।

इस सम्बन्ध में यह भी ध्यान रहे कि वाहक को माल की सुपुर्दगी दे देने मात्र से ही विक्रेता का कर्त्तव्य समाप्त नहीं हो जाता। धारा 39(2) में बताया गया है कि जब तक कि क्रेता द्वारा विक्रेता अन्यथा प्राधिकृत न हो, वह क्रेता की ओर से वाहक से या घाटपाल से ऐसा युक्तियुक्त अनुबन्ध करेगा, जो माल सुरक्षित ले जाने के लिए आवश्यक है। यह याद रखें कि यह अनुबन्ध क्रेता की ओर से किया जाना चाहिए। यदि विक्रेता ऐसी सावधानी नहीं बरतता (जो आवश्यक एवं युक्तियुक्त है) और माल मार्ग में खो या क्षतिग्रस्त हो जाता है तो क्रेता वाहक या घाटवाल को की गई माल की सुपुर्दगी को खुद को की गई सुपुर्दगी मानने से इन्कार कर सकता है या विक्रेता को हर्जाने के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है।

जब माल समुद्री मार्ग से भेजा जाता है तो माल का सामान्यतः बीमा कराया जाता है। ऐसी स्थिति में विक्रेता का यह कर्त्तव्य है कि वह क्रेता को माल भेजने की सूचना दे दे ताकि वह माल का बीमा समय पर करा सके। यदि विक्रेता इस प्रकार की सूचना नहीं देता तथा माल का बीमा नहीं कराया जाता, तो माल को विक्रेता के जोखिम पर माना जाएगा। क्रेता को सूचना देने का कर्त्तव्य केवल तभी उत्पन्न होता है जब क्रेता द्वारा माल का बीमा कराया जाना हो। CIF (लागत, बीमा तथा भाड़ा) अनुबन्धों में, विक्रय कीमत में बीमा शामिल है और माल का बीमा कराना विक्रेता का कर्त्तव्य है। परन्तु FOB (पोतपर्यंत निःशुल्क) अनबन्धों में, जब जहाज़ पर माल लदवा दिया जाता है तब विक्रेता का दायित्व समाप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में क्रेता को सूचना अवश्य दी जानी चाहिए ताकि वह माल का बीमा करा सके।

18.6 निपटारे के अधिकार का आरक्षण

निपटारे के अधिकार का आरक्षण (Reservation of Right of disposal) — जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है, इससे हमारा तात्पर्य है कि जब तक कुछ खास शर्तों का पालन नहीं कर दिया जाता

है, विक्रेता माल के निपटारे का अधिकार अपने पास सुरक्षित रख लेता है। इसलिए, जब वाहक या अन्य निक्षेपिती को माल सुपुर्द किया जाता है, तो विक्रेता माल के निपटारे के अधिकार को स्वयं अपने पास आरक्षित कर सकता है तथा ऐसी स्थिति में विक्रेता द्वारा लगाई शर्तों के पूरा किए जाने तक क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं होता। उदाहरण के लिए, A, B को कुछ माल इस शर्त के साथ बेचता है कि माल की सुपुर्दगी से पहले B कीमत का भुगतान करे। यहां कीमत के भुगतान की शर्त को माल की सुपुर्दगी के साथ जोड़कर विक्रेता ने माल पर निपटारे का अपना अधिकार आरक्षित कर लिया। माल का स्वामित्व B को उस समय तक हस्तांतरित नहीं होगा जब तक वह कीमत का भुगतान न करे दे।

उपर्युक्त से आपको यह स्पस्ट हो गया होगा कि जब विक्रेता ने माल के निपटारे के अधिकार को स्वयं अपने पास आरक्षित रखा है, तब वाहक को की गई माल की सुपुर्दगी से स्वामित्व हस्तांतरित नहीं होता। विक्रेता माल के निपटारे के अधिकार को स्पष्ट रूप से या विवक्षित रूप से अपने पास आरक्षित कर सकता है। जब विक्रेता स्पष्ट तौर से इस अधिकार का प्रयोग करता है तो अनुबन्ध करते समय या अनिर्णीत माल का विनियोजन करते समय वह ऐसा कर सकता है। निम्नलिखित दो परिस्थितियों में विक्रेता द्वारा यह अधिकार आरक्षित किया गया समझा जाता है :

अ) जब जहाज़ पर माल लाद दिया जाता है या रेलवे प्रशासन को माल ले जाने के लिए सौंप दिया जाता है, तथा जहाज़ी बिल्टी या रेलवे रसीद, जैसी भी स्थिति हो, विक्रेता या उसके एजेंट के आदेशानुसार दी जाए [धारा 23(2)]। ऐसी स्थिति में विक्रेता माल पर अपना अधिकार आरक्षित रखता है तथा वाहक से माल का कब्ज़ा मांग सकता है। उदाहरण के लिए, A ने B को कुछ माल इस शर्त पर बेचा कि माल रेल द्वारा भेजा जाएगा। रेलवे रसीद B के नाम में ली गई, परन्तु A ने इस रसीद को अपने एजेंट के पास भेज दिया। यात्रा के दौरान माल क्षतिग्रस्त हो गया। यह हानि A को सहन करनी होगी क्योंकि माल का स्वामित्व अभी क्रेता को हस्तांतरित नहीं हुआ था।

   परन्तु, यदि लदान-पत्र या रेलवे रसीद क्रेता के नाम पृष्ठांकित करके उसे भेज दी जाती है तो माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो जाता है क्योंकि उस दशा में क्रेता, वाहक से माल की सुपुर्दगी लेने का हकदार हो जाता है।

ब) जब माल का विक्रेता, क्रेता के नाम माल के मूल्य के लिए विनिमय पत्र लिखता है और लदान-पत्र या रेलवे रसीद के साथ क्रेता के पास उसकी स्वीकृति प्राप्त करने या बिल का भुगतान प्राप्त करने के लिए भेजता है, तो माल का स्वामित्व क्रेता को तब तक हस्तांतरित नहीं होता जब तक कि क्रेता विनिमय पत्र को स्वीकार न कर ले। यदि क्रेता विनिमय पत्र को स्वीकार नहीं करता तो उसे लदान-पत्र या रेलवे रसीद विक्रेता के पास वापस भेज देनी चाहिए। यदि क्रेता अनुचित रूप से लदान-पत्र या रेलवे रसीद को अपने पास रखे रहता है, तब भी क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं होता [धारा 25(3)]। ऐसी स्थिति में, जैसे ही क्रेता विनिमय पत्र को स्वीकार करता है, वैसे ही उसे स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।

जोखिम का हस्तांतरण

सामान्य नियम है कि 'जोखिम प्रथमदृष्ट्या स्वामित्व के साथ हस्तांतरित होती है' अर्थात् माल उस पक्ष की जोखिम पर होता है जिसके पास माल का स्वामित्व होता है। धारा 26 के अनुसार जब तक अन्यथा तय न कर लिया गया हो, जब तक क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हो जाता तब तक विक्रेता की जोखिम पर माल होता है, परन्तु जब माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो गया है, तब चाहे माल की सुपुर्दगी दी गई है या नहीं, माल क्रेता की जोखिम पर होता है। उदाहरण के लिए, एक नीलामी में A एक कीमती फूलदान के लिए 5,000 रुपये की बोली लगाता है। बोली को स्वीकृति की घोषणा करते समय जब नीलामकर्ता हथौड़ी मारता है तब वह फूलदान को लगती है और वह नष्ट हो जाता है। यह हानि विक्रेता को सहन करनी पड़ेगी, क्योंकि माल का स्वामित्व अभी क्रेता को हस्तांतरित नहीं हुआ था। यह सामान्य नियम कि जोखिम स्वामित्व के साथ रहता है, प्रथमदृष्टया नियम है जो निम्नलिखित दो अपवादों के अधीन है :

i) यह नियम उस स्थिति में लागू नहीं होता जब पक्षकारों ने इसके विपरीत करार किया हो। उदाहरण के लिए, यदि पक्षकारों ने यह तय किया है कि मार्ग के दौरान की अवधि में माल पर विक्रेता का स्वामित्व रहेगा, परन्तु जोखिम क्रेता का होगा।

ii) यह नियम उस स्थिति में भी लागू नहीं होगा जब क्रेता या विक्रेता, किसी के भी दोष के कारण सुपुर्दगी में देर हो गई हो। ऐसी स्थिति में माल उस पक्ष के जोखिम पर होता है जो दोषी है, और ऐसी हानि जो इस दोष के कारण हुई है उसे सहन करनी पड़ेगी। उदाहरण के

लिए, A ने 100 पीपे सेब का रस B को बेचने का अनुबन्ध किया। इसकी सुपुर्दगी फरवरी माह में की जानी थी। B ने रस की आंशिक सुपुर्दगी ले ली परन्तु शेष पीपों को स्वीकार करने में विलंब कर दिया। परिणामस्वरूप, वह रस पीने योग्य नहीं रहा। यह हानि क्रेता को सहन करनी पड़ेगी। इस सम्बन्ध में यह याद रखें कि विक्रेता या क्रेता के निक्षेपिती के रूप में माल रखने से उनके कर्त्तव्यों तथा दायित्वों पर इस सामान्य नियम का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

18.7 अस्वामियों द्वारा विक्रय (Sale By Non Owners)

अभी-अभी आपने विक्रेता से क्रेता को माल के स्वामित्व हस्तांतरित करने के बारे में नियम पढ़ें, इसमें आपने यह पढ़ा कि जब एक बार माल बेच दिया जाता है तो उस माल का स्वामी क्रेता हो जाता है। यहां पर हमने यह मान लिया है कि विक्रेता ही माल का स्वामी है। यदि बाद में यह पता चलता है कि माल का विक्रेता उसका स्वामी नहीं है, तब क्या होगा? इसके लिए हमारा उत्तर यह होगा कि क्योंकि विक्रेता माल का स्वामी नहीं है अतः क्रेता भी उसका स्वामी नहीं बनता।

स्वत्वाधिकार के हस्तांतरण के सम्बन्ध में सामान्य नियम यह है कि केवल माल का स्वामी ही माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित कर सकता है। सरल शब्दों में, ऐसा व्यक्ति जो उस माल का स्वामी नहीं है वह उस माल को बेचकर क्रेता को स्वामित्व का अधिकार नहीं सौंप सकता, चाहे क्रेता ने पूर्ण सद्भावना से तथा मूल्य के बदले उन्हें क्यों न प्राप्त किया हो। कोई भी व्यक्ति माल बेचकर उसके सम्बन्ध में श्रेष्ठ अधिकार नहीं दे सकता जब तक कि वह स्वयं उस माल का स्वामी नहीं है। इस सामान्य नियम को इस सूक्ति में इस प्रकार व्यक्त किया गया है– कोई भी व्यक्ति अपने से श्रेष्ठ अधिकार हस्तांतरित नहीं कर सकता, अर्थात् 'कोई भी व्यक्ति वह नहीं दे सकता जो स्वयं उसके पास नहीं हैं'। इसलिए यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे के माल का, स्वामी से अधिकार प्राप्त किए बिना, **कोई लेन देन करता है, तो क्रेता के प्रति इस सौदे का कोई मूल्य नहीं होगा। यदि विक्रेता का स्वत्वाधिकार दोषयुक्त है, तो क्रेता का अधिकार भी दोषयुक्त होता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि क्रेता, विक्रेता से अपना अधिकार प्राप्त करता है।**

उदाहरण

A को B की अंगूठी पड़ी मिलती है और वह C को यह अंगूठी बेच देता है। C पूर्ण सद्विश्वास में मूल्य के बदले अंगूठी खरीद लेता है। वास्तविक स्वामी B, C से अपनी अंगूठी प्राप्त कर सकता है, क्योंकि A का अंगूठी पर स्वत्वाधिकार नहीं था।

यह सामान्य नियम अधिनियम की धारा 27 में दिया गया है, इसमें बताया गया है कि **इस अधिनियम और किसी अन्य तत्समय प्रवृत कानून के प्रावधानों के अधीन जब माल किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा बेचा जाता है जो उसका स्वामी नहीं है और जिसे उसके वास्तविक स्वामी से उसे बेचने का अधिकार या सहमति नहीं मिली है, तो क्रेता को उस माल पर विक्रेता के स्वत्वाधिकार से श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त नहीं होता।** अतः, हम यह कह सकते हैं कि ऐसा व्यक्ति जो माल का स्वामी नहीं है, वह किसी तीसरे व्यक्ति को उसका स्वामी नहीं बना सकता।

परन्तु उपर्युक्त सामान्य नियम के कुछ **अपवाद** हैं जबकि विक्रेता स्वयं से श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार क्रेता को सौंप सकता है। ये अपवाद निम्नलिखित हैं:

1) **विबंध (estoppel) द्वारा स्वत्वाधिकार** : आप विबंध के नियम से पहले ही भली-भाँति परिचित हैं। इस नियम को विक्रय अनुबन्ध पर लागू करते हुए जब माल का स्वामी, अपने कथन या आचरण से क्रेता को यह विश्वास दिलाता है कि विक्रेता के माल बेचने का अधिकार प्राप्त है, तो वह बाद में विक्रेता के माल बेचने के अधिकार को नकार नहीं सकता। उदाहरण के लिए, A, C की उपस्थिति में B से कहता है कि वह (A) माल का स्वामी है और C जो माल का वास्तविक स्वामी है, इस कथन का खंडन नहीं करता। B, A से माल खरीद लेता है। इस स्थिति में B को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होगा। इस उदाहरण में वास्तविक स्वामी C यदि A के विक्रय करने के अधिकार को नकारना चाहता है, तो उसे (C) ऐसा करने से रोका जा सकता है।

2) **व्यापारिक एजेंट (merchantile agent) द्वारा विक्रय** : जब माल के वास्तविक स्वामी की सहमति से माल या माल के स्वत्वाधिकार सम्बन्धी दस्तावेज़ किसी व्यापारिक एजेंट के कब्ज़े में हैं और व्यापार के सामान्य अनुक्रम में काम करते हुए वह उस माल को बेच देता है तो

क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होते हैं, बशर्ते उसने (क्रेता) पूर्ण सद्विश्वास में तथा मूल्य के बदले उन्हें खरीदा हो। धारा 2(9) में व्यापारिक एजेंट की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, **व्यापारिक एजेंट से तात्पर्य एक ऐसे एजेंट से है जिसे व्यापार के सामान्य अनुक्रम में माल बेचने, या विक्रय के प्रयोजनार्थ माल को परेषित करने, या माल को खरीदने या माल की जमानत पर धन उधार लेना या प्राधिकार होता है।** व्यापारिक एजेंट द्वारा विक्रय किए जाने की स्थिति में क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार केवल तभी मिलता है जब निम्नलिखित शर्तें पूरी कर दी जाती हैं:

अ) माल ऐसे व्यापारिक एजेंट द्वारा बेचा जाता है जो माल के वास्तविक स्वामी की सहमति से माल या माल के स्वत्वाधिकार सम्बन्धी दस्तावेज़ों को अपने कब्ज़े में रखे हुए है;
ब) एजेंट व्यापार के सामान्य अनुक्रम में व्यापारिक एजेंट की हैसियत से माल बेचता है; तथा
स) क्रेता ने पूर्ण सद्विश्वास से कार्य किया हो अर्थात् क्रेता को इस बात की कोई जानकारी नहीं होनी चाहिए कि एजेंट को माल बेचने का प्राधिकार नहीं है।

फोक्स बनाम किंग के केस में, कार के स्वामी F ने अपनी कार एजेंट A को विक्रय के लिए इस हिदायत के साथ सौंपी कि वह इसे बताई गई कीमत से कम पर न बेचे। परन्तु A ने B को वह कार बताई गई कीमत से कम पर बेच दी तथा रुपये गबन कर लिये। B ने पूर्ण सद्विश्वास के साथ कार खरीदी थी। निर्णय दिया गया कि B को कार पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त हुआ था तथा कार का असली स्वामी F, B से कार वापस प्राप्त नहीं कर सकता।

उपर्युक्त विवरण से यह तो आपको स्पष्ट हो गया होगा कि जब क्रेता पूर्ण सद्विश्वास के साथ कार्य नहीं करता या जब क्रेता को यह मालूम है कि एजेंट को विक्रय करने का अधिकार नहीं है, तब यह नियम लागू नहीं होता है। निर्दोष क्रेताओं के हितों की रक्षा के लिए यह नियम बनाया गया है।

3) **संयुक्त स्वामियों (co-owners) में से किसी एक के द्वारा विक्रय :** अधिनियम की धारा 28 के अनुसार, जब अन्य सब सह स्वामियों की अनुमति से माल किसी एक संयुक्त स्वामी के कब्ज़े में है, और वह उस माल को किसी ऐसे व्यक्ति को बेच देता है जो उन्हें पूर्ण सद्विश्वास के साथ खरीदता है तथा जिसे विक्रय अनुबन्ध के समय विक्रेता के अधिकार के अभाव की सूचना नहीं है, तो क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होते हैं। यदि इन शर्तों को पूरा किया जाता है तो क्रेता को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है। नियम तो यह है कि एक संयुक्त स्वामी अपने हिस्से को ही बेच सकता है। परन्तु यदि अन्य सह-स्वामियों की सहमति से सारा माल एकमात्र उसके कब्ज़े में है और वह पूर्ण सद्विश्वास के साथ माल खरीदता है, तो क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए, A,B और C कुछ फर्नीचर के संयुक्त स्वामी हैं। B और C की सहमति से फर्नीचर A के कब्ज़े में है। A फर्नीचर P को बेच देता है जो पूर्ण सद्विश्वास के साथ तथा जिसे A के अधिकार के अभाव की सूचना नहीं है, उसे खरीद लेता है। P को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है।

यहां यह ध्यान रखें कि यह अपवाद केवल उन्हीं परिस्थितियों में लागू होता है जब अन्य सह-स्वामियों की सहमति से माल किसी एक संयुक्त स्वामी के कब्ज़े में है।

) **व्यर्थनीय अनुबन्ध के अधीन माल पर कब्ज़ा रखने वाले व्यक्ति द्वारा विक्रय :** अधिनियम की धारा 29 के अनुसार जब व्यर्थनीय अनुबन्ध के अधीन विक्रेता के कब्ज़े में माल है, और वह उस अनुबन्ध को रद्द किए जाने से पहले ही किसी सद्भावपूर्ण क्रेता को माल बेच देता है, तो क्रेता को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है। यह अपवाद केवल उसी दशा में लागू होता है जब विक्रेता के पास व्यर्थनीय अनुबन्ध के अधीन माल कब्ज़े में हो (अनुबन्ध अधिनियम की धारा 19 या 19A के अधीन) अर्थात् जब अनुबन्ध बल प्रयोग, अनुचित प्रभाव, मिथ्यावर्णन या कपट के आधार पर व्यर्थ किया जा सके। इस अपवाद को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि :

अ) व्यर्थनीय अनुबन्ध के अधीन विक्रेता के कब्ज़े में माल हो;
ब) अनुबन्ध रद्द किए जाने से पहले ही माल बेच दिया गया हो; तथा
स) क्रेता ने पूर्ण सद्विश्वास के साथ तथा बेचने के अधिकार के अभाव की जानकारी के बिना माल खरीदा हो।

प्रकार यदि किसी व्यर्थ अनुबन्ध के अधीन विक्रेता के कब्ज़े में माल है, तब निर्दोष क्रेता को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त नहीं होगा।

उदाहरण, A कपट का प्रयोग करके एक जौहरी B से एक नैकलेस प्राप्त कर लेता है। यह अनुबन्ध B की इच्छा पर व्यर्थनीय है। परन्तु B द्वारा अनुबन्ध रद्द किए जाने से पहले, A वह नैकलेस C को बेच देता है और वह पूर्ण सद्‌विश्वास के साथ A के दोषपूर्ण स्वत्वाधिकार की जानकारी के बिना खरीद लेता है। C को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होगा।

5) **विक्रय के बाद माल पर कब्ज़ा रखने वाले विक्रेता द्वारा विक्रय** : कई बार क्रेता माल खरीदने के पश्चात् उन्हें विक्रेता के कब्ज़े में ही छोड़ देता है। अधिनियम की धारा 30(1) में प्रावधान है कि यदि कोई विक्रेता माल बेच देने के बाद माल पर, या उसके स्वत्वाधिकार सम्बन्धी दस्तावेज़ों पर अपना कब्ज़ा रखता है और वह उसी माल को फिर से बेच देता है तो क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है बशर्ते क्रेता ने पूर्ण सद्‌विश्वास के साथ तथा पूर्ववर्ती विक्रय की जानकारी के बिना उसे खरीदा हो। उदाहरण के लिए, A, B से कुछ माल खरीदता है परन्तु अभी उसे B के ही कब्ज़े में छोड़ देता है। इसी दौरान B उसी माल को C को बेच देता है जो पूर्ण सद्‌विश्वास में तथा पूर्ववर्ती विक्रय की जानकारी के बिना उन्हें खरीद लेता है। C को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होगा।

इस धारा को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि विक्रेता के कब्ज़े में माल एक विक्रेता की हैसियत से ही होना चाहिए, किसी अन्य हैसियत से नहीं। अतः यदि प्रथम विक्रय पूर्ण हो गया था और विक्रेता किसी विशेष प्रयोजन के लिए माल पर फिर कब्ज़ा प्राप्त कर लेता है और वह उसी माल को फिर से बेच देता है, तब क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त नहीं होगा चाहे उसने कितने ही सद्‌विश्वास के साथ माल क्यों न खरीदा हो।

उदाहरण

A ने एक हाथघड़ी B को बेची तथा B को घड़ी सुपुर्द कर दी गई। बाद में, कुछ मरम्मत के लिए घड़ी B ने A को फिर से दी। A ने वही घड़ी C को बेच दी और उसने पूर्ण सद्‌विश्वास के साथ उसे खरीद लिया। इस दशा में C को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त नहीं होगा क्योंकि A के कब्ज़े में माल विक्रेता की हैसियत से नहीं था बल्कि निक्षेपिती (bailee) की हैसियत से था।

अतः इस अपवाद को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि विक्रेता के कब्ज़े में माल विक्रेता की हैसियत से होना चाहिए किसी निक्षेपिती या किराए पर लेने वाले व्यक्ति की हैसियत से नहीं।

6) **विक्रय के बाद माल पर कब्ज़ा रखने वाले क्रेता द्वारा विक्रय** : धारा 30(2) ऐसे मामलों से संबंधित है जहां माल बेचा गया है या 'विक्रय का करार' किया गया है और माल ऐसे क्रेता के कब्ज़े में है जिसे स्वत्वाधिकार हस्तांतरित नहीं हुआ है। यदि माल का ऐसा क्रेता उसी माल को किसी नये क्रेता को बेच देता है जो उसे पूर्ण सद्‌विश्वास के साथ तथा पहले विक्रेता के माल पर अधिकार की जानकारी के बिना खरीद लेता है, तो दूसरे क्रेता को माल पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है। इस नियम को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि पहले क्रेता ने मूल विक्रेता की सहमति से माल पर या उसके स्वत्वाधिकार सम्बन्धी दस्तावेज़ों पर कब्ज़ा प्राप्त किया है। उदाहरण के लिए, A एक स्कूटर B से किस्त पद्धति पर खरीदता है। यह करार हुआ कि जब तक अन्तिम किस्त नहीं चुका दी जाती, B स्कूटर का स्वामी रहेगा। अन्तिम किस्त चुकाने से पहले A, C को स्कूटर बेच देता है। C सद्‌विश्वास में तथा A और B के मध्य हुए करार की जानकारी के बिना, स्कूटर खरीद लेता है। C को स्कूटर पर श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होगा।

ध्यान रखें कि यह अपवाद केवल उन्हीं परिस्थितियों में लागू होता है जब माल या स्वत्वाधिकार संबंधी दस्तावेज़ क्रेता के कब्ज़े में हैं।

7) **अदत्त विक्रेता द्वारा विक्रय** : धारा 54(3) में बताया गया है कि जब कोई अदत्त विक्रेता माल पर पूर्वाधिकार या मार्ग में रोकने के अपने अधिकार का प्रयोग करके उस माल पर कब्ज़ा प्राप्त कर लेता है, और यदि वह ऐसे माल का पुनर्विक्रय करता है तो परवर्ती (subsequent) क्रेता को मूल क्रेता से भी श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है (इकाई 19 में विस्तार से वर्णन किया गया है)।

8) **माल पाने वाले व्यक्ति द्वारा विक्रय** : अनुबन्ध अधिनियम की धारा 169 के अनुसार कुछ विशेष परिस्थितियों में माल पाने वाले व्यक्ति को माल बेचने का अधिकार होता है तथा उस दशा में क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होता है। माल पाने वाला व्यक्ति उस माल को निम्न परिस्थितियों में बेच सकता है :

अ) यदि स्वामी को उचित खोज के बाद भी न ढूढ़ा जा सके; या

ब) उसे पाने पर, वह पाने वाले के न्यायोचित व्ययों को चुकाने से मना कर दे; या
स) यदि माल नाशवान प्रकृति का है या उसके मूल्य का बड़ा भाग घट जाने का भय हो; या
द) यदि माल पाने वाले व्यक्ति के माल से संबंधित खर्चे, माल के मूल्य के दो-तिहाई के बराबर हों।

9) **गिरवीग्राही द्वारा विक्रय :** यदि गिरवीकर्ता ऋण चुकाने या वचन के निष्पादन के लिए निर्धारित समय पर चूक करता है तो गिरवीग्राही को अधिकार है कि वह गिरवीकर्ता को उचित सूचना देकर माल बेच सकता है। ऐसी स्थिति में, यद्यपि गिरवीग्राही उस माल का स्वामी नहीं है परन्तु फिर भी वह क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्रदान कर सकता है।

10) **सरकारी रिसीवर या सरकारी समनुदेशिती द्वारा विक्रय :** दिवालिया व्यक्ति की सम्पत्ति को बेचने के लिए न्यायालय द्वारा सरकारी रिसीवर या सरकारी समनुदेशिती नियुक्त किए जाते हैं। यद्यपि वे सम्पत्ति के स्वामी नहीं होते परन्तु वे उस सम्पत्ति के क्रेताओं को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न ख

1) वाहक को दी गई माल की सुपुर्दगी से क्या स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है?

....

....

....

2) निपटारे के अधिकार के आरक्षण से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

....

3) वे परिस्थितियां बताइए जबकि एक अस्वामी भी माल बेच सकता है?

....

....

....

....

4) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।
   i) वाहक को दी गई माल की सुपुर्दगी, क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित करने के बराबर है।
   ii) जब विक्रेता ने माल पर निपटारे का अधिकार आरक्षित किया हो तब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।
   iii) जब विक्रेता रेलवे रसीद स्वयं अपने नाम में लेता है, तो यह कहा जाता है कि उसने निपटारे के अधिकार को आरक्षित कर लिया।
   iv) जब माल के स्वत्वाधिकार से संबंधित दस्तावेज़ क्रेता के नाम पृष्ठांकित किए जाते हैं, तब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।
   v) जोखिम सदा स्वामित्व के साथ रहती है, चाहे माल की सुपुर्दगी दी गई है या नहीं अथवा कीमत का भुगतान हुआ है या नहीं।
   vi) अस्वामी द्वारा विक्रय से क्रेता माल का सम्पूर्ण स्वामी नहीं बन जाता।
   vii) व्यर्थ अनुबन्ध के अधीन माल पर कब्ज़ा रखने वाला व्यक्ति सद्विश्वासी क्रेता को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्रदान कर सकता है।
   viii) अन्य संयुक्त सह स्वामियों की सहमति से माल को कब्ज़े में रखने वाला एक संयुक्त स्वामी वैध विक्रय अनुबन्ध कर सकता है

18.8 सुपुर्दगी किसे कहते हैं?

आप विक्रय अनुबन्ध बनाने की प्रक्रिया तथा विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित करने के बारे में पढ़ चुके हैं। क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित करने के अतिरिक्त, विक्रेता का

कर्त्तव्य है कि वह माल की सुपुर्दगी दे। आइए अब हम सुपुर्दगी का अर्थ तथा इसके विभिन्न प्रकारों का अध्ययन करते हैं।

अधिनियम में 'सुपुर्दगी' शब्द की परिभाषा इस प्रकार की गई है, **'एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को माल के कब्ज़े का स्वेच्छा से हस्तांतरण'** (धारा 2(2))। यदि माल का कब्ज़ा स्वेच्छा से हस्तांतरित नहीं किया जाता, अर्थात् यदि माल का कब्ज़ा बलपूर्वक या कपट या चोरी द्वारा प्राप्त किया जाता है, तो इसे विशुद्ध अर्थ में सुपुर्दगी नहीं कह सकते। यदि B, A से माल चुरा लेता है, तो यद्यपि माल B के कब्ज़े में आ गया है परन्तु इसे A से B को सुपुर्दगी नहीं कह सकते।

विक्रय किए गये माल की सुपुर्दगी ऐसा कोई कार्य करके की जा सकती है जिसके बारे में दोनों पक्षकारों में करार हो कि वह सुपुर्दगी मानी जाएगी अथवा जिसका परिणाम माल को क्रेता अथवा उसकी ओर से धारित करने के लिए प्राधिकृत व्यक्ति के कब्ज़े में देना हो (धारा 33)।

18.8.1 सुपुर्दगी के प्रकार

सुपुर्दगी तीन प्रकार की हो सकती है, जैसे, (1) वास्तविक, (2) सांकेतिक या प्रतीकात्मक, (3) प्रलक्षित।

1) **वास्तविक सुपुर्दगी (Actual Delivery) :** इस स्थिति में माल यथार्थ रूप से क्रेता या उसके प्राधिकृत एजेंट को सौंपा जाता है। उदाहरण के लिए A, B को एक स्कूटर बेचता है तथा B को इसकी सुपुर्दगी दे देता है तो यह माल की वास्तविक सुपुर्दगी है।

2) **सांकेतिक सुपुर्दगी (Symbolic Delivery) :** ऐसी स्थिति में जब माल अधिक मात्रा में है या बहुत भारी है और क्रेता को उसकी वास्तविक सुपुर्दगी देना सम्भव नहीं है, तब कोई ऐसी प्रतीकात्मक चीज़ क्रेता को सौंपी जाती है जिससे वह माल पर वास्तविक अधिकार प्राप्त कर लेता है। उदाहरण के लिए, जिस गोदाम में माल रखा हुआ है, उसकी चाभी क्रेता को दे कर या रेलवे रशीद या लदान-पत्र क्रेता के नाम हस्तांतरित करके सांकेतिक या प्रतीकात्मक सुपुर्दगी की जा सकती है। इस स्थिति में यद्यपि माल के कब्ज़े में कोई परिवर्तन नहीं होता, परन्तु इसे सुपुर्दगी माना जाता है।

3) **प्रलक्षित या रचनात्मक सुपुर्दगी (Constructive Delivery) :** इस स्थिति में न तो वास्तविक सुपुर्दगी दी जाती है और न ही सांकेतिक सुपुर्दगी। जब कोई व्यक्ति जिसके कब्ज़े में विक्रेता का माल है, उस माल को क्रेता के लिए अपने पास रखने की अभिस्वीकृति करता है, तो इसे प्रलक्षित या रचनात्मक सुपुर्दगी कहते हैं। उदाहरण के लिए, A, C के गोदाम में रखा हुआ 100 बोरी गेहूँ B को बेचता है। A, C को आदेश देता है कि वह गेहूँ B को सौंप दे। C इन 100 बोरों को B की ओर से रखने की अभिस्वीकृति देता है तथा अपनी पुस्तकों में आवश्यक प्रविष्टि भी कर लेता है। इस स्थिति में A से B को माल की प्रलक्षित सुपुर्दगी हो गई कही जाती है।

18.8.2 माल की सुपुर्दगी सम्बन्धी नियम

सुपुर्दगी का अर्थ एवं विभिन्न प्रकारों का अध्ययन करने के पश्चात्, आइए अब हम सुपुर्दगी से सम्बन्धित नियमों का अध्ययन करते हैं। ये नियम निम्नलिखित हैं :

1) माल की सुपुर्दगी उपर्युक्त वर्णित किसी भी प्रकार से दी जा सकती है। महत्वपूर्ण बात जो याद रखनी चाहिए वह है कि इसका परिणाम माल को क्रेता या उसके प्राधिकृत एजेंट के कब्ज़े में देना है।

2) **सुपुर्दगी तथा भुगतान समवर्ती शर्तें हैं :** जब तक कोई अन्यथा करार न हुआ हो, माल की सुपुर्दगी और उसकी कीमत का भुगतान समवर्ती शर्तें होती हैं। विक्रेता, क्रेता को माल का कब्ज़ा देने के लिए तैयार और इच्छुक होना चाहिए तथा क्रेता कीमत का भुगतान करने के लिए तैयार एवं इच्छुक होना चाहिए (धारा 32)।

3) **आंशिक सुपुर्दगी का प्रभाव :** जब बहुत अधिक मात्रा में माल की सुपुर्दगी करनी हो तब सुपुर्दगी की प्रक्रिया के दौरान जब सम्पूर्ण माल देने के उद्देश्य से आंशिक सुपुर्दगी दी जाती है, तब आंशिक सुपुर्दगी होते ही सम्पूर्ण माल की सुपुर्दगी हो गई मान ली जाती है। परन्तु, जब माल की आंशिक सुपुर्दगी उसे सम्पूर्ण माल से अलग करने के इरादे से की जाती है, तो इसे सम्पूर्ण माल की सुपुर्दगी नहीं माना जाता (धारा 34)। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखें कि 'आंशिक सुपुर्दगी' को 'किस्त में सुपुर्दगी' नहीं समझना चाहिए, ये अलग-अलग हैं।

4) **सुपुर्दगी के लिए क्रेता आवेदन करे :** जब तक कोई विपरीत अनुबन्ध न हो, विक्रेता तब तक माल की सुपुर्दगी देने के लिए बाध्य नहीं है जब तक कि क्रेता सुपुर्दगी के लिए आवेदन न

करे (धारा 35)। यदि विक्रेता अनुबन्ध करने के बाद माल को प्राप्त करता है तब विक्रेता का कर्त्तव्य है कि वह माल प्राप्त करने की सूचना क्रेता को दे दे। तब भी क्रेता को सुपुर्दगी के लिए आवेदन करना चाहिए। यदि क्रेता सुपुर्दगी के लिए आवेदन नहीं करता तो वह विक्रेता के विरुद्ध कार्यवाही करने का हकदार नहीं होता।

5) **सुपुर्दगी का स्थान :** प्रायः माल की सुपुर्दगी देने का स्थान पक्षकारों द्वारा परस्पर तय कर लिया जाता है। जब सुपुर्दगी का स्थान तय कर लिया गया हो तो माल की सुपुर्दगी उसी निर्धारित स्थान पर, किसी कार्य दिवस को, कारोबार के समय की जानी चाहिए। परन्तु यदि इस बारे में कुछ विशिष्ट तय न किया गया हो, तब :
   अ) माल की सुपुर्दगी उस स्थान पर की जानी चाहिए जहाँ वह बिक्री करते समय था,
   ब) विक्रय के करार की स्थिति में माल की सुपुर्दगी उस स्थान पर की जानी चाहिए जहाँ वह विक्रय का करार करने के समय था,
   स) यदि विक्रय का करार करते समय माल विद्यमान नहीं है, तब माल की सुपुर्दगी उस स्थान पर की जानी चाहिए जहाँ उसका निर्माण या उत्पादन किया जाता है (धारा 36(1))।

6) **सुपुर्दगी का समय :** यदि विक्रय अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार विक्रेता क्रेता को माल भेजने के लिए आबद्ध है, परन्तु उसे भेजने के लिए कोई समय नियत नहीं किया गया है, तब विक्रेता उसे उचित समय के भीतर भेजने के लिए आबद्ध होता है (धारा 36(2))। उचित समय क्या है, यह एक तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है और प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

7) **सुपुर्दगी का ढंग :** जब विक्रय के समय माल किसी तीसरे व्यक्ति के कब्ज़े में है, तो विक्रेता से क्रेता को उसकी सुपुर्दगी तब तक नहीं होती जब तक ऐसा तीसरा व्यक्ति क्रेता को यह अभिस्वीकृति नहीं देता कि उसने क्रेता की ओर से माल अपने पास रख रखा है (धारा 36(3))।

8) **सुपुर्दगी का व्यय :** जब तक कोई अन्यथा करार न हो, माल को सुपुर्दगी योग्य स्थिति में लाने के समस्त व्यय तथा सुपुर्दगी देने के व्यय विक्रेता को सहन करने होते हैं (धारा 36(5))।

9) **गलत मात्रा की सुपुर्दगी :** गलत मात्रा में सुपुर्दगी 'कम मात्रा में सुपुर्दगी', 'अधिक मात्रा में सुपुर्दगी' अथवा 'मिश्रित सुपुर्दगी' हो सकती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं, परन्तु ये नियम व्यापारिक प्रथा, विशेष करार या पक्षकारों के पारस्परिक व्यवहार के अधीन हैं।
   अ) **कम मात्रा में सुपुर्दगी :** जब विक्रेता विक्रय अनुबन्ध में वर्णित मात्रा से कम माल की सुपुर्दगी देता है, तो क्रेता इसे अस्वीकार कर सकता है। परन्तु यदि क्रेता सुपुर्द किए गये माल को स्वीकार करता है, तो स्वीकार किए गये माल का अनुबन्धित मूल्य का भुगतान करना होगा (धारा 37(1))। कम मात्रा में माल की सुपुर्दगी स्वीकार करने से क्रेता का विक्रेता से हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार समाप्त नहीं हो जाता।
   ब) **अधिक मात्रा में सुपुर्दगी :** जब विक्रेता अनुबन्ध में वर्णित मात्रा से अधिक माल की सुपुर्दगी देता है, तो क्रेता को विकल्प प्राप्त है–
      i) अनुबन्धित मात्रा को स्वीकार करके आधिक्य को अस्वीकार कर सकता है, या
      ii) सम्पूर्ण माल को स्वीकार कर सकता है, इस स्थिति में वह सम्पूर्ण माल का अनुबन्धित दर से भुगतान करने के लिए बाध्य होगा, या
      iii) सम्पूर्ण माल को अस्वीकार कर सकता है (धारा 37(2))।

उदाहरण

A ने 100 क्विंटल चावल 1,000 रुपये प्रति क्विंटल की दर से बेचने का करार किया। A 1,050 क्विंटल की सुपुर्दगी देता है। B को अधिकार हैं कि वह सारे माल को अस्वीकार कर दे, या 1,000 क्विंटल को स्वीकार करके शेष माल लौटा दे, या सम्पूर्ण माल को स्वीकार कर ले तथा अनुबन्धित मूल्य दर से उसका भुगतान करे।

   स) **मिश्रित सुपुर्दगी :** यदि विक्रेता अनुबन्ध में वर्णित माल के साथ अन्य प्रकार का माल मिलाकर क्रेता को सुपुर्दगी देता है, तो क्रेता अनुबन्ध में वर्णित माल को स्वीकार करके शेष को अस्वीकार कर सकता है अथवा सम्पूर्ण माल को अस्वीकार कर सकता है (धारा 37(3))।

उदाहरण

A ने B को 100 क्विंटल गेहूँ बेचने का करार किया। A ने 100 क्विंटल गेहूँ तथा 10 क्विंटल चावल भेजा। B सम्पूर्ण माल को अस्वीकार कर सकता है अथवा 100 क्विंटल गेहूँ को स्वीकार करके चावल को अस्वीकार कर सकता है।

आपने ध्यान दिया होगा कि जब गलत मात्रा में माल की सुपुर्दगी की जाती है तो क्रेता का सम्पूर्ण माल अस्वीकार करने का विकल्प प्राप्त है। यदि क्रेता ऐसा करता है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि अनुबन्ध को रद्द कर दिया गया। क्रेता द्वारा माल को अस्वीकार कर दिए जाने पर भी विक्रेता को अनुबन्धित माल की फिर से सुपुर्दगी देने का अधिकार प्राप्त है, और तब क्रेता उसे स्वीकार करने के लिए आबद्ध होता है।

10) **किश्तों में सुपुर्दगी :** किसी विपरीत करार के अभाव में, क्रेता को माल की सुपुर्दगी किश्तों में लेने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता (धारा 38(1))। उदाहरण के लिए, A 100 क्विंटल गेहूँ B को 1 अप्रैल को सुपुर्द करने का करार करता है। परन्तु अप्रैल में A केवल 80 क्विंटल ही दे पाता है और शेष 20 क्विंटल मई के पहले सप्ताह में देता है। B पूरे 100 क्विंटल को अस्वीकार करने का हकदार है।

    कई बार किश्तों में माल की सुपुर्दगी देने का करार किया जा सकता है और प्रत्येक किश्त का मूल्य अलग-अलग चुकाया जाना हो सकता है। ऐसी स्थिति में समस्या तब उत्पन्न होती है जब विक्रेता या क्रेता द्वारा अनुबन्ध भंग किया जाता है। ऐसी स्थिति में यह एक तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है कि क्या इसे सम्पूर्ण अनुबन्ध का भंग माना जाए या केवल एक किश्त का भंग माना जाए जिसके लिए पक्ष हर्जाने की माँग करे तथा शेष किश्तों की यथासमय सुपुर्दगी दी जाए और उन्हें स्वीकार किया जाए।

11) **वाहक या घाटपाल को सुपुर्दगी :** धारा 39(1) के अनुसार, जब विक्रय अनुबन्ध के अनुसार विक्रेता क्रेता के पास माल भेजने को प्राधिकृत किया गया है या कहा गया है तो क्रेता के पास माल पहुँचाने के लिए किसी वाहक को की गई माल की सुपुर्दगी, या सुरक्षा के लिए किसी घाटपाल को की गई माल की सुपुर्दगी, प्रथमदृष्ट्या क्रेता को की गई सुपुर्दगी मानी जाती है।

    विक्रेता का यह कर्त्तव्य है कि वह वाहक या घाटपाल से माल को क्रेता तक सुरक्षित पहुँचाने या सुरक्षित रखने के लिए उचित अनुबन्ध करे। यदि विक्रेता ऐसा नहीं करता है और माल गुम या क्षतिग्रस्त हो जाता है तो क्रेता वाहक या घाटपाल को की गई सुपुर्दगी को स्वयं को की गई सुपुर्दगी मानने से इन्कार कर सकता है या वह विक्रेता को हर्जाने के लिए उत्तरदायी ठहरा सकता है (धारा 39(2))।

18.8.3 सुपुर्दगी की स्वीकृति (Acceptance of Delivery)

यह आप पढ़ चुके हैं कि क्रेता का कर्त्तव्य माल की सुपुर्दगी को स्वीकार करना है। अब प्रश्न यह उठता है कि हम कब यह कह सकते हैं कि क्रेता ने माल की सुपुर्दगी को स्वीकार कर लिया? यहाँ यह ध्यान रहे कि जब क्रेता माल प्राप्त करता है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि क्रेता ने उसे स्वीकार कर लिया है। स्वीकृति इससे कहीं अधिक बड़ी बात होती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम हैं :

i) जब क्रेता को ऐसा माल सुपुर्द किया जाता है जिसे उसने पहले जाँचा नहीं है, तब क्रेता द्वारा उस माल को तब तक स्वीकार किया गया नहीं माना जाता जब तक कि उसे माल को जाँचने का उचित अवसर प्रदान न किया गया हो ताकि वह यह जाँच कर सके कि माल अनुबन्ध के अनुसार है या नहीं (धारा 41(1))।
ii) क्रेता द्वारा निम्नलिखित परिस्थितियों में माल स्वीकार समझा जाता है :
    अ) जब वह विक्रेता को सूचित कर देता है कि उसने माल क. स्वीकार लिया है, अथवा
    ब) जब माल क्रेता को सुपुर्द किया जाता है और वह उसके सम्बन्ध में कोई ऐसा कार्य करता है जिससे यह प्रकट होता हो कि उसने माल को स्वीकार कर लिया। उदाहरण के लिए, जब वह माल का पुनर्विक्रय करता है या गिरवी रख देता है, अथवा
    स) जब क्रेता उचित समय के बीत जाने के बाद भी माल को अपने पास रखे रहता है और विक्रेता को माल अस्वीकार करने की सूचना नहीं देता।
.) अन्यथा कोई करार न किए जाने पर, जब क्रेता को माल सुपुर्द किया जाता है और वह उसे स्वीकार करने मे इन्कार करता है, तो क्रेता उस माल को विक्रेता को लौटाने के लिए बाध्य नहीं है। परन्तु क्रेता का यह कर्त्तव्य है कि वह विक्रेता को सूचित कर दे कि उसने माल को अस्वीकार कर दिया है।

18.8.4 क्रेता का दायित्व

जब विक्रेता माल की सुपुर्दगी क्रेता को देने के लिए तैयार व इच्छुक है और क्रेता से सुपुर्दगी लेने के लिए प्रार्थना करता है, तथा इस प्रार्थना किए जाने के बाद उचित समय के भीतर क्रेता माल की

सुपुर्दगी नहीं लेता, तो क्रेता विक्रेता के प्रति निम्नलिखित के लिए उत्तरदायी है :

अ) उसकी लापरवाही या माल की सुपुर्दगी लेने से इन्कार करने से उत्पन्न हानि के लिए, तथा

ब) माल की देख-भाल करने के लिए उचित व्यय के लिए।

धारा 44 में आगे यह भी बताया गया है कि जब क्रेता द्वारा माल की सुपुर्दगी लेने में लापरवाही या इन्कार किया जाता है और इसे अनुबन्ध का समापन माना जा सकता है तो विक्रेता कीमत के लिए या हर्जाने के लिए दावा कर सकता है।

बोध प्रश्न ग

1) माल की सुपुर्दगी का क्या अर्थ है?

....

....

....

....

2) प्रलक्षित सुपुर्दगी क्या है?

....

....

....

....

3) वाहक को की गई सुपुर्दगी क्रेता को की गई मानी जाती है। क्या आप इससे सहमत हैं?

....

....

....

....

4) यदि गलत मात्रा में माल की सुपुर्दगी दी जाती है तो क्या होता है?

....

....

....

....

....

5) क्रेता द्वारा माल को स्वींकार किया गया कब समझा जाता है?

....

....

....

....

....

6) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) जिस गोदाम में माल रखा है, उस गोदाम की चाभी जब क्रेता को दी जाती है तो इसे सांकेतिक सुपुर्दगी कहते हैं।

ii) किसी विपरीत करार के न होने पर, माल की सुपुर्दगी तथा कीमत का भुगतान, समवर्ती शर्तें होती हैं।

iii) क्रेता को प्रत्येक स्थिति में माल की सुपुर्दगी के लिए आवेदन करना चाहिए।

iv) यदि सुपुर्दगी के लिए कोई स्थान नियत नहीं किया गया है, तो माल की सुपुर्दगी क्रेता के यहाँ करनी चाहिए।

v) जब विक्रेता अनुबन्धित मात्रा से अधिक मात्रा में माल सुपुर्द करता है तो क्रेता सम्पूर्ण माल अस्वीकार कर सकता है।

vi) जब क्रेता माल को अस्वीकार कर देता है तो वह उन्हें विक्रेता को वापस करने के लिए बाध्य है।

vii) कोई विपरीत करार न होने पर, क्रेता किश्तों में माल स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं है।

viii) जब क्रेता माल की सुपुर्दगी लेने से इन्कार करता है या लापरवाही बरतता है और यह अनुबन्ध का समापन माना जाता है तो विक्रेता कीमत तथा हर्जाने के लिए दावा कर सकता है।

18.9 सारांश

विक्रय अनुबन्ध का मुख्य उद्देश्य विक्रेता से क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित करना है। माल में Property से हमारा तात्पर्य माल के स्वामित्व से है, माल के कब्ज़े से नहीं। माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो सकता है चाहे माल की सुपुर्दगी नहीं दी गई है या क्रेता ने मूल्य का भुगतान नहीं किया है।

माल का स्वामित्व विक्रेता से क्रेता को किस समय हस्तांतरित होता है, यह जानना निम्नलिखित कारणों से अत्यंत महत्वपूर्ण है : (i) जोखिम स्वामित्व के साथ जाती है, (ii) तीसरे पक्षकारों के विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार, (iii) कीमत के लिए दावा करने का अधिकार, तथा (iv) क्रेता या विक्रेता, किसी के भी दिवालिया होने पर।

विशिष्ट माल की स्थिति में, क्रेता को स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब पक्षकारों का इरादा हो। जब इरादा स्पष्ट नहीं हो, तब निम्नलिखित नियम लागू होते हैं :

i) सुपुर्दगी योग्य विशिष्ट माल की स्थिति में, अनुबन्ध करते ही स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।
ii) यदि माल विशिष्ट तो है परन्तु सुपुर्दगी योग्य दशा में नहीं है, तो ऐसे माल का स्वामित्व तब हस्तांतरित होता है जब माल को सुपुर्दगी योग्य दशा में कर दिया जाए और क्रेता को इसकी सूचना दे दी जाए।
iii) यदि विक्रय किए गये माल की कीमत निश्चित करने के लिए विक्रेता को कुछ कार्य करना शेष है तो स्वामित्व तब हस्तांतरित होता है जब विक्रेता ने वह कार्य कर लिया है और क्रेता को इसकी सूचना दे दी गई हो।

अनिर्णीत माल की स्थिति में स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब विक्रेता या क्रेता द्वारा, एक दूसरे की सहमति से माल का शर्तरहित विनियोजन किया जाता है।

जब माल पसन्द करने के लिए अथवा 'खरीदो या वापिस करो' के आधार पर भेजा जाता है, तो स्वामित्व उस समय हस्तांतरित होता है जब क्रेता विक्रेता को अपनी स्वीकृति देता है अथवा क्रेता माल के साथ इस प्रकार से व्यवहार करता है जिससे यह प्रकट हो कि उसने माल को स्वीकार कर लिया अथवा क्रेता माल को अस्वीकार किए बिना, उचित समय से अधिक अवधि तक अपने पास रखे रहता है।

जब विक्रेता, माल के निपटारे का अधिकार आरक्षित किए बिना, माल की सुपुर्दगी क्रेता तक पहुँचाने के लिए वाहक को देता है, तो क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित हो जाता है।

यह एक सामान्य नियम है कि केवल माल का स्वामी ही उसका स्वामित्व हस्तांतरित कर सकता है अर्थात् कोई भी विक्रेता, क्रेता को स्वयं से श्रेष्ठ अधिकार नहीं सौंप सकता। इस नियम के कुछ अपवाद हैं। निम्नलिखित परिस्थितियों में विक्रेता, क्रेता को स्वयं से श्रेष्ठ अधिकार सौंप सकता है:

i) विबंध द्वारा स्वत्वाधिकार, ii) व्यापारिक एजेंट द्वारा विक्रय, iii) संयुक्त स्वामी द्वारा विक्रय, iv) व्यर्थनीय अनुबन्ध के अधीन माल पर कब्ज़ा रखने वाले व्यक्ति द्वारा विक्रय, v) विक्रय के बाद माल पर कब्ज़ा रखने वाले विक्रेता द्वारा विक्रय, vi) क्रय करने से पहले माल पर कब्ज़ा रखने वाले क्रेता द्वारा विक्रय, vii) अदत्त विक्रेता द्वारा विक्रय, viii) माल पाले वाले द्वारा विक्रय, ix) गिरवीग्राही द्वारा विक्रय, x) सरकारी रिसीवर या समनुदेशिती द्वारा विक्रय।

सुपुर्दगी का अर्थ है एक व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से माल का कब्ज़ा दूसरे व्यक्ति को दे देना। कोई भी ऐसा कार्य करके माल की सुपुर्दगी की जा सकती है जिसका परिणाम क्रेता के कब्जे में माल देना हो। सुपुर्दगी वास्तविक, सांकेतिक या प्रलक्षित हो सकती है।

न्यथा करार न होने पर, सुपुर्दगी तथा भुगतान समवर्ती शर्तें होती हैं। क्रेता के आवेदन करने र सुपुर्दगी दी जानी चाहिए। नियत स्थान पर माल की सुपुर्दगी की जानी चाहिए तथा यदि कोई थान तय नहीं किया गया है तो सुपुर्दगी उस स्थान पर दी जानी चाहिए जहां पर अनुबन्ध करते मय माल था। निर्धारित समय में माल सुपुर्द किया जाना चाहिए, तथा यदि सुपुर्दगी के लिए ोई समय निर्धारित नहीं है, तो उचित समय में सुपुर्दगी दी जानी चाहिए। सुपुर्दगी देने के व्यय मान्यतः विक्रेता द्वारा सहन किए जाते हैं।

8.10 शब्दावली

हक : वह व्यक्ति या प्रणाली जिसका उपयोग क्रेता तक माल पहुँचाने के लिए किया जाता है।

पुर्दगी : एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को माल का कब्ज़ा स्वेच्छा से देना।

पुर्दगी योग्य दशा : जब माल ऐसी दशा में हो कि क्रेता को उसकी सुपुर्दगी दी जा सके और यह नुबन्ध के अनुरूप हो।

त्वाधिकार के दस्तावेज : ऐसे दस्तावेज़ जो माल पर स्वत्वाधिकार स्थापित करते हैं जैसे रवे रसीद, लदान-पत्र, आदि।

ापारिक एजेंट : स्वामी की अनुमति से जिसके कब्ज़े में माल है और जिसे व्यापार के सामान्य नुक्रम में माल के साथ व्यवहार करने का अधिकार है।

ल का स्वामित्व : माल पर स्वत्वाधिकार।

शिष्ट माल : अनुबन्ध करते समय जिस माल को पहचान लिया गया है।

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

5) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) गलत, vi) गलत, vii) सही, viii) सही।

4) i) गलत, ii) गलत, iii) सही, iv) सही, v) सही, vi) सही, vii) गलत, viii) सही।

6) i) सही, ii) सही, iii) गलत, iv) गलत, v) सही, vi) गलत, vii) सही, viii) सही।

8.12 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

यह जानना क्यों आवश्यक है कि विक्रेता से क्रेता को स्वामित्व कब हस्तांतरित होता है?
विक्रेता से क्रेता को स्वामित्व हस्तांतरित करने के सम्बन्ध में नियम बताइए।
विक्रय अनुबन्ध में माल पर निपटारे के अधिकार को आरक्षित करने से क्या तात्पर्य है?
''माल को कोई भी विक्रेता, क्रेता को स्वयं से श्रेष्ठ अधिकार नहीं सौंप सकता।'' इस नियम की व्याख्या कीजिए। क्या इस नियम के कुछ अपवाद हैं?
माल की सुपुर्दगी से सम्बन्धित नियमों को संक्षेप में बताइए।
जब क्रेता को गलत मात्रा में माल की सुपुर्दगी दी जाती है तो उसे क्या उपचार उपलब्ध हैं?
''सुपुर्दगी को माल की स्वीकृति नहीं माना जा सकता।'' टिप्पणी कीजिए।
निम्नलिखित समस्याओं का कारण, सहित उत्तर दीजिए :

i) रमेश एक विक्रेता से रेडियो सेट खरीदता है। वह न तो भुगतान करता है और न ही रेडियो की सुपुर्दगी लेता है। वह व्यापारी से कहता है कि अगले दिन रेडियो की सुपुर्दगी कर दे और भुगतान प्राप्त कर ले। अचानक आग लग जाने से रेडियो सैट नष्ट हो गया। क्या विक्रेता कीमत वसूल कर सकता है?
[**संकेत** : हां। क्योंकि माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो चुका है अतः विक्रेता कीमत के लिए दावा कर सकता है।]

ii) मोहन एक विशिष्ट घोड़ा सुरेश को बेचता है, सुरेश को इसकी सुपुर्दगी अगले सप्ताह की जानी है। मोहन ने अपने नौकर को इस घोड़े को अन्य घोड़ों से अलग रखने के लिए

माल का विक्रेता "अदत्त विक्रेता" तब समझा जाता है—

i) जब कि उसे सम्पूर्ण कीमत न चुकायी गयी हो या चुकाने का प्रस्ताव न किया गया हो; अथवा

ii) जब कि विनिमय पत्र या अन्य परक्राम्य प्रपत्र सशर्त भुगतान के रूप में प्राप्त हुआ है तथा उसका अनादरण हो गया हो।

अत: अदत्त विक्रेता कहलाने के लिए निम्नलिखित शर्तें पूर्ण की जानी चाहिए :

क) माल विक्रय किया गया है तथा कीमत अभी बकाया है;

ख) सम्पूर्ण कीमत का भुगतान अभी नहीं हुआ है;

ग) मूल्य के भुगतान के लिए विनिमय पत्र या अन्य कोई परक्राम्य प्रपत्र प्राप्त हुआ है तथा वह अनादृत हो गया है।

उपर्युक्त वर्णन से आपने ध्यान किया होगा कि जब मूल्य का अधिकांश भाग चुका दिया गया है तथा बहुत कम भाग चुकाना शेष रह गया है, तब भी विक्रेता को अदत्त विक्रेता कहा जाता है। परन्तु आपको यह सदैव याद रखना चाहिए कि केवल मूल्य का भुगतान न करने पर ही विक्रेता को अदत्त विक्रेता कहा जाता है। अत:, यदि माल का मूल्य तो अदा कर दिया गया है लेकिन कुछ अन्य खर्चों को चुकाना अभी शेष है, तो ऐसे विक्रेता को अदत्त विक्रेता नहीं कहते हैं। इसी प्रकार जब विक्रेता ने माल उधार बेचा है, तो उसे भी हम अदत्त विक्रेता नहीं कह सकते। यदि उधार चुकाने की अवधि समाप्त हो गई हो तथा विक्रेता को बेचे गये माल का मूल्य प्राप्त नहीं हुआ हो, तो विक्रेता 'अदत्त विक्रेता' बन जाता है। जब क्रेता ने सम्पूर्ण मूल्य के भुगतान का प्रस्ताव किया हो और विक्रेता ने इसे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया हो, तब विक्रेता को 'अदत्त विक्रेता' नहीं कहा जा सकता।

उदाहरण

i) A ने B को कुछ माल 5,000 रुपये में बेचा। B ने 4,500 रुपये चुका दिये परन्तु शेष राशि चुकाने में असमर्थ रहा। A अदत्त विक्रेता है।

ii) A ने B को 5,000 रुपये का माल बेचा तथा पूरे मूल्य के लिए चैक प्राप्त किया। चैक को भुगतान के लिए प्रस्तुत किए जाने पर उसका अनादरण हो गया। A अदत्त विक्रेता है।

iii) A ने B को कुछ माल 5,000 रुपये में बेचा तथा मूल्य चुकाने के लिए उसे एक माह की अवधि दी। इस एक माह की अवधि के दौरान A अदत्त विक्रेता नहीं है। एक माह की अवधि व्यतीत हो जाने के बाद भी यदि मूल्य का भुगतान नहीं किया जाता, तब A को अदत्त विक्रेता माना जाएगा।

यदि एक माह की अवधि समाप्त होने से पहले क्रेता दिवालिया हो जाता है, तब विक्रेता अदत्त विक्रेता बन जाता है।

इस स्थिति में 'विक्रेता' शब्द से हमारा तात्पर्य केवल वास्तविक विक्रेता से ही नहीं है बल्कि इसमें ऐसा प्रत्येक व्यक्ति शामिल है जो विक्रेता की स्थिति में है, उदाहरण के लिए, विक्रेता का ऐसा एजेंट जिसे लदान पत्र (bill of loading) पृष्ठांकित किया गया है, अथवा ऐसा प्रेषक या एजेंट जिसने स्वयं भुगतान किया हो या जो मूल्य के भुगतान के लिए सीधे उत्तरदायी है (धारा 45(2))।

19.3 अदत्त विक्रेता के अधिकार

अदत्त विक्रेता के अधिकारों की चर्चा मुख्यत: दो शीर्षकों के अन्तर्गत की जा सकती है :(1) माल के प्रति अधिकार; तथा (2) स्वयं क्रेता के प्रति अधिकार।

1) माल के प्रति निम्नलिखित अधिकार हैं :
   - अ) जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तातरित हो गया है :
     - i) पूर्वाधिकार;
     - ii) माल को मार्ग में रोकने का अधिकार; तथा
     - iii) पुनर्विक्रय का अधिकार।
   - ब) जब क्रेता को माल का स्वामित्व अभी हस्तांतरित नहीं हुआ है :
     - i) माल की सुपुर्दगी रोकने का अतिरिक्त अधिकार।

2) स्वयं क्रेता के प्रति निम्नलिखित अधिकार हैं :
   i) मूल्य के लिए दावा करने का अधिकार;
   ii) हर्जाने के लिए दावा करने का अधिकार; तथा
   iii) ब्याज के लिए दावा करने का अधिकार।

चित्र 19.1 को देखिए, इससे अदत्त विक्रेता के विभिन्न अधिकार पूर्णत : स्पष्ट हो जाते हैं।

चित्र 19.1

अदत्त विक्रेता के अधिकार

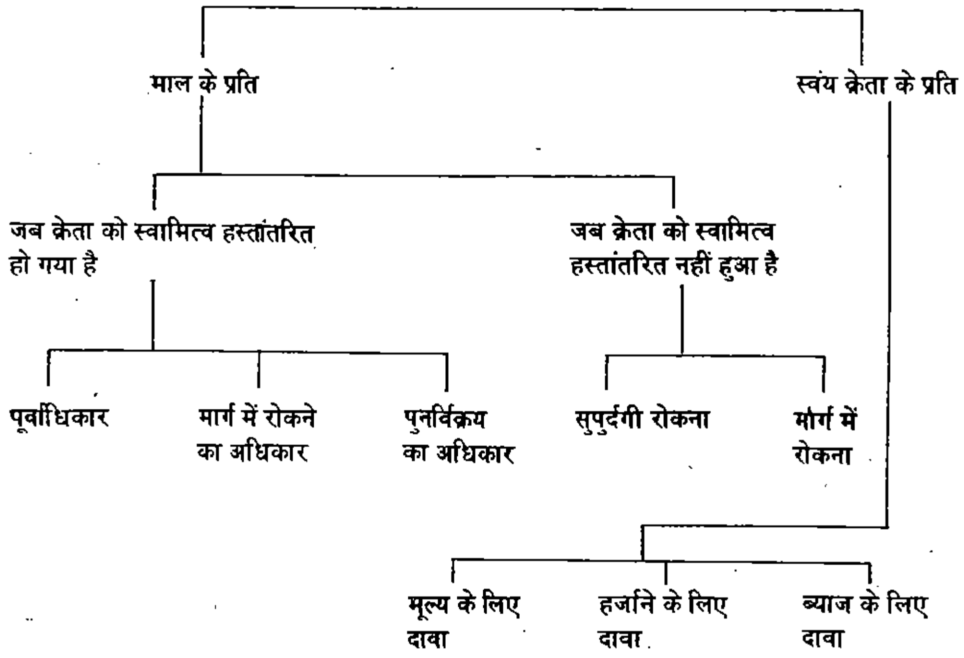

आइए अब इन अधिकारों का विस्तार से अध्ययन करते हैं।

19.4 माल के प्रति अधिकार (Rights Against the Goods)

19.4.1 जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो गया है

जैसा कि पहले वर्णन किया जा चुका है, जब माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो गया है, तब अदत्त विक्रेता के निम्नलिखित अधिकार होते हैं :

19.4.1.1 पूर्वाधिकार (Right of Lien)

आप इकाई 10 में पढ़ चुके हैं कि 'पूर्वाधिकार' शब्द का अर्थ है माल को तब तक अपने 'कब्जे में रोके रखना' जब तक माल से सम्बन्धित खर्चों का उसे भुगतान नहीं कर दिया जाता या भुगतान करने का प्रस्ताव नहीं किया जाता। पूर्वाधिकार माल पर कब्जे के सम्बन्ध में होता है और अदत्त विक्रेता इस अधिकार का प्रयोग तब तक कर सकता है जब तक माल उसके कब्जे में है। जब तक पूरे मूल्य का भुगतान नहीं कर दिया जाता या भुगतान करने का प्रस्ताव नहीं किया जाता तब तक अदत्त विक्रेता को पूर्वाधिकार प्राप्त रहता है।

माल विक्रय अधिनियम की धारा 47(1) के अनुसार "माल का ऐसा अदत्त विक्रेता, जिसका कब्ज़ा माल पर है, उस पर निम्नलिखित दशाओं में तब तक कब्ज़ा बनाए रखने का हकदार है, जब तक मूल्य का भुगतान न कर दिया गया हो या भुगतान करने का प्रस्ताव नहीं किया हो, अर्थात–

क) जब माल उधार की शर्त के बिना बेचा गया हो;
ख) जब माल उधार बेचा गया हो प्ररन्तु उधार चुकाने की अवधि समाप्त हो गई हो,
ग) जब क्रेता दिवालिया हो गया हो।"

अतः, उपर्युक्त से यह स्पष्ट हो जाता है कि अदत्त विक्रेता माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग केवल तभी कर सकता है जब कि माल उसके वास्तविक कब्ज़े में हो। पूर्वाधिकार का प्रयोग करने के लिए यह अर्थहीन है कि माल की सम्पत्ति या स्वत्व या स्वामित्व हस्तांतरित हुआ है या नहीं। विक्रेता अपने पूर्वाधिकार का प्रयोग इस बात के होते हुए भी कर सकता है कि माल पर उसका कब्ज़ा क्रेता के एजेंट या निक्षेपिती (bailee) के रूप में है [धारा 47(2)]। यदि विक्रेता ने क्रेता को माल के स्वत्वाधिकार विलेख (document of title) जैसे लदान पत्र (bill of loading) या सुपुर्दगी आदेश का कोई अन्य स्वरूप, भी दे दिए हों तब भी पूर्वाधिकार के प्रयोग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, बशर्ते माल विक्रेता के कब्ज़े में हो। उदाहरण के लिए, A ने B को कुछ माल 5,000 रुपये में बेचा और उसे एक माह के भीतर मूल्य चुकाने का समय दिया। उधार की इस अवधि में B दिवालिया हो गया, अदत्त विक्रेता A, माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है। माल विक्रय अधिनियमों में 'दिवालिया' शब्द का अर्थ है—"**ऐसा व्यक्ति जिसने व्यापार के सामान्य अनुक्रम में अपने ऋणों का भुगतान बन्द कर दिया हो या जो अपने ऋणों का, जैसे-जैसे वे देय होते जाएं भुगतान न कर सकता हो, चाहे उसने दिवालिएपन का कोई कार्य किया हो या नहीं [धारा 2(8)]**"।

पूर्वाधिकार सम्बन्धी नियम : पूर्वाधिकार का प्रयोग करने के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कानूनी प्रावधान निम्नलिखित हैं :

i) माल विक्रेता के वास्तविक कब्ज़े में होना चाहिए। एक बार माल पर कब्ज़ा समाप्त होने पर पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है।

ii) जब माल उधार न बेचा गया हो और क्रेता पूरा मूल्य चुकाने में असमर्थ है तो पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

iii) जब माल उधार बेचा गया हो और उधार की अवधि समाप्त हो गई हो, तब भी पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

iv) जब क्रेता दिवालिया हो गया हो, तब विक्रेता माल पर कब्ज़ा किए रह सकता है।

v) यदि विक्रेता के कब्ज़े में किसी अन्य हैसियत में माल है, जैसे निक्षेपिती या एजेंट के रूप में. तब भी पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

vi) ऐसी स्थिति में जब माल के स्वत्वाधिकार विलेख की सुपुर्दगी कर दी गई हो परन्तु माल विक्रेता के कब्ज़े में है, पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

vii) केवल मूल्य के लिए पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है किन्हीं अन्य खर्चों के लिए नहीं, जैसे गोदाम का किराया, ब्याज आदि।

viii) पूर्वाधिकार अविभाज्य प्रकृति का होता है। क्रेता द्वारा मूल्य का आनुपातिक भुगतान किए जाने पर विक्रेता माल की आंशिक सुपुर्दगी करने से मना कर सकता है।

ix) यदि अदत्त विक्रेता ने माल की आंशिक सुपुर्दगी कर दी है तो वह शेष माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है, बशर्ते ऐसी आंशिक सुपुर्दगी ऐसी परिस्थितियों में न की गई हो जिससे पूर्वाधिकार के परित्याग का आभास होता हो [धारा 48]। सरल शब्दों में, जब आंशिक सुपुर्दगी को सम्पूर्ण माल की सुपुर्दगी मानने का इरादा प्रकट होता हो, तब पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है।

x) यदि विक्रेता ने माल के मूल्य के लिए "डिक्री" (decree) प्राप्त कर ली है तब भी पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है [धारा 49(2)]।

पूर्वाधिकार की समाप्ति (Termination of lien) : आपने पढ़ा कि पूर्वाधिकार माल पर वास्तविक कब्ज़े पर निर्भर करता है। अदत्त विक्रेता का पूर्वाधिकार प्रयोग करने का अधिकार निम्नलिखित परिस्थितियों में समाप्त हो जाता है :

i) जब माल के निपटारे के अधिकार (right of disposal) को आरक्षित किए बिना, माल को क्रेता के पास भेजने के लिए किसी वाहक (carrier) या अन्य निक्षेपिती (bailee) के सुपुर्द किया जाता है [धारा 49(1)(क)]। ऐसा इसलिए है क्योंकि वाहक को की गई सुपुर्दगी, स्वयं क्रेता को की गई मानी जाती है। उदाहरण के लिए, A ने एक मशीन B को 20,000 रुपये में बेची और उसे क्रेता को प्रेषित करने के प्रयोजन से रेलवे को सुपुर्द कर दी। रेलवे रशीद B के नाम में ली गई तथा यह रसीद B को भेज दी गई। अब A पूर्वाधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता।

ii) जब क्रेता या उसका एजेंट माल पर कब्ज़ा विधिपूर्वक प्राप्त कर लेता है [धारा 49(1)(ख)]। क्रेता या उसके एजेंट द्वारा माल पर कब्ज़ा वैध ढंग से होना चाहिए।

iii) जब विक्रेता स्वयं पूर्वाधिकार का परित्याग कर देता है। यह परित्याग स्पष्ट या निहित हो सकता है। इस प्रकार जब विक्रेता उधार की अवधि बढ़ा देता है या जब विक्रेता, क्रेता द्वारा उप-विक्रय करने के लिए सहमत हो जाता है, तो इसे निहित परित्याग कहते हैं।

iv) जब क्रेता ने मूल्य चुकाने का प्रस्ताव किया हो परन्तु विक्रेता ने इसे स्वीकार करने से इन्कार कर दिया हो, तब पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है।

v) जब क्रेता ने माल बेच दिया हो या किसी अन्य तरह से माल का निपटारा कर दिया हो और ऐसा करने के लिए विक्रेता ने अनुमति दी हो [धारा 53(1)]।

vi) जब माल के स्वत्वाधिकार विलेख विधिवत् ढंग से क्रेता को दे दिए गये हैं और उसने उन विलेखों को किसी निर्दोष क्रेता को हस्तांतरित कर दिया हो जिसने प्रतिफल के बदले तथा सद्भाव में उन्हें प्राप्त किया है तथा विक्रेता ने इसके लिए अनुमति दे दी हो [धारा 53(1)]।

इस सम्बन्ध में यह स्मरण रहे कि मूल्य के लिए 'डिक्री' प्राप्त कर लेने के बावजूद भी पूर्वाधिकार समाप्त नहीं होता।

परन्तु जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ हो, तब पूर्वाधिकार प्रयोग करने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। ऐसी स्थिति में अदत्त विक्रेता को माल की सुपुर्दगी रोकने का अधिकार है।

बोध प्रश्न क

1) **अदत्त विक्रेता की परिभाषा कीजिए।**

....

....

....

2) **माल के प्रति अदत्त विक्रेता के अधिकार बताइए।**

....

....

....

3) **पूर्वाधिकार कब समाप्त होता है?**

....

....

....

4) **बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत।**

i) अदत्त विक्रेता का पूर्वाधिकार माल पर मात्र कब्ज़े पर निर्भर करता है।

ii) माल का मूल्य तथा अन्य खर्चों को न अदा करने पर पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

iii) जब माल उधार बेचा गया हो तथा उधार की अवधि समाप्त हो गई हो तब पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है।

iv) जब स्वत्वाधिकार विलेख सुपुर्द कर दिए गये हों परन्तु माल अभी भी अदत्त विक्रेता के कब्ज़े में हो तब भी वह पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है।

v) जब अदत्त विक्रेता माल के मूल्य के लिए डिक्री प्राप्त कर लेता है, तब पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है।

vi) जब क्रेता या उसका एजेंट विधिवत् ढंग से माल पर कब्ज़ा प्राप्त कर लेते हैं तब भी पूर्वाधिकार समाप्त नहीं होता।

vii) विक्रय के बाद माल पर पुनः कब्जा पा लेने पर पूर्वाधिकार का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

viii) माल की आंशिक सुपुर्दगी की स्थिति में, अदत्त विक्रेता शेष माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है।

ix) कानून की विवक्षा (implication) से अदत्त विक्रेता के अधिकार उत्पन्न होते हैं।

9.4.1.2 माल को मार्ग में रोकने का अधिकार (Right of Stoppage of Goods-in-transit)

आप पढ़ चुके हैं कि जब अदत्त विक्रेता का माल पर से कब्ज़ा समाप्त होता है, तब पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है। यदि वाहक को माल सुपुर्द किए जाने के बाद, क्रेता दिवालिया हो जाता है,

तो विक्रेता को एक अन्य अधिकार प्राप्त है अर्थात् माल को मार्ग में रोकने का अधिकार। वह क्रेता या उसके एजेंट को माल की सुपुर्दगी होने से रोक सकता है। माल को मार्ग में रोकने का अर्थ है कि जब तक माल मार्ग में है तब तक उसे रोकने का अधिकार। यह अधिकार तब उत्पन्न होता है जब पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है। इस अर्थ में मार्ग में रोकने का अधिकार, पूर्वाधिकार का विस्तार है। इस अधिकार का प्रयोग करके अदत्त विक्रेता माल को फिर से अपने कब्ज़े में ले लेता है।

अधिनियम की धारा 50 के अनुसार, "**इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन जब माल का क्रेता दिवालिया हो जाए तब अदत्त विक्रेता, जिसने माल पर अपना कब्ज़ा छोड़ दिया है, माल को मार्ग में रोक देने का अधिकार रखता है, अर्थात् जब तक माल मार्ग में रहे, वह उस पर फिर कब्ज़ा प्राप्त कर सकता है, और उसे तब तक रोके रख सकता है जब तक मूल्य का भुगतान नहीं हो जाता या भुगतान करने का प्रस्ताव नहीं किया जाता**"। उपर्युक्त उपबंध का विश्लेषण करने पर आप यह पाते हैं कि निम्नलिखित केवल परिस्थितियों में ही माल को मार्ग में रोका जा सकता है :

i) विक्रेता को अभी मूल्य प्राप्त नहीं हुआ होना चाहिए;
ii) क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो जाना चाहिए;
iii) माल अभी मार्ग में ही होना चाहिए अर्थात् माल न तो विक्रेता के कब्ज़े में होना चाहिए और न ही क्रेता या उसके एजेंट के कब्ज़े में;
iv) क्रेता दिवालिया हो गया होना चाहिए, तथा
v) माल को केवल मूल्य के भुगतान के लिए ही मार्ग में रोका जा सकता है।

मार्ग में होने की अवधि (Duration of transit) : आप यह तो पढ़ ही चुके हैं कि माल को केवल तभी रोका जा सकता है जब वह अभी मार्ग में ही हो। अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि कितनी देर तक और कब तक माल को मार्ग में माना जाता है? सरल शब्दों में, हम यह कह सकते हैं कि जब माल न तो विक्रेता के कब्ज़े में हो और न ही क्रेता के, तब माल को मार्ग में समझा जाता है। इस अवधि के दौरान माल किसी वाहक के कब्ज़े में होता है, जो उस माल को स्वयं अपने नाम में क्रेता तक माल को पहुंचाने के प्रयोजन से रखता है।

यदि वाहक, विक्रेता के एजेंट के रूप में माल को अपने पास रखे हुए है, तब माल को मार्ग में रोकने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि कानून की दृष्टि में माल विक्रेता के ही पास माना जाएगा और वह उस माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है। यदि वाहक, क्रेता के एजेंट के रूप में माल अपने पास रखे हुए है, तब विक्रेता माल को मार्ग में रोकने के अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता क्योंकि वाहक को की गई सुपुर्दगी क्रेता को की गई सुपुर्दगी मानी जाती है।

माल विक्रय अधिनियम की धारा 51(1) माल के मार्ग में होने की अवधि का वर्णन करती है, इसके अनुसार, "उस समय से, जब क्रेता के पास तक पहुंचाए जाने के प्रयोजन से माल वाहक को या निक्षेपिती को सुपुर्द किया जाता है, उस समय तक, जब क्रेता या उसका एजेंट माल की सुपुर्दगी ऐसे वाहक या निक्षेपिती से ले लेता है, माल को मार्ग में या प्रेषण के अनुक्रम में समझा जाता है"। इस प्रावधान से यह एकदम स्पष्ट हो जाता है कि जब माल किसी ऐसे वाहक के कब्ज़े में है जो स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में कार्य कर रहा है तो माल को मार्ग में हुआ कहा जाता है। अतः जब तक माल, क्रेता या उसके एजेंट को, सुपुर्द नहीं कर दिया जाता तब तक वह मार्ग में या प्रेषण के अनुक्रम में बना रहता है। तथापि, मार्ग में होने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि माल वास्तव में चलायमान स्थिति में हो।

कई बार क्रेता, विक्रेता से आग्रह करता है कि वह सुपुर्दगी के लिए निर्धारित स्थान की बजाए किसी अन्य स्थान पर माल की सुपुर्दगी दे, ऐसी स्थिति में जब तक क्रेता या उसका एजेंट उस स्थान पर माल की सुपुर्दगी नहीं ले लेता, माल को मार्ग में ही माना जाता है। इसी प्रकार, यदि क्रेता ने माल अस्वीकार कर दिया हो और वह वाहक के ही कब्ज़े में हो तो, यद्यपि विक्रेता ने उसे वापस लेने से इन्कार कर दिया हो यह नहीं समझा जाता कि अब माल मार्ग में नहीं रहा अर्थात् इस दशा में माल मार्ग में ही माना जाता है [धारा 51(4)]।

मार्ग में रहने की अवधि की समाप्ति (Termination of transit) : यह तो आप जानते हैं कि जब तक माल मार्ग में है, अदत्त विक्रेता उसे रोक सकता है। दूसरे शब्दों में, जब माल मार्ग में नहीं रहता तब यह अधिकार भी खत्म हो जाता है। आइए अब हम उन परिस्थितियों का अध्ययन करते हैं जब मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो जाती है। निम्नलिखित परिस्थितियों में माल के मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हुई समझी जाती है :

i) **क्रेता द्वारा सुपुर्दगी लेकर** : जब माल एक बार क्रेता या उसके एजेंट के हाथ में पहुंच जाता

है, तब मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो जाती है। कई बार माल के निर्धारित गन्तव्य पर पहुंचने से पहले ही क्रेता या उसका एजेंट माल की सुपुर्दगी ले लेता है, तो मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो जाती है [धारा 51(2)]। उदाहरण के लिए, दिल्ली के A ने कुछ माल बम्बई के B को बेचा। माल बम्बई पहुंच गया और माल की सुपुर्दगी लेने के बाद क्रेता उस माल को ट्रक में लदवा रहा था। यद्यपि ट्रक अभी रेलवे के इलाके में ही है, मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो गई क्योंकि B ने माल की सुपुर्दगी ले ली है।

ii) **वाहक द्वारा क्रेता को अभिस्वीकृति :** जब माल के गन्तव्य स्थान पर पहुंचने के बाद, माल का वाहक या निक्षेपिती, क्रेता या उसके एजेंट को, अपनी यह अभिस्वीकृति देता है कि उसने क्रेता की ओर से माल अपने पास रखा हुआ है, तब मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो जाती है। यहां यह ध्यान रहे कि यह अभिस्वीकृति स्पष्ट शब्दों में की जानी चाहिए। यदि क्रेता माल को किसी और गन्तव्य तक ले जाने को कहता है, तो इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता, मार्ग में माल का रहना समाप्त हो जाता है। इस प्रकार उपर्युक्त उदाहरण में, B रेलवे अधिकारियों के पास जाकर रेलवे रसीद दिखाकर उनसे कहता है कि वह एक सप्ताह के भीतर माल की सुपुर्दगी ले लेगा। इसी दौरान B दिवालिया हो जाता है और अब A माल को मार्ग में रोकना चाहता है। A माल को रोकने में सफल नहीं होगा क्योंकि जब रेलवे अधिकारियों ने B के लिए माल को अपने पास रखना स्वीकार किया, तभी मार्ग में रहने का समय समाप्त हो गया।

iii) **वाहक द्वारा क्रेता को माल की सुपुर्दगी करने से अनुचित रूप से इन्कार कर देने पर :** जब वाहक या निक्षेपिती क्रेता या उसके एजेंट को माल की सुपुर्दगी करने से अनुचित रूप से इन्कार करता है, तब मार्ग में होने की अवधि समाप्त समझी जाती है [धारा 51(6)]। यहां यह स्मरण रहे कि मार्ग में होने की अवधि केवल तभी समाप्त होती है जब वाहक माल की सुपुर्दगी देने से अनुचित रूप से इंकार करता है।

iv) **जहाज़ की सुपुर्दगी :** जब जहाज़ पर माल सुपुर्द किया जाता है, तो प्रश्न उठता है कि मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो गई या नहीं? इस प्रश्न का उत्तर प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यदि क्रेता द्वारा जहाज़ भाड़े पर लिया गया है या क्रेता ही स्वयं जहाज़ का स्वामी है, तब जैसे ही माल जहाज़ पर लादा जाता है, मार्ग में रहने की अवधि समाप्त हो जाती है। इसके विपरीत, यदि वाहक स्वतन्त्र रूप से काम कर रहा है तब माल को मार्ग में ही माना जाता है।

v) **माल की आंशिक सुपुर्दगी :** जब क्रेता या उसके एजेंट को माल की आंशिक सुपुर्दगी दी जा चुकी है, तो शेष माल को मार्ग में रोका जा सकता है, जब तक कि आंशिक सुपुर्दगी ऐसी परिस्थितियों में न की गई हो जिससे यह दर्शित होता है कि सारे माल पर कब्ज़ा छोड़ देने का करार है [धारा 51(7)]।

माल को मार्ग में कैसे रोका जा सकता है? : अदत्त विक्रेता माल को मार्ग में रोकने के अपने अधिकार का प्रयोग निम्नलिखित किसी भी तरीके से कर सकता है :

अ) माल पर वास्तविक कब्ज़े द्वारा; अथवा

ब) जिस वाहक के कब्ज़े में माल है, उसे अपने दावे की सूचना द्वारा [धारा 52(1)]। जिस व्यक्ति के कब्ज़े में माल वास्तव में है उसे या उसके प्रधान को माल रोकने की सूचना दी जा सकती है। यदि सूचना प्रधान को दी जाती है तो सूचना को प्रभावी बनाने के लिए यह ऐसे समय पर और ऐसी परिस्थितियों में दी जानी चाहिए कि प्रधान युक्तियुक्त तत्परता के प्रयोग द्वारा उसे अपने नौकर या एजेंट को इतना समय रहते सूचित कर सके कि क्रेता को सुपुर्दगी न दी जा सके [धारा 52(1)]। दूसरे शब्दों में, प्रधान को दी गई सूचना तभी प्रभावी होगी, यदि उसके पास इतना पर्याप्त समय है कि वह अपने एजेंट को आगे यह सूचना दे सके। इस सूचना का लिखित में होना अनिवार्य है तथा इसका कोई विशेष प्रारूप भी निर्धारित नहीं है। केवल इतना ही करना आवश्यक है कि प्रधान या वाहक को स्पष्ट सूचना दी जाए कि क्रेता को माल की सुपुर्दगी न दी जाए और उसके द्वारा क्रेता को माल की सुपुर्दगी देने से पहले यह सूचना पहुंच जानी चाहिए।

जब कब्ज़ाधारी वाहक या निक्षेपिती को प्रधान से ऐसी सूचना प्राप्त हो जाती है तो उसका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि विक्रेता को या उसके निर्देशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को माल की पुनः सुपुर्दगी कर दे। पुनः सुपुर्दगी के खर्चे विक्रेता द्वारा सहन किए जाएंगे [धारा 52(2)]। यदि माल को रोकने की सूचना प्राप्त होने के बाद, वाहक, क्रेता को या उसके एजेंट को माल की सुपुर्दगी दे देता है, तो वह विक्रेता के प्रति सपरिवर्तन (conversion) के लिए उत्तरदायी होगा।

पूर्वाधिकार एवं मार्ग में रोकने के अधिकार में अन्तर

आप यह पढ़ चुके हैं कि जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो चुका हो और क्रेता ने सम्पूर्ण मूल्य नहीं चुकाया हो तो विक्रेता उपर्युक्त दोनों अधिकारों का प्रयोग कर सकता है। यद्यपि इस विषय में इन दोनों अधिकारों में समानता है, परन्तु इन दोनों में अनेक महत्वपूर्ण अन्तर हैं, यह अन्तर निम्नलिखित हैं :

पूर्वाधिकार	मार्ग में रोकना
1) विक्रेता के कब्जे में वास्तव में माल होना चाहिए।	1) माल किसी स्वतन्त्र वाहक या निक्षेपिती के कब्ज़े में होना चाहिए। माल न तो विक्रेता के कब्ज़े में हैं और न ही क्रेता के।
2) इस अधिकार का प्रयोग तब भी किया जा सकता है जब क्रेता शोधनक्षम (solvent) हो परन्तु मूल्य चुकाने से इंकार कर दे।	2) इस अधिकार का प्रयोग केवल तभी किया जाता है जब क्रेता दिवालिया हो गया हो।
3) जब विक्रेता माल पर कब्ज़ा खो देता है तब यह अधिकार समाप्त हो जाता है।	3) यह अधिकार उस समय आरम्भ होता है जब विक्रेता किसी वाहक को माल सुपुर्द करता है।
4) इस अधिकार से माल पर कब्ज़ा बनाए रखा जाता है।	4) इस अधिकार से माल पर कब्ज़ा पुन: प्राप्त किया जाता है।
5) क्रेता स्वयं इस अधिकार का प्रयोग कर सकता है।	5) विक्रेता, ऐसे वाहक या निक्षेपिती के द्वारा इस अधिकार का प्रयोग कर सकता है जिसके कब्ज़े में माल है।

उपर्युक्त से आपने यह नोट किया होगा कि जब विक्रेता किसी स्वतन्त्र वाहक या निक्षेपिती को माल सुपुर्द करता है उस समय से माल को मार्ग में रोकने का अधिकार आरम्भ होता है, इस अर्थ में जब पूर्वाधिकार समाप्त होता है तब माल को मार्ग में रोकने का अधिकार आरम्भ होता है। इसी कारण से यह कहा जाता है कि माल को मार्ग में रोकने का अधिकार, पूर्वाधिकार का ही विस्तार है।

क्रेता द्वारा उप-विक्रय या गिरवी रखने का प्रभाव : आप कानून के इस सामान्य नियम के बारे में पहले पढ़ चुके हैं कि क्रेता द्वारा माल के उप-विक्रय या गिरवी रखने या अन्य प्रकार से निपटारा करने से अदत्त विक्रेता का पूर्वाधिकार या मार्ग में माल रोकने का अधिकार तब तक प्रभावित नहीं होता जब तक कि विक्रेता इस प्रकार के विक्रय के लिए सहमत न हुआ हो [धारा 53(1)]। उदाहरण के लिए, A ने बम्बई निवासी B को कुछ माल बेचा और B तक माल पहुंचाने के लिए रेलवे को माल सुपुर्द कर दिया गया। इसी दौरान B ने प्रतिफल के बदले यह माल C को बेच दिया। B दिवालिया हो गया। A अभी भी माल को मार्ग में रोकने के अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता है।

परन्तु इस सामान्य नियम के दो अपवाद हैं जबकि उप-विक्रय, गिरवी रखने या निपटारा करने से पूर्वाधिकार तथा मार्ग में रोकने का अधिकार प्रभावित होते हैं। ये अपवाद इस प्रकार हैं :

i) **विक्रेता की सहमति** : यदि विक्रेता की सहमति से माल का उप-विक्रय या अन्य प्रकार से निबटारा किया जाता है, तो अदत्त विक्रेता पूर्वाधिकार अथवा माल को मार्ग में रोकने के अधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता। उप-विक्रय उसकी ऐसी सहमति से होना चाहिए जिससे यह प्रतीत होता है कि वह अपने अधिकार त्यागना चाहता है। **नाईट्स बनाम विफिन** के केस में, A ने अपने अन्नभंडार में से 80 मन अनाज B को बेच दिया। B ने इसमें (80 मन में से) से 60 मन अनाज C को बेच दिया। A ने C को यथा समय में अनाज की सुपुर्दगी देने का वचन दिया। B दिवालिया हो गया। इस 60 मन अनाज के प्रति A का अधिकार समाप्त हो गया क्योंकि A ने उप-क्रेता C के स्वत्वाधिकार को मान्यता दे दी है।

ii) **स्वत्वाधिकार विलेख का हस्तांतरण** : जब विक्रेता ने किसी व्यक्ति को क्रेता के रूप में माल के स्वत्वाधिकार विलेख (जहाजी बिल्टी या रेलवे रसीद) जारी कर दिए हैं या उसे हस्तांतरित कर दिए हैं, और ऐसा क्रेता उस विलेख को किसी ऐसे क्रेता को आगे दे देता है

जो उसे मूल्य के बदले व सद्विश्वास से प्राप्त करता है, तो अदत्त विक्रेता का पूर्वाधिकार तथा मार्ग में रोकने का अधिकार समाप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए, A ने कुछ माल B को बेचा और B को रेलवे रसीद भेज दी। माल के मूल्य का भुगतान करने से पहले B ने रेलवे रसीद प्रतिफल के बदले C को हस्तांतरित कर दी। C ने पूर्ण सद्विश्वास में माल खरीदा था। B दिवालिया हो गया। माल को मार्ग में रोकने का A का अधिकार विफल हो गया और C को श्रेष्ठ स्वत्वाधिकार प्राप्त होगा।

धारा 53(2) में आगे बताया गया है कि **यदि क्रेता द्वारा विलेख का हस्तांतरण गिरवी के रूप में हुआ है तो अदत्त विक्रेता के सामान्य अधिकार पूर्णतः विफल नहीं हो जाते बल्कि वह अपने अधिकारों का प्रयोग गिरवीग्राही के अधिकारों के अधीन ही कर सकता है।** उदाहरण के लिए, A ने कुछ माल B को बेचा और B को रेलवे रसीद भेज दी। माल के मूल्य का भुगतान किए बिना, 10,000 रुपये के ऋण की जमानत के रूप में B इस रेलवे रसीद को C के पास गिरवी रख देता है। तत्पश्चात्, B दिवालिया हो जाता है। इस स्थिति में, A 10,000 रुपये C को चुका कर रेलवे रसीद वापस प्राप्त कर सकता है।

बोध प्रश्न ख

1) माल को मार्ग में कब रोका जा सकता है?

....

....

....

2) माल को कब मार्ग में समझा जाता है?

....

....

....

3) माल को मार्ग में कैसे रोका जा सकता है?

....

....

....

4) रिक्त स्थान भरिए :
   i) अदत्त विक्रेता पूर्वाधिकार का प्रयोग केवल तभी कर सकता है जब .... उसके वास्तविक कब्ज़े में हो।
   ii) पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है जब माल पर .... समाप्त हो जाता है।
   iii) अदत्त विक्रेता माल को मार्ग में तब रोक सकता है जब ....।
   iv) माल का मार्ग में होना समाप्त हो जाता है जब ....।
   v) माल को मार्ग में रोकने की सूचना .... किसी को भी दी जा सकती है।
   vi) यदि माल को मार्ग में रोकने की सूचना मिलने के बाद भी वाहक उसे क्रेता को सुपुर्द कर देता है तो वाहक .... के लिए दायी होगा।

5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :
   i) जब पूर्वाधिकार समाप्त होता है तभी माल को मार्ग में रोकने का अधिकार आरम्भ होता है।
   ii) जब वाहक विक्रेता के एजेंट के रूप में माल को रखे हुए हैं, तब अदत्त विक्रेता मार्ग में रोकने के अधिकार का प्रयोग कर सकता है।
   iii) जब वाहक, क्रेता या उसके एजेंट को माल की सुपुर्दगी करने से अनुचित रूप से इंकार कर देता है, तो मार्ग में रहना समाप्त हो जाता है।
   iv) क्रेता द्वारा भाड़े पर लिए गये जहाज़ पर माल सुपुर्द कर दिया जाता है तो मार्ग में रहना समाप्त नहीं होता।
   v) जब अदत्त विक्रेता, क्रेता द्वारा माल के विक्रय की अनुमति देता है जो मार्ग में रोकने का अधिकार समाप्त हो जाता है।

vi) जब आंशिक सुपुर्दगी दी जाती है तो विक्रेता शेष माल को रोक सकता है जब तक कि आंशिक सुपुर्दगी से यह इरादा न हो कि सारे माल का कब्ज़ा दे दिया।

19.4.1.3 पुनर्विक्रय का अधिकार (Right of Re-sale)

आपने अदत्त विक्रेता के माल के प्रति दो महत्वपूर्ण अधिकारों के बारे में पढ़ा। इन दोनों अधिकारों में से किसी का भी प्रयोग करके अदत्त विक्रेता विक्रय किए गये माल पर फिर से कब्ज़ा प्राप्त कर लेता है। अब प्रश्न यह उठता है कि अदत्त विक्रेता कब तक इस बात की प्रतीक्षा करे कि क्रेता मूल्य का भुगतान करके माल की सुपुर्दगी ले ले। यह प्रश्न तब और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब माल नाशवान (perishable) प्रकृति का है। अतः, अदत्त विक्रेता को एक अन्य अधिकार भी दिया गया है और वह है माल के पुनर्विक्रय का अधिकार। यहां आप यह ध्यान दें कि इस अधिकार के बिना पहले दोनों अधिकार अर्थहीन हो जाएंगे तथा विक्रेता के लिए वह भार हो जाएंगे, क्योंकि इस अधिकार के बिना विक्रेता को माल अपने कब्ज़े में रखना पड़ेगा।

ऐसा अदत्त विक्रेता, जिसके कब्ज़े में माल है, निम्नलिखित परिस्थितियों में उसका पुनर्विक्रय कर सकता है :

अ) **जब माल नाशवान है** : ऐसी स्थिति में क्रेता को सूचना दिए बिना माल बेचा जा सकता है। 'नाशवान' शब्द से आशय केवल प्राकृतिक रूप से बिगड़ने से ही नहीं है, बल्कि इसमें व्यापारिक नाश या हानि भी शामिल है। अदत्त विक्रेता उचित समय के बाद ऐसे माल का पुनर्विक्रय कर सकता है। उचित समय क्या है, यह तथ्य सम्बन्धी प्रश्न है जो प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

ब) **जब विक्रेता पुनर्विक्रय का अधिकार स्पष्टतः आरक्षित कर लेता है** : ऐसी स्थिति में जब क्रेता द्वारा मूल्य का भुगतान करने में त्रुटि किए जाने पर विक्रेता माल को पुनर्विक्रय करने का अधिकार स्पष्ट रूप से आरक्षित करता है, तब अदत्त विक्रेता माल का पुनर्विक्रय कर सकता है। इस प्रकार से पुनर्विक्रय का यह परिणाम होगा कि मूल विक्रय अनुबन्ध समाप्त हो जाएगा, परन्तु उससे विक्रेता के किसी ऐसे दावे पर, जो वह किसी हर्जाने के लिए रखता हो, प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता [धारा 54(4)]।

स) जब अदत्त विक्रेता ने माल का पुनर्विक्रय करने के अपने इरादे की सूचना क्रेता को दे दी है और तब भी क्रेता उचित समय के भीतर माल के मूल्य का भुगतान या भुगतान करने का प्रस्ताव नहीं करता। यदि पुनर्विक्रय पर अदत्त विक्रेता को उतनी रकम प्राप्त नहीं होती जितनी कि मूल क्रेता से प्राप्त होनी थी, अर्थात् जब विक्रेता को हानि होती है, तब अदत्त विक्रेता, मूल क्रेता से हानि की रकम वसूल करने का हकदार होता है। परन्तु यदि पुनर्विक्रय करने पर कुछ लाभ या आधिक्य प्राप्त होता है, तो विक्रेता इस लाभ या आधिक्य को अपने पास रखने का हकदार है क्योंकि क्रेता को अपनी ही गलती का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

पुनर्विक्रय की सूचना : उन परिस्थितियों को छोड़कर जब माल नाशवान है या जब विक्रेता ने माल के पुनर्विक्रय का अधिकार स्पष्ट रूप से आरक्षित किया है, क्रेता को उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए कि विक्रेता (अदत्त विक्रेता) माल को पुनर्विक्रय करने का इरादा रखता है। निम्नलिखित दो कारणों से यह सूचना देना आवश्यक है :

i) क्रेता को अनुबन्ध पालन करने का एक और अवसर दिया जाता है अर्थात् वह अब भी मूल्य चुका कर माल की सुपुर्दगी ले सकता है।

ii) यदि क्रेता मूल्य चुकाने में असमर्थ है, तो वह कम से कम यह तो देख सके कि पुनर्विक्रय उचित मूल्य पर किया जाए। इस प्रकार क्रेता, विक्रेता के प्रति अपने दायित्व को कम कर सकेगा।

यदि अदत्त विक्रेता सूचना दिए बिना माल का पुनर्विक्रय करता है तो वह पुनर्विक्रय करने पर हुई हानि को क्रेता से वसूल नहीं कर सकता और यदि पुनर्विक्रय पर लाभ होता है तो वह उस लाभ को अपने पास नहीं रख सकता, उसे यह लाभ मूल क्रेता को लौटाना होगा। तथापि, क्रेता को (जो पुनर्विक्रय पर क्रय करता है) माल पर मूल क्रेता के प्रति श्रेष्ठ अधिकार प्राप्त होंगे, इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ता कि मूल क्रेता को पुनर्विक्रय की सूचना दी गई थी या नहीं [धारा 54(3)]। इस संबंध में यह ध्यान रहे कि यदि क्रेता ने कुछ रकम अग्रिम (advance) या जमा (deposit) के रूप में पहले भुगतान की है, तो वह विक्रेता के हर्जाने के लिए दावे के अधिकार के अधीन इस रकम को मांग सकता है।

19.4.2 जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ है

जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ है तब अदत्त विक्रेता को सुपुर्दगी रोकने का अधिकार प्राप्त है। यह अधिकार, उसके पूर्वाधिकार तथा मार्ग में रोकने के अधिकार के समान एवं सह-विस्तृत है [धारा 46(2)]।

19.5 स्वयं क्रेता के प्रति अधिकार (Rights Against the Buyer Personally)

आप अदत्त विक्रेता के माल के प्रति अधिकारों का अध्ययन कर चुके हैं। उन अधिकारों के अतिरिक्त, विक्रेता को स्वयं क्रेता के विरुद्ध कुछ उपचार उपलब्ध हैं। ये अधिकार निम्नलिखित हैं :

1) **मूल्य के लिए दावा** : क्रेता का यह कानूनी कर्त्तव्य है कि वह माल के मूल्य का भुगतान करे। जब विक्रय अनुबन्ध के अन्तर्गत माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित हो गया है और क्रेता अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार उस माल के मूल्य का भुगतान नहीं करता या भुगतान करने में अनुचित लापरवाही करता है, तब विक्रेता माल के मूल्य के लिए उस पर दावा कर सकता है [धारा 55(1)]।

   यदि माल का स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित नहीं हुआ है तब यह सामान्य नियम है कि विक्रेता मूल्य के लिए दावा नहीं कर सकता, वह केवल हर्जाने की मांग कर सकता है। परन्तु धारा 55(2) में बताया गया है कि जब विक्रय अनुबन्ध में यह उल्लेख है कि मूल्य किसी निश्चित दिन देय है, इस बात को ध्यान में लाए बिना कि सुपुर्दगी हुई है या नहीं। और क्रेता ऐसे मूल्य को चुकाने की उपेक्षा या करने से अनुचित रूप से इंकार कर देता है, तब विक्रेता, क्रेता के विरुद्ध मूल्य के लिए दावा कर सकेगा, यद्यपि माल का स्वामित्व अभी हस्तांतरित नहीं हुआ है। इस प्रकार आपने गौर किया कि माल के स्वामित्व हस्तांतरण का प्रश्न महत्वहीन है। उदाहरण के लिए, A ने B को 10,000 रुपये का माल बेचा, अनुबन्ध करने के 10 दिन बाद मूल्य चुकाने का वचन दिया गया। नियत दिन पर B मूल्य चुकाने में असमर्थ है। यद्यपि B को माल की सुपुर्दगी नहीं दी गई है अथवा B को अभी स्वामित्व हस्तांतरित नहीं हुआ है, फिर भी A मूल्य के लिए B के ऊपर दावा कर सकता है।

2) **माल की अस्वीकृति के लिए हर्जाने का दावा** : कई बार ऐसा होता है कि विक्रेता तो माल की सुपुर्दगी देने के लिए तैयार है परन्तु क्रेता उसे स्वीकार करने से इन्कार कर देता है। ऐसी स्थिति में, यदि क्रेता अनुचित रूप से माल को स्वीकार करने तथा मूल्य का भुगतान करने में लापरवाही बरतता है या ऐसा करने से इन्कार कर देता है, तो विक्रेता उस पर अस्वीकृति के लिए हर्जाने का दावा कर सकता है। हानि या हर्जाने की राशि कितनी होगी, इसका निर्णय अनुबन्ध अधिनियम की धारा 73 (कृपया खंड 2 की इकाई 8 पढ़िए) में बताए गये उपबंधों के अनुसार किया जाता है।

3) **ब्याज के लिए दावा** : जब विक्रय अनुबन्ध के अन्तर्गत विक्रेता माल की सुपुर्दगी देने का प्रस्ताव करता है और क्रेता सदोष उसे स्वीकार करने तथा मूल्य चुकाने में लापरवाही बरतता है या इन्कार कर देता है, तो विक्रेता को एक और भी अधिकार है कि वह मूल्य पर ब्याज के लिए दावा करे। माल की सुपुर्दगी का प्रस्ताव करने की तिथि या मूल्य चुकाने के लिए देय तिथि से ब्याज की गणना की जा सकती है। अदत्त विक्रेता ब्याज की मांग केवल तभी कर सकता है जब वह मूल्य वसूल कर सकता हो अर्थात् यदि विक्रेता को केवल हर्जाना प्राप्त करने का अधिकार है तो वह ब्याज की मांग नहीं कर सकता। ब्याज की दर तय करना न्यायालय की इच्छा पर है।

19.6 क्रेता के अधिकार

अब तक हमने विक्रेता के अधिकारों का वर्णन किया है। यदि विक्रेता द्वारा अनुबन्ध भंग किया जाता है तो क्रेता को भी कुछ अधिकार प्राप्त हैं। क्रेता के अधिकार निम्नलिखित हैं :

1) **सुपुर्दगी न किए जाने पर हर्जाने का दावा** : जब क्रेता माल की सुपुर्दगी लेने के लिए तैयार व इच्छुक है परन्तु विक्रेता सदोष माल की सुपुर्दगी देने में लापरवाही करता है या सुपुर्दगी

करने से इन्कार करता है, तो ऐसी स्थिति में, क्रेता सुपुर्दगी न देने के लिए विक्रेता पर हर्जाने के लिए मुकदमा दायर कर सकता है [धारा 57]।

2) **निर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा** : विशिष्ट या निश्चित माल के विक्रय अनुबन्ध में यदि विक्रेता माल की सुपुर्दगी देने में चूक करता है तो क्रेता निर्दिष्ट निष्पादन के लिए दावा दायर कर सकता है। तत्पश्चात् न्यायालय निर्दिष्ट निष्पादन का आदेश दे सकता है। न्यायालय ऐसा आदेश केवल उन्हीं परिस्थितियों में जारी करता है जब हर्जाना पर्याप्त उपचार प्रतीत नहीं होता या जब माल कोई दुर्लभ प्रकृति का है। उदाहरण के लिए, A एक दुर्लभ चित्र B को 20,000 रुपये में बेचने का अनुबन्ध करता है। बाद में A अपने वचन का पालन करने से इन्कार कर देता है। B न्यायालय से आग्रह कर सकता है कि A को अपने वचन का पालन करने का निर्देष जारी करे।

3) **आश्वासन भंग के लिए दावा** : जब विक्रेता ने कोई आश्वासन भंग किया हो या विक्रेता द्वारा शर्त भंग को आश्वासन भंग माना गया हो, तो क्रेता ऐसे आश्वासन भंग के लिए विक्रेता से हर्जाने की मांग कर सक्ता है। यदि क्रेता ने मूल्य का भुगतान कर दिया हो तो वह हर्जाने के लिए केवल दावा दायर कर सकता है।

4) **निष्पादन की तिथि से पहले अनुबन्ध रद्द करने का अधिकार** : जिस प्रकार विक्रेता को क्रेता के विरुद्ध अधिकार प्राप्त है, ठीक उसी प्रकार क्रेता को भी विक्रेता के विरुद्ध अधिकार प्राप्त है। अत: यदि विक्रेता अनुबन्ध को रद्द करता है तो क्रेता भी अनुबन्ध को रद्द हुआ मान सकता है और हर्जाने की मांग कर सकता है अथवा माल की सुपुर्दगी की तिथि तक वह अनुबन्ध को खुला रख सकता है।

5) **ब्याज के लिए दावा** : यदि क्रेता ने पहले ही मूल्य का भुगतान कर दिया है और विक्रेता नियत तिथि पर माल की सुपुर्दगी देने में असमर्थ है, तो क्रेता मूल्य की राशि पर ब्याज पाने के लिए दावा करने का हकदार है। जिस दिन मूल्य चुकाया गया है, उस तिथि से ब्याज की गणना की जाएगी। परन्तु इस सम्बन्ध में यह याद रहे कि क्रेता ब्याज के लिए दावा केवल तभी कर सकता है जब उसे मूल्य वापस प्राप्त करने का अधिकार हो अर्थात् जब क्रेता को केवल हर्जाना प्राप्त करने का उपचार उपलब्ध है (मूल्य पाने का नहीं) तो वह ब्याज की मांग नहीं कर सकता।

19.7 नीलामी द्वारा विक्रय (Auction Sale)

माल बेचने के विभिन्न तरीकों में से एक तरीका नीलामी द्वारा माल बेचना है। नीलाम से तात्पर्य एक सार्वजनिक विक्रय से है जिसमें इच्छुक क्रेता एक स्थान पर एकत्रित होते हैं तथा वह बोली लगाते हैं जिस पर वह माल खरीदने के लिए तैयार हैं। मूल्य के लिए प्रस्ताव करने को "बोली लगाना" और जो व्यक्ति यह प्रस्ताव करता है वह "बोली लगाने वाला" (bidders) कहलाता है। माल का स्वामी अपना माल बेचने के लिए जिस व्यक्ति को नियुक्त करता है वह 'नीलामीकर्त्ता' (auctioneer) कहलाता है। माल के स्वामी तथा नीलामकर्त्ता में परस्पर प्रधान एवं एजेंट का सम्बन्ध होता है। नीलामी में सामान्यत: यह नियम है कि सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को माल बेचा जाता है।

जब नीलामी के द्वारा माल बेचा जाता है तो नीलामकर्त्ता नीलामी के समय, तिथि तथा स्थान के बारे में काफी प्रचार करता है। बोली लगाने वाले व्यक्तियों को माल की जांच करने का भी पर्याप्त अवसर दिया जाता है। जैसा कि आप इकाई 2 (प्रस्ताव एवं स्वीकृति) में पढ़ चुके हैं। नीलामी द्वारा माल बेचने का विज्ञापन विक्रय का प्रस्ताव नहीं है बल्कि यह तो जनता को प्रस्ताव करने के लिए निमन्त्रण है। नीलामकर्त्ता, नियत तिथि, समय व स्थान पर माल बेचने के लिए बाध्य नहीं है, वह नीलामी को रद्द या स्थगित कर सकता है, उस दशा में इच्छुक क्रेता नीलामकर्त्ता के विरुद्ध कोई दावा दायर नहीं कर सकते क्योंकि नीलामकर्त्ता की ओर से जनता को प्रस्ताव नहीं बल्कि प्रस्ताव के लिए निमन्त्रण दिया गया था।

नीलामी द्वारा विक्रय से सम्बन्धित नियम, माल विक्रय अधिनियम की धारा 64 में दिए गये हैं, ये निम्नलिखित हैं :

i) यदि माल ढेरियों (lots) में विक्रय के लिए रखा जाता है तो प्रत्येक ढेर के बारे में प्रथमदृष्टया यह समझा जाता है कि वह विक्रय की एक पृथक अनुबन्ध का विषय है [धारा 64(2)]।

ii) विक्रय उस समय पूर्ण होता है जब नीलामकर्त्ता हथौड़ी मार कर या किसी अन्य रीति से विक्रय के पूर्ण होने की घोषणा करता है, उदाहरण के लिए, जब वह 'एक, दो, तीन' कहता है या 'जा रहा है, जा रहा है, गया'' शब्द आदि कहता है।

iii) जब नीलामकर्त्ता विक्रय पूर्ण होने की घोषणा करता है, तब विक्रय पूर्ण हो जाता है और तभी क्रेता को माल का स्वामित्व तत्काल हस्तांतरित हो जाता है।

iv) क्योंकि जनता से प्रस्ताव आमन्त्रित किए जाते हैं, अतः विक्रय पूर्ण होने से पहले बोली लगाने वाला व्यक्ति अपनी बोली (प्रस्ताव) को वापस ले सकता है। जब तक विक्रय के पूर्ण होने की घोषणा नहीं होती तब तक कोई भी बोली लगाने वाला अपनी बोली वापस ले सकता है [धारा 64(2)]।

v) विक्रेता या उसकी ओर से बोली लगाने का अधिकार स्पष्ट रूप से आरक्षित किया जा सकता है और जब यह अधिकार इस प्रकार से आरक्षित किया जाता है तो विक्रेता या उसकी ओर से कोई अन्य व्यक्ति नीलामी में बोली लगा सकता है [धारा 64(3)]। विक्रेता को यह अधिकार इसलिए दिया गया है ताकि क्रेताओं द्वारा परस्पर एक-दूसरे के विरुद्ध बोली न लगाने को सहमत हो जाने की स्थिति में, विक्रेता अपने अधिकारों की रक्षा कर सके। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रहे कि विक्रेता अपनी ओर से बोली लगाने के लिए केवल एक ही व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है। यदि एक से अधिक व्यक्ति नियुक्त किए जाते हैं तो यह कपट कहलाएगा तथा क्रेता की इच्छा पर विक्रय का अनुबन्ध व्यर्थनीय होगा।

vi) जब विक्रेता की ओर से बोली लगाने का अधिकार स्पष्ट तौर से अधिसूचित नहीं किया गया है वहां ऐसे विक्रय में विक्रेता द्वारा स्वयं बोली लगाना या किसी व्यक्ति को बोली लगाने के लिए नियुक्त करना विधिपूर्ण नहीं होता और न ही नीलामकर्त्ता के लिए यह विधिपूर्ण है कि वह किसी ऐसे व्यक्ति की बोली को स्वीकार कर ले। इस नियम का उल्लंघन करके किए गए विक्रय को ग्राहक कपटपूर्ण मान सकता है [धारा 64(4)]।

vii) आमतौर से नीलामकर्त्ता 'आरक्षित' मूल्य की घोषणा करता है। यह वह मूल्य है जिससे कम पर माल नहीं बेचा जाएगा। आरक्षित मूल्य इसलिए निश्चित किया जाता है जिससे विक्रेता की रक्षा हो और उसे बहुत कम मूल्य पर माल न बेचना पड़े। इस प्रकार यदि अधिकतम बोली आरक्षित मूल्य से कम है और नीलामकर्त्ता गलती से उस बोली को स्वीकार कर लेता है जो आरक्षित मूल्य से कम है, तो वह माल की सुपुर्दगी देने से इन्कार कर सकता है।

ऐसी स्थिति में जहां कि आरक्षित मूल्य अधिसूचित नहीं किया गया है, यदि नीलामकर्त्ता यह महसूस करता है कि प्रस्तावित मूल्य उसकी प्रत्याशा तक नहीं हो पाता तो वह अधिकतम बोली को स्वीकार करने से इन्कार कर सकता है। यह इसलिए संभव है कि 'बोली' केवल एक प्रस्ताव मात्र है जिसे नीलामकर्त्ता स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है।

viii) यदि विक्रेता मूल्य बढ़ाने के लिए नकली बोली लगाने वाले का उपयोग करता है, तो क्रेता की इच्छा पर विक्रय व्यर्थनीय होता है [धारा 64(6)]।

ix) बोली लगाने वालों में परस्पर एक-दूसरे के विरुद्ध बोली न लगाने का करार ''नाक आउट'' (knock out) करार कहलाता है। इस प्रकार का करार परस्पर प्रतिस्पर्धा को समाप्त करने के लिए किया जाता है। बोली लगाने वाले व्यक्ति परस्पर यह करार करते हैं कि उनमें से केवल एक व्यक्ति बोली लगाएगा, और वह जो कुछ भी प्राप्त करेगा वह आपस में बांट लिया जाएगा। ''नाक आउट'' करार पूर्णतः वैध है और अवैधानिक नहीं है। परन्तु यदि करार के पक्षकारों का इरादा किसी तीसरे पक्ष को धोखा देना है, तो ऐसा करार ''अवैधानिक'' कहलाएगा।

x) डैम्पिंग (damping) गैर कानूनी कार्य है जो बोली लगाने वालों को हतोत्साह करने के लिए की जाती है। यह माल को दोषपूर्ण बता कर या उन लोगों को किसी अन्य तरह से डरा के की जाती है जिससे कि वे भाग जाएं और नीलामी में भाग न ले सकें। यह अत्यन्त अवांछनीय एवं अवैधानिक कार्य है।

xi) विक्रेता द्वारा मूल्य बढ़ाने के लिए जो व्यक्ति नियुक्त किया जाता है उसे 'फूंकिया' (puffers) कहते हैं। फूंकिए का इरादा माल खरीदना नहीं होता। विक्रेता केवल एक 'फूंकिए' को नियुक्त कर सकता है अधिक को नहीं।

बोध प्रश्न ग

1) अदत्त विक्रेता कब माल का पुनर्विक्रय कर सकता है?

....

....

....

2) क्रेता को पुनर्विक्रय की सूचना देना क्यों आवश्यक है?

....

....

....

3) माल के पुनर्विक्रय पर प्राप्त लाभ को लौटाने के लिए क्या अदत्त विक्रेता बाध्य है?

....

....

....

4) नीलामी द्वारा विक्रय क्या है?

....

....

....

5) 'नॉक आउट' करार क्या है?

....

....

....

6) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :
   i) अदत्त विक्रेता माल का पुनर्विक्रय करने के लिए बाध्य होता है।
   ii) नाशवान माल की स्थिति में, क्रेता को सूचना दिए बिना अदत्त विक्रेता माल का पुनर्विक्रय कर सकता है।
   iii) जब माल के पुनर्विक्रय की सूचना क्रेता को दे दी गई है और पुनर्विक्रय पर हानि होती है, अदत्त विक्रेता इसे क्रेता से वसूल कर सकता है।
   iv) जब विक्रेता ने पुनर्विक्रय का अधिकार स्पष्टतः आरक्षित किया है, तो अदत्त विक्रेता द्वारा क्रेता को पुनर्विक्रय की सूचना देना आवश्यक नहीं है।
   v) यदि पुनर्विक्रय की सूचना नहीं दी जाती तो क्रेता का स्वत्वाधिकार प्रभावित होता है।
   vi) नीलामी द्वारा विक्रय तब पूर्ण होता है जब नीलामकर्त्ता हथौड़ी मारकर या अन्य किसी रीति से विक्रय के पूर्ण होने की घोषणा करता है।
   vii) बोली लगाने वाला व्यक्ति अपनी बोली को वापस नहीं ले सकता।
   viii) नीलामी द्वारा विक्रय में, विक्रेता आरक्षित मूल्य निर्धारित कर सकता है।
   ix) यदि नीलामी द्वारा विक्रय में विक्रेता ने बोली लगाने का अधिकार स्पष्ट रूप से आरक्षित किया है, तो विक्रेता या उसकी ओर से एक व्यक्ति बोली लगा सकता है।

19.8 सारांश

अदत्त विक्रेता वह होता है जिसे संपूर्ण मूल्य प्राप्त नहीं हुआ है और यदि किसी परक्राम्य विलेख के रूप में मूल्य प्राप्त हुआ है, तो उसे अनादृत कर दिया गया है। यदि किसी विक्रेता को आंशिक मूल्य प्राप्त हुआ है तो भी वह अदत्त विक्रेता होता है। अदत्त विक्रेता को दो अधिकार प्राप्त हैं--माल के प्रति तथा स्वयं क्रेता के प्रति।

माल के प्रति

i) **पूर्वाधिकार** : जब तक माल का मूल्य प्राप्त नहीं हो जाता है वह माल को अपने कब्जे में रख सकता है। यहाँ तक कि यदि माल की आंशिक सुपुर्दगी दी जा चुकी है, तो भी शेष माल पर

पूर्वाधिकार का प्रयोग किया जा सकता है। माल पर कब्ज़ा समाप्त होते ही पूर्वाधिकार समाप्त हो जाता है।

i) **मार्ग में रोकने का अधिकार** : जब क्रेता को माल पहुंचाने के प्रयोजन से किसी वाहक को दिया जाता है और इसी दौरान क्रेता दिवालिया हो जाता है, तो माल को मार्ग में रोका जा सकता है। जिस क्षण माल किसी वाहक को सुपुर्द किया जाता है तब से ले कर उस क्षण तक माल मार्ग में रहता है जब तक कि उसे क्रेता या उसके एजेंट को सुपुर्द न कर दिया जाए। जब क्रेता को या उसके एजेंट को माल सुपुर्द कर दिया जाता है या जब वाहक क्रेता को यह अभिस्वीकृति देता है कि वह माल को क्रेता की ओर से रखे हुए हैं, तो माल मार्ग में नहीं रहता। मार्ग में माल को रोकने के लिए वाहक को या उसके प्रधान को उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए।

ii) **पुनर्विक्रय का अधिकार** : नाशवान प्रकृति के माल की दशा में, अदत्त विक्रेता, क्रेता को सूचना दिए बिना, माल का पुनर्विक्रय कर सकता है, परन्तु अन्य प्रकार के माल की दशा में पुनर्विक्रय से पहले क्रेता को उचित सूचना अवश्य दी जानी चाहिए। सूचना देने के बाद पुनर्विक्रय करने पर अदत्त विक्रेता को हानि होती है तो विक्रेता, क्रेता से इसे वसूल कर सकता है। परन्तु यदि पुनर्विक्रय पर कोई लाभ या आधिक्य है तो अदत्त विक्रेता इसे अपने पास रख सकता है। यदि पुनर्विक्रय की सूचना नहीं दी जाती, तो ये अधिकार समाप्त हो जाते हैं।

वयं क्रेता के विरुद्ध अधिकार

) **मूल्य के लिए दावा** : जब क्रेता को माल का स्वामित्व हस्तांतरित हो चुका हो तो अदत्त विक्रेता मूल्य के लिए क्रेता पर दावा कर सकता है। यदि माल का स्वामित्व अभी हस्तांतरित नहीं हुआ है, तो अदत्त विक्रेता केवल हर्जाने के लिए दावा कर सकता है।

i) **हर्जाने के लिए दावा** : जब क्रेता अनुचित रूप से माल को स्वीकार करने तथा मूल्य चुकाने से इन्कार करता है, तो विक्रेता उसके विरुद्ध हर्जाने के लिए दावा कर सकता है।

ii) **ब्याज के लिए दावा** : त्रुटि किए जाने की तिथि से विक्रेता मूल्य पर ब्याज की भी मांग कर सकता है।

ोलामी द्वारा विक्रय की स्थिति में माल विक्रय के लिए रखा जाता है और जनता से बोली ामंत्रित की जाती है। नीलामकर्त्ता प्रस्ताव आमंत्रित करता है और इच्छुक क्रेता मूल्य बोलकर स्ताव करते हैं। अधिकतम बोली लगाने वाले को प्रायः माल बेचा जाता है। विक्रय पूर्ण होने से हले बोली लगाने वाला अपनी बोली को वापस ले सकता है। नीलामकर्त्ता द्वारा विक्रय पूर्ण होने ो घोषणा करने पर विक्रय पूर्ण होता है। जब एक बार विक्रय पूर्ण हो जाता है तो माल का वामित्व क्रेता को तुरन्त हस्तांतरित हो जाता है। कई बार विक्रेता बोली लगाने का अधिकार ारक्षित रखता है, उस दशा में विक्रेता या उसकी ओर से कोई अन्य एक व्यक्ति बोली लगा ाकता है।

ोलामकर्त्ता उस आरक्षित मूल्य की घोषणा कर सकता है, जिससे कम पर माल नहीं बेचा ाएगा। नीलामी द्वारा विक्रय में नीलामकर्त्ता सबसे ऊंची बोली को स्वीकार करने के लिए बाध्य हीं है।

19.9 शब्दावली

ोलाम : यह सार्वजनिक विक्रय है, जहां सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को माल बेचा जाता है।

ोली : यह इच्छुक क्रेता द्वारा प्रस्तावित मूल्य है।

ाहक : वह जिसे क्रेता तक माल ले जाने के लिए सुपुर्द किया जाता है।

डैम्पिंग : कोई भी ऐसा कार्य जिससे क्रेता को बोली लगाने से या मूल्य बढ़ाने से रोका जाता है।

देवालिया : ऐसा व्यक्ति जिसने ऋणों का भुगतान करना बन्द कर दिया हो अथवा जो अपने ऋणों को चुकाने में असमर्थ हो।

ाक आउट करार : बोली लगाने वालों में परस्पर ऐसा करार कि वे एक-दूसरे के विरुद्ध बोली हीं लगाएंगे।

ूर्वाधिकार : जब तक दूसरे द्वारा देय राशि प्राप्त नहीं हो जाती तब तक उसका माल रोके रखने का अधिकार।

फूंकिया : विक्रेता द्वारा नियुक्त ऐसा व्यक्ति जो मूल्य बढ़ाने के लिए नियुक्त किया जाता है और जिसका इरादा माल खरीदना नहीं है।

आरक्षित मूल्य : वह मूल्य जिससे कम पर माल नहीं बेचा जाएगा।

मार्ग में : माल तब मार्ग में माना जाता है जब वह न तो विक्रेता के कब्ज़े में है और न ही क्रेता के, बल्कि एक स्वतन्त्र वाहक के कब्ज़े में है।

अदत्त विक्रेता : ऐसा व्यक्ति जिसे संपूर्ण मूल्य प्राप्त नहीं हुआ है अथवा विनिमय प्रपत्र या अन्य परक्राम्य विलेख जो प्राप्त हुआ वह अनादृत हो गया।

19.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 4 i) सही ii) गलत iii) सही iv) सही v) गलत
vi) गलत vii) सही viii) सही ix) सही

ख) 4 i) माल ii) कब्ज़ा iii) क्रेता दिवालिया हो जाता है
iv) माल क्रेता या उसके एजेंट को सुपुर्द कर दिया जाता है
v) वाहक को या उसके प्रधान को vi) अदत्त विक्रेता के प्रति संपरिवर्तन के लिए

5 i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) सही

ग) 6 i) गलत ii) सही iii) सही iv) सही v) गलत
vi) सही vii) गलत viii) सही ix) सही

19.11 स्वपरख प्रश्न/अभ्यास

1) अदत्त विक्रेता की परिभाषा कीजिए। उसके क्या अधिकार हैं?
2) अदत्त विक्रेता को (i) माल के विरुद्ध तथा (ii) स्वयं क्रेता के विरुद्ध क्या अधिकार प्राप्त हैं, व्याख्या कीजिए।
3) "माल को मार्ग में रोकने का अधिकार, पूर्वाधिकार का विस्तार है।" टिप्पणी कीजिए।
4) पूर्वाधिकार तथा माल को मार्ग में रोकने के अधिकार में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
5) अदत्त विक्रेता के पूर्वाधिकार तथा मार्ग में रोकने के अधिकार पर उप-विक्रय या गिरवी का क्या प्रभाव पड़ता है?
6) वे परिस्थितियां बताइए जब मार्ग में रहना समाप्त हो जाता है।
7) विक्रेता माल का कब पुनर्विक्रय कर सकता है? स्पष्ट कीजिए।
8) नीलामी द्वारा विक्रय से संबंधित नियमों को संक्षेप में बताइए।
9) निम्नलिखित का कारण सहित उत्तर दीजिए :
   i) A ने B को इस शर्त के बिना माल बेचा कि जब तक मूल्य नहीं चुकाया जाएगा माल की सुपुर्दगी नहीं दी जाएगी। B को सलाह दीजिए।

      [**संकेत :** A अदत्त विक्रेता है, वह पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है। मूल्य का भुगतान करने के बाद ही B माल ले सकता है]।

   ii) A ने B को कुछ माल बेचा। B एक चैक के द्वारा A को भुगतान करता है। इससे पहले कि B माल की सुपुर्दगी ले पाता, उसका चैक बैंक द्वारा अनादृत हो जाता है। परिणामस्वरूप A माल का मूल्य प्राप्त न होने तक, B को माल देने से मना कर देता है। क्या A का यह कार्य न्यायोचित है?

      [**संकेत :** हां, A का कार्य न्यायोचित है। A अदत्त विक्रेता है और वह माल पर पूर्वाधिकार का प्रयोग कर सकता है]।

   iii) सुदेश ने कलकत्ता निवासी मोहन को 50 बोरी चावल बेचे और रेल से माल भेज दिया। रेलवे रसीद मोहन के नाम पृष्ठांकित करके उसे भेज दी गई। माल जब कलकत्ता पहुंचता है तब मोहन रेलवे को माल दुर्गापुर ले जाने के लिए कहता है। इसी दौरान

मोहन दिवालिया हो जाता है। सुदेश रेलवे को आदेश देता है कि माल को रोक दिया जाए। क्या वह सफल होगा?

[**संकेत** : नहीं। माल को नहीं रोका जा सकता क्योंकि जब रेलवे ने मोहन की प्रार्थना पर माल कहीं और ले जाना स्वीकार किया, तब माल मार्ग में नहीं रहा धारा 51(3)]।

iv) अविनाश 20,000 रुपये का माल गोपाल को उधार बेचता है और माल प्रेषित कर देता है। 10,000 रुपये का ऋण लेने के लिए गोपाल जमानत के रूप में रेलवे रसीद कुमार के नाम कर देता है। इससे पहले कि माल गन्तव्य स्थान पर पहुंचे गोपाल दिवालिया हो जाता है। अविनाश माल को मार्ग में रोकने की सूचना देता है परन्तु कुमार उस पर अपना अधिकार बताता है। क्या अविनाश माल को मार्ग में रोकने में सफल होगा?

[**संकेत** : हां, अविनाश कुमार के गिरवी के अधीन माल को मार्ग में रोक सकता है (धारा 53)]।

v) विरेन्द्र ने कुछ माल अशोक को बेचा और प्रेषित कर दिया। मूल्य अभी नहीं चुकाया गया है। अशोक दिवालिया हो जाता है। अभी जब कि माल मार्ग में ही है, अशोक नकदी के बदले रेलवे रसीद मोहन के नाम कर देता है। मोहन को अशोक के दिवालिएपन की जानकारी है। क्या विरेन्द्र माल को मार्ग में रोक सकता है।

[**संकेत** : हां। वीरेन्द्र माल को रोक सकता है क्योंकि मोहन ने सद्भाव से कार्य नहीं किया है]।

vi) रोशन अपने गोदाम में रखा कुछ गेहूं राजेश को बेचता है यह तय हुआ कि राजेश को एक माह का उधार दिया जाएगा। राजेश, रोशन के गोदाम में ही गेहूं रखे रहने देता है। एक महीने की उधार की अवधि समाप्त होने से पहले राजेश दिवालिया हो जाता है। क्या रोशन सरकारी समनुदेशिती को माल सुपुर्द करने से इन्कार कर सकता है?

[**संकेत** : हां। रोशन को माल पर पूर्वाधिकार प्राप्त है (धारा 47)]।

vii) दिल्ली निवासी अमर, बम्बई निवासी बसन्त को आदेश देता है कि वह कुछ माल उसे दिल्ली में सुपुर्द करे। बसन्त रेल के द्वारा माल भेज देता है। दिल्ली में माल पहुंचने पर रेलवे अधिकारी अमर को सूचित करते हैं कि अमर के जोखिम पर माल स्टेशन पर पड़ा हुआ है। इसी दौरान अमर दिवालिया हो जाता है। क्या बसन्त माल को मार्ग में रुकवा सकता है?

[**संकेत** : नहीं। बसन्त माल नहीं रुकवा सकता क्योंकि जब रेलवे अधिकारियों ने क्रेता को यह अभिस्वीकृति दी कि माल अमर के जोखिम पर पड़ा है तब माल मार्ग में नहीं रहा (धारा 51(3)]।

viii) क्रांति ने कुछ फर्नीचर नीलामी द्वारा मनोहर को बेचा। मनोहर ने मूल्य के लिए चैक दिया और फर्नीचर प्राप्त कर लिया। करार की एक शर्त यह थी कि माल का स्वामित्व क्रेता को तब तक हस्तांतरित नहीं होगा जब तक चैक का भुगतान नहीं होता। मनोहर ने केशव के हाथ फर्नीचर बेच दिया। क्रांति, केशव से फर्नीचर वापस प्राप्त करना चाहता है। क्या वह सफल होगा?

[**संकेत** : नहीं। क्योंकि स्वामित्व हस्तांतरित हो चुका है अतः विक्रय पूर्ण है। केशव को श्रेष्ठ अधिकार मिलता है]।

ix) अशोक एक नीलामी में स्टील की अलमारी के लिए बोली लगाता है, परन्तु हथौड़ी मारने से पहले वह अपनी बोली वापस लेता है। नीलामी की एक शर्त यह थी कि "एक बार लगाई गई बोली वापस नहीं ली जा सकती" और अशोक को इस शर्त की जानकारी थी। नीलामकर्त्ता ने मूल्य के लिए अशोक पर दावा कर दिया। क्या वह सफल होगा?

[**संकेत** : नहीं। अशोक मूल्य के लिए उत्तरदायी नहीं है, क्योंकि विक्रय पूर्ण होने से पहले वह अपनी बोली को वापस ले सकता है [धारा 64(2)]।

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को भलीभाँति समझने में मदद मिलेगी। इनका उत्तर लिखने का प्रयास करें। लेकिन उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजे। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन.डी. पगारे एवं दिनकर पगारे : *व्यापारिक सन्नियम*, नई दिल्ली (सुल्तान चंद एंड संस, 1989) भाग 2 अध्यक्ष 5.1 से 5.5

आर के ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश : *व्यापारिक सन्नियम*, (श्री महावीर बुक डिपो, नई दिल्ली, 1989) अध्याय 21-25

आर.पी. महेश्वरी एवं एस.एन. महेश्वरी : *व्यापारिक सन्नियम*, (नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1989) अध्याय 1-6

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय

B.COM-D-2
व्यापारिक सन्नियम

खंड

6

विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम

इकाई 20

विनिमय साध्य प्रपत्र तथा इसके पक्षकार 5

इकाई 21

प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र तथा चैक 19

इकाई 22

परक्रामण 36

इकाई 23

प्रस्तुतीकरण और मुक्ति 49

खंड 6 विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम (Negotiable Instrument Act)

विनिमय साध्य प्रपत्रों से सबंधित विधि विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम 1881 में दी हुई है। यह अधिनियम 1 मार्च, 1881 से लागू हुआ। यह जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर सारे भारतवर्ष में लागू होता है। विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम में 140 धाराएँ हैं। अधिनियम में इसमें प्रयोग की गई मुख्य शब्दों की परिभाषा दी गई है (धाराएँ 4 से 25), संबंधित पक्षकारों और उनके दायित्व व अधिकारों के बारे में बताया गया है (धाराएँ 26 से 45), परक्रामण (negotiation) कार्य की जटिलताएँ बताई गयी हैं (धाराएँ 46 से 60), स्वीकृति/भुगतान के लिए, प्रस्तुतीकरण का विवरण दिया गया है (धाराएँ 61 से 87), दायित्वों से मुक्ति की विधि बताई गई है (धाराएँ 82 से 90) और अनादरण इत्यादि से उत्पन्न कार्यवाही के बारे में बताया गया है (धाराएँ 91 से 117)। अधिनियम का शेष भाग साक्ष्य के नियमों, विनिमय साध्य प्रपत्रों के संबंध में कुछ सामान्य मान्यताओं तथा रेखित चैकों आदि से संबंधित विशेष प्रावधानों के बारे में है।

यह खंड इन प्रपत्रों और इनके परक्रामण के विधिक निहितार्यों (regal implications) को समझने के लिए इस अधिनियम के सर्वाधिक प्रासंगिक भागों की संक्षेप में व्याख्या करता है। इससे हमें व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है जो कि वाणिज्य के छात्र के लिए प्रासंगिक हो सकता है ताकि वह एक वैध प्रपत्र लिख/बता सके और एक अच्छे और बुरे प्रलेख (document) में अंतर कर सके। इस खंड में चार इकाइयाँ हैं।

इकाई 20 में विनियम साध्य प्रपत्रों के अर्थ और विशेषताओं पर, अस्पष्ट और अपूर्ण प्रपत्रों संबंधी विधि पर और विभिन्न पक्षकारों की सक्षमता और दायित्वों पर विचार किया गया है। इसमें धारक और यथाविधि धारक का अर्थ और उनके विशेषाधिकारों का भी वर्णन किया गया है।

इकाई 21 में विभिन्न विनिमय साध्य प्रपत्रों के अर्थ और उनकी विशिष्ट विशेषताओं व निहितार्थों का वर्णन गया है।

इकाई 22 में परक्रामण और समनुदेशन अभिहस्तांकन (assignment) का अंतर, वैध, परक्रामण के अपेक्षित गुण, वापस परक्रामण का अर्थ और विभिन्न पक्षकारों के दायित्वों को स्पष्ट किया गया है। इसमें जाली विपत्र, खोये गये या चुराये गये प्रपत्र और कपट से प्राप्त किये गये या अवैध प्रतिफल के बदले प्राप्त किये गये प्रपत्रों के विधिक निहितार्थों को भी स्पष्ट किया गया है।

इकाई 23 स्वीकृति और भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम और प्रपत्र द्वारा उत्पन्न दायित्व से समापन संबंधी नियमों के बारे में है।

इकाई 20 विनिमय साध्य प्रपत्र तथा इसके पक्षकार

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य
20.1 प्रस्तावना
20.2 विनिमय साध्य प्रपत्र का अर्थ
20.3 विनिमय साध्य प्रपत्र के आवश्यक तत्त्व
20.4 विनिमय साध्य प्रपत्रों के बारे में धारणाएँ
20.5 अस्पष्ट प्रपत्र
20.6 अपूर्ण प्रपत्र
20.7 विभिन्न पक्षकारों की सक्षमता एवं दायित्व
    20.7.1 विभिन्न प्रपत्रों के पक्षकार
    20.7.2 पक्षकार होने के लिए व्यक्ति की सक्षमता
    20.7.3 विभिन्न पक्षकारों के दायित्व
20.8 धारक
20.9 यथाविधि धारक
    20.9.1 यथाविधि धारक कौन है?
    20.9.2 यथाविधि धारक के विशेषाधिकार
20.10 सारांश
20.11 शब्दावली
20.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
20.13 स्वपरख प्रश्न

20.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- विनिमय साध्य प्रपत्र का अर्थ और उसकी पक्राम्यता को स्पष्ट कर सकें
- अस्पष्ट और अपूर्ण प्रपत्रों के निहितार्थों का वर्णन कर सकें
- यह बता सकें कि विभिन्न प्रपत्रों के विभिन्न पक्षकार कौन-कौन है और उनकी सक्षमता तथा विशेष परिस्थितियों में उनके दायित्वों को स्पष्ट कर सकें
- प्रपत्र की परक्राम्यता को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कर सकें
- विनिमय साध्य प्रपत्र के धारक और यथाविधि धारक का वर्णन कर सकें
- यथाविधि धारक के विशेषाधिकारों का वर्णन कर सकें।

20.1 प्रस्तावना

विनिमय साध्य प्रपत्र (negotiable instrument) पर यह पहली इकाई है। इस इकाई में आप विनिमय साध्य 'प्रपत्र का अर्थ', विशेषताएँ व धारणाएँ, अस्पष्ट व अपूर्ण प्रपत्रों संबंधी विधि और प्रपत्रों के विभिन्न पक्षकारों की सक्षमता और दायित्वों का अध्ययन करेंगे। आप धारक और यथाविधि धारक के अर्थ और उनके विशेषाधिकारों के बारे में भी पढ़ेंगे।

20.2 विनिमय साध्य प्रपत्र का अर्थ

जैसा कि विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम 1881 में उल्लेख किया गया है, प्रपत्र एक विधिक प्रलेख या एक वैध रूप से मान्य लिखित प्रपत्र है। विनियम साध्य प्रपत्र से तात्पर्य ऐसे लिखित प्रलेख से है जो किसी व्यक्ति के पक्ष में अधिकार उत्पन्न करता है और जो स्वतंत्रता से हस्तांतरणीय है। इसमें परक्राम्यता का अनुपम गुण है यानि एक सरल प्रक्रिया द्वारा हस्तांतरणीय, जिसमें केवल एक हस्ताक्षर और सुपुर्दगी की आवश्यकता होती है। विनियम साध्य प्रपत्र में स्वामित्व अधिकार को (जिसे अधिकार या संपति कहते हैं) प्रपत्र के पीछे हस्ताक्षर करके उसे उस व्यक्ति को सुपुर्द किया जा सकता है जिसे यह हस्तांतरित किया जाना है। विनिमय साध्य प्रपत्र के इस तरीके से किये गये हस्तांतरण को कानून मान्यता प्रदान करता है और इसे संरक्षण प्रदान करता है। सरल परक्राम्यता इसकी अनुपम विशेषता है जो कि अन्य

प्रलेखों में नहीं होती। उदाहरण के लिए, यदि आपके पास कृषि भूमि के एक टुकड़े के स्वामित्व का एक प्रलेख है तो इसके स्वामित्व अधिकार को हस्तांतरित करने के लिए आपको कुछ कानूनी औपचारिकताओं का पालन करना पड़ेगा। यदि आप केवल इसके पीछे हस्ताक्षर कर दें और क्रेता को भूमि प्रलेख सुपुर्द कर दें तो कानून न तो इसे वैध मानेगा और न ही इस क्रिया का संरक्षण करेगा। मुद्रा के सरल व शीघ्र हस्तांतरण के लिए, खास तौर से व्यापार में, विनिमय साध्य प्रपत्र आवश्यक बन जाते हैं। ये प्रपत्र मुद्रा में सुविधाजनक वृद्धि भी बन गये हैं क्योंकि ये लगभग उतनी ही सरलता से हस्तांतरित किये जा सकते हैं जितनी सरलता से काग़ज़ी मुद्रा।

विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम (1881) केवल तीन विशेष प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्रों का वर्णन करता है जो सामान्य प्रचलन में है। ये हैं : (1) प्रतिज्ञा पत्र (promissory note), (2) विनिमय पत्र (bill of exchange) तथा (3) चैक जो वाहक को या किसी व्यक्ति के आदेश पर देय हैं। अधिनियम उन सभी प्रकार के प्रपत्रों का वर्णन नहीं करता जिनमें परक्राम्यता का तत्त्व है जैसे कि जहाजी बिल्टी (bill of lading), रेलवे रसीद, गोदामों पर सुपुर्दगी आदेश, आदि। अतः एक प्रपत्र विनिमय साध्य प्रपत्र हो सकता है। लेकिन फिर भी यह संभव है कि यह इस अधिनियम के क्षेत्र में नहीं आता। यह निर्णय दिया गया है कि हुण्डी या देशी भाषा में लिखे दस्तावेज इस अधिनियम द्वारा विनियमित नहीं होते चाहे, ये व्यापारिक समुदाय में प्रथा व प्रचलन में विनिमय साध्य प्रपत्र माने जाते हैं।

जैसा कि अधिनियम की धारा 13 में परिभाषा दी गयी है, "**विनिमय साध्य प्रपत्र से अभिप्राय प्रतिज्ञा-पत्र, विनिमय पत्र अथवा चैक से है जो आदेशानुसार या वाहक को देय हों।**"

स्पष्टीकरण-I : वह प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक आदेशानुसार देय है जिसमें ऐसे देय होना स्पष्ट हो या जिसका किसी विशिष्ट व्यक्ति को देय **होना स्पष्टतः हो और जिसमें हस्तांतरण को निषिद्ध करने वाले शब्द या ऐसा दर्शाने वाले शब्द हैं कि वह हस्तांतरणीय नहीं हैं, अंतर्विष्ट न हों।**

स्पष्टीकरण-II : वह प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक वाहक को देय है जिसमें यह स्पष्ट हो कि वह ऐसे देय है या जिस पर एकमात्र या अंतिम पृष्ठांकन कोरा पृष्ठांकन है।

स्पष्टीकरण-III : जहां कि प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय या चैक का या तो मूलतः या पृष्ठांकन द्वारा विनिर्दिष्ट व्यक्ति के आदेशानुसार, न कि उसे या उसके आदेशानुसार देय होना स्पष्ट है, वहां ऐसा होने पर भी वह उसके विकल्प पर उसे या उसके आदेशानुसार देय है।

विनिमय साध्य प्रपत्र को दो या अधिक आदाताओं को देय बनाया जा सकता है या इसके विकल्प में इसे दो में से एक को या अनेक आदाताओं में से एक या कुछ को देय बनाया जा सकता है।

क्योंकि यह अधिनियम की सबसे महत्त्वपूर्ण धाराओं में से एक है, इस धारा को पूरा का पूरा यहाँ दोहराया गया है। इसके प्रत्येक शब्द पर उचित ध्यान देना चाहिए।

ये प्रावधान रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम 1934 की धारा 31 के अधीन हैं। इसमें प्रावधान है कि :

क) रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया या केन्द्रीय सरकार के अलावा भारत में कोई भी व्यक्ति "वाहक को देय" प्रतिज्ञा पत्र बना या जारी नहीं कर सकता।

ख) रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया या केन्द्रीय सरकार के अलावा भारत में कोई भी व्यक्ति "वाहक को माँग पर देय" विनिमय पत्र न तो लिख सकता है और न ही स्वीकार कर सकता है।

ग) बैंक में किसी व्यक्ति के खाते पर "वाहक को मांग पर देय" चैक लिखा जा सकता है।

रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम की धारा 31 के प्रावधानों के निहितार्थ निम्नलिखित हैं :

क) प्रतिज्ञा पत्र चाहे माँग पर देय हो या एक निश्चित अवधि के बाद, यह मूलतः कभी भी "वाहक को देय" नहीं लिखा जा सकता।

ख) विनिमय पत्र मूलतः "वाहक को देय" लिखा जा सकता है, लेकिन यदि यह वाहक को देय है तो इसे माँग पर देय नहीं बनाया जा सकता, इसे केवल आदेशानुसार देय बनाया जा सकता है। बाद में, कोरे पृष्ठांकन द्वारा इसे वाहक को माँग पर देय बनाया जा सकता है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, विनिमय साध्य प्रपत्र से अभिप्राय प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक से है। अब हम इन तीनों प्रपत्रों का संक्षेप में विवरण करते हैं (इनका विस्तृत विवरण इकाई 21 में किया गया है)।

प्रतिज्ञा पत्र में एक वचन होता है यानि इसमें राशि देने का वचन दिया जाता है। 'यह एक लिखित प्रपत्र है (बैंक नोट या करेंसी नोट को छोड़कर) जिस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होते हैं और जिसमें वह निश्चित व्यक्ति को अथवा उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को अथवा प्रपत्र के वाहक को एक निश्चित राशि भुगतान करने का शर्तरहित वचन देता है (धारा 4)। इस पर स्टाम्प लगा होना चाहिए और इस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होने चाहिए। यह आदाता को देय होता है। नीचे दिये गये प्रतिज्ञा पत्र के नमूने को ध्यान से देखिए :

Specimen of a Promissory Note

Place : New Delhi
Date : 17 Feb., 1989

Rs. 5,000

On Demand I promise to pay to Shri Ram Kumar or order a sum of Rupees Five Thousand only, for value received.

Signature of S. Khanna
on Revenue Stamp

To

Shri Ram Kumar
220 Asiad Village
New Delhi-110049

विनिमय पत्र में एक व्यक्ति, जिसे देनदार या अदाकर्ता (drawee) कहते हैं, को आदेश दिया जाता है। यह एक "लिखित प्रपत्र है जिस पर उसे लिखने वाले का हस्ताक्षर होता है और वह किसी निश्चित व्यक्ति को शर्तरहित आदेश देता है कि वह एक निश्चित राशि किसी निश्चित व्यक्ति को अथवा उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को अथवा प्रपत्र के वाहक को चुका दे" (धारा 5)। इस पर स्टाम्प लगाये जाते हैं और लिखने वाले (drawer) के हस्ताक्षर होते हैं। यह आदेश या निर्देशन अदाकर्ता यानी देनदार (drawee), को किसी अन्य व्यक्ति को, जिसे आदाता (payee) कहते हैं, एक निश्चित राशि (देखते ही या निश्चित समय के बाद) चुकाने का होता है। देनदार भुगतान करने की स्वीकृति (जब भुगतान का समय आता है) देकर स्वीकर्ता बन जाता है। विनिमय पत्र का एक नमूना नीचे दिया गया है, इसका अध्ययन कीजिए।

Specimen of a Bill of Exchange

Place : New Delhi
Date : 17 Feb., 1989

Rs. 5,000

Three months after date pay to Ram Kumar or order a sum of Rupees Five Thousand only, for value received.

Accepted
Krishnan

Signature of S. Kumar
on Revenue Stamp

To

Shri Krishnan
K-76 Hauz Khas
New Delhi-110016

इस विनिमय पत्र में एस. कुमार लिखने वाला है और कृष्णन देनदार या अदाकर्ता है। कृष्णन स्वीकृति देने के बाद स्वीकर्ता है। यह प्रपत्र रामकुमार को दे दिया जाता है और इससे वह इसका धारक (holder) बन जाता है। जब रामकुमार उसका परक्रामण करना चाहता है तो वह इसके पिछली ओर हस्ताक्षर कर देता है और उसे X के सुपुर्द कर देता है, तब वह पृष्ठांकनकर्ता (endorser) और X पृष्ठांकिती (endorsee) बन जाता है।

चैक "एक ऐसा विनिमय पत्र है जो किसी विशेष बैंक के नाम लिखा जाता है और जो स्पष्ट रूप से माँग पर देय के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से देय नहीं होता।" (धारा 6)। चैक आहर्ता (लेखक) द्वारा लिखा और हस्ताक्षरित किया जाता है, इसके द्वारा बैंक (देनदार) को माँग पर आदाता को निश्चित राशि देने का निर्देश दिया जाता है। इस पर स्टाम्प की आवश्यकता नहीं होती।

Specimen of a Cheque

Punjab National Bank
Indira Gandhi National Open University, New Delhi-110068

Dated : 17 Feb. 1989

Pay *Ram Kumar* or bearer the sum of
Rupees *Five thousand only*. Rs. 5,000/-

Signature of S. Kumar

इस चैक में श्री एस. कुमार आदेशक (drawer) है, पंजाब नैशनल बैंक अदाकर्ता है और राम कुमार आदाता है। जब राम कुमार इस चैक का परक्रामण करना चाहता है तो वह पृष्ठांकक बनने के लिए इसके पीछे हस्ताक्षर कर देता है। जो नमूने यहाँ दिये गये हैं वे इन प्रपत्रों के सरल रूप हैं। इन पर विस्तार से चर्चा इकाई 21 में आगे की जाएगी।

जब किसी प्रपत्र को देनदार के रूप में उल्लिखित व्यक्ति के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरण करना है तो यह पृष्ठांकन द्वारा किया जाता है यानि प्रपत्र की पिछली और अदाकर्ता (drawee) द्वारा हस्ताक्षर करके। वह व्यक्ति जिसके पक्ष में पृष्ठांकन किया जाता है या जो पृष्ठांकन के बाद धारक बन जाता है उसे पृष्ठांकिती कहते हैं। बहुत से क्रमिक पृष्ठांकन हो सकते हैं और इसलिए बहुत से अनुक्रमिक पृष्ठांकिती हो सकते हैं।

20.3 विनिमय साध्य प्रपत्र के आवश्यक तत्त्व

विनिमय साध्य प्रपत्र की महत्वपूर्ण विशेषताएँ निम्नलिखित हैं:

1 प्रपत्र की परक्राम्यता के लिए यह आवश्यक है कि वह वाहक को या उसके आदेशानुसार देय कहा जाय या अन्य समानार्थक शब्दों का प्रयोग किया जाए तो आदाता को इसे तीसरे व्यक्ति को समनुदेशित करने (Assign) या हस्तांतरित करने का अधिकार देते हैं। अतः एक प्रपत्र के परक्राम्य होने के लिए उसे निम्नलिखित स्वरूपों में देय बनाना या लिखना चाहिए अर्थात् "A को या उसके आदेशानुसार", "A के आदेशानुसार", "A या वाहक को" या "वाहक को"। यह आवश्यक नहीं है कि ये स्वरूप यानि "To" या "को" का ही प्रयोग किया जाए। अन्य कोई शब्द या स्वरूप भी (जैसे A के आदेशानुसार दो), जो वही अर्थ व्यक्त करते हों, उतने ही प्रभावी होंगे। इन तीन विभिन्न प्रपत्रों के संबंध में आवश्यक वर्णन इकाई 21 में किया जाएगा।

   सरकार या भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी की गई कागजी मुद्रा (करेंसी नोट) में मूल्य, वाहक को देय होता है। रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम 1934 यह बताता है कि रिजर्व बैंक या केन्द्रीय सरकार के अलावा कोई अन्य व्यक्ति वाहक को माँग पर देय विनिमय पत्र, हुन्डी या प्रतिज्ञा पत्र लिख, बना, स्वीकार या जारी नहीं कर सकता है। इसी प्रकार प्रतिज्ञा पत्र वाहक को देय के रूप में बनाये या जारी नहीं किये जा सकते (रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम की धाराएँ 31 और 32)। इस प्रकार मुक्त परक्राम्यता को कुछ सीमा तक प्रतिबंधित कर दिया गया है। भले ही विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र को वाहक को माँग पर देय बनाया, लिखा नहीं जा सकता, लेकिन कोरा पृष्ठांकन करके इसे वाहक दस्तावेज बनाया जा सकता है। चैक पर ऊपर बताया गया प्रतिबंध नहीं है।

2 यह पहले बताया जा चुका है कि विनिमय साध्य प्रपत्र का अभिप्राय प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक से है जो वाहक को या आदेशानुसार देय होते हैं। यह आदेशानुसार देय है जब इसे इस प्रकार देय होना कहा गया है और जब यह विशेष व्यक्ति को देय हो तब भी, और इसमें हस्तांतरण को प्रतिषेध करने वाले शब्द नहीं होते या इसमें ऐसे शब्द नहीं होते जो इस इच्छा को प्रकट करें कि यह हस्तांतरणीय नहीं होगा। यद्यपि अधिनियम में ऊपर बताए गए तीन प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्रों का वर्णन किया गया है, इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि किसी और प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्र हो ही नहीं सकते। प्रपत्र की परक्राम्यता व्यापारियों के बीच लंबी अवधि के प्रयोग से और व्यापक रूप से प्रचलित प्रथा के द्वारा भी स्वीकार की जाती है। यह निर्णय करने के लिए कि कोई प्रपत्र विनियम साध्य है या नहीं, कसौटी यह नहीं है कि इसका वर्णन अधिनियम की धारा 13 में है या नहीं। जैसा कि एक मुकदमें के निर्णय में कहा गया है यदि "एक प्रपत्र व्यापार की प्रथा के अनुसार सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय है, जैसे नगदी और इस पर इसके धारक, उस अवसर के लिए, द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता है तब यह विनियम पत्र कहलाने का अधिकारी है और इसका स्वामित्व असली अन्तरिती के पास मूल्य के बदले चला जाता है, भले ही इसका हस्तांतरण बाज़ार में न हुआ हो।

   इस प्रकार बहुत से विपत्र ऐसे हैं जिनका वर्णन धारा 13 में नहीं है लेकिन जो प्रयोग और प्रथा द्वारा विनिमय साध्य है। तदनुसार लाभांश अधिपत्र (dividend warrants) प्रथा द्वारा विनिमय साध्य हैं। परंतु ऐसे शेयर सर्टीफिकेट जिनके साथ ऐसे अंतरण विलेख (transfer deeds) नत्थी हैं जिनपर उसके रजिस्टर्ड स्वामी के केवल हस्ताक्षर मात्र हैं तथा सावधी जमा रसीदे (fixed deposite receipts) विनिमय साध्य प्रपत्र नहीं है। रेलवे रसीद का भी वाणिज्यिक प्रथा के अनुसार पृष्ठांकन द्वारा हस्तांतरण किया जा सकता है और माल के नष्ट या गुम हो जाने पर पृष्ठांकिती रेलवे प्रशासन के विरुद्ध मुकदमा दायर करने के लिए सक्षम होता है।

3 आपको रेखांकित चैकों पर लिखें इन शब्दों का पता होगा "A/c payee only" "वाहक को" या "आदेशानुसार देय।" विनिमय साध्य प्रपत्र में यदि विशेष रेखांकन के साथ ये शब्द "not negotiable" प्रयोग किये गये हैं, तब यह प्रपत्र फिर भी हस्तांतरणीय होता है लेकिन परक्राम्य नहीं। अधिनियम में "A/c payee या A/c payee" only जैसे रेखाँकन का विशेष रूप से प्रावधान नहीं है। ऐसा, प्रतीत होता है कि ऐसा पृष्ठांकन या रेखांकन, जिसमें "A/c payee या A/c payee only" शब्द हैं, प्रपत्र की परक्राम्यता को प्रतिबद्ध नहीं करता। यह वसूली बैंक (collecting bank) को केवल एक निदेश है कि प्रपत्र में बताए गए आदाता के खाते में ही राशि जमा करे। ऐसे रेखाँकन का केवल यह परिणाम होता है कि जब इसे वसूली बैंक को दिया जाता है, तो

उसे सावधान किया जाता है कि प्रपत्र की राशि केवल आदाता के खाते में जमा की जाए और किसी अन्य के खाते में नहीं और यदि राशि किसी अन्य के खाते में जमा कर दी जाती है तो बैंक लापरवाही के लिए उत्तरदायी होता है।

4 जब कोई प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र अथवा चैक किसी दूसरे व्यक्ति को इस प्रकार हस्तांतरित किया जाता है कि वह दूसरा व्यक्ति उसका धारक हो जाता है, तो प्रपत्र परक्रामित हुआ कहा जाता है (धारा 14)।

विनिमय साध्य प्रपत्र को दो प्रकार से हस्तांतरित किया जा सकता है (1) परक्रामण द्वारा या (2) समनुदेशन द्वारा। अधिनियम हस्तांतरण के केवल पहले प्रकार का वर्णन करता है। अभियोज्य दावों (actionable claims) के हस्तांतरण पर संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम में वर्णन किया गया है। इस भाग में केवल प्रतिज्ञा पत्रों, हुण्डियों, बिलों और चैकों पर विचार किया गया है। अतः जब इस प्रकार का प्रपत्र एक व्यक्ति को पृष्ठांकन या सुपुर्दगी या दोनों के द्वारा हस्तांतरित किया जाता है, जैसा कि इस अधिनियम में अधिकथित है, तब प्रपत्र को परक्रासित हुआ कहा जाता है, यह संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम के अंतर्गत एक दस्तावेज के द्वारा हस्तांतरण से भिन्न है। इस प्रकार, यदि कोई प्रपत्र वाहक को देय है, तो केवल सुपुर्दगी द्वारा इसका परक्रामण किया जा सकता है और किसी पृष्ठांकन की आवश्यकता नहीं है। लेकिन जब प्रपत्र आदेशानुसार देय है, तब परक्रामण, पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा संपन्न किया जाता है। आदाता या पृष्ठांकिती परक्रामण द्वारा धारक होता है।

5 **"जब विनिमय साध्य प्रपत्र का लेखक अथवा धारक, लेखक के रूप में हस्ताक्षर करने से अन्यथा, परक्रामण के उद्देश्य से उस प्रपत्र के पीछे या मुख-भाग पर या उससे संलग्न पर्ची पर अपने हस्ताक्षर करता है या इसी उद्देश्य के लिए एक विनिमय साध्य प्रपत्र के रूप में पूरा करने के लिए एक स्टांपित कागज पर इसी तरह हस्ताक्षर करता है, वह तब यह कहा जाता है कि वह उसे पृष्ठांकित करता है और वह "पृष्ठांकक" कहलाता है" (धारा 15)।**

"पृष्ठांकन" शब्द से अभिप्राय है प्रपत्र को हस्तांतरित करने के स्पष्ट आशय से उस पर या उससे संलग्न किसी कागज पर अपने नाम के हस्ताक्षर करना। परंतु पृष्ठांकन सामान्यतः प्रपत्र के पीछे किया जाता है। इसके वैध होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि इसे केवल इसके पीछे ही लिखा जाए। प्रपत्र के मुख पृष्ठ पर किया गया पृष्ठांकन भी उतना ही वैध है जितना कि उसके पीछे किया गया पृष्ठांकन।

प्रपत्र उस समय परक्रामित हुआ कहा जाता है जब ये ऐसी परिस्थितियों में हस्तांतरित किया गया हो जिससे कि अंतरिती को इसका धारक बनाया जा सकता हो। धाराएँ 47 और 48 में अंतरण के तरीकों का वर्णन किया गया है (धारक का अर्थ आगे चलकर बताया गया है)। यदि प्रपत्र आदेशानुसार देय है तो केवल पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा इसका परक्रामण किया जा सकता है। यदि यह वाहक को देय है, तो केवल सुपुर्दगी द्वारा इसका परक्रामण किया जा सकता है।

विनिमय साध्य प्रपत्र के पृष्ठांकन द्वारा हस्तांतरण और पृष्ठांकन के अलावा अन्य तरीकों से हस्तांतरण में महत्वपूर्ण अंतर यह है कि बाद वाले तरीकों में समनुदेशिती (asignee) प्रपत्र को किसी अन्य चल संपत्ति की भांति प्राप्त करता है और इसके वही अधिकार, हक और हित होंगे जो उसके हस्तांतरक (अभिहस्तांकनकर्ता) के हैं, जबकि पहली स्थिति में पृष्ठांकन द्वारा हस्तांतरी को विनिमय साध्य प्रपत्र के यथाविधि धारक के जो अधिकार और लाभ होते हैं, वे सभी अधिकार व लाभ प्राप्त होते हैं (यथाविधि धारक का इस इकाई में आगे चलकर विस्तार से वर्णन किया गया है)। विनिमय साध्य प्रपत्र की अब तक बताई गई विशेषताएँ संक्षेप में निम्नलिखित हैं :

1 अधिनियम द्वारा तीन प्रकार के प्रपत्रों को विशेष रूप से मान्यता दी गई है। ये हैं : प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र और चैक।

2 परक्राम्यता और निर्बाध रूप से इनका हस्तांतरण इनकी प्रकृति है।

3 प्रपत्र में यह व्यक्त किया जाना चाहिए कि यह आदेशानुसार देय है या धारक को देय है।

4 हुन्डी देशी भाषा में एक विनिमय पत्र है।

5 चैक पर "A/c payee" रेखांकन वसूली बैंक को राशि आदाता के खाते में जमा करने का निर्देश देता है।

6 परंपरा के अनुसार प्रपत्र के पीछे की तरफ हस्ताक्षर करके पृष्ठांकन किया जाता है।

बोध प्रश्न क

1 परक्राम्यता और समनुदेशन में अंतर स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

2 प्रतिज्ञा पत्र एक विनिमय साध्य प्रपत्र है। क्या यह वाहक को देय लिखा जा सकता है।

....

....

....

3 रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम किस प्रकार विनिमय साध्य प्रपत्रों को प्रतिबद्ध करता है?

....

....

....

4 सही उत्तर पर चिन्ह (√) लगाइए :

क) एक आदेशानुसार देय विनिमय साध्य प्रपत्र का परक्रामण किया जा सकता है :

i) पृष्ठांकन द्वारा
ii) पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा
iii) लिखने वाले द्वारा सुपुर्दगी से
iv) धारक द्वारा सुपुर्दगी से

ख) विनिमय पत्र से मिलता जुलता प्रपत्र :

i) प्रतिज्ञा पत्र है
ii) बीजक बिल है
iii) हुण्डी है
iv) करेंसी नोट है

ग) व्यापारियों में प्रचलन और प्रथा के द्वारा निम्नलिखित में से कौन सा विनिमय साध्य प्रपत्र है?

i) शेयर सर्टीफिकेट
ii) जमा रसीद
iii) लाभांश अधिपत्र
iv) माँग पर देय ड्राफ्ट

20.4 विनिमय साध्य प्रपत्रों के बारे में धारणाएँ

विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम की धाराएँ 118 और 119 विनिमय साध्य प्रपत्रों के संबंध में कुछ सामान्य धारणाओं का वर्णन करती हैं। ये धारणाएँ (presumptions) जब तक कि इसके प्रतिकूल सिद्ध न कर दिया जाए प्रचलन में मानी जाती हैं। ये धारणाएँ निम्नलिखित हैं :

1 **प्रतिफल :** प्रत्येक प्रपत्र प्रतिफल के बदले निष्पादित, लिखा, स्वीकृत, पृष्ठांकित, या हस्तांतरित किया गया था।

2 **तारीख :** प्रत्येक प्रपत्र पर जो तारीख अंकित है वह केवल उसी तारीख को निष्पादित किया या लिखा गया था।

3 **स्वीकृति का समय :** प्रत्येक स्वीकृत विनिमय पत्र उसकी अवधि पूरी होने से पहले और उसके लिखे जाने की तारीख के उचित समय के भीतर स्वीकार किया गया था।

4 **हस्तांतरण का समय :** विनिमय साध्य प्रपत्र का प्रत्येक हस्तांतरण उसकी परिपक्वता से पहले किया गया था।

5 **पृष्ठांकन का क्रम :** विनिमय साध्य प्रपत्र पर विद्यमान पृष्ठांकन उसी क्रम में किये गये थे जिसमें वे उस पर विद्यमान हैं।

6 **विधिवत स्टांपित :** खोया हुआ प्रपत्र विधिवत् स्टांपित था।

7 **धारक :** जब तक यह साबित नहीं कर दिया जाता कि धारक ने प्रपत्र इसके विधिपूर्ण स्वामी से कपट द्वारा या विधिविरुद्ध प्रतिफल के बदले प्राप्त किया है, विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक यथाविधि धारक होता है।

8 **प्रसाक्ष्य (Protest) :** अस्वीकृत (dishonoured) प्रपत्र पर वाद में न्यायालय प्रसाक्ष्य के साबित हो जाने पर अस्वीकृति के तथ्य को मान लेगा।

अधिनियम में विशेष रूप से वर्णित उपरोक्त धारणाओं के अलावा और कोई धारणाएँ नहीं हो सकती। उदाहरण के लिए जब प्रतिज्ञा पत्र पर तारीख होती है तो धारणा यही है कि वह उसी तारीख को लिखा गया था, यह नहीं कि ये तारीख बाद में अन्तःस्थापित (insert) कर दी गई है। तारीख लिखने के बारे में यदि कोई पक्ष विवाद करना चाहता है तो उसे यह साबित करना पड़ेगा। प्रतिवादी द्वारा ऊपर बताई गयी सभी धारणाओं का खंडन किया जा सकता है

20.5 अस्पष्ट प्रपत्र (Ambiguous Instruments)

वह प्रपत्र, जो स्वरूप या भाषा में ऐसा हो कि उसे प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र माना जा सकता है, एक अस्पष्ट प्रपत्र है। धारा 17 के अनुसार "**जब प्रपत्र का अर्थ प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र दोनों लगाया जा सकता है तब धारक अपनी इच्छानुसार इसे दोनों में से किसी भी रूप में समझ सकता है और तत्पश्चात् वह प्रपत्र उसी के अनुसार माना जाएगा**"।

प्रपत्र को निम्नलिखित दशाओं में अस्पष्ट माना जाता है :

क) जब आदेशक और आदेशिती एक ही व्यक्ति हैं।

ख) जब आदेशिती एक कल्पित व्यक्ति है।

ग) जब आदेशिती ऐसा व्यक्ति है जो अनुबंध करने के अयोग्य है।

जब एक प्रपत्र स्वरूप में इतना अस्पष्ट है कि उसे विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र की तरह माना जा सकता है, तो यह धारक की इच्छा पर है कि वह इसे दोनों में से कुछ भी माने। लेकिन जब एक बार इस चुनाव के अधिकार का प्रयोग कर लिया गया है तो इसे बाद में बदला नहीं जा सकता। एजेंट द्वारा प्रधान पर लिखे गये बिल या बैंक की एक शाखा द्वारा दूसरी शाखा पर लिखे गये बिल अस्पष्ट प्रपत्र होते हैं। उदाहरण के लिए A एक विनिमय पत्र B पर लिखता है और इसका परक्रामण करता है। B एक कल्पित व्यक्ति है। धारक, विनिमय पत्र को A द्वारा लिखित प्रतिज्ञा पत्र की भांति मान सकता है। उसे प्रस्तुतीकरण साबित करने की या अनादरण की नोटिस देने की आवश्यकता नहीं है।

इस संबंध में दो बातें और याद रखिए : (1) जब शब्दों और अंकों में लिखी राशि में अंतर होता है तब विधि यह कहती है कि शब्दों में लिखी राशि ही वह राशि होगी जिसे देने का वचन या आदेश है (धारा 18)। प्रपत्र स्पष्ट और समझ में आने वाली भूलों द्वारा रद्द नहीं होता। (2) जिस प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र में भुगतान के किसी समय का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है उसे माँग पर देय मान लिया जाता है (धारा 19)।

20.6 अपूर्ण प्रपत्र (Inchoate Instrument)

अपूर्ण प्रपत्र से अभिप्राय ऐसे प्रपत्र से है जो पूर्ण नहीं है। ऐसा विनिमय साध्य प्रपत्र जो उचित रूप से स्टांपित और हस्ताक्षरित है लेकिन कोरा या कुछ अंश तक अपूर्ण है, एक अपूर्ण प्रपत्र कहलाता है। व्यापार में, कभी-कभी व्यक्ति कोरे स्टांपित कागजों पर हस्ताक्षर करते हैं जिन्हें बाद में विधिवत् भरा जाएगा (देनदार का नाम या तारीख या ब्याज की दर या चुकाने की तारीख आदि को खाली छोड़ा जा सकता है) और विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र की तरह प्रयोग किया जाएगा। कोरे कागज पर ऐसे हस्ताक्षर धारक को प्रपत्र को भरने और पूर्ण करने का अधिकार देते हैं और जब ऐसा कर दिया जाता है तो हस्ताक्षरकर्त्ता उस दस्तावेज के लिए उत्तरदायी हो जाता है जिसपर वह हस्ताक्षर करता है। कोरे कागज पर ऐसे हस्ताक्षर करने से वह स्वयं को लेखक, स्वीकारक या पृष्ठांकक के रूप में आबद्ध करता है।

धारा 20 के अनुसार, जिसमें अपूर्ण स्टांपित प्रपत्रों का वर्णन किया गया है, जब एक अपूर्ण प्रपत्र पर A हस्ताक्षर करके B को सुपुर्द कर देता है, यह B को इसे पूर्ण करने का प्रथमदृष्ट्या (Primafacie) प्राधिकार प्रदान करता है और यदि उस प्राधिकार के कार्यान्वयन में प्रपत्र पूर्ण कर दिया जाता है, तब A इस पर यथाविधि धारक के प्रति उत्तरदायी होगा। तथापि यह धारा चैकों पर लागू नहीं होती क्योंकि उन पर स्टॉम्प लगाने की आवश्यकता नहीं होती। रिक्त स्थानों को भरने और अपूर्ण प्रपत्र को पूर्ण करने का अधिकार पहले धारक तक ही सीमित नहीं होता, इसका प्रयोग किसी भी धारक द्वारा किया जा सकता है।

जब प्रतिज्ञा पत्र उचित प्रकार से स्टांपित व हस्ताक्षरित है और अन्य व्यक्ति को सुपुर्द कर दिया गया है और इसमें आदाता का नाम लिखने के लिए खाली स्थान छोड़ दिया गया है तब जिस व्यक्ति को यह प्रतिज्ञा पत्र सुपुर्द किया गया है, आदाता के रूप में अपना नाम भी भर सकता है और उसे ऐसा करने का प्राधिकार है।

अपूर्ण प्रपत्र और अस्पष्ट प्रपत्र में अंतर करना चाहिए। यद्यपि एक व्यक्ति को अपूर्ण प्रपत्र पर हस्ताक्षर करके और उसकी सुपुर्दगी से दायित्व उठाना पड़ सकता है परन्तु यह दायित्व तब तक उत्पन्न नहीं होता जब तक कि प्रपत्र पूर्ण कर लिया जाए। कोरे प्रतिज्ञा पत्र के आधार पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। दूसरी ओर जब प्रपत्र अस्पष्ट है, यह इसके धारक को उस पर मुकदमा चलाने से नहीं रोकता। वह प्रपत्र को प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र मान सकता और यह चुनाव करने के बाद, वह इस पर मुकदमा चला सकता है। लेखक या आदाता के नाम के बिना विनिमय पत्र के रूप में प्रपत्र एक अपूर्ण प्रपत्र है, हालाँकि यह एक व्यक्ति के नाम है और उसने उसे स्वीकार कर लिया है।

बोध प्रश्न ख

A एक बिल B पर लिखता है उसे C को परक्रामित कर देता है। B एक कल्पित व्यक्ति है। क्योंकि कल्पित व्यक्ति का नाम लिखा है, इस प्रपत्र की विधिक हैसियत बताइये।

....

....

....

2 A को एक नोट दिया गया जिसमें दी जाने वाली राशि का स्थान खाली छोड़ दिया गया था। क्या यह प्रपत्र वैध है? यदि हाँ तो कैसे?

....

....

....

3 एक अपूर्ण स्टांपित प्रपत्र, एक वैध प्रपत्र कैसे बन जाता है?

....

....

....

4 एक अस्पष्ट प्रपत्र, वैध विनिमय साध्य प्रपत्र कैसे बन जाता है?

....

....

....

5 एक खोये हुए प्रपत्र पर स्टाम्प के संबंध में विधि की क्या धारणा है?

....

....

....

6 एक प्रतिज्ञा पत्र पर A के हस्ताक्षर हैं। क्या हम यह मान सकते हैं कि ये उसके ही हस्ताक्षर हैं, और किसी अन्य के नहीं?

....

....

....

7 एक चैक में अंकों में राशि 5,000 रु. लिखी है लेकिन शब्दों में यह 500 रु. लिखी है। कौन-सी राशि वह राशि मानी जाएगी जिसको देने का दायित्व या आदेश है?

....

....

....

20.7 विभिन्न पक्षकारों की सक्षमता एवं दायित्व

20.7.1 विभिन्न प्रपत्रों के पक्षकार

विनिमय साध्य प्रपत्रों के अर्थ का विवेचन करते समय इन प्रपत्रों के कुछ पक्षकारों का उल्लेख किया जा चुका है। आइये, अब हम विभिन्न प्रपत्रों के पक्षकारों का वर्णन करते हैं।

विनिमय पत्र के पक्षकार (Parties to a Bill of Exchange)

लिखने वाला या आहर्ता और अदाकर्ता या आहार्थी (Drawer and drawee) : जो व्यक्ति विनिमय पत्र लिखता है वह 'लेखक' या 'आहर्ता' है जबकि यह व्यक्ति जिसे लेखक भुगतान करने का आदेश देता है, अदाकर्ता, 'आदेशिती' या 'आहार्थी' कहलाता है।

आदाता : वह व्यक्ति जिसका नाम प्रपत्र में लिखा गया है। जिसे या जिसके आदेशानुसार प्रपत्र की राशि देने का आदेश दिया गया है।

पृष्ठांकनकर्ता और पृष्ठांकिती : जब धारक प्रपत्र किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित या पृष्ठांकित करता है तो धारक पृष्ठांकनकर्ता कहलाता है और वह व्यक्ति जिसके पक्ष में पृष्ठांकन किया जाता है, पृष्ठांकिती कहलाता है।

धारक : वह व्यक्ति जिसे विनिमय साध्य प्रपत्र अपने नाम से अपने पास रखने तथा प्रपत्र की रकम वसूल करने का अधिकार हो।

प्रतिज्ञा पत्र के पक्षकार (Parties to a Promissory Note)

लिखने वाला या रचयिता (Maker) : वह व्यक्ति जो प्रतिज्ञा पत्र में लिखी राशि देने का वचन देता है।

आदाता : वह व्यक्ति है जिसे प्रतिज्ञा पत्र पृष्ठांकित किया गया हो।

चैक के पक्षकार (Parties to a Cheque) :

लिखने वाला (Drawer) : वह व्यक्ति जिसने बैंक में पैसा जमा किया था या चैक लिखा था।

अदाकर्ता (Drawee) : वह बैंक जिसके नाम चैक लिखा गया है।

आदाता (Payee) : वह व्यक्ति जिसे चैक की राशि का भुगतान प्राप्त करने का अधिकार है।

20.7.2 पक्षकार होने के लिए व्यक्ति की सक्षमता

धारा 26 बताती है कि **ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो संबंधित विधि के अनुसार अनुबंध करने के योग्य है, प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक के लिखने, स्वीकृति, पृष्ठांकन, सुपुर्दगी और परक्रामण** द्वारा अपने को आबद्ध कर सकेगा और वह आबद्ध हो सकेगा।

एक व्यक्ति की अनुबंधात्मक क्षमता उसे प्रपत्र का पक्षकार बनने के योग्य बनाती है। सक्षमता का अर्थ है अनुबंध करने की क्षमता ताकि वह स्वयं को आबद्ध करे। दूसरी ओर, प्राधिकार का अर्थ है किसी अन्य व्यक्ति की ओर से अनुबंध करने की योग्यता ताकि अन्य व्यक्ति को आबद्ध किया जा सके। अनुबंध करने की क्षमता विधि द्वारा नियंत्रित होती है जबकि प्राधिकार पक्षकारों के कार्य में पाया जाता है।

जैसा आपको ज्ञात है, अनुबंध अधिनियम में से कोई प्रतिबंध नहीं है जो किसी व्यक्ति को आदाता या वचनगृहीता (promisee) बनने के अयोग्य ठहराये। इसलिए अनुबंध करने के अयोग्य व्यक्ति स्वयं को आबद्ध नहीं कर सकता। लेकिन वह कुछ परिस्थितियों में दूसरों को आबद्ध कर सकता है। यही नियम विनिमय साध्य प्रपत्रों की स्थिति में भी लागू होता है। जब किसी विनिमय साध्य प्रपत्र के कुछ पक्षकार अनुबंध करने के योग्य हों और बाकी योग्य नहीं हों, तब योग्य पक्षकार आबद्ध होते हैं, जबकि अयोग्य पक्षकार उससे आबद्ध नहीं होते। अब हम विनिमय साध्य प्रपत्रों के संबंध में अक्षमता के विभिन्न मामलों संबंधी विधि के प्रावधानों पर विचार करते हैं।

अवयस्क : जैसा आप जानते हैं भारत का अधिवासी, जब तक 18 वर्ष का नहीं हो जाता, अवयस्क होता है। यदि उसके 18 वर्ष पूरे करने से पहले उसके लिए या संपत्ति के लिये या दोनों के लिए न्यायालय द्वारा संरक्षक नियुक्त किया गया है या 18 वर्ष पूरा होने से पहले उसकी संपत्ति "कोर्ट ऑफ वार्ड्स" के निरीक्षण में कर दी गई है तब दोनों ही स्थितियों में जब तक वह व्यक्ति 21वाँ वर्ष पूरा नहीं कर लेता उसकी अवयस्कता जारी रहती है, भले ही उसने 18 वर्ष पूरे कर लिये हों। बाद में अभिभावक की मृत्यु होने से या वयस्क होने से पूर्व अभिभावकता के आदेश को रद्द करने से नियुक्ति का प्रभाव रद्द नहीं होता।

धारा 26 के अनुसार "**अवयस्क व्यक्ति विनिमय साध्य प्रपत्र लिख, पृष्ठांकित, सुपुर्द और परक्रामण कर सकता है जिससे वह स्वयं को छोड़कर अन्य सभी पक्षकारों को उत्तरदायी बना सकता है**"। इस प्रकार एक अवयस्क एक प्रपत्र को लिखने, पृष्ठांकन, सुपुर्दगी और परक्रामण के द्वारा स्वयं को आबद्ध नहीं कर सकता और प्रपत्र वैध होगा तथा अवयस्क को छोड़कर सभी पक्षकारों के लिए आबद्धकर होगा।

साझेदारी फर्म : व्यापारिक फर्म के साझेदार को विनिमय साध्य प्रपत्रों को लिखने, स्वीकार करने या परक्रामण करने का निहित अधिकार होता है। लेकिन एक गैर-व्यापारी फर्म की स्थिति में एक साझेदार ऐसा नहीं कर सकता, जब तक कि इसके लिए उसके पास अभिव्यक्त प्राधिकार (express authority) न हो। दोनों ही स्थितियों में, फर्म के सभी साझेदारों को आबद्ध करने के लिए दायित्व फर्म के नाम में उठाया जाना चाहिए।

दिवालिया : एक दिवालिये को किसी विनिमय साध्य प्रपत्र, जो उसकी संपत्ति को उत्तरदायी बना दे, को लिखने, स्वीकार करने, या पृष्ठांकन करने की अनुबंधात्मक क्षमता नहीं है। फिर भी, उस प्रपत्र का जिसका वह आदाता या पृष्ठांकिती है वह यथाविधि धारक के नाम पृष्ठांकन कर सकता है।

एजेन्ट : एक ऐसा व्यक्ति जो विनिमय साध्य प्रपत्र को लिखने या स्वीकार करने के लिए स्वयं सक्षम है, वह एक एजेन्ट के माध्यम से भी ऐसा कर सकता है। एक एजेन्ट प्रधान को आबद्ध करने के लिए केवल उस हैसियत से, जिसके लिए उसे विशेष रूप से और स्पष्टतया अधिकृत किया गया है, विनिमय साध्य प्रपत्र निष्पादित (execute) कर सकता है। केवल व्यापार का संचालन करने या भुगतान करने या स्वीकार करने का प्राधिकार प्रदान करने से यह नहीं माना जा सकता कि उसे विनिमय साध्य प्रपत्र परक्रामित करने का भी अधिकार है।

कंपनी : एक संयुक्त पूंजी कंपनी या एक निगम एक विनिमय साध्य प्रपत्र का पक्षकार हो सकता है यदि उसे इसके लिए ज्ञापन या संस्था के अंतर्नियम (Memorandum or Articles of Associations) द्वारा अधिकृत किया गया हो परंतु व्यापारी संयुक्त पूँजी कंपनी को विनिमय साध्य प्रपत्र लिखने, स्वीकार करने और परक्रामण करने का निहित अधिकार होता है।

कानूनी प्रतिनिधि : एक मृत व्यक्ति के कानूनी प्रतिनिधि मृत व्यक्ति के विनिमय साध्य प्रपत्रों पर उस सीमा तक कार्यवाही कर सकते हैं जिस सीमा तक मृतक व्यक्ति कर सकता था। उसे मृतक के उत्तराधिकार में प्राप्त परिसंपतियों की सीमा तक दायित्व सीमित करना चाहिए। तथापि, अपने हस्ताक्षर के साथ 'दायित्व रहित' या "मेरा व्यक्तिगत आश्रय लिये बिना" जैसे शब्द जोड़कर एक कानूनी प्रतिनिधि अपने व्यक्तिगत दायित्व से बच सकता है।

विदेशी शत्रु : विदेशी शत्रु वह व्यक्ति है, जो ऐसे देश का नागरिक है जिसके साथ सरकार ने युद्ध घोषित किया है। विदेशी शत्रु के नाम लिखा गया या पृष्ठांकित किया गया विनिमय पत्र शांति स्थापित होने के बाद भी प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।

20.7.3 विभिन्न पक्षकारों के दायित्व

जैसा आपको ज्ञात है एक अवयस्क के साथ किये गये अनुबंध से पक्षकारों के बीच कोई कानूनी अनुबंधात्मक संबंध स्थापित नहीं होता। यह केवल व्यर्थ होता है। इसलिए, अवयस्कों द्वारा लिखित या स्वीकृत विनिमय साध्य प्रपत्र उन्हें आबद्ध नहीं करते। मूल्य के लिए सद्भावपूर्वक (Bonafide) धारक के विरुद्ध भी उन्हें अनुबंध की क्षमता के अभाव के आधार पर अपने दायित्व से इंकार करने से नहीं रोका जा सकता। अवयस्कता की अवधि के दौरान किए गए लेन-देनों को, वयस्क हो जाने के बाद पुष्टीकरण करके, उन्हें वैध नहीं बनाया जा सकता और उनके आधार पर मुकदमा भी नहीं चलाया जा सकता। अवयस्क व्यक्ति की संपत्ति (अवयस्क व्यक्तिगत रूप में नहीं) उसे प्रदान की गई आवश्यकता की वस्तुओं के मूल्य के लिए उत्तरदायी होती है।

एक पागल की स्थिति एक अवयस्क जैसी ही है। एक विवाहित महिला अनुबंध करने के लिए सक्षम है। वह अनुबंध कर सकती है और स्वयं को अपनी पृथक् संपत्ति की सीमा तक उत्तरदायी बना सकती है। यह अधिनियम पतियों को अपनी पत्नियों के उन ऋणों के दायित्व से मुक्त करता है जो विवाह से पूर्व प्राप्त किये थे।

जब कोई व्यक्ति न्यायनिर्णीत दिवालिया हो जाता है तो उसकी सारी संपत्ति, जिसमें विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र और अन्य विनिमय साध्य प्रपत्र शामिल हैं, शासकीय अनुदेशिती (Official Assignee) या शासकीय रिसीवर में निहित हो जाती है। अतः वह अपनी संपत्ति पर निपटान की शक्ति (power of disposal) खो देता है और वह मुक्दमा चलाने के लिए अक्षम बन जाता है तथा साथ ही अपने नाम में मुकदमा करने के अयोग्य हो जाता है।

वह एजेन्ट, जो प्रधान का नाम बताए बिना विनिमय साध्य प्रपत्र पर हस्ताक्षर करता है, या यह बताए बिना हस्ताक्षर करता है कि वह एक एजेन्ट के रूप में हस्ताक्षर कर रहा है, या कि वह उसके द्वारा व्यक्तिगत जिम्मेदारी उठाने का इरादा नहीं रखता, व्यक्तिगत रूप से प्रपत्र पर दायी होता है, परन्तु वह उन लोगों के प्रति ऐसे दायी नहीं है, जिन्होंने उसे इस विश्वास पर हस्ताक्षर करने के लिए प्रेरित किया कि केवल प्रधान ही उत्तरदायी ठहराया जाएगा (धारा 28)। नीचे दिये गये हस्ताक्षर के दो नमूने देखिए और दोनों में अंतर समझने का प्रयास कीजिए।

i) रु. ××××	ii) प्रकाश एड कं., मद्रास-2
प्रकाश	के लिए और की ओर से
साझेदार	प्रकाश ह. ××××
प्रकाश एंड कं., मद्रास-2	साझेदार

पहला हस्ताक्षर एक ऐसा उदाहरण है जिसमें श्री प्रकाश व्यक्तिगत रूप से दायी ठहराया जाएगा, जबकि दूसरे हस्ताक्षर में संकेत है कि वह एक एजेन्ट के रूप में हस्ताक्षर कर रहा है (साझेदार, साझेदारी फर्म का एजेन्ट होता है)। जब एक प्रतिज्ञा पत्र एजेन्ट द्वारा निष्पादित किया जाता है, तो प्रतिज्ञा पत्र के मुख पृष्ठ पर स्पष्ट सुझाव या संकेत होना चाहिए कि प्रधान ही असली ऋणी है। एक अप्रकटित प्रधान पर मुकदमा नहीं किया जा सकता। जहाँ एजेन्ट अपने अधिकार के बाहर या प्रधान के प्राधिकार के बिना हस्ताक्षर करता है तो वह व्यक्तिगत रूप से उस प्रपत्र पर दायी नहीं है हालाँकि उसके विरुद्ध अधिकार भंग या कपट के लिए कार्यवाही की जा सकती है।

मृतक व्यक्ति का कानूनी प्रतिनिधि जो प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक पर अपने नाम के हस्ताक्षर करता है, वह उस पर व्यक्तिगत रूप से दायी है, जब तक कि वह स्पष्ट रूप से अपना दायित्व परिसंपत्तियों की उस सीमा तक सीमित नहीं कर लेता जो उसने उसी हैसियत से प्राप्त की है (धारा 29)।

बोध प्रश्न ग

1 श्री रमन ने एक प्रोनोट पर "रमन, श्री रवीन्द्रन का एजेन्ट" के रूप में हस्ताक्षर किये। क्या रमन व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी है?

....

....

....

2 बताइये कि निम्नलिखित व्यक्तियों में से किसे प्रपत्र के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, कारण भी बताइए :

क) ऐसा एजेन्ट जो, प्रधान का अस्तित्व प्रकट किये बिना हस्ताक्षर करता है।

ख) एक अवयस्क जो आवश्यकता की वस्तुओं के लिए प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करता है।

ग) एक साझेदार जो फर्म की ओर से हस्ताक्षर करता है।

घ) एक संचालक (Director) जो कंपनी की ओर से हस्ताक्षर करता है।

3 प्राधिकार और क्षमता में भेद कीजिए।

....

....

....

4 एक विदेशी शत्रु को देय प्रपत्र के अंतर्गत क्या दायित्व हैं?

....

....

....

20.8 धारक (Holder)

प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र या चैक का धारक वह व्यक्ति होता है, जो उस प्रपत्र को अपने नाम में रखने का हकदार है। वह उस प्रपत्र पर देय राशि प्रपत्र के पक्षकारों से प्राप्त करने या वसूल करने का भी हकदार होता है। जब प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक खो जाता है या नष्ट हो जाता है तो इसका धारक वह व्यक्ति है जो ऐसे खोने या नष्ट होने के समय धारक होने का हकदार था (धारा 8)। "धारक" शब्द में वह व्यक्ति शामिल नहीं होता जिसके कब्जे में प्रपत्र है, लेकिन जिसे उसके पक्षकारों से उस पर देय राशि वसूल करने का अधिकार नहीं है। इसलिए यह स्पष्ट है कि धारक होने के लिए एक व्यक्ति को निम्नलिखित शर्तें पूरी करनी होंगी :

क) उसे प्रपत्र को अपने नाम में रखने का अधिकार होना चाहिए।

ख) उसे प्रपत्र पर देय राशि को उसके देनदार पक्षकारों से प्राप्त या वसूल करने का अधिकार होना चाहिए।

एक विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक किसी भी ऐसे व्यक्ति को स्वामित्व दे सकता है जो इसे ईमानदारी से प्राप्त कर रहा है। एक प्रपत्र का यही असली सार है कि यह जिस व्यक्ति के कब्जे में है उसके पास इसके लेन-देन करने का अधिकार माना जाता है, जब तक कि इसके विपरीत कुछ पता न हो। **बेनामीदार** वह व्यक्ति है जिसने वास्तविक स्वामी के रूप में केवल अपना नाम प्रदान किया है। अधिनियम ऐसे चलन को मान्यता नहीं देता और इसलिए वह व्यक्ति जिसके नाम का उल्लेख किया गया है, चाहे वह वास्तविक या बेनामी हो, धारक माना जाता है।

धारक का महत्व इस तथ्य में भी है कि अधिनियम यह कहता है कि लिखने वाला या स्वीकर्त्ता को उन्मोचित करने के लिए (to discharge) विनिमय साध्य प्रपत्र पर देय राशि का भुगतान प्रपत्र के धारक को किया जाए (धारा 78)। इसलिए धारक ही एक मात्र ऐसा व्यक्ति है जो प्रपत्र के आधार पर **मुकदमा चला सकता है और इसके लिए वैध उन्मोचन (discharge) दे सकता है।**

20.9 यथाविधि धारक (Holder in Due Course)

20.9.1 यथाविधि धारक कौन है ?

धारा 9 में इसकी परिभाषा इस प्रकार दी गई है — यथाविधि धारक से अभिप्राय किसी ऐसे व्यक्ति से है जो प्रपत्र में उल्लिखित राशि के देय होने से पहले और पृष्ठांकनकर्ता के स्वत्व (Title) के दोषों की जानकारी के बिना सद्भावपूर्वक, मूल्यवान, प्रतिफल के बदले, वाहक को देय प्रपत्र की स्थिति में प्रपत्र का कब्ज़ाधारी या प्रपत्र के आदेश पर देय होने की स्थिति में, प्रपत्र का आदाता या पृष्ठांकिती बना था।

उपर्युक्त परिभाषा के आधार पर यथाविधि धारक की आवश्यक योग्यताओं को निम्नलिखित रूप में वर्णन किया जा सकता है :

1 यह आवश्यक है कि धारक ने प्रपत्र मूल्यवान प्रतिफल के बदले और सद्विश्वास से प्राप्त किया हो। प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के बदले प्रतिफल विधियुक्त होना चाहिए। उस व्यक्ति का स्वत्व जो प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय

पत्र का परक्रामण करता है, त्रुटिपूर्ण होता है जब, उदाहरण के लिए वह प्रपत्र या उसकी स्वीकृति कपट, दबाव, बल-प्रयोग या डराकर या विधिविरुद्ध तरीके से या गैरकानूनी प्रतिफल के बदले प्राप्त करता है। कोई भी व्यक्ति जाली पृष्ठांकन के द्वारा किसी विनिमय साध्य प्रपत्र के स्वामित्व का दावा नहीं कर सकता, सिवाय एक बैंक के जो यथाविधि भुगतान कर रहा है।

2 धारक को देय प्रपत्र की स्थिति में यह आवश्यक है कि वह यथाविधि धारक के कब्जे में हो।

3 धारक ने प्रपत्र परिपक्वता तिथि से पूर्व प्राप्त कर लिया हो। एक बार एक प्रपत्र, जो एक निश्चित समयावधि से पहले देय है, परिपक्व हो जाता है तो उसका जीवनकाल समाप्त हो जाता है और वह अब और परक्राम्य नहीं रहता। माँग पर देय प्रपत्र, कम से कम उस समय तक चलन में रहता है जब तक कि भुगतान की माँग न की जाए। परिसीमा कानून प्रतिज्ञा पत्र पर भी लागू होता है। बैंक यह आग्रह करते हैं कि चैक को उसके जारी करने की तारीख के छः महीने के भीतर भुना लिया जाना चाहिए।

4 प्रपत्र प्रकट रूप से पूर्ण व नियमित होना चाहिए। जो व्यक्ति एक विनिमय साध्य प्रपत्र लेता है, उसका कर्तव्य है कि वह उसके स्वरूप की जाँच करे क्योंकि यदि उसमें कोई तात्विक त्रुटि (material defect) है तो वह व्यक्ति यथाविधि धारक नहीं बन सकता।

5 धारक ने प्रपत्र सद्विश्वास से प्राप्त किया हो। दो संभव तरीके हैं जिनसे यह पता लगाया जा सकता है कि एक व्यक्ति ने सद्विश्वास से कार्य किया है या नहीं। एक तरीका यह है कि उसकी नीयत और उद्देश्यों को परखा जाए और दूसरा तरीका है कि यह पता लगाया जाए कि उचित सावधानी और सतर्कता बरती गई है या नहीं। सारांश में, यथाविधि धारक कहलाने या माने जाने के लिए एक व्यक्ति को यह दर्शाना होगा कि :

क) वह प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक का कब्जाधारी बना, यदि प्रपत्र वाहक को देय है — (i) इसमें लिखी राशि के देय होने से पहले और (ii) उसके पास पृष्ठांकनकर्ता के स्वत्व में दोष पाये जाने का विश्वास करने योग्य कोई कारण नहीं होना चाहिए।

ख) यदि प्रपत्र आदेश पर देय है तो वह प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक का आदाता या पृष्ठांकित बना, (i) लिखी हुई राशि के देय होने से पहले और (ii) इस विश्वास के लिए पर्याप्त कारण के बिना कि उस व्यक्ति के स्वामित्व में, जिससे उसने अपना स्वामित्व प्राप्त किया, कोई त्रुटि थी।

एक ऐसा धारक जो अपना स्वामित्व यथाविधि धारक से व्युत्पन्न करता है, उसे यथाविधि धारक के अधिकार प्राप्त होते हैं।

20.9.2 यथाविधि धारक के विशेषाधिकार

प्रत्येक धारक प्रत्यक्षतः यथाविधि धारक माना जाता है। इस प्रकार अपना स्वामित्व साबित करने का भार उस पर नहीं होता। यह प्रतिवादी को साबित करना होता है। यथाविधि धारक के पास एक धारक के सभी अधिकार और शक्तियाँ होती हैं और इसके अतिरिक्त वह अपने तात्कालिक पूर्वाधिकारियों के स्वत्व की किसी व्यक्तिगत त्रुटि से मुक्त बिल धारण करता है। एक प्रतिज्ञा पत्र का यथाविधि धारक , प्रतिज्ञा पत्र की राशि को लिखने वाले और आदाता से उनके परस्पर दायित्व पर ध्यान दिये बिना वसूल कर सकता है।

उदाहरण के लिए, A जो एक विनिमय पत्र का धारक है, इसे B को पृष्ठांकित करता है जो अवयस्क है (इसलिए उसे दायी (liable) नहीं बनाया जा सकता)। यह पत्र C ने B से चुरा लिया और C, B का जाली पृष्ठाँकन कर देता है और मूल्य के लिए इसे D को बेच देता है। D यथाविधि धारक है और वह A से पहले के सभी पक्षकारों, जैसे लिखने वाले, स्वीकर्त्ता और यदि हैं तो पहले के सभी पृष्ठांकितियों पर मुकदमा चला सकता है। वह C पर भी मुकदमा चला सकता है, लेकिन B पर नहीं। इसका अर्थ है कि D, C की चोरी और जालसाजी के कारण स्वामित्व में त्रुटि से मुक्त विनिमय पत्र धारण करता है।

एक अपूर्ण स्टांपित प्रपत्र में जिसमें, उदाहरण के लिए, आदेशिती कपट से लेखक द्वारा आशयित (intended) राशि से अधिक राशि लिख लेता है (लेकिन जिसके लिए प्रपत्र पर लगा स्टाम्प पर्याप्त है) और बिना किसी के द्वारा कपट का शक किये, मूल्य के लिए उसे निपटा देता है तो यथाविधि धारक का संरक्षण मिलता है।

यथाविधि धारक के विपरीत विनिमय पत्र का स्वीकर्ता यह नहीं कह सकता कि विनिमय पत्र के अन्य पक्षकार कल्पित थे।

यथाविधि धारक के विरुद्ध प्रपत्र की राशि का देनदार यह नहीं कह सकता कि उससे प्रपत्र खो गया था या यह उससे कपट या अपराध कार्य के ज़रिए या अवैधानिक प्रतिफल के बदले प्राप्त किया गया था। एक धारक जो यथाविधि धारक से प्रपत्र प्राप्त करता है, यथाविधि धारक के अधिकार पाता है, चाहे उसे पहले से विद्यमान त्रुटियों का पता हो, बशर्ते कि वह इन त्रुटियों में पक्षकार नहीं था।

बोध प्रश्न घ

1 विधिवत उन्मोचित (duly discharged) होने के लिए, विनिमय साध्य प्रपत्र पर देय राशि का भुगतान किसे करना चाहिए?

....

....

....

कारण सहित बताइये कि क्या निम्नलिखित व्यक्ति यथाविधि धारक माने जा सकते हैं :

क) एक प्रतिज्ञा पत्र का समनुदेशिती (Assignee)

....

ख) विनिमय साध्य प्रपत्र का आदाता (Donee)

....

ग) ऋणी अपने पहले से विद्यमान ऋण के उन्मोचन के लिए अपने ऋणदाता को एक विनिमय साध्य प्रपत्र पृष्ठांकित करता है और उसे सौंप देता है।

....

....

....

धारक और यथाविधि धारक में अंतर स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

).10 सारांश

; लिखित दस्तावेज जो किसी व्यक्ति के पक्ष में अधिकार सृजन करता है और जो स्वतंत्रतापूर्वक हस्तांतरणीय है, नेमय साध्य प्रपत्र है। विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम 1881 तीन विशेष प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्रों का वर्णन ता है, यानि प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र और चैक। अधिनियम अन्य प्रकार के प्रपत्रों, जिनमें परक्राम्यता का तत्त्व होता पर विचार नहीं करता। सरल परक्राम्यता विनिमय साध्य प्रपत्र की एक अनुपम विशेषता है। प्रपत्र की सुपुर्दगी या ांकन और सुपुर्दगी से परक्राम्यता संभव होती है। परंपरा के अनुसार प्रपत्र के पीछे की ओर हस्ताक्षर करके पृष्ठांकन या जाता है। अधिनियम में विनियम साध्य प्रपत्रों के बारे में कुछ धारणाएँ वर्णित हैं। ये धारणाएँ तब तक प्रचलन मानी जाती हैं जब तक कि इसके प्रतिकूल सिद्ध न किया जाए।

। कोई प्रपत्र प्रतिज्ञा पत्र और विनिमय पत्र दोनों की तरह प्रतीत होता है, तब इसकी अस्पष्टता इसे विनिमय पत्र या ज्ञा पत्र दोनों में से किसी भी रूप में मानकर दूर की जा सकती है। यह धारक का चुनाव है कि वह इसे दोनों में से । माने। लेकिन एक बार यह चुनाव करने पर इसे बाद में बदला नहीं जा सकता। अपूर्ण प्रपत्र के रिक्त स्थान जब ावत् भर दिये जाते हैं तो ये चलन में आ सकते हैं।

ायस्कों, एजेन्टों, कानूनी प्रतिनिधियों, साझेदारी फर्म, कंपनी, दिवालिया आदि द्वारा अनुबंध करने की सामर्थ्य अनुबंध धे द्वारा निर्धारित होती है। एक विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक वह व्यक्ति होता है जिसके पास अपने नाम में प्रपत्र ा है और जिसने प्रतिफल दिया है और जिसका इस पर अधिकार है। यथाविधि धारक वह है जिसने, प्रतिफल य देकर प्रपत्र प्राप्त किया है और जिसे प्रपत्र को प्राप्त करने से पहले हस्तांतरक के स्वत्व की किसी त्रुटि की जानकारी ां है। उसे संरक्षण मिलता है और इसलिए उसे धारक से श्रेष्ठ स्वामित्व प्राप्त होता है।

).11 शब्दावली

स्पष्ट प्रपत्र : ऐसा प्रपत्र जो इस तरह से अपूर्ण रूप से लिखा गया है कि इसे विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र माना सकता है।

ामीदार : वह व्यक्ति जिसने वास्तविक स्वामी के स्थान पर अपना नाम प्रदान किया है।

खनेवाला : वह व्यक्ति जो प्रपत्र लिखता है और उस पर हस्ताक्षर करता है। चैक और विनिमय पत्र की स्थिति आदेश देता है, लेकिन प्रतिज्ञा पत्र का लेखक भुगतान करने का वचन देता है।

रक : वह व्यक्ति जो अपने नाम में विनिमय साध्य प्रपत्र को अपने अधिकार में रखने का हकदार है और उसकी ा प्राप्त करने या वसूल करने का अधिकारी है।

ाविधि धारक : वह व्यक्ति जिसने प्रतिफल के बदले और सद्भावना से विनिमय साध्य प्रपत्र प्राप्त किया है।

हुण्डी : देशी/भारतीय भाषा में लिखा गया विनिमय पत्र।

अपूर्ण प्रपत्र : एक अपूर्ण प्रपत्र जिसमें भरी जाने के लिए खाली जगह छोड़ी गई है।

पृष्ठांकिती : हस्तांतरी या वह व्यक्ति जिसके पक्ष में प्रपत्र का पृष्ठांकन किया गया है।

पृष्ठांकन : पृष्ठांकनकर्ता के हस्ताक्षर, साधारणतया प्रपत्र के पीछे की ओर पृष्ठांकिती के नाम के साथ या बिना उसके नाम के।

पृष्ठांकनकर्ता : लिखने वाला आदाता या पृष्ठांकिती, जो प्रपत्र का पृष्ठांकन कर सकता है। एक विनिमय बिल का पृष्ठांकनकर्ता एक नये लेखक (New drawer) की तरह होता है।

प्रपत्र : एक कानूनी मान्यता प्राप्त लिखित कागज जिसे मुद्रा के हस्तांतरण के लिए प्रयोग किया जाता है।

विनिमय साध्य प्रपत्र : ऐसा प्रपत्र जो सुपुर्दगी द्वारा या पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय है।

परक्रामण : वह प्रक्रम जिसके द्वारा एक प्रपत्र का अंतरिती (Transferee) इसका धारक बन जाता है।

आदाता : प्रपत्र में लिखी राशि को प्राप्त करने वाला व्यक्ति।

20.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 4 क) ii ख) iii) ग) iv

ख 1 अस्पष्ट प्रपत्र
2 एक अपूर्ण प्रपत्र होने से यह वैध है।
3 रिक्त स्थानों को भर कर। इसमें रिक्त स्थानों को भरने का अधिकार है।
4 धारक चुनाव कर सकता है और इसे विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र की तरह मान सकता है।
5 यह विधिवत् स्टांपित था।
6 नहीं, अधिनियम में बताई गई धारणाओं के अतिरिक्त कोई अन्य धारणा नहीं हो सकती।
7 500 रुपये। शब्दों में लिखी राशि को मान्यता दी जाती है।

ग 1 व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी है, क्योंकि उसने यह नहीं बताया है कि वह प्रधान की ओर से हस्ताक्षर कर रहा है।
2 क) व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी, ख) व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं है, ग) व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं है, घ) व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं है।

घ 1 धारक को
2 क) यथाविधि धारक नहीं
ख) यथाविधि धारक नहीं
ग) यथाविधि धारक नहीं

20.13 स्वपरख प्रश्न

1 विनिमय साध्य प्रपत्रों की सामान्य विशेषताएँ बताइये।

2 विनिमय साध्य प्रपत्रों के बारे में विधिवत् अनुमत धारणाएँ क्या हैं?

3 अपूर्ण और अस्पष्ट प्रपत्रों संबंधी विधि स्पष्ट कीजिए।

4 अवयस्क और एजेंट की प्रपत्र लिखने में सक्षमता और दायित्वों का विवेचन कीजिए।

5 धारक और यथाविधि धारक में अंतर बताइए।

6 यथाविधि धारक कौन होता है? इसके विशेषाधिकारों का वर्णन कीजिए।

नोट : इस इकाई को अच्छी तरह समझने के लिए ये प्रश्न और अभ्यास आपकी सहायता करेंगे। इनके उत्तर लिखने का प्रयास कीजिए। परन्तु अपने उत्तर विश्वविद्यालय को न भेजें। ये केवल आपके अभ्यास के लिए हैं।

...काई 21 प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र और चैक

...काई की रूपरेखा

.0 उद्देश्य
.1 प्रस्तावना
.2 प्रतिज्ञा पत्र
21.2.1 आवश्यक लक्षण
21.2.2 कुछ उदाहरण
.3 विनिमय पत्र
21.3.1 आवश्यक लक्षण
21.3.2 कुछ उदाहरण
21.3.3 विनिमय पत्र और प्रतिज्ञा पत्र में अंतर
21.3.4 विनिमय पत्रों के प्रकार
4 हुण्डियाँ
5 चैक
21.5.1 चैक और विनिमय पत्र में अंतर
21.5.2 चैक का रेखांकन
21.5.3 उत्तर-दिनांकित चैक
21.5.4 भुगतान करने वाले बैंक और वसूली बैंक को संरक्षण
21.5.5 बैंक द्वारा भुगतान करने से इन्कार
6 यथाविधि भुगतान
7 विनिमय साध्य प्रपत्र की परिपक्वता
8 सारांश
9 शब्दावली
10 बोध प्रश्नों के उत्तर
11 स्वपरख प्रश्न

.0 उद्देश्य

...इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- ...प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र, हुण्डी और चैक के अर्थ व इनके निहितार्थों को बता सकें
- ...विभिन्न किस्म के विनिमय पत्रों और हुण्डियों का वर्णन कर सकें
- ...उन विशेषताओं को बता सकें जो विभिन्न प्रपत्रों में अन्तर प्रकट करती हैं
- ...रेखांकन का अर्थ व इसके निहितार्थों को बता सकें
- ...बैंकों द्वारा चैक के भुगतान सम्बन्धी कानून और उनके द्वारा प्रदान किए गए संरक्षण की सीमा का वर्णन कर सकें।

.1 प्रस्तावना

...ई 20 में आपने विनिमय साध्य प्रपत्र का अर्थ व विशेषताएँ, अस्पष्ट और अपूर्ण प्रपत्रों संबंधी कानून और विभिन्न ...कारों की सक्षमता और दायित्व के बारे में पढ़ लिया है। आपने यह भी पढ़ लिया है कि अधिनियम तीन प्रकार के ...ों की चर्चा करता है यानि प्रतिज्ञा पत्र विनिमय पत्र और चैक। इनके बारे में संक्षेप में आपको बताया जा चुका ...इस इकाई में हम इनमें से प्रत्येक प्रपत्र पर विस्तार से विचार करेंगे। आप इन तीनों प्रपत्रों में से प्रत्येक के अर्थ, ...तार्थ और प्रत्येक के विशेष लक्षण पढ़ेंगे। आप हुण्डी के बारे में भी पढ़ेंगे जो कि अधिनियम के क्षेत्र में तो नहीं ...किन भारतीय व्यापार में प्रचलन में है।

.2 प्रतिज्ञा पत्र (Promissory Note)

...आप जानते हैं कि धारा 4 के अनुसार **प्रतिज्ञा पत्र एक ऐसा लिखित प्रपत्र है (बैंक नोट या करेंसी नोट ...छोड़कर) जिस पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होते हैं, और जिसमें वह किसी निश्चित व्यक्ति को या ...के आदेशानुसार या प्रपत्र के वाहक को एक निश्चित राशि भुगतान करने का एक शर्तरहित वचन देता**

है। यह परिभाषा एक प्रतिज्ञा पत्र की आवश्यक विशेषताओं का वर्णन करती है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि करेंसी नोट या बैंक नोट में एक प्रतिज्ञा पत्र की लगभग सभी विशेषताएँ होने पर भी इन्हें प्रतिज्ञा पत्र की तरह नहीं मानना चाहिए।

21.2.1 आवश्यक लक्षण

उपर्युक्त परिभाषा को ध्यान में रखते हुए प्रतिज्ञा पत्र के आवश्यक लक्षणों को निम्नलिखित रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

1 यह सदैव लिखित होना चाहिए। इससे स्पष्ट है कि मौखिक वचन से प्रतिज्ञा पत्र नहीं बनता।

2 इसमें एक शर्त रहित और स्पष्ट प्रतिज्ञा होती है (शर्त रहित वचन)। प्रतिज्ञा पत्र को लिखने वाला राशि अदा करने का वचन देता है या प्रतिज्ञा करता है और ऐसा वचन शर्त रहित होना चाहिए।

वास्तविक जीवन में ऐसी स्थितियाँ होती हैं जब लोग एक दूसरे की ऋण देकर सहायता करते हैं। उस समय उधार लेने वाले से एक "रसीद" या "चिट" भी ली जा सकती है। रसीद एक अभिस्वीकृति (acknowledgement) है लेकिन यह प्रतिज्ञा पत्र नहीं हो सकती। यदि दी गई रसीद में अभिस्वीकृति और राशि भुगतान करने का शर्त रहित वचन, दोनों हैं, तब इसे एक प्रतिज्ञा पत्र की तरह माना जाता है। उदाहरण के लिए, एक रसीद में यह लिखा गया है "हमने X से 9,000 रु. नकद प्राप्त किये हैं। यह राशि माँग पर लौटा दी जाएगी"। इसे एक प्रतिज्ञा पत्र माना जा सकता है। यहाँ पर निर्दिष्ट वचन एक शर्त रहित वचन है। लिखने वाला, उदाहरण के लिये, यह नहीं लिख सकता "जैसे ही X माल सुपुर्द करेगा मैं X को 500 रु. देने का वचन देता हूँ"। वचन में कोई अनिश्चितता नहीं होनी चाहिए। उदाहरण के लिये, "मैं जब भी मुझे सुविधा होगी, X को 500 रु. का भुगतान करने का वचन देता हूँ", यह प्रतिज्ञा पत्र नहीं हो सकता।

3 निश्चित राशि भुगतान करने का वचन दिया जाना चाहिए। पैसे के अतिरिक्त किसी और चीज के लिये प्रतिज्ञा पत्र नहीं हो सकता। राशि निश्चित होनी चाहिए। उदाहरण के लिये, कोई यह नहीं लिख सकता कि "मैं 1000 रु. और इस पर कुछ ब्याज देने का वचन देता हूँ"।

4 प्रतिज्ञा पत्र पर लिखने वाले के हस्ताक्षर होने चाहिए। वचनदाता के हस्ताक्षर प्रपत्र को अधिप्रमाणित करने के लिये होते हैं। इसका अर्थ व्यक्ति द्वारा स्वयं अपना नाम लिखना भी है।

5 प्रतिज्ञा पत्र को देय बनाया जाता है :
- i) केवल एक निश्चित व्यक्ति को, या
- ii) एक निश्चित व्यक्ति के आदेशानुसार, या
- iii) प्रपत्र के वाहक को, या
- iv) केवल एक निश्चित व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार, या
- v) केवल एक निश्चित व्यक्ति को या प्रपत्र के वाहक को। प्रतिज्ञा पत्र रचियता को स्वयं देय नहीं बनाया जा सकता। केवल एक विशिष्ट व्यक्ति को देय प्रपत्र भी प्रतिज्ञा पत्र है लेकिन यह परक्राम्य नहीं है। इसमें आदाता के नाम के साथ-साथ "या आदेश पर" शब्द भी होने चाहिए। "वाहक" को देय प्रतिज्ञा पत्र वैध है लेकिन रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया अधिनियम की धारा 31 निजी पक्षकारों को "वाहक को देय" प्रतिज्ञा पत्र जारी करने से प्रतिबद्ध करती है। इसलिए "वाहक को देय" प्रतिज्ञा पत्र प्रचलन में नहीं पाये जाते।

6 भुगतान करने का समय "माँग पर" या एक निश्चित समयावधि के बाद, जैसा कि प्रतिज्ञा पत्र में बताया गया है, हो सकता है।

7 तारीख लिखने की भूल प्रतिज्ञा पत्र को अविधिमान्य (invalidate) नहीं बनाती, जब तक कि यह सिद्ध न करना हो कि भुगतान किस समय किया जाना है। व्यवहार में प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करने का स्थान व दो गवाहों के हस्ताक्षर भी होते हैं, यद्यपि कानून द्वारा प्रतिज्ञा पत्र को वैध बनाने के लिए यह जरूरी नहीं है।

8 परिभाषा के अनुसार जो आवश्यकताएँ हैं उनके अतिरिक्त भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 के अनुसार उचित मूल्य के स्टाम्प लगाना भी आवश्यक है। प्रतिज्ञा पत्र पर स्टाम्पें चिपकाई जा सकती हैं या यह उचित मूल्य के स्टाम्प पेपर पर लिखा जा सकता है। कानून के अनुसार ऐसे स्टाम्प को इस पर नाम लिखकर या आद्यक्षर (Initials) द्वारा तथा लिखने की तारीख़ लिखकर या किसी अन्य प्रभावी तरीके से रद्द किया जाना चाहिए।

21.2.2 कुछ उदाहरण

एक दस्तावेज़ की प्रकृति उसकी विषयवस्तु से बहुत अधिक निर्धारित होती है, इसका विवरण या स्वरूप ही अकेला इसकी विशेषता या कानूनी प्रभावों को नहीं बदल सकता। यदि कोई प्रपत्र परिभाषा में बताई गई वैधानिक आवश्यकताओं को पूरा नहीं करता तो प्रपत्र में केवल यह लिख देने मात्र से कि यह प्रतिज्ञा पत्र है, वह प्रतिज्ञा पत्र नहीं बन जाता। इस संबंध में यह दर्शाने के लिए की प्रतिज्ञा पत्र विभिन्न स्वरूपों में कैसे लिखा जा सकता है और इसके साथ ही जो कानून की अपेक्षाओं को पूरा करता है, कुछ उदाहरण एक वैध प्रतिज्ञा पत्र लिखने में सहायक हो सकते हैं। निम्नलिखित उदाहरणों का ध्यान से अध्ययन करें :

क प्रपत्रों पर निम्नलिखित शब्दों के साथ हस्ताक्षर करता है :

1 "मैं ख को या उसके आदेशानुसार 500 रु. देने का वचन देता हूँ।"

! "प्राप्त मूल्य के बदले में मैं स्वयं को ख का 1,000 रु. का ऋणी होना स्वीकार करता हूँ और वचन देता हूँ कि माँगे जाने पर मैं इस राशि का भुगतान कर दूँगा।"

; "श्री ख मैं आपका 1,000 रु. का ऋणी हूँ।"

| "मैं ख को 500 रु. और अन्य सभी रकम जो उसे देय होंगी, भुगतान करने का वचन देता हूँ।"

; "मैं ख को 500 रु. का भुगतान उस राशि को काट कर देने का वचन देता हूँ जो उसके द्वारा मुझे देय होगी।"

; "मैं ग के साथ अपनी शादी के 7 दिन बाद ख को 500 रु. का भुगतान करने का वचन देता हूँ।"

' "मैं घ की मृत्यु हो जाने पर ख को 500 रु. देने का वचन देता हूँ बशर्ते कि घ मेरे पास उस रकम को देने के लिये पर्याप्त राशि छोड़ जाए।

: "मैं अगली 1 जनवरी को ख को 500 रुपये और अपना काला घोड़ा देने का वचन देता हूँ।"

पर्युक्त उदाहरणों में प्रपत्र 1 और 2 प्रतिज्ञा पत्र हैं और बाकी प्रतिज्ञा पत्र नहीं हैं। 3 से 8 प्रपत्रों में लेखक ने कुछ ार्तों के साथ राशि चुकाने का वचन दिया है। इसलिए ये वैध प्रतिज्ञा पत्र नहीं माने जा सकते। आपके ज्ञान के लिए ाध प्रतिज्ञा पत्रों के विभिन्न स्वरूपों के नमूने नीचे दिये गये हैं। इनका ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिए और इनके अन्तर ो नोट कीजिए।

pecimen 1

New Delhi
10 March 1990

ts. 5,000/-

)n demand I promise to pay Mr. X or order the sum of Rupees Five Thousand with interest at 6 per cent er annum for value received.

Stamp
Mr. Y (Sd/- on stamp)

'o
ſr. X
lew Delhi

pecimen 2

New Delhi
10 March 1990

ts. 5,000/-

)n demand I promise to pay Mr. X the sum of Rupees Five Thousand only.

Stamp
Mr. Y (Sd/- on stamp)

'o
ſr. X
lew Delhi

pecimen 3

New Delhi
17 March 1990

ts. 5,000/-

'wo months after date I promise to pay Mr. X the sum of Rupees Five Thousand only.

Stamp
Mr. Y (Sd/- on stamp)

'o
ſr. X
lew Delhi

Specimen 4

New Delhi
10 March 1990

Rs. 5,000/-

Three months after date I promise to pay Mr. X or the bearer the sum of Rupees Five Thousand only.

Stamp
Mr. Y (Sd/- on stamp)

To
Mr. X
New Delhi

Specimen 5

New Delhi
10 March 1990

Rs. 5,000/-

Three months after date I promise to pay Mr. X or order the sum of Rupees Five Thousand only.

Stamp
Mr. Y (Sd/- on stamp)

To
Mr. X
New Delhi

21.3 विनिमय पत्र (Bill of Exchange)

जैसा कि आप जानते हैं धारा 5 के अनुसार "विनिमय पत्र एक ऐसा लिखित प्रपत्र है जिस पर लेखक के हस्ताक्षर होते हैं और जिसमें लेखक किसी निश्चित व्यक्ति को शर्तरहित यह आदेश देता है कि वह किसी निश्चित व्यक्ति को, या उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को, अथवा प्रपत्र के वाहक को एक निश्चित धनराशि का भुगतान कर दे"।

धारा यह भी स्पष्ट करती है कि भुगतान करने का समय बताने, निश्चित अवधि व्यतीत हो जाने के बाद किश्तों में भुगतान करने या किसी विशेष निश्चित घटना के घटित होने के बाद भुगतान करने की बात लिखने मात्र से ही यह प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र शर्त सहित नहीं हो जाता। निश्चित विनिमय दर (प्रचलित सरकारी विनिमय दर) या ब्याज की दर लिखने या बताने से राशि निश्चित मानी जाती है। अशुद्ध नाम लिखने या गलत नाम लिखने या व्यक्ति के पद लिखने से प्रपत्र अविधिमान्य नहीं हो जाता और जैसा कि धारा 4 और धारा 5 में बताया गया है "निश्चित व्यक्ति" के अर्थ के अंतगर्त होगा।

21.3.1 आवश्यक लक्षण

वैध विनिमय पत्र कहलाने के लिये, प्रपत्र को निम्नलिखित शर्तें पूरी करनी होंगी :

1 यह लिखित होना चाहिए।
2 इसमें किसी निश्चित व्यक्ति को भुगतान करने का शर्त रहित आदेश होना चाहिए।
3 आदेशक के इस पर हस्ताक्षर होने चाहिए।
4 आदेशक निश्चित व्यक्ति होना चाहिए।
5 आदाता कोई निश्चित व्यक्ति या प्रपत्र का वाहक होना चाहिए।
6 आदेशिती निश्चित व्यक्ति होना चाहिए।
7 भुगतान की जाने वाली आदेशित राशि निश्चित होनी चाहिए।
8 उसमें केवल मुद्रा का भुगतान करने का आदेश होना चाहिए।

भारतीय स्टाम्प अधिनियम के प्रयोजन के लिए बहुत से प्रपत्रों को विनिमय पत्र माना जाता है जो इस अधिनियम में दी गई परिभाषा के अनुसार विनिमय पत्र नहीं हैं। भारतीय स्टाम्प अधिनियम के अंतर्गत धाराएँ 2(2) और 2(3) हुण्डी (hundi) को भी विनिमय पत्र माना जाता है।

21.3.2 कुछ उदाहरण

ऊपर बताए गए अपेक्षित गुणों को समाविष्ट करते हुए विनिमय पत्रों को विभिन्न रूपों में लिखा जा सकता है। ऐसे

ुछ स्वरूप नीचे दिए गए हैं। ये स्वरूप देश के भीतर ही प्रयोग किये जाते हैं — सभी पक्षकार देश में हैं तथा राशि
ो स्थानीय करेंसी में उल्लेख किया जाता है। विदेशी बिलों पर बाद में चर्चा की गई है।

ान्तर्देशीय बिलों के उदाहरण

pecimen 1

New Delhi
10 March 1990

s. 5,000/-

n demand I promise to pay Mr. X or order the sum of Rupees Five Thousand with interest at 6 per cent
er annum for value received.

Stamp
Mr. L Kumar (Sd/- on stamp)

)
r. R.B. Singh
ew Delhi

ecimen 2

New Delhi
10 March 1990

. 2,000/-

ty days after date pay to my order the sum of Rupees Two Thousand.

Stamp
Mr. L Kumar (Sd/- on stamp)

. R.B. Singh
lahabad

ecimen 3

New Delhi
10 March 1990

. 3,000/-

ree months after date pay to bearer the sum of Rupees Three Thousand for value received.

Stamp
Mr. L Kumar (Sd/- on stamp)

. R.B. Singh
ahabad

cimen 4

New Delhi
10 March 1990

5,000/-

ety days after date pay to Mr. Ram Kumar or bearer the sum of Rupees Five Thousand with interest at
er cent per annum for value received.

Stamp
Mr. L Kumar (Sd/- on stamp)

R.B. Singh
Delhi

Specimen 5

New Delhi
10 March 1990

Rs. 4,000/-

On demand pay to Mr. Ram Kumar or order the sum of Rupees Four Thousand for value received.

Stamp
Mr. L Kumar (Sd/- on stamp)

To
Mr. R.B. Singh
Allahabad

माँग पर देय ड्राफ्ट : माँग पर देय ड्राफ्ट बैंक की एक शाखा द्वारा उसी बैंक की दूसरी शाखा को या अन्य बैंक की शाखा को देय राशि आदेशानुसार माँग करने पर चुकाने का आदेश है। जब यह आदेश उसी बैंक की अन्य शाखा के नाम होता है तो वास्तव में यह चैक है फिर भी इसे साधारणतया ड्राफ्ट ही कहते हैं। जब ड्राफ्ट दूसरे बैंक पर जारी किया जाता है तो इसमें एक विनिमय पत्र की सभी विशेषताएँ होती हैं (सिवाय इसके कि यह स्टाम्पित नहीं होता और स्वीकार नहीं किया जाता)। यदि यह उसी बैंक की अन्य शाखा के नाम पर भी लिखा गया है तो भी यह एक विनिमय पत्र माना जाता है क्योंकि इस भाग में बताई गई सभी शर्तें पूरी हो जाती हैं। तथापि एक माँग पर देय ड्राफ्ट इस अधिनियम के प्रावधानों द्वारा विनियमित केवल एक विनिमय साध्य प्रपत्र ही है और प्रकटतः जिन दायित्वों का यह सृजन करता है वे साधारण ऋण से अधिक कुछ नहीं है।

21.3.3 विनिमय पत्र और प्रतिज्ञा पत्र में अंतर

1 प्रतिज्ञा पत्र में इसका रचियता या लिखने वाला राशि चुकाने का शर्त रहित वचन देता है। जबकि विनिमय पत्र या हुण्डी में इसका लेखक अपने अतिरिक्त किसी अन्य निश्चित व्यक्ति को राशि भुगतान करने का आदेश देता है।

2 विनिमय पत्र का रचियता लिखने वाला कहलाता है और इसके द्वारा जिसे राशि का भुगतान करने का आदेश दिया जाता है उसे आदेशिती (देनदार) कहते हैं। प्रतिज्ञा पत्र के लेखक का दायित्व पूर्ण या आत्यंतिक (absolute) होता है, क्योंकि वह राशि के भुगतान के लिए स्वयं को शर्त रहित आबद्ध करता है। जबकि विनिमय पत्र के लेखक द्वारा उठाया गया दायित्व केवल शर्त रहित होता है, क्योंकि वह आदेशिती द्वारा भुगतान करने के लिए केवल जमानती बनता है।

3 प्रतिज्ञा पत्र का लेखक मूल ऋणी बन जाता है, क्योंकि वह राशि भुगतान करने का प्राथमिक दायित्व स्वीकार करता है। विनिमय पत्र के प्रकट शब्दों (tenor) के अनुसार, जब आदेशिती भुगतान करने में असफल होता है, केवल तभी लेखक जमानती के रूप में दायी (liable) होता है। वह प्रपत्र, जिस पर "हुण्डी" शब्द लिखा है या तो विनिमय पत्र हो सकता है या प्रतिज्ञा पत्र। स्टाम्प पर हुण्डी शब्द लिखने से दस्तावेज़ की प्रकृति निर्धारित नहीं होती। दस्तावेज़ की प्रकृति को निर्धारित करने के लिए न्यायालय दस्तावेज़ के ही प्रावधानों को देखेगा।

4 एक विनिमय पत्र के लिए तीन पक्षकार होने चाहिए : आदेशक, आदेशिती और आदाता। यह भी संभव है कि वही व्यक्ति आदेशक और आदेशिती या स्वीकर्ता का स्थान ले ले। एक प्रतिज्ञा पत्र के लिए दो पक्षकार होने चाहिए — दोनों एक दूसरे से भिन्न और पृथक् व्यक्ति होने चाहिए।

21.3.4 विनिमय पत्रों के प्रकार

विनिमय पत्रों को निम्नलिखित किस्मों में वर्गीकृत किया जा सकता है :

विशुद्ध व्यापारिक विनिमय पत्र : जब विनिमय पत्र प्रतिफल के बदले लिखा, स्वीकृत या पृष्ठांकित किया जाता है तो यह विशुद्ध व्यापारिक विनिमय पत्र होता है। क ने ख को उधार माल बेचा और क उतनी ही राशि का ग का ऋणी है। ख तीन मास बाद भुगतान करने का करार करता है। सौदे का निर्णय करने के लिए क, ख पर विनिमय पत्र लिखता है, जिसमें वह ख को आदेश देता है कि वह ग को 3 मास बाद भुगतान करे। यह विनिमय पत्र प्रतिफल के बदले है और असली सौदे पर आधारित है।

निभाव विनिमय पत्र (Accommodation bills) : क को 5,000 रु. की आवश्यकता है। वह अपने मित्र ख से यह राशि उधार माँगता है। ख उधार देने की स्थिति में नहीं है लेकिन वह सुझाव देता है कि क उस पर एक विनिमय पत्र लिखे जिसे वह (ख) स्वीकार कर लेगा। क बैंक से बट्टा करवाकर बिल को भुना लेगा। देय तिथि पर क 5,000 रु. ख को दे देगा और ख विनिमय पत्र का भुगतान कर देगा। यह विनिमय पत्र क के निभाव या सहायता के लिये लिखा गया। यह एक निभाव विनिमय पत्र है (आजकल बैंक सामान्यतया ऐसे बिलों का बट्टे पर भुगतान नहीं करते)

कृत्रिम विनिमय पत्र (Fictitious bill) : जब किसी विनिमय पत्र में आदेशक या आदाता या दोनों ही कृत्रिम व्यक्ति हैं तो विनिमय पत्र एक कृत्रिम विनिमय पत्र कहलाता है। जब विनिमय पत्र का आदेशक और आदाता दोनों ही कृत्रिम व्यक्ति हैं, तो स्वीकर्ता यथाविधि धारक के प्रति उत्तरदायी होता है, यदि यथाविधि धारक यह सिद्ध कर सकता है कि तथाकथित आदेशक और पहले पृष्ठांकक (आदाता) के हस्ताक्षर एक ही हस्तलिपि में हैं।

दस्तावेजी (Documentary) विनिमय पत्र तथा खुला (Clean) विनिमय पत्र : जब माल पर स्वामित्व संबंधी या अन्य दस्तावेज़ जैसे बीजक, बीमा पालिसी आदि विनिमय पत्र के साथ नत्थी कर दिये जाते हैं तो ऐसे विनिमय पत्र को दस्तावेज़ी विनिमय पत्र कहते हैं। ऐसे दस्तावेज़ों की सुपुर्दगी क्रेता को तभी की जाती है जब वह विनिमय पत्र को स्वीकार कर ले या उसका भुगतान कर दे, जैसा भी आदेशक ने चाहा है। जब माल संबंधी दस्तावेज़ (जिसके सौदे के लिए विनिमय पत्र लिखा जा रहा है) विनिमय पत्र के साथ नत्थी नहीं किए जाते तो यह खुला या निर्बाध विनिमय पत्र कहलाता है।

सशर्त प्रपत्र या एस्क्रो (Escrow) : जब कोई विनिमय साध्य प्रपत्र सशर्त सुपुर्द किया जाता है या किसी विशेष उद्देश्य के लिए, जैसे समपार्श्विक प्रतिभूति (Collateral of Security) के रूप में या केवल सुरक्षित रखने (safe custody) के लिए सुपुर्द किया जाता है, यानि उसमें लिखी संपत्ति को पूर्णतया हस्तांतरित करने के उद्देश्य से नहीं, तो इसे सशर्त प्रपत्र या एस्क्रो कहते हैं। जब एक प्रपत्र इस प्रकार सुपुर्द किया जाता है, तो तत्कालिक पक्षकारों के बीच सम्मत शर्तें पूरी की जानी होती हैं। यदि सम्मत शर्तें पूरी न की जाएँ तो सशर्त प्रपत्र की स्थिति में भुगतान करने का दायित्व उत्पन्न नहीं होता या जिस उद्देश्य के लिए प्रपत्र सुपुर्द किया गया था, वह पूरा नहीं होता तो भी यह दायित्व उत्पन्न नहीं होता। तथापि इससे यथाविधि धारक के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता (धारा 46)।

सेटों में लिखे विनिमय पत्र : कभी-कभी विनिमय पत्र की एक प्रति से अधिक प्रतियाँ लिखी जाती हैं, खास तौर से जब ऐसी प्रतियाँ विभिन्न पक्षकारों को चाहिए जैसा कि विदेशी व्यापार के सौदे में प्रायः होता है। ऐसे पत्रों को सेट में विनिमय पत्र कहते हैं। इस प्रकार के विनिमय पत्र की निम्नलिखित निहितार्थ हैं :

क) विनिमय पत्र की प्रत्येक प्रति (जिसे विनिमय पत्र का भाग कहते हैं) समान रूप से वैध है और जब एक बार यह स्वीकृत हो जाती है या इसका भुगतान कर दिया जाता है तो अन्य भाग या प्रतियाँ निष्प्रभाव या रद्द हो जाती हैं।

ख) सेट में लिखे गये विनिमय पत्र के प्रत्येक भाग को संख्यांकित करना चाहिए और इसमें यह प्रावधान होना चाहिए कि यह केवल उस समय तक देय रहेगा जब तक कि अन्य भागों का भुगतान नहीं हो जाता है।

ग) प्रत्येक भाग में अन्य भागों का संदर्भ होना चाहिए, लेकिन इसके आदेशक को प्रत्येक भाग पर हस्ताक्षर करने चाहिए और उसे सौंपना चाहिए। पूरे सेट के सभी भागों की स्वीकृति आवश्यक नहीं है।

घ) जब कोई व्यक्ति विनिमय पत्र के विभिन्न भागों को विभिन्न व्यक्तियों को पृष्ठांकित करता है तो वह और प्रत्येक भाग के बाद के पृष्ठांकक ऐसे भागों के संबंध में उसी तरह दायी हैं जैसे कि प्रत्येक भाग एक पृथक् विनिमय पत्र है।

ङ) जब सेट के दो या अधिक भागों का विभिन्न यथाविधि धारकों को परक्रामण किया जाता है तो उनमें से जिस यथाविधि धारक को अपने भाग पर सबसे पहले स्वत्व प्राप्त हुआ था, वह विनिमय पत्र का सच्चा स्वामी माना जाता है। वह (i) अन्य सभी भागों के आधिपत्य और (ii) विनिमय पत्र द्वारा वर्णित राशि को पाने का हकदार होता है।

विदेशी विनिमय पत्रों के नमूने (सैट में बिल)

Specimen 1

London
15 March 1990

£ 10,000/

Three months after sight of this first of exchange (second and third of the same tenor and date unpaid) pay to the order of Messors Bombay Import and Export Company Limited, Bombay, the sum of Pound Sterling Ten Thousand only, value received.

Stamp
London Trading Co. Ltd.
(Sd/- on stamp)

To
M/s. India Machinery Company
Bombay

यह विनिमय पत्र लंदन ट्रेडिंग कं. द्वारा लिखा गया है जिसमें बंबई की इंडिया मशीनरी कं. को 10,000 पाउंड स्टरलिंग मैसर्स बम्बई आयात और निर्यात कं. को देने का आदेश है। इसका पहला भाग ऊपर दिखाया गया है। ऐसे ही विनिमय पत्र का दूसरा भाग नमूना-2 में दिखाया गया है।

Specimen 2

London
15 March 1990

£ 5,000/

Three months after sight of this second of exchange (first and third of the same tenor and date unpaid) pay to the order of Mr Banerjee, Calcutta, the sum of Pound Sterling Five Thousand only, value received.

Stamp
Mr. A.B. Smith
(Sd/- on stamp)

To
M/s. India Machine Tools Company
Calcutta

21.4 हुण्डियाँ (Hundies)

हुण्डी भारतीयों द्वारा देशीय भाषा या महाजनी भाषा में लिखा गया विनिमय पत्र है। हुण्डियों का प्रचलन भारत में प्राचीन समय से है और ये देश के अलग-अलग भागों में अलग-अलग प्रथाओं द्वारा विनियमित होती हैं। किसी स्थान पर यह प्रथा हो सकती है कि दिखाए जाने के इतने दिन बाद देय हुण्डी पर ब्याज दिया जाए। कुछ स्थानों पर व्यापारिक प्रथा के अनुसार इसका लेखक, जिसने मौखिक रूप से हुण्डी को स्वीकार किया है वही प्रपत्र के लिए उत्तरदायी माना जाता है। एक हुण्डी जिसे कि इसके लेखक द्वारा स्वीकार किया गया है, उसे पृष्ठांकन के किसी नियमित स्वरूप के बिना समनुदेशित किया जा सकता है। हुण्डी यद्यपि एक विनिमय साध्य प्रपत्र है, परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि यह अधिनियम द्वारा परिभाषित विनिमय प्रपत्र हो।

हुण्डियों के प्रकार

अब कुछ भिन्न प्रकार की हुण्डियों का वर्णन करते हैं :

शाहजोग हुण्डी : वह हुण्डी जो किसी सम्माननीय धारक को देय है **(जब इसका अंतिम पृष्ठांकिती द्वारा पृष्ठांकन किया जाता है)**, लेकिन यह वाहक को देय हुण्डी नहीं है। कुछ हद तक यह रेखांकित चैक की भांति है जिसका भुगतान साधारणतया किसी विशेष बैंक को या किसी बैंक के जरिये किया जाता है और न केवल वह व्यक्ति जिसके हक में यह लिखी गई है उसके आधार पर भुगतान माँग सकता है बल्कि इसका पृष्ठांकिती भी भुगतान माँग सकता है बशर्ते कि पृष्ठांकिती एक सम्माननीय धारक (जिसकी बाजार में आर्थिक प्रतिष्ठा है) है।

नामजोग हुण्डी : ऐसी हुण्डी जो हुण्डी में वर्णित व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार देय है, नामजोग हुंडी कहलाती है। इसके साथ उस पक्षकार, जिसके पक्ष में यह लिखी गई है, की भूमिका के बारे में एक विवरणात्मक नोट हो सकता है।

धनीजोग हुण्डी : धनी का अर्थ धारक से है। धनीजोग से तात्पर्य है कि यह धनी या स्वामी एक धारक या वाहक-स्वामी को देय है।

जोखिम हुण्डी : इसका तात्पर्य ऐसी हुण्डी से है जो हुण्डी में वर्णित जहाज पर लादे गये माल के बदले लिखी गई है और जिसमें माल को जहाज पर लादे जाने के कारण जोखिम है। इस प्रकार की हुंडी का भुगतान तभी किया जाएगा जब माल सुरक्षित रूप में पहुँच जाता है।

जवाबी हुण्डी : वह हुंडी जो एक खास व्यक्ति को एक खास रकम का भुगतान करने के लिये एक प्रकार का बैंक को सिफारिश या पत्र है।

जिकरी हुण्डी : यह ऐसी हुण्डी है जो जिकरी चिट (या सुरक्षा पत्र) के अंतर्गत आदर के लिये स्वीकार की जाती है। यह हुण्डी अदायगी होने वाले स्थान पर रहने वाले किसी माननीय व्यक्ति को लिखी जाती है। इसमें उपर्युक्त माननीय व्यक्ति से प्रार्थना की जाती है कि आदेशिती द्वारा हुण्डी स्वीकार न करने या भुगतान न करने पर वह हुंडी की राशि का भुगतान कर दे। स्वीकृति लिखित रूप में **जिकरी चिट** पर दी जाती है।

दर्शनी हुण्डी : वह हुण्डी जो दिखाये जाने पर देय होती है और परक्राम्य है। इसे सम मूल्य पर या प्रीमियम पर या बट्टे पर बेचा जा सकता है।

मियादी हुण्डी : ऐसी हुण्डी जो एक उल्लेखित समयावधि के बाद देय होती है। बैंकों द्वारा साधारणतया ऐसी हुण्डियों की जमानत पर ऋण दिये जाते हैं। देय तारीख तक की अवधि का ब्याज शुरू में ही काट लेने की प्रथा भी है।

बोध प्रश्न क

1 एक प्रतिज्ञा पत्र स्टांपित है और इन शब्दों सहित हस्ताक्षरित है — "मैं श्री X को या उसके आदेशानुसार 1,000 रु. ब्याज सहित चुकाने का वचन देता हूँ"।

i) क्या यह प्रतिज्ञा पत्र वैध है?

....

ii) ब्याज की क्या दर ली जा सकती है?

....

2 एक विनिमय पत्र के आदेशक का क्या दायित्व है?

....

....

....

....

3 विनिमय पत्र में उल्लेखित आदाता का नाम एक कल्पित व्यक्ति का है। आप इस प्रपत्र को क्या समझेंगे?

....

....

....

....

4 बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत।

i) एक वैध प्रतिज्ञा पत्र के लिए स्टाम्प लगाना आवश्यक नहीं है।

ii) एक विनिमय पत्र मौखिक रूप में हो सकता है।

iii) हुण्डी विनिमय साध्य प्रपत्र अधिनियम द्वारा विनियमित नहीं होती।

iv) वैध प्रतिज्ञा पत्र के लिए उस पर लेखक के हस्ताक्षर होने आवश्यक हैं।

v) "सेट में बिल" का प्रयोग विदेशी व्यापार सौदों में होता है।

21.5 चैक (Cheque)

जैसा आप जानते हैं कि "चैक एक ऐसा विनिमय पत्र होता है जो किसी विशेष बैंक के नाम लिखा जाता है तथा जो माँग पर देय होने के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार देय नहीं होता"। इसलिए चैक एक प्रकार का विनिमय पत्र है। इस पर लिखने वाले (आदेशक) के हस्ताक्षर होने चाहिए। इसमें एक निश्चित राशि का किसी विशेष व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार किसी अन्य व्यक्ति को या वाहक को भुगतान करने का शर्त रहित आदेश होना चाहिए। और उस बैंक का नाम भी विशेष रूप से उल्लेखित होना चाहिए जिस पर यह लिखा गया है। इस प्रकार चैक में भुगतान के लिए कोई शर्त जुड़ी नहीं होनी चाहिए।

रसीद के रूप में एक प्रपत्र, जिसमें बैंक को निश्चित राशि का भुगतान करने का आदेश दिया जाए और यह कहा जाए कि जब तक उस रसीद पर प्राप्तकर्ता तारीख लिखकर और स्टाम्प पर हस्ताक्षर न कर दे, भुगतान न किया जाए, ऐसा प्रपत्र शर्त सहित होने के कारण चैक नहीं कहा जा सकता, यहाँ पर भुगतान का आदेश शर्त सहित है। (आगे जहाँ विनिमय प्रपत्र और चैक में अन्तर बताया गया है, इसके बारे में अधिक समझा जा सकेगा। बैंक अपने विनिमयों द्वारा चैक का भुगतान केवल तभी करते हैं जब बैंक द्वारा जारी किये गये चैक फार्म का प्रयोग किया गया हो। इस प्रकार किसी व्यक्ति का चैक लिखने में बहुत ही कम विवेकाधिकार है।

एक बैंक का चैक (माँग पर देय ड्राफ्ट) अनुपम होता है, क्योंकि यह बैंक द्वारा लिखा और उसी के द्वारा देय होता है। एक माँग पर देय ड्राफ्ट लगभग चैक की भांति होता है लेकिन इन दोनों में यह अंतर है कि —

i) ड्राफ्ट एक बैंक द्वारा दूसरे बैंक पर/बैंक की अपनी अन्य किसी शाखा पर लिखा जाता है लेकिन निजी व्यक्तियों द्वारा नहीं लिखा जाता, और

ii) ड्राफ्ट को उस व्यक्ति द्वारा जिसने इसे खरीदा है, या बैंक द्वारा जिसे ये प्रस्तुत किया गया है, उतनी आसानी से प्रत्यादिष्ट (countermand) नहीं किया जा सकता जितनी आसानी से बैंक को किया जा सकता है। बैंक के पास जिसे नकद धन माना जाता है यह उसके विनियोग (appropriation) की तरह है। बैंकिंग पद्धति में ड्राफ्ट का प्रचालन (Issue) क्रय का मामला माना जाता है। साधारणतया, एक माँग ड्राफ्ट के धारक और इसका प्रचालन करने वाले बैंक के बीच एक लेनदार और देनदार का संबंध होता है। बैंक की एक शाखा द्वारा दूसरी शाखा पर माँग ड्राफ्ट का प्रचालन करना ड्राफ्ट की राशि को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजने का एक सुविधाजनक तरीका है।

21.5.1 चैक और विनिमय पत्र में अंतर

आपने विनिमय पत्र और चैक का अर्थ अलग-अलग पढ़ लिया है। अब आपको इन दोनों प्रपत्रों में अन्तर जानना चाहिए। ये अन्तर निम्नलिखित हैं :

1 चैक सदैव किसी बैंक पर लिखा जाता है, जबकि विनिमय पत्र किसी व्यक्ति पर या बैंक पर लिखा जा सकता है।

2 चैक बिना किसी रियायती दिनों (days of grace) के हमेशा माँग पर तुरन्त देय होता है, जबकि विनिमय पत्र को जब तक यह माँग पर देय न हो, 3 रियायती दिन मिलते हैं। क्योंकि चैक माँग पर फौरन देय होता है, कानून आदाता पर यह फर्ज डालता है कि वह चैक को उचित समय के भीतर भुगतान के लिए प्रस्तुत करे (आजकल यह प्रथा जारी करने की तारीख से छः महीने है)।

3 चैक को स्वीकृति की आवश्यकता नहीं होती। इस पर स्टाम्प की भी आवश्यकता नहीं होती जैसा कि विनिमय पत्र के लिये होती है।

4 चैक वाहक को माँग पर देय लिखा जा सकता है, जबकि विनिमय पत्र इस प्रकार नहीं लिखा जा सकता।

5 भुगतान को प्रत्यादिष्ट करके चैक को रद्द किया जा सकता है। एक विनिमय पत्र को प्रत्यादिष्ट नहीं किया जा सकता।

6 चैकों के भुगतान के सम्बन्ध में कुछ मामलों में बैंक वैधानिक संरक्षण का हकदार है। विनिमय पत्र के आदेशिती या स्वीकर्ता को ऐसा कोई संरक्षण उपलब्ध नहीं है।

7 रेखांकन के संबंध में अधिनियम के प्रावधान केवल चैकों पर लागू होते हैं। (एक चैक के तुल्यरूप अन्य प्रपत्र, बैंक के ड्राफ्ट और लाभांश अधिपत्र हैं और इनको भी रेखांकित किया जा सकता है)।

8 सभी चैक-फार्म बैंकों द्वारा ही जारी किये जाते हैं और बैंक अन्य किसी प्रकार के फार्म पर भुगतान नहीं करते, जबकि व्यक्तियों के विनिमय पत्र और प्रतिज्ञा पत्रों के अपने फार्म हो सकते हैं।

21.5.2 चैक का रेखांकन (Crossing)

आप जानते होंगे कि चैक खुला या रेखांकित हो सकता है। खुले चैक वे होते हैं जिनका भुगतान बैंक के काउन्टर पर किया जा सकता है। जब चैक के मुख्य भाग पर बायीं ओर ऊपर के कोने पर दो तिरछी समानांतर रेखाएं खींच दी जाती हैं तो इसे रेखांकन कहते हैं और ऐसा चैक रेखांकित चैक कहलाता है। रेखांकित चैक का भुगतान काउंटर पर प्राप्त नहीं किया जा सकता। इसे बैंक के पास खाते में जमा कराया जाता है और भुगतान बैंक को किया जाता है। अधिनियम दो प्रकार के रेखांकन को मान्यता देता है और रेखांकित चैकों के पक्षकारों की जिम्मेदारियाँ निर्धारित करता है (धारा 123 से 133)।

जब चैक के मुख्य भाग पर केवल दो तिरछी समानान्तर रेखाओं के बीच "ऐण्ड कम्पनी" शब्द या वैसा ही संकेताक्षर दिया जाए या केवल दो तिरछी समानान्तर रेखाएँ "अपरक्राम्य" (Not negotiable) शब्दों के साथ या इनके बिना खींच दी जाए तो ये रेखांकन माना जाएगा और चैक को सामान्य रेखांकित चैक माना जाएगा (धारा 123)। चित्र 21.1 को ध्यान से देखिए और समझिए कि सामान्य रेखांकन कैसे किया जाता है।

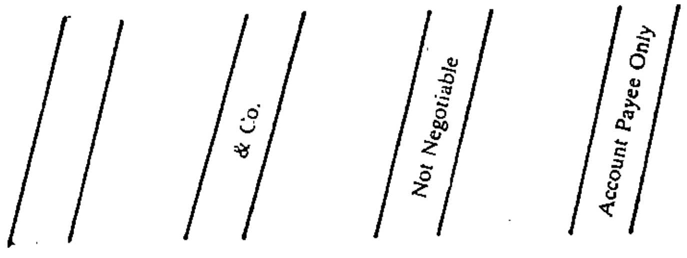

चित्र 21.1 : चैक का रेखांकन

जब चैक पर साधारण रेखांकन होता है तो आदेशिती बैंक इसका भुगतान केवल किसी अन्य बैंक को ही करेगा (धारा 126)। इसलिए धारक चैक की वसूली अपने या किसी अन्य बैंक के जरिये करा सकता है।

जब चैक के मुख्य भाग "अपरक्राम्य" शब्द लिखकर या लिखे बिना किसी बैंक का नाम लिख दिया जाता है, तो इसे "विशेष रेखांकन" कहते हैं। इस प्रकार के रेखांकन में तिरछी समानान्तर रेखाओं का प्रयोग किया भी जा सकता है और नहीं भी। इसकी विशेषता एक बैंक का नाम लिखना है। विशेष रेखांकन को समझने के लिए चित्र 21.1 का ध्यान से अध्ययन कीजिए। जब चैक को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है तब जिस बैंक पर यह लिखा गया है, वह इस चैक का भुगतान केवल उस बैंक को करेगा जिसे यह रेखांकित किया गया है या उसके वसूली एजेंट को, किसी अन्य को नहीं (धारा 126)। इस प्रकार, विशेष रेखांकन के प्रयोग में भुगतान करने वाला बैंक चैक का भुगतान केवल तब करेगा जब यह रेखांकन में उल्लेखित बैंक के जरिये प्रस्तुत किया जाए या ऐसे बैंक के एजेंट यानि दूसरा बैंक जो एजेंट के रूप में कार्य कर रहा है, के जरिये प्रस्तुत किया जाए।

Account Payee' रेखांकन, जो बहुत प्रचलन में है, साधारण रेखांकन और विशेष रेखांकन दोनों के अंतर्गत किया ा सकता है। ऐसे रेखांकन का प्रभाव यह है कि वसूली बैंक को राशि केवल आदाता के खाते में जमा करनी चाहिए।

'अपरक्राम्य'' रेखांकन का कुछ अधिक महत्त्व है। एक साधारण या विशेष रेखांकित चैक जिस पर ''अपरक्राम्य'' शब्द लिखे हैं, जिस व्यक्ति को प्राप्त होता है वह उस चैक के देने वाले के स्वामित्व से ज्यादा अच्छा स्वामित्व प्राप्त नहीं र सकता और न ही इससे बेहतर अच्छा स्वामित्व किसी अन्य को दे सकने योग्य है। संक्षेप में, यद्यपि ऐसे चैक स्तांतरणीय हैं, परन्तु अन्तरिती यथाविधि धारक नहीं बन सकता।

'अपरक्राम्य'' रेखांकन का उद्देश्य चैक के धारक या आदेशक को संरक्षण प्रदान करना है, क्योंकि यदि ऐसा चैक गलत ाथों में चला भी जाता है और वहाँ से यथाविधि धारक को हस्तांतरित कर दिया जाता है, तो भी इसका वास्तविक ामी ऐसे पृष्ठांकिती के विरुद्ध अपना दावा नहीं खोएगा। इस प्रकार ऐसे रेखांकित चैक के पृष्ठांकिती को चैक तब क स्वीकार नहीं करना चाहिए जब तक वह पृष्ठांकनकर्त्ता को और उसके स्वामित्व के बारे में पूरी तरह नहीं जानता हो।

क लिखने के समय या लिखने के बाद भी इसे निम्नलिखित तरीकों से रेखांकित किया जा सकता है (धारा 125) :

जब चैक रेखांकित नहीं है, तो धारक इसे साधारण या विशेष रूप से रेखांकित कर सकता है।

जब चैक साधारण रेखांकित है तो धारक इस पर बैंक का नाम ''अपरक्राम्य'' शब्दों के साथ या इनके बिना लिखकर इसे रेखांकन को विशेष रेखांकन बना सकता है।

जब चैक साधारण या विशेष रूप से रेखांकित है, तो इसका धारक ''अपरक्राम्य'' शब्द जोड़ सकता है।

जब चैक विशेष रूप से रेखांकित है तो वह बैंक, जिसे यह विशेष रूप से रेखांकित किया गया है, इसे दुबारा किसी बैंक को या उसके वसूली एजेंट को विशेष रूप से रेखांकित कर सकता है।

खांकन चैक का महत्वपूर्ण भाग बन जाता है और ऊपर बताए गए परिवर्तनों के अतिरिक्त अन्य किसी परिवर्तन के ाए प्रमाणीकरण की आवश्यकता होती है। **रेखांकन संबंधी उपर्युक्त सभी प्रावधान ड्राफ्टों पर भी लागू होते । (धारा 131 ए)।**

1.5.3 उत्तर-दिनांकित चैक (Post Dated Cheque)

ामान्यतया चैक जिस दिन लिखा जाता है उसी तिथि को आदाता को दे दिया जाता है। कभी-कभी चैक पर भविष्य ो कोई तारीख लिख दी जाती है जिसका अर्थ है कि चैक लिखने वाला यह चाहता है कि चैक को उस पर लिखी ारीख पर या उसके बाद भुनाया जाए।

क पूर्व-दिनांकित या उत्तर-दिनांकित या उस पर छुट्टी के दिन की तारीख होने से अवैध नहीं होता। उत्तर-दिनांकित क को भविष्य में देय विनिमय पत्र की तरह माना जा सकता है। हालांकि इसे उस तिथि से पहले परक्रामित किया । सकता है और उस तारीख को, जो इस पर लिखी है यह माँग पर देय विनिमय पत्र हो जाता है और इसलिए एक क बन जाता है।

ब एक उत्तर-दिनांकित चैक को शर्तसहित स्वीकार किया जाता है और इसका भुगतान होता है, परिसीमा कानून के ायोजनों के लिये भुगतान की तारीख केवल वही हो सकती है जो चैक पर लिखी है और वह तारीख नहीं हो सकती ब इसे दिया गया है। चैक के उत्तर-दिनांकन करने से परक्राम्यता भी प्रभावित नहीं होती।

1.5.4 भुगतान करने वाले बैंक और वसूली बैंक को संरक्षण

क की परक्राम्यता और दुरुपयोग की विभिन्न अन्य सम्भावनाएँ चैक के भुगतान द्वारा दायित्व का निर्वहन (discharge) ने में बैंक की स्थिति को जरा सा नाजुक बना देती हैं। इसमें वसूली बैंक और भुगतान करने वाला बैंक दोनों ही न्तर्ग्रस्त होते हैं। अतः अधिनियम कुछ परिस्थितियों में इन बैंकों को विशेष संरक्षण प्रदान करता है।

गतान करने वाले बैंक को संरक्षण

ातान करने वाला बैंक वह होता है जो अपने ग्राहक की ओर से चैक की राशि का भुगतान करता है। अधिनियम ातान करने वाले बैंक को निम्नलिखित परिस्थितियों में संरक्षण देता है :

आदेश पर देय चैक की स्थिति में, यदि भुगतान करने वाला बैंक सद्‌भावना में, बिना किसी लापरवाही के आदेश पर देय चैक का भुगतान आदाता को या स्पष्टतया पृष्ठांकिती को करता है तो भुगतान करने वाला बैंक अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है, भले ही बाद में यह पता चले कि चैक पर पृष्ठांकन जाली था (धारा 85)। उदाहरण के लिए, एक चैक 'क' के आदेशानुसार देय लिखा गया है (रेखांकित नहीं)। इस पर पृष्ठांकन है और इसका यथाविधि भुगतान कर दिया जाता है। यदि बैंक ने बिना लापरवाही के और सद्‌भावना के साथ चैक का भुगतान किया है तो बैंक को संरक्षण दिया जाता है। यदि इसी उदाहरण में आदेशक के हस्ताक्षर जाली पाए जाते हैं तो बैंक को संरक्षण नहीं मिलेगा, क्योंकि बैंक से आशा की जाती है कि वह अपने ग्राहक, जो चैक का आदेशक है, के सही हस्ताक्षर पहचाने। आदेश पर देय चैकों की स्थिति में जो संरक्षण बैंक को प्रदान किया गया है वही बैंक ड्राफ्टों की दशा में भी दिया गया है। उदाहरण के लिए यदि कोई ड्राफ्ट खो जाए तो एक जोखिम उत्पन्न हो सकता है कि वह किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया जाए जो इसका धारक होने का अधिकारी नहीं है और उस

पर जाली पृष्ठांकन भी हो सकता है। ऐसी स्थितियों में ड्राफ्ट का क्रेता बैंक को किसी गलत व्यक्ति द्वारा प्रस्तुतीकरण के विरुद्ध सावधान रहने के लिये कह सकता है।

2 ऐसे चैक की स्थिति में जो मूल रूप से वाहक को देय है, बैंकर उसके वाहक को उसका यथाविधि भुगतान करके अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है, भले ही उस चैक पर बाद में कोई ऐसा पृष्ठांकन किया गया हो जिससे उसे और आगे पृष्ठांकित करनें पर रोक लगा दी गई हो। ऐसे पृष्ठांकनों की बैंक अवहेलना करके यथाविधि भुगतान कर सकता है।

वसूली बैंक को संरक्षण

वसूली बैंक वह है जो अपने ग्राहक की ओर से किसी रेखांकित चैक का भुगतान प्राप्त करता है। यदि रेखांकित बैंक का स्वामित्व दोषपूर्ण है, तो उसकी अन्तर्ग्रस्तता और दायित्व का प्रश्न उत्पन्न हो जाता है। अधिनियम के अनुसार बैंक का कोई दायित्व नहीं होगा यदि उसने कार्य – (i) सद्भावना में किया है, (ii) लापरवाही के बिना किया है, (iii) भुगतान एक ग्राहक की ओर से प्राप्त किया है, अपनी ओर से नहीं, और (iv) ग्राहक बैंक का अपना ग्राहक था। यह संरक्षण केवल रेखांकित चैकों तक ही सीमित है। जब कोई व्यक्ति दूसरे के पैसे का लेन-देन करता है, तो इसका अर्थ "संपरिवर्तन (conversion)" या गबन नहीं लगाना चाहिए और उनका संरक्षण महत्त्वपूर्ण है। माल को लेकर, प्रयोग करके या नष्ट करके यह माल के साथ अनुचित हस्तक्षेप जो मालिक के कब्जे के अधिकार के साथ असंगत है, संपरिवर्तन कहलाता है।

21.5.5 बैंक द्वारा भुगतान करने से इन्कार

बैंक और ग्राहक का संबंध मुख्यतया देनदार और लेनदार का कहा जाता है। इसलिए, यह बैंक का कर्तव्य है कि वह जब उसके पास अपने ग्राहक के चैक का भुगतान करने के लिये पर्याप्त उपयोज्य कोष है तो वह उन चैकों का भुगतान करे (धारा 31)। अनुचित भुगतान करने के लिए बैंक को हर्जाना देना पड़ता है या चैक के अनादरण के कारण हुई हानि देनी होती है। इस कारण, बैंक को अपने ग्राहकों के चैकों का भुगतान करने से इनकार केवल उन्हीं परिस्थितियों में करना चाहिए जब वह भुगतान के लिए दायी नहीं होगा। यदि उसने तब भुगतान करने से इन्कार नहीं किया जब उसे ऐसा करना चाहिए था, तो बैंक को स्वयं हानि उठानी पड़ेगी। कुछ स्थितियों में यदि गलत आदाता को खोजा जा सके तो उससे हानि वसूल की जा सकती है। पहले हम उन स्थितियों की सूची बनाते हैं जिनमें उसे भुगतान करने से इन्कार कर देना चाहिए। निम्नलिखित स्थितियों में बैंक को भुगतान करने से मना कर देना चाहिए :

1 जब ग्राहक भुगतान को प्रत्यादिष्ट करता है यानि बैंक को उसके द्वारा जारी किए गए किसी खास चैक का भुगतान न करने का आदेश देता है तो बैंक ऐसे आदेश का पालन करने के लिए बाध्य होता है। भुगतान न करने का आदेश बैंक को पर्याप्त समय से पहले दिया जाना चाहिए कि बैंक चैक का भुगतान न कर सके।

2 जब बैंक को "गारनिशी आदेश" (Garnishee Order) अर्थात् किसी न्यायालय द्वारा ग्राहक खाते में जमा राशि को कुर्क करने वाला निषेधादेश प्राप्त हो जाता है तो उसे भुगतान करने से मना कर देना चाहिए। यदि उक्त आदेश प्राप्त हो जाने के बाद बैंक गलती से किसी चैक का भुगतान कर देता है, तो यह हानि बैंक को सहन करनी पड़ेगी। इस स्थिति में वह आदाता से राशि वसूल नहीं कर सकता जिसने अन्यथा वैध चैक का भुगतान प्राप्त कर लिया है।

3 जब बैंक को ग्राहक की मृत्यु की सूचना प्राप्त होती है या जब उसका ग्राहक पागल हो गया हो या दिवालिया घोषित कर दिया गया हो, तो बैंक को भुगतान करने से मना कर देना चाहिए क्योंकि इन घटनाओं के घटित होने पर उसका ऐसे ग्राहकों की ओर से भुगतान करने का प्राधिकार समाप्त हो जाता है। इन खातों के संबंध में बैंक को नया प्राधिकार प्राप्त करना चाहिए। यथोचित नोटिस प्राप्त करने के बाद कोई भुगतान चैक लिखने वाले के विरुद्ध वैध नहीं है और न ही बैंक से आदाता से राशि वापस लेने का अधिकारी है जिसे अन्यथा वैध चैक का भुगतान मिला है।

4 जब बैंक को ग्राहक से उसके जमा शेष के समनुदेशन की सूचना मिलती है, तो उसे ग्राहक द्वारा लिखे चैकों का भुगतान करने से इनकार कर देना चाहिए।

5 जब बैंक को स्वामित्व में दोष का पता चलता है या जब चैक में कोई महत्त्वपूर्ण परिवर्तन (material alteration) है या आदेशक (लिखने वाले) के हस्ताक्षर बैंक के पास रखे हस्ताक्षरों के नमूने से नहीं मिलते, तो बैंक को ऐसे चैकों का अनादरण कर देना चाहिए।

6 जब ग्राहक से चैक खो गया है और इसकी सूचना उसने बैंक को दे दी है, तो बैंक को चैक का अनादरण कर देना चाहिए।

कुछ ऐसे अवसर होते हैं जहाँ बैंक भुगतान करने से मना कर सकता है लेकिन फिर भी अपने विवेक पर भुगतान करता है। कुछ अवसरों पर गलत ढंग से भुगतान मना कर देने से उत्पन्न होने वाली हानि या क्षति कौन सहन करेगा, इस प्रश्न का न्यायालय द्वारा मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, निर्णय किया जाएगा। निम्नलिखित परिस्थितियों में बैंक अपने ग्राहक के चैकों का भुगतान करने से मना कर सकता है :

1 उत्तर-दिनांकित चैक का भुगतान जो चैक पर लिखी तारीख से पहले प्रस्तुत किया गया है।

2 जब चैक का भुगतान करने के लिए ग्राहक के खाते में पर्याप्त राशि नहीं है। कभी-कभी जमा धनराशि तो है

लेकिन उसे किसी अन्य अधिकृत उद्देश्य के लिए रखा गया है और इसलिए उन चैकों के लिए नहीं हैं जो प्रस्तुत किए गए हैं, तो ऐसी राशि में से चैकों का भुगतान नहीं किया जा सकता।

जब चैक उचित रूप से प्रस्तुत नहीं किया गया हो, उदाहरण के लिए चैक किसी ऐसी शाखा में प्रस्तुत किया गया जहाँ ग्राहक का खाता नहीं है या बैंक के कार्य के समय के बाद प्रस्तुत किया गया हो, आदि।

जब चैक जारी किये जाने के उचित समय के भीतर भुगतान के लिए प्रस्तुत नहीं किया जाता यानी जैसी कि अब प्रथा है, चैक जारी होने की तिथि के छः महीने के भीतर, तो ऐसे चैकों को कालातीत चैक (Stale cheques) माना जाता है। बैंक कालातीत चैक का भुगतान ग्राहक से पुष्टीकरण पाने के बाद कर सकता है।

ोध प्रश्न ख

चैक का रेखांकन क्या होता है?

....
....
....
....

साधारण रेखांकन और विशेष रेखांकन में अन्तर बताइए?

....
....
....
....

क्या उत्तर दिनांकित चैक वैध और परक्राम्य है?

....
....
....
....

एक वाहक चैक "क" के नाम जारी किया जाता है जो इसे "ख" को पृष्ठांकित कर देता है। "ख" फिर इसका "ग" को पृष्ठांकन करता है जो उसे भुगतान के लिये प्रस्तुत करता है। इस चैक का रेखांकन कौन कर सकता है?

....
....
....
....
....

क्या रेखांकन के प्रावधान बैंक ड्राफ्टों पर भी लागू होते हैं?

....
....
....
....
....

चैक और ड्राफ्ट में अंतर बताइए?

....
....
....
....
....

7 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

i) चैक के वैध होने के लिए इसका रेखांकन सदा आवश्यक है।

ii) उत्तर-दिनांकित चैक को बैंक के काउंटर पर किसी भी समय भुनाया जा सकता है।

iii) विशेष रेखांकन में बैंक का नाम लिखा जाता है।

iv) चैक का जीवनकाल उसके जारी करने की तिथि से 6 महीने तक होता है।

v) भुगतान करने वाला बैंक चैक का भुगतान करने से इन्कार नहीं कर सकता।

vi) ड्राफ्ट का पृष्ठांकन नहीं किया जा सकता।

21.6 यथाविधि भुगतान (Payment in Due Course)

किसी विनिमय साध्य प्रपत्र के अंतर्गत देय राशि के भुगतान को यथाविधि भुगतान कहते हैं। अधिनियम में दी गई परिभाषा के अनुसार किसी प्रपत्र का यथाविधि भुगतान करने पर देनदार उस प्रपत्र के धारक के प्रति दायित्व से मुक्त हो जाता है। तद्नुसार अधिनियम की धारा 10 में उन शर्तों का उल्लेख किया गया है जो यथाविधि भुगतान कहलाने के लिए आवश्यक हैं, ये इस प्रकार हैं :

1 भुगतान प्रपत्र के स्वरूप से प्रकट होने वाली अवधि या आशय के अनुसार की जानी चाहिए। एक उत्तर-दिनांकित चैक का परिपक्वता से पहले भुगतान प्रपत्र के प्रकट शब्दों के अनुसार नहीं है।

2 वह भुगतान जिस व्यक्ति को किया गया है प्रपत्र उसके पास होना चाहिए।

3 भुगतान सद्भाव से, बिना लापरवाही के और ऐसी परिस्थितियों में किया जाना चाहिए जो इस विश्वास के लिये उचित आधार प्रदान नहीं करती कि जिस व्यक्ति को भुगतान किया गया है वह इस राशि को प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। भुगतान केवल मुद्रा के रूप में किया जाना चाहिए, जब तक कि धारक किसी और तरह से भुगतान स्वीकार करने के लिये सहमत न हो गया हो।

जब क एक प्रतिज्ञा पत्र ख के पक्ष में निष्पादित करता है और राशि ख के आदेशानुसार देय है, क के द्वारा ग को भुगतान, जो कि ख का पुत्र है और जिसके कब्जे में प्रतिज्ञा पत्र नहीं है, यथाविधि भुगतान नहीं कहलाता है। इसी प्रकार जब जाली चैक का भुगतान किया गया है तो यह यथाविधि भुगतान नहीं होता। बैंक ऐसी कोई राशि ग्राहक से नहीं ले सकता जो उसने ग्राहक के अनुमोदन के बिना दी है।

21.7 विनिमय साध्य प्रपत्र की परिपक्वता

अधिनियम की धाराएँ 23 से 25 उन नियमों का वर्णन करती हैं जिनके अनुसार एक विनिमय साध्य प्रपत्र की परिपक्वता की तिथि तय की जाती है। धारा 22 के अनुसार एक प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र की परिपक्वता की तिथि वह है जिस तिथि पर यह देय होता है। उन प्रपत्रों के अलावा जो स्पष्टतः माँग पर देय हैं, सभी प्रपत्रों (प्रतिज्ञा पत्र और विनिमय पत्र) पर तीन दिन अनुग्रह (days of grace) के दिए जाते हैं। चैक या विनिमय पत्र जब माँग पर देय है तो अनुग्रह के दिन नहीं दिए जाते हैं। हुण्डी के लिए अनुग्रह दिन स्थानीय प्रथा पर निर्भर करते हैं। अनुग्रह के दिनों की गणना उस दिन को छोड़कर की जाती है जिस दिन राशि देय है और तीन दिनों की गणना लगातार पहले और तीसरे दिन के बीच छुट्टी को घटाए बिना की जाती है। किश्तों में देय प्रपत्र की स्थिति में प्रत्येक किश्त पर तीन अनुग्रह के दिन मिलते हैं। साधारणतया, प्रपत्र भुगतान के लिये केवल अनुग्रह के अन्तिम दिन प्रस्तुत किया जाता है, अतः इस तारीख से पहले कोई प्रस्तुतीकरण अविधिमान्य माना जाता है। लेकिन आदेशक या आदेशिती के दिवालियेपन की स्थिति में परिपक्वता से पहले धारक मुकदमा दायर करने का हकदार बन जाता है। यदि कोई प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र उस पर अंकित तारीख के कुछ बताए गए महीनों बाद या उसके दिखाए जाने के बाद या निश्चित घटना के घटित होने के बाद देय बनाया जाता है, तो वह बताए गये महीनों के बाद के महीने की तदनुरूपी तारीख के तीन दिन बाद देय होता है। यदि उस महीने में जिसमें अवधि समाप्त होती है, कोई तदनुरूपी तारीख नहीं है, तो उक्त अवधि ऐसे महीने की अंतिम तारीख को समाप्त हुई मानी जाती है। उदाहरण के लिये, 30 जनवरी 1989 को लिखा गया एक विनिमय पत्र अंकित तारीख के एक महीने बाद देय है। परिपक्वता की तारीख 3 मार्च 1989 है। उपर्युक्त स्थिति में, जिस दिन प्रपत्र लिखा गया है या स्वीकृति के लिये प्रस्तुत किया गया है या दिखाया गया है, या जिस दिन घटना घटित होती है, वह दिन छोड़ दिया जाता है (धारा 24)। यदि एक विनिमय पत्र दिखाये जाने के 30 दिन बाद देय है, वह 1 मार्च 1989 को दिखाए जाने लिये प्रस्तुत किया जाता है, तो यह प्रपत्र 3 अप्रैल 1989 को देय होगा। जब प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के परिपक्व होने वाला दिन सार्वजनिक छुट्टी का दिन है, तो प्रपत्र छुट्टी से एकदम पहले के कारोबारी दिन को देय माना जाएगा। (धारा 25)। रविवार और राजपत्र (Official Gazette) में केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचना से घोषित अन्य दिन सार्वजनिक छुट्टी के दिन होते हैं।

सारांश में, सभी प्रपत्र (प्रतिज्ञा पत्र तथा विनिमय पत्र) जो किसी निश्चित तारीख को, अथवा प्रपत्र पर अंकित तारीख अथवा दिखाए जाने के बाद निश्चित अवधि के बीत जाने पर देय होते हैं वहाँ अनुग्रह या रियायती तीन दिन दिए जाते

है। उस चैक या विनिमय पत्र के लिए, जो माँग पर या दिखाए जाने पर या प्रस्तुतीकरण पर देय है या जिस पर भुगतान की कोई तिथि विशेष रूप से अंकित नहीं हैं, उस पर अनुग्रह के दिन नहीं दिए जाते।

ब्याज का भुगतान (धाराएँ 79 और 80) : अधिनियम में प्रावधान है कि जब ब्याज प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र में विशेष रूप से उल्लेखित किया जाता है, तब ब्याज की गणना उल्लेखित दर से की जाएगी और ब्याज उस प्रपत्र की देय राशि पर व प्रपत्र की तारीख से ऐसी राशि के वसूल होने तक की तारीख तक के लिये या ऐसी राशि वसूल करने के लिये किये गये वाद के बाद उस तारीख तक की जाएगी, जैसा कि न्यायालय आदेश दे। जब प्रपत्र में किसी ब्याज दर का उल्लेख नहीं किया जाता, तो ब्याज की दर 6 प्रतिशत प्रति वर्ष होगी। पक्षकरों के बीच किसी मौखिक करार के बावजूद यह दर होगी। अन्त में, जब प्रभारित पक्षकार (Charged Party) भुगतान न किए जाने के कारण अनादरित प्रपत्र का पृष्ठांकन है, तब वह केवल उस समय से ब्याज देने के लिए दायी होता है जबकि उसे अनादरण की सूचना प्राप्त होती है।

बोध प्रश्न ग

1) 'यथाविधि भुगतान' से क्या तात्पर्य है?

....
....
....
....
....

2) विनिमय साध्य प्रपत्र की परिपक्वता से आप क्या समझते हैं?

....
....
....
....
....

3) विनिमय पत्रों और प्रतिज्ञा पत्रों में अनुग्रह के दिन क्या होते हैं?

....
....
....
....
....

4) बताइए निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :
   i) जब प्रपत्र में ब्याज की दर उल्लेखित नहीं होती, तो अधिनियम द्वारा 6 प्रतिशत प्रति वर्ष ब्याज दर अनुमत है।
   ii) चैक का आदाता ब्याज का दावा करने का हकदार है।
   iii) चैकों के लिये कोई परिपक्वता की तारीख नहीं होती।
   iv) सभी प्रकार के विनिमय पत्र अनुग्रह दिनों के हकदार हैं।

21.8 सारांश

प्रतिज्ञा पत्र में शर्त रहित वचन होता है जबकि विनिमय पत्र और चैक में शर्त रहित आदेश होता है। प्रतिज्ञा पत्र के लिए दो पक्ष होने चाहिए — लिखने वाला और आदेशिती। विनिमय पत्र के लिए तीन पक्ष होने चाहिए — आदेशक, आदेशिती और स्वीकर्त्ता। चैक की स्थिति में आदेशिती हमेशा बैंक होता है लेकिन चैक के लिए किसी स्वीकृति की आवश्यकता नहीं है क्योंकि चैक सदैव माँग पर देय होता है। कुछ समय बाद देय प्रतिज्ञा पत्रों और विनिमय पत्रों को अनुग्रह के दिन दिए जाते हैं। प्रतिज्ञा पत्र व विनिमय पत्र स्टाम्पित और हस्ताक्षरित होते हैं। चैकों पर स्टाम्प की आवश्यकता नहीं होती। प्रतिज्ञा पत्र और विनिमय पत्र विभिन्न प्रकार से लिखे जाते हैं। हुंडी को भी विनिमय पत्र के बराबर मान्यता प्रदान की गई है और बाज़ार में प्रचलित प्रथा इसे विनियमित करती है।

चैक का रेखांकन मूलतः दो प्रकार का होता है : साधारण रेखांकन और विशेष रेखांकन। रेखांकन चैक की परक्राम्यता पर प्रतिबन्ध लगाता है। यह बैंक को चेतावनी देता है कि चैक की राशि केवल धारक के खाते में जमा की जाए।

जब बैंक किसी अनियमित या जाली पृष्ठांकित चैक का भुगतान करता है तो भुगतान करने वाले बैंक को संरक्षण प्रदान किया गया है। इसी तरह जब कोई वसूली बैंक सद्भाव से और लापरवाही के बिना अपने किसी ग्राहक की ओर से भुगतान प्राप्त करता है तो वसूली बैंक को भी संरक्षण प्रदान किया गया है। जब बैंक को चैक का भुगतान करने से मना किया गया हो, या न्यायालय का आदेश है या ग्राहक की मृत्यु या दिवालियापन की स्थिति में या कुर्की के नोटिस पर या चैक प्रस्तुत करने वाले के स्वत्व में दोष की जानकारी पर या चैक के खोने के बारे में बताए जाने पर बैंक को भुगतान करने से मना कर देना चाहिए। बैंक भुगतान करने में या मना करने में अपना निर्णय ले सकता है और जब वह उत्तर-दिनांकित चैक का या अपर्याप्त जमा राशि होने या उचित रूप से प्रस्तुत न किये जाने पर या छः महीने से अधिक पुराने चैक का भुगतान करता है, तो बैंक जोखिम उठाता है।

यथाविधि भुगतान से तात्पर्य है कि प्रपत्र के अंतर्गत दावे का उन्मोचन (discharge) करने के लिये विनिमय साध्य प्रपत्र के अंतर्गत देय राशि का भुगतान करना। यथाविधि भुगतान प्रपत्र के धारक के प्रति एक वैध उन्मोचन है। अधिनियम में यथाविधि भुगतान के आवश्यक तत्त्वों का भी वर्णन किया गया है।

प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र की परिपक्वता की तारीख वह तारीख होती है जिस पर यह देय होता है। सभी प्रपत्रों पर अनुग्रह दिन दिए जाते हैं, जो एक विशेष रूप से उल्लेखित दिन या तारीख के बाद या दिखाए जाने के बाद एक निश्चित अवधि पर देय होने के लिए स्पष्टतः बताए गए हैं। चैक या उन विनिमय पत्रों पर जो माँग पर या दिखाए जाने या प्रस्तुतीकरण पर देय हैं या जिसके भुगतान के लिये कोई समय विशेष रूप से उल्लेखित नहीं है, उन पर अनुग्रह दिनों की अनुमति नहीं दी जाती।

21.9 शब्दावली

विनिमय पत्र, सेट में : एक से अधिक भागों में लिखे विनिमय पत्र जो अधिकांशतया विदेशी व्यापार सौदों में प्रयोग किये जाते हैं।

भुगतान को प्रत्यादिष्ट करना : ग्राहक द्वारा अपने बैंक को उसके द्वारा जारी किए गए चैक का भुगतान रोकने का आदेश देना।

दर्शनी हुण्डी : दिखाये जाने पर देय हुण्डी।

अनुग्रह के दिन : जब कोई विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र देय होता है, उसके बाद तीन दिन की अनुमति।

धनजोग हुण्डी : वह हुण्डी जो धारक या स्वामी को देय है।

दस्तावेजी हुण्डी : वह हुण्डी जिसके साथ माल के स्वामित्व के दस्तावेज़ लगे हों।

सशर्त प्रपत्र : ऐसा विनिमय साध्य पत्र जो समपार्श्विक जमानत या केवल सुरक्षित अभिरक्षा के लिये प्रयोग किया जाता है।

कल्पित विनिमय पत्र : वह बिल जिसमें एक या अधिक नाम कल्पित हों।

गारनिशी आदेश : ग्राहक के खाते को कुर्क करने वाला न्यायालय का बैंक को आदेश।

चैक का साधारण रेखांकन : चैक के मुख भाग पर दो तिरछी रेखाएँ "A/c payee only" शब्दों के बिना या इसके साथ।

परिपक्वता तारीख : वह तारीख जब एक प्रपत्र की राशि देय होती है। एक निश्चित तारीख के बाद देय प्रपत्रों के लिए 3 दिन रियायत के जोड़ दिए जाते हैं।

मियादी मुछती हुण्डी : यह हुण्डी जो विशेष रूप से उल्लेखित समय के बाद देय है।

नामजोग हुण्डी : वह हुण्डी जो उसमें लिखे पक्षकार को देय है।

यथाविधि भुगतान : भुगतान जिसके फलस्वरूप एक प्रपत्र में दायित्व से उन्मोचन होता है।

उत्तर-दिनांकित चैक : भविष्य की तारीख डला हुआ और उस तारीख पर देय चैक।

शाहजोग हुण्डी : व्यापार में ऊँची शाख रखने वाले व्यक्ति को देय हुण्डी।

विशेष रेखांकन : चैक के मुख भाग पर तिरछी रेखाओं के साथ या उनके बिना बैंक का नाम रेखांकन में लिखा होना।

जिकरी हुण्डी : जिकरी चिट के अंतर्गत आदरार्थ भुगतान के लिये स्वीकार की जाने वाली हुण्डी।

21.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 i) हाँ, वैध है। ii) 6%

	4	i) गलत	ii) गलत	iii) सही	iv) सही
		v) सही			
ख	7	i) गलत	ii) गलत	iii) सही	iv) सही
		v) गलत	vi) गलत		
ग	4	i) सही	ii) गलत	iii) सही	iv) गलत

21.11 स्वपरख प्रश्न

1 एक वैध प्रतिज्ञा पत्र की विशेषताएँ बताइए। उदाहरण दीजिए।

2 एक विनिमय पत्र की आवश्यक विशेषताएँ बताइये।

3 विभिन्न प्रकार के विनिमय पत्र कौन-कौन से होते हैं?

4 विनिमय पत्र और हुण्डी की तुलना कीजिए।

5 विभिन्न प्रकार की हुण्डियों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

6 विनिमय पत्र और प्रतिज्ञा पत्र में अंतर बताइए।

7 एक वैध चैक की क्या विशेषताएँ हैं?

8 विनिमय पत्र और चैक में अंतर बताइए।

9 विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र और चैक के समान लक्षणों का विवेचन कीजिए।

10 चैक का रेखांकन क्या होता है? चैक पर विभिन्न प्रकार के रेखांकनों को स्पष्ट कीजिए।

11 यथाविधि भुगतान किसे कहते हैं?

12 विधि द्वारा किस सीमा तक भुगतान करने वाले और वसूली बैंकों को संरक्षण प्रदान किया गया है?

13 ग्राहक के चैक का भुगतान करने से बैंक कब इन्कार कर सकता है?

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

इकाई 22 परक्रामण (Negotiation)

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य
22.1 प्रस्तावना
22.2 परक्रामण और समनुदेशन
22.3 परक्रामण के तरीके
22.3.1 सुपुर्दगी
22.3.2 पृष्ठांकन
22.3.3 वापस परक्रामण
22.4 विभिन्न पक्षकारों का दायित्व
22.4.1 विनिमय पत्र के आदेशक का दायित्व
22.4.2 चैक के अदाकर्ता का दायित्व
22.4.3 प्रतिज्ञा पत्र के लिखने वाले तथा विनिमय पत्र के स्वीकर्ता का दायित्व
22.4.4 पृष्ठांकक का दायित्व
22.4.5 पूर्ववर्ती पक्षकारों का यथाविधि धारक के प्रति दायित्व
22.5 खोये हुए और चुराये गये प्रपत्र
22.6 कपट से प्राप्त किये गये प्रपत्र
22.7 जाली प्रपत्र और जाली पृष्ठांकन
22.8 सारांश
22.9 शब्दावली
22.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
22.11 स्वपरख प्रश्न

22.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- परक्रामण और समनुदेशन में अंतर बता सकें
- सुपुर्दगी द्वारा परक्रामण की आवश्यक शर्तें बता सकें
- पृष्ठांकन तथा सुपुर्दगी द्वारा परक्रामण की आवश्यक शर्तों का वर्णन कर सकें
- वापस परक्रामण का अर्थ बता पाएं
- विभिन्न पक्षों जैसे आदेशक, आदेशिती, पृष्ठांकक, स्वीकर्ता आदि के दायित्व स्पष्ट कर सकें
- खोये जाने पर, चुराये जाने पर, जाली होने पर और कपट से प्राप्त या अवैध प्रतिफल के बदले प्राप्त होने पर प्रपत्रों की विभिन्न निहितार्थों को बता सकें।

22.1 प्रस्तावना

जैसा कि आप जानते हैं सरल परक्राम्यता विनिमय साध्य प्रपत्रों की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं में से एक है। परक्राम्यता का अर्थ है प्रपत्र का हस्तांतरण जो किसी व्यक्ति को उसका धारक बना देता है। जब परक्रामण (negotiation) ऐसे तरीके से किया जाता है जिसे कानून मान्यता नहीं देता तो इससे विभिन्न पक्षों के अधिकारों और दायित्वों में जटिलताएं उत्पन्न हो सकती हैं। अतः कानूनन वैध परक्रामण की आवश्यक शर्तों और परक्रामण संबंधी अन्य प्रभावों को मानना जरूरी है। इस इकाई में आप परक्रामण और समनुदेशन (assignment) में अंतर, परक्रामण की विधियों, वापस परक्रामण का अर्थ और विभिन्न पक्षों के दायित्वों का अध्ययन करेंगे। आप जाली, खोये हुए, चुराये गये, कपट से या अवैध प्रतिफल के बदले प्राप्त किये प्रपत्रों के निहितार्थों का भी अध्ययन करेंगे।

22.2 परक्रामण और समनुदेशन (Negotiation and Assignment)

विनिमय साध्य प्रपत्र का स्वामित्व दो प्रकार से हस्तांतरित किया जा सकता है: (1) परक्रामण द्वारा और (2) समनुदेशन (अभिहस्तांकन) द्वारा। यद्यपि परक्रामण और समनुदेशन दोनों में ही अधिकार या (स्वामित्व) का हस्तांतरण होता है, परन्तु ये दोनों शब्द भिन्न हैं। परक्रामण का अर्थ है प्रपत्र का एक व्यक्ति से दूसरे को हस्तांतरण जिससे कि वह प्रपत्र

का धारक बन जाता है (धारा 14)। समनुदेशन का अर्थ है संपत्ति अंतरण अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत एक विनिमय साध्य प्रपत्र के स्वामित्व का लिखित और रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज द्वारा हस्तांतरण।

परक्राम्य होने के लिए एक प्रपत्र को दो शर्तें पूरी करनी चाहिए : (1) यह ऐसे रूप में होना चाहिए जिसे इसके धारक द्वारा अपने ही नाम में वाद प्रस्तुत करने के लिए कानून द्वारा मान्यता प्राप्त हो और (2) यह व्यापार की प्रथा द्वारा हस्तांतरणीय होना चाहिए।

जैसा कि ऊपर बताया गया है परक्रामण प्रपत्र को हस्तांतरित करने का एक मात्र तरीका नहीं है। विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र आदि अभिहस्तांकन द्वारा भी हस्तांतरित किये जा सकते हैं। अधिनियम परक्रामण के बिना भी प्रतिफल के लिए विनिमय साध्य प्रपत्रों के हस्तांतरण को मान्यता देता है। उदाहरण के लिए रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा। एक पृथक् रजिस्ट्रीकृत प्रपत्र द्वारा प्रतिज्ञा पत्र का हस्तांतरण वैध होता है। संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 के अंतर्गत एक विनिमय साध्य प्रपत्र का अभिहस्तांकन हमेशा लिखित होना चाहिए और अभिहस्तांकिती को प्रपत्र उन सभी साम्यों (equity) के अधीन लेना चाहिए जो दायी पक्षकार और अभिहस्तांकक के बीच उत्पन्न होता है।

परक्रामण और अभिहस्तांकन में निम्नलिखित अंतर हैं :

1 हस्तांतरण के उद्देश्य से परक्रामण केवल विनिमय साध्य प्रपत्रों के लिए ही प्रासंगिक है जबकि अभिहस्तांकन मुख्यतया अन्य दस्तावेजों का किया जाता है और विनिमय साध्य प्रपत्र का भी अभिहस्तांकन किया जा सकता है।

2 परक्रामण की स्थिति में प्रतिफल का विद्यमान होना मान लिया जाता है, जबकि अभिहस्तांकन की स्थिति में इसे सिद्ध करना पड़ता है।

3 पृष्ठांकन द्वारा हस्तांकरण की स्थिति में यदि प्रपत्र को लिखने वाला ऋणी/आदाता (payee) को कोई नोटिस नहीं भी दिया जाता तो भी वह परिपक्वता पर देनदार होता है। अभिहस्तांकन से ऋणी तब तक आबद्ध नहीं होता है जब तक कि अभिहस्तांकिती द्वारा ऋणी को अभिहस्तांकन का नोटिस न दे दिया गया हो और ऋणी स्पष्टतया सहमत हुआ हो या उसकी सहमति निहित हो।

4 समनुदेशन (अभिहस्तांकन) सदा लिखकर किया जाता है। यह सामान्यतः पृथक् दस्तावेज द्वारा (उदाहरणार्थ विक्रय विलेख) किया जाता है या यह उसी दस्तावेज पर भी किया जा सकता है। लेकिन एक विनिमय साहध्य प्रपत्र का परक्रामण साधारण सुपुर्दगी द्वारा या पृष्ठांकन और उसके बाद सुपुर्दगी द्वारा किया जा सकता है।

22.3 परक्रामण के तरीके (Modes of Negotiation)

जैसा कि आपको पता है, विनिमय साध्य प्रपत्र के परक्रामण के दो तरीके हैं। वाहक को देय प्रपत्रों का हस्तांतरण उसकी सुपुर्दगी मात्र से किया जा सकता है, जबकि किसी व्यक्ति के आदेशानुसार देय प्रपत्र पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय होते हैं। इस प्रकार परक्रामण के दो तरीके हैः (1) सुपुर्दगी और (2) पृष्ठांकन और सुपुर्दगी। अब हम इन दोनों तरीकों पर विस्तार से विचार करते हैं।

22.3.1 सुपुर्दगी (Delivery)

धारा 47 के अनुसार "धारा 58 के प्रावधानों के अधीन वाहक को देय (bearer) प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक उसकी सुपुर्दगी द्वारा परक्राम्य है"। **किन्तु इस शर्त पर सुपुर्द किया गया प्रतिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र या चैक, कि यह एक निश्चित घटना पर लागू नहीं होगा, परक्राम्य नहीं होता है (सिवाय मूल्य के लिए ऐसे धारक के कब्जे में जिसे शर्त की सूचना नहीं है), जब तक कि ऐसी घटना घटित न हो जाए।**

उदाहरण

i) A जो वाहक को देय विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक है इसे B के एजेन्ट को B के लिए रखने के लिए सुपुर्द करता है। प्रपत्र का परक्रामण हो गया माना जाएगा।

ii) A, वाहक को देय एक विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक है। प्रपत्र A के बैंकर के पास है जो उस समय B का बैंकर भी है। A बैंकर को प्रपत्र की राशि उसके पास B के खाते में जमा करने का आदेश देता है। बैंकर ऐसा कर देता है और तद्नुसार अब वह प्रपत्र को B के एजेंट के रूप में अपने पास रखे हुए है। प्रपत्र का परक्रामण हो गया और B इसका धारक बन गया।

वाहक को देय प्रपत्र : धारा 47 वाहक को देय प्रपत्र के परक्रामण के बारे में वर्णन करती है। "वाहक को देय प्रपत्र" इस अभिव्यक्ति में न केवल वह प्रपत्र शामिल है जिसका इस प्रकार देय होना अभिव्यक्त किया गया है, बल्कि वह भी शामिल है जिसका कोरा पृष्ठांकन किया गया है, भले ही वह मूलतः आदेशानुसार देय हो। चाहे कोरे पृष्ठांकन के बाद पूर्ण पृष्ठांकन हो, प्रपत्र पूर्ण पृष्ठांकन से पूर्व के सभी पक्षकारों के लिये वाहक को देय बना रहता है।

धारा 47 को इस अधिनियम की धारा 58 के प्रावधानों के अधीन पढ़ना होगा जो उन परिस्थितियों को अधिकथित करती है (Laysdown), जिनके अंतर्गत एक धारक विनिमय साध्य प्रपत्र पर राशि वसूल करने का या इसका परक्रामण

करने का हकदार नहीं रहता। (इसका अध्ययन आप इस इकाई में आगे चलकर करेंगे)। धारा 47 अधिकथित करती है कि वाहक को देय प्रपत्र का परक्रामण बिना पृष्ठांकन की औपचारिता के सुपुर्दगी मात्र द्वारा किया जा सकता है और जिस व्यक्ति को इसकी सुपुर्दगी दी जाती है वह इसका धारक बन जाता है और अपने नाम में वाद करने का हकदार बन जाता है। वे दो शर्तें जिन्हें दस्तावेज को परक्रामित समझा जाने के लिये पूर्ण करना जरूरी है, पहले ही बतायी जा चुकी हैं।

सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरक की स्थिति : जब वाहक को देय विनिमय पत्र का धारक इसको पृष्ठांकित किए बिना सुपुर्दगी द्वारा इसका परक्रामण करता है, तब वह प्रपत्र पर उत्तरदायी नहीं है।

विनिमय पत्र के परक्रामण में यह मान लिया जाता है कि हस्तांतरक जो मूल्य के लिए धारक (holder for value) है, अपने तात्कालिक हस्तांतरिती को इस बात की पुष्टि करता है कि विनिमय पत्र वही है जो इससे तात्पर्यित है (purports to be), कि उसे इसे हस्तांतरित करने का अधिकार है और हस्तांतरण के समय उसे ऐसे किसी तथ्य का पता नहीं है जिससे वह मूल्यहीन बन जाता हो। वाहक को देय विनिमय साध्य प्रपत्र का सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरण प्रपत्र के विक्रय के समान है, जैसे माल का विक्रय हो और अंतरक के दायित्व माल के विक्रेता के दायित्व जैसे होते हैं। इसलिए वह तात्कालिक अन्तरिती के प्रति दायी होता है, जैसे कि माल का विक्रेता माल के विक्रय में निहित आश्वासन भंग करने के लिए दायी होता है। यह माना जाता है कि उसने यह आश्वासन दिया है कि जिस प्रपत्र का वह हस्तांतरण कर रहा है वह जाली नहीं हैं, अपरिवर्तित है और यह वही है जो इससे प्रत्यक्षतः तात्पर्यित है। यदि कोई परिवर्तन, जैसे कि सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरित विनिमय पत्र की राशि के अंक सुपुर्दगी से पहले परिवर्तित किए गए पाए जाते हैं और ऐसे परिवर्तन के द्वारा राशि को बढ़ा दिया गया है तो तात्कालिक अन्तरिती भुगतान की गई राशि और विनिमय पत्र की मूल राशि का अन्तर, अंतरक से वसूल करने का हकदार होता है।

22.3.2 पृष्ठांकन (Endorsement)

परक्रामण की तरह क्रियाशील होने के लिये पृष्ठांकन (बेचान) को निम्नलिखित शर्तें पूर्ण करनी चाहिए :

1. इसे विनिमय पत्र पर ही लिखना चाहिए और पृष्ठांकक के हस्ताक्षर होने चाहिए। विनिमय पत्र पर पृष्ठांकक के हस्ताक्षर मात्र ही, बिना किन्हीं अतिरिक्त शब्दों के, पर्याप्त हैं। किसी पर्ची पर लिखा पृष्ठांकन, जो प्रपत्र के साथ लगा दी गई हो, विनिमय पत्र पर ही लिखा हुआ माना जाता है।
2. एक आंशिक पृष्ठांकन (ऐसा पृष्ठांकन जिसका आशय विनिमय पत्र को दो या उससे अधिक पृष्ठांकितियों को अलग-अलग हस्तांतरित करना है) विनिमय पत्र के परक्रामण के रूप में क्रियाशील नहीं होता। सम्पूर्ण विनिमय पत्र का पृष्ठांकन होना चाहिए।
3. जब विनिमय पत्र दो या अधिक आदाताओं या पृष्ठांकितियों, जो साझेदार नहीं हैं, के आदेशानुसार देय होता है, तब सभी को पृष्ठांकन करना होता है, जब तक कि पृष्ठांकन करने वाले के पास अन्यों के लिए पृष्ठांकन करने का प्राधिकार न हो।
4. आदेशानुसार विनिमय पत्र में, जब आदाता या पृष्ठांकिती गलत तरह से पदनामित (designated) किये गये हों या उनके नाम लिखने में अक्षर विन्यास की गलती है, तब वह उसी रूप में पृष्ठांकन कर सकता है जिस रूप में वह विनिमय पत्र में वर्णित है, इसमें वह अपने ठीक हस्ताक्षर जोड़ सकता है।
5. जब विनिमय पत्र पर दो या अधिक पृष्ठांकन हों तब प्रत्येक पृष्ठांकन उसी क्रम में किया गया माना जाता है जिस क्रम में यह विनिमय पत्र पर दिखाई देते हैं जब तक कि इससे विपरीत सिद्ध न कर दिया जाए।
6. पृष्ठांकन कोरा या विशेष हो सकता है। इसमें ऐसे शब्द भी हो सकते हैं जो इसे प्रतिबन्धात्मक बना दें।

पृष्ठांकन के प्रकार : पृष्ठांकन के निम्नलिखित वर्गीकरण किए जा सकते हैं :

1. **कोरा पृष्ठांकन (Blank endorsement)** : इस प्रकार के पृष्ठांकन में पृष्ठांकक के केवल हस्ताक्षर होते हैं (धारा 16)। यह ध्यान रखें कि वाहक को देय प्रपत्र और कोरे पृष्ठांकित पत्र में अन्तर नहीं होता। दोनों स्थितियों में प्रपत्र की सुपुर्दगी मात्र से ही स्वत्व का हस्तांतरण हो जाएगा। कोरे पृष्ठांकन को सामान्य पृष्ठांकन भी कहते हैं।
2. **पूर्ण पृष्ठांकन (Full endorsement)** : इसकी परिभाषा अधिनियम की धारा 16 में दी गई है। पृष्ठांकक के हस्ताक्षर के अतिरिक्त यदि प्रपत्र की राशि विशेष रूप से उल्लेखित व्यक्ति को या उसके आदेशानुसार व्यक्ति को देने का निर्देश है तो इसे पूर्ण पृष्ठांकन कहते हैं। ऐसे पृष्ठांकन में साधारणतया "x को या उसके आदेशानुसार भुगतान कर दो या x को भुगतान करो" आदि लिखकर पृष्ठांकक हस्ताक्षर कर देता है। पूर्ण पृष्ठांकन को विशेष पृष्ठांकन भी कहते हैं।

   धारा 16 पूर्ण पृष्ठांकन के लिए प्रयोग किए जाने वाले शब्दों के किसी विशेष प्रारूप पर जोर नहीं देती। इतना ही पर्याप्त है कि जो शब्द प्रयोग किए गए हों उनसे उल्लेखित निर्देश की प्रकृति का सही अर्थ लगाया जा सके। इस प्रकार, एक प्रतिज्ञा पत्र के पीछे की ओर निम्नलिखित रूप में पृष्ठांकन वैध पूर्ण पृष्ठांकन माना गया : **"मैंने** R, तुममें 5,300 रु. आज प्राप्त किए जिसमें से 5,000 रु. इस प्रतिज्ञा पत्र के अंतर्गत देय मूलधन है और 300 रु. आज की तारीख तक इकट्ठा हुआ ब्याज है और तुम्हें इसे दिखाकर इसके अंतर्गत देय राशि वसूल करने के अधिकार सहित अभिहस्तांकित किया।"

किसी प्रतिज्ञा पत्र पर पृष्ठांकन इस प्रकार है : "यह प्रतिज्ञा पत्र 31 मार्च को श्री X को दिया गया है", प्रतिज्ञा पत्र पर आदाता के हस्ताक्षर हैं और इस प्रकार पृष्ठांकित प्रतिज्ञा पत्र पृष्ठांकिती को सुपुर्द किया गया है। इस प्रकार के पृष्ठांकन का अर्थ प्रतिज्ञा पत्र में उल्लेखित व्यक्ति को राशि देने के निर्देश के रूप में लगाया जा सकता है और यह पूर्ण पृष्ठांकन है। पृष्ठांकन में "निर्देश" वास्तविक शब्द के न होने पर भी, धारा 16 के अर्थ के अंतर्गत यह कहा जाता है कि इसमें राशि देने का निर्देश है, यदि इसमें ऐसा कुछ है जो पृष्ठांकिती को राशि देने के निर्देश के समानार्थ है, तो धारा 16 के अनुसार इसे देने का निर्देश माना जाएगा। इस धारा में पृष्ठांकन की परिभाषा के अनुसार भुगतान की प्राप्ति-सूचना को किसी भी तरह से पृष्ठांकन (पूर्ण या कोरा) नहीं माना जाता है।

3 **प्रतिबन्धात्मक पृष्ठांकन (Restrictive endorsement) :** एक विनिमय साध्य प्रपत्र के पृष्ठांकन के बाद उसकी सुपुर्दगी कर देने से उसका स्वामित्व आगे परक्रामण करने के अधिकार के साथ पृष्ठांकिती को हस्तांतरित हो जाता है, लेकिन पृष्ठांकक स्पष्ट शब्दों द्वारा ऐसे अधिकार को प्रतिबन्धित या अपवर्जित कर सकता है या पृष्ठांकिती को प्रपत्र को पृष्ठांकित करने के लिये या प्रपत्र की वस्तुओं (contents) को पृष्ठांकिती के लिए या किसी अन्य विशेष रूप से उल्लेखित व्यक्ति के लिए प्राप्त करने के लिए एजेन्ट बना सकता है"। (धारा 50)।

B वाहक को देय विभिन्न प्रपत्रों पर निम्नलिखित पृष्ठांकनों पर हस्ताक्षर करता है :

i) "अन्तर्वस्तु केवल C को भुगतान करो।"
ii) "मेरे इस्तेमाल के लिए C को भुगतान करो।"
iii) "B के लेखे के लिए C को या उसके आदेशानुसार भुगतान करो।"
iv) "लिखी राशि का C को भुगतान करो।"
v) "C को भुगतान करो।"
vi) "C को मूल्य के लिए ओरिएंटल बैंक में उसके खाते में भुगतान करो।"
vii) "C को अंतर्वस्तु का भुगतान करो, जो C द्वारा पृष्ठांकक और अन्यों को परवर्तित अभिहस्तांकन के निश्चित प्रलेख में प्रतिफल का एक भाग है।"

इन पृष्ठांकनों का ध्यानपूर्वक अध्ययन कीजिये। ध्यान दीजिए कि (i) से (iv) तक के पृष्ठांकन C द्वारा आगे परक्रामण के अधिकार को अपवर्जित नहीं करते।

धारा 50 के अनुसार पृष्ठांकिती, पृष्ठांकक का स्थान ले लेता है जब तक कि पृष्ठांकन वापस न ले लिया जाए। प्रपत्र इच्छानुसार वापस लिया जा सकता है और यदि वसूली के लिए पृष्ठांकित किए गए प्रपत्र के अंतर्गत राशि वसूल न हो गई हो तो वापस लेने वाला पृष्ठांकक प्रतिज्ञा पत्र के आधार पर, प्रतिज्ञा पत्र को उसे पुनः पृष्ठांकित हुए बिना, वाद चला सकता है। इस धारा के अंतर्गत एक विनिमय साध्य प्रपत्र के पृष्ठांकन और उसके बाद सुपुर्दगी देने से उसका स्वामित्व आगे परक्रामण के अधिकार के साथ, पृष्ठांकिती को हस्तांरित हो जाता है। लेकिन इस धारा में प्रावधान है कि पृष्ठांकक स्पष्ट शब्दों द्वारा ऐसे अधिकार को प्रतिबन्धित या अपवर्जित कर सकता है या पृष्ठांकिती को प्रपत्र को पृष्ठांकित करने के लिए या प्रपत्र की वस्तुओं को पृष्ठांकिती के लिए या किसी अन्य विशेष रूप से उल्लेखित व्यक्ति के लिए प्राप्त करने के लिए एजेन्ट बना सकता है। जब प्रतिज्ञा पत्र की राशि वसूल करने के लिए इसका पृष्ठांकन किया जाता है तब पृष्ठांकन का प्रभाव पृष्ठांकिती को आदाता का केवल एजेंट बनाना होता है।

4 **आंशिक पृष्ठांकन (Partial endorsement) :** ऐसा पृष्ठांकन जिसके द्वारा पृष्ठांकिती को कुल देय राशि के केवल एक भाग का हस्तांतरण तात्पर्यित है या जब विनिमय पत्र दो या अधिक पृष्ठांकितियों को अलग-अलग हस्तांतरित करने के लिए तात्पर्यित है तो यह आंशिक पृष्ठांकन कहलाता है। आंशिक पृष्ठांकन वैध नहीं है (धारा 56)। तथापि इस सामान्य नियम का एक अपवाद है। जब प्रपत्र का अंशतः भुगतान कर दिया गया है और आंशिक भुगतान के तथ्य को प्रपत्र पर लिख भी दिया गया है तब फिर बाकी राशि के लिए इसका परक्रामण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यह लिखकर इसे पृष्ठांकित किया जा सकता है : "विनिमय पत्र की अदत्त बकाया राशि (unpaid residue) का A को या उसके आदेशानुसार भुगतान कर दीजिए"।

5 **सशर्त पृष्ठांकन (Conditional endorsement) :** सशर्त पृष्ठांकन पृष्ठांकक के दायित्व को सीमित या नकारात्मक बनाता है। सशर्त पृष्ठांकन, प्रतिबन्धात्मक पृष्ठांकन से भिन्न है। सशर्त पृष्ठांकन का प्रपत्र की परक्राम्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, लेकिन यह पृष्ठांकक के दायित्व को केवल सीमित कर देता है, जबकि प्रतिबन्धात्मक पृष्ठांकन प्रपत्र की परक्राम्यता पर प्रतिबन्ध लगाता है, लेकिन सशर्त पृष्ठांकन का पृष्ठांकक स्वयं को अंतरक के दायित्व से मुक्त नहीं कर सकता।

धारा 52 "दायित्व-रहित" पृष्ठांकन की सम्भावना का वर्णन करती है। एक व्यक्ति व्यक्तिगत दायित्व उठाये बिना विनिमय पत्र लिख सकता है या पृष्ठांकित कर सकता है। विनिमय पत्र का लेखक या कोई भी पृष्ठांकक उसमें कोई अभिव्यक्त शर्त लिख सकता है : (1) जो धारक के प्रति उसके अपने दायित्व को सीमित या नकारात्मक करती हो, और (2) जो उसके संबंध में धारक के कुछ या सभी कर्त्तव्यों को त्याग देती हो। इस प्रकार पृष्ठांकक अपने पृष्ठांकन में अभिव्यक्त कर सकता है कि यह इस शर्त के साथ किया गया है कि वह अदाकर्ता द्वारा स्वीकृति देने या भुगतान करने में चूक के लिए उत्तरदायी नहीं होगा। ऐसा सशर्त पृष्ठांकन फ्रेंच भाषा के शब्द 'sans recours' "देयता मुक्त" या अंग्रेजी के शब्द "बिना मेरे दायित्व के (without recourse to me)" या समान अर्थ वाले अन्य शब्द लिखकर किया जा सकता है। लेकिन कोई भी ऐसा वाक्य जो इसके लिखने वाले पक्ष के दायित्व को सीमित करता है, प्रपत्र

पर ही लिखा जाना चाहिए अन्यथा यह केवल तात्कालिक पक्षों या मूल्य के बिना अंतरिती के बीच ही मान्य होगा और यथाविधि धारक के विरुद्ध काम नहीं आएगा।

पृष्ठांकक, पृष्ठांकन के द्वारा पूर्ववर्ती शर्त या उत्तरवर्ती शर्त लगा सकता है। पूर्ववर्ती शर्त की स्थिति में पृष्ठांकक को राशि वसूल करने के लिए कार्यवाही करने के लिए तब तक कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता जब तक कि वह शर्त पूरी न हो जाए। उत्तरवर्ती शर्त की स्थिति में यदि शर्त पूरी कर दी जाती है तो पृष्ठांकिती का अधिकार पूर्णतया समाप्त हो जाता है। ऐसी सभी स्थितियों में प्रपत्र बाद वाले प्रत्येक धारक को उन्हीं शर्तों के अधीन हस्तांतरित किया जाता है। इस प्रकार, यदि पृष्ठांकन यह है : "यदि एक विशिष्ट जहाज एक वर्ष के भीतर आ जाता है तो A को या उसके आदेशानुसार भुगतान कीजिए", तब यदि जहाज इस प्रकार आ जाता है तो भुगतान प्राप्त करने का अधिकार पूर्ण और अखंडनीय (irrevocable) है। जब प्रतिज्ञा पत्र को इस प्रकार पृष्ठांकित किया गया है : "जब A 21 वर्ष का हो जाए या जब यह देय हो तब वह जीवित हो तो A को या उसके आदेशानुसार भुगतान कीजिए", यह एक पूर्ववर्ती शर्त सहित पृष्ठांकन है। यदि घटना का निष्पादन असंभव हो जाता है या उल्लेखित शर्तें पूरी नहीं की जातीं तो पृष्ठांकिती को विनिमय पत्र का स्वामित्व अधिकार प्राप्त नहीं होता और वह पृष्ठांकक या पहले वाले किसी भी पक्षकार पर मुकदमा नहीं चला सकता। लेकिन यदि विनिमय पत्र इस प्रकार पृष्ठांकित किया जाता है : "A या B या उनके आदेशानुसार भुगतान कीजिए, जब तक कि मैं भुगतान से पहले इसके विपरीत सलाह न दूँ", तो यह उत्तरवर्ती शर्त सहित पृष्ठांकन है, और यदि भुगतान करने से पहले विनिमय पत्र के स्वीकर्ता को भुगतान न करने की सलाह दी जाती है तो पृष्ठांकिती का स्वामित्व विफल कर दिया जाता है। यदि शर्त पृष्ठांकन में लिखने के स्थान न पर लिखकर विनिमय पत्र के मुख्य भाग में ही लिख दी जाती है, तो इससे प्रपत्र की परक्राम्यता प्रभावित होती है। यह इसकी परक्राम्यता को विलम्बित या पूरी तरह से समाप्त कर सकती है। पृष्ठांकक एक सशर्त पृष्ठांकन करने का भी अधिकारी है। ऐसी स्थितियों में पृष्ठांकक अपने ऊपर कोई दायित्व लिए बिना पृष्ठांकिती को प्रपत्र के संबंध में कार्यवाही करने का अधिकार दे सकता है।

प्रक्रामण कौन कर सकता है : यदि विनिमय साध्य प्रपत्र को लिखने वाला आदेशक, आदाता या पृष्ठांकिती या कई संयुक्त लिखने वाले आदेशक, आदाता या पृष्ठांकिती हैं तो वे सभी उसका पृष्ठांकन और परक्रामण कर सकते हैं, बशर्ते ऐसे प्रपत्र की परक्राम्यता प्रतिबन्धित या अपवर्जित न कर दी गयी हो (जैसा धारा 50 में उल्लेखित है)। उदाहरण के लिए एक विनिमय पत्र को A को या उसके आदेशानुसार देय लिखा जाता है। A इसे B को पृष्ठांकित कर देता है और पृष्ठांकन में "या आदेशानुसार" या इसके समान अर्थ वाले कोई शब्द नहीं हैं, तब B प्रपत्र का परक्रामण कर सकता है।

धारा 51 बताती है कि यदि प्रपत्र की परक्राम्यता प्रतिबंधित या अपवर्जित नहीं की गई है जैसे कि धारा 50 में उल्लेखित है, तबः क) प्रपत्र का हर एक लिखने वाला, आदेशक, आदाता, या पृष्ठांकिती, या ख) कई संयुक्त लिखने वालों आदेशकों, आदाताओं या पृष्ठांकितियों में से सभी उसका पृष्ठांकन और परक्रामण कर सकते हैं। लेकिन प्रपत्र को लिखने वाले या आदेशक उसका पृष्ठांकन या परक्रामण नहीं कर सकते, जब तक वे उसके धारक न हों। विनिमय साध्य प्रपत्र का वैध पृष्ठांकन करने के लिए, धारक द्वारा पृष्ठांकन किया जाना चाहिए और प्रपत्र में दिए गए विवरण का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए। अतः जब धारक एक फर्म है तो केवल फर्म ही इसे परक्रामण द्वारा हस्तांतरित कर सकती है।

22.3.3 वापस परक्रामण (Negotiation Back)

कुछ स्थितियों में एक पृष्ठांकक प्रपत्र का परक्रामण करने के बाद, उसकी परिपक्वता से पहले, फिर उसी प्रपत्र का धारक बन जाता है। ऐसे अवसरों पर प्रपत्र, धारक को वापस परक्रामित हुआ कहा जाता है। ऐसी स्थितियों में कुछ मध्यवर्ती पृष्ठांकक और पृष्ठांकिती होते हैं। यदि कोई विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र पूर्ववर्ती किसी पक्षकार को परक्रामित किया जाता है तो वह एक मध्यवर्ती पक्षकार से, जिसके प्रति वह पहले स्वयं उत्तरदायी था, प्रपत्र का भुगतान परवर्तित नहीं कर सकता लेकिन इसे किसी ऐसे मध्यवर्ती पक्षकार के प्रति परवर्तित कर सकता है जिसके प्रति वह स्वयं उत्तरदायी नहीं था। इस प्रकार यदि A, जो एक विनिमय पत्र का धारक है, बिना प्रतिफल के बदले इसे B को पृष्ठांकित कर देता है और B मूल्य के लिए इसे C को पृष्ठांकित कर देता है और C बिना प्रतिफल के इसे D को पृष्ठांकित कर देता है और विनिमय पत्र अंततः A के पास आ जाता है। अब A इस प्रपत्र का B को प्रति परवर्तित कर सकता है, लेकिन C और D के प्रति नहीं।

बोध प्रश्न क

1 A ने एक प्रतिज्ञा पत्र लिखा, B इसका आदाता है। D ने पृष्ठांकन द्वारा इसे C के पक्ष में हस्तांतरित कर दिया और C ने इसे B को पृष्ठांकित कर दिया। जब भी हस्तांतरण हुआ तब क्या लिखने वाले को नोटिस दिया जाना चाहिए? स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

2 एक प्रपत्र 'X' या उसके आदेशानुसार देय लिखा गया है। बाद में इसका कोरा पृष्ठांकन कर दिया गया। क्या यह वाहक को देय है?

....

....

....

....

3 एक प्रपत्र के पीछे की ओर इन शब्दों के साथ हस्ताक्षर किए गए 'X को समनुदेशित (अभिहस्तांकित) किया'। कारण सहित बताइए कि यह पृष्ठांकन वैध है या नहीं।

....

....

....

4 "मेरे दायित्व के बिना" इन शब्दों के साथ पृष्ठांकन पर क्या प्रभाव होता है?

....

....

....

22.4 विभिन्न पक्षकारों का दायित्व

इकाई 21 में आपने विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र और चैक के विभिन्न पक्षकारों का अध्ययन किया है। अब आप इन विभिन्न पक्षकारों के दायित्वों का अध्ययन करेंगे।

22.4.1 विनिमय पत्र के आदेशक का दायित्व

धारा 30 एक अनादृत विनिमय पत्र के धारक को आदेशक के विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार प्रदान करती है। आदेशक के अतिरिक्त, स्वीकर्ता और मध्यवर्ती पृष्ठांकक भी धारक के प्रति उत्तरदायी होते हैं। लेकिन एक ऐसा देनदार, जिसने विनिमय पत्र स्वीकार नहीं किया है, उसके लिए उत्तरदायी नहीं है। इसका अर्थ है कि वादी उन व्यक्तियों के विरुद्ध वैयक्तिक डिक्री प्राप्त नहीं कर सकता जो प्रपत्र के पक्षकार नहीं हैं और जिनके साथ वादी के संबंध में कोई अनुबन्धात्मक संबंध (Privity of Contract) नहीं है।

विनिमय पत्र के आदेशक का अनुबंध स्वीकर्ता के अनुबंध से भिन्न, केवल सशर्त अनुबंध होता है। विनिमय बिल का आदेशक केवल विनिमय पत्र के या तो अस्वीकृति के कारण या भुगतान न किए जाने से अनादरण की स्थिति में राशि का भुगतान करने की जिम्मेदारी लेता है। इसलिए जब तक विनिमय पत्र का अनादरण न हो तब तक कोई मांग या ऋण उत्पन्न नहीं होता। लेकिन जब विनिमय पत्र अनादृत हो जाता है और अनादरण का नोटिस दे दिया जाता है (आदेशक और आदेशिती के बीच वास्तवकि संबंध कुछ भी हों) आदेशक तुरंत ही धारक के प्रति उस राशि के लिए उत्तरदायी हो जाता है। विनिमय पत्र का आदेशक यह जिम्मेदारी लेता है कि विनिमय पत्र उचित अवधि में काम-काज के समय में प्रस्तुत किए जाने पर अदाकर्ता द्वारा स्वीकृत किया जाएगा बशर्ते कि वह काम-काज के स्थान पर या अदाकर्ता के सामान्य निवास स्थान पर प्रस्तुत किया गया हो। निस्संदेह, आदेशक स्वीकृति के लिए जमानती नहीं है क्योंकि अदाकर्ता तब तक दायी नहीं बनता जब तक वह स्वीकृति न दे दे। इसलिए, जब तक अदाकर्ता विनिमय पत्र स्वीकार नहीं करता तब तक कोई ऋण ही नहीं है जिसके लिए अदाकर्ता को जिम्मेदार ठहराया जा सके। इसका अर्थ है कि कोई प्रधान ही नहीं है जिसके लिए आदेशक जमानत दे सके। अतः जब कोई स्वीकृति नहीं है तो क्षतिपूर्ति के निहित अनुबंध के अंतर्गत आदेशक का दायित्व एक मूल ऋणी के समान है। उसकी जिम्मेदारी केवल सशर्त है और उसका दायित्व तब तक उत्पन्न नहीं होता जब तक i) प्रपत्र अस्वीकृति के द्वारा या भुगतान न करने से अनादृत न हो जाए तथा ii) उसे इसकी सूचना न मिले। जब विनिमय पत्र मार्गस्थ (in transit) स्थिति में, चोरी हो जाता है और अदाकर्ता को प्रस्तुत किया जाता है तथा वह पृष्ठांकन की जालसाजी का पता लगाए बिना इसका भुगतान कर देता है तो आदेशक का दायित्व समाप्त हो जाता है और वह दायी नहीं रहता। जब अदाकर्ता को दिवालिया घोषित कर दिया जाता है तो धारक विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किए बिना इसे अनादृत हुआ मान सकता है और परिपक्वता से पहले ही आदेशक पर मुकदमा चला सकता है। धारा 30 के अनुसार धारक को कार्यवाही करने का अधिकार प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि अनादरण की सूचना आदेशक को दी जाए। अनादरण की सूचना दिए जाने पर आदेशक का दायित्व उत्पन्न हो सकता था क्योंकि जब विनिमय पत्र मार्ग में चोरी हो जाता है, लेकिन अदाकर्ता ने पृष्ठांकन की जालसाजी पता लगाए बिना इसका भुगतान कर दिया है तो आदेशक दायित्व मुक्त हो जाता है। सूचना देने का उद्देश्य एक व्यक्ति को तथ्यों से अवगत कराना है और इसलिए एक वाद इस छोटी सी तकनीकी बात पर असफल नहीं होना चाहिए कि वाद पत्र में सूचना संबंधी तथ्य अपूर्णतया दिये गये हैं।

22.4.2 चैक के अदाकर्ता का दायित्व

चैक की स्थिति में, चैक के अदाकर्ता (बैंक) के पास यदि ग्राहक के खाते में पर्याप्त जमा राशि है, तो उसे ऐसा करने

के लिए जब विधिवत् कहा जाए तब उसे चैक का भुगतान कर देना चाहिए। इस प्रकार से भुगतान न करने पर यदि चैक के काटने वाले को कोई हानि होती है तो अदाकर्ता (बैंक) को चैक के काटने वाले की क्षतिपूर्ति करनी होगी

जब चैक की राशि बैंक के पास काटने वाले के खाते में जमा राशि से अधिक है तब बैंक ऐसे चैक का भुगतान करने के लिए बाध्य नहीं है, उस राशि की सीमा तक भी नहीं जो बैंक के पास है। परन्तु यदि बैंक और ग्राहक के बीच पर्याप्त कोष न होने पर भी चैक का भुगतान (जैसा कि ओवरड्राफ्ट की स्थिति में होता है) करने का अनुबंध हो तो स्थिति भिन्न हो जाती है। परिणामस्वरूप यह माना गया है कि ग्राहक को एक निश्चित सीमा तक ओवरड्राफ्ट करने की अनुमति देने के करार द्वारा बैंक की अपने ग्राहक के चैक का भुगतान करने की बाध्यता को विस्तृत किया जा सकता है। लेकिन ऐसा करार वैध प्रतिफल के लिए होना चाहिए और ऐसे किसी करार के न होने पर बैंक अपने ग्राहक के ओवरड्राफ्ट का अनादरण करने पर उत्तरदायी नहीं है।

बैंकर और ग्राहक के संबंध : कोई विपरीत अनुबंध न होने पर, बैंकर और ग्राहक का संबंध एक ऋणी और ऋणदाता का होता है। ग्राहक के खाते में जमा की गई राशि, चाहे वह गलती से जमा की गई हो, ग्राहक की राशि बन जाती है और बैंक जमा की प्रविष्टि (entry) को पलट नहीं सकता और न ही उस व्यक्ति को राशि वापस कर सकता है जिसने इसे जमा कराया है। जब राशि बैंक को दूसरे स्थान पर भेजने के लिए दी जाती है, लेकिन बैंक उसे उसी दिन हस्तांतरित नहीं करता परंतु भुगतान को उसी दिन मना कर देता है, तो स्थिति भिन्न होती है। ऐसी स्थितियों में राशि उसी व्यक्ति की सम्पत्ति रहती है जो उसे जमा कराता है और उसे अधिमानी व्यवहार (preferential treatment) का हकदार बना देती है।

चैक का गलती से भुगतान करने पर बैंक का दायित्व : एक बैंकर, जो ग्राहक के प्राधिकार के बिना एक ग्राहक का पैसा दे देता है, वह इस प्रकार दिए गए धन को ग्राहक के नामे में नहीं लिख सकता।

धारक के प्रति बैंक के दायित्व : एक चैक के धारक और बैंक, जिस पर चैक लिखा गया है, के बीच कोई प्रत्यक्ष अनुबंध नहीं होता है। चैक उस कोष के अभिहस्तांकन के रूप में कार्यशील नहीं होता जो ग्राहक ने बैंक में जमा किए हों। जब कोई चैक अनादृत किया जाता है तो चैक के धारक का उपचार उसे काटने वाले के प्रति ही है और बैंक धारक के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है।

वसूली के लिए भेजे गए चैक : जब कोई ग्राहक अपने बैंक के पास वसूली के लिए चैक जमा करता है तो बैंक ग्राहक के लिए वसूली करने का केवल एक एजेंट मात्र होता है। यदि बैंक उस चैक की राशि वास्तव में वसूल करने से पहले ही ग्राहक के खाते में जमा कर देता है तो पास बुक में ऐसी प्रविष्टि यह दिखाएगी कि बैंक इस प्रकार जमा की गई राशि की सीमा तक ग्राहक का ऋणी है। बाद में बैंक यह सिद्ध कर सकता है कि यह प्रविष्टि एक गलती थी, यदि ऐसी प्रविष्टि के विश्वास पर ग्राहक ने अपनी स्थिति न बदल ली हो। यदि इस प्रविष्टि के आधार पर ग्राहक ने अपनी स्थिति बदल ली है तो बैंक को यह कहने से रोका जा सकता है कि वह ऐसी प्रविष्टि की राशि के लिए उत्तरदायी नहीं है।

विनिमय पत्रों के संबंध में बैंक का कर्त्तव्य : जब कोई ग्राहक अपने बैंक द्वारा देय विनिमय पत्र स्वीकार करता है तो यह बैंक को विनिमय पत्र का भुगतान करने का प्राधिकार है। चैक की स्थिति में जाली पृष्ठांकन के परिणामों के विरुद्ध बैंक को संरक्षण दिया गया है, जबकि विनिमय पत्र की स्थिति में उसे संरक्षण प्रदान नहीं किया गया। किसी विपरीत करार के न होने पर, अपने ग्राहकों के विनिमय पत्रों को स्वीकार करने के लिए बैंक बाध्य नहीं है तथा ग्राहक द्वारा लिखे गये चैकों के अतिरिक्त अन्य किसी विनिमय पत्र का भुगतान करने के लिए बैंक बाध्य नहीं है।

अनादृत चैक के लिए क्षतिपूर्ति : जब बैंक बिना किसी औचित्य के चैक का अनादरण करता है तो वह काटने वाले के प्रति दायी है, आदाता के प्रति नहीं। इस प्रकार चैक को गलती से अनादरण करने के लिए बैंक चैक के काटने के प्रति उत्तरदायी है, आदाता के प्रति नहीं। अनादरण की स्थिति में चैक के काटने वाले द्वारा बैंक से वसूल की जा सकने वाली क्षतिपूर्ति की राशि उसके द्वारा अनादरण के कारण उठाई गई आर्थिक हानि तक ही सीमित नहीं होती है।

22.4.3 प्रतिज्ञा पत्र के लिखने वाले तथा विनिमय पत्र के स्वीकर्ता के दायित्व

"कोई विपरीत अनुबंध न होने पर, प्रतिज्ञा पत्र का लेखक और विनिमय पत्र की परिपक्वता के पहले उसका स्वीकर्ता क्रमशः प्रतिज्ञा पत्र के प्रकट शब्दों या स्वीकृति के अनुसार उसकी राशि का भुगतान करने के लिए बाध्य हैं, तथा विनिमय पत्र का स्वीकर्ता, परिपक्वता पर या उसके बाद विनिमय पत्र की राशि धारक को मांग करने पर भुगतान करने के लिये बाध्य है। इस प्रकार से भुगतान, जैसा ऊपर बताया गया है, न किए जाने पर ऐसा लेखक या स्वीकर्ता, प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के किसी पक्षकार की, उसके द्वारा उठाई गई हानि या क्षति जो भुगतान न करने के कारण हुई है, क्षतिपूर्ति करने के लिये बाध्य होता है।"

प्रतिज्ञा पत्र के लिखने वाले का दायित्व : धारा 32 में प्रतिज्ञा पत्र के लेखक और विनिमय पत्र के स्वीकर्ता के दायित्व के बारे में बताया गया है। एक निश्चित व्यक्ति के पक्ष में प्रतिज्ञा पत्र निष्पादित करके, उसका लेखक ऋणी बन जाता है और वह सम्पूर्ण राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होता है। जब माँग पर देय प्रपत्र का लेखक, आदाता द्वारा कोई मांग किये जाने से पहले, प्रपत्र वापस प्राप्त किए बिना इसकी राशि का भुगतान कर देता है और आदाता उस प्रपत्र को किसी ऐसे तीसरे व्यक्ति को पृष्ठांकित कर देता है जिसे भुगतान के तथ्य का कोई ज्ञान नहीं है, तो पृष्ठांकिती यथाविधि धारक के रूप में प्रपत्र के लेखक पर मुकदमा चलाने का हकदार होता है।

जब तक कि स्वीकृति न हो, देनदार दायी नहीं : देनदार का दायित्व तभी उत्पन्न होता है जब वह विनिमय पत्र को स्वीकार करता है। धारक, देनदार पर स्वीकृति देने से मना करने के लिये वाद नहीं चला सकता है। अस्वीकृति द्वारा अनादरण होने पर, धारक केवल लेखक और पहले वाले पृष्ठांककों पर वाद कर सकता है।

स्वीकर्ता का दायित्व : विनिमय पत्र के स्वीकर्ता और प्रतिज्ञा पत्र के लेखक का दायित्व पूर्ण और शर्तरहित होता है। विनिमय पत्र स्वीकार करके स्वीकर्ता यह करार करता है कि वह अपनी स्वीकृति के प्रकट शब्दों के अनुसार भुगतान करेगा। इसी प्रकार, प्रतिज्ञा पत्र का लेखक, प्रतिज्ञा पत्र लिखकर यह करार करता है कि वह इसके प्रकट शब्दों के अनुसार भुगतान करेगा। स्वीकर्ता और लेखक के मुख्यतयां दायी पक्षकार होने से, उनका दायित्व पूर्ण होता है और उनको उत्तरदायी ठहराने के लिए उन्हें अनादरण की कोई सूचना देने की आवश्यकता नहीं है।

विनिमय पत्र का स्वीकर्ता और प्रतिज्ञा पत्र का लेखक, मुख्य ऋणी होते हैं और उन्हें उत्तरदायी ठहराने के लिये भुगतान हेतु प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं है। उनका दायित्व प्रस्तुतीकरण पर आधारित नहीं है। विनिमय पत्र के देनदार पर विनिमय पत्र को स्वीकारने और उसके द्वारा दायित्व उठाने का कोई कानूनी बंधन नहीं है। जब तक वह विनिमय पत्र को स्वीकार नहीं करता, उसका कोई दायित्व उत्पन्न नहीं होता।

विनिमय पत्र के लेखक, स्वीकर्ता और प्रतिज्ञा पत्र के लेखक के दायित्व में अंतर : यद्यपि प्रतिज्ञा पत्र का लेखक और विनिमय पत्र का लेखक दोनों ही प्रपत्रों के ऋणदाता हैं, उनके दायित्वों की प्रकृति भिन्न हैं। प्रतिज्ञा पत्र के लेखक का दायित्व, विनिमय पत्र के स्वीकर्ता के दायित्व की भांति शर्तरहित होता है। विनिमय पत्र के आदेशक का दायित्व, एक पृष्ठांकक के दायित्व की भांति सशर्त होता है और यह विनिमय पत्र के अनादरण की स्थिति में ही उत्पन्न होता है। विनिमय पत्र का स्वीकर्ता और प्रतिज्ञा पत्र का लेखक समान रूप से बचनबद्ध होते हैं। विनिमय पत्र का स्वीकर्ता, विनिमय पत्र को स्वीकार करके अपनी स्वीकृति के अनुसार भुगतान करने का उत्तरदायित्व लेता है। इसी प्रकार, प्रतिज्ञा पत्र का लेखक, इसे लिखकर इसके प्रकट शब्दों के अनुसार भुगतान करने का उत्तरदायित्व लेता है। जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि लेखक और स्वीकर्ता दोनों ही प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के अंतर्गत ऐसे पक्षकार हैं जो मुख्यता दायी हैं। उनका दायित्व पूर्ण और शर्तरहित है और अनादरण की किसी सूचना पर निर्भर नहीं है। विनिमय पत्र के लेखक की मृत्यु या दिवालियेपन से स्वीकर्ता का दायित्व प्रभावित नहीं होता। उसका दायित्व इस तथ्य से भी प्रभावित नहीं होता कि युद्ध के कारण वह माल प्राप्त करने में असमर्थ रहा, जिसके संबंध में उसने प्रपत्र में अपनी स्वीकृति दी थी।

वाद के पक्षकार : यह प्रश्न उठ सकता है कि विनिमय साध्य प्रपत्र पर क्षतिपूर्ति के लिए किए गए वाद के उचित पक्षकार कौन हैं। धारा 32 घोषित करती है कि कोई विपरीत अनुबंध न होने पर, प्रतिज्ञा पत्र का लेखक और विनिमय पत्र की परिपक्वता से पहले उसका स्वीकर्ता क्रमशः प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के प्रकट शब्दों के अनुसार उसकी परिपक्वता पर उसकी राशि का भुगतान करने के लिए आबद्ध हैं। ऐसा भुगतान न करने पर, ऐसा लेखक या स्वीकर्ता प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र के पक्षकार द्वारा उठाई गई किसी हानि, या क्षति जो भुगतान न करने के कारण हुई है, की क्षतिपूर्ति करने के लिए आबद्ध है। अधिनियम की धारा 37 बताती है कि प्रतिज्ञा पत्र या चैक का लेखक, विनिमय पत्र की स्वीकृति तक उसका लेखक, और विनिमय पत्र का स्वीकर्ता उनके लिए मुख्य ऋणियों के रूप में दायी हैं और उसके अन्य पक्षकार उस पर जमानती के रूप में उत्तरदायी है। धारा 38 में प्रावधान है कि जमानती के रूप में इस प्रकार से उत्तरदायी पक्षों का जहां तक पारस्परिक संबंध है, वहां तक प्रत्येक पहले का पक्षकार भी प्रत्येक बाद के पक्षकार के प्रति मूल ऋणी के रूप में उत्तरदायी है। लेखक और पृष्ठांकक के मध्य, पृष्ठांकक जमानती के रूप में उत्तरदायी होता है, और लेखक मूल ऋणी के रूप में। अतः यदि एक धारक पृष्ठांकक से धन वसूल कर लेता है तो पृष्ठांकक लेखक पर वाद चला सकता है जो कि मूल ऋणी के रूप में उसकी क्षतिपूर्ति करने के लिए उत्तरदायी है।

22.4.4 पृष्ठांकक का दायित्व (Liability of Endorser)

कोई विपरीत अनुबंध न होने पर जो कोई विनिमय प्रपत्र की परिपक्वता से पहले उसे पृष्ठांकित और सुपुर्दगी ऐसे पृष्ठांकन में अपने स्वयं के दायित्व को/स्पष्टतः अपवर्जित या सशर्त किए बिना करता है वह उस दशा में, जिसमें आदेशक, स्वीकर्ता या लेखक द्वारा उसे अनादृत किया जाए, हर प्रत्येक बाद वाले धारक के प्रति ऐसी हानि या क्षति के लिए, जो ऐसे अनादर से उसे हुआ है, क्षतिपूर्ति करने के लिए बाध्य है, परंतु यह तब होता है जब अनादरण की विधिवत् सूचना ऐसे पृष्ठांकक को दे दी गई हो या प्राप्त हो गई हो (धारा 35)।

यह धारा केवल उन प्रपत्रों पर लागू होती है जो परिपक्वता से पहले पृष्ठांकित किये गये हों और क्योंकि मांग पर देय प्रतिज्ञा पत्र हमेशा परिपक्व होता है, इसलिए यह धारा ऐसे प्रपत्रों पर लागू नहीं होती।

अनादरण के बाद, पृष्ठांकक मांग पर देय प्रपत्रों के लिए उत्तरदायी होता है, क्योंकि उसका दायित्व लेखक के दायित्व के समान है यद्यपि यह इस शर्त के अधीन है कि कोई विपरीत अनुबंध नहीं है। यह स्पष्ट है कि इस धारा के अंतर्गत दायित्व पृष्ठांकन से उत्पन्न होता है और प्रपत्र से नहीं। लेकिन पृष्ठांकक का दायित्व उत्पन्न करने के लिये केवल पृष्ठांकन ही पर्याप्त नहीं है, इसके साथ प्रपत्र की सुपुर्दगी भी की जानी चाहिए। पृष्ठांकिती के वाद चलाने का अधिकार पृष्ठांकन पर आश्रित है (जो वाद के कारण का भाग बनता है और जो न्यायालय को जहां पृष्ठांकन किया गया है, वहां वाद ग्रहण करने और उस पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान करता है)। यदि एक व्यक्ति दूसरे को एक विनिमय पत्र, उस पर अपने नाम का पृष्ठांकन किये बिना सुपुर्द करता है, वह स्वयं को कानून की बाध्यता के अधीन नहीं करता और

उस विनिमय पत्र के लिये उस व्यक्ति द्वारा जिसे उसने विनिमय पत्र सुपुर्द किया है या किसी अन्य द्वारा उस पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता।

22.4.5 पूर्ववर्ती पक्षकारों का यथाविधि धारक के प्रति दायित्व

विनिमय साध्य प्रपत्र का प्रत्येक पूर्ववर्ती पक्षकार, यथाविधि धारक के प्रति उत्तरदायी है, जब तक कि प्रपत्र का विधिवत् भुगतान न कर दिया जाये (धारा 36)। पूर्ववर्ती पक्षकारों का अर्थ है लेखक या आदेशक, स्वीकर्ता और मध्यवर्ती पृष्ठांकक। इस धारा के अर्थ के अन्तर्गत स्वीकर्ता पूर्ववर्ती पक्षकार होगा, यद्यपि उसने स्वीकृति पर हस्ताक्षर विनिमय पत्र के यथाविधि धारक के हाथ में आने के बाद किये हैं।

एक पृष्ठांकक, इस धारा के अन्तर्गत, यथाविधि धारक के प्रति उत्तरदायी नहीं है यदि उसने पृष्ठांकन में स्पष्ट शब्दों द्वारा प्रपत्र पर अपने दायित्व को अपवर्जित कर दिया है। यह धारा अधिकथित करती है कि विनिमय साध्य प्रपत्र यथाविधि धारक से पहले का प्रत्येक पक्षकार उसके प्रति उत्तरदायी है, जब तक कि प्रपत्र का भुगतान नहीं हो जाता। विनिमय पत्र का धारक इस तरह वाद चला सकता है जैसे कि वह सभी पक्षकारों या किसी एक पक्षकार का एजेंट हो और उसके पास यह अधिकार उसके पक्ष में पृष्ठांकन होने से है। एक विनिमय साध्य प्रपत्र का तब तक परक्रामण किया जा सकता है जब तक कि इसका भुगतान न कर दिया जाये। लेकिन जब भुगतान परिपक्वता से पहले कर दिया गया है और ऐसा भुगतान प्रपत्र पर नहीं दर्शाया गया है तो भी इसका परक्रामण किया जा सकता है, क्योंकि ऐसे भुगतान को यथाविधि भुगतान नहीं समझा जा सकता। एक प्रपत्र का इसके भुगतान किये जाने से पहले परिपक्वता के समय या उसके बाद सदा परक्रामण किया जा सकता है लेकिन यह परक्रामण प्रतिज्ञा के लेखक या विनिमय पत्र के लेखक या स्वीकर्ता द्वारा नहीं किया जा सकता।

बोध प्रश्न ख

1 A, B पर एक विनिमय पत्र लिखता है जो इसके दिखाये जाने के 3 महीने बाद देय है। इसकी स्वीकृति से पहले ही यह परक्रामण पर X, Y और Z से हस्तांतरित हुआ। Z द्वारा प्रस्तुतीकरण किए जाने पर B स्वीकार करने से मना करता है। Z के प्रति कौन उत्तरदायी है?

2 अनादरण की स्थिति में विनिमय साध्य प्रपत्र का पृष्ठांकक इसकी परिपक्वता से पहले किसके प्रति दायी है?

....

....

....

3 विधि के अनुसार "पूर्ववर्ती पक्षकार" कौन नहीं है?

....

....

4 A ने B को देय एक चैक लिखा जिसे C पृष्ठांकित कर दिया गया। यह चैक बैंक द्वारा अनादृत कर दिया गया। धारक को क्या उपचार है?

....

....

22.5 खोए हुए और चुराये गये प्रपत्र

खोए हुए प्रपत्र (Lost instruments) : जब विनिमय साध्य प्रपत्र खो जाता है तो निम्नलिखित नियम लागू होते हैं :

1 जब कोई विनिमय पत्र परिपक्वता से पहले खो गया है तो इसका धारक, इसके आदेशक को उसी अवधि का एक और विनिमय पत्र देने के लिए प्रार्थना कर सकता है। परन्तु दूसरा विनिमय पत्र देते समय आदेशक उस धारक से इस बात की जमानत मांग सकता है कि वह (धारक) तथाकथित खोए हुए विनिमय पत्र के मिल जाने पर उन सभी व्यक्तियों के विरुद्ध उसकी (आदेशक की) क्षतिपूर्ति करेगा जो पाये हुये विनिमय पत्र के आधार पर उसके (आदेशक के) विरुद्ध कार्यवाही कर सकते हैं। यदि आदेशक, धारक द्वारा प्रार्थना करने पर, विनिमय पत्र की दूसरी प्रति देने से इंकार कर देता है तो न्यायालय में मुकद्मा करके उसे विनिमय पत्र की दूसरी प्रति देने के लिए बाध्य किया जा सकता है (धारा 45 ए)। प्रतिज्ञा पत्र या चैक धारक को भी, खोए हुए प्रपत्र की दूसरी प्रति प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है।

2 विनिमय साध्य प्रपत्र के खो जाने पर धारक को उन सभी दायी पक्षकारों को इसकी सूचना दे देनी चाहिये जो इस पर उत्तरदायी हैं और उसे इसके दुरुपयोग के विरुद्ध सावधान करने के लिये किसी स्थानीय दैनिक समाचार पत्र में विज्ञापन द्वारा इसकी सार्वजनिक सूचना भी देनी चाहिये।

यदि धारक प्रपत्र की दूसरी प्रति प्राप्त नहीं कर सका हो तो प्रपत्र की परिपक्वता पर उसे उस व्यक्ति को, जो उस खोए गये प्रपत्र पर देनदार है, उस पर देय राशि का भुगतान करने के लिये आवेदन करना चाहिये। यद्यपि देनदार व्यक्ति, उसे प्रपत्र की सुपुर्द न किए जाने तक, भुगतान करने से मना करने का हकदार है, वह आदाता से यह लिखित वचन प्राप्त करने के बाद कि इस पर किसी और दावे के विरुद्ध वह उसकी क्षतिपूर्ति करेगा, उसे प्रपत्र का भुगतान कर सकता है। यदि देनदार प्रपत्र की सुपुर्दगी किए जाने पर जोर देता है और इसके बिना भुगतान करने से मना करता है, तो इसी प्रकार की क्षतिपूर्ति का वचन देकर न्यायालय के माध्यम से भुगतान मांगा जा सकता है (धारा 81)।

खोए हुए प्रपत्र के पाने वाले को प्रपत्र पर कोई स्वत्वाधिकार नहीं मिलता और वह इसके भुगतान के लिये उत्तरदायी पक्षकार पर मुकदमा नहीं चला सकता। प्रपत्र का वास्तविक धारक (सच्चा स्वामी) उससे प्रपत्र वापस लेने का हकदार है। लेकिन यदि खोया हुआ प्रपत्र वाहक को देय है और पाने वाला उसका भुगतान प्राप्त कर लेता है, तब देनदार (यानि लेखक, स्वीकर्ता या आदेशिती) यदि यथाविधि भुगतान करता है तो वह अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। परन्तु प्रपत्र का वास्तविक स्वामी इसे पाने वाले व्यक्ति से राशि वसूल करने का हकदार है (धाराएँ 58 और 82)।

क्योंकि प्रपत्र को पाने वाले को उस पर स्वत्वाधिकार नहीं मिलता, वह इसका विधितः हस्तांतरण नहीं कर सकता। यदि वह प्रपत्र वाहक को देय प्रपत्र है या कोरा पृष्ठांकित है तो इसको पाने वाला व्यक्ति इसका यथाविधि धारक को परक्रामण कर सकता है। ऐसी स्थिति में धारक को प्रपत्र पर वैध हक प्राप्त होता है और वह संबद्ध पक्षकारों से भुगतान प्राप्त कर सकता है (धारा 58)। प्रपत्र का वास्तविक स्वामी उसे उक्त यथाविधि धारक से अपने कब्ज़े में नहीं ले सकता और इसके पाने वाले व्यक्ति का यदि पता लग जाए तो उससे हर्जाना मांग सकता है।

यदि किसी "आदेशानुसार देय" प्रपत्र को पाने वाला व्यक्ति, उस पर जाली पृष्ठांकन करके उसे मूल्य के बदले किसी सद्भावी पृष्ठांकिती को पृष्ठांकित कर देता है, तो ऐसे पृष्ठांकिती को भी उस प्रपत्र पर कोई वैध स्वत्वाधिकार प्राप्त नहीं होता और वह इसके संबंध में मुकद्मा भी नहीं चला सकता। जालसाज़ी कोई स्वामित्व प्रदान नहीं कर सकती और इसलिये पृष्ठांकिती यथाविधि धारक नहीं हो सकता। यदि प्रपत्र पर भुगतान करने के लिये उत्तरदायी पक्षकार पृष्ठांकिती को, जो इसका जाली पृष्ठांकन के अन्तर्गत धारक है, भुगतान कर देता है, तो भी वह इसके वास्तविक स्वामी को भुगतान करने के लिए उत्तरदायी बना रहेगा। (ऐसे मामलों में भुगतान करने वाले बैंक को विधि द्वारा संरक्षण प्रदान किया गया है)।

ये गये प्रपत्र (Stolen instruments) : चुराये गये विनिमय साध्य प्रपत्र की स्थिति भी लगभग वैसी ही होती सी खोये हुए प्रपत्र की होती है, केवल इतना अंतर है कि चोर का पता लगने पर उस पर फौजदारी कार्यवाही की कती है जबकि इसे पाने वाले व्यक्ति पर ऐसी कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती। यहां भी, प्रपत्र का कोई स्वामित्व को नहीं मिलता और वास्तविक स्वामी उस पर प्रपत्र प्राप्त करने के लिये या वह राशि प्राप्त करने के लिये मुकद्मा सकता है जो उसने लेखक, स्वीकर्ता या देनदार से प्राप्त की है। लेकिन यदि "वाहक को देय" प्रपत्र का चोर का परक्रामण किसी यथाविधि धारक को कर देता है तो ऐसा धारक उस पर वैध स्वामित्व प्राप्त करता है (धारा 58)।

.6 कपट से प्राप्त किये गये प्रपत्र

कोई व्यक्ति कपट से प्रपत्र प्राप्त करता है तो वह उसके किसी भी पक्षकार के विरुद्ध भुगतान प्राप्त करने के लिये नहीं कर सकता और न ही वह इसके वास्तविक स्वामी के विरुद्ध इसे अपने पास रख सकता है। "कपट" शब्द स अधिनियम में परिभाषा नहीं दी गई है। लेकिन इसकी परिभाषा अनुबंध अधिनियम की धारा 17 में की गई है।

ट" सभी करारों और सौदों को निष्फल कर देता है। कानून स्वयं को इसके मुकाबले में लगभग सभी नियमों को , प्रत्येक सबूत को त्यागने और विरोध के प्रत्येक आधार जो प्रस्तुत किये जा सकते हैं, से छुटकार पाने की हद खड़ा हो जाता है ताकि इसे सफल होने से रोका जा सके। यह नियम हुण्डियों, प्रतिज्ञा पत्रों या अन्य प्रपत्रों द्वारा यत ऋणों पर भी लागू होता है, यदि तथ्य यह दर्शाते हैं कि ऋणी द्वारा ऋणदाता से मिथ्या वर्णन srepresentation) करके ऋण लेने का अनुबंध किया है।

कोई व्यक्ति असत्य कथन द्वारा हुण्डी पर अग्रिम राशि यह जानते हुए प्राप्त करता है कि ये कथन असत्य हैं और वह भी जानता है कि बिना इनके उसे पैसा प्राप्त नहीं हो सकता, तो ऋणदाता हुण्डी द्वारा साक्ष्यित अनुबंध को करने और हुण्डी की नियत तिथि से पहले ही फौरन अग्रिम राशि के लिए मुकदमा चलाने का हकदार होता है। प्रकार, उस व्यक्ति को, जिसे विनिमय पत्र या प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये कपटपूर्वक प्रेरित किया गया से ही उसे कपट का पता लगता है और उसके अन्तर्गत कोई लाभ प्राप्त करने से पहले इसे रद्द का हक है। वह प्रपत्र को रद्द करता है, यह उसके विरुद्ध, यथाविधि धारक या ऐसे धारक से स्वामित्व प्राप्त करने वाले । को छोड़कर, किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।

पूर्ण मिथ्या वर्णन अनुबंध को रद्द करने का एक उचित कारण होता है और विनिमय साध्य प्रपत्र पर वाद में एक प्रतिवाद होता है और कपट करने वाला व्यक्ति वसूली का हकदार नहीं होता है। यद्यपि कपट प्रतिवाद, यथाविधि

धारक या ऐसे धारक से स्वामित्व प्राप्त करने वाले धारक के विरुद्ध स्थापित नहीं किया जा सकता, फिर भी, यदि यह सिद्ध किया जा सके कि व्यक्ति की ओर से लापरवाही के बिना उसे प्रपत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये प्रेरित किया गया था तो वह यथाविधि धारक के प्रति भी उत्तरदायी नहीं होगा। यदि एक व्यक्ति जो लिख-पढ़ नहीं सकता और उसके पास एक लिखित अनुबंध है (जैसे विनिमय पत्र), जिसे उसे मिथ्या रूप से पढ़कर सुनाया गया हो और लिखित अनुबंध जो मिथ्या पढ़ा गया, उससे भिन्न है, तो उस प्रपत्र पर किये गये हस्ताक्षर में कोई बल नहीं है क्योंकि उसका उस प्रपत्र पर हस्ताक्षर करने का कभी आशय नहीं था जिस पर उसके हस्ताक्षर थे।

22.7 जाली प्रपत्र और जाली पृष्ठांकन (Forged Instruments and Forged Indorsement)

जालसाजी एक कपटपूर्ण लेखन या दूसरे व्यक्ति के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला लेखन का परिवर्तन है। जिस पृष्ठांकन के अन्तर्गत यथाविधि धारक उस प्रपत्र पर दावा करता है, वह वास्तविक होना चाहिये। इस नियम का सर्वव्यापी प्रयोग होता है। एक जाली पृष्ठांकन को पृष्ठांकन ही नहीं माना जाता। यदि किसी विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र का परक्रामण जाली पृष्ठांकन के द्वारा होता है, तो वह व्यक्ति जो उस पृष्ठांकन के अन्तर्गत दावा कर रहा है, यथाविधि धारक के अधिकार का दावा नहीं कर सकता, भले ही वह सद्भावना में मूल्य के लिये क्रेता हो। स्वामित्व में दोष और स्वामित्व का न होना, इन दोनों में बहुत अंतर है, स्वामित्व न होने की स्थिति वह है जहां पृष्ठांकन जाली है। यह मानते हुए कि मूलतः विनिमय साध्य प्रपत्र के स्वामी का कुल मिलाकर जनता के प्रति यह सामान्य कर्तव्य बनता है कि वह लापरवाह न हो, यह लापरवाही प्रपत्र के अन्य पक्षकारों को दायित्व से मुक्त नहीं करेगी, जब तक कि वह उस जालसाजी के साथ निकट से संबंधित न हो जिसके कारण हानि हुई है। एक ऐसी हुण्डी का आदाता जो, वाहक को देय नहीं है, बिक्री के लिये एक दलाल को नियुक्त करता है, जो उसे हुण्डी को X के पक्ष में पृष्ठांकित करने के लिए प्रेरित करता है। दलाल ने इसके बाद उत्तरोत्तर X के और कुछ कल्पित व्यक्तियों के पृष्ठांकन की जालसाजी की और हुण्डी को Y को बेच दिया। बाद में Y ने राशि देनदार से प्राप्त कर ली। आदाता द्वारा दलाल और Y के विरुद्ध मुकद्मे में निर्णय दिया गया कि वादी दोनों के विरुद्ध बिक्री का हकदार है, कि Y यद्यपि मूल्य के लिये असली क्रेता है, पर वह यथाविधि धारक नहीं है और वह दायित्व से नहीं बच सकता।

बिबंद (Estoppel) : एक जाली हस्ताक्षर को पृष्ठीकरण द्वारा वैध नहीं बनाया जा सकता, लेकिन एक व्यक्ति को उसके व्यवहार द्वारा, यह कहने से रोका जा सकता है कि उसके हस्ताक्षर या किसी अन्य व्यक्ति के हस्ताक्षर एक जालसाज़ी है।

बोध प्रश्न ग

1 A के द्वारा B को देय राशि के लिये A एक प्रतिज्ञा पत्र लिखता है। प्रतिज्ञा पत्र B को सुपुर्द नहीं किया गया, लेकिन खो जाता है और A की मृत्यु के बाद मिला प्रतिज्ञा पत्र B को सुपुर्द कर दिया गया। प्रतिज्ञा पत्र पर कौन दायी है?

....

....

2 एक पृष्ठांकक ने एक प्रपत्र पर अपने व्यक्तिगत दायित्व को अपवर्जित कर दिया। क्या वह प्रपत्र पर दायी है?

....

....

3 A ने एक असत्य वर्णन करके एक प्रतिज्ञा पत्र पर पैसा प्राप्त किया, यह जानते हुए कि कथन असत्य है। प्रतिज्ञा पत्र इसके लिखे जाने के 3 महीने बाद देय है। अदाकर्ता को यदि जालसाजी का पता चले तो वह क्या कार्यवाही कर सकता है?

....

....

22.8 सारांश

विनिमय साध्य प्रपत्र का स्वामित्व दो तरह से हस्तांतरित किया जा सकता है : 1) परक्रामण द्वारा और 2) समनुदेशन (अभिहस्तांकन) द्वारा। परक्रामण से आशय प्रपत्र का एक व्यक्ति से दूसरे को ऐसे हस्तांतरण से है जिससे कि वह व्यक्ति उस प्रपत्र का धारक बन जाए। अभिहस्तांकन से तात्पर्य है, संपत्ति अंतरण अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत

एक लिखित और रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज़ द्वारा एक प्रपत्र कें स्वामित्व का हस्तांतरण। प्रपत्र के परक्रामण की दो विधियां हैं। वाहक को देय प्रपत्रों का हस्तांतरण सुपुर्दगी मात्र से किया जा सकता है, जब कि किसी व्यक्ति के आदेशानुसार देय प्रपत्र पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरणीय है। पृष्ठांकन कई प्रकार के होते हैं : (1) कोरा पृष्ठांकन, (2) पूर्ण पृष्ठांकन, (3) प्रतिबन्धात्मक पृष्ठांकन, (4) आंशिक पृष्ठांकन और (5) सशर्त पृष्ठांकन.।

कुछ स्थितियों में, पृष्ठांकक, एक प्रपत्र का परक्रामण करने के बाद, उसकी परिपक्वता से पहले फिर उसका धारक बन सकता है। ऐसी स्थितियों में यह कहा जाता है कि प्रपत्र का वापस परक्रामण धारक को किया गया है। यदि प्रपत्र का वापस परक्रामण एक पहले के पक्षकार को किया जाता है तो वह प्रपत्र का भुगतान उस मध्यवर्ती पक्षकार के विरुद्ध परवर्तित नहीं कर सकता जिसे वह पहले दायी था लेकिन ऐसे मध्यवर्ती पक्षकार के विरुद्ध इसे परवर्तित कर सकता है जिसके प्रति वह उत्तरदायी नहीं था।

लेखक, स्वीकर्ता और पृष्ठांकक जो प्रपत्र में शामिल विभिन्न पक्षकार हैं, इनके दायित्व का वर्णन अधिनियम में किया गया है। दायित्व की प्रकृति (मुख्य ऋणी के रूप में या जमानती के रूप में) और जिन शर्तों के अधीन यह उत्पन्न होती है (सुपुर्दगी पर, स्वीकृति पर, पर्याप्त जमा राशि होने पर इत्यादि), इसका विस्तार से विवेचन किया गया है। चुराये गये प्रपत्रों, जाली प्रपत्रों और कपट से प्राप्त किये गये प्रपत्रों की स्थितियां प्रपत्र की कानूनी वैधता का मूलभूत प्रश्न उत्पन्न करती हैं। एक प्रपत्र के खो जाने की स्थिति में सम्बद्ध पक्षकारों को नोटिस, दुरुपयोग के विरुद्ध सुरक्षा में सहायक होती है।

22.9 शब्दावली

समनुदेशन (अभिहस्तांकन) : एक पृथक् विलेख (deed) लिखकर स्वामित्व व अन्य अधिकारों का हस्तांतरण।

वापस परक्रामण : परक्रामण की प्रक्रिया जिसमें एक पृष्ठांकक एक या अधिक पृष्ठांकन हो जाने के बाद, फिर पृष्ठांकिती बन जाता है।

जालसाज़ी : कपटपूर्वक लेखन या दूसरे व्यक्ति के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला लेखन या परिवर्तन।

22.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

क 1 आवश्यक नहीं है क्योंकि पृष्ठांकन संबंधी कानून इसकी अपेक्षा नहीं करता।
2 हां, यह वाहक को देय बन जाता है।
3 यह एक वैध पृष्ठांकन है।
4 यह पृष्ठांकक के व्यक्तिगत दायित्व को टालता है।

ख 1 A, B, X और Y, Z के प्रति दायी हैं।
2 बाद के सभी धारकों को।
3 लेखक या आदेशक।
4 केवल A पर वाद किया जा सकता है।

ग 1 कोई भी पक्ष उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि लिखने के बाद प्रतिज्ञा पत्र सुपुर्द नहीं किया गया।
2 वह पूर्ववर्ती पक्षकारों के प्रति दायी है।
3 परिपक्वता से पहले भी मुकदमा तुरन्त दायर किया जा सकता है।

22.11 स्वपरख प्रश्न

परक्रामण और अभिहस्तांकन (समनुदेशन) के अन्तर और समानताओं की जांच कीजिये।

एक साधारण सुपुर्दगी द्वारा किये गये वैध परक्रामण के आवश्यक तत्त्व स्पष्ट कीजिये।

पृष्ठांकन और सुपुर्दगी द्वारा किये गये वैध पृष्ठांकन के आवश्यक तत्त्व स्पष्ट कीजिये।

विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र और चैक के लेखक के दायित्वों की प्रकृति का विवेचन कीजिये।

चैक के देनदार के दायित्व की प्रकृति का विवेचन कीजिये।

प्रपत्रों के विभिन्न पक्षकारों के दायित्वों को स्पष्ट कीजिये।

7 विभिन्न पक्षकारों के दायित्वों का विवेचन कीजिये :
क) जब एक प्रपत्र चुरा लिया गया हो, और ख) जब एक प्रपत्र जाली हो।

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

इकाई 23 प्रस्तुतीकरण और मुक्ति

इकाई की रूपरेखा

23.0 उद्देश्य
23.1 प्रस्तावना
23.2 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण
 23.2.1 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम
 23.2.2 स्वीकृति के प्रकार
 23.2.3 स्वीकृति के लिए प्रस्तुत न करने के परिणाम
 23.2.4 आदरार्थ स्वीकर्ता
23.3 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण
 23.3.1 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम
 23.3.2 प्रस्तुतीकरण कब अनावश्यक है?
 23.3.3 आदरार्थ भुगतान
23.4 अस्वीकृति द्वारा तथा गैर-अदायगी द्वारा अनादरण
 23.4.1 अस्वीकृति द्वारा अनादरण
 23.4.2 गैर-अदायगी द्वारा अनादरण
 23.4.3 अनादरण की सूचना संबंधी नियम
 23.4.4 नोटिंग और प्रमाणन
23.5 दायित्व से मुक्ति
23.6 महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का प्रभाव
23.7 सारांश
23.8 शब्दावली
23.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
23.10 स्वपरख प्रश्न

23.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- स्वीकृति के लिए विनिमय पत्र प्रस्तुत करने और अदायगी के लिए प्रस्तुत करने की विभिन्न विधियाँ स्पष्ट कर सकें
- स्वीकृति के प्रकार बता सकें
- यह स्पष्ट कर सकें कि अस्वीकृति द्वारा अनादरण के साथ-साथ अदायगी न करने से अनादरण के क्या कारण हो सकते हैं
- अनादरण के बाद उन कार्यवाहियों का वर्णन कर सकें, जिन्हें निकराई और सकराई कहते हैं
- यह वर्णन कर सकें कि एक प्रपत्र में दायित्व से मुक्ति कैसे मिलती है
- प्रपत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के परिणाम बता सकें।

23.1 प्रस्तावना

आप तीनों प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्रों की प्रकृति और प्रपत्र के पराक्रामण संबंधी नियमों के बारे में विस्तार से पहले ही अध्ययन कर चुके हैं। अधिनियम को पूरी तरह समझने के लिए आपको दो और पहलुओं का अध्ययन करना है : 1) स्वीकृति के लिए और इसके अलावा अदायगी के लिए प्रस्तुतीकरण के बारे में नियम, और 2) प्रपत्र से उत्पन्न होने वाले दायित्व से सामान्यतया कोई पक्ष कैसे मुक्त होता है। इस इकाई में आप इन दो पहलुओं का विस्तार से अध्ययन करेंगे। स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण और अदायगी के लिए प्रस्तुतीकरण कैसे तथा कब किया जाए, अस्वीकृति द्वारा अनादरण और गैर अदायगी द्वारा अनादरण क्या है, अनादरण के बाद निकराई और सिकराई क्या है, प्रपत्र में दायित्व से मुक्ति कैसे मिलती है और प्रपत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के परिणाम, इन सबके बारे में आप पढ़ेंगे।

23.2 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण (Presentment for Acceptance)

प्रस्तुतीकरण का अर्थ है विनिमय साध्य प्रपत्र को आदेशिती को दिखलाना। प्रस्तुतीकरण निम्नलिखित तीन उद्देश्यों में से किसी के लिए भी किया जा सकता है : (1) स्वीकृति के लिए, (2) दिखलाने के लिए, और (3) अदायगी के लिए। अब हम इस भाग में स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण पर विचार करेंगे।

तीनों विनिमय साध्य प्रपत्रों (विनिमय पत्र, प्रतिज्ञा पत्र और चैक) में से केवल विनिमय पत्र को ही स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। सभी स्थितियों में यह आवश्यक नहीं है कि विनिमय पत्र को अदायगी के लिए प्रस्तुत करने से पहले स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाए। विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना केवल दो स्थितियों में आवश्यक होता है : (1) जहाँ विनिमय पत्र दिखलाए जाने के पश्चात् देय है (प्रपत्र की परिपक्वता पर भुगतान के लिए जिम्मेवारी सुनिश्चित करने के लिए, और (2) ऐसे विनिमय पत्र जिनमें स्पष्ट रूप से यह शर्त होती है कि अदायगी के लिए प्रस्तुत करने से पहले इसे स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाए। अन्य परिस्थितियों में स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आदाता की इच्छा पर निर्भर करता है, यदि वह चाहे तो आदेशिती के समक्ष विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत कर सकता है। इस प्रकार जब विनिमय पत्र अंकित तिथि से निश्चित अवधि की समाप्ति के बाद देय है या किसी निश्चित घटना के घटित होने पर देय है, तब यह धारक की इच्छा पर है कि वह विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करे या न करे, यद्यपि अधिकांश स्थितियों में विनिमय पत्र प्रस्तुत किया जाता है। यदि विनिमय पत्र गैर-अदायगी द्वारा अनादरित होता है तो इसे प्रस्तुत करने में लापरवाही के कारण धारक के प्रति पक्षकारों के दायित्वों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। विधिक औपचारिकता के लिए यह भी आवश्यक नहीं है कि जिस व्यक्ति को विनिमय पत्र का भुगतान करना है, उसने ही इसे स्वीकार किया होगा। स्वीकृति से पहले भी इसका परक्रामण किया जा सकता है और ऐसी स्थितियों में धारक, यथाविधि धारक के रूप में इस पर वाद चला सकता है।

उन स्थितियों में जहाँ प्रस्तुत करना आवश्यक है, प्रस्तुतीकरण का सबूत न होने पर कोई दावा सफल नहीं हो सकता। यह पक्षकारों की इच्छा पर है कि यदि वे चाहें तो अनुबंध द्वारा स्वयं को विनिमय पत्र प्रस्तुत करने के बंधन से मुक्त कर लें। वे विनिमय पत्र में यह प्रावधान कर सकते हैं कि स्वीकृति के बिना भुगतान किया जाएगा। मांग पर देय विनिमय पत्रों या निश्चित तिथि पर देय विनिमय पत्रों के बारे में यह बार-बार निर्णय दिया गया है कि प्रस्तुतीकरण अनिवार्य नहीं है बल्कि केवल ऐच्छिक है। तथापि, विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना वांछनीय है ताकि इसकी स्वीकृति पर इसके धारक को स्वीकर्ता की अतिरिक्त प्रतिभूति प्राप्त हो जाए। यदि आदेशिती विनिमय पत्र स्वीकार करने से इंकार करता है तो धारक अनादरण की सूचना दे सकता है और विनिमय पत्र की परिपक्वता की तिथि की प्रतीक्षा किये बिना तुरंत ही आदेशक पर वाद चला सकता है।

23.2.1 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम

प्रस्तुतीकरण किसके द्वारा किया जाए : धारा 61 बताती है कि प्रस्तुतीकरण उस व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए जो स्वीकृति की मांग करने का अधिकारी है। इसका अर्थ है कि विनिमय पत्र धारक द्वारा या उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया जाना चाहिए। दिखलाए जाने के बाद देय विनिमय पत्र की स्थिति में, स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण और अदायगी के लिए प्रस्तुतीकरण, दोनों मिलाकर एक कर दिये जाते हैं और इसलिए धारक इसे स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने का हकदार है। यदि विनिमय पत्र किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत किया जाता है जिसे स्वीकृति मांगने का अधिकार नहीं है, लेकिन प्रपत्र आदेशिती द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है, तो ऐसी स्वीकृति उस व्यक्ति के हित के लिए दी गयी मानी जाएगी जो विनिमय पत्र का वास्तव में हकदार है। धारक स्वयं या अपने अधिकृत एजेंट के माध्यम से स्वीकृति के लिए प्रस्तुत कर सकता है।

प्रस्तुतीकरण का समय : दिखलाए जाने के पश्चात् देय विनिमय पत्र की स्थिति में यदि प्रस्तुतीकरण के लिए किसी विशेष समय का उल्लेख नहीं किया गया है, तो प्रपत्र लिखे जाने के बाद उचित समय के भीतर स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यदि विनिमय पत्र में ही प्रस्तुतीकरण के लिए विशेष अवधि का उल्लेख है तो यह उस अवधि के भीतर प्रस्तुत किया जाना चाहिए। ऐसे विनिमय पत्र की स्थिति में जब स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण ऐच्छिक है, यदि धारक इसे स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना चाहता है तो वह भुगतान से पहले कभी भी प्रस्तुत कर सकता है।

प्रस्तुत न करने के परिणाम : ऐसी स्थिति में जब स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक होने पर भी इसे स्वीकृति के लिए प्रस्तुत नहीं किया जाता तो विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र के सभी पक्षकार, धारक के प्रति दायित्व से मुक्त हो जाते हैं और प्रतिफल के बारे में भी कोई वाद नहीं चलाया जा सकता। जब विनिमय पत्र के पृष्ठांकितियों द्वारा पृष्ठांकक और आदेशक पर मुकदमा दायर किया जाता है और स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण प्रमाणित नहीं किया जाता, तो वादी का मुकदमा खारिज करने योग्य होता है।

दिखलाए जाने पर देय विनिमय प्रपत्र की स्थिति में विधि अनिवार्य रूप से यह अपेक्षा नहीं करती कि इसे धारक द्वारा आदेशिती को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाए। यदि धारक प्रपत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने का निर्णय नहीं लेता, बल्कि इसे केवल भुगतान के लिए प्रस्तुत करता है और आदेशिती चूक करता है, तो अधिनियम की धारा 30 के अंतर्गत, आदेशक को दायी बनाने के लिए उसे अनादरण की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए।

स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण कब माफ होता है : निम्नलिखित परिस्थितियों में स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण माफ कर दिया जाता है और विनिमय पत्र को अस्वीकृति के कारण अनादृत मान लिया जाता है।

1 जब आदेशिती कल्पित व्यक्ति है या अनुबंध करने के अयोग्य है।

2 जब उचित तलाश करने के बाद भी आदेशिती न मिल सके।

3 जब यद्यपि प्रस्तुतीकरण अनियमित है, लेकिन स्वीकृति किसी अन्य कारण से नहीं दी गई।

दे विनिमय पत्र धारक को परिपक्वता से इतने कम समय पहले हस्तांतरित किया जाता है कि प्रस्तुतीकरण असंभव तो प्रस्तुतीकरण केवल उस पक्षकार के दायित्व के संबंध में माफ कर दिया जाता है जो ऐसा हस्तांतरण कर रहा यदि आदेशक आदेशिती से यह प्रार्थना करे कि विनिमय पत्र के प्रस्तुत किये जाने पर वह उसे स्वीकार न करे, भी धारक का विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने का दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। इसी प्रकार, यदि देशिती दिवालिया भी हो गया हो तो भी धारक स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने के लिए आबद्ध है। परंतु यदि आदेशिती नेमय पत्र प्रस्तुत किये जाने पर उसे स्वीकार करने से एक बार इंकार कर देता है तो वह धारक पर यह भार नहीं ल सकता कि वह विनिमय पत्र को फिर से प्रस्तुत करे, चाहे उसने यह वायदा भी कर लिया हो कि वह दोबारा तुत करने पर उसे स्वीकार कर लेगा।

तुतीकरण का स्थान : स्वीकृति के लिए आदेशिती को प्रस्तुतीकरण किसी भी स्थान पर किया जा सकता है। यदि त्र में उसकी स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण का कोई स्थान निश्चित रूप से उल्लेखित है तो उसे उसी स्थान पर प्रस्तुत या जाना चाहिए। यदि विनिमय पत्र में प्रस्तुत करने के लिए किसी स्थान का उल्लेख नहीं है, तो इसे आदेशिती के मान्य निवास स्थान या व्यापार के स्थान पर प्रस्तुत करना चाहिए। दिखलाए जाने के निश्चित अवधि के पश्चात् देय ज्ञा पत्र को उसके लेखक के समक्ष दर्शन के लिए अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए।

तुतीकरण का प्रमाण : प्रस्तुतीकरण साबित करने का दायित्व वादी पर है। जहां प्रस्तुतीकरण आवश्यक है, किसी कार को प्रपत्र पर अपना दावा वसूल करने का अधिकार देने के लिए प्रस्तुतीकरण निश्चित रूप से प्रमाणित करना हिए। जब करार या प्रथा से ऐसा करना प्राधिकृत है वहां रजिस्ट्रीकृत पत्र से डाकघर के माध्यम द्वारा प्रस्तुतीकरण प्त है (धारा 61)।

ाए जाने के एक निश्चित अवधि के बाद देय प्रतिज्ञा पत्र : जहाँ प्रतिज्ञा पत्र दिखलाए जाने के निश्चित धि के बाद देय लिखा गया है, तो प्रपत्र की परिपक्वता की तिथि निर्धारित करने के लिए इसका दिखाये जाने के प्रस्तुत करना आवश्यक है। विनिमय पत्र पर "दिखाये जाने के पश्चात" शब्दों का अर्थ है स्वीकृति के पश्चात् अस्वीकृति के लिए प्रमाणन के पश्चात् और इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे आदेशिती को प्राइवेट तौर से दिखा जाए। यदि कोई प्रतिज्ञा पत्र दिखाये जाने के पश्चात् देय लिखा जाता है तो इसका अर्थ है कि जब तक इसे क को दुबारा नहीं दिखाया जाता तब तक भुगतान नहीं मांगा जा सकता।

ार-विमर्श के लिए आदेशिती को दिए जाने वाला समय : धारक को विनिमय पत्र आदेशिती के समक्ष कृति के लिए प्रस्तुत करना चाहिए, यदि विनिमय पत्र के आदेशिती द्वारा ऐसी अपेक्षा की गई है। उसे यह सोचने के कि वह इसे स्वीकार करेगा या नहीं 48 घंटे का समय (सार्वजनिक अवकाश को छोड़कर) देना चाहिए (धारा 63)।

स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने में देर हुई है तो उसे माफ किया जा सकता है, यदि यह विलंब ऐसी परिस्थितियों रण हुआ है जिनपर प्रपत्र के धारक का बिल्कुल भी नियंत्रण नहीं था जैसे कि युद्ध की घोषणा, धारक द्वारा प्रपत्र षण में बाधा डालना या ऋणस्थगन की घोषणा, धारक की बिमारी या प्रपत्र का खो जाना।

.2.2 स्वीकृति के प्रकार

कृति दो प्रकार की हो सकती है :

- सामान्य स्वीकृति
- सशर्त स्वीकृति

ान्य स्वीकृति (General acceptance) : ऐसी स्वीकृति जो बिना शर्त के आदेशक के आदेशानुसार अनुमत है, सामान्य स्वीकृति कहलाती है। सामान्य स्वीकृति में आदेशिती विनिमय पत्र में उल्लेखित पूरी राशि के भुगतान का दायित्व बिना किसी शर्त या प्रतिबंध के स्वीकार करता है। आदेशिती विनिमय पत्र के प्रकट शब्दों के अनुसार स्वीकार करता है।

र्त स्वीकृति (Qualified acceptance) : सशर्त स्वीकृति, जिसमें शर्तें स्पष्ट हों, मौलिक विनिमय पत्र के प्रभाव रिवर्तित कर देती है। सशर्त स्वीकृति की स्थिति में, आदेशिती विनिमय पत्र को निश्चित शर्तों के अधीन स्वीकार है। वह समय, स्थान, घटना राशि आदेशितियों आदि के बारे में शर्तें स्वीकृति के साथ जोड़ सकता हैं। ये शर्तें ति को सशर्त बनाती हैं।

नय पत्र का धारक एक सशर्त स्वीकृति को लेने के लिए आबद्ध नहीं है। जब स्वीकृति सशर्त है तब वह अपनी पर विनिमय पत्र को अनादृत हुआ मान सकता है और अनादरण की उचित सूचना देने के बाद पूर्व पृष्ठांककों आदेशक पर वाद चला सकता है। तथापि, यदि वह सशर्त स्वीकृति को लेना पसंद करता है तो उसे सभी पूर्व ारों की सहमति प्राप्त करने की सावधानी बरतनी चाहिए क्योंकि यदि पूर्व पक्षकारों की सहमति के बिना सशर्त ति ग्रहण किया जाता है तो पूर्व पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं। विनिमय पत्र का आदेशक या पृष्ठांकक तरदायित्व लेता है कि आदेशिती के समक्ष प्रस्तुत करने पर वह विनिमय पत्र स्वीकार करेगा और उसकी परिपक्वता ुगतान करेगा, तथा चूक होने पर आदेशक या पृष्ठांकक, जैसी भी स्थिति हो, विनिमय पत्र की राशि चुकायेगा। ाक या पृष्ठांकक के ऐसे अनुबंध होने पर यदि धारक सशर्त स्वीकृति मंजूर करता है तो वह अनुबंध में परिवर्तन ता है और इसलिए उससे पूर्ववर्ती सभी पक्षकार दायित्व मुक्त कर दिये जाते हैं, जब तक कि वे ऐसी सशर्त ति के लिए अपनी सहमति न दें।

जहां तक आदेशिती और धारक के बीच का संबंध है, यदि आदेशिती ने आदेशक के साथ वह अनुबंध किया है कि वह प्रपत्र को स्वीकार करेगा; तो उसकी अस्वीकृति उसे हर्जाने के लिए दायी बना देगी और यह हर्जाने की राशि या तो विनिमय पत्र की राशि हो सकती है या उसका बाजार मूल्य भी हो सकती है।

स्वीकृति की शर्त स्पष्टतया अभिव्यक्त होनी चाहिए। किसी स्वीकृति को तब तक सशर्त नहीं माना जाएगा जब तक कि वह शर्त स्पष्टतम भाषा में व्यक्त न की गई हो। स्वीकृति को सशर्त बनाने के लिए (to qualify an acceptance) स्वीकर्ता को यह शर्त विनिमय पत्र के मुख पृष्ठ पर, समझ में आने वाली भाषा में स्पष्ट शब्दों में इस तरह लिखनी चाहिए कि विनिमय पत्र को लेने वाला प्रत्येक व्यक्ति यह समझने में चूक न कर सके कि यह एक अभिव्यक्त शर्त के अधीन स्वीकार किया गया था।

सशर्त स्वीकृति का वर्गीकरण : सशर्त स्वीकृति का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है :

1 विशेष घटना संबंधी शर्त
2 आंशिक स्वीकृति
3 स्थान संबंधी शर्त
4 समय संबंधी शर्त
5 किसी एक या अधिक आदेशितियों द्वारा स्वीकृति, लेकिन सबके द्वारा नहीं।

1 **विशेष घटना संबंधी शर्त (Conditional acceptance) :** एक सशर्त स्वीकृति वह होती है जिसमें स्वीकर्ता द्वारा अदायगी उसमें लिखी शर्त के पूरा होने पर निर्भर करती है। सशर्त स्वीकृति के उदाहरण निम्नलिखित हैं :

   i) जहाजी माल के लिए नकदी प्राप्त होने पर भुगतान के लिए स्वीकृत।

   ii) किसी को परेशित (consigned) माल के बिकने पर भुगतान के लिए स्वीकृति।

   iii) बिल्टी के त्यागने पर भुगतान के लिए स्वीकृत। इस मामले में यह निर्णय दिया गया कि यद्यपि स्वीकृति, सशर्त स्वीकृति है, स्वीकर्ता को उस दिन बिल्टी न देने से, जिस दिन विनिमय पत्र देय हुआ, वह दायित्व से मुक्त नहीं किया जा सकता।

   ऐसी सभी स्थितियों में धारक विनिमय पत्र को अनादरित समझने का हकदार है। यदि वह ऐसी स्वीकृति लेना स्वीकार करता है तो उसे स्वीकृति की प्रकृति की सूचना सभी पक्षकारों को देनी चाहिए। यदि शर्तें विनिमय पत्र के मुख-पृष्ठ पर नहीं लिखी है तो यह मूल्य के लिए एक निर्दोष पृष्ठांकिती को प्रभावित नहीं करेगी और यदि ऐसी स्वीकृति किसी अलग कागज पर ली गई है तो यह केवल तात्कालिक पक्षकारों को आबद्ध करेगी।

2 **आंशिक स्वीकृति (Partial acceptance) :** यदि जिस राशि के लिए विनिमय पत्र लिखा गया है, उस राशि के एक भाग को ही चुकाने के लिए स्वीकृति दी जाती है, तो इसे आंशिक स्वीकृति कहते हैं। उदाहरण के लिए एक विनिमय पत्र 1,270 रु. के लिए लिखा गया लेकिन यदि वह 1,000 रु. के लिए स्वीकृत हुआ, तो यह आंशिक स्वीकृति है। यदि धारक विनिमय पत्र पर देय राशि के केवल एक भाग की स्वीकृति लेता है तो यह उन पूर्व पक्षकारों को मुक्त कर देती है जो ऐसी स्वीकृति के लिए अपनी सहमति नहीं देते।

3 **स्थान संबंधी शर्त (Qualified as to place) :** स्थानीय स्वीकृति केवल एक विनिर्दिष्ट स्थान पर भुगतान करने की स्वीकृति है। "केवल" शब्द पर जोर दिया गया है क्योंकि एक खास स्थान पर भुगतान करने की स्वीकृति एक सामान्य स्वीकृति है, जब तक कि यह स्पष्टतया न बताया जाए कि विनिमय पत्र का भुगतान "केवल" वहीं करना है, कहीं और नहीं। इस प्रकार, इस रूप में स्वीकृति, जैसे "X & Co. के यहां भुगतान के लिए स्वीकृत" सामान्य स्वीकृति है, लेकिन यदि स्वीकृति इस रूप में हो जैसे "X & Co. के यहां भुगतान के लिए स्वीकृत, अन्यत्र कहीं भी नहीं" तो यह एक सशर्त स्वीकृति है।

4 **समय संबंधी शर्त (Qualified as to time) :** स्वीकृति को समय के बारे में सशर्त बनाया जा सकता है यदि आदेशिती (Drawee) स्वीकार करते समय यह कहता है कि देय राशि का भुगतान प्रपत्र में उल्लेखित समय पर नहीं किया जाएगा बल्कि किसी अन्य समय पर किया जाएगा, चाहे वह उल्लेखित समय से पहले हो या बाद में। निस्संदेह इसका अर्थ है अनुबंध को बदलना और इसलिए यदि उनकी सहमति नहीं है तो प्रपत्र के पूर्ववर्ती पक्षकार दायित्व मुक्त हो जाते हैं।

5 **किसी एक या अधिक आदेशितियों द्वारा स्वीकृति, लेकिन सब के द्वारा नहीं :** जब कोई बिल दो या अधिक आदेशितियों पर लिखा जाता है (जो साझेदार नहीं हैं) और यह उनमें से एक या कुछ के द्वारा स्वीकृत किया जाता है, उन सबके द्वारा नहीं तो इसे सशर्त स्वीकृति कहते हैं। यदि आदेशिती साझेदार नहीं है बल्कि अलग-अलग व्यक्ति हैं तो स्वीकृति सभी के द्वारा दी जानी चाहिए। यदि उनमें से कोई एक स्वीकार करने से मना करता है तो धारक को यह अधिकार है कि वह विनिमय पत्र को अनादरित हुआ मान ले। लेकिन साझेदारी की स्थिति में एक साझेदार द्वारा स्वीकृति सभी के द्वारा स्वीकृति मानी जाती है।

23.2.3 स्वीकृति के लिए प्रस्तुत न करने के परिणाम

जहां प्रस्तुतीकरण से अभिमुक्ति नहीं दी गई है वहां प्रपत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत न करने पर न केवल आदेशक

तथा सभी पृष्ठांकक धारक के प्रति अपने दायित्व से मुक्त हो जाते हैं बल्कि प्रतिफल के लिए भी कोई दावा नहीं किया जा सकता। जब विनिमय पत्र के पृष्ठांकितियों द्वारा आदेशक और पृष्ठांकक के विरुद्ध दावा दायर किया जाता है और स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण प्रमाणित नहीं होता तो वादी का दावा खारिज किया जा सकता है। दिखलाए जाने पर देय विनिमय पत्र की स्थिति में यह कानूनी रूप से अनिवार्य नहीं है कि उसे स्वीकृति के लिए धारक द्वारा आदेशिती के समक्ष प्रस्तुत किया जाए। यदि धारक प्रपत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने का फैसला नहीं करता बल्कि उसे केवल भुगतान के लिए प्रस्तुत करता है और आदेशिती भुगतान नहीं करता, तो आदेशक को दायी बनाने के लिए अधिनियम की धारा 30 के अंतर्गत उसे अनादरण की सूचना अवश्य दी जानी चाहिए।

23.2.4 आदरार्थ स्वीकर्ता (Acceptance for Honour)

जैसा कि आप जानते हैं विनिमय पत्र केवल आदेशिती द्वारा स्वीकार किया जा सकता है। लेकिन जब एक विनिमय पत्र को अस्वीकृति के कारण या श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए निकराई या प्रमाणन करा लिया गया है, तो कोई भी ऐसा व्यक्ति, जो पहले से ही उस विनिमय पत्र के लिए उत्तरदायी नहीं है, धारक की सहमति से, किसी पक्षकार के आदरार्थ विनिमय पत्र स्वीकार कर सकता है (धारा 108)। इसे आदरार्थ स्वीकृति कहते हैं और जो व्यक्ति इसे स्वीकार करता है उसे आदरार्थ स्वीकर्ता कहते हैं। कोई भी व्यक्ति जो विनिमय पत्र पर दायी नहीं है, आदरार्थ स्वीकार कर सकता है। आदेशिती भी, यद्यपि वह सामान्यतया विनिमय पत्र स्वीकार करने से मना करता है, उसके किसी पक्षकार के आदरार्थ इसे स्वीकार कर सकता है।

अधिनियम में यह प्रावधान है कि एक विनिमय पत्र की आदरार्थ स्वीकृति केवल धारक की सहमति से की जा सकती है। धारक को ऐसी स्वीकृति लेने या मना करने का विकल्प प्राप्त है और उसे उसकी इच्छा के विरुद्ध इसे लेने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। जैसे ही विनिमय पत्र अस्वीकृति के लिए अनादरित हो जाता है, धारक उन सभी पूर्व पक्षकारों के विरुद्ध कार्यवाही करने का हकदार हो जाता है, जो विनिमय पत्र पर उसके प्रति उत्तरदायी हैं। यदि धारक आदरार्थ स्वीकृति के लिए अपनी सहमति दे देता है तो वह अपने प्रति उत्तरदायी पक्षकारों के विरुद्ध कार्यवाही के अपने अधिकार का परित्याग करता है। जो व्यक्ति विनिमय पत्र को आदरार्थ स्वीकार करना चाहता है, उसे प्रपत्र के ऊपर लिख कर यह घोषणा करनी होती है कि वह विनिमय पत्र को आदेशक या किसी नामित व्यक्ति के आदरार्थ या सामान्यतः आदरार्थ, आपत्ति के अधीन स्वीकार कर रहा है (धारा 109)। ऐसी स्वीकृति का कानून के द्वारा विहित (prescribed) कोई खास प्ररूप (prescribed form) नहीं है। यदि उपर्युक्त शर्तें पूरी कर दी जाती हैं तो स्वीकृति वैध होती है। ऐसी स्वीकृति विनिमय पत्र या उसके किसी भाग में तिरछी लिखी जा सकती है। "Accepted supra protest" या "Accepted S.P." या "Accepted supra protest for the honour of H.B. for Rs. ..." लिखना पर्याप्त होता है।

आदरार्थ स्वीकर्ता के अधिकार और दायित्व : आदरार्थ स्वीकार करने वाले पक्षकार को उत्तरवर्ती पक्षकारों के प्रति उसके दायित्व और पूर्ववर्ती पक्षकारों के विरुद्ध उसके अधिकारों, दोनों के संबंध में, उस पक्षकार की स्थिति में माना जाता है जिसके आदरार्थ वह हस्तक्षेप करता है और इसके अतिरिक्त वह ऐसे पक्षकार से स्वयं भी रकम वसूल कर सकता है। आदरार्थ स्वीकृति देने वाला व्यक्ति प्रपत्र की रकम उस व्यक्ति के वसूल करने का अधिकारी होता है, जिसके आदरार्थ उसने स्वीकृति दी है, चाहे स्वीकृति उस व्यक्ति के आदेश या जानकारी के बिना दी गई हो जिसके आदरार्थ यह दी गयी है।

एक विनिमय पत्र की जब तक अस्वीकृति के कारण या श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए निकराई व सकराई न करा ली गई हो, उसे आदरार्थ स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रतिज्ञा पत्र और चैकों की स्थिति में आदरार्थ स्वीकृति का प्रश्न ही नहीं उठता।

बोध प्रश्न क

1 क्या सभी परिस्थितियों में स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण आवश्यक है?

....

....

....

2 विनिमय पत्र को कब स्वीकृत समझा जाता है?

....

....

3 सशर्त स्वीकृति क्या है?

....

....

....

4 किस प्रकार के विनिमय पत्रों की स्वीकृति आवश्यक नहीं है?

....

....

....

5 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण कब माफ किया जाता है?

....

....

....

6 स्वीकृति के लिए प्रस्तुत न करने का क्या प्रभाव होता है?

....

....

....

7 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत।

i) विनिमय पत्र का आदेशिती बिल पर अपने हस्ताक्षर करके उसे स्वीकार कर सकता है।

ii) यदि स्वीकृति न दिए जाने के कारण कोई बिल अनादृत हो गया है, तब भी भुगतान के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक है।

iii) मांग पर देय विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना अनावश्यक है।

iv) दर्शनोपरांत देय विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है।

v) दर्शनोपरांत निश्चित अवधि के बाद देय प्रतिज्ञा पत्र को लेखक के समक्ष अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए।

vi) जब विनिमय पत्र के आदेशिती को उचित रूप से तलाश किए जाने के बाद पता न लग सका हो तब स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण माफ कर दिया जाता है।

vii) आदेशिती को यह फैसला करने के लिए कि वह बिल को स्वीकार करे या नहीं, पूरे अड़तालीस घंटे का समय दिया जाना चाहिए।

23.3 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण (Presentment for Payment)

धारा 64 बताती है कि प्रपत्र भुगतान के लिए उचित ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। प्रस्तुतीकरण का उद्देश्य संबद्ध पक्षकार को भुगतान करने का अवसर देना है। इसके अतिरिक्त मांग पर देय प्रतिज्ञा पत्र और जो विनिर्दिष्ट स्थान पर देय नहीं है उन्हें छोड़कर, लेखक को उत्तरदायी बनाने के लिए उन्हें भुगतान के लिए अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए। जब तक इस प्रकार से प्रस्तुतीकरण नहीं किया जाता तब तक वाद चलाने का कोई अधिकार उत्पन्न नहीं होता।

धारा 64 का अपवाद अधिकथित करता है कि एक विनिर्दिष्ट स्थान पर और मांग पर देय प्रतिज्ञा पत्र की स्थिति में जब तक प्रस्तुतीकरण अन्यथा माफ नहीं किया गया है, तो इसके लेखक को प्रभारित (Charge) करने के लिए प्रतिज्ञा पत्र को उसी स्थान पर प्रस्तुत करना चाहिए लेकिन, यदि प्रतिज्ञा पत्र विनिर्दिष्ट स्थान पर देय नहीं है तो इसका प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं है। धारा 64 के अपवाद से यह स्पष्ट कर दिया गया है कि यदि मांग पर देय प्रतिज्ञा पत्र विनिर्दिष्ट स्थान पर देय है तो उसका प्रस्तुतीकरण आवश्यक है। भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण से धारक विनिमय पत्र के असली होने का तथ्य नहीं कहता। ऐसा आदेशक या पृष्ठांकक जिसे विनिमय पत्र पर उसके दायित्व से मुक्त कर दिया गया है उसे विनिमय पत्र के प्रतिफल के दायित्व से भी मुक्त कर दिया जाता है।

अधिनियम के अंतर्गत प्रस्तुतीकरण संबंधी प्रावधान हुण्डियों और देशी भाषा में लिखे गये अन्य प्रपत्रों पर भी लागू होते हैं लेकिन ये ऐसी स्थानीय प्रथाओं के अधीन हैं जिनका विद्यमान होना साबित किया जा सकता हो।

23.3.1 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम

भुगतान के लिए वैध प्रस्तुतीकरण बनाने के लिए, दस्तावेज वास्तव में प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि इसे प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति भुगतान प्राप्त होने पर इसे तुरंत सुपुर्द कर सके। संक्षेप में, भुगतान के लिए उचित प्रस्तुतीकरण का अर्थ है : (i) उचित दिन पर (ii) उचित समय पर (iii) उचित व्यक्ति द्वारा (iv) उचित स्थान पर (v) उचित व्यक्ति को और (vi) उचित ढंग से प्रस्तुतीकरण। आइए अब इन नियमों का विस्तार से अध्ययन करते हैं।

प्रस्तुतीकरण किसको : धारा 64 और धारा 75 को साथ-साथ पढ़ना चाहिए। प्रतीज्ञा पत्र, विनिमय पत्र तथा चैक के भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण क्रमशः उसके लेखक, स्वीकर्ता और आदेशिती को किया जाना चाहिए (धारा 64)।

ादेशिती, लेखक या स्वीकर्ता के प्राधिकृत एजेंट को भी भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है। यदि आदेशिती, ाखक या स्वीकर्ता की मृत्यु हो गई हो तो उसके विधिक प्रतिनिधि को अथवा उनके दिवालिया घोषित होने पर उसके मनुदेशिती (Aassignee) के समक्ष भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है (धारा 75)।

ब प्रतीज्ञा पत्र का भुगतान ऋणदाता के स्थान पर किया जाना है तो प्रतिज्ञा पत्र का प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं है किन जब भुगतान ऋणी के स्थान पर किया जाना है तो विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र का प्रस्तुतीकरण आवश्यक है।

स्तुत न करने का प्रभाव : विनिमय पत्रों और चैकों की स्थिति में आदेशक और पृष्ठांकक और प्रतिज्ञा पत्र की थति में केवल पृष्ठांकक, प्रस्तुतीकरण की चूक पर दायित्व मुक्त कर दिये जाते हैं। इसका कारण यह है कि उनका यित्व सशर्त है और यदि वह शर्त पूरी नहीं की जाती तो उनका दायित्व समाप्त हो जाता है। यह विधि का एक र्वमान्य नियम है कि प्रधान की मुक्ति जमानती की मुक्ति है; जमानती का अनुबंध प्रधान के करार का केवल सहायक इसलिए इसके साथ ही समाप्त हो जाता है।

स्तुतीकरण का अधित्याग (Waiver of presentment) : प्रस्तुतीकरण को अभिव्यक्त या निहितार्थ रूप से xpressly or impliedly) त्यागा जा सकता है। विनिमय पत्र में लिखी गई शर्त द्वारा एक अभिव्यक्त अधित्याग सकता है। पक्षकार के आचरण से अधित्याग निहित हो सकता है, जैसे कि जब कोई व्यक्ति जिसके पास प्रस्तुतीकरण किये जाने का नोटिस हो या प्रस्तुतीकरण में अनुचित देरी हो और वह विनिमय पत्र का भुगतान करने का वचन देता या लेखागत आंशिक भुगतान करता है या करने का वचन देता है।

भन्य पक्षकारों" यानि धारक के अतिरिक्त अन्य पक्षकारों को प्रभावित करने के लिए भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण वश्यक है। इस अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार करनी चाहिए ताकि इसके क्षेत्र से चैक का लेखक भी बाहर हो ए। "लेखक" और "आदेशक" में अंतर है। "लेखक" शब्द का प्रयोग तीनों प्रकार के विनिमय साध्य प्रपत्रों ातिज्ञा पत्र, विनिमय पत्र और चैक) के लिए किया जाता है। जब कि आदेशक शब्द का प्रयोग केवल विनिमय पत्र र चैक के संबंध में किया जाता है।

। किसी प्रतिज्ञा पत्र को स्पष्टतः मांग पर देय होना बनाया गया है लेकिन प्रपत्र में भुगतान का कोई स्थान विनिर्दिष्ट ों है तो प्रतिज्ञा पत्र में यह वाक्यांश, "मांग पर" एक तकनीकी अभिव्यक्ति मात्र है जिसका अर्थ है कि भुगतान काल या तुरंत कर देना चाहिए। इससे आशय ऐसी शर्त से नहीं है कि कार्यवाही शुरू करने से पहले मांग की जानी हिए। कार्यवाही करना स्वयं ही एक पर्याप्त मांग है।

ार्दिष्ट स्थान : यदि प्रस्तुतीकरण का स्थान विनिर्दिष्ट है तो ऐसे स्थान पर प्रस्तुतीकरण करने पर भुगतान करने का ाित्व उत्पन्न होता है। दूसरे शब्दों में भुगतान करने का स्थान एक पते के समान होना चाहिए। लेखक को प्रेषिती पता उचित परिश्रम से लग जाना चाहिए। यदि विनिमय साध्य प्रपत्र का लेखक या आदेशिती या स्वीकर्ता का पार का कोई ज्ञात स्थान या निश्चित निवास स्थान नहीं है और स्वीकृति या भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण के लिए त्र में कोई स्थान विनिर्दिष्ट नहीं है तो ऐसा प्रस्तुतीकरण उसे वैयक्तिक रूप से, जहां भी यह मिले, वहीं किया जा ता है (धारा 71)।

तुतीकरण का समय : भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण कारोबार के सामान्य समय के दौरान किया जाना चाहिए और ं की स्थिति में बैंक के कारोबार के दौरान किया जाना चाहिए (धारा 65)।

ा पर देय से अन्यथा देय प्रपत्रों का प्रस्तुतीकरण : धारा 66 ऐसे दो प्रकार के प्रपत्रों के संबंध में है जो मांग देय नहीं है :

जो उस पर अंकित तिथि के बाद एक विनिर्दिष्ट अवधि पर देय है और

जो दिखलाए जाने के बार एक विनिर्दिष्ट अवधि पर देय है। इस प्रकार के प्रपत्रों को परिपक्वता की तिथि को भुगतान के लिए प्रस्तुत करना चाहिए। लेकिन ऊपर बताए गए प्रपत्रों के अतिरिक्त ऐसे प्रपत्र हो सकते हैं जो मांग पर देय नहीं हैं (उदाहरण के लिए विनिमय पत्र जो एक निर्दिष्ट घटना के घटित होने के बाद एक निश्चित अवधि के पूरा होने पर देय है)। ऐसी स्थिति में प्रस्तुतीकरण मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

ी अन्य व्यक्ति को भारित (charge) करने के लिए चैक का प्रस्तुतीकरण : आदेशक को छोड़कर किसी । व्यक्ति को भारित करने के लिए चैक ऐसे व्यक्ति द्वारा, उसकी सुपुर्दगी के बाद, एक उचित समय के भीतर प्रस्तुत । जाना चाहिए (धारा 73)।

.3.2 प्रस्तुतीकरण कब अनावश्यक है ?

ान्य नियम यह है कि विनिमय साध्य प्रपत्र धारक द्वारा या उसकी ओर से प्रपत्र के अन्य पक्षकारों को दायित्व से त करने के लिए, लेखक, स्वीकर्ता या आदेशिती को भुगतान के लिए प्रस्तुत किया जाना चाहिए। धारा 76 में इस म के अपवादों का वर्णन किया गया है। यह उन परिस्थितियों को बताती है जिनमें भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण ा एकदम अनावश्यक है। लेकिन ऐसी परिस्थितियाँ भी हैं जो, प्रस्तुतीकरण करने में देरी के बिना, प्रस्तुतीकरण करने ो को क्षमा कर देंगी। भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण करने में देरी यदि ऐसी परिस्थितियों के कारण हुई हो जो धारक ायंत्रण के बाहर थी और यह देरी उसकी लापरवाही, चूक या दुराचरण से नहीं हुई हो, तो ऐसी देरी को क्षमा कर

दिया जाता है। उदाहरण के लिए जहां विनिमय पत्र देय है वहां युद्ध होने से धारक इस परिपक्वता पर प्रस्तुत नहीं कर सकता था, अतः प्रस्तुतीकरण में देरी को क्षमायोग्य माना गया। लेकिन जब देरी का कारण समाप्त हो जाता है तो उचित तत्परता के साथ प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिए।.

धारा 76 में निम्नलिखित अपवादिक स्थितियाँ बताई गई हैं जब भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण अनावश्यक होता है और प्रपत्र को अनादरित हुआ मान लिया जाता है। ये धारा 76 के खण्ड (क) से (घ) में सूचीबद्ध की गयी हैं।

क) **जान बूझ कर बाधा डालना :** जब प्रपत्र का लेखक, आदेशिती या स्वीकर्ता जानबूझ कर प्रस्तुतीकरण में बाधा डालता है अथवा वह अपने व्यापार के स्थान को कारोबारी दिन पर कारोबार समय में बंद रखता है अथवा जब प्रपत्र एक विनिर्दिष्ट स्थान पर देय लिखा गया है और वह वहां नहीं पहुंचता अथवा पर्याप्त खोज के बाद भी उसका पता नहीं चलता तो यह माना जाता है कि वह प्रपत्र के प्रस्तुतीकरण को जानबूझ कर रोक रहा है।

ख) **परित्याग (Waiver) :** जहां तक कि किसी ऐसे पक्षकार का संबंध है, जिसे उससे भारित किये जाने का इरादा है, यदि उसने प्रस्तुतीकरण न करने की दशा में भी भुगतान करने का वचन दिया है, तो प्रस्तुतीकरण अनावश्यक है।

ग) **परिपक्वता के बाद भुगतान :** जहां तक कि किसी भी पक्षकार का संबंध है, भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण की आवश्यकता नहीं है यदि परिपक्वता की तारीख के बाद वह, यह जानते हुए कि प्रपत्र प्रस्तुत नहीं किया गया है, वह प्रपत्र पर देय राशि का आंशिक भुगतान करता है। इस प्रकार के आंशिक भुगतान का या भुगतान करने के वचन का प्रमाण आवश्यक है। इसी प्रकार, उस पर देय राशि के भुगतान करने का वचन भी दिया जा सकता है।

घ) **आदेशक के प्रति :** यदि, प्रस्तुतीकरण के नहीं किये जाने से आदेशक को कोई क्षति नहीं होती तो आदेशक के प्रति प्रस्तुतीकरण आवश्यक नहीं है। जब आदेशक की अपनी कोई जमा राशि आदेशिती के पास नहीं है तो न तो अनादरण की नोटिस और न ही एक उचित समय के भीतर भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण करना आवश्यक है।

23.3.3 आदरार्थ भुगतान (Payment for Honour)

आदरार्थ स्वीकृति के अनुरूप, आदरार्थ भुगतान के बारे में विशिष्ट प्रावधान हैं। आदरार्थ स्वीकृति केवल विनिमय पत्रों के लिए ही प्रासंगिक है, प्रतिज्ञा पत्रों के लिए नहीं। यदि कोई व्यक्ति एक प्रतिज्ञा पत्र को आदरार्थ स्वीकार करता है तो वह ऐसा अपनी जोखिम पर करता है, क्योंकि वह उस पक्षकार के विरुद्ध, जिसके आदरार्थ उसने प्रतिज्ञा पत्र स्वीकार किया है, या प्रपत्र के किसी अन्य पक्षकार के विरुद्ध, कार्यवाही करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं कर सकता।

आदरार्थ भुगतान के उसी रूप में प्रवर्तन के लिए ये तीन शर्तें पूरा करना आवश्यक है : (i) विनिमय पत्र का भुगतान न किये जाने के लिए पहले से ही निकराई व सिकराई करा ली गयी हो, (ii) भुगतान करने वाले व्यक्ति या उसके एजेंट को नोटरी पब्लिक के सामने उस पक्षकार के नाम की घोषणा करनी चाहिए जिसके आदरार्थ वह भुगतान करता है, और (iii) ऐसी घोषणा नोटरी पब्लिक द्वारा अभिलेखित (recorded) होनी चाहिए।

किसी भी व्यक्ति द्वारा आदरार्थ भुगतान किया जा सकता है, चाहे वह विनिमय पत्र के पक्षकार के रूप में दायी हो या नहीं। इस प्रकार, आदेशक, आदेशिती या एक पृष्ठांकिती विनिमय पत्र पर दायी पक्षकार के आदरार्थ भुगतान कर सकता है। यहां तक कि एक अजनबी व्यक्ति भी आदरार्थ भुगतान कर सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि भुगतान उस पक्षकार की प्रार्थना पर किया जाए, जिसके आदरार्थ यह किया जाता है।

आदरार्थ भुगतान किये जाने से पहले प्रपत्र का भुगतान न करने के लिए प्रमाणन कराना आवश्यक है। ऐसे प्रमाणन को इस आधार पर पूर्ववर्ती शर्त बना दिया जाता है कि यदि ऐसे प्रमाणन से पहले भुगतान किया जाता है तो यह समझा जाएगा कि भुगतान स्वीकर्ता की ओर से किया गया है और इसलिए आदरार्थ भुगतान करने वाला आदेशक और पृष्ठांककों के विरुद्ध अपने अधिकार और दावे खो देगा।

आदरार्थ भुगतान करने वाला धारक के स्वामित्व की सामर्थ्य पर राशि वसूल करने का हकदार होता है। वह उस पक्षकार से जिसके आदरार्थ वह भुगतान करता है, इस प्रकार भुगतान की गयी सारी राशि ब्याज सहित और ऐसा भुगतान करने पर उचित रूप से किये गये खर्च भी वसूल कर सकता है।

ये प्रावधान एक विनिमय पत्र के "वक्त जरूरत आदेशिती" पर लागू नहीं होते।

23.4 अस्वीकृति द्वारा तथा गैर-अदायगी द्वारा अनादरण

23.4.1 अस्वीकृति द्वारा अनादरण (Dishonour by Non-acceptance)

एक विनिमय पत्र को अस्वीकृति द्वारा अनेक प्रकार से अनादृत किया जा सकता है, जैसा कि नीचे वर्णन किया गया है :

i) यदि एक विनिमय पत्र आदेशिती को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किया जाता है और वह स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किये जाने से 48 घंटे के भीतर इसे स्वीकार नहीं करता, तो विनिमय पत्र अनादृत हुआ माना जाता है। यदि दो या अधिक आदेशिती हों (और वे फर्म के साझेदार नहीं हैं) और विनिमय पत्र उनमें से किसी एक या सब के

द्वारा स्वीकार किया जाता है, तो धारक इसे अनादृत समझ सकता है। वह ऐसे विनिमय पत्र को स्वीकृत हुआ भी समझ सकता है, लेकिन ऐसी स्वीकृति एक सशर्त स्वीकृति है और इसलिए वह पूर्व पक्षकारों को इससे भारित नहीं कर सकता, जब तक कि वे ऐसी सशर्त स्वीकृति के लिए अपनी सहमति न दे दें। लेकिन यदि सभी आदेशिती किसी फर्म के साझेदार हैं तो किसी एक साझेदार के द्वारा दी गई स्वीकृति को फर्म के सभी साझेदारों द्वारा दी गयी स्वीकृति मानी जाती है।

i) यदि किसी विनिमय पत्र पर सशर्त स्वीकृति दी जाती है, तो धारक इसे अनादृत मान सकता है। धारक ऐसी सशर्त स्वीकृति को नियमानुसार भी मान सकता है, लेकिन यदि वह ऐसा करता है तो सभी पूर्व पक्षकार, यदि उन्होंने ऐसी स्वीकृति के लिए अपनी सहमति नहीं दी है, दायित्व मुक्त हो जाते हैं।

ii) यदि उचित तलाश के बाद भी आदेशिती को तलाश नहीं किया जा सकता तो विनिमय पत्र अस्वीकृति द्वारा अनादृत हुआ माना जाता है।

v) यदि आदेशिती ऐसा व्यक्ति है जो वैध अनुबंध करने के लिए अयोग्य है, तो भी इसे अस्वीकृति के लिए अनादृत माना जाता है। जब आदेशक विनिमय पत्र लिखता है तो वह निहित रूप से यह दायित्व लेता है कि आदेशिती अनुबंध करने के योग्य है। यदि धारक यह देखता है कि आदेशिती अनुबंध करने के अयोग्य है, तो उसे स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण करने के आवश्यकता नहीं है और वह विनिमय पत्र को अनादृत मान सकता है।

) यदि आदेशिती एक कल्पित व्यक्ति है तो भी विनिमय पत्र अस्वीकृति के लिए अनादृत समझा जाता है। ऐसी स्थिति में स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण संभव नहीं है क्योंकि प्रपत्र में बताए गए आदेशिती का कोई अस्तित्व ही नहीं है।

i) यदि आदेशिती की मृत्यु हो गयी है, या वह दिवालिया हो गया है, तब विनियम पत्र स्वीकृति के लिए अनादृत माना जाता है। ऐसी स्थिति में समनुदेशिती या मृत आदेशिती के विधिक प्रतिनिधि के समक्ष स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना धारक की इच्छा पर है।

23.4.2 गैर-अदायगी द्वारा अनादरण (Dishonour by Non-payment)

यदि प्रतिज्ञा पत्र का वचनदाता अथवा विनिमय पत्र का स्वीकर्ता अथवा चैक का आदेशिती, भुगतान की विधिवत् मांग किए जाने पर उसकी अदायगी नहीं करता तब वह गैर अदायगी द्वारा अनादृत माना जाता है (धारा 92)।

भुगतान न किये जाने पर अनादरण से संबंधित इस धारा के प्रावधान दर्शनोपरांत देय या मांग पर देय विनिमय पत्र पर लागू होते हैं। मांग पर देय विनिमय पत्र को यद्यपि कानून के द्वारा स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है, परन्तु ऐसे प्रपत्रों का भी अस्वीकृति द्वारा अनादरण हो सकता है।

यदि आदेशक और पृष्ठांककों को अनादरण की सूचना नहीं दी जाती है तो वह केवल विनिमय पत्र पर अपने दायित्व से ही मुक्त नहीं हो जाता बल्कि मूल प्रतिफल के संबंध में भी अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। किसी विपरीत अनुबंध के अभाव में जब प्रतिज्ञा पत्र के पृष्ठांकिती को अनादरण की कोई सूचना नहीं है तो वह उत्तरदायी नहीं होता है।

धारा 92 को धारा 76 के साथ पढ़ना चाहिए जिसमें उन परिस्थितियों का वर्णन किया गया है जिनमें विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र का धारक इसे भुगतान के लिए प्रस्तुत किये बिना अनादृत मान सकता है।

23.4.3 अनादरण की सूचना संबंधी नियम

धारा 93 इस प्रश्न से संबंधित है कि जब किसी प्रपत्र को अस्वीकृति या गैर-अदायगी के कारण अनादृत किया जाता है तो अनादरण की सूचना किसके द्वारा तथा किसको दी जानी चाहिए। कानून के प्रावधान के अनुसार अनादरण की सूचना या तो धारक द्वारा या प्रपत्र पर दायी किसी पक्षकार द्वारा दी जानी चाहिए। सूचना देने में तत्परता की जानी चाहिए ताकि विनिमय पत्र का आदेशक और पृष्ठांकक अपने आपको आदेशिती या स्वीकर्ता के हाथों और अधिक हानि होने से बचा सके और सूचना देना इसलिए भी आवश्यक है कि पक्षकार अपने प्रतिदायी पक्षकारों से राशि वसूल करने के लिए आवश्यक कदम उठा सके।

ऐसे मामलों में भी जहां मांग पर देय प्रपत्र अनादरण के बाद पृष्ठांकित किया जाता है, पक्षकारों को दायी बनाने के लिए अस्वीकृति या भुगतान न किये जाने के कारण अनादरण की सूचना देना पूर्णतया आवश्यक है।

भुगतान न किये जाने से अनादरण की सूचना : जब कोई विनिमय पत्र अस्वीकृति के कारण अनादृत हुआ है और अनादरण की उचित सूचना भी दे दी गई है, तो भुगतान न करने से अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं रहता, जब तक कि इसी दौरान विनिमय पत्र स्वीकार न कर लिया गया हो। लेकिन जब विनिमय पत्र अस्वीकृति द्वारा अनादृत नहीं हुआ है तो जब तक भुगतान न होने से अनादरण नहीं होता तब तक कार्यवाही करने का कोई कारण नहीं है।

अस्वीकृति द्वारा अनादरण : जब भी आदेशिती विधिवत स्वीकृति के लिए प्रस्तुत किये गये विनिमय पत्र को स्वीकार करने से मना करता है तो विनिमय पत्र को अनादृत हुआ मान लेना चाहिए और अधिनियम के अनुसार अनादरण की सूचना दे दी जानी चाहिए। लेकिन जब कोई विनिमय पत्र अस्वीकृति के कारण अनादृत हुआ है और अनादरण की सूचना नहीं दी गयी है तो उस व्यक्ति के अधिकारों पर जो सूचना न देने की चूक के बाद यथाविधि धारक बनता है, चूक

का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। अनादरण की सूचना देने के संबंध में नियम वही हैं चाहे अनादरण स्वीकृति के कारण हुआ हो या भुगतान न करने के कारण से।

सूचना किसके द्वारा : अनादरण की सूचना धारक द्वारा या प्रपत्र पर दायी पक्षकार द्वारा दी जानी चाहिए। एक अजनबी द्वारा दी गयी सूचना वैध नहीं है।

सूचना किसको : अनादरण की सूचना प्रतिज्ञा पत्र के लेखक या विनिमय पत्र के स्वीकर्ता या चैक के आदेशिती को छोड़कर उन सभी पक्षकारों को अथवा उनके प्राधिकृत एजेंटों को दी जानी चाहिए जिन्हें वह दायी ठहराना चाहता है। यदि सूचना प्राप्त करने का हकदार कोई पक्षकार दिवालिया घोषित कर दिया गया है तो उसके समनुदेशिती को सूचना दी जानी चाहिए। इसी प्रकार, यदि पक्षकार की मृत्यु हो गयी है तो सूचना उसके विधिक प्रतिनिधि को दी जा सकती है। केवल इस कारण से कि आदेशिती ने घोषणा कर दी है कि वह विनिमय पत्र का भुगतान नहीं कर सकता है और अब आदेशक इसका दायित्व उठाएगा, आदेशक को सूचना देने का कर्तव्य समाप्त नहीं हो जाता।

पक्षकारों को आबद्ध करने के लिए अनादरण की औपचारिक सूचना देना आवश्यक है और जिस पक्षकार को आबद्ध करना है उसको अनादरण की जानकारी मात्र होना पर्याप्त नहीं है। ऐसी जानकारी सूचना के अभाव में प्रभावहीन होती है। परिणामस्वरूप यह माना गया है कि यह तथ्य कि किसी पक्षकार को पहले से ही यह बात मालूम है कि विचाराधीन प्रपत्र अनादृत कर दिया गया है, उसे धारक से सूचना प्राप्त करने के अधिकार से वंचित नहीं करता। केवल मांग करने को सूचना नहीं माना जाता। अतः जब हुंडी आदाता, आदेशक को परिपक्वता के बाद मिलता है और भुगतान मांगता है तो यह नहीं कहा जा सकता कि यह सूचना दे दी गयी है। इसी प्रकार खोये हुए विनिमय पत्र की दूसरी प्रति मांगने को अनादरण की सूचना नहीं माना जा सकता। लेकिन प्रपत्र के अदत्त होने की सूचना के साथ-साथ भुगतान करने की प्रार्थना या मामले पर तेजी से ध्यान देने की प्रार्थना करना एक वैध सूचना है। सूचना का अर्थ है अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न करने के कारण अनादरण की वास्तविक अधिसूचना (notification)।

सूचना का प्रारूप : अनादरण की सूचना किसी भी ऐसे प्रारूप में दी जा सकती है जो विधि की अपेक्षाओं को पूरा करता है (धारा 94)। यह मौखिक या लिखित हो सकती है या अंशतः मौखिक और अंशतः लिखित हो सकती है और यह किन्हीं भी शब्दों में दी जा सकती है जो पर्याप्त रूप से प्रपत्र को परिलक्षित (identify) करती है और जिस पक्षकार को यह दी गयी है उसे सूचित करती है कि प्रपत्र अस्वीकृति या भुगतान न किये जाने के कारण अनादृत कर दिया गया है और वह इस पर दायी माना जाएगा।

सूचना देने में चूक करने का परिणाम : उन स्थितियों को छोड़कर जिनमें धारा 98 के अंतर्गत सूचना देने की आवश्यकता नहीं है, आदेशक या पृष्ठांकक, जिसे अनादरण की यथोचित सूचना नहीं दी गयी है, प्रपत्र पर अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है।

अनादरण की सूचना देना कब अनावश्यक है : निम्नलिखित परिस्थितियों में अनादरण की सूचना देना आवश्यक नहीं है:

i) जब सूचना प्राप्त करने के हकदार पक्ष ने अपने अधिकार का परित्याग कर दिया हो।

ii) आदेशक को भारित करने के लिए जब उसने भुगतान न करने का आदेश दे दिया हो।

iii) जब प्रभारित पक्षकार को सूचना के अभाव में कोई क्षति नहीं पहुंचती हो।

iv) जब सूचना प्राप्त करने के हकदार पक्षकार को यथोचित तलाश करने के बाद भी नहीं तलाश किया जा सका हो या सूचना देने के लिए आबद्ध पक्षकार किसी अन्य कारण के लिए अपनी किसी गलती के बिना सूचना नहीं दे सकता।

v) आदेशकों को दायी करने के लिए जब स्वीकर्ता ही आदेशक हो।

vi) ऐसे प्रतिज्ञा पत्र की स्थिति में जो परक्राम्य नहीं हो।

vii) जब सूचना प्राप्त करने का हकदार पक्षकार, तथ्यों को जानते हुए, प्रपत्र पर देय राशि का बिना शर्त भुगतान करने का वचन देता है।

बोध प्रश्न ख

1 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण से क्या आशय है?

....

....

....

2 भुगतान के लिए किसके समक्ष प्रपत्र प्रस्तुत किया जाना चाहिए?

....

....

3 भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण कब आवश्यक नहीं है?

....

....

....

....

4 आदरार्थ भुगतान से क्या तात्पर्य है?

....

....

....

5 विनिमय पत्र को अस्वीकृति के द्वारा कब अनादृत किया जा सकता है?

....

....

....

6 अनादरण की सूचना देना क्यों आवश्यक है?

....

....

....

7 अनादरण की सूचना न देने के क्या परिणाम होते हैं?

....

....

....

8 बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत :

i) जब कोई विनिमय बिल अस्वीकृति के कारण अनादृत किया जाता है तो भुगतान के लिए प्रस्तुत करना ऐच्छिक है।

ii) यदि आदेशिती, लेखक या स्वीकर्ता की मृत्यु हो गई हो तो उसके विधिक प्रतिनिधि के समक्ष भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण किया जा सकता है।

iii) ऐसे प्रपत्र जो मांग पर देय नहीं हैं, उन्हें परिपक्वता पर भुगतान के लिए प्रस्तुत करना चाहिए।

iv) चैक को जारी किए जाने की तारीख के बाद कभी भी भुगतान के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

v) यदि लेखक या स्वीकर्ता जानबूझ कर प्रपत्र के प्रस्तुतीकरण को रोकता है तो प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है।

vi) जिस पक्ष के आदरार्थ भुगतान किया जा रहा है, उस पक्ष की प्रार्थना पर आदरार्थ भुगतान किया जाना चाहिए।

vii) विनिमय पत्र की सशर्त स्वीकृति को धारक अस्वीकृति मान सकता है।

viii) अनादरण की सूचना लिखित व निर्धारित प्रारूप में होनी चाहिए।

23.4.4 नोटिंग और प्रमाणन

नोटिंग (Noting)

जब कोई प्रतिज्ञा पत्र या विनिमय पत्र अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न होने से अनादृत हो गया है तो धारक ऐसे अनादरण के तथ्य को नोटरी से प्रपत्र पर या उसके साथ संलग्न कागज पर या अंशतः दोनों पर नोटिंग करवा सकता है।

इस प्रकार नोटिंग, प्रपत्र की स्वीकृति या भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण और अस्वीकृति या भुगतान न होने से अनादरण का अभिलेखन करना है। यह ऐसे व्यक्ति (उदाहरण के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाता है जो उस काम के लिए सरकारी तौर से नामनिर्दिष्ट (officially nominated) है और यह प्रस्तुतीकरण और अनादरण का एक विश्वसनीय और विधिक प्रमाण का काम देता है। नोटिंग करते समय नोटरी पब्लिक अनादरण की तारीख, ऐसे अनादरण के लिए बताये गये कारण और नोटरी के खर्चों का उल्लेख करता है। प्रपत्र के अनादरण के बाद उचित समय के भीतर नोटिंग की जानी चाहिए।

नोटिंग के लाभ : नोटिंग एक विधिक साक्षी के रुप में उपयोगी है और इससे निम्नलिखित लाभ हैं :

i) यदि उचित समय के भीतर नोटिंग की जाती है तो यदि प्रपत्र में प्रमाणन की आवश्यकता है तो वह बाद में करवाया जा सकता है (धारा 104-A)।

ii) विनिमय पत्र नोटिंग के बाद भी आदरार्थ स्वीकार किया जा सकता है, यद्यपि कोई प्रमाणन (Protesting) नहीं लिखा गया है (धारा 108)।

iii) विनिमय पत्र की नोटिंग के बाद आदरार्थ भुगतान किया जा सकता है और भुगतान करने वाले को प्रमाणन की प्रतिक्षा करना आवश्यक नहीं है (धारा 113)।

iv) नोटरी, ऐसे लेन देनों के बारे में निपुण होने के कारण, धारक को विनिमय पत्र के प्रस्तुत करने में उचित आचरण के लिए निर्देश देने योग्य है और मुकदमें में प्रस्तुतीकरण और अनादरण का उपयोगी साक्षी हो सकता है।

v) नोटिंग के द्वारा विनिमय पत्र के प्रस्तुतीकरण और अनादरण को किसी भी समय नोटरी के दफ्तर में रखी हुई प्रमाणन पुस्तिका या रजिस्टर को देखकर आसानी से पता लगाया जा सकता है। नोटिंग से एक अन्य लाभ यह है कि यदि असली प्रति खो जाये तो उसकी दूसरी प्रति नोटरी दफ्तर से कभी भी प्राप्त की जा सकती है।

प्रमाणन Protesting)

प्रमाणन एक औपचारिक प्रमाण पत्र होता है जो नोटरी पब्लिक द्वारा विनिमय पत्र के धारक को उसकी मांग पर जारी किया जाता है। प्रमाण पत्र में सभी प्रासंगिक विवरण लिखे होते हैं। प्रमाण पत्र अनादरण का साक्ष्य होता है। **विदेशी विनिमय पत्रों के लिए नोटिंग और प्रमाणन दोनों ही अनिवार्य हैं और अंतर्देशी विनिमय पत्रों के लिए ये ऐच्छिक हैं।**

नोटिंग के बाद जब तक प्रमाणन न हो, तो यह प्रस्तुतीकरण या अनादरण का कोई साक्ष्य प्रदान नहीं करती, चाहे इसमें नोटरी पब्लिक का पूरा नाम भी हो।

विनिमय पत्र के अनादरण हो जाने पर इसके आदेशक या लेखक या पृष्ठांकको के विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार धारक को मिल जाता है। इस अधिकार का उपयोग करने के लिए (जब तक सूचना देने से माफ न किया जाए) धारक को प्रपत्र का प्रमाणन अनादरण के दिन करा लेना चाहिए तथा संबंधित तथ्य उस पर लिखवा लेने चाहिए।

खास तौर से विदेशी विनिमय पत्र के लिए प्रमाणन अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, प्रमाणन विदेश में रहने वाले आदेशक को अनादरण का एक संतोषजनक साक्ष्य प्रदान करता है, जिसे विदेश में अपने निवास स्थान से इस विषय के बारे में उचित पूछताछ करने में कठिनाई का अनुभव करना पड़ सकता है और धारक के कथन पर विश्वास करने के लिए मजबूर होना पड़ सकता है।

अस्वीकृति और भुगतान न होने के लिए प्रमाणन के अतिरिक्त धारक श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए भी प्रमाणन करा सकता है। श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए प्रमाणन तब कराया जाता है जब प्रपत्र का स्वीकर्ता दिवालिया हो गया है अथवा विनिमय पत्र परिपक्व होने से पहले उसने भुगतान करना निलंबित कर दिया है। ऐसे मामलों में धारक नोटरी द्वारा श्रेष्ठ प्रतिभूति की मांग करवा सकता है और इसके मना किये जाने पर विनिमय पत्र का प्रमाणन हो सकता है और प्रमाणन की नोटिस पूर्ववर्ती पक्षकारों को भेजा जा सकता है।

प्रमाणन की विषय सामग्री (Contents of protest) : (धारा 101) प्रमाणन की विषय सामग्री का वर्णन इस प्रकार करती है :

1 प्रमाणन में मूल प्रपत्र या उसकी और उस पर लिखे या छपे प्रत्येक शब्द की शब्दिक नकल होनी आवश्यक है। जब विनिमय पत्र खो गया है या वह धारक के पास नहीं है, तो ऐसी स्थितियों के लिए धारा में कोई प्रावधान नहीं है।

2 प्रमाणन में उस पक्षकार का नाम होना आवश्यक है जिसकी प्रार्थना पर यह किया गया है। इसमें उस व्यक्ति का नाम भी लिखा होना चाहिए जिससे भुगतान की मांग या स्वीकृति की मांग की जाती है। यदि आदेशिती या स्वीकर्ता (जिस पर भुगतान की या स्वीकृति की मांग की गई है) स्वयं उपस्थित नहीं है तो उस व्यक्ति के नाम का उल्लेख करना सुरक्षित है जो आदेशिती या स्वीकर्ता, जिस पर मांग की जाती है, की ओर से कार्यभारी है।

3 प्रमाणन में आदेशिती या स्वीकर्ता द्वारा अस्वीकृति या भुगतान न किये जाने या श्रेष्ठ प्रतिभूति देने से मना करने के लिए दिये गये कारण भी लिखे होने चाहिए। प्रमाणन में यह भी स्पष्टतया उल्लेख करना चाहिए कि मांग नोटरी पब्लिक द्वारा स्वयं की गई है या क्लर्क द्वारा। यदि आदेशिती या स्वीकर्ता कोई उत्तर नहीं देता या अपने व्यापार के सामान्य स्थान या निवास स्थान पर नहीं पाया जाता तो ऐसा तथ्य भी प्रमाणन में उल्लेखित किया जाना चाहिए। सामान्यतया यदि प्रमाणन नोटरी पब्लिक द्वारा स्वयं लिखा जाता है तो उसे अधिक महत्त्व दिया जाता है क्योंकि सार्वजनिक अधिकारी होने की वजह से वह अधिक विश्वसनीय होता है।

4 यह भी आवश्यक है कि प्रमाणन में मांग और अनादरण का समय उल्लेखित किया जाए अन्यथा इससे यह पता लगाना संभव नहीं होगा कि क्या विनिमय पत्र विधिवत अनादरित हुआ था। यदि उचित समय में कुछ नहीं किया जाता तो प्रमाणन बाद में भी कराया जा सकता है।

5 इसके अतिरिक्त यह भी आवश्यक है कि प्रमाणन पर नोटरी के हस्ताक्षर हों। यद्यपि प्रावधानों के अंतर्गत नोटरी

ो मोहर लगी होना आवश्यक नहीं है, व्यवहार में प्रमाणन पर नोटरी की शासकीय मोहर लगायी जाती है और ायालयों द्वारा नोटरी पब्लिक की मोहर पर न्यायिक ध्यान दिया जाता है।

ारा 102 अधिकथित करती है कि उन स्थितियों में जहां विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र का प्रमाणन कराना आवश्यक वहां प्रमाणन की सूचना देनी आवश्यक होती है, अनादरण की सूचना नहीं। विदेशी विनिमय पत्रों की स्थिति , वे सभी पक्षकार जो उसके लिए उत्तरदायी हैं और जिनके विरुद्ध धारक कार्यवाही करना चाहता है, प्रमाणन ी सूचना प्राप्त करने के अधिकारी हैं।

माणन की सूचना में प्रमाणन की प्रतिलिपि होनी आवश्यक नहीं है। जिस पक्षकार को नोटिस जारी किया गया उसे इतनी सूचना देना पर्याप्त है कि विनिमय पत्र अस्वीकृति द्वारा या भुगतान न किये जाने से अनादरित हो या है और प्रमाणन करा लिया गया है।

दायित्व से मुक्ति

साध्य प्रपत्रों के संबंध में "दायित्व से मुक्ति" शब्द के दो अर्थ हैं : (i) विनिमय साध्य प्रपत्र के विषय में अधिक पक्षकारों की दायित्व से मुक्ति और (ii) स्वयं प्रपत्र की मुक्ति। प्रपत्र की मुक्ति प्रपत्र के अंतर्गत पक्षकार त्व की मुक्ति से भिन्न है। प्रपत्र की मुक्ति में इसके अंतर्गत कार्यवाही के सभी अधिकारों का समापन हो जाता इससे इसकी परक्राम्यता समाप्त हो जाती है। अतः यदि प्रपत्र की मुक्ति के बाद यह प्रपत्र किसी यथाविधि के हाथ में आ जाता है तो उसे इसके अंतर्गत कोई अधिकार प्राप्त नहीं होते और वह इसके आधार पर वाद ा सकता। इसके विपरीत जब कोई विशेष पक्षकार दायित्व मुक्त किया जाता है, तो प्रपत्र इससे जुड़े हुए अमुक्त ों के दायित्व के साथ परक्राम्य बना रहता है। इस प्रकार प्रपत्र के एक या अधिक पक्षकारों की मुक्ति से प्रपत्र त हुआ नहीं कहा जाता। किसी विनिमय साध्य प्रपत्र का लेखक, स्वीकर्ता या पृष्ठांकक निम्नलिखित प्रकार से से मुक्त किया जाता है।

द्द करके मुक्ति : किसी विनिमय साध्य प्रपत्र का धारक प्रपत्र के संबंध में दायी किसी पक्षकार को उसके ायित्व से मुक्त करने के इरादे से प्रपत्र पर लिखे उसके नाम को जानबूझ कर काट सकता है। जिस पक्षकार ा नाम इस प्रकार काटा जाता है, वह उस धारक तथा उस धारक से स्वत्व का अधिकार पाने वाले पक्षकारों के ति अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है जिसने उसका नाम काटा है। नाम काटने का उचित व सुरक्षित तरीका स नाम पर पैन से लाइन खींचना है जिससे कि वह पढ़ने योग्य रह जाए। रद्दकरण, वैध होने के लिए यह ाभिप्राय (intentional) होना चाहिए। यदि यह गलती से या धारक के प्राधिकार के बिना या पक्षकार को ायित्व मुक्त करने के इरादे के बिना किया गया है, तो यह प्रभावकारी (operative) नहीं होता।

ट द्वारा मुक्ति : जब प्रपत्र का धारक, प्रपत्र के किसी पक्षकार को नाम काटने के अतिरिक्त किसी अन्य तरीके दायित्व मुक्त करता है तो इस प्रकार निर्मुक्त पक्षकार अपने दायित्व से मुक्त हो जाता है। लेकिन संयुक्त क्षकारों में से एक की निर्मुक्ति सबको निर्मुक्त नहीं करती। वचनग्रहीता केवल एक ऐच्छिक सचेतन कार्य द्वारा वल वचन के पालन से अभिमुक्त कर सकता है (अपने अधिकारों का दावा करने या अपने अधिकारों के ए आग्रह करने में चूक मात्र अनुबंध अधिनियम की धारा 63 के अर्थ की सीमा में अभिमुक्ति के बराबर नहीं ो सकती)। अपने अधिकारों के लिए दावा करने में लापरवाही भी अभिमुक्ति के बराबर नहीं है यद्यपि कुछ थितियों में इसका परिणाम विबंधन (estoppel) हो सकता है। अभिमुक्ति अभिव्यक्त हो सकती है या व्यवहार में हित हो सकती है, यदि ये मौलिक अधिकारों के बने रहने के अनुरूप है। पक्षकारों के मध्य हुए करार के द्वारा ी मुक्ति दी जा सकती है। एक वचनग्रहीता अपनी उदारता से वचनदाता को अपने दायित्वों का पालन करने से टकारा दे सकता है।

ुगतान द्वारा मुक्ति : जब एक विनिमय साध्य प्रपत्र पर देय राशि का उस व्यक्ति को भुगतान कर दिया जाता जो इसे प्राप्त करने का विधिक अधिकारी है तो उस प्रपत्र का लेखक/पृष्ठांकक/स्वीकर्ता दायित्व से मुक्त हो ाता है। जब प्रपत्र वाहक को देय है या कोरा पृष्ठांकित है, तो ऐसे लेखक, स्वीकर्ता या पृष्ठांकक को उस पर य राशि का यथाविधि भुगतान कर देना चाहिए। इस प्रकार जब लेखक, वचनग्रहीता के पक्ष में प्रतिज्ञा पत्र लखता है और राशि वचनग्रहीता के आदेशानुसार देय है, तो लेखक द्वारा वचनग्रहीता के दत्तक पुत्र या उसके ता को किया गया भुगतान लेखक को दायित्व से मुक्त नहीं करता क्योंकि प्रतिज्ञा पत्र वाहक को देय नहीं है और उस भुगतान को "यथाविधि" किया हुआ भी नहीं कहा जा सकता। एक प्रतिज्ञा पत्र नकद भुगतान द्वारा या ये प्रतिज्ञा पत्र द्वारा मुक्त किया जा सकता है और जब एक बार उसे मुक्त कर दिया जाता है तो मौलिक प्रतिज्ञा त्र, उस हस्ताक्षर कर्ता के विरुद्ध भी प्रवर्तित नहीं रहता जिसने नया प्रतिज्ञा पत्र नहीं लिखा।

धि के प्रवर्तन द्वारा मुक्ति : विनिमय साध्य प्रपत्र संबंधी विधि, अनुबंध विधि की एक शाखा है इसलिए ामान्य विधि के नियम, विनिमय साध्य प्रपत्रों पर भी लागू होते हैं, अतः वे इस अधिनियम द्वारा बताए गए रीकों के अलावा अन्य तरीकों द्वारा भी मुक्त किये जाते हैं। उदाहरण के लिए परिसीमा अधिनियम के अंतर्गत ालबाधित हो जाने पर या ऋणी के दिवालिया होने पर या एक ऋण के दूसरे में विलय होने से या जब विनिमय त्र का स्वीकर्ता इसकी परिपक्वता पर या उसके बाद इसका धारक बनता है।

5 **आदेशिती को स्वीकृति के लिए 48 घंटे का अधिक समय देने से मुक्ति :** यदि किसी विनिमय पत्र का धारक, आदेशिती को यह सोचने के लिए कि वह इसे स्वीकार करे या नहीं 48 घंटे से अधिक समय (सार्वजनिक अवकाश को छोड़कर) देता है, तो सभी पूर्व पक्षकार जिन्होंने ऐसी रियायत की अनुमति नहीं दी, ऐसे धारक के प्रति अपने दायित्व से मुक्त कर दिए जाते हैं" (धारा 83)।

6 **चैकों की स्थिति में मुक्ति :** यदि चैक का धारक उचित समय के बाद चैक प्रस्तुत करता है, तो आदेशक दायित्व मुक्त हो जाता है और यथाविधि धारक चैक की राशि के लिए बैंक का लेनदार बन जाता है और ऐसी राशि के विषय में क्षतिपूर्ति प्राप्य है। यदि वह बैंक जिस पर चैक लिखा गया है, चैक के प्रस्तुत किये जाने से पहले दिवालिया हो जाता है तो आदेशक उस सीमा तक मुक्त कर दिया जाता है, जिस तक उसने बैंक के दिवालियापन से हानि उठायी है। लेकिन यदि बैंक संपन्न बना रहता है और धारक सिद्ध कर देता है कि आदेशक को कोई हानि नहीं हुई है (या चैक को उचित समय के भीतर प्रस्तुत किये बिना ही वह व्यवस्था कर लेता है) तो आदेशक धारक के प्रति दायी बना रहता है। चैक के आदेशक को दो तथ्य साबित करने पड़ेंगे : 1) कि आदेशक की बैंक में अपने खाते में चैक के आदरण के लिए पर्याप्त जमा राशि थी, और 2) चैक को उचित समय के भीतर प्रस्तुत न करने से वास्तव में उसे हानि या क्षति उठानी पड़ी है। धारक की लापरवाही के परिणामस्वरूप आदेशक को जो हानि या नुकसान हुआ है, उस हानि की सीमा तक आदेशक का दायित्व समाप्त हो जाता है।
यदि बैंक के दिवालिया होने के समय चैक का भुगतान करने के लिए आदेशक की बैंक में पर्याप्त जमा राशि थी, तो आदेशक का दायित्व पूर्णतः समाप्त हो जाता है।

उदाहरण के लिए A 1,000 रु. का एक चैक लिखता है और जब चैक प्रस्तुत किया जाना चाहिए था उस समय बैंक के पास इसका भुगतान करने के लिए पर्याप्त कोष था। बैंक, चैक प्रस्तुत किये जाने से पहले फेल हो जाता है। आदेशक दायित्व युक्त हो गया लेकिन धारक चैक की राशि के लिए बैंक के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है। जिस तारीख को बैंक का समापन होता है यदि उस तारीख को चैक का भुगतान करने के लिए पर्याप्त जमा राशि नहीं है तो आदेशक केवल उस राशि तक मुक्त किया जाता है जो उसके पास उस समय चैक का आदरण करने के लिए बैंक में थी। यदि उचित समय के भीतर चैक प्रस्तुत किए जाने से पहले ही बैंक फेल हो जाता है, तो आदेशक अपने दायित्व से बिल्कुल भी मुक्त नहीं होगा।

उपर्युक्त प्रावधान केवल चैक के आदेशक पर लागू होते हैं, पृष्ठांकक पर नहीं। पृष्ठांकक को उत्तरदायी ठहराने के लिए चैक उसके द्वारा सुपुर्दगी के बाद उचित समय के भीतर भुगतान के लिए प्रस्तुत किया जाना चाहिए। ऐसा प्रस्तुतीकरण न होने पर पृष्ठांकक पूर्णतया मुक्त कर दिया जाता है।

धारा 85 के अंतर्गत उस बैंक को संरक्षण दिया जाता है जो उस पर लिखे गये चैक का यथाविधि भुगतान करता है। आदाता का पृष्ठांकन जाली होने पर भी यही स्थिति रहती है। इस प्रकार का भुगतान आदेशक की मुक्ति होता है।

जब चैक या ड्राफ्ट डाक द्वारा भेजा जाता है तो बैंक रास्ते में इसके खोने के लिए उत्तरदायी नहीं है, क्योंकि डाक घर पाने वाले बैंक का एजेंट नहीं है जब तक कि पाने वाले ने डाक से भेजने के लिए न कहा हो अन्यथा नहीं।

बैंक की एक शाखा दूसरी शाखा पर लिखे गये आदेशानुसार देय ड्राफ्ट : जब बैंक की एक शाखा द्वारा दूसरी शाखा पर आदेशानुसार मांग पर देय एक राशि के लिए कोई ड्राफ्ट लिखा जाता है तथा वह आदाता द्वारा या उसकी ओर से पृष्ठांकित किया जाता है, तो यथाविधि भुगतान द्वारा बैंक दायित्व मुक्त कर दिया जाता है (धारा 85-A)।

23.6 महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का प्रभाव (Effect of Material Alteration)

ऐसा परिवर्तन जो प्रपत्र की विधिक पहचान या व्यापारिक स्वरूप को बदल देता है या जो प्रपत्र के अनुबंध को प्रभावित कर दे, महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का मुख्य प्रभाव यह है कि यह प्रपत्र को व्यर्थ बना देता है।

जो कुछ लिखा हुआ है केवल उसे मिटाने या बदलने से ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं होता बल्कि उसमें कुछ नया लिखने से भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होता है। एक प्रतिज्ञा पत्र में उसके लिखे जाने के बाद, हस्ताक्षर से ऊपर और तारीख के नीचे ये शब्द लिख दिये गये, "कार्तिक स्टोर का स्वामी"। इस परिवर्तन को एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन समझा गया जिससे प्रपत्र अप्रवर्तनीय बन गया (यद्यपि वादी लेखक पर केवल अपनी व्यक्तिगत हैसियत से वाद चलाने का अंत में इरादा कर सकता है)।

यदि प्रपत्र में किये गये परिवर्तन की प्रकृति प्रभावित होती है या पक्षकारों के अधिकारों को प्रभावित किया जाता है, या पक्षकारों के बीच के अनुबंध की पहचान में परिवर्तन हो, तो इसे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन माना जाता है। जहां तक कि प्रपत्र की किसी ऐसी शर्त में जो दण्ड स्वरूप है, कोई परिवर्तन किया जाता है तो उसे भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन माना जाता है।

महत्त्वपूर्ण परिवर्तन का प्रभाव : विनिमय साध्य प्रपत्र में किया गया कोई भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन उस पक्ष के विरुद्ध व्यर्थ होता है जो परिवर्तन करने के समय इसका पक्षकार था और जिसने इस परिवर्तन के लिए अपनी सहमति नहीं दी थी, जब तक कि यह मूल पक्षकारों की इच्छा को पूरा करने के लिए नहीं किया गया हो।

थि में परिवर्तन : यदि पूर्व पक्षकारों की सहमति के बिना विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र की तिथि बदल दी जाती है यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन माना जाता है।

ांकिति द्वारा परिवर्तन : पृष्ठांकिति द्वारा किया गया कोई ऐसा परिवर्तन उसके पृष्ठांकक को प्रतिफल के विषय में के प्रति सारे दायित्वों से मुक्त कर देता है।

तान के समय में परिवर्तन : यदि भुगतान के समय में परिवर्तन किया जाता है (उदाहरण के लिए यदि विनिमय जो अंकित तिथि के तीन माह बाद देय है, उसे दर्शनोपरांत 3 महीने बाद देय में परिवर्तित कर दिया जाए) तो यह महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है और इससे विनिमय पत्र के सभी पक्षकारों का दायित्व समाप्त हो जाता है।

तान के स्थान में परिवर्तन : इस धारा के अर्थ के अंतर्गत भुगतान के स्थान के बारे में परिवर्तन निश्चित रूप एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है।

राशि में परिवर्तन : देय राशि में किया गया परिवर्तन एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है (उदाहरण के लिए 100 रु. के विनिमय पत्र को बदल कर 200 रु. के लिए कर देना)।

ंकन में परिवर्तन : यदि विनिमय पत्र के कोरे पृष्ठांकन में कुछ शब्द जोड़कर इसे विशेष पृष्ठांकन बनाया जाता तो इसे भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन कहते हैं।

कारों में परिवर्तन : इस धारा के अर्थ के अंतर्गत प्रपत्र में एक नये पक्षकार को जोड़ना महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। रक्राम्य प्रपत्र में उसे परक्राम्य बनाने के लिए "या आदेशानुसार", "या वाहक" शब्द जोड़ना महत्त्वपूर्ण परिवर्तन लाता है। यदि "आदेशानुसार या वाहक" शब्दों में से "या वाहक" शब्द काट दिये जाते हैं या पृष्ठांकन में ादेशानुसार" शब्द के स्थान पर "वाहक" लिखा जाता है तो यह प्रपत्र व्यर्थ हो जाता है। लेकिन "वाहक" शब्द लिए "आदेशानुसार" शब्द का प्रतिस्थापन महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं माना गया है।

कारों की सहमति से किया गया परिवर्तन प्रपत्र की वैधता को प्रभावित नहीं करता। लेखक के नाम को काटना या ाना एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन है। हस्ताक्षर के पास स्टाम्प चिपकाना और इस पर हस्ताक्षर करने के स्थान पर दो ी रेखाएँ खींचकर इसे रद्द करना, एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं है।

वर्तन के ऐसे उदाहरण जो महत्त्वपूर्ण नहीं हैं :

"आदेशानुसार देय" प्रपत्र को वाहक को देय में परिवर्तन।

पृष्ठांकन में से "या आदेशानुसार" शब्द हटाना महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं होता।

प्रपत्र में जो बात पहले ही स्पष्ट है तथा कानून जो इसका अर्थ निकालता है, यदि उसे स्पष्ट तौर से लिख दिया जाता है तो परिवर्तन महत्त्वहीन है तथा प्रपत्र को दूषित नहीं करता है। प्रतिज्ञा पत्र का लेखक इसका भुगतान करने के दायित्व से इसलिए मुक्त नहीं कर दिया जाएगा कि धारक ने प्रतिज्ञा पत्र पर वह लिख दिया है जिसकी कमी विधि पूरी करती।

ऐसे प्रतिज्ञा पत्र जिसमें भुगतान करने का कोई समय व्यक्त नहीं किया गया, उसमें "मांग पर" शब्द जोड़ना महत्त्वपूर्ण परिवर्तन नहीं है।

त्वपूर्ण परिवर्तन का प्रभाव : जिस पक्षकार की अभिरक्षा (custody) में प्रपत्र है वह इसे इसके मूल रूप में े रखने के लिए आबद्ध है, क्योंकि प्रपत्र में कोई भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन इसे दूषित कर देता है। यदि इसमें महत्त्वपूर्ण र्तन किया जाता है तो वे व्यक्ति जो परिवर्तन के समय पक्षकार हैं और जिन्होंने इस परिवर्तन के लिए सहमति नहीं ी, इस प्रपत्र के अंतर्गत दायित्व से पूरी तरह मुक्त कर दिये जाते हैं। वे प्रपत्र के सद्भावपूर्वक क्रेता जिनके पास र्तन की कोई सूचना नहीं है, के प्रति भी दायी नहीं है। लेकिन एक प्रपत्र जिसमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किया गया ूरी तरह व्यर्थ नहीं हो जाता। ये केवल उनके पक्षों के विरुद्ध व्यर्थ होता है जिन्होंने परिवर्तन के लिए सहमति नहीं ी, लेकिन उन पक्षकारों के विरुद्ध प्रवर्तित किया जा सकता है जिन्होंने परिवर्तन के लिए सहमति दी या परिवर्तन ा और उनके विरुद्ध भी जो परिवर्तन किये जाने के बाद प्रपत्र के पक्षकार बने हैं।

वर्तन का दायित्व पर प्रभाव : धारा 88 के अनुसार विनिमय साध्य प्रपत्र में परिवर्तन केवल ऐसे व्यक्तियों के त्व को प्रभावित करता है जो परिवर्तन किये जाने से पहले विनिमय पत्र के पक्षकार थे और यह उन व्यक्तियों को वित नहीं करता जो परिवर्तन के बाद पक्षकार बने थे। इसका कारण यह है कि जब कोई स्वीकर्ता, परिवर्तित विनिमय को स्वीकार करता है या कोई पृष्ठांकक जो परिवर्तन के बाद पृष्ठांकन करता है, वह परिवर्तन से प्रतिकूल रूप में वित नहीं हो सकता, क्योंकि उसने अपनी स्वीकृति या पृष्ठांकन द्वारा जैसी भी स्थिति है, प्रपत्र के उन प्रकट शब्दों नुसार राशि का भुगतान करने का दायित्व लिया है जो प्रपत्र में उस समय है, जब स्वीकृति दी गयी है या पृष्ठांकन ा गया।

89 उस व्यक्ति को संरक्षण प्रदान करती है जो ऐसे परिवर्तित विनिमय पत्र या प्रतिज्ञा पत्र या चैक का यथाविधि ान करता है जो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुआ प्रतीत नहीं होता और भुगतान सद्भावपूर्वक किया गया है। भुगतान करने ऐसे व्यक्ति दायित्व से मुक्त हो जाता है। इस धारा द्वारा दिये गये संरक्षण को प्राप्त करने के लिए, यह आवश्यक परिवर्तन प्रत्यक्षतः नहीं होना चाहिए और भुगतान यथाविधि किया जाना चाहिए यानी सद्भावनापूर्वक प्रपत्र के

प्रकट शब्दों के अनुसार और उस व्यक्ति के प्रति बिना लापरवाही के जिसके कब्जे में प्रपत्र ऐसी परिस्थितियों के अंतर्गत है, जो यह विश्वास करने के लिए उचित आधार प्रदान नहीं करती कि वह भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी नहीं है। जब ये शर्तें पूरी हो जाती हैं, तो भुगतानकर्ता न केवल प्रपत्र पर अपने सभी दायित्वों से मुक्त हो जाता है बल्कि वह भुगतान की गयी राशि उस व्यक्ति के नामे लिख सकता है जिसके लेखे में भुगतान किया गया था। इस प्रकार जब कोई व्यक्ति 100 रु. के लिए विनिमय पत्र या चैक लिखता है और धारक, आदेशक की सहमति के बिना राशि को 100 से बदलकर 1000 कर देता है और प्रपत्र को 1000 रु. के लिए लिखा गया विनिमय पत्र या चैक जैसा दिखायी देने वाला बना देता है तथा यह परिवर्तन पता भी नहीं चलता है तो आदेशिती या बैंक, जो विनिमय पत्र या चैक का सद्भावपूर्वक और लापरवाही के बिना भुगतान करता है, आदेशक के नामे 1000 रु. लिखने का अधिकारी है।

बोध प्रश्न ग

1 "नोटिंग" से क्या आशय है?

....

....

....

2 "श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए प्रमाणन" क्या होता है?

....

....

....

....

3 "विनिमय साध्य प्रपत्र की मुक्ति" से आप क्या समझते हैं?

....

....

....

4 "महत्त्वपूर्ण परिवर्तन" क्या होता है?

....

....

....

5 सबसे सही उत्तर पर निशान (√) लगाइए :

i) प्रपत्र के धारक के प्रति लेखक को दायित्व से मुक्त कर दिया जाता है :
   क) केवल रद्दकरण द्वारा।
   ख) केवल छूट द्वारा।
   ग) केवल भुगतान द्वारा।
   घ) ऊपर लिखे किसी भी तरीके से।

ii) प्रतिज्ञा पत्र की वैध मुक्ति तब होती है :
   क) जब नकद भुगतान किया जाता है।
   ख) जब नकद भुगतान या नया प्रतिज्ञा पत्र जारी किया जाता है।
   ग) केवल जब प्रपत्र काल बाधित हो जाता है।
   घ) केवल जब धारक प्रस्तुतीकरण के 48 घंटे के भीतर भुगतान प्राप्त करने में असफल होता है।

iii) बैंक डाक द्वारा भेजे गये चैक के रास्ते में गुम हो जाने के लिए उत्तरदायी नहीं है क्योंकि :
   क) बैंक व्यक्तिगत प्रस्तुतीकरण के लिए जोर देता है।
   ख) डाक घर बैंक का एजेंट नहीं है।
   ग) बैंक विशेष रूप से विधि द्वारा संरक्षित है।
   घ) डाक घर के जरिये वहन प्रस्तुतीकरण की मान्यता प्राप्त विधि नहीं है।

iv) निम्नलिखित परिवर्तनों में से कौन-सा परिवर्तन महत्त्वपूर्ण नहीं है?
   क) भुगतान के स्थान में परिवर्तन (देश में ही)।
   ख) लेखक के नाम में परिवर्तन।

ग) हस्ताक्षर के पास स्टाम्प चिपकाना और दो तिरछी रेखाओं द्वारा उसे रद्द करना।
घ) "आदेशानुसार या धारक को" शब्दों में से "या धारक" काट देना।

23.7 सारांश

प्रस्तुतीकरण का अर्थ है विनिमय साध्य प्रपत्र को आदेशिती के सामने रखना। निम्नलिखित तीन कारणों में से किसी के लिए भी प्रस्तुतीकरण किया जाता है : 1) स्वीकृति के लिए, 2) दिखाने के लिए और 3) भुगतान के लिए। दर्शनोपरांत देय विनिमय पत्र को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक है। सभी प्रपत्रों को भुगतान के लिए प्रस्तुत करना आवश्यक है। अस्वीकृति को अनादरण माना जा सकता है। स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण और भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण के संबंध में कुछ नियम हैं। स्वीकृति सामान्य या सशर्त हो सकती है। ऐसी स्वीकृति जो बिना किसी शर्त आदेशक के आदेशानुसार सहमति देती है, सामान्य स्वीकृति कहलाती है। सशर्त स्वीकृति में आदेशिती कुछ शर्तों के अधीन विनिमय पत्र स्वीकार करता है।

विदेशी विनिमय पत्र के अस्वीकृति से अनादरण पर उसकी नोटरी पब्लिक द्वारा नोटिंग और प्रमाणन कराना आवश्यक है। आंतरिक विनिमय पत्रों में नोटिंग और प्रमाणन ऐच्छिक है फिर भी ये विश्वसनीय सबूत के रूप में काम करते हैं। अस्वीकृति द्वारा अनादरण की सूचना देना सब स्थितियों में आवश्यक है। श्रेष्ठ प्रतिभूति के लिए भी प्रमाणन हो सकता है। आदरार्थ स्वीकर्ता भी हो सकता है।

सभी स्थितियों में भुगतान के लिए प्रस्तुतीकरण आवश्यक है। प्रस्तुतीकरण उचित व्यक्ति को, उचित स्थान पर व समय पर और उचित तरीके से किया जाना चाहिए।

प्रपत्र का लेखक, स्वीकर्ता या पृष्ठांकक रद्दकरण द्वारा, छूट द्वारा या भुगतन द्वारा दायित्व मुक्त कर दिया जाता है। प्रपत्र में एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन इसे व्यर्थ बना देता है।

23.8 शब्दावली

आदरार्थ स्वीकर्ता : स्वीकर्ता के अतिरिक्त अन्य कोई पक्षकार, जो आदेशक या किसी विशेष पृष्ठांकक के आदरार्थ स्वीकृति देता है।

आवश्यकता पर आदेशिती : वह व्यक्ति (जो आदेशक या पृष्ठांकक द्वारा भी उल्लेखित किया गया है) जिसके पास स्वीकर्ता/आदेशिती द्वारा अनादरण की स्थिति में जाना चाहिए।

सामान्य स्वीकृति : आदेशक के आदेश को कोई शर्त लगाए बिना स्वीकृति।

महत्त्वपूर्ण परिवर्तन : अनाधिकृत परिवर्तन जिससे प्रपत्र व्यर्थ हो जाता है।

नोटिंग : स्वीकृति या भुगतान के लिए प्रपत्र के प्रस्तुतीकरण और इसके अनादरण के तथ्य को नोटरी पब्लिक द्वारा अभिलेखन।

आदरार्थ भुगतान : भुगतान न किये जाने के लिए प्रपत्र के प्रमाणन के बाद आदेशक, आदेशिती या पृष्ठांकिती या एक अजनबी द्वारा प्रपत्र पर दायी पक्षकार के आदरार्थ किया गया भुगतान।

प्रमाणन : धारक को नोटरी पब्लिक द्वारा जारी किया गया प्रमाण-पत्र।

सशर्त स्वीकृति : जब स्वीकृति के साथ कोई शर्त जुड़ी हो।

23.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

क) 7 i) सही ii) गलत iii) सही iv) गलत v) सही vi) सही vii) सही

ख) 8 i) गलत ii) सही iii) सही iv) गलत v) सही vi) गलत vii) सही viii) गलत

ग) 5 i) घ ii) ख iii) ख iv) ग

23.10 स्वपरख प्रश्न

1 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण कब (अ) आवश्यक तथा (आ) अनावश्यक है? स्वीकृति के लिए प्रस्तुत न करने के क्या परिणाम होते हैं?

2 स्वीकृति के लिए प्रस्तुतीकरण संबंधी नियम बताइये।

3 आदरार्थ स्वीकर्ता कौन है? उसके अधिकारों और कर्त्तव्यों को स्पष्ट कीजिए।

4 अस्वीकृति द्वारा और भुगतान न किये जाने से अनादरण क्या होता है? ऐसे अनादरण पर धारक को क्या करना चाहिए?

5 नोटिंग और प्रमाणन क्या है? ये क्यों की जानी चाहिए?

6 प्रपत्र के लिए उत्तरदायी पक्ष इस प्रकार के दायित्व से कैसे मुक्त हो सकता है?

7 भुगतान के प्रस्तुतीकरण के बारे में नियम स्पष्ट कीजिए। ऐसा प्रस्तुतीकरण कब आवश्यक नहीं है?

8 प्रपत्र में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन क्या होता है? उदाहरण देकर बताइये कि कौन से परिवर्तन महत्त्वपूर्ण हैं और कौन नहीं।

नोट : इन प्रश्नों से आपको इस इकाई को और अच्छी तरह से समझने में सहायता मिलेगी। उनके उत्तर देने का प्रयास कीजिए। लेकिन अपने उत्तर विश्वविद्यालय को मत भेजिए। ये सिर्फ आपके अपने अभ्यास के लिए दिए गए हैं।

कुछ उपयोगी पुस्तकें

एन.डी. कपूर एवं दिनकर पगारे : *व्यापारिक सन्नियम* (सुल्तान चंद एवं संस, नई दिल्ली) अध्याय 6.1-6.7

आर.के. ग्रोवर एवं विनोद प्रकाश : *व्यापारिक सन्नियम* (श्री महावीर बुक डिपो, नई दिल्ली) अध्याय 26-32

आर.पी. महेश्वरी एवं एस.एन. महेश्वरी : *व्यापारिक सन्नियम* (नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली) अध्याय 1-7

NOTES

NOTES